सर्वार्थसिद्धि वचनिका.

तत्वार्थसूत्र-टीका.

सर्वार्थसिध्दि वचनिका.

(पंडित जयचंदजी-कृता)

प्रकाशक

कल्लाप्पा भरमाप्पा निटवे.

कोल्हापूर-सिटि. "जैनेंद्र प्रेस"

वैशाख शुक्ल ३ शके १८३३. कीमत ४ रुपये.

तत्वार्थसूत्र-टीका.

सर्वार्थसिध्दि वचनिका.

(पंडित जयचंदजी-कृता)

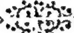
प्रकाशक

कल्लाप्पा भरमाप्पा निटवे.

कोल्हापूर-सिटि. "जैनेंद्र प्रेस"

वैशाख शुद्ध ३ शके १८३३. कीमत ४ रुपये.

तत्त्वार्थसूत्राणामनुक्रमः



प्रथमोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः

अथ तृतीयोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः

अथ चतुर्थोऽध्यायः

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः

——×——

अथ षष्ठोऽध्यायः

——○——

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः

अथ नवमोऽध्यायः

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

॥ अथ तत्त्वार्थसूत्रकी सर्वार्थसिद्धिटीका ॥

दोहा— श्रीवृषभादि जिनेश्वर । अंत नामं शुभ वीर ॥ मन वच काय विशुद्धकरि । वंदौ परमशरीर ॥ १ ॥
करमधराधर भेदि जिन । मरम चराचर पाय ॥ धरमवरावर कर नमूं । सुगुरुपरापरपाय ॥ २ ॥
शब्दब्रह्मकूं मैं नमूं । स्यात्पदमुद्रित सोय ॥ कहै चराचर वस्तुको । सत्यारथ मल धोय ॥ ३ ॥
आप्त मूल आगमतणूं । एकदेश जु अनूप ॥ तत्त्वारथ शासन सही । करौं वचनिकारूप ॥ ४ ॥

ऐसैं आप्तआगमका नमस्काररूप मंगल करि श्रीउमास्वामी नाम आचार्यविरचित जो दशाध्यायरूप तत्त्वार्थशास्त्र, ताकी देशभाषामय वचनिका लिखिये है। तहां ऐसा संबंधकी सूचना है। जो श्रीवर्धमान अंतिमतीर्थंकरकूं निर्वाण भये पीछैं, तीन केवली तथा पांच श्रुतकेवली इस पंचमकालविषैं भये। तिनिमैं अंतके श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामीकूं देवलोक गये पीछै कालदोषतैं केतेइक मुनि शिथिलाचारी भये। तिनिका संप्रदाय चल्या। तिनिमैं केतेइक वर्ष पीछैं एक देवर्षिगण नाम साधु भया। तिहि विचारी, जो, हमारा संप्रदाय तौ बहुत वध्या, परंतु शिथिलाचारी कहावे हैं, सो यह युक्त नही। तथा आगामी हमतैं भी हीनाचारी होयेगे। सो ऐसा करिये;

जो, इस शिथिलाचारकूं कोई बुद्धिकल्पित न कहै। तब तिसके साधनेनिमित्त सूत्ररचना करी। चौरासी सूत्र रचे। तिनिमैं श्रीवर्द्धमानस्वामी अर गौतमगणधरका प्रश्नोत्तरका प्रसंग ल्याय शिथि- लाचार पोषणेके हेतु दृष्टांत युक्ति बणाय प्रवृत्ति करी। तिनि सूत्रके आचारांग आदि नाम धरे। तिनिमैं केतेइक विपरीत कथन किये। केवली कवलाहार करै। स्त्रीकूं मोक्ष होय। स्त्री तीर्थंकर भये। परिग्रहसहितकूं मोक्ष होय। साधु उपकरण, वस्त्र, पात्र आदि चौदह राखै। तथा रोग ग्लानि आदिकरि पीडित साधु होय तौ मद्यमांससहतका आहार करै तौ दोष नांहीं, इत्यादि लिख्या। तथा तिनिकी साधक कल्पितकथा बणाय लिखी। एक साधूकौं मोदकका भोजन करतांही आत्मनिंदा करी तब केवलज्ञान उपज्या। एक कन्याकौं उपाश्रयमें बुहारी देतैंही केवल- ज्ञान उपज्या। एक साधु रोगी गुरुको कांधे ले चल्या, आखडता चाल्या, गुरु लाठी कीदई, तब आत्मनिंदा करी ताकूं केवलज्ञान उपज्या। तब गुरु वाकै पगां पड्या। मरुदेवीकूं हस्तीपरी चढेंही केवलज्ञान उपज्या। इत्यादि विरुद्धकथा तथा श्रीवर्द्धमानस्वामी ब्राह्मणीके गर्भमैं आये, तब इंद्र वहांतैं काढि सिद्धारथ राजाकी राणीके गर्भमैं थापे। तथा तिनिकूं केवल उपजे पीछे गोसाला नाम गरुड्याकूं दीक्षा दीई, सो वानैं तप बहुत कीया, वाकै ज्ञान वध्या, रिद्धि फुरि, तब भगवा-

नसूं वाद कीया, तब वादमैं हार्‍या, सो भगवानसूं कषायकरि तेजोलेश्या चलाई। सो भगवानकै पेचसका रोग हुवा, तब भगवानकै खेद बहुत हुवा, तब साधांनैं कही, एक राजाकी राणी विलावकै निमित्ति कूकडा कबूतर मारि भुलस्या है, सो वै हमारे तांई ल्यावो, तब यहू रोग मिटि जासी। तब एक साध वह ल्याया, भगवान् खाया, तब रोग मिट्या। इत्यादि अनेक कल्पित-कथा लिखी॥ अर श्वेतवस्त्र, यात्रा, दंड आदि भेष धारि श्वेतांबर कहाये। पीछे तिनिकी संप्रदा-यमैं केई समझवार भये। तिनिनैं विचार्‍या, ऐसे विरुद्धकथन तौ लोक प्रमाण करसी नही। तब तिनिके साधनेकूं प्रमाणनयकी युक्ति बणाय नयविवक्षा खडी करि जैसैं तैसैं साधी। तथापि कहां तांई साधे। तब कोई संप्रदायी तिनि सूत्रनिमैं अत्यंत विरुद्ध देखे तिनिकूं तौ अप्रमाण ठहराय गोपि किये, कमि राखे। तिनिमैं भी केईकनैं पैंतालीस राखे। केईकनैं बत्तीस राखे। ऐसे परस्पर विरोध वध्या। तब अनेक गच्छ भये, सो अबतांई प्रसिद्ध हैं। इनिकै आचारविचारका कछु ठिकाणा नांही। इनहीमैं ढुंढिये भये हैं। ते निपट ही निंद्य आचरण धार्‍या हैं। सो कालदोष है। कछू अचिरज नही, जैनमतकी गौणता इस कालमैं होणी है! ताके निमित्त ऐसैंही बणै॥

बहुरि भद्रबाहुस्वामीपीछैं दिगंबरसंप्रदायमैं केतेक वर्ष तौ अंगनिके पाठी रहे। पीछे अंगज्ञा-

नकी व्युच्छित्ति भई, अरु आचार यथावत् रहवोही कीया। पीछें दिगंबरनिका आचार कठिन,
सो कालदोषतें यथावत् आचारी विरले रह गये। तथापि संप्रदायमें अन्यथा प्ररूपणा तो न भई।
तहां श्रीवर्द्धमानस्वामीकों निर्वाण गये पीछे छहसे तियासी वर्ष पीछे दूसरे भद्रबाहू नाम आचार्य
भये। तिनिके पीछे केतेइक वर्ष पीछें दिगंबरनिकें गुरुनिके नामधारक च्यार शाखा भई। नंदी,
सेन, देव, सिंह ऐसे। इनिमें नंदिसंप्रदायमें श्रीकुंदकुंद मुनि तथा श्रीउमास्वामी मुनि तथा
नेमिचंद्र, पूज्यपाद, विद्यानंदी, वसुनंदी आदि बडेबडे आचार्य भये। तिनिनें विचारी; जो
शिथिलाचारी श्वेतांबरनिका संप्रदाय तौ बहुत वध्या, सो तौ कालदोप है। परंतु यथार्थ मोक्षमा-
र्गकी प्ररूपणा चलि जाय ऐसे ग्रंथ रचिये तौ केई निकटभव्य होय ते यथार्थ समझि श्रद्धा करै।
यथाशक्ति चारित्र ग्रहण करै, तौ यह बडा उपकार है। ऐसें विचारि केईक मोक्षमार्गकी प्ररूपणाके
ग्रंथ रचे। तत्त्वार्थसूत्र, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, समयसार, मूलाचार, गोमटसार, त्रिलोक-
सार, लब्धिसार, क्षपणासार, आदिक तथा तिनिका अर्थ अविच्छेद होनेके अर्थि तिनिकी टीका
करी। बहुरि दूसरा सेनसंप्रदायमें भूतबली, पुष्पदंत, वृषभसेन, सिद्धसेन, समंतभद्र, जिनसेन,
गुणभद्र आदि बडेबडे आचार्य भये। तिनिनें षड्खंडसूत्र, धवल, जयधवल, महाधवल तथा

प्राकृत आदिपुराण आदि ग्रंथ रचे। तथा सिद्धसेन, समंतभद्र आदि स्याद्वादविद्याके अधिकारी भये। तत्त्वार्थसूत्रनिकी महाभाष्य रची। और ग्रंथ वडे वडे रचे। जिनसेननैं आदिपुराण संस्कृत रच्या। गुणभद्रनैं उत्तरपुराण संस्कृत रच्या। बहुरि इसही संप्रदायमैं काष्ठासंघ प्रवर्त्या। बहुरि देवसंप्रदायमैं अकलंकदेव भये। ते स्याद्वादविद्याके अधिकारी भये। तिनिनैं प्रमाणप्रकरण रचे। औरभी केई भये, तिनिनैं बडे बडे ग्रंथ रचे। सोमदेवनैं यशस्तिलक कांव्य कीया। बहुरि सिंहसंप्रदायमैं वादीभसिंह आदि मुनि भये। तिनिनैं बडे बडे ग्रंथ बणाये। ऐसे च्यारोंही संप्रदायमैं यथार्थ प्ररूपणा तथा आचार चल्या आया। बहुरि अब इस निकृष्टकालमैं दिगंबरनिका संप्रदायमैं यथावत् आचारका तौ अभावही है। जो कहीं है तौ दूर क्षेत्रमैं होगा। बहुरि मोक्षमार्गकी प्ररूपणा तौ ग्रंथनिके माहात्म्यतैं वर्तै है। तहां मेरै ऐसा विचार भया; जो श्रीउमास्वामिकृत दशाध्यायीरूप तत्त्वार्थशास्त्र है, ताकी संस्कृतटीका तौ गंधहस्तिमहाभाष्य है। अर लघुटीका सर्वार्थसिद्धि, तत्त्वार्थवार्तिक–ताकूं राजवार्तिकभी कहे है–तथा श्लोकवार्तिक है। ते तौ पंडितनिके समझनें पढनें लायक है। मंदबुद्धिनिका प्रवेश नांही। तातैं याकी संक्षेपार्थरूप देशभाषामय वचनिका करिये तौ मंदबुद्धि हू वांचि समझै। तत्त्वार्थकी श्रद्धा करै तौ बडा उपकार है। यहू जानि वचनिकाका

प्रारंभ कीया है। तहां मुख्य तौ सर्वार्थसिद्धि नाम संस्कृत टीकाका आश्रय है। बहुरि जहां जहां विशेष लिख्या है सो तत्त्वार्थवार्तिक श्लोकवार्तिकका आश्रय जानना। याविषैं कहीं भूलि चूक होय तौ विशेषज्ञानी सोधियो ॥

तहां प्रथमही सर्वार्थसिद्धिटीकाकार मंगल अर्थि आप्तका असाधारणविशेषणरूप श्लोक रच्या है, सो लिखिये हैं ॥

मोक्षमार्गस्य नेतारं। भेत्तारं कर्मभूभृताम् ॥
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां। वन्दे तद्गुणलब्धये ॥ १ ॥

याका अर्थ— मोक्षमार्गके प्रवर्तावनहारे, कर्मरूप पर्वतके भेदनहारे, समस्ततत्त्वनिके जाननहारेकों मेरै तिनि गुणनकी प्राप्तीके अर्थि मैं वंदौ हौं।

भावार्थ— इस शास्त्रविषैं मोक्षमार्गका उपदेश है। सो जो घातिकर्मका नाशकरि सर्वज्ञ वीतराग भया होय, सोही मोक्षमार्गका प्रवर्तावनहारा आप्त है। तिसहीकूं नमस्कार किया है। जातैं सर्वज्ञवीतरागका प्रवर्तायाही मोक्षमार्ग प्रमाणसिध्द होय। काहेतैं? जातैं जो सर्वज्ञ न होय तौ अज्ञानतैं अयथार्थभी कहै। तथा रागद्वेषसहित होय तौ क्रोध, मान, माया, लोभ आदि

कषायतैं अन्यथा कहै। सो प्रमाण नांहीं। तातैं सर्वकों जाणै, काहूतैं रागद्वेष न होय, ताहीके वचन प्रमाण होय। वैही वस्तूका स्वरूप यथार्थ प्ररूपै। याहीतैं ऐसे विशेषणयुक्तकों नमस्कार कीया। सो ऐसे तीर्थंकर तथा सामान्यकेवली अरहंत भगवान् हैं। इनहीकूं परमगुरु कहिये। बहुरि जिनिके एकदेश घातिकर्मका नाश एकदेशपणैं परोक्षसमस्ततत्त्वनिका संक्षेपज्ञान है, तथा तिस संबंधी रागद्वेषभी जिनकै नाही है ते अपरगुरु जानने। ते गणधरादि सूत्रकारपर्यंत आचार्य जानने। बहुरि जे सर्वथा एकांततत्त्वका प्ररूपण करै हैं ते गुरु नांही हैं तिनिके वचन प्रमाणविरुध्द हैं, ते अपने तथा परके घातक हैं, तिनिकों नमस्कार भी युक्त नांही॥

अथवा इहां ऐसा आशय जानना। जो सर्वज्ञ वीतराग आप्त होय सोही शास्त्रकी उत्पत्ति तथा शास्त्रका यथार्थज्ञान होनेकौ कारण है। तातै शास्त्रकी आदिविषैं निर्विघ्नपणैं शास्त्रकी समाप्तीकै अर्थी ऐसेही विशेषणयुक्तकों नमस्कार करना योग्य है॥ इहां कोई कहै, आप्तके नमस्कारतैं पापका नाश होय है तातैं विघ्नका उपशम होय तब शास्त्रकी समाप्ति निर्विघ्नपणैं होय है। तातैं ताकूं नमस्कार योग्य है॥ ताकूं कहिये; पापका नाश तौ पात्रदानादिकतैंभी होय है सो आप्तका नमस्कारका नियम कहां रह्या? कोई कहै; परममंगल आप्तका नमस्कारही है। सो यहभी न

कहनां । धर्मके अंग हैं ते सर्वही मंगल हैं ॥ कोई कहै ; नास्तिकताका परिहार तौ आप्तकूं नमस्कार कीयें होय है, याहीतें श्रध्दानी पुरुष शास्त्रकों आदरै है । ताकूं कहिये, नास्तिकताका परिहार तौ मोक्षमार्गके समर्थन करनेतैंही होय है। आप्तके नमस्कारका नियम कैसैं रहै? कोई कहै; शिष्टाचार पालनेकों आप्तकूं नमस्कार करनांही। तहांभी एही उत्तर। तातैं यहूही युक्त है, शास्त्रकी उत्पत्ति तथा ताका ज्ञान होनेंकूं आप्तही कारण है। ताही हेतुतैं आप्तकूं नमस्कार युक्त है, ऐसा आशय जानना ॥ इहां कोई कहै ; वक्ताका सम्यग्ज्ञानही शास्त्रकी उत्पत्ति तथा ज्ञान होनेकूं कारण है, आप्तकाही नियम कैसैं कहौ हौ? तहां ऐसा उत्तर, जो वक्ताका सम्यग्ज्ञानभी गुरूपदेशके आधीन है। गणधरदेवनकै भी सर्वज्ञके वचनके अनुसार सम्यग्ज्ञान है। तातैं आप्तहीका नियम है ॥ बहुरि इहां कोई पूछै; तुम तत्त्वार्थशास्त्रकी वचनिका करौ हौ, सो याकूं तत्त्वार्थशास्त्र ऐसा नाम कैसैं आया? ताका उत्तर, शास्त्रका लक्षण यामैं पाइए है। कैसैं? सोही कहिये है। अक्षरनिके समुदायकूं तौ पद कहिये। बहुरि पदनिके समुदायकूं सूत्र कहिये ताकूं वाक्यभी कहिये, योगभी कहिये, लक्षणभी कहिये। बहुरि सूत्रके समूहकूं प्रकरण कहिये। बहुरि प्रकरणके समुदायकूं आह्निक कहिये। बहुरि आह्निकके समूहकूं अध्याय कहिये। अध्यायके समूहकूं शास्त्र

कहिये । ऐसा शास्त्रका लक्षण यामैं पाइए है तातैं शास्त्र कहिये । बहुरि यामैं निर्बाध तत्त्वार्थका प्ररूपण है तातैं तत्त्वार्थशास्त्र कहिये । बहुरि शास्त्राभासमैं ऐसा लक्षण होय तौ तहां तत्त्वार्थका प्ररूपण नांही तातैं ते शास्त्र नांही ॥ इहां कोई पूछे याउपरांति और शास्त्रकूं शास्त्रसंज्ञा कैसैं आवैगी? ताका उत्तर; जो और शास्त्र तत्त्वार्थके प्ररूपणके हैं ते सर्वही याके एकदेश हैं। बहुरि द्वादशांग है सो महाशास्त्र है । यासारिखे अनेक शास्त्र तामैं गर्भित हैं । ऐसैं यहु तत्त्वार्थशास्त्र सर्वज्ञवीतराग मोक्षमार्गका प्रवर्तक पुरुषकूं सिद्ध होतैं प्रवर्त्या है । तातैं पुरुषकृत कहिये । ऐसा पुरुष वंदनायोग्य है ॥

इहां मीमांसकमतका आश्रय ले अन्यवादी कहै, जो, शब्द सर्वथानित्य कूटस्थ सर्वदेशमैं व्यापक एक है सो तामैं वर्ण पद वाक्य सर्व शाश्वते वसै हैं। पुरुष वक्ता है सो ताकी व्यक्तीकूं प्रगट करै है । तातैं वेद अनादिनिधन अपौरुषेय आगम है । पुरुषकृत नांही । ताका समाधान । शब्द है सो तौ पुद्गलद्रव्यका पर्याय है। श्रोत्र इंद्रियकरि ग्रह्याजाय है, जड है । यामैं स्वयमेव वर्णपदवाक्यरूप होना संभवै नांही । पुरुषके अनादि कर्मके संयोगतैं पुद्गलमयशरीरका संबंध है। तथा अंगोपांग नामा नामकर्मके उदयतैं हृदय कंठ मूर्द्ध जिव्हा दंत नासिका ओष्ठ तालु आदि अक्षरनिके उच्चार

करनेयोग्य स्थान वणे हैं। तिनमैं पुरुषकी इच्छा वा विनां इच्छा अक्षरात्मक वचन प्रवर्ते है। ऐसैं शब्द सर्वथानित्य कहनां प्रमाणविरुद्ध है। पुद्गलद्रव्य द्रव्यअपेक्षा तौ नित्य है बहुरि पर्यायअपेक्षा अनित्य है। सो शब्द पुरुषके निमित्ततैं वर्णात्मक होय परिणमै है। श्रोत्र इंद्रियगेचार होय है। सर्वथानित्य तौ प्रमाणगोचर नांही। तातैं पौरुषेयही आगम प्रमाणसिद्ध है। याका संवाद श्लोकवार्तिकमैं है तहांतैं समझना। बहुरि मीमांसक कहै हैं; जो हमारै आम्नाय अकृत्रिम है तथापि जेमिनीय आदि आप्तके कहे सूत्र प्रमाणभूत हैं। तातैं तुमारे सर्वज्ञ वीतरागके प्ररूपे सूत्र कहौ हौ सो यह प्रमाणसिद्ध नांही। ताका समाधान—सूत्रका व्याख्याता सर्वज्ञ वीतराग न होय तौ वाके वचन प्रमाण नांही। अकृत्रिम आम्नाय पुरुषविनांही आपआपने अर्थकों कहै नांही। तातैं यथोक्त पुरुष आम्नायका कहनहारा चाहिये। तुमभी प्रमाणका विशेषण ऐसाही करो हौ, जो प्रमाण निर्दोषकारणतैं उपजै है। तातैं काहेकौ अपौरुषेयपणां निष्कारण पोषणां॥ बहुरि इहां मीमांसक कहै, जो, तुमनैं आप्तका विशेषण सर्वज्ञ कह्या सो सर्वज्ञका जनावनहारा ज्ञापक प्रमाण नांही। इंद्रियनितैं सर्वज्ञ दिखता नांही। कोई ताका एकदेश चिन्ह दिखता नांही। सर्वज्ञसमान कोई वस्तु नांही। किसी अर्थका संबंध नांही। वेदमैं लिख्या नाही। ऐसे पांचूही प्रमाणके गोचर नाही, अभावही सिद्ध होय

है। ताकूं कहिये, जो, सर्वज्ञका ज्ञापक प्रमाण है। सूक्ष्म जे परमाणु तथा धर्मादिक, अंतरित जे रामरावणादिक, दूर जे मेरुपर्वतादिक इन पदार्थनिका उपदेश सत्यार्थ है सो इनका प्रत्यक्ष देखनहारा सर्वज्ञ है तिसपूर्वक है। ए इंद्रियगोचर नांही। इनका चिन्हभी प्रत्यक्ष नांही। बहुरि असर्वज्ञका उपदेशपूर्वक नांही। साक्षात् देखै है ताके कहे सत्यार्थ है। जैसे नदी, द्वीप, देश, कोई साक्षात् देखै ताके कहै सत्यार्थ मानिये तैसेंही सर्वपदार्थ सर्वज्ञके कहे सत्यार्थ हैं॥ कोई कहै धर्म अधर्मकाभी निर्णय करना, सकलवस्तूका साक्षात् ज्ञातातांई कहा प्रयोजन है? ताकूं कहिये है। सर्वज्ञविना धर्म अधर्मकाभी निर्णय होता नांही। धर्म अधर्मका फल स्वर्ग मोक्ष नरक संसार कहिये है सो धर्म अधर्मका फलकै अरु धर्म अधर्मके साक्षात्संबंध देख्या होय ताहीका कह्या सत्यार्थ होय। सो सर्वका ज्ञाताविना यह संबंध दिखै नांही। बहुरि मीमांसककूं पूछिये, तुम सर्वज्ञका जनावनहारा ज्ञायक प्रमाणका निषेध करौ हौ; सो सर्व प्राणीनि संबंधी करौ हौ कि तुमसंबंधी करौ हौ? जो सर्व प्राणीनि संबंधी निषेध करौ हौ तौ सर्वक्षेत्रकालके प्राणी तुमनें देखिलीये, तब तुमही सर्वज्ञ भये। सर्वज्ञका अभाव काहेकूं कहौ। बहुरि तुमही संबंधी कहो हौ तौ युक्त नांही। तुमकूं पूछे है, समुद्रमें जल केते घडा है? जो न बतावोगे तौ सर्वज्ञका अभाव मति कहौ॥

बहुरि सांख्यमती तथा नैयायिकमती कहै, जो, सर्वज्ञ तौ माननां परंतु कर्मका नाशकरि सर्वज्ञ होय है यह बणे नाहीं । ईश्वर तौ सर्वथा सदामुक्त है, सदाही सर्वज्ञ है। ताकूं कहिये, जो ऐसा सर्वज्ञ ईश्वर जो शरीररहित कहोगे तौ मोक्षमार्गका उपदेशक न बणैगा, शरीरविना वचनकी प्रवृत्ति नांही। बहुरि शरीरसहित कहोगे तौ शरीरकर्मकाही कीया होहै। यासंबंधी सुखदुःखादिक सर्व वाकै ठहरैंगे। तातैं घातिकर्मका नाशकरि सर्वज्ञ होय। ताकै अघाति कर्मका उदय रहै। तैतैं शरीरसहित अवस्थान रहै। तातैं वचनकी प्रवृत्ति विना इच्छा होय। ताहीतैं मोक्षमार्गका उपदेश प्रवर्तै यह युक्त है ॥ याका विशेष वर्णन आगैं होयगा ॥ बहुरि बौद्ध सर्वज्ञ तौ मानै परंतु तत्त्वका स्वरूप सर्वथाक्षणिक स्थापै। यातैं ताकै तौ मोक्षमार्गका उपदेशकी प्रवृत्ति संभवैही नांही ॥ बहुरि नास्तिकवादीकै कछुही संभवै नाही ॥ इनि सर्वमतनिका संवाद श्लोकवार्तिकविषै कीया है तहांतैं जाननां। इहां ग्रंथविस्तार वधिजाय तातैं संक्षेप लिख्या है ॥ आगै सर्वार्थसिद्धि टीकाकार सूत्रका प्रारंभका संबंध कहै हैं ॥

कोई भव्य, निकट है सिद्धि जाकै, ऐसा बुद्धिमान् अपने हितका इच्छक है। सो किसी मुनिनके रहनेयोग्य स्थानक उद्यान, परम रमणीक जहां सिंहव्याघ्रादिक क्रूर जीव नाहीं, भले

जीवनिका रहनेका ठिकाणां, ताविषैं मुनिनिकी सभाविषैं बैठे, विनाही वचन अपनें सरीरहीकी शांतमुद्राकरि मानूं मूर्तिक मोक्षमार्गकों निरूपण करते, युक्ति-तथा आगमविषैं प्रवीण, परका हित कहनाही है एक कार्य जिनकै, भले भले बडे पुरुषनिकरि सेवने योग्य, जे निर्ग्रंथआचार्यनिमैं प्रधान, तिनिहि प्राप्त होयकरि विनयसहित पूछता हुवा— हे भगवान् या आत्माका हित कहां है? आचार्य कहते भये आत्माका हित मोक्ष है। तब फेरी शिष्य पूछी जो, मोक्षका कहां स्वरूप है? अरु याकी प्राप्तिका उपाय कहां है? तब आचार्य कहै है जो, यहु आत्मा जब समस्तकर्म-मलकलंकरहित होय तब शरीरकरिभी रहित होय, तब छद्मस्थके चिंतवनमैं न आवै, अरु स्वभाव-हीतैं भये ऐसे ज्ञानादि गुण जामैं पाइए, तथा निराबाध सुखस्वरूप अविनश्वर आत्माकीही इस संसार अवस्थातैं अन्य जो अवस्था सो मोक्ष है। सो यहु मोक्ष अत्यंत परोक्ष है। यातैं छद्मस्थ जे अन्यवादी, आपकूं तीर्थंकर मानैं ते याके स्वरूपकूं न पहूंचती जो वाणी ताकरि अन्यथा कल्पै है॥ प्रथम तौ सांख्यमती कहै है— पुरुषका स्वरूप चैतन्य है। सो स्वरूप ज्ञेयाकारके जाननैतैं पराङ्मुख है, ऐसा मोक्ष कहै है। सो यह कहनां छताही अणछतारूप है। जातै निराकार है सो जडवत् है, गधाके सींगवत् कल्पना है॥ बहुरि वैशेषिकमती कहै है— आत्माविषैं बुद्धि इच्छा द्वेष

धर्म अधर्म सुख दुःख संस्कार यत्न गुण है। तिनिका सर्वथा नाश होय है सो मोक्ष है। सो यहूभी कल्पना झूटी है। विशेषनिकरि शून्य तौ अवस्तु है॥ बहुरि बौद्धमती कहै है- जैसे दीपग बुझि जाय प्रकाशरहित होय जाय। तैसे आत्माभी ज्ञानादिप्रकाशरहित होय जाय तब निर्वाण कहिये। सो यहूभी कहनां गधाके सींगसारिखा तिनिके वचनकरिही आवै है॥ आदिशब्दतैं वेदांती ऐसा कहै है जो जैसे घट फूटिजाय तब घटका आकाश प्रगट होय तैसे देहका अभाव होय तब सर्वही प्राणी परमब्रह्ममैं लय होय जाय है। ब्रह्मका रूप आनंदस्वरूप है। जहां अत्यंत सुख है, ज्ञानहीकरि ग्राह्य है, इंद्रियगोचर नांही सो मोक्षविषै पाइए है ऐसा कहै है। सोभी कहना यथार्थ नांही। जातैं प्राणी तौ जुदे जुदे अपने स्वरूपमैं तिष्ठै है। परब्रह्ममैं लीन होना कैसै संभवै? इनकूं आदि जे अनेक मत हैं ते अपनी अपनी बुद्धितैं अनेक कल्पनां करै हैं। सो मोक्षका स्वरूप यथार्थ सूत्रकार आगै कहसी सो जाननां॥ बहुरि या मोक्षकी प्राप्तिके उपायप्रति भी अन्यवादी विसंवाद करै हैं। केईक कहै हैं चारित्रादिककी अपेक्षा नांही। केईक कहै हैं ज्ञानचारित्रविना श्रद्धानमात्रहीतैं मोक्ष हो है। केइक कहै हैं ज्ञानरहित चारित्रमात्रहीतैं मोक्ष होय है ऐसे कहै हैं। सो यहु कहनां अयुक्त है। जैसैं रोगीके रोगके दूरि होनेके कारन जे औषधका ज्ञान, श्रद्धान, आचरण,

ते जुदे जुदे रोगकूं दूरी न करि सकै तैसें मोक्षकी प्राप्तिके उपायभूत जे ज्ञान, श्रद्धान, चारित्र, ते जुदे जुदे मोक्षकूं न करि सकै हैं। तीनोंकी एकता है सोही मोक्षके प्राप्तिका उपाय है। सोही सूत्रकार जो श्रीउमास्वामी आचार्य सो सूत्र कहै है। यह सूत्र उपयोगस्वरूप आत्माकी सिद्धि होतैं ताके सुननेकी ग्रहणकरनेकी इच्छा होतैं प्रवर्तै है ॥

इहां नास्तिकमती कहै है—जो, पृथ्वी–अप–तेज–वायूका परिणामविशेष सोस्वरूप चेतनात्मक आत्मा है। सकललोकप्रसिद्ध यह मूर्ति है यातैं जुदा कोई और आत्मा नांही। तातैं कौनकै सर्वज्ञवीतरागपणां होय? वा कौनकै मोक्ष होय? वा कौनकै मोक्षमार्गका कहनां वा प्रवर्तनां वा प्राप्तिकी इच्छा होय? वहुरि ये सर्वही नांही तब मोक्षमार्गका सूत्र काहेकूं वर्तै। ताकूं कहिये है, हे नास्तिक! स्वसंवेदनज्ञानतैं आत्मा देखि, प्रत्यक्ष है कि नांही? जो आत्मा नांही है तौ "मै हौं" यहु स्वसंवेदनज्ञान कौनकै है?। वहुरि नास्तिक कहै यह स्वसंवेदन भ्रमरूप है। ताकूं कहिये, सदा बाधाकरि रहित होग ताकूं भ्रमरूप कैसे कहिये? तथा भ्रमभी आत्माविनां जडकै होय नांही। वहुरि पृथ्वी आदि जडविषैं यहु स्वसंवेदन संभवै नांही। जो या स्वसंवेदनके लोप मानिये तौ काहूकै अपने इष्टतत्त्व साधनेकी व्यवस्था न ठहरै। तातैं पृथ्वी आदि स्वरूप जो देह तातैं आत्मा चेतनस्वरूप

भिन्न तत्त्वही है ऐसा माननां। जातैं चेतनका उपादान कारण चेतनही होय। जडका उपादान कारण जडही होय। ऐसे न मानिये तौ पृथ्वी आदि तत्त्वभी तेरै न्यारे न ठहरै। सजातीय विजातीय तत्त्वकी व्यवस्था न ठहरै। एकतत्त्व ठरहै तौ नास्तिक च्यारि तत्त्व कहै है ताकी प्रतिज्ञा बाधित होय। बहुरि नास्तिक कहै जो चैतन्य गर्भादिमरणपर्यंत है, अनादि अनंत नांही। तातैं तत्त्व नांही। ताकूं कहिये द्रव्यतैं अनादि अनंतस्वरूप आत्मा है। पर्यायतैं अनित्यभी है। सर्वथा अनित्यही माननां बाधासहित है। द्रव्य अपेक्षाभी अनादि अनंत नित्य न मानिये तौ तत्त्वकी व्यवस्थाही न ठहरै॥

बहुरि बौद्धमती सर्ववस्तु सर्वथा क्षणिक मानै है। ताकै बंधमोक्षादिक न संभवै। करै औरही, फल औरही भोगवै, तब बंधमोक्षादिका आश्रयी द्रव्य नित्य मानैं विनां सर्वव्यवस्थाका कहनां प्रलापमात्र है॥ बहुरि सांख्य पुरुषकों सदा शिव कहै है, ताकै बंधमोक्षकी कथनी कहा? प्रकृतिकै बंधमोक्ष है, तौ प्रकृतितैं जड है ताकै बंधमोक्ष कहनांभी प्रलापही है॥ बहुरि नैयायिक वैशेषिक गुणकै गुणीकै सर्वथा भेद मानि अर समवाय संबंधसूं एकता मानै है। सो गुण गुणी समवाय ये तीन पदार्थ भये। तहां जीव तौ गुणी, अर ज्ञान गुण, समवाय जीवकूं ज्ञानी कीया। तब जीव

तौ जड ठहऱ्या । बंधमोक्ष जडकै कहना निरर्थक है । बहुरि समवाय गुणगुणीकै एकता करी, तब समवायभी तौ जीवतै एक हुवा चाहिये तौ याकूं एक कूंण करैगा । जो दूसरा समवाय मानिये तौ अनवस्था आवै । तातैं यहभी कहनां सबाध है ॥ बहुरि अद्वैतब्रह्म मानि बंधमोक्ष बतावै तौ कैसैं बनैं । बंध तौ अविद्यासूं उपजै है ब्रह्मकै अविद्या लागै नांही । न्यारा तत्त्व मानिये तौ द्वैतता आवै । अवस्तु मानिये तौ अवस्तूकी कथनी कहा? तातै यहभी माननां सबाध है । तातैं जैनमत स्याद्वाद है । वस्तुका स्वरूप अनंतधर्मात्मक कहै है । यामैं सर्वज्ञ वक्ता तथा गणधरादि यतीनिकी परंपरातैं यथार्थ कथनी है । तामैं बंध, मोक्ष, तथा बंध करनेवाला, छूटनेवाला आदि सर्व व्यवस्था संभवै है । जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ये छह द्रव्य हैं । तिनिमैं जीव तौ अनंतानंत है । पुद्गल तिनितैभी अनंतानंत गुणे हैं । धर्म अधर्म आकाश एक एक द्रव्य हैं । काल असंख्याते द्रव्य हैं । इनि सबनिकै एक एक द्रव्यके तीन कालसंबंधी अनंते अनंते पर्याय हैं । सो इनिकी कथनी सद्रूप, असद्रूप, एकरूप, अनेकरूप, भेदरूप, अभेदरूप, नित्यरूप, अनित्यरूप, शुद्धरूप, अशुद्धरूप इत्यादि नयविवक्षातैं कथंचित् सर्व संभवै हैं । बहुरि निमित्तनैमित्तिकभावतैं पांच तत्त्वकी प्रवृत्ति होय आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष । आस्रवबंधके भेद पुण्यपाप हैं । ऐसैं कथंचित् सर्व

निर्बाध जैसैं वस्तु विद्यमान है तैसैंही ताकी कथनी है, कल्पित नांही । तातैं तत्त्वार्थसूत्रविषैं वस्तुका कथन यथार्थ है । ताका प्रथमसूत्र ऐसा—

॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥

॥ सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र ए तीनूं हैं ते भेले भयें एक मोक्षमार्ग है ॥

याका अर्थ—सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र ए तीनूं हैं ते भेले भयें एक मोक्षमार्ग है ॥ इहां सम्यक् ऐसा पद अव्युत्पन्नपक्ष अपेक्षातौ रूढ है । बहुरि व्युत्पन्नपक्ष अपेक्षा 'अंच्' धातु गति अर्थ तथा पूजन अर्थविषैं प्रवर्तै है, कर्ता अर्थविषैं 'क्विप्' प्रत्यय है, तातैं इहां प्रशंसा अर्थ ग्रहण कीया है । बहुरि यह सम्यक्पदकी प्रत्येक समाप्ति करना तीनांउपरि लगावना । तब ऐसैं कहिये, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र । इनि तीनांहीका स्वरूप लक्षणथकी वा प्रकार भेदथकी तौ सूत्रकार आगैं कहसी । इस सूत्रमें नाममात्र कहे । बहुरि टीकाकार व्याख्यान करै हैं । पदार्थनिका यथार्थज्ञानके विषयविषैं श्रद्धानका ग्रहणके अर्थि तौ दर्शनकै सम्यक् विशेषण है । बहुरि जिसजिस प्रकार जीवादिक पदार्थकी व्यवस्था है, तिसतिस प्रकार निश्चयकरि जानना, सो सम्यग्ज्ञान है । याकै सम्यक् विशेषण विमोह संशय विपर्ययकी निवृत्तिकै अर्थि है । बहुरि संसारके कारण जे मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग इनितैं भये आस्रव बंध तिनकी प्रवृत्ति प्रति उद्यमी जो

सम्यग्ज्ञानी पुरुष, ताकै कर्मका जातैं ग्रहण होय ऐसी जो क्रिया ताका निमित्त जो क्रिया, ताका त्याग, सो सम्यक्चारित्र है । तथा कर्मनिका ' आ ' कहिये ईषत् ' दान ' कहिये खंडन ताका निमित्त जो क्रिया ताका त्याग, आत्माकै एकदेशकर्मक्षपणांका कारण परिणामविशेष ताकाभी त्याग, तथा कर्मनिका समस्तपणैं क्षयकारणपरिणाम चौदह गुणस्थानके अंतसमयवर्ती सो सम्यक् निवृत्तिरूप चारित्र है, ऐसाभी अर्थ है ॥ याकै अज्ञानपूर्वक चारित्रकी निवृत्तिकै अर्थि सम्यक् विशेषण है । जातैं इनि तीननिकी निरुक्ति ऐसी है, 'पश्यति' कहिये जो श्रद्धान करै सो दर्शन है, इहांतो कर्तृसाधन भया । तहां करनहारा आत्मा है सोही दर्शन है । बहुरि 'दृश्यते अनेन' कहिये श्रद्धिये याकरी सो दर्शन, इहां करणसाधन भया । बहुरि 'दृष्टिमात्रं' कहिये श्रद्धाना सो दर्शन, इहां भावसाधन भया । दर्शनक्रियाहीकूं दर्शन कह्या । ऐसैंही ' जानाति ' कहिये जो जानै सो ज्ञान, इहां कर्तृसाधन भया । जानने वाला आत्माहीकूं ज्ञान कह्या । बहुरि ' ज्ञायते अनेन ज्ञानं ' जाकरि जानिये सो ज्ञान, इहां करणसाधन भया । बहुरि ' ज्ञप्तिमात्रं ज्ञानं ' जानना सो ज्ञान, इहां भावसाधन भया । जाननरूप क्रियाकूं ज्ञान कह्या । बहुरि ' चरति इति चारित्रं ' इहां आचरण करै सो चारित्र है, ऐसैं कर्तृसाधन भया । जातैं आत्माही चारित्र है । बहुरि ' चर्यते अनेन ' इहां

जाकरि आचरण करिये सो चारित्र है, ऐसैं करणसाधन भया । बहुरि 'चरणमात्रं चारित्रं' इहां भावसाधन भया । ऐसैं आचरनेहीकूं चारित्र कह्या ॥

इहां अन्यवादी सर्वथा एकांती तर्क करै— जो ऐसैं कहतैं सोही कर्ता, सोही करण आया, सो तो विरुद्ध है । विरुद्ध दोय भाव एककूं होय नांही । ताकूं कहिये, तेरै सर्वथा एकांत पक्ष है, जातैं विरोध भासै है । स्याद्वादीनिकै परिणामपरिणामीकै भेदविवक्षाकरि विरोध नांही है । जैसैं अग्नि अपने दाहपरिणामकरि इंधनकूं दग्ध करै है तैसैं इहांभी जाननां । ऐसैं कह्या— जो कर्ता करण क्रियारूप तीन भाव ते पर्यायपर्यायीकै एकपणां अनेकपणांप्रति अनेकांतकी विवक्षाकरि स्वतंत्रपरतंत्रकी विवक्षा एकभी वस्तुविषैं अनेक स्वतंत्र कर्ता परतंत्र करणादि भावविषैं विरोध नांही है ॥ बहुरि इहां कोई पूछै ज्ञानका ग्रहण आदिविषैं चाहिये । जातैं ज्ञानकरि पहलै जानिये, पीछै ताविषैं श्रद्धान होय है । बहुरि व्याकरणका ऐसा न्याय है जो द्वंद्वसमासविषैं जाके अल्प अक्षर होय सो पहली कहनां । ताकूं कहिये यह युक्त नाही । दर्शन ज्ञानकी एककाल उत्पत्ति है । जा समय दर्शनमोहका उपशम तथा क्षयोपशम तथा क्षयतैं आत्माकै सम्यग्दर्शन भाव होय है, ताही समय मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानको अभाव होय, मतिज्ञान श्रुतज्ञान होय है । जैसैं सूर्यके बादला दूर

होतें प्रताप प्रकाश दोऊ एककाल प्रकट होय तैसें इहांभी जाननां । बहुरि व्याकरणका न्याय है, जो, जाके अल्प अक्षर होय, तातें जो पूज्य प्रधान होय सो पहली आवै । सो ज्ञानकूं सम्यग्दर्शन सम्यक्रूप करे है, तब सम्यग्ज्ञान नाम पावै है । तातें सम्यग्दर्शन पूज्य प्रधान है । तातें पहलै सम्यग्दर्शनही चाहिये । बहुरि सम्यग्ज्ञानपूर्वक चारित्र सम्यक् होय है । तातें चारित्रके पहलै ज्ञान कह्या ॥ बहुरि मोक्ष सर्वकर्मका अत्यंत अभाव होय ताकूं कहिये । बहुरि ताकी प्राप्तिका उपाय ताकूं मार्ग कहिये । ऐसें मोक्षमार्गशब्दका अर्थ जाननां ॥

इहां मार्गशब्दकै एकवचन कह्या, सो सम्यग्दर्शनादिक तीन हैं, तिनिकी एकता होय सो साक्षात् मोक्षमार्ग है ऐसें जनावनेके अर्थि है । जुदे जुदे मोक्षमार्ग नांही । इहां साक्षात्पदतें ऐसा जनावै है, जो तीनूंनिका एकदेश परंपरा मोक्षका कारण है । अर पूर्णता साक्षात् मोक्षका कारण है ॥ बहुरि यहु मोक्षमार्गका स्वरूप विशेपरूप असाधारण जाननां । सामान्यपनें कालक्षेत्रादिकभी मोक्षप्रति कारण हैं । तातें सम्यग्दर्शनादिकही मोक्षमार्ग है यह नियम जाननां । बहुरि ऐसा नियम न कहनां, जो, ये मोक्षमार्गही है । ऐसें कहतें ए स्वर्गादि अभ्युदयके मार्ग न ठहरै । तातें पूर्वोक्तही कहनां ॥ कोई कहै तपभी मोक्षका मार्ग है, यहभी क्यों न कह्या? ताका उत्तर जो, तप

है सो चारित्रस्वरूप है । सो चारित्रमें आयगया ॥ कोई कहै, सम्यग्दर्शनादि मोक्षके कारण हैं तो केवलज्ञान उपजे ताहीसमय मोक्ष हुवा चाहिये । ताकूं कहिये, जो, अघातिकर्मके नाश करनेंकी शक्ति आत्माकी सम्यग्दर्शनादिककी सहकारिणी है। तथा आयुःकर्मकी स्थिति अवशेष रहै है। तातें केवलीका अवस्थान रहे है। वह शक्ति सहकारिकारण मिलै तब मोक्ष होय है। बहुरि या सूत्रकी सामर्थ्यतें मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान मिथ्याचारित्र संसारके कारण हैं ऐसाभी सिद्ध हो है ॥

आगें आदिविषें कह्या जो सम्यग्दर्शन ताका लक्षणनिर्देशके अर्थि सूत्र कहे हैं ॥

॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥

याका अर्थ— तत्त्वकरि निश्चय किया जो अर्थ ताका जो श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है ॥ 'तत्' ऐसा शब्द सर्वनाम पद है तातें सामान्यवाचक है। याके भाव अर्थविषें त्वप्रत्यय होय है। तब तत्त्व ऐसा भया । याका यहु अर्थ, जो, जा वस्तूका जैसा भाव तैसाही ताका होना ताकूं तत्त्व कहिये ॥ बहुरि "अर्यते इति अर्थः" जो प्रमाणनयकरि निश्चय कीजिये ताकूं अर्थ कहिये। सो तत्त्व कहिये यथावस्थितस्वरूपकरि निश्चय निर्बाध होय सो तत्त्वार्थ ऐसें अनेकांतस्वरूप प्रमाणनयसिद्ध है, ताकूं तत्त्वार्थ कहिये ॥ अथवा तत्त्व कहिये यथावस्थित वस्तु, सोही अर्थ

कहिये निश्चय कीजिये सो तत्त्वार्थ अभेदविवक्षाकरि ऐसाभी अर्थ है । याका श्रद्धान कहिये प्रतीति रुचि ताकूं तत्त्वार्थश्रद्धान कहिये । तत्त्वार्थ जीवादिक हैं ते आगें कहसी ॥

इहां प्रश्न— जो ' दृशि ' ऐसा धातु है सो देखनेके अर्थविषैं है । तातैं श्रद्धान अर्थ कैसैं होय? ताका उत्तर-- धातुनिके अनेक अर्थ हैं। तातैं दोष नांही । बहुरि कहै, जो, प्रसिद्ध अर्थ तौ देखनाही है, ताकूं क्यों छोडिये? ताकूं कहिये, इहां मोक्षमार्गका प्रकरण है, सो यामैं मोक्षका कारण आत्माका परिणाम है । सोही लैणा युक्त हैं । देखना अर्थ लीजिये तौ देखणां तौ चक्षु आदि निमित्तकरि अभव्य आदि सर्व जीवनिकै है । सो सर्वहीकै मोक्षका कारणपणा आवै । तातैं वह अर्थ न लियां । इहां प्रश्न जो, अर्थश्रद्धान ऐसाही क्यों न कह्या? ताका उत्तर— जो, ऐसैं कहै सर्व अर्थग्रहणका प्रसंग आवै । अर्थ नाम धनकाभी है । तथा अर्थ नाम प्रयोजनकाभी है । तथा सामान्यअर्थकाभी नाम है । तिनिकाभी श्रद्धान सम्यग्दर्शन ठहरै । तातैं तिनितैं भिन्न दिखावनेके अर्थि अर्थका तत्त्व विशेषण कीया है । बहुरि प्रश्न जो, तत्त्वश्रद्धान ऐसाही क्यों न कह्या? ताका उत्तर-- ऐसैं कहै अनर्थ जे सर्वथैकांतवादिनिकरि कल्पित, ताका प्रसंग आवै है । तथा भावमात्रका प्रसंग आवै है । केई वादी सत्ता तथा गुणत्व तथा कर्मत्व इनिकूंही तत्त्व कहै हैं ।

अथवा तत्त्व एकपणांहीकूं कहे हैं, ताका प्रसंग आवै। केई ऐसें कहे हैं- जो, सर्ववस्तु एक पुरुषही है। तातें तिनि सर्वनितें भिन्न अनेकांतात्मक वस्तूका स्वरूप है, ऐसें जनावनेके अर्थि तत्त्वार्थका ग्रहण कीया है॥

ऐसा तत्त्वार्थश्रद्धानस्वरूप सम्यग्दर्शन है, सो दोय प्रकार है। एक सरागसम्यक्त्व, एक वीतरागसम्यक्त्व। तहां प्रशम, संवेग, अनुकंपा, आस्तिक्य इनि च्यारि भावनिकरि प्रगट होय; सो तो सरागसम्यग्दर्शन है। तहां अनंतानुबंधी कषायकी चौकडीसंबंधी रागद्वेषादिकका तथा मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्वका जहा उदय नांही ताकूं प्रशम कहिये। बहुरि पंचपरिवर्तनरूप जो संसार तातें भय उपजना ताकूं संवेग कहिये। बहुरि त्रस स्थावर प्राणीनिविषैं दया होनां ताकूं अनुकंपा कहिये। बहुरि जीवादि तत्त्वनिविषैं युक्ति आगमकरि जैसाका तैसा अंगीकार करनां माननां ताकूं आस्तिक्य कहिये। ए च्यारी चिन्ह सम्यग्दर्शनकूं जनावै हैं, ए सम्यग्दर्शनके कार्य हैं। तातैं कार्यकरि कारणका अनुमान होय है। तहां अपनें तो स्वसंवेदनतैं जाने जाय है। अर परके कायवचनके क्रियाविशेषतैं जाने जाय है। सम्यग्दर्शनविनां मिथ्यादृष्टीके ऐसें होय नांही। इहां कोई कहै, क्रोधका उपशम तौ मिथ्यादृष्टीकैभी कोईकै होय है, ताकैभी प्रशम आवै है। ताकूं

कहिये— मिथ्यादृष्टिनिकै अनंतानुवंधी मानका उदय है । सर्वथा एकांततत्त्व मिथ्या है, ताविषैं सत्यार्थका अभिमान है । बहुरि अनेकांतात्मकतत्त्वविषैं द्वेषका अवश्य सद्भाव है । बहुरि स्थावरजीवनिका घात निःशंकपणैं करै है । तातैं प्रशमभी नांही, अर संवेग अनुकंपाभी नांही । कोई कहै— स्थावरजीवनिका घात तौ अज्ञानतैं सम्यग्दृष्टीकैभी होय है, तौ ताकै अनुकंपा कैसैं कहिये? ताका उत्तर— जो सम्यग्दृष्टीकै जीवतत्त्वका ज्ञान है, सो अज्ञानतैं तौ घातविषैं प्रवृत्ति नांही। चारित्रमोहके उदयतैं अविरतिप्रमादतैं घात होय, तहां एह अपनां अपराध मानै। ऐसा तौ नाही, जो ए जीवही नांही तथा जीवनिके घाततैं कहा बिगाड है? । जो ऐसा मानै, तौ मिथ्यात्वकाही सद्भाव है ॥

बहुरि कहै, जो, वाकै अपने माने तत्त्वविषैं आस्तिक्य है। ताका उत्तर— मिथ्यादृष्टि तत्त्वकों सर्वथा एकांत श्रद्धै है । तहां आस्तिक्य है सो मिथ्यात्व अतिदृढ भया । जातैं सर्वथा एकांत वस्तुका स्वरूप नाही । प्रत्यक्षादि प्रमाणकरि बाधित है । तातैं जे सर्वथा एकांत श्रद्धान करै हैं ते अर्हंतके मततैं बाह्य हैं, मिथ्यादृष्टी हैं, नास्तिक हैं। बहुरि प्रश्न जो, सम्यग्दर्शनके चिन्ह प्रशमादिक कहे तिनिकों आपकै स्वसंवेदनगोचर कहे तिनितैं सम्यक्तका अनुमान करना कह्या तौ

तत्त्वार्थश्रद्धानहीकूं स्वसंवेदनगोचर क्यों न कह्या? ताका उत्तर— जो, तत्त्वार्थश्रद्धानरूप जो सम्यग्दर्शन है सो दर्शनमोहके उपशम क्षयोपशम क्षयतैं जो आत्मस्वरूपका लाभ होय ताकूं कहिये है। सो यहु छद्मस्थकै स्वसंवेदनगोचर नाही अर प्रशमादि स्वसंवेदनगोचर है। तातैं इनितैं सम्यग्दर्शनका अनुमान करनां। ए अभेदविवक्षातैं सम्यग्दर्शनतैं अभिन्न है। तथापि भेदविवक्षातैं भिन्न है। जातैं ए सम्यग्दर्शनके कार्य है तातैं कार्यतैं कारणका अनुमान हो है। केई वादी सम्यग्ज्ञानहीकों सम्यग्दर्शन कहे हैं। तिनप्रति ज्ञानतैं भेद जनावनेकै अर्थ सम्यग्दर्शनके कार्य जे प्रशमादिक ते जुदे कहिये। तिनितैं ताकूं जुदा जानिये॥

कोई कहै— प्रशमादिक मिथ्यादृष्टिसम्यग्दृष्टीकी कायादिकी क्रियाका व्यवहार समान दीखै तहां कैसैं निर्णय होय? ताका उत्तर— जो आपकै जैसे दीखै तैसे पैलाकाभी परीक्षाकरि निर्णय करनां। बहुरि वीतरागकै सम्यग्दर्शन अपने आत्माके विशुद्धपरिणामतैंही गम्य है। तहां प्रशमादिकका अधिकार नाही। ऐसैं तत्त्वार्थश्रद्धान दर्शनमोहरहित आत्माका परिणाम है सो सम्यग्दर्शन है। यातैं केई अन्यवादी इच्छादिक कर्मके परिणामकूं सम्यग्दर्शन कहे हैं तिनिका निराकरण भया। जातैं कर्मका परिणाम कर्मअभावरूप जो मोक्ष ताका कारण होय नाही॥

आगै यहु सम्यग्दर्शन जीवादि तत्त्वार्थगोचर है सो कैसें उपजै है? ऐसा प्रश्न होतें, सूत्र कहै हैं—

॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥

याका अर्थ— तत् कहिये सो सम्यग्दर्शन निसर्गतें अर अधिगमतें उपजै है । निसर्ग स्वभावकूं कहिये । अधिगम अर्थके ज्ञानकूं कहिये । इनि दोऊकूं सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिरूप क्रियाके कारणकरि कहे । ऐसें सम्यग्दर्शन है सो निसर्ग वा अधिगम इन दोऊनितें उपजै है ऐसा जानना । इहां प्रश्न— निसर्गज सम्यग्दर्शनविषें अर्थका ज्ञान है कि नांही? जो है तो यहभी अधिगमज भया । बहुरि जो अर्थावबोध नाही है तौ विनांजाने तत्त्वार्थविषें श्रद्धान कैसे भया । ताका उत्तर— दोनूही सम्यग्दर्शनविषें अंतरंगकारण तौ दर्शनमोहका उपशम क्षयोपशम क्षय तीनूंही समान हैं । ताके होतें जो बाह्य परोपदेशविनां होय ताकूं तौ निसर्गज कहिये । बहुरि जो परोपदेशपूर्वक होय ताकूं अधिगमज कहिये इनिमें यह भेद है ॥ इहां सूत्रविषें तत् ऐसा शब्दका ग्रहण, सो पहले सूत्रमें सम्यग्दर्शन कह्या है, ताके ग्रहण अर्थि कह्या है । कोई कहै— लगता सूत्रविषें कह्या सो विना तत् शब्दही ग्रहण होय है । ताकूं कहिये, मोक्षमार्गका प्रकरण है अर मोक्षमार्ग प्रधान है,

तातें विना तत् शब्द ताका ग्रहणका प्रसंग आवै है। तातें याके प्रसंग दूरि करनेकों तत् शब्द है। जातें ज्ञानचारित्र ए दोय हेतु नांही बणै है। कैसे? केवलज्ञान तौ श्रुतज्ञानपूर्वक है, तातैं निसर्गपणां नांही संभवै। बहुरि श्रुतज्ञान परोपदेशपूर्वकही है। स्वयंबुद्धकै श्रुतज्ञान हो है सोभी जन्मांतरके उपदेशपूर्वक है। तातैं याकैभी निसर्गजपनां नांही। बहुरि मति अवधि मनःपर्ययज्ञान निसर्गजही हैं। इनिकै अधिगमजपनां नाही। कोई कहे-- ज्ञानसामान्य तौ दोय हेतुतैं उपजै ऐसा आया। ताका उत्तर इहां सामान्य अपेक्षा नाही विशेषापेक्षा है। दर्शनके भेदनिकी अपेक्षा तीनूं प्रकारके कैं दोऊ हेतु संभवे हैं। तैसैं ज्ञानके भेदनिमैं जुदा जुदाकै दोऊ हेतु नाही। बहुरि चारित्र है सो अधिगमजही है। जातैं श्रुतज्ञानपूर्वक है। तातैं मोक्षमार्गका संबंध न लैनेकूं इहां तत् शब्द कह्या है॥

बहुरि प्रश्न— जो निसर्गभी ज्ञानका नाम, अधिगमभी ज्ञानहीका नाम, उपदेश विना उपदेशकाही भेद है। ऐसैं होतैं ज्ञानहीतैं सम्यक्त्वका उपजना ठहऱ्या। तब ज्ञान कारण ठहऱ्या। अरु सिद्धांत ऐसा है, जो सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान युगपत् होय है। सो यहु कैसैं? ताका उत्तर— सम्यग्दर्शनके उपजावने योग्य ज्ञान ज्ञानावरणीयके विशेषतैं बाह्य परोपदेशतैं पहलै होय है।

तिसतें सम्यग्दर्शन उपजै है। पीछै सम्यग्दर्शन होय तब सम्यग्ज्ञान नाम पावै। तातें यहु अपेक्षा जाननी। याकी उत्पत्तीका विशेष ऐसा है— अंतरंग तौ दर्शनमोहका उपशम क्षयोपशम क्षय होय। बहुरि बाह्य द्रव्य क्षेत्र काल भावादि समस्त कारण मिलै तब उत्पत्ति होय ॥ इहां कोई पूछै— दर्शनमोहका उपशमादिक कारण है, तौ सर्वही प्राणिनिकै सदांही क्यों न होय? ताका उत्तर— दर्शनमोहका उपशमादि करणहाराभी प्रतिपक्षी द्रव्य क्षेत्र काल भाव हैं। ते कौन सो कहिये? जिनेंद्रबिंबादिक तौ द्रव्य हैं। समवसरणादिक क्षेत्र हैं। अर्द्धपुद्गलपरिवर्तनादिक काल है। अधःप्रवृत्तिकरणादिक भाव हैं। इनिके होतें दर्शनमोहादिकका उपशमादि हो है। सो इनिका निमित्त होनां भव्य जीवहीकै है। अभव्यकै नाही होय है। यह वस्तुस्वभाव है। ऐसैं निकटभव्यकै दर्शनमोहका उपशमादिक अंतरंग कारण होतें बाह्य निसर्ग तथा अधिगम ज्ञान होतें सम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति होय है ॥

आगें तत्त्व कहा है? ऐसा प्रश्न होतें तत्त्वकौं कहै हैं—

जीवाजीवास्रवबन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥ ४ ॥

याका अर्थ— जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष ये सात हैं ते तत्त्व हैं ॥

तहां चेतनालक्षण तो जीव है । सो चेतना ज्ञानचेतना, कर्मचेतना, कर्मफलचेतना ऐसैं अनेकरूप है। यातें उलटा चेतनारहित होय सो अजीव है । शुभअशुभ कर्मका आगमनका द्वाररूप आस्रव है। जीव अर कर्मके प्रदेश एकक्षेत्रावगाहसंबंधरूप बंध है । आस्रवका रुकनां सो संवर है। एकदेशकर्मका क्षय सो निर्जरा है। समस्तकर्मका वियोग (क्षय) सो मोक्ष है। इनिका विस्ताररूप व्याख्यान आगें होयगा । तिनिमें सर्वफलका आत्मा आश्रय है, तातें सूत्रमें आदिविषै जीव कह्या । ताके उपकारी अजीव है, तातें ताकै लगताही अजीव कह्या । जीव अजीव दोऊनिके संबंधतें आस्रव है, तातें ताके अनंतर आस्रव कह्या । आस्रवपूर्वक बंध हो है, तातें ताकै लगता बंध कह्या। संवर होतें बंधका अभाव हो है, तातें ताकै लगताही संवर कह्या । संवरपूर्वक निर्जरा होय है, तातें ताके लगता निर्जरा कह्या । अंतकेविषै मोक्षकी प्राप्ति है, तातें अंतमें मोक्ष कह्या। ऐसें इनिका पाठका अनुक्रम है ॥

इहां कोई कहै— पुण्यपापका ग्रहण यामें करणां योग्य था, अन्य आचार्यनिनें नव पदार्थ कहे हैं। ताकूं कहिये— पुण्यपाप आस्रवबंधमें गर्भित हैं, तातैं तिनिका ग्रहण न किया । फेरि कहै, जो, ऐसें है तो आस्रवादिकभी जीवअजीवविषैं गर्भित हैं, दोयही तत्त्व कहने थे । ताका

समाधान--- जो, इहां प्रयोजनविशेष है सोही कहिये है। इहां प्रकरण मोक्षका है, तातैं मोक्ष तौ अवश्य कह्या ही चाहिये। बहुरि मोक्ष है सो संसारपूर्वक है। संसारके प्रधानकारण आस्रव बंध हैं, सो कहनांही। बहुरि मोक्षके प्रधानहेतु संवरनिर्जरा हैं, तेभी कहनाही। यातैं प्रधानकारण कार्यके अपेक्षा इनिकूं जुदे कहे। सामान्यमें अंतर्भूत हैं तोऊ विशेषका कहना प्रयोजन आश्रय है। जैसैं सेनाविषैं क्षत्रिय भेले होय तब कहै 'सर्व आये तथा फणाणे बडे सुभट हैं तेभी आये' ऐसैं इहांभी जाननां॥ बहुरि कोई तर्क करै, सूत्रविषैं तत्त्वशब्द तौ भाववाची एकवचन नपुंसकलिंग है। बहुरि जीवादिक द्रव्यवाचक बहुवचन पुरुषलिंग धन्या सो यह कैसैं? ताका उत्तर— जो, द्रव्य भाव तौ अभेदरूप है, तातैं दोष नांही। बहुरि लिंग संख्या तत्त्वशब्द भाववाची है, तहां एकवचनही होय है, तथा नपुंसकलिंगी है, तातैं अपनी लिंगसंख्याकौं छोडै नांही, तातैं दोष नांही। ऐसैं ही आदिसूत्रविषैं जाननां॥

इहां विशेष कहिये हैं— मोक्षमार्गके प्रकरणमें श्रद्धानके विषय सातही तत्त्व हैं। अन्यवादी केई तत्त्व एकही कहै हैं। केई प्रकृतिपुरुष दोय कही इनिके पचीस भेद कहै हैं। केई द्रव्यगुणादि सप्त पदार्थ कहै। केई पृथ्वी आदि पंच तत्त्व कहै हैं। केई प्रमाणप्रमेय आदि षोडश पदार्थ कहै हैं।

तथा एकद्रव्य अनंतपर्यायात्मक है। ऐसैं अनंत द्रव्य हैं॥ तहां आचार्य मध्यमप्रस्थान विचारि कहे हैं;। संक्षेप कहे तो विशेष ज्ञानीही समझै। विस्तार कहै तो कहांताई कहै। तातैं अवश्य श्रद्धानका विषय थे ते कहे । केई कहै हैं, एक जीवही तत्वार्थ है; सो अयुक्त है । परकूं जीवकी सिद्धि वचनतैं कराई है । वचन है सो अजीव है । जो वचनकूंभी जीव कहिये, तौ याकै स्वसंवेदन चाहिए, सो नांही । बहुरि वह कहै, दूजा जीव होय तौ ताकै स्वसंवेदन कहिये एकही परमात्मा है, सो अविद्याकरि बहुत दीखै है। ताका उत्तर— जो, जीव तौ बहुत हैं, तोकूं एक अविद्याकरि दीखै है। जो तू कहै 'मोसिवाय दूजा कोई नांही' तौ दूजाभी कहै, मोसिवाय और कोई नांही। तौ एकै कहै सर्वशून्यता आवै है। जो कहै 'मोसिवाई' दूजा है कि नांही? ऐसा संशय है। तौ अद्वैतकाभी निर्णय न होयगा। जो कहै, 'आगमतैं एक पुरुषकी सिद्धि है' ताकूं कहिये, हमारे आगमतैं नानापुरुषकी सिद्धि है। प्रत्यक्षप्रमाणतैं हमारा आगम तौ सिद्ध हो है । अर एक पुरुष कहनहारा आगम प्रत्यक्षप्रमाणतैं मिलै नाही । बहुरि जैसैं वचन अजीव है, तैसैं अजीवभी पृथ्वी आदि बहुत हैं। बहुरि जीवकै कायादिककी क्रियारूप आस्रव है। बहुरि बंध है सो पुरुषकाभी धर्म है। जातैं जडकाही धर्म होय तौ पुरुष बंधका फल काहेकूं पावै । बहुरि संवर निर्जरा मोक्ष हैं तेभी

जीवके धर्म हैं। ऐसें पांचोंही तत्त्व जीव अजीव इनि दोऊनिके धर्म हैं ते श्रद्धानके ज्ञानके चारित्रके विषय हैं। अन्य सर्वविषय इनिमें अंतर्भूत हैं॥

आगें कहे हैं, कि, याप्रकार कहे जे सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक तत्त्व तिनिका लोकव्यवहारविषें व्यभिचार आवै है। नाममात्रकूंभी जीव कहे हैं। स्थापनामात्रकूंभी जीव कहे हैं। द्रव्यकूंभी जीव कहे हैं। भावकूंभी जीव कहे हैं। तातें तिनिका यथार्थस्वरूप समझेंविना अन्यथापना आवै है। ताके निराकरण अर्थ सूत्र कहै हैं—

नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव इनि च्यारिनिकरि तिनि जीवादिकपदार्थनिका न्यास कहिये निक्षेप है। जो वस्तुमें जो गुण न पाइए ताविषें लोकव्यवहारप्रवृत्तिके अर्थि अपने उपयोगतें नाम करना, ताकूं नाम कहिये। इहां गुणशब्दतें द्रव्य कर्म जाति ए सर्वभी ग्रहण करणा। तहां जातिद्वार नाम तौ जैसें गऊ अश्व घट है। गुणद्वार जैसें काहूकूं धवलगुणके द्वार धवल कहिये। कर्मद्वार जैसें चलतेकूं चलता कहिये। द्रव्यद्वार जैसें कुंडल द्रव्य पहरे होय, ताकूं कुंडली कहिये, तथा दंड लिये होय ताकूं दंडी कहिये। इनिविना वक्ता इच्छातें वस्तुका

नाम धरे, ताकूं नामनिक्षेप कहिये। जैसें पुरुषका हाथी सिंह नाम धन्या तहां हाथीके तथा सिंहके द्रव्य गुण क्रिया जति कछुभी न पाइये, तहां वक्ताकी इच्छाही प्रधान है । इहां कोई पूछे— नामका व्यवहार अनादिरूढ है, जैसें जाति ऐसा जातीका नाम, गुण ऐसा गुणका नाम, कर्म ऐसा कर्मका नाम इत्यादि ए नाम कैसे हैं? ताका उत्तर— जो, अनादिहीतें वक्ता हैं, अनादिहीतें ये नाम हैं । प्रधानगुणपणांका विशेष है, तहां वक्ता वस्तूके गुण आदि प्रधानकरि किसीका नाम कहै, तहां तौ तिस हेतूतें नाम जाननां ॥ बहुरि जहां अपनी इच्छाहीकों प्रधान करै, गुणादिकका आश्रय न ले, तहां नामनिक्षेप जाननां ॥ बहुरि बौद्धमती कहै हैं— जो, नामविषैं वक्ताकी इच्छाही कारण है, गुणादिक तौ वस्तूके निजस्वभाव नांही, कल्पित हैं । सो यहु अयुक्त है । गुणादिक तौ प्रतीतिसिद्ध हैं । प्रतीतिका लोप करनां प्रमाण नांही ॥

वस्तूकेविषैं अन्यवस्तुसूं समान परिणाम हैं ताकूं जाति कहिये हैं । जैसें गऊजातिकरि सर्व गऊ समान हैं ॥ बहुरि गुणपर्यायके आश्रयकूं द्रव्य कहिये। जैसें पीततादि गुण कुंडलादि पर्यायका आश्रय सुवर्ण। बहुरि पीतता आदिकों गुण कहिये। बहुरि कर्म क्रियाकूं कहिये । जैसें चलताकूं चलता कहिये। ऐसें ये प्रतीतिसिद्ध हैं । इनकी विशेष चरचा श्लोकवार्तिकतें जाननी ॥ बहुरि

काष्ठपुस्त चित्रकर्म अक्षनिक्षेप इनि आदिविषैं सो यहु है ऐसैं स्थापन कीजिये ताकूं स्थापनानिक्षेप कहिये ॥ इहां प्रयोजन ऐसा— जो पहलै नाम लेयकै पीछैं अन्यवस्तुविषैं अन्यकी प्रतिष्ठा करनी। ताके भेद दोय, एक सद्भावस्थापना, एक असद्भावस्थापना। तहां भावरूप जो वस्तु, ताकै समान प्रतिमा जामैं मुख्य आकार ऐसा होय, जो 'देखनेवालेकै भावरूपकी बुद्धि उपजि आवै' ताकूं सद्भावस्थापना कहिये। बहुरि मुख्य आकारशून्य वस्तुमात्र होय ताकूं असद्भावस्थापना कहिये। जामैं पैलाके उपदेशहीतैं सो यहु भावरूप है ऐसैं जानी जाय ॥ इहां ऐसा जानना—जो नामनिक्षेपविषैं तौ लोकके आदर तथा उपकारकी वांछा न होय है अरु स्थापनानिक्षेपविषैं आदर उपकारकी वांछा देखिये है। तहां कोई स्थापना तौ लोक ऐसी करै है, जो घने काल रहबो करै। बहुरि कोई ऐसी करै है, जो अल्पकालही रहै ॥ इहां कोई पूछै—अरहंतादिकका असद्भावस्थापन अन्यवस्तुविषैं कीजिये कि नांही? ताका उत्तर—जो, इस हुंडावसर्पिणी कालविषैं न करिये। जातैं अन्यमती अतदाकार मूर्ति अनेक देवनिकी स्थापन करे हैं। तहां यह निश्चय न होय, जो, यह मूर्ति कौनकी है। तातैं मुख्य आकार जामैं करिये, देखतेही वीतरागमुद्राकी बुद्धि उपजि आवै ऐसीही अरहंतादिककी स्थापना युक्त है। ऐसैं वसुनंदिसिद्धांतचक्रवर्ती आदिके वचन हैं। उनिने मने करी है। मुख्यआकारविषैंभी

काष्ठादिकके स्थापनतें संघभेद पडिगया है तौ अतदाकारकी कहा वात है? ॥

बहुरि गुण जाकूं परिणमावैगा तथा जो गुणरूप परिणमवैगा ताकूं द्रव्य कहिये । इहां अर्थ ऐसा जाननां-- जो वस्तु अगिली पर्यायप्रति आपही सन्मुख होय, ताकूं द्रव्य कहिये । ताके भेद दोय, एक आगमद्रव्यनिक्षेप, एक नोआगमद्रव्यनिक्षेप । तहां जाके निक्षेप करिये तिस वस्तूका कथनका शास्त्रका जाननहारा आत्मा तिस शास्त्रविषैं जा काल उपयोगरहित होय ता आत्माकूं तिस वस्तूका आगमद्रव्यनिक्षेप कहिये । बहुरि नोआगमद्रव्यनिक्षेपके तीन भेद । एक तौ ज्ञायकशरीर ताके अतीत अनागत वर्तमानकरि तीन भेद हैं । दूजा भाविनोआगमद्रव्यनिक्षेप । तीजा तिन दोऊनितैं जुदा ताकूं तद्व्यतिरिक्त कहिये । ताकाभी कर्मनोकर्मकरि भेद दोय । तहां जिस वस्तूका निक्षेप करिये ताका व्याख्यानका शास्त्रका जाननेवाले पुरुषका शरीर वर्तमानकूंभी वाका निक्षेप कहिये; बहुरि आगामी जेतै काल रहेगा ताकूंभी कहिये, बहुरि जीवपर्याय छोडे पीछे मृतकशरीर है ताकूंभी कहिये । जातैं लोकमैं ऐसा व्यवहार है जो मृतकशरीरकूंभी कहै जो यह फलाणां पुरुष है । बहुरि जा वस्तूका निक्षेप करिये ताहीकूं अगली पर्यायकी अपेक्षा लेय पहलैंही कहिये जो यह फलाणा वस्तु है ताकूं भाविनोआगमद्रव्यनिक्षेप कहिये । बहुरि जाका निक्षेप करिये

ताका कारण ज्ञानावरणादि द्रव्यकर्मकूं ताका तद्व्यतिरिक्त कर्मद्रव्यनिक्षेप कहिये । बहुरि आहारादि पुद्गलके स्कंध जे शरीरादिरूप परिणवनेकूं बाह्यकारण तिनिकूं तद्व्यतिरिक्त नोकर्मद्रव्यनिक्षेप कहिये ॥

बहुरि वर्तमान जिस पर्यायकरि सहित जो द्रव्य होय ताकूं भावनिक्षेप कहिये । ताके दोय भेद; एक आगमभाव, एक नोआगमभाव । तहां जा वस्तूका निक्षेप करिये ताका कथनका शास्त्रका जाननेवाला पुरुषका जिस काल वा शास्त्रविषैं उपयोग होय तिस काल वा षस्तूका आगमभावनिक्षेप वा पुरुषकों कहिये ॥ बहुरि जो वस्तु जिस पर्यायविषैं वर्तमानकालमैं है ताकूं नोआगमभावनिक्षेप कहिये । इहां उदाहरण कहिये हैं । जैसैं जीव ऐसा शब्दका अर्थ स्थापिये तहां जीवनगुणादिककी अपेक्षाविना अजीवका किसीका नाम जीव ऐसा कहिये ताकूं जीवका नामनिक्षेप कहिये । तथा जीवके विशेषपर्यायपरि लगाईये तब मनुष्यादि जीवनिक्षेप कहिये । बहुरि काष्ठचित्रामादिक मूर्तिविषैं जीव ऐसा तथा मनुष्यादिजीव ऐसा स्थापन करना सो स्थापनाजीव है। बहुरि द्रव्यजीव दोय प्रकार। तहां जीवके कथनका शास्त्र जाननेवाला पुरुष तिस शास्त्रविषैं उपयोगरहित होय ताकूं आगमद्रव्यजीवनिक्षेप कहिये ॥

बहुरि नोआगमद्रव्यजीव तीन प्रकार । तहां जीवके कथनके शास्त्रकूं जाननेवाला पुरुषका

शरीर भूत भविष्य वर्तमान तीन प्रकारकूं नोआगमद्रव्यका पहला भेद ज्ञायकशरीर नोआगमद्रव्यजीव कहिये । तथा मनुष्यजीवादिककाभी ऐसैही जाननां । बहुरि सामान्यजीव नोआगमभाविद्रव्य तौ हैही नाही। जातैं जीवनभावकरि सदा विद्यमान है। बहुरि विशेष अपेक्षा मनुष्यादि भाविनोआगमद्रव्यजीवपरि लागाईये । तहां कोई जीव मनुष्यपर्यायविषैं देव आयुकर्म बांध्या, तहां अवश्य देव होयगा। तहां मनुष्यपर्यायविषैंही देव कहनां ताकूं भाविनोआगमदेवजीव कहिये । बहुरि तद्व्यतिरिक्तके भेद दोय। तहां सामान्यजीवअपेक्षा तौ किसी कर्मके उदयतैं जीव होता नांही । बहुरि विशेपजीवअपेक्षा मनुष्यनामा नामकर्मके द्रव्यकूं मनुष्यनाम तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यमनुष्यजीव कहिये सो तद्व्यतिरिक्तका भेद है । बहुरि मनुष्य आहारादिक करै है तिनितैं शरीरवृद्धि होय है यहु नोकर्म है । तातैं आहारादिककूं तद्व्यतिरिक्तका दूसरा भेद नोकर्मद्रव्यजीव कहिये ॥

बहुरि भावजीवभी दोय प्रकार है । तहां जीवके कथनका शास्त्रका जाननेवाला पुरुष जिस काल उस शास्त्रविषैं उपयोगसहित होय ताकूं आगमभावजीव कहिये। विशेपापेक्षाकरि मनुष्यजीवका कथनका शास्त्रका जाननेवाला तिसविषैं उपयोगसहित होय तब मनुष्यआगमभावजीव निक्षेप

कहनां । बहुरि जीवपर्यायकरि सदाविद्यमान है सो नोआगमभावजीव है । विशेषापेक्षाकरि मनुष्यजीवपर्याय विद्यमान होय तब मनुष्यनोआगमभावजीव है। ऐसैही अन्य जीवादिपदार्थनिकै निक्षेपविधि लगावणां। इहां प्रयोजन ऐसा जो लोकव्यवहारमें कोई नामका भाव समझिजाय तथा स्थापनाकूं भावादिक जानै तौ ताकै यथार्थ समझावनै निमित्ति यह निक्षेपविधि है। ऐसा जाननां ॥ बहुरि सूत्रविषै तत् शब्द है सो सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिपदार्थ सर्वहीके ग्रहणके अर्थि है । सर्वहीपरि निक्षेप लगावणें । द्रव्यार्थिकनयतें तौ नाम स्थापना द्रव्य ए तीन निक्षेप हैं । बहुरि पर्यायार्थिकनयकरि भावनिक्षेप है ॥

आगै नामादिनिक्षेपविधिकरि थापे जे, आकाररूप सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिकपदार्थ तिनिका यथार्थ अधिगम काहेतें होय है? ऐसा प्रश्न होतें सूत्र कहै हैं—

॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— प्रमाण नय इनिकरि जीवादिक पदार्थनिका अधिगम हो है ॥ नाम आदि निक्षेपविधिकरि अंगीकार करे जे जीवादिक तिनिका यथार्थस्वरूपका ज्ञान प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाणकरि तथा द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयनिकरि होय है । तहां प्रमाणनयनिका लक्षण तथा भेद तौ आगै

कहसी । तहां प्रमाण दोय प्रकार है । एक स्वार्थ एक परार्थ । तहां स्वार्थ तौ ज्ञानस्वरूप कहिये । बहुरि परार्थ वचनरूप कहिये । तामें च्यारि ज्ञान तौ स्वार्थरूप हैं । बहुरि श्रुतप्रमाण ज्ञानरूपभी है वचनरूपभी है । तातें स्वार्थपरार्थ दोऊ प्रकार है । बहुरि श्रुतप्रमाणके भेद विकल्प हैं ते नय हैं । इहां कोई पूछै नयशब्दके अक्षर थोडे हैं तातें द्वंद्वसमासमें पूर्वनिपात चाहिये । ताका उत्तर— प्रमाण प्रधान है, पूज्य है । सर्व नय हैं ते प्रमाणके अंग हैं । जातें ऐसें कह्या है वस्तूकों प्रमाणतें ग्रहण करि बहुरि सत्त्व असत्त्व, नित्य अनित्य इत्यादि परिणामके विशेषतें अर्थका अवधारण करना सो नय है । बहुरि प्रमाण सकल धर्म अर धर्मीकूं विषय करै है । सोही कह्या है सकलादेश तौ प्रमाणाधीन है । बहुरि विकलादेश नयाधीन है । तातें प्रमाणहीका पूर्वनिपात युक्त है ॥ बहुरि नयके दोय भेद कहे । तहां पर्यायार्थिक नयकरि तौ भावतत्त्व ग्रहण करनां । बहुरि नाम स्थापना द्रव्य ये तीन द्रव्यार्थिकनयकरि ग्रहण करना । जातें द्रव्यार्थिक है सो सामान्यकूं ग्रहण करै है । द्रव्य है विषय प्रयोजन जाका ताकूं द्रव्यार्थिक कहिये । पर्याय है विषय प्रयोजन जाका ताकूं पर्यायार्थिक कहिये । ये सर्व भेले प्रमाणकरि जानै ॥

इहां प्रश्न— जो, जीवादिकका अधिगम तौ प्रमाणनयनितें करिये । बहुरि प्रमाणनयनिका

अधिगम काहेतें करिये? जो अन्यप्रमाणनयनितें करिये तौ अनवस्था दूपण होयगा । बहुरि आपही करिये तौ सर्वही पदार्थनिका आपहीतें होगा, प्रमाणनय निष्फल हौंहिगे ॥ ताका उत्तर — जो, प्रमाणनयनिका अधिगम अभ्यास अपेक्षातौ आपहीतें कह्या है । अर विना अभ्यास अपेक्षा परतें कह्या है । तातें दोष नांही ॥ बहुरि प्रश्न — जो, प्रमाण तौ अंशीकूं ग्रहण करै अरु नय अंशकूं ग्रहण करै सो अंशनितें जुदा पदार्थ तौ अंशी भासता नाहीं । अंशनिके समुदायविषैं अंशीकी कल्पना है । एहु कल्पना है सो असत्यार्थ है । ताका उत्तर— प्रथम तौ प्रत्यक्षबुद्धिविषैं अंशी स्थूल स्थिर एक साक्षात् प्रतिभासै है, ताकूं कल्पित कैसै कहिये? बहुरि जो कल्पित होय तौ एककल्पनातें द्वितीय कल्पना होतें ताका सद्भाव इंद्रियगोचर कैसै रहै? बहुरि कल्पितकै अर्थक्रियाशक्ति काहेतें होय? बहुरि कल्पित प्रत्यक्ष ज्ञानमें स्पष्ट कैसै भासै? तातें अंशनिका समुदायरूप अंशी सत्यार्थ है कल्पित नांही । अंशअंशिविषैं कथंचित् भेद है कथंचित् अभेद है । ते सर्वथा भेदही तथा अभेदही मानै है तिनिकी माननेमें दूपण आवै है । स्याद्वादीनिकै दूपण नांही । इहां उदाहरण— जैसैं एक मनुष्यजीव नाम वस्तु है; ताके देहनिमें मस्तक, ललाट, कांन, नांक, नेत्र, मुख, होठ, गला, कांधा, भुजा, हस्त, अंगुली, छाती, उदर, नाभी, नितंब, लिंग, जांघ, गोडे, पीडी, टकूण्या,

पग, पगथली अंगुली आदि अंग हैं, उपांग हैं । तिनिकूं अवयवभी कहिये । अंशभी कहिये । धर्मभी कहिये । बहुरि गोरा सावला आदि वर्ण हैं तिनिकूं गुण कहिये । बाल, कुमार, जुवान, बूढा आदि अवस्थाकूं पर्याय कहिये । सो सर्वका समुदाय कथंचिद्भेदाभेदरूप वस्तु है । ताकूं अवयवी कहिये, अंगी कहिये, अंशी कहिये, धर्मी कहिये । ऐसें अंशीकूं कल्पित कैसे कहिये? कल्पित होगा तौ प्रत्यक्षबुद्धीमैं स्पष्ट कैसे भासेगा? बहुरि अनेक कार्य करनेकी शक्तिरूप जो अर्थक्रियाकी शक्ति कैसे होगी? सर्वथाभेदरूप अंशनिहीमैं पुरुषके करनेयोग्य कार्यकी शक्ति नांही । बहुरि इस मनुष्य नाम अंशीकी कल्पना छूटि अन्यवस्तूकी कल्पना होतें वह मनुष्यवस्तु उत्तरकाल जैसाका तैसा काहेकूं रहता? तातें अंशी सत्यार्थ है । सोही प्रमाणगोचर भेदाभेदरूप भासै है । बहुरि नय हैं ते अंशनिकूं ग्रहण करै है । तहां मनुष्य गौणरूप होय है । जब केवल एक अभेदमात्र अंशी नांमा अंशकूं ग्रहण करै तब तौ द्रव्यार्थिकनय है । तहां अभेदपक्ष मुख्य है, भेदपक्ष गौण है । बहुरि जब भेदरूप अंशनिकूं जुदे जुदे ग्रहण करै तहां पर्यायार्थिकनय है । इहां अभेदरूप गौण है, भेदपक्ष मुख्य है । तहांभी किसी एक अंशकूं मुख्य करै तब दूसरा अंश गौण हो है । ऐसे सर्वही जीवादिक पदार्थ प्रमाणनयकरि सत्यार्थ प्रतिभासै हैं । जो सर्वथाएकांतकी पक्ष है सो कल्पना

मिथ्या है। जातैं कल्पनामात्रही है। मिथ्यात्वकर्मके उदयतैं यह निपजै है । वस्तुस्वरूप कल्पित है नांही। वहुरि नय हैं ते श्रुतज्ञानके अंश हैं । मति अवधि मनःपर्यय ज्ञानके अंश नांही। तातैं वचनके निमित्ततैं उपज्या जो परोक्ष श्रुतज्ञान ताहीके विशेप संभवै, प्रत्यक्षके विशेप संभवै नाही । वहुरि प्रमाणनयकरि भया जो अपनां स्वरूपका आकार तथा अन्यपदार्थका आकारसहित निश्चय ताकूं अधिगम कहिये। सो यहू प्रमाणका कथंचित् अभेदरूप फल है ॥

केई वेदांतवादी तथा विज्ञानाद्वैतवादी अपनां स्वरूपका निश्चयकों ई अधिगम कहै हैं । केई परका निश्चयकों ई कहै हैं । तिनिका कहना बाधासहित हैं । केई ज्ञानकों अर्थके आकारसमान होनेकों प्रमाण कहै हैं। ताका अभेदरूप अधिगमकूं फल कहै हैं। सो भी सर्वथा एकांतवादिनिकै वणै नांही। ज्ञान अर्थसमान होय नांही। ज्ञान तौ ज्ञानही है । अपनी स्वच्छतातैं अन्य अर्थकों जानै है, तहां तदाकारभी कहिये । वहुरि कोई नेत्र आदि इंद्रियनिकूं प्रमाण कहै हैं । तेभी विना समझ्या कहै हैं । अचेतन इंद्रिय प्रमाण कैसैं होय? वहुरि भावइंद्रिय ज्ञानरूप हैं ते प्रमाणके भेदनिमैं हैं ही ॥

वहुरि प्रमाणनयकरि अधिगम कह्या सोभी ज्ञानात्मकके तथा शब्दात्मकके भेदकरि दोय

प्रकार है । तहां ज्ञानात्मक तौ पंचप्रकार ज्ञान है, सो आगे कहसी । बहुरि शब्दात्मक है सो विधिनिषेधस्वरूप है । तहां कोई शब्द तौ प्रश्नके वशतैं विधिविषैंही प्रवर्तै है । जैसैं समस्तवस्तु अपने द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि अस्तित्वस्वरूपही है । तथा कोई शब्द निषेधविषैं प्रवर्तै है । जैसैं समस्त वस्तु परके द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि नास्तित्वस्वरूपही है । तथा कोई शब्द विधिनिषेध दोऊविषैं प्रवर्तै है । जैसैं समस्त वस्तु अपने तथा परके द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि अनुक्रमतैं अस्तिनास्ति स्वरूप है। तथा कोई शब्द विधिनिषेध दोऊकूं अवक्तव्य कहै है । जैसैं समस्त वस्तु अपने वा परके द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि एक काल अस्तित्वनास्तित्वस्वरूप है । परंतु एककाल दोऊ कहे जाते नांही, तातैं अवक्तव्यस्वरूप है । तथा कोई शब्द विधिनिषेधकूं क्रमकरि कहै है। एककाल न कह्या जाय है तातैं विधिअवक्तव्य निषेधअवक्तव्य तथा विधिनिषेधअवक्तव्यविषैं प्रवर्तै है। जैसैं समस्तवस्तु अपने चतुष्टयकरि अस्तित्वरूप है, वक्तव्य है, एककाल स्वपरचतुष्टयकरि अवक्तव्यस्वरूप है। तातैं अस्तिअवक्तव्य ऐसा कहिये। तथा ऐसैही परके चतुष्टयकरि नास्तिस्वरूप वक्तव्य है। एककाल स्वपरचतुष्टयकरि अवक्तव्य है । तातैं नास्तिअवक्तव्य ऐसा कहिये । तथा ऐसेही क्रमकरि अस्तिनास्तिस्वरूपकरि वक्तव्य है । एककाल दोऊकरि अवक्तव्य है ऐसै

अस्तिनास्तिअवक्तव्य ऐसा कहिये। ऐसें विधिनिषेधके सप्तभंगतें शब्द वस्तूकों साधै हैं ॥

केई बौद्धमती ऐसें कहै हैं, जो, वस्तूका निजस्वरूप तौ वचनगोचर नांही, प्रत्यक्षगोचर है। तातें अवक्तव्यही है। सो यहु सर्वथा एकांतकरि युक्त नांही। सर्व वस्तु समानपरिणाम असमानपरिणामरूप हैं। तहां जे समानपरिणाम हैं ते तौ वचनगोचर हैं। बहुरि सर्वथा असमानपरिणाम शुद्धद्रव्यके शुद्ध पर्याय अर गुरुलघुगुणके अविभागप्रतिच्छेदरूप पर्याय है। सो यहु काहु द्रव्यके समान नांही। तातें वचनगोचर नांही। जातें वचनका परिणाम तौ संख्यातही है। अरु ए असमानपरिणाम अनंतानंत हैं। तातें वचनमें इनिकी संज्ञा बंधै नांही। तातें अवक्तव्यही है। ऐसें वक्तव्यावक्तव्यरूप वस्तुका स्वरूप है। बहुरि वाक्यविषै ऐसैंही है ऐसा नियमवचनभी चाहिये। जातें नियम कह्याविना, वचन कह्याही न कह्यासमान है ॥ अरु नियम कहे अन्यका निषेध होय है। तातें अपने अर्थका नियम करनेकूं अन्यशब्दका सहाय चाहिये। बहुरि अनेकांतके प्रकाशनेकूं स्यात् शब्दका प्रयोगभी अवश्य चाहिये। जातें सर्वथा एकांतका निराकरण कथंचित् वचनतें होय है। सो याका वाचक स्यात् ऐसा निपातशब्द है। सो सर्वनय तथा प्रमाणके वाक्यके आदि कहना। इहां उदाहरण— स्यादस्त्येव जीवादिः स्वद्रव्यक्षेत्रकालभावात्।

स्यान्नास्त्येव जीवादिः परद्रव्यक्षेत्रकालभावात् । स्यादस्तिनास्त्येव जीवादिः क्रमेण स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावात् । स्यादवक्तव्य एव जीवादिः युगपत् स्वपरद्रव्यक्षेत्रकालभावात् । स्यादस्त्यवक्तव्य एव जीवादिः स्वचतुष्टयाद्युगपत्स्वपरचतुष्टयाच्च । स्यान्नास्त्यवक्तव्य एव जीवादिः परचतुष्टयात् युगपत्स्वपरचतुष्टयाच्च । स्यादस्तिनास्त्यवक्तव्य एव जीवादिः क्रमेण स्वपरचतुष्टयात् युगपत्स्वपरचतुष्टयाच्च । इत्यादि सर्वपदार्थनिके वाक्य जानने ॥

वहुरि प्रमाणवाक्य तौ सकलादेशी है। अरु नयवाक्य विकालदेशी है । सो सकलादेश तौ प्रमाणके आधीन है। वहुरि विकालदेश नयके आधीन है। सो कैसे सो कहिये हैं, सकलादेश है सो अशेपधर्मात्मक जो वस्तु ताहि युगपत् कालादिकरि अभेदवृत्तिकरि अथवा अभेद उपचारकरि कहै हैं। जातैं यह प्रमाणके आधीन है । वहुरि विकलादेश है सो अनुक्रमकरि भेदोपचारकरि अथवा भेदप्राधान्यकरि कहै है। जातैं यह नयाधीन है। तहां जो आस्तित्व आदि धर्मनिकूं कालादिककरि भेदविवक्षा करै तव एकही शब्दकै अनेक अर्थकी प्रतीति उपजावनेका अभाव है। तातैं क्रमकरि कहै है। वहुरि जो तहां अस्तित्व आदि धर्म कालादिकरि अभेदवृत्तिकरि कहने तव एकही शब्दकरि अनेक धर्मकी प्रतीति उपजावनेकी मुख्यताकरि कहै तहां यौगपद्य है । ते काल आदि कौन?

१ काल, २ आत्मरूप, ३ अर्थ, ४ संबंध, ५ उपकार, ६ गुणिदेश, ७ संसर्ग, ८ शब्द, ऐसै ए आठ हैं। तहां उदाहरण— ' स्याज्जीवादि वस्तु अस्त्येव ' ऐसा वाक्य है । याका अर्थ कथंचिज्जीवादि वस्तु है सो अस्तिरूपही है । तहां जो काल अस्तित्वका है सोही काल अवशेष अनंतधर्मका एकवस्तुविषें है, ऐसें तौ कालकरि अभेदवृत्ति है । बहुरि जोही वस्तुका अस्तित्वके तद्गुणपणां आत्मरूप है सोही अनंतगुणनिकाभी है। ऐसें आत्मरूपकरि अभेदवृत्ति है। बहुरि जोही द्रव्यनाम आधार अस्तित्वका है सोही अन्यपर्यायनिका है । ऐसें अर्थकरि अभेदवृत्ति है । बहुरि जोही कथंचित् तादात्म्यस्वरूप अभेद भावसंबंध अस्तित्वका है सोही समस्त विशेपनिका है ऐसै संबंधकरि अभेदवृत्ति है । बहुरि जोही आपमें अनुरक्त करनां उपकार अस्तित्वका है सोही समस्त अन्यगुणानिका है। ऐसै उपकारकरि अभेदवृत्ति है। बहुरि जोही गुणीका देश अस्तित्वका है सोही अन्य गुणनिका है। ऐसै गुणिदेशकरि अभेदवृत्ति है। बहुरि जोही एकवस्तुत्वस्वरूपकरि अस्तित्वका संसर्ग है सोही अन्य समस्तधर्मनिका है ऐसें संसर्गकरि अभेदवृत्ति है । बहुरि जोही अस्ति ऐसा शब्द अस्तित्वधर्मस्वरूप वस्तूका वाचक है सोही बाकीके अशेषधर्मस्वरूप वस्तूका वाचक है ऐसै शब्दकरि अभेदवृत्ति है । ऐसें पर्यायार्थिक गौण होतें द्रव्यार्थिकपणांके प्रधानपणांतें प्राप्त होय है।

वहुरि द्रव्यार्थिक गौणकरि पर्यायार्थिक प्राधान्य होतैं गुणनिकी कालादिक अष्टप्रकारकी अभेदवृत्ति नांही संभवे है। सोही कहिये हैं । क्षणक्षणप्रति औरऔरपणांकी प्राप्ति है। जातैं सर्वका काल भिन्नभिन्न है । नानागुण एकवस्तुविषैं एककाल संभवै नाही । जो संभवै तौ ताके आधाररूप वस्तुकेभी तेतेही भेद होय जाय, तातैं कालकरि भेदवृत्ति है । वहुरि तिनि गुणनिका आत्मरूपभी भिन्न है। अभिन्न होय तो भेद कैसैं कहा जाय? यामैं विरोध है । तातैं आत्मरूपकरि भेदवृत्ति है। वहुरि तिनिका आश्रयभी जुदा जुदाही है। जो जुदा न होय तौ नानागुणका आश्रय वस्तु न ठहरै ऐसै आश्रयकरि भेदवृत्ति है। वहुरि संवंधीके भेदकरि भेद देखिये है। जातैं अनेकसंवंधीनिकरि एकवस्तुविषैं संवंध वणैं नांही तातैं संवंधकरि भेदवृत्ति है । वहुरि तिनि गुणनिकरि कीया उपकार प्रतिनियत जुदा जुदा है। तातैं अनेक हैं। याहीतैं उपकारकरि भेदवृत्ति है। वहुरि गुणीका देश है सो गुणगुणप्रति भेदरूप है। अभेदरूप कहिये तौ भिन्नपदार्थके गुणतैंभी अभेदका प्रसंग आवै। तातैं गुणिदेशतैंभी भेदवृत्ति है । वहुरि संसर्गका संसर्गिप्रति भेद है । जो अभेदही कहिये तौ संसर्गीके भेदका विरोध आवै तातैं संसर्गतैंभी भेदवृत्ति है। वहुरि शब्दके विषयप्रति नानापणां है। सर्वगुणनिका एकही शब्द वाचक होय तौ सर्वपदार्थनिका एकशब्द वाचक ठहरै तव अन्यशब्दकै

निरर्थकपणां आवै । ऐसैं परमार्थतैं अस्तित्वादि गुणनिका एकवस्तुविषैं अभेदका असंभव होतैं कालादिककरि अभेदोपचार कीजिये है । ऐसैं अभेदवृत्ति अभेदोपचार भेदवृत्ति भेदोपचार इनि दोऊनितैं एकशब्द अनंतधर्मात्मक एक जीवादि वस्तुका यहु स्यात् शब्द है सो द्योतक है ॥

इहां प्रश्न— जो, शास्त्रनिमैं तौ स्यात् शब्द वाक्यवाक्यप्रति सुण्या नांही । तुम कैसैं कहो हो? जो सर्ववस्तुकौ स्यात् शब्दतैं साधिये। ताका उत्तर— जो, शास्त्रमैं याका प्रयोग जहां नांही है तहां स्याद्वादी अर्थकरि सर्वशब्दनिपरि लगाय ले है। जातैं वस्तुस्वरूप अनेकांतात्मकही है तातैं वस्तुके जाननेंवाले स्यात् शब्दकों जानिले हैं ऐसैं श्लोकवार्तिकमैं कह्या है । वहुरि इहां अन्य उदाहरण कहिये है । जैसै कोई एक मनुष्यनामा वस्तु है सो गुणपर्यायनिके समुदायरूप तौ द्रव्य है । वहुरि याका देहप्रमाण संकोच विस्तार लीये क्षेत्र है । वहुरि गर्भतैं ले मरणपर्यंत याका काल है। वहुरि जेती गुणपर्यायनिकी अवस्था याकै हैं ते भाव हैं । ऐसै द्रव्यादि चतुष्टय यामैं पाईये है । तहां कालादिककरि अभेदवृत्तिकरि कहिये तब जेतैं काल आयुर्बलपर्यंत मनुष्यपणा नामा गुण है, तेतैंही काल अन्य याकै सर्वधर्म हैं, ऐसैं कालकरि अभेदवृत्ति । तथा है. जोही मनुष्यपणांकै मनुष्यरूप करणां आत्मरूप है, सोही अन्य अनेक गुणनिकै है । ऐसैं आत्मरूपकरि

अभेदवृत्ति है। तथा जोही आधार द्रव्यनामा अर्थ मनुष्यपणाका है सोही अन्य याके पर्यायनिका है ऐसें अर्थकरि अभेदवृत्ति है। तथा जोही अभिन्नभावरूप तादात्म्यलक्षण संबंध मनुष्यपणाके है, सोही अन्य सर्व गुणनिकै है, ऐसें संबंधकरि अभेदवृत्ति है। तथा जोही उपकार मनुष्यपणांकरि अपने स्वरूप करणां है, सोही अन्य अवशेषगुणनिकरि कीजिये है, ऐसें उपकारकरि अभेदवृत्ति है। तथा जोही गुणीका देश मनुष्यपणांका है सोही अन्य गुणनिका है ऐसें गुणिदेशकरि अभेदवृत्ति है। तथा जोही एक वस्तुस्वरूपकरि मनुष्यपणांका संसर्ग है, सोही अन्य अवशेष धर्मनिका है, ऐसें संसर्गकरि अभेदवृत्ति है। तथा जोही मनुष्य ऐसा शब्द मनुष्यस्वरूप वस्तूका वाचक है, सोही अन्य अवशेप अनेक धर्मोंका है, ऐसें शब्दकरि अभेदवृत्ति है॥ ऐसें पर्यायार्थिकनयके गौण होते द्रव्यार्थिकनयकी प्रधानतातैं अभेदवृत्ति वर्णे है॥

बहुरि द्रव्यार्थिक नय गौण होते पर्यायार्थिक प्रधान करते कालादिककी अभेदवृत्ति अष्टप्रकार न संभवै है, सोभी कहिये है। क्षणक्षणप्रति मनुष्यपणां और और गुणपर्यायरूप है। तातैं सर्वगुणपर्यायनिका भिन्न काल है। एककाल एकमनुष्यपणांविषैं अनेकगुण संभवै नाही। जो संभवै तौ गुणनिका आश्रयरूप जो मनुष्यनामा वस्तु सो जेते गुणपर्याय है तेते ठहरै। तातैं

कालकरि भेदवृत्ति है। तथा अनेक गुणपर्यायनिकरि कीया उपकारभी जुदा जुदा है । जो एकही मानिये तौ एक मनुष्यपणांही उपकार ठहरै। ऐसै उपकारकरि भेदवृत्ति है। तथा गुणिका देश है सो गुणगुणप्रति भेदरूपही कहिये । जो एकही कहिये तौ मनुष्यपणांहीका देश ठहरै अन्यका न ठहरै तातैं गुणिदेशकरिभी भेदवृत्ति है । तथा संसर्गकाभी प्रतिसंसर्ग गुणपर्यायनितैं भेदही है, एकही होय तौ अन्यका संसर्ग न ठहरै, तातैं संसर्गकरिभी भेदवृत्ति है। तथा शब्दभी सर्वगुणपर्यायनिका जुदा जुदा वाचक है । एक मनुष्यपणां ऐसाही वचन होय तौ सर्वके एकशब्दवाच्यपणाकी प्राप्ति आवै। ऐसैं मनुष्यपणांने आदि देकरि सर्वही गुणपर्यायनिकै एक मनुष्यनाम वस्तुविषैं अभेदवृत्तीका असंभव होते भिन्नभिन्न स्वरूपनिकै भेदवृत्ति भेदका उपचार करिये । ऐसैं इनि दोऊ भेदवृत्ति भेदोपचार, अभेदवृत्ति अभेदोपचारतैं एकशब्दकरि एक मनुष्यादि वस्तु अनेकधर्मात्मपणांकूं स्यात्कार है सो प्रगट करनेवाला है ॥

सो याके सप्तभंग हैं सो कैसे उपजै हैं? ताका उदाहरण कहिये हैं । जैसे एक घटनामा वस्तु है सो कथंचित् घट है, कथंचित् अघट है, कथंचित् घट अघट है, कथंचित् अवक्तव्य है, कथंचित् घट अवक्तव्य है, कथंचित् अघट अवक्तव्य है, कथंचित् घट अघट अवक्तव्य है । ऐसे

विधिनिषेधकी मुख्य गौणविवक्षाकरि निरूपण करनां। तहां याकी अपेक्षा प्रगट करिये है । तहां अपने स्वरूपकरि कथंचित् घट है । परके स्वरूपकरि कथंचित् अघट है । तहां घटका ज्ञान तथा घटका अभिधान कहिये संज्ञाकी प्रवृत्तिका कारण जो घटाकार चिन्ह, सो तौ घटका स्वात्मा कहिये स्वरूप है। बहुरि जहां घटका ज्ञान तथा घटका नामकी प्रवृत्तीकूं कारण नांही ऐसा पटादिक, सो परात्मा कहिये परका स्वरूप है । सो अपने स्वरूपका ग्रहण परस्वरूपका त्यागकी व्यवस्थारूपही वस्तूका वस्तुपनां है । जो आपविषैं परते जुदा रहनेका परिणाम न होय तौ सर्व पर घटस्वरूप होय जाय । अथवा परतैं जुदा होतेभी अपने स्वरूपका ग्रहणका परिणाम न होय तौ गदहाके सींगवत् अवस्तु होय। ऐसे ये विधिनिषेधरूप दोय भंग भये, ताके सात कहि लेने ॥ १ ॥

बहुरि नाम स्थापना द्रव्य भावनिविषैं जाकी विवक्षा करिये, सो तौ घटका स्वात्मा है । जाकी विवक्षा न करिये सो परात्मा है । तहां विवक्षितस्वरूपकरि घट है । अविवक्षित स्वरूपकरि अघट है । जो अन्यस्वरूपभी घट होय विवक्षितस्वरूपकरि नहीं होय तौ नामादिकका व्यवहारका लोप होय। ऐसे ये च्यारिनिके दोय दोय भंग होय ॥ २ ॥ अथवा विवक्षित घटशब्दवाच्यसमानाकार जे घट तिनिका सामान्यका जे विशेषाकार घट तिनिविषैं कोई एक विशेष ग्रहण करिये

ताविषैं जो न्यारा आकार है, सो तो [illegible] स्वात्मा है- अन्य सर्व परात्मा है । तहां अपना जुदा रूपकरि घट है । अन्यरूपकरि अघट है । जो अन्यरूपकरिभी घट होय तौ सर्व घट एक घटमात्र होय। तब सामान्याश्रय व्यवहारका लोप होय । ऐसै ये दोय भंग भये । इहां जेते विशेष घटाकार होय तेतेही विधिनिपेधके भंग होय ॥ ३ ॥ अथवा तिसही घटविशेषविषैं कालांतरस्थायी होते पूर्व उत्तर कपालादि कुशूलांत अवस्थाका समूह सो घटकै परात्मा । बहुरि ताकै मध्यवर्ती घट सो स्वात्मा । सो तिस स्वात्माकरि घट है । जातैं ताविषैं ताके कर्म वा गुण दीखै है । बहुरि अन्यस्वरूपकरि अघट है । जो कपालादि·कुशूलांत स्वरूपकरिभी घट होय तौ घटअवस्थाविषैंभी तिनिकी प्राप्ति होय । उपजायवा निगिरा तथा विनाशकै निमित्त पुरुषका उद्यम निष्फल होय । तथा अंतरालवर्ती पर्याय घटस्वरूपकरिभी घट न होय तौ घटकरि करनेयोग्य फल न होय । ऐसै ये दोय भंग भये ॥ ४ ॥ अथवा क्षण क्षण प्रति द्रव्यके परिणामकै उपचय अपचय भेदतैं अर्थांतरपना होय है । यातैं ऋजुसूत्रनयकी अपेक्षातैं वर्तमानस्वभावकरि घट है । अतीत अनागत स्वभावकरि अघट है । ऐसैं न होय तौ वर्तमानकीज्यों अतीत अनागत स्वभावकरिभी घट होय तब एकसमयमात्र सर्वस्वभाव होय । बहुरि अतीत अनागतकीज्यों वर्तमान स्वभावभी होय तौ वर्तमानघटस्वभावका अभाव होते

घटका आश्रयरूप व्यवहारका अभाव होय । जैसे विनस्या तथा नांही उपज्यां घटकै घटका व्यवहारका अभाव है तैसे यहभी ठहरै ऐसे दोय भंग यह भये ॥ ५ ॥ अथवा तिस वर्तमान घटविषैं रूपादिकका समुदाय परस्पर उपकार करनेवाला है । ताविषैं पृथुबुध्नोदरादि आकार है सो [illegible]का स्वात्मा है । अन्य सर्व परात्मा है । तिस आकार तौ घट है । अन्य आकारकरि अघट है । [illegible]का तिस विना अभाव है । तौ पृथुबुध्नोदराद्याकारकरिभी घट न होय तौ आकारकरि घट होय तौ आकारशून्यविषैंभी घटव्यवहारकी प्राप्ति आवै ॥ अथवा रूपादिकका संनिवेश जो रचनाविशेष आकार तहां नेत्रकरि घट वहारविषैं रूपको प्रधानकरि घट ग्रहण कीजिये तहां रूप घटका स्वात्मा है । । सो घटरूपकरि तौ घट है रसादिककरि अघट है । जातैं ते है । जो नेत्रकरि घट ग्रहण कीजिये है तैसे रसादिकभी ग्रहण करै अन्य इंद्रियनिकी कल्पना निरर्थक होय । बहुरि रसादिककीज्यों [illegible] ऐसैं ये दोय भंग भये अवश्य है । इस न्यायकरि घट कुट शब्दनिकै अर्थभेद है ।

तातैं घटनेतैं तौ घट नाम है । बहुरि कुटिलतातैं कुट नाम है । तातैं तिस क्रियारूप परिणतिके समयही तिस शब्दकी प्रवृत्ति हो है । इस न्यायतैं घटनक्रियाविषैं कर्तापणां है सोही घटका स्वात्मा है। कुटिलतादिक परात्मा है । तहां घटक्रियापरिणतिक्षणहीमैं घट है । अन्यक्रियामैं अघट है । जो घटनक्रियापरिणति मुख्यकरिभी घट न होय तौ घटव्यवहारकी निवृत्ति होय । बहुरि जो अन्यक्रिया अपेक्षाभी घट होय तौ तिस क्रियाकरि रहित जे पटादिक तिनिविषैंभी घटशब्दकी वृत्ति होय । ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ८ ॥ अथवा घट शब्द उच्चारते उपज्या जो घटके आकार उपयोग ज्ञान सो तौ घटका स्वात्मा है । अरु बाह्य घटाकार है सो परात्मा है । बाह्य घटके अभाव होतैंभी घटका व्यवहार है । सो घट उपयोगाकारकरि घट है । बाह्याकारकरि अघट है । जो उपयोगाकार घटस्वरूपकरिभी अघट होय तौ वक्ता श्रोताके हेतुफलभूत जो उपयोगाकार घटके अभावतैं तिस आधीन व्यवहारका अभाव होय । बहुरि जो उपयोगतैं दूरिवर्ती जो बाह्य घटभी घट होय तौ पटादिककेभी घटका प्रसंग होय । ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ९ ॥ अथवा चैतन्यशक्तिका दोय आकार है । एक ज्ञानाकार है एक ज्ञेयाकार है । तहां ज्ञेयतैं जुद्या नांही ऐसा आरसाका विनां प्रतिबिंब आकारवत् तौ ज्ञानाकार है । बहुरि ज्ञेयतैं जुद्या प्रतिबिंबसहित आरसका आकारवत्

घटका आश्रयरूप व्यवहारका अभाव होय । जैसे विनस्या तथा नांही उपज्यां घटकै घटका व्यवहारका अभाव है तैसे यहभी ठहरै ऐसै दोय भंग यह भये ॥ ५॥ अथवा तिस वर्तमान घटविषैं रूपादिकका समुदाय परस्पर उपकार करनेवाला है । ताविषैं पृथुबुध्नोदरादि आकार है सो घटका स्वात्मा है। अन्य सर्व परात्मा है। तिस आकार तौ घट है । अन्य आकारकरि अघट है । घटका व्यवहार तिसही आकारतैं है। तिस विना अभाव है। तो पृथुबुध्नोदराद्याकारकरिभी घट न होय तौ घट काहेका ? । बहुरि जो इतर आकारकरि घट होय तौ आकारशून्यविषैंभी घटव्यवहारकी प्राप्ति आवै । ऐसै ये दोय भंग हैं ॥६॥ अथवा रूपादिकका संनिवेश जो रचनाविशेप आकार तहां नेत्रकरि घट ग्रहण होय है । ता व्यवहारविषैं रूपको प्रधानकरि घट ग्रहण कीजिये तहां रूप घटका स्वात्मा है । बहुरि वामैं रसादिक हैं ते परात्मा हैं ।सो घटरूपकरि तौ घट है रसादिककरि अघट है । जातैं ते रसादिक न्यारे न्यारे इंद्रियनिकरि ग्राह्य हैं। जो नेत्रकरि घट ग्रहण कीजिये है तैसे रसादिकभी ग्रहण करे तौ सर्वकै रूपपणांका प्रसंग आवै तौ अन्य इंद्रियनिकी कल्पना निरर्थक होय । बहुरि रसादिककीज्यों रूपभी घट ऐसा नेत्र नांही ग्रहण करै ... घटशब्दवाच्य ... भये विशेषाकार घट तिनिविषैं कोई एक विशेष ग्रहण करिय

तातैं घटनेतैं तौ घट नाम है । बहुरि कुटिलतातैं कुट नाम है । तहां अपना परिणतिके समयही तिस शब्दकी प्रवृत्ति हो है । इस न्यायतैं घटनक्रियाविषैं कर्तापणां है सोही घटका स्वात्मा है। कुटिलतादिक परात्मा है । तहां घटक्रियापरिणतिक्षणहीमैं घट है । अन्यक्रियामैं अघट है । जो घटनक्रियापरिणति मुख्यकरिभी घट न होय तौ घटव्यवहारकी निवृत्ति होय । बहुरि जो अन्यक्रिया अपेक्षाभी घट होय तौ तिस क्रियाकरि रहित जे पटादिक तिनिविषैंभी घटशब्दकी वृत्ति होय । ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ८ ॥ अथवा घट शब्द उच्चारते उपज्या जो घटकै आकार उपयोग ज्ञान सो तौ घटका स्वात्मा है । अरु बाह्य घटाकार है सो परात्मा है । बाह्य घटके अभाव होतैंभी घटका व्यवहार है । सो घट उपयोगाकारकरि घट है । बाह्याकारकरि अघट है । जो उपयोगाकार घटस्वरूपकरिभी अघट होय तौ वक्ता श्रोताके हेतुफलभूत जो उपयोगाकार घटके अभावतैं तिस आधीन व्यवहारका अभाव होय । बहुरि जो उपयोगतैं दूरिवर्ती जो बाह्य घटभी घट होय तौ पटादिककैंभी घटका प्रसंग होय । ऐसे ये दोय भंग भये ॥ ९ ॥ अथवा चैतन्यशक्तिका दोय आकार हैं । एक ज्ञानाकार है एक ज्ञेयाकार है । तहां ज्ञेयतैं जुड्या नांही ऐसा आरसाका विनां प्रतिबिंब आकारवत् तौ ज्ञानाकार है । बहुरि ज्ञेयतैं जुड्या प्रतिबिंबसहित आरसका आकारवत

ज्ञेयाकार है। तहां घट ज्ञेयाकाररूप ज्ञान तौ घटका स्वात्मा है। घटका व्यवहार याहीतैं चलै है। बहुरि विना घटाकार ज्ञान है सो परात्मा है। जातैं सर्वज्ञेयतैं साधारण है। सो घट ज्ञेयाकारकरि तौ घट है। विना घटाकार ज्ञानकरि अघट है। जो ज्ञेयाकारकरिभी घट न होय तौ तिसके आश्रय जो करणेयोग्य कार्य है ताका निरास होय। बहुरि ज्ञानाकारकरिभी घट होय तौ पटादिकका है सोभी घट ठहरै। ऐसे ये दोय भंग हैं ॥ १० ॥

पांच भंग और कहिये तब सात सात भंग होय, सोभी दिखाईये हैं। घट दोय कहे ते परस्पर भिन्न नांही हैं। जो जुदे होय तौ एक। दोऊके ज्ञानकी एक घट वस्तुविषैं वृत्ति न होय, होते दोऊमैं एकका अभाव होते दोऊका अभाव होय। लोप होय। तातैं यहु घट है सो घट अघट दोऊ स्वरूप है। बहुरि जो घट अघट दोऊ स्वरूप वस्तुकूं घटही कहिये तौ कहिये तौ घटका ग्रहण न होय। एकही शब्दकरि एककाल दोऊ क्तव्य है ॥ ४ ॥ बहुरि घटस्वरूपकी मुख्यताकरि कह्या जो वक्तव्य तथा

युगपत् न कह्या जाय ताकी मुख्यताकरि घट अवक्तव्य है ॥ ५ ॥ तैसैं कह्या प्रकारकरि अघट अवक्तव्य है ॥ ६ ॥ बहुरि तैसैं क्रमकरि दोऊ कहे जाय युगपत् कहे न जाय ताकरि घट अघट अवक्तव्य है ॥ ७ ॥ ऐसैं यहु सप्तभंगी सम्यग्दर्शनादिक तथा जीवादिक पदार्थनिविषैं द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयका मुख्यगौणभेदकरि लगाइये तब अनंत वस्तु तथा अनंत धर्मके परस्पर विधिनिषेधतैं अनंत सप्तभंगी होय हैं। इनिहीका सर्वथा एकांत अभिप्राय होय तब मिथ्यावाद है ॥

बहुरि वचनरूप प्रमाणसप्तभंगी तथा नयसप्तभंगी होय है ॥ इहां प्रमाणविषय तौ अनंतधर्मात्मक वस्तु है । तहां एकही वस्तुका वचनके सर्वधर्मनिकी अभेदवृत्तिकरि तथा अन्यवस्तुके अभेदके उपचारकरि प्रमाणसप्तभंगी होय है । बहुरि नयका विषय एकधर्म है तातैं तिस धर्मकी भेदवृत्तिकरि तथा अन्यनयका विषय जो अन्यधर्म ताके भेदके उपचारकरि नयसप्तभंगी होय है। इहां कोई पूछे, अनेकांतही है ऐसैभी एकांत आवै है तब अनेकातही कैसे रह्या? ताका उत्तर— यहु सत्य है, जो अनेकांत है सोभी अनेकांतही है। जातैं प्रमाणवचनकरि तौ अनेकांतही है। नयवचनकरि एकांतही है। ऐसैं एकांतही सम्यक् है जातैं प्रमाणकी सापेक्षा भई । बहुरि जहां निरपेक्ष एकांत है सो मिथ्या है। इहां कोई कहै, अनेकांत तौ छलमात्र है। पैलेकी युक्ति बाधनेकूं छलका अवलंबन है । तहां

कहिये छलका लक्षण तौ अर्थका विकल्प उपजाय पैलेका वचन खंडन करना है। सो अनेकांत ऐसैं नाही। जातैं दोय धर्मकी प्रधान गौणकी अपेक्षाकरि वस्तु जैसैं है तैसैं कहै है, यामैं छल कहा? वहुरि कोई कहै, दोय पक्ष साधना तौ संशयका कारण है। ताकूं कहिये, जो, संशयका स्वरूप तौ दोऊ पक्षका निश्चय न होय तहां है। अनेकांतविषैं तौ दोऊ पक्षके विषय प्रत्यक्ष निश्चित हैं। तातैं संशयके कारण नांही। वहुरि विरोधभी नाही। जातैं नयकरि ग्रहे जे विरुद्धधर्म तिनिका मुख्यगौणकथनके भेदतैं सर्वथा भेद नांही है। जैसैं एकही पुरुषविषैं पितापणां पुत्रपणां इत्यादिक विरुद्धधर्म हैं, तिनिके कहनेकी मुख्यगौणविवक्षाकरि विरोध नांही तैसैं इहांभी जाननां॥

आगैं प्रमाणनयनिकरि जाणे जे जीवादिक पदार्थ, तिनिके अधिगमका अन्य उपाय दिखावनेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानतः ॥ ७ ॥

याका अर्थ – निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान इनि छह अनुयोगकरिभी सम्यग्दर्शन आदि तथा जीव आदि पदार्थनिका अधिगम होय है॥ तहां निर्देश तौ स्वरूपका कहनां। स्वामित्व कहिये अधिपतिपनां। साधन कहिये उत्पत्तिका कारण। अधिकरण

कहिये अधिष्ठान आधार । स्थिति कहिये कालका प्रमाण । विधान कहिये प्रकार । ऐसे इनिका द्वंद्वसमासकरि बहुवचनरूप करण अर्थ प्रमाणनयकीज्यों जाननां । संक्षेपतैं तौ अधिगमका उपाय प्रमाणनय कहे । बहुरि मध्यमस्थानतैं शिष्यके आशयके वशकरि इनि निर्देश आदि अनुयोगनिकरि कहना । तहां कहा वस्तु है? कौनकै है? काहेकरि है? कौनविषै है, कितेककाल है? कै प्रकार है? ऐसे छह प्रश्न होतैं, इनिका उत्तर कहनां ते निर्देशादिक हैं। उदाहरण– सम्यग्दर्शन कहा है? ऐसैं प्रश्न होतैं तत्त्वार्थश्रद्धान है सो सम्यग्दर्शन है। अथवा याके नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव कहने सो निर्देश है। बहुरि सम्यग्दर्शन कौनकै है? ऐसा प्रश्न होतैं सामान्यकरि तौ जीवकै है ऐसा कहना ॥

बहुरि विशेषकरि कहना तब गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं सर्वपृथ्वीनिमैं नारकी जीवनिकै पर्याप्तककै औपशमिक क्षायोपशमिक है । बहुरि पहली पृथ्वीविषैं पर्याप्तक अपर्याप्तक जीवनिकै क्षायिक अरु क्षायोपशमिक है। बहुरि तिर्यग्गतिविषै तिर्यंच पर्याप्तककै औपशमिक होय है। बहुरि क्षायिक क्षायोपशमिक पर्याप्तक अपर्याप्तक दोऊनिहीकै होय है । बहुरि तिर्यंचणीकै क्षायिक नांही है । औपशमिक क्षायोपशमिक पर्याप्तककैही होय है । अपर्याप्तककै नांही होय है । ऐसेही मनुष्यगतिविषैं पर्याप्तक अपर्याप्तककै क्षायिक क्षायोपशमिक है। बहुरि औपशमिक पर्याप्तकहीकै

होय है। बहुरि मनुष्यणीकै तीनूही हैं। सो पर्याप्तकहीकै है अपर्याप्तककै नांही है । बहुरि याकै क्षायिकसम्यक्त्व भाव वेदकरिही है। बहुरि देवगतिविषैं देव पर्याप्तक अपर्याप्तकनिकै तीनूंही है। तहां औपशमिक अपर्याप्तककै चारित्रमोहका उपशमकरि उपशमश्रेणीविषैं मरण करै तिनिकै द्वितीयोपशम होय । यह प्रथमोपशम अपर्याप्तमैं काहूकैही न होय है । बहुरि भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी देवनिकै अरु इनिकी देवांगनाकै अर सौधर्म ईशानकी कल्पवासिनी देवांगनानिकै क्षायिक तौ होयही नाही। अरु इनिकै पर्याप्तकनिकै औपशमिक क्षायोपशमिक है॥

बहुरि इंद्रियानुवादकरि संज्ञी पंचेंद्रियजीवनिकै तीनूंही हैं । अन्यकै नाही है ॥ बहुरि कायके अनुवादकरि त्रसकायिकजीवनिकै तीनूंही हैं। अन्यकै नांही हैं ॥ बहुरि योगके अनुवादकरि मन वचन काय तीनूंही योगकै तीनूंही हैं। अयोगीनकै क्षायिकही है॥ बहुरि वेदके अनुवादकरि तीनूंही वेदवालेकै तीनूंही हैं। वेदरहितकै औपशमिक क्षायिकही है ॥ बहुरि कषायके अनुवादकरि क्रोध मान माया लोभ च्यार्यों कषायवालेकै तीनूंही हैं । कषायरहितकै औपशमिक क्षायिक हैं॥ बहुरि ज्ञानके अनुवादकरि मति आदि पांचूही ज्ञानवालेकै सामान्यकरि तीनूंही हैं। केवलज्ञानीनिकै क्षायिकही है ॥ बहुरि संयमके अनुवादकरि सामयिकच्छेदोपस्थापनासंयमीनिकै तीनूंही हैं ।

परिहारविशुद्धिवालेकै औपशमिक नांही है, अन्य दोय हैं। सूक्ष्मसांपराय यथाख्यात संयमीनिकै औपशमिक क्षायिक है । संयतासंयतकै अरु असंयतकै तीनूंही हैं ॥ बहुरि दर्शनके अनुवादकरि चक्षु अचक्षु अवधिदर्शनवालेकै तीनूंही हैं । केवलदर्शनवालोंकै क्षायिकही है ॥ लेश्याके अनुवादकरि छह लेश्यावालोंकै तीनूं होय हैं । लेश्यारहितकै क्षायिकही है ॥ बहुरि भव्यानुवादकरि भव्यकै तीनूंही हैं । अभव्यकै नांही है ॥ बहुरि सम्यक्त्वके अनुवादकरि जहां जो सम्यग्दर्शन तहां सोही जाननां ॥ बहुरि संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीनिकै तीनूंही हैं । असंज्ञीनिकै नांही है । दोऊनितैं रहितकै क्षायिकही है ॥ आहारकके अनुवादकरि आहारकनिकै तीनूंही हैं । अनाहारकनिकै छद्मस्थकै तीनूंही हैं । केवली समुद्घातसहितकै क्षायिकही है ॥ ऐसे चौदह मार्गणाभेदकरि सम्यग्दर्शनका स्वामित्व कह्या ॥

बहुरि सम्यग्दर्शन काहेकरि उपजै है? ऐसैं पूछै याका साधन कहै हैं ॥ तहां साधन दोय प्रकारका है । अभ्यंतर, बाह्य । तहां अभ्यंतर तौ दर्शनमोहकर्मका उपशम क्षय क्षयोपशम ये तीन हैं । बहुरि बाह्य नारकी जीवनिकै तीसरी पृथिवीतांई तौ कोई जीवकै जातिस्मरण है, कोईकै धर्मका श्रवण है, कोईकै तहांसंबंधी वेदनादुःख है । बहुरि चवथी पृथिवीतैं लगाय सातमीतांई जातिस्मरण

अरु वेदनाका अनुभव ये दोयही कारण हैं । बहुरि तिर्यंचनिके कोईकै जातिस्मरण है, कोईकै धर्मश्रवण है, कोईके जिनबिंबका दर्शन है। बहुरि मनुष्यनिकैभी तैसैंही है। बहुरि देवनिके कोईकै जातिस्मरण है । कोईकै धर्मश्रवण है । कोईकै तीर्थंकरकेवलीनिका कल्याणिकादिकी महिमाका दर्शन है। कोईके देवनिकी ऋद्धीका देखना है, सो आनतकै पहली सहस्रारस्वर्गतांई है । बहुरि आनत प्राणत आरण अच्युतनिके देवऋद्धिदर्शनविनां अन्य तीन कारण हैं। बहुरि नवग्रैवेयकवासीनिकै केईकै जातिस्मरण है, केईकै धर्मश्रवण है । बहुरि अनुदिश अनुत्तर विमानवासीनिकै यहु कल्पना नाही है। तहां सम्यग्दर्शनवालेही उपजै हैं ॥

बहुरि सम्यग्दर्शनका अधिकरण कहा है? ऐसैं पूछै कहै हैं। अधिकरण दोय प्रकार है । बाह्य अभ्यंतर। तहां अभ्यंतर तौ स्वस्वामिसंबंधकै योग्य आत्माही है। जातैं कारकनिकी प्रवृत्ति विवक्षातैं है। बहुरि बाह्य अधिकरण एक राजू चोडी चोदा राजू उंची लोकनाडी है। सम्यग्दर्शन त्रसनाडीहीमें पाईए है ॥ बहुरि सम्यग्दर्शनकी स्थिति केती है? ऐसैं पूछै, कहै हैं। औपशमिककी जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तकी है। क्षायिककी संसारी जीवकै जघन्य अंतर्मुहूर्तकी, उत्कृष्ट तेतीस सागर अर अंतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष घाटि दोय कोडि पूर्व अधिक है। अरु मुक्तजीवकै सादि अनंत काल है । बहुरि

क्षायोपशमिककी जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट छयासठि सागरोपमकी है ॥ बहुरि सम्यग्दर्शन केते प्रकार है? ऐसे पूछे कहे हैं। तहां सामान्यतैं तौ सम्यग्दर्शन एक है। बहुरि निसर्गज अधिगमज भेदतैं दोय प्रकार है। बहुरि औपशमिक-क्षायिक-क्षायोपशमिक-भेदतैं तीन प्रकार है। ऐसे शब्दतैं तौ संख्यातभेत है ॥ बहुरि अर्थतैं असंख्यात तथा अनंत भेद हो है। ते श्रद्धाता श्रद्धान करनेयोग्य वस्तुके भेदतैं जानने ॥ ऐसैं विधान कह्या ॥ ऐसैं निर्देशादिककी विधि ज्ञानचारित्रविषैं बहुरि जीव आदि पदार्थनिविषैं आगमकै अनुसार लगावणी ॥

इहां विशेष कहिये हैं। ये निर्देशादिक श्रुतप्रमाणके विशेष व्यवहार अशुद्धद्रव्यार्थिककूं कह्या है। सो शब्दात्मक तथा ज्ञानात्मक दोऊही प्रकार जाननें। इनितैं अधिगम जीवादिकका होय है ॥ बहुरि कोई अन्यवादी कहै — वस्तुका स्वरूप तौ वचनगोचर नांही, निर्देश काहेका करिये? ताकूं कहिये— यह तेरा कहना सत्य है की नाही? जो कहेगा सत्य है तौ वस्तूका कहनाभी सत्य है। बहुरि कहैगा मेरा कहनाभी असत्य है, तौ काहेकूं कहै। असत्यकूं कौन अंगीकार करैगा?। बहुरि कोई वादी कहै, काहूकै काहूका संबंध नाही, तातैं कोईका कोई स्वामी नांही, तातैं स्वामित्व कहना अयुक्त है। ताकूं कहिये— जो, संबंध न होय तौ सर्वव्यवहारका लोप होय। तातैं

कथंचित् संबंध प्रमाणसिद्ध है । तहां द्रव्य क्षेत्र काल भावकी प्रत्यासत्ति कहिये निकटताका विशेष है, सो संबंध है। तहां कोई पर्यायके कोई पर्यायकरि समवायतैं निकटता है । ताकूं द्रव्यप्रत्यासत्ति कहिये। जैसैं स्मरणके अर अनुभवकै एक आत्माविषैं समवाय है। ऐसैं न होय तौ जाका अनुभव पूर्व होय ताहीका स्मरण कैसैं होय? बहुरि बुगलाकी पंक्तीकै अर जलकै क्षेत्रप्रत्यासत्ति है । बहुरि सहचर जे सम्यग्दर्शन ज्ञानसामान्य तथा शरीरविषैं जीव अर स्पर्शविशेष तथा पहली पीछै उदय होय ऐसै भरणी कृत्तिका नक्षत्र तथा कृत्तिका रोहिणी नक्षत्र इनिकै कालप्रत्यासत्ति है । तथा गऊ गवयका एकरूप तथा केवलीसिद्धके केवलज्ञान एकस्वरूपपणां ऐसे भावप्रत्यासत्ति है ॥ सो यहु प्रत्यासत्ति है, सोही संबंध है । यामैं बाधा नांही । तातैं जो संबंध है सोही स्वामीपणांकी सिद्धि करै है । बहुरि यहु संबंध है सोही कार्यकारणभावकी सिद्धि करै है । ऐसैं न होय तौ मोक्षका उपायादिक सर्वव्यवहारका लोप होय। तातैं साधनभी प्रमाणसिद्ध है ॥

बहुरि आधार-आधेयभाव द्रव्यगुणादिकका प्रसिद्धही है। बहुरि स्थिति है सोभी प्रमाणसिद्ध है। सर्वथा क्षणस्थायीही तत्त्वकूं माने सर्वव्यवहारका लोप होय। ऐसैंही विधान प्रमाणसिद्ध है । जो एकप्रकारही वस्तु मानिये तौ प्रत्यक्ष अनेक वस्तु है ते कैसै लोप करिये? अर प्रत्यक्षकूं असत्य

मानिये तब शून्यताका प्रसंग आवै । तातैं निर्देश आदिकरि जीव आदि पदार्थनिका अधिगम करनां ॥ इहां उदाहरण— निश्चय व्यवहार तौ नय, अरु दोऊ युगपत् प्रमाण इनिकरि करणां, तहां निश्चयनय तौ इहां एवंभूतकूं कह्या है । बहुरि व्यवहार अशुद्ध द्रव्यार्थिककूं कह्या है । तहां निश्चयनयतैं तौ अनादिपारिणामिक जो चैतन्यरूप जीवतत्त्व, ताकरि परिणमता होय, ताकूं जीव कहिये। बहुरि व्यवहारनयकरि औपशमिक आदि च्यारि भावस्वरूप जीवकूं कहै हैं। बहुरि निश्चयतैं तौ अपने चैतन्य परिणामका स्वामी है ॥ व्यवहारतैं च्यार्यों भावनिका स्वामी है। बहुरि निश्चयतैं तौ जीवत्वपरिणामका साधन है। व्यवहारतैं च्यार्योंही भावनिका साधन है। बहुरि निश्चयतैं अपने प्रदेशनिकै आधार है । व्यवहारतैं शरीरकै आधार है । बहुरि निश्चयतैं जीवन समयस्थिति है । व्यवहारतैं दोय समय आदि स्थिति है तथा अनादि सांत स्थिति है। बहुरि निश्चयतैं अनंतविधान है। व्यवहारतैं नारक आदि संख्यात असंख्यात अनंत विधान है। बहुरि प्रमाणतैं दोऊ नयका समुदायरूप स्वभाव है। इत्यादि जीवादि पदार्थनिविषैं आगमतैं अविरोध निर्देशादिका उदाहरण जाननां ॥

आगे, कह्या इनिहीकरि जीवादिकका अधिगम होय है, कि औरभी अधिगमका उपाय है? ऐसें पूछें कहै हैं कि औरभी है, ऐसा सूत्र कहै हैं—

॥ सत्सङ्ख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥ ८ ॥

याका अर्थ- सत, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर, भाव, अल्पबहुत्व इनि आठ अनुयोगनिकरिभी जीवादिक पदार्थनिका अधिगम होय है ॥ तहां सत ऐसा आस्तित्वका निर्देश है। सत शब्द प्रशंसादिकवाचीभी है, सो इहां न लेणां। बहुरि संख्या भेदनिकी गणना है। क्षेत्र निवासकूं कहिये सो वर्तमानकालका लेणा। स्पर्शन त्रिकालगोचर है। बहुरि काल निश्चयव्यवहारकरि दोयप्रकार है, ताका निर्णय आगे कहसी। बहुरि अंतर विरहकालकूं कहिये। भाव औपशमिक आदि स्वरूप है। अल्पबहुत्व परस्पर अपेक्षाकरि थोरा घणां विशेषकी प्रतिपत्ति करनां। इन आठ अनुयोगनिकरि सम्यग्दर्शनादिक बहुरि जीवादिक पदार्थनिका अधिगम जाननां ॥ इहां प्रश्न— जो, पहले सूत्रमें निर्देशका ग्रहण है ताहीतें सत्का ग्रहण सिद्ध भया। बहुरि विधानके ग्रहणतें संख्याकी प्राप्ति भई। अधिकरणके ग्रहणतें क्षेत्रका अर स्पर्शनका ज्ञान होय है। स्थितिके ग्रहणतें कालका ग्रहण आया। भावका ग्रहण नामादि निक्षेपविषैं हैही। फेरि इनिका ग्रहण इन सूत्रमें कौन अर्थि किया? ताका समाधान आचार्य कहै हैं— जो, यह तौ सत्य है। पहले सूत्रतें सिद्ध तौ होय है। परंतु तत्त्वार्थका उपदेश भेदकरि दीजिये है। सो शिष्यके आशयतें है। जातें केई शिष्य तौ

संक्षेपरुचिवाले हैं थोरेमें बहुत समझे । बहुरि केई शिष्य विस्ताररुचिवाले हैं, बहुत कहै समझैं । बहुरि केई शिष्य मध्यमरुचिवाले हैं, बहुतसंक्षेपतैंभी नाही समझैं बहुताविस्तार कीयेभी नाही समझैं । बहुरि सत्पुरुषनिकै कहनेका प्रयास है सो सर्वही प्राणीनिके उपकारके अर्थ है । यातैं अधिगमका उपाय भेदकरि कह्या है । जो ऐसें न कहै तो प्रमाणनयनिकरिही अधिगमकी सिद्धि हो है । अन्य कहना निष्प्रयोजन ठहरै । तातैं भेदकरि कहनां युक्त है ॥

तहां जीवद्रव्यकूं आश्रयकरि सत आदि अनुयोग द्वार निरूपण करिये हैं । जीव हैं ते चोदह गुणस्थाननिविषैं व्यवस्थित हैं । तिनिके नाम— १ मिथ्यादृष्टि । २ सासादनसम्यग्दृष्टि । ३ सम्यग्मिथ्यादृष्टि । ४ असंयतसम्यग्दृष्टि । ५ संयतासंयत । ६ प्रमत्तसंयत । ७ अप्रमत्तसंयत । ८ अपूर्वकरण गुणस्थानविषैं उपशमक क्षपक । ९ अनिवृत्ति बादर सांपरायस्थानविषैं उपशमक क्षपक । १० सूक्ष्मसांपरायस्थानविषैं उपशमक क्षपक । ११ उपशांतकषाय वीतराग छद्मस्थ । १२ क्षीणकषाय वीतरागछद्मस्थ । १३ सयोगकेवली । १४ अयोगकेवली । ऐसे चौदह गुणस्थान जानने । बहुरि इनिकूं जीवसमास संज्ञाभी कही है । सो इनिके निरूपणाके अर्थि चौदह मार्गणास्थान जानने । तिनिके नाम— गति ४ । इंद्रिय ५ । काय ६ । योग १५ । वेद ३ । कषाय

२५ । ज्ञान ८ । संयम ७ । दर्शन ४ । लेश्या ६ । भव्य २ । सम्यक्त ६ । संज्ञी २ । आहारक २ ऐसे ॥

तहां सत्प्ररूपणा दोय प्रकार है । सामान्यकरि, विशेषकरि । तहां सामान्यकरि तौ गुणस्थानविषैं कहिये । विशेषकरि मार्गणाविषैं कहिये । तहां प्रथमही सामान्यकरि तौ मिथ्यादृष्टि सत्‌रूप है । सासादनसम्यग्दृष्टि सत्स्वरूप है । ऐसें चौदहही गुणस्थान सत्स्वरूप कहने । बहुरि विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं सर्व पृथिवीनिविषैं आदिके च्यारि गुणस्थान हैं । बहुरि तिर्यंच गतिविषैं च्यारि आदिके संयतासंयतकरि अधिक ऐसैं पांच हैं । मनुष्यगतिविषैं चौदहही हैं । देवगतिविषैं नरकवत् च्यारि हैं ॥

बहुरि इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रियतें लगाय चतुरिंद्रियपर्यंत एक मिथ्यादृष्टिगुणस्थान है । पंचेंद्रियविषैं चौदहही हैं ॥

बहुरि कायके अनुवादकरि पृथिवीकाय आदि वनस्पतिपर्यन्त पांच स्थावरकायविषैं एक मिथ्यादृष्टिगुणस्थानही है । त्रसकायविषैं चौदहही हैं ॥

योगके अनुवादकरि मन वचन काय तीनूंही योगविषैं तेरह गुणस्थान हैं । तातैं आगैं चौदहवा अयोगकेवलीमें योग नांही है ॥

वेदके अनुवादकरि तीनूंही वेदनिमें मिथ्यादृष्टितें लगाय अनिवृत्तिबादरतांई नव गुणस्थान हैं। वेदरहित गुणस्थान अनिवृत्तिबादरतें लगाय अयोगकेवलीपर्यंत छह गुणस्थान हैं। इहां अनिवृत्ति बादरसांपरायके छह भाग कीये। तहां तीन भाग आदिकेमें वेद है। अंतके तीन भाग वेदरहित। तातें दोऊ जायगा गिण्या ॥

कषायके अनुवादकरि क्रोध-मान-मायाविषें तौ मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायतांई नव गुणस्थान हैं। लोभ कषायविषें तेही सूक्ष्मसांपराय अधिक दश गुणस्थान हैं। बहुरि कषायरहित उपशांतकषायतें लगाय अयोगकेवलीतांई च्यारि गुणस्थान हैं ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान विभंग इनि तीनविषैं मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि हैं। मति श्रुत अवधि इनि तीन ज्ञाननिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंत नव गुणस्थान हैं। मनःपर्यय ज्ञानविषैं प्रमत्तसंयत आदि क्षीणकषायपर्यंत सात गुणस्थान हैं। केवलज्ञानविषैं सयोगकेवली अयोगकेवली दोय गुणस्थान हैं ॥

संयमके अनुवादकरि संयमी तौ प्रमत्त आदि अयोगकेवलीतांई। तहां सामयिक छेदोपस्थापनशुद्धि संयमी तौ प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिबादरसांपराय गुणस्थानतांई च्यारि हैं। परिहारविशुद्धिसंयमी

अप्रमत्त है, प्रमत्तसंयतभी है। सूक्ष्मसांपरायशुद्धिसंयमी एक सूक्ष्मसांपरायस्थानही है। यथाख्यातविहारशुद्धिसंयमी उपशांतकपाय आदि अयोगकेवलीतांई च्यारि गुणस्थान हैं। संयतासंयत एक संयतासंयत गुणस्थानविपैंही है। असंयत, मिथ्यादृष्टि आदि च्यारि गुणस्थान आदिकेविपैंही है॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुअचक्षु दर्शनविपैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकपायपर्यंत बारह गुणस्थान हैं। अवधिदर्शनविपैं असंयतसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकपायपर्यंत नव गुणस्थान हैं। केवलदर्शनविपैं सयोगकेवली अयोगकेवली हैं॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण नील कापोत लेश्याविपैं मिथ्यादृष्टि आदि असंयत सम्यग्दृष्टीपर्यन्त हैं। तेज पद्मलेश्याविपैं मिथ्यादृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यन्त सात हैं। शुक्लेश्याविपैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंत तेरह हैं। लेश्यारहित अयोगकेवली है॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यविपैं चौदहही हैं। अभव्यविपैं आदिका एकही है। सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यक्त्वविपैं असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि अयोगकेवलीपर्यंत ग्यारह हैं। क्षायोपशमिकसम्यक्त्वविपैं असंयतसम्यग्दृष्ट्यादि अप्रमत्तपर्यंत च्यार हैं। औपशमिकसम्यक्त्वविपैं असंयतसम्यग्दृष्टि आदि उपशांत कपायपर्यंत आठ हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि मिथ्यादृष्टि अपने अपने गुणस्थान हैं॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीकेविषैं आदितैं लगाय बारह गुणस्थान हैं। असंज्ञीकेविषैं एक मिथ्यादृष्टिही है। दोऊतैं रहित सयोगकेवली अयोगकेवली है॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकविषैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंत तेरह हैं। अनाहारकविषैं विग्रहगतिविषैं मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि ए तीन गुणस्थान हैं। समुद्घातसहित सयोगकेवली है अर अयोगकेवली है। बहुरि सिद्धपरमेष्ठी हैं ते अतीतगुणस्थान हैं। ऐसैं सत्‌की प्ररूपणा तौ कही॥

अब संख्याप्ररूपणा कहिये हैं। सो भेदनिके गणनाकूं संख्या कहिये हैं। सो दोय प्रकार। सामान्यकरि गुणस्थानविषैं, विशेषकरि मार्गणानिविषैं। तहां सामान्यकरि मिथ्यादृष्टि जीव तौ अनंतानंत हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत पल्यके असंख्यातवे भागपरिमाण हैं। प्रमत्तसंयत पृथक्त्व कोडिसंख्या हैं। इहां पृथक्त्व ऐसी आगममें संज्ञा है। सो तीन कोडीके उपरि नवकोडीके नीचै जाननी। ते ५९३९८२०६ हैं। अप्रमत्तसंयतसंख्या है ते प्रमत्तसंयतनितैं आधे हैं। ते २९६९९१०३ हैं। बहुरि च्यारि उपशमश्रेणीवाले प्रवेशकरि तौ एक अथवा दोय तीन आदि उत्कृष्ट चोवनताईं हैं। बहुरि इनिका सर्वकालके भेले होय तब संख्यात हैं।

एक गुणस्थानके २९९ । च्यारिनिके जोडिये तब ११९६ होय । च्यारि क्षपक श्रेणीवाले बहुरि अयोगकेवली प्रवेशकरि एक दोय तीन आदि उत्कृष्ट एकसो आठतांई अपनां अपनां कालके भेले होय तब संख्यात होय । एक गुणस्थानमैं ५९८ । पांच गुणस्थानके जोडिये तब २९९० होय। सयोगकेवली प्रवेशकरि एक दोय तीन आदि उत्कृष्ट एकसो आठतांई हैं। या गुणस्थानके भेले होय तब पृथक्त्व लाख होय हैं ते ८९८५०२ होय । ऐसैं प्रमत्तसंयततैं लगाय अयोगकेवलीपर्यंत सर्वसंयमी जोडिये तब नवकोडि तीन घाटि होय हैं। ८९९९९९७॥

बहुरि विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं पहली पृथिवीविषैं नारकी जीव मिथ्यादृष्टि असंख्यात जगच्छ्रेणीपरिमाण हैं। सो जगत् प्रतरके असंख्यातवे भाग हैं। बहुरि दूसरी पृथिवीतैं लगाय सातमीतांई मिथ्यादृष्टि श्रेणीके असंख्यातवे भाग परिमाण हैं । सो असंख्यातवां भाग असंख्यात कोडि योजनके प्रदेश होय तेते जानने । बहुरि सर्वही पृथिवीनिविषैं सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि पल्योपमके असंख्यातवे भाग परिमाण हैं । बहुरि तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंचजीव मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं । सासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई पल्यके असंख्यातवे भाग परिमाण हैं । मनुष्यगतिविषैं मनुष्य मिथ्यादृष्टि श्रेणीके

असंख्यातवै भाग हैं । सो असंख्यातवा भाग असंख्यातकोडि योजनके प्रदेशमात्र जाननां । सासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई संख्यात हैं । ते सासादनविषैं बावन कोडि हैं । मिश्रविषैं एकसो च्यारि कोडि हैं । असंयत सातसैं कोडि हैं । संयतासंयत तेरह कोडि हैं । बहुरि प्रमत्तसंयत आदिकी संख्या सामान्योक्त कहिये गुणस्थाननिमैं कही सो संख्या जाननी ॥

देवगतिविषैं देव मिथ्यादृष्टि असंख्यात श्रेणीपरिमाण हैं । सो प्रतरके असंख्यातवै भाग हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि पल्योपमके असंख्यातवै भागपरिमाण हैं ॥

इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रिय मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं । द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय असंख्यात श्रेणीपरिमाण हैं । सो प्रतरके असंख्यातवै भाग हैं । पंचेंद्रियविषैं मिथ्यादृष्टि असंख्यात श्रेणीपरिमाण हैं । सो प्रतरकै असंख्यातवै भाग हैं । सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंत गुणस्थानवत् संख्या जाननी ॥

कायके अनुवादकरि पृथिवीकायिक अप्कायिक तेजस्कायिक वायुकायिक असंख्यातलोक परिमाण हैं । वनस्पतिकायिक अनंतानंत हैं । त्रसकायिककी संख्या पंचेंद्रियवत् जाननी ॥

योगका अनुवादकरि मनोयोगी वचनयोगी मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणीपरिमाण हैं । ते प्रतरकै

असंख्यातवै भाग हैं। काययोगीनिविषैं मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं । तीनूं योगवाले मासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई तो पल्यके असंख्यातवै भागपरिमाण हैं । प्रमत्तसंयत आदि सयोगकेवलीतांई संख्यात हैं। अयोगेकवली गुणस्थानवत् संख्या ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीवेद पुरुषवेदवाले मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणीपरिमाण हैं । प्रतरकै असंख्यातवै भाग हैं । नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं । बहुरि स्त्रीवेदी नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या है। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायतांई संख्यात हैं । पुरुषवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या है। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायतांई गुणस्थानवत् संख्या है । वेदरहित अनिवृत्तिबादरसांपराय आदि अयोगकेवलीतांई सामान्योक्त कहिये गुणस्थानवत् संख्या है ॥

कषायके अनुवादकरि क्रोधमानमायाविषैं मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या है। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायतांई संख्यात हैं। लोभकषायवालेका पहलै कह्या सोही अनुक्रम है। विशेष यह, जो, सूक्ष्मसांपरायसंयतका गुणस्थानवत् संख्या है । कषायरहित उपशांतकषाय आदि अयोगकेवलीतांई गुणस्थानवत् संख्या है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मति–अज्ञान श्रुत–अज्ञानवाले मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि आदि गुणस्थानवत् संख्या है। विभंगज्ञानी मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणीपरिमाण हैं। ते प्रतरके असंख्यातवे भाग हैं। सासादनसम्यग्दृष्टि पल्योपमकै असंख्यातवै भाग हैं। मतिश्रुतज्ञानी असंयतसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायतांई गुणस्थानवत् संख्या है। अवधिज्ञानी असंयतसमग्दृष्टि आदि संयतासंयततांई गुणस्थानवत् संख्या है। प्रमत्तसंयत आदि क्षीणकषायतांई संख्यात हैं। मनःपर्ययज्ञानी प्रमत्तसंयत आदि क्षीणकषायतांई संख्यात हैं। केवलज्ञानी अयोगी सयोगी गुणस्थानवत् संख्या है ॥

संयमके अनुवादकरि सामयिकच्छेदोपस्थापनाशुद्धि संयतप्रमत्त आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायतांई गुणस्थानवत् संख्या है। परिहारविशुद्धिसंयत प्रमत्त अप्रमत्त संख्यात हैं। सूक्ष्मसांपरायशुद्धिसंयत यथाख्यात विहारशुद्धिसंयत संयतासंयत असंयतकी गुणस्थानवत् संख्या है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवाले मिथ्यादृष्टि असंख्यातश्रेणीपरिमाण हैं। ते प्रतरकै असंख्यातवे भाग हैं। अचक्षुर्दर्शनवाले मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं। दोऊही सासादनसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायतांई सामान्योक्त कहिये गुणस्थानवत् है। अवधिदर्शनवाले अवधिज्ञानिवत् हैं। केवलदर्शनवाले केवलज्ञानीवत् हैं ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण—नील—कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टितांई गुणस्थानवत् संख्या है । पीतपद्मलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयततांई स्त्रीवेदवत् है । प्रमत्त अप्रमत्त संयत संख्यात हैं । शुक्ललेश्यावाले मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयततांई पल्योपमके असंख्यातवें भाग हैं । प्रमत्त अप्रमत्त संयत संख्यात हैं । अपूर्वकरण आदि सयोगकेवलीतांई गुणस्थानवत् संख्या है । अलेश्यावाला गुणस्थानवत् संख्या है ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंत गुणस्थानवत् संख्या है । अभव्य अनंत हैं ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि पल्यकै असंख्यातवें भाग हैं । संयतासंयत आदि उपशांतकपायपर्यंत मनुष्य संख्यात हैं । च्यारि क्षपकश्रेणीवाला सयोगकेवली अयोगकेवली गुणस्थानवत् है । क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्ततांई गुणस्थानवत् । औपशमिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि असंयतासंयत पल्योपमके संख्यातवें भाग हैं । प्रमत्ताप्रमत्त संयत संख्यात हैं । च्यारि औपशमिक गुणस्थानवत् संख्या है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टि मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवत् संख्या है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीविषैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंत चक्षुर्दर्शनिवत् संख्या है। असंज्ञी मिथ्यादृष्टि अनंतानंत हैं। दोऊरहित गुणस्थानवत् संख्या है॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंत गुणस्थानवत् संख्या। अनाहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थानवत् संख्या। सयोगकेवली संख्यात हैं। अयोगकेवली गुणस्थानवत् संख्या है। ऐसै संख्याका निर्णय कीया॥

अब क्षेत्रप्ररूपणा कहिये हैं। तहां क्षेत्र दोय प्रकार है। सामान्यकरि गुणस्थाननिका विशेषकरि मार्गणाका। तहां सामान्यकरि मिथ्यादृष्टिनिका सर्वलोक क्षेत्र है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। सयोगकेवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। अथवा समुद्घातके प्रतर अपेक्षा लोकके असंख्यात बहुभाग है। पूरण अपेक्षा सर्वलोक है॥ विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं सर्व पृथिवीनिविषैं नारकीनिका च्यार गुणस्थाननिविषैं लोकका असंख्यातवा भाग है। तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंचनिका मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयतताईं गुणस्थानवत् क्षेत्र है। मनुष्यगतिविषैं मनुष्यनिका मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिका लोकके असंख्यातवै भाग है। सयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है।

देवगतिविषें देवनिका च्यारि गुणस्थानविषें लोकके असंख्यातवै भाग है । इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रियनिका क्षेत्र सर्वलोक है । विकलत्रयका लोकका असंख्यातवा भाग है । पंचेंद्रियनिका मनुष्यवत् है । इहां कोई पूछै, मनुष्य तौ अढाई द्वीपमेंही उपजे हैं । पंचेंद्रिय त्रसनाडीमें उपजे हैं । मनुष्यवत् कैसे कह्या? ताका समाधान— जो, पंचेंद्रिय केतेक इनिके उपजनेके ठिकाणैही उपजै हैं । सर्वत्र त्रसनाडीमें नांही उपजे हैं । तातैं लोकका असंख्यातवा भागही है ॥

कायके अनुवादकरि पृथिवीकायिक आदि वनस्पतिपर्यंतका सर्वलोक क्षेत्र है । त्रसकायिकका पंचेंद्रियवत् क्षेत्र है ॥

योगका अनुवादकरि वचन मनोयोगवाले मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिका लोकके असंख्यातवै भाग है । काययोगीनिका मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिका अर अयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है । वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषवेदीनिका मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरपर्यंतनिका लोकके असंख्यातवा भाग है । नपुंसकवेदनिका मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरपर्यंतनिका अरु वेदरहितनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है ॥

कषायके अनुवादकरि क्रोध मान माया कषायवालेनिका अर लोभ कषायवालेनिका

मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरपर्यंतनिका अर सूक्ष्मसांपरायीनिका अर कषायरहितनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानवालेनिका मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टिवालेनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है । विभंगज्ञानीनिका मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टीनिका लोकका असंख्यातवा भाग है । मति-श्रुत-अवधिज्ञानीनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका अर मनःपर्ययज्ञानीनिका प्रमत्तसंयत आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका अर केवलज्ञानी अयोगीनिका गुणस्थानवत क्षेत्र है ॥

संयमके अनुवादकरि सामायिक च्छेदोपस्थापनशुद्धि संयतनिका च्यारि गुणस्थाननिका अर परिहारविशुद्धिसंयत प्रमत्त अप्रमत्तनिका अर सूक्ष्मसांपराय शुद्धसंयतनिका अर यथाख्यात विहारशुद्धसंयतका च्यारि गुणस्थाननिका अर संयतासंयतका अर असंयतके च्यारि गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है । अचक्षुर्दर्शनवालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत्

क्षेत्र है। अवधिदर्शनवालेनिका अवधिज्ञानीवत् है। केवलदर्शनवालेनिका केवलज्ञानीवत् है॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण-नील-कापोतलेश्यावालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंतनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। पीत पद्मलेश्यावालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। शुक्ललेश्यावालेनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। सयोगकेवलीनिका अर लेश्यारहित अयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिका चौदहही गुणस्थानका सामान्योक्त कहिये गुणस्थानवत् क्षेत्र है। अभव्यनिका सर्वलोक है॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टिनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका अर क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टिनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका अर औपशमिकसम्यग्दृष्टिनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि उपशांतकषायपर्यंतनिका अर सासादनसम्यग्दृष्टिनिका अर सम्यङ्मिथ्यादृष्टिनिका अर मिथ्यादृष्टिनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

संज्ञीके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवत् तौ संज्ञीनिका क्षेत्र है। अर असंज्ञीनिका सर्वलोक है। तिन दोऊनितैं रहितनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। सयोगकेवलीनिका लोककै असंख्यातवै भाग है। अनाहारकानिका मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि अयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् क्षेत्र है। सयोगकेवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग है। अर प्रतर अपेक्षा अर पूरण अपेक्षा सर्वलोक है। ऐसैं क्षेत्रका निर्णय कीया ॥

आगैं स्पर्शन कहिये हैं। तहां लोकके एक एक राजू घनरूप खंड कल्पिये तब तीनसै तियालीस राजू होय। ताविषैं जीव स्पर्शन करै है। सो च्यारि प्रकार है। स्वस्थानविहार अपेक्षा, परस्थानविहार अपेक्षा, मारणांतिकसमुद्घात अपेक्षा, उत्पाद अपेक्षा। सो कहिये हैं। सो प्ररूपणा दोय प्रकार है। सामान्यकरि गुणस्थाननिविषैं, विशेषकरि मार्गणानिविषैं। तहां प्रथमही सामान्यकरि मिथ्यादृष्टिनिकरि सर्वलोक स्पर्शिये है। सासादनसम्यग्दृष्टिनिकरि लोकका असंख्यातवा भाग स्वस्थानविहारकी अपेक्षा है। अर परस्थानविहार अपेक्षा सासादनवर्ती देव तीसरी पृथिवीतांई विहार करै सो दोय राजू तौ ए भये। अर अच्युतस्वर्गतांई ऊपरी विहार करै तातैं छह राजू ए भये। ऐसैं आठ राजू स्पर्शै। ऐसैं इनिकूं आठ चतुर्दश भाग कहे। तहां त्रसनाडी चोदह राजू है। सो

तीनसे तियालीस भागमैं चौदह भाग लिये, तिनिमैंसूं आठ भाग तथा द्वादश भाग कहे, तहां तेता राजू जाननां । इहां सासादनमैं बारह भागभी कहे हैं, ते मारणांतिक अपेक्षा हैं । सो सासादनवाला सातवी पृथिवीविना छठी पृथिवीतैं मारणांतिक करै सो मध्यलोकमैं आवै, सो पांच राजू तौ ए भये । अरु मध्यलोकतैं बादरपृथिवीकायिकादिविषैं सासादनवाला उपजै तब मारणांतिक समुद्घातकरि लोकका अंततांई स्पर्शै, सो सात राजु ये भये । ऐसैं बारह राजू स्पर्शै है । सो देशोन कहिये किछू घाटि स्पर्शै है । बहुरि सम्यङ्मिथ्यादृष्टिनिकरि अर असंयतसम्यग्दृष्टिनिकरि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शीये है । अथवा चौदह भागमैंसूं आठ भाग किछू घाटि स्पर्शीये है । सो अच्युतदेवका परस्थानविहार अपेक्षा है । बहुरि संयतासंयतवालेका लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । अथवा चौदह भागमैंसूं छह भाग किछू घाटि है । इहां अच्युतस्वर्गमैं उपजै सो मारणांतिक समुद्घात करै, ताकी अपेक्षा है । बहुरि प्रमत्तसंयत आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका क्षेत्रवत् स्पर्शन है ॥

विशेषकरि गतिका अनुवादकरि प्रथमपृथिवीविषैं नारकीनिकै च्यारि गुणस्थानवालेकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । दूसरीतैं लगाय छठी पृथिवीतांईके नारकीनिकै मिथ्यादृष्टीनिकै सासादनसम्यग्दृष्टीनिकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । अर चोदह भागमैंसूं एक भाग दोय

भाग तीन भाग च्यारि भाग पांच भाग किछू घाटि है । यहू मारणांतिक अपेक्षा है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिनिकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्श है । बहुरि सातमी पृथिवीवाले मिथ्यादृष्टिनिकै लोकका असंख्यातवा भाग है । अर छह भाग देशोन चोदह भागमैंसूं है सो मारणांतिक अपेक्षा है । बहुरि तीन गुणस्थानवालेकै लोकका असंख्यातवा भाग है । बहुरि तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंचमिथ्यादृष्टिनिकै सर्वलोक है । सासादनसम्यग्दृष्टिनिकै लोककै असंख्यातवा भाग है । असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयतनिकै लोकका असंख्यातवा भाग है । अर चोदह भागमैंसूं छह भाग कछु घाटि मारणांतिक अपेक्षा है । बहुरि मनुष्यगतिविषैं मिथ्यादृष्टि मनुष्यलोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । अर मारणांतिक अपेक्षा सर्वलोक स्पर्शै है । सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । चोदह भागमैंसूं सात भाग किछू घाटि मरणांतिक अपेक्षा स्पर्शै है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै क्षेत्रवत् स्पर्शन है । देवगतिविषैं देव मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै हैं । अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन परस्थानविहार अपेक्षा तीसरी पृथिवीताईं गमन मारणांतिक अपेक्षा लोकके अग्रभागविषैं उपजै तब स्पर्शै । सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । चौदह भागमैंसूं आठ भाग

परस्थानविहार अपेक्षा स्पर्शै किछू घाटि ॥

इंद्रियनिके अनुवादकरि मिथ्यादृष्टि एकेंद्रिय सर्वलोक स्पर्शै । विकलत्रय लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । मारणांतिक अपेक्षा सर्वलोक स्पर्शै । पंचेंद्रियनिविषै मिथ्यादृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । परस्थानविहार अपेक्षा चौदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन मारणांतिक अपेक्षा सर्वलोक स्पर्शै । बहुरि सासादन आदि सर्वगुणस्थानवर्तीकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

कायके अनुवादकरि स्थावरकायिक तौ सर्वलोक स्पर्शै है त्रसकायिकनिकै पंचेंद्रियवत् स्पर्शन है ॥

योगके अनुवादकरि वचनमनोयोगीनिकै मिथ्यादृष्टिनिकै लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन है । अर सर्वलोकभी है । अर सासादनसम्यग्दृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है । सयोगकेवलीनिकै लोकका असंख्यातवा भाग है । काययोगीनिकै मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिकै अर अयोगकेवलीनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषवेदी मिथ्यादृष्टि लोककै असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन स्पर्शै है । अथवा सर्वलोकभी स्पर्शै है । सासादनसम्यग्दृष्टि

लोकका असंख्यातवां भाग स्पर्शै है । अर चौदा भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन स्पर्शै है। सम्यङ्मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है । नपुंसक वेदविषै मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टीनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टीनिकै लोकका असंख्यातवां भाग है। असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत लोकका असंख्यातवां भाग स्पर्शै है अर चौदह भागमैंसूं छह भाग देशोन मारणांतिक अपेक्षा स्पर्शै है। प्रमत्तसंयत आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतवाले अर वेदरहितनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

कषायके अनुवादकरि च्यारि कषायवालेनिकै अर कषायरहितनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है। ज्ञानके अनुवादकरि मति अज्ञान श्रुतअज्ञानवाले मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टिनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है। विभंगज्ञानीकै मिथ्यादृष्टीनिकै असंख्यातवां भाग है । अर चोदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन हैअर सर्वलोकभी है । सासादनसम्यग्दृष्टीनिकै गुणस्थानवत स्पर्शन है। मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवलज्ञानीनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

सँयमके अनुवादकरि सर्वसंयमीनिकै अर संयतासंयतनिकै अर असंयतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवाले मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिकै पंचेंद्रियवत् स्पर्शन है । अचक्षुर्दर्शनवालेनिके मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिकै अवधिदर्शन केवलदर्शनवालेनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण-नील-कापोतलेश्यावाले मिथ्यादृष्टि सर्वलोक स्पर्शै हैं । सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै हैं । अर पांच भाग च्यारि भाग देशोन चौदह भागमैंसूं स्पर्शै हैं । इहां कोई पूछै है, जो, बारह भाग क्यों न कहे? ताका समाधान— जो, नरकमैं अवस्थितलेश्या है । छठी पृथ्वीवाला मारणांतिक करै सो मध्यलोकमैं आवै पांच राजू स्पर्शै । अर जिनिके मतमैं सासादनवाला एकेंद्रियविषैं नाहीं उपजै, तिनिके मतकी अपेक्षा बारह भाग नांही कहे हैं । अर सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि लोककै असंख्यातवां भाग स्पर्शै है । पीतलेश्यावाला मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवां भाग अर चौदह भागमैंसूं आठ भाग नव भाग देशोन स्पर्शै है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग अर चोदह भागमैंसूं आठ भाग देशोन स्पर्शै है । संयतासंयत लोकका असंख्यातवा भाग अर मारणांतिक अपेक्षा प्रथमस्वर्गका ड्योढ राजूताई स्पर्शै । तातैं अध्यर्धदेशोन चौदह भागमैंसूं

कह्या । अर प्रमत्त अप्रमत्त संयत लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । पद्मलेश्यावाला मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंत लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । अर आठ भाग देशोन चौदहमैंसूं अर संयतासंयत लोकका असंख्यातवा भाग अर चौदह भागमैंसूं पांच भाग देशोन स्पर्शै । प्रमत्त अप्रमत्त संयत लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै । शुक्ललेश्यावाला मिथ्यादृष्टि आदि संयतासंयतपर्यंत लोकका असंख्यातवा भाग अर चौदह भागमैंसूं छह भाग देशोन स्पर्शै । प्रमत्त आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिकै अर लेश्यारहितनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिकै मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् स्पर्शन है। अभव्य सर्वलोक स्पर्शै है ॥

सम्यक्तके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टीनिके असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिके गुणस्थानवत् स्पर्शन है । विशेष यहु, जो, संयतासंयतनिका लोकका असंख्यातवा भागही है। क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टिनिका गुणस्थानवत् स्पर्शन है । औपशमिकसम्यक्त्ववालेनिका असंयतसम्यग्दृष्टीनिका गुणस्थानवत् । अन्यका लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शन है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टीनिका गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीनिका चक्षुर्दर्शनिवत् । असंज्ञी सर्वलोक स्पर्शै हैं । तिनि दोऊनिकरि रहितका गुणस्थानवत् स्पर्शन है ॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिका मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् स्पर्शन है । सयोगकेवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग है । अनाहारकविषैं मिथ्यादृष्टि सर्वलोक स्पर्शै है । सासादनसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग अर चौदा भागमैंसूं ग्यारह भाग देशोन स्पर्शै है । सो छठी पृथिवीतैं मध्यलोकमैं उपजै, ताकै उत्पाद अपेक्षा तौ पांच राजू, अर अच्युततैं मध्यलोकमैं आय उपजै, ताकै उत्पाद,अपेक्षा छह ऐसैं ग्यारह राजू कहे मारणांतिक अपेक्षा बारह राजू होय है । परंतु मारणांतिकमैं अनाहारक नांही । तातैं उत्पाद अपेक्षा ग्यारह है । असंयतसम्यग्दृष्टि लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शै है । अर चोदह भागमैंसूं छह भाग देशोन स्पर्शै है । सयोगकेवली लोकका असंख्यातवा भाग अर सर्वलोक स्पर्शै है । अयोगकेवलीनिका लोकका असंख्यातवा भाग स्पर्शन है । ऐसैं स्पर्शनका व्याख्यान कीया ॥

आगै कालका निरूपण करिये हैं । सो दोय प्रकार है । सामान्यकरि गुणस्थानविषैं विशेषकरि मार्गणानिविषैं । तहां सामान्यकरि मिथ्यादृष्टीका नानाजीवापेक्षा सर्वकाल है । एक

जीवकी अपेक्षा तीन भंग हैं । अभव्यकै तौ अनादि अनंत है । भव्यकै अनादि सांत है, सादि सांत है । तहां सादि सांत जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन कछू घाटि है । बहुरि सासादनसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है । उत्कृष्ट पल्योपमकै असंख्यातवे भाग है । एकजीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली है । सम्यङ्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पल्योपमकै असंख्यातवे भाग है । एक जीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है । असंयत सम्यग्दृष्टीको नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तेतीस सागर कछू अधिक । बहुरि संयतासंयतको नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछू घाटि । प्रमत्त अप्रमत्त संयतको नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । बहुरि च्यारि उपशमश्रेणीवाला गुणस्थाननिका नानाजीवकी अपेक्षा अर एक जीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । बहुरि च्यारि क्षपकश्रेणीवाला आठवां नवमां दशमां बारहमां गुणस्थानका बहुरि अयोगकेवलीका नानाजीवकी अपेक्षा अर एकजीवकी अपेक्षा जघन्यभी अरु उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है । बहुरि सयोगकेवलीनिका नानाजीवकी

अपेक्षा तौ सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछु घाटि है ॥

विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं नारकीनिकै सातूंही पृथ्वीविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा तौ सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट एक सागर, तीन सागर, सात सागर, दश सागर, सतरा सागर, बाईस सागर, तेतीस सागर, यथासंख्य अनुक्रमतें आयुपरिमाण है । सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यङ्मिथ्यादृष्टीका गुणस्थानवत् काल है। असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट आयुःप्रमाण किछु घाटि। तिर्यग्गतिविषैं तिर्यंचनिकै नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट अनंतकाल है। सो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन है । सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टीका अरु संयतासंयतका गुणस्थानवत् काल है । असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्य है । मनुष्यगतिविषैं मनुष्यनिकै मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एक जीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्य पृथक्त्व कोडी पूर्व अधिक है। सासादनसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मूहूर्त है । एक जीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली है।

सम्यग्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा एक जीवकी अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल है । असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाकीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तीन पल्य किछु अधिक है । बाकीके गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् काल है ॥ देवगतिविषैं देवनिके मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है एकजीवप्रति जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट इकतीस सागरोपम है । सासादनसम्यग्दृष्टीका अर सम्यग्मिथ्यादृष्टीका गुणस्थानवत् काल है । असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है । एक जीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम है ॥

इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रियनिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अनंत काल सो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन है । विकलत्रयका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एक जीव अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष है । पंचेंद्रियविषैं मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्व कोडी पूर्व अधिक है । सासादन आदि सर्व गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् काल है ॥

कायके अनुवादकरि पृथिवी अप् तेज वायुकायिकका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात लोकपरिमाण काल है । वनस्पतिकायिकका

एकेंद्रियवत् काल है । त्रसकायिकनिविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्व कोडी पूर्व अधिक है। बाकीके गुणस्थाननिका पंचेंद्रियवत् काल है ॥

योगके अनुवादकरि वचनमनोयोगीनिविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्त संयत सयोगकेवलीनिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त सासादनसम्यग्दृष्टीका गुणस्थानवत् सम्यग्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवे भाग काल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एक समय है । उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । च्यारि उपशमकनिका च्यारि क्षपकनिका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है । उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल है । काययोगीनिविषैं मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है। उत्कृष्ट अनंतकाल है। सो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन है । अवशेष गुणस्थाननिका मनोयोगिवत् काल है। अयोगीनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीव अपेक्षा

जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ पल्य काल है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है । तहां विशेष यहु— जो, असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट पचावनपल्य कछु घाटि काल है। पुरुषवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है । सासादन सम्यग्दृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है। नपुंसकवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अनंतकाल है सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरसांपरायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् है । विशेष यहु है जो, असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है । एक जीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर कछु घाटि काल है। वेदरहितनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

कषायके अनुवादकरि च्यारि कषायनिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतनिका मनोयोगिवत् काल है । दोय उपशमश्रेणीका दोय क्षपकश्रेणीका गुणस्थाननिका अर केवललोभका अर कषायरहितनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मति अज्ञान श्रुतअज्ञानवाले मिथ्यादृष्टि सासादनसम्यग्दृष्टीनिका गुणस्थानवत् काल है । विभंगज्ञानीविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर किछु घाटि है । सासादनसम्यग्दृष्टीका गुणस्थानवत् काल है । मति-श्रुत-अवधि-मनःपर्ययज्ञानीनिका अर केवलज्ञानीनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

संयमके अनुवादकरि सामयिकच्छेदोपस्थापन परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसांपराय यथाख्यातशुद्धिसंयतनिका अर संयतासंयतनिका अर असंयत च्यारि गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् काल है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेनिविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एक जीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट दोय हजार सागर है । सासादनसम्यग्दृष्टिनिका क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है । अचक्षुर्दर्शनवालेनिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है । अवधि केवलदर्शनवालेनिका अवधि केवलज्ञानिवत् काल है ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्णनीलकापोतलेश्याविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर सतरा सागर सात सागर कछु अधिक है, सो नरक अपेक्षा है । सासादनकौ अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिकौ गुणस्थानवत् काल है ।

असंयतसम्यग्दृष्टिकौ नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट तेतीस सागर सतरा सागर सात सागर कछु घाटि है । पीतपद्मलेश्याविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिको नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट दोय सागर अठारह सागर किछु अधिक है सो स्वर्ग अपेक्षा है । सासादन सम्यग्मिथ्यादृष्टिको गुणस्थानवत् काल है । संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्त संयतनिको नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । शुक्ललेश्याविषैं मिथ्यादृष्टिको नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट इकतीस सागर किछु अधिक है । सासादनसम्यग्दृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिका अर लेश्यारहितका गुणस्थानवत् काल है । विशेष यहु जो, संयतासंयतका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सर्वकाल है । एकजीव अपेक्षा दोय भंग हैं । अनादि सांत सादि सांत । तहां सादिसांत जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट अर्धपुद्गलपरिवर्तन कछु घाटि है । सासादन आदि केवलीपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है । अभव्यनिका अनादि अनंत काल है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टीनिका असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका गुणस्थानवत् काल है। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टीनिका चाऱ्यौं गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् काल है। औपशमिक सम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत इनि दोऊनिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पल्योपमके असंख्यातवे भाग है। एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है। प्रमत्त अप्रमत्त संयतका अर च्यारि उपशमश्रेणीवालेका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एक समय है उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टिनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिबादरपर्यंतनिका पुरुषवेदवत् काल है। अवशेषका गुणस्थानवत् काल है। असंज्ञीनिका मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ क्षुद्रभवमात्र है। सासके अठारहै भाग अर उत्कृष्ट अनंतकाल है। सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है। दोऊ नामकरि रहितनिका गुणस्थानवत् काल है ॥

आहारकका अनुवादकरि आहारकविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवअपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट अंगुलके असंख्यातवा भाग है सो असंख्यातासंख्यात

उत्सर्पिणी अवसर्पिणी परिमाण है । अंगुलिकै प्रदेश अर इनिके समय समान हैं । अवशेषनिका गुणस्थानवत् काल है। अनाहारकविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा सर्वकाल है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट तीन समय है । सासादनसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है। उत्कृष्ट आवलीकै असंख्यातवां भाग है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है उत्कृष्ट दोय समय है। सयोगकेवलीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ तीन समय है। उत्कृष्ट असंख्यातसमय है। एकजीव अपेक्षा जघन्य अर उत्कृष्ट तीन समय है। अयोगकेवलीका गुणस्थानवत् काल है। ऐसैं कालका वर्णन कीया है ॥

आगैं अंतरका निरूपण करिये हैं। तहां विवक्षित गुणकै अन्यगुण पलट न होतैं फिर तिसही गुणकी प्राप्तितैं पहलै वीचिका काल सो अंतर है । सो दोय प्रकार कहिये है । सामान्यकरि तौ गुणस्थानविषैं, विशेषकरि मार्गणाविषैं । तहां सामान्यकरि मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट एकसोबत्तीस सागर देशोन कहिये किछु घाटि है। सासादनसम्यग्दृष्टिका अंतर नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एक समय, उत्कृष्ट पल्यका असंख्यातवा भाग है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ पल्यका असंख्यातवा भाग,

उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन देशोन है। सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अंतर नानाजीवकी अपेक्षा सासादनवत् है। एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन देशोन है। असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा तौ अंतर नाही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन देशोन है। च्यारि उपशमश्रेणीवालानिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन देशोन है। अर च्यारि क्षपकश्रेणीवालानिका अर अयोगकेवलीनिका नानाजीव अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय, उत्कृष्ट छह महीना है। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। अर सयोगकेवलीका नानाजीव अपेक्षा अर एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है॥

विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं नारकीनिका सात पृथिवीविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नाही। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट एक सागर तीन सागर सात सागर दश सागर सतरा सागर बाईस सागर तेतीस सागर देशोन है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पल्यका असंख्यातवा भाग है। एकजीव अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त

है। उत्कृष्ट एक तीन सात दश सतरा बाईस तेतीस सागर देशोन है। तिर्यंच गतिविषें तिर्यंचनिकै मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नाही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तीन पल्य देशोन है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि च्यारीनिका गुणस्थानवत् अंतर है। मनुष्यगतिविषें मनुष्यनिकै मिथ्यादृष्टिका तिर्यंचवत्। सासादनसम्यग्दृष्टीका अर सम्यग्मिथ्यादृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्य पल्योपमका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तीन पल्य पृथक्त्व कोडिपूर्व अधिक है। असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तीन पल्य पृथक्त्व कोडिपूर्व अधिक है। संयतासंयत प्रमत्तअप्रमत्त संयतका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडिपूर्व है। च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्वकोडिपूर्व है। अवशेषनिका गुणस्थानवत् अंतर है। देवगतिविषें देवनिकै मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट इकतीस सागर देशोन है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीव

अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है, उत्कृष्ट इकतीस सागर है, सो देशोन है॥

इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रियनिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । विकलत्रयका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव है । उत्कृष्ट अनंतकाल है । सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है । ऐसें इंद्रियप्रति अंतर कह्या । गुणस्थान अपेक्षा एक मिथ्यात्वही है तातें अंतर नांही है । पंचेंद्रियविषें मिथ्यादृष्टिका अंतर गुणस्थानवत् । सासादनसम्यग्दृष्टिका अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत । एकजीवकी अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतनिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । च्यारि उपशमश्रेणीवालानिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । अवशेषनिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

कायके अनुवादकरि पृथिवी अप तेज वायु कायिकनिकै नानाजीव अपेक्षा अंतर नाही है ।

एकजीव अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट अनंतकाल है सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तन है । वनस्पतिकायिकनिकै नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यातलोक । इहां असंख्यातलोककै प्रदेश हैं ते ते कालके समय ग्रहण है । ऐसैं काय अपेक्षा अंतर कह्या ॥ गुणस्थान अपेक्षा अंतर नांही है । त्रसकायिकविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है । सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् । एकजीव अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग है । अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है, उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । च्यारि उपशमश्रेणीवालाका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट दोय हजार सागर पृथक्त्वकोडिपूर्व अधिक है । अवशेषनिका पंचेंद्रियवत् अंतर है ॥

योगके अनुवादकरि काय वचन मन योगिनिकै मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयत सयोगकेवलीनिकै नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा अंतर

नांही है । सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीव अपेक्षा अतर नांही है । च्यारि क्षपकवालेनिकै अर अयोगकेवलीनिकै गुणस्थानवत् अंतर है । एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीवेदविषैं मिथ्यादृष्टिकै नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पंचावन पल्य किछु घाटि है । सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ पल्यका असंख्यातवा भाग है अर अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्व सौपल्य है । असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तपर्यंतनिका नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्व सौपल्य है । दोय उपशमश्रेणीवालाका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट पृथक्त्व सौपल्य है । दोय क्षपकश्रेणीवालाका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष है । एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है । पुरुषवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् । सासादनसम्यग्दृष्टि अर सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव

अपेक्षा गुणस्थानवत् एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ पल्योपमके असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। दोय उपशमश्रेणीवालानिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत्। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। दोय क्षपकश्रेणीवालानिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य एकसमय है। उत्कृष्ट एकवर्ष कछु अधिक है। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। नपुंसकवेदविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर देशोन है। सासादनसम्यग्दृष्टि आदि अनिवृत्ति उपशमपर्यंतनिका गुणस्थानवत् अंतर है। अर दोय क्षपकश्रेणीवालानिका स्त्रीवेदवत् है। वेदरहित अनिवृत्ति बादरसांपराय उपशमक सूक्ष्मसांपराय उपशमकका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत है। एकजीव अपेक्षा जघन्य अरु उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है। उपशांतकषायका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। अवशेष गुणस्थानवत् अंतर है॥

कषायके अनुवादकरि क्रोध मान माया लोभ कषायकै मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्ति

उपशमश्रेणीवालानांई मनोयोगीवत् अंतर है । अर दोय क्षपकश्रेणीवालानिका नानाजीव अपेक्षा जघन्य एकसमय उत्कृष्ट एकवर्ष किछु अधिक । केवललोभसूक्ष्मसांपरायोपशमकका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् । एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है । सूक्ष्मसांपराय क्षपकश्रेणीवालाका गुणस्थानवत् । कषायरहित च्यारि गुणस्थाननिविषैं उपशांतकषायका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् । एकजीव अपेक्षा अंतर नांही । अवशेष तीन गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञान विभंगज्ञानवालेविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है । सासादनसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् । एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है । मति-श्रुत-अवधिज्ञानवालेविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट कोडिपूर्व देशोन है । संयतासंयतका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट छयासठि सागरोपम किछु अधिक है । प्रमत्त अप्रमत्तसंयतका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम किछु अधिक है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् है । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ

अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट छ्यासठी सागरोपम कछु अधिक है । च्यारि क्षपकश्रेणीवालानिका गुणस्थानवत् अंतर है। तहां विशेष यहु- अवधिज्ञानीनिका नानाजीव अपेक्षा जघन्य एक समय उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष । एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है । मनःपर्ययज्ञानीनिका प्रमत्त अप्रमत्तसंयमीनिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है । च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् । एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट कोडिपूर्व किछु घाटि है । च्यारि क्षपकश्रेणीवालानिका अवधिज्ञानीवत् अंतर है । दोऊके केवलज्ञानीनिका गुणस्थानवत् अंतर है ॥

संयमके अनुवादकरि सामयिक च्छेदोपस्थापना शुद्धसंयमिविषैं प्रमत्त अप्रमत्त संयमीका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है । दोऊ उपशमश्रेणीवालाका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है । उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछु घाटि है । दोऊ क्षपकश्रेणीवालानिका गुणस्थानवत् अंतर है । परिहारविशुद्धि संयमी प्रमत्त अप्रमत्तका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है । एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है । सूक्ष्मसांपरायसंयमविषैं उपशमश्रेणीवालाका नानाजीव

अपेक्षा गुणस्थानवत्। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। क्षपकश्रेणीवालाका गुणस्थानवत् अंतर है। यथाख्यातसंयमविषैं अकषायवत् अंतर जाननां। संयतासंयतका नानाजीव अपेक्षा एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। असंयतविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर देशोन है। अवशेष तीनूं गुणस्थाननिका गुणस्थानवत् अंतर है॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीव अपेक्षा जघन्य पल्यकै असंख्यातवैं भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट दोय हजार सागर कछु घाटि है। असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तसंयतपर्यंतनिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट दोय हजार सागर कछु घाटि है। च्यारि उपशमश्रेणीवालानिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट दोय हजार सागर देशोन है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालानिका गुणस्थानवत् है। अचक्षुर्दर्शनविषैं मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषायपर्यंतनिका गुणस्थानवत् है। अवधिदर्शनवालेका अवधिज्ञानीवत् है। केवलदर्शनवालेका केवलज्ञानीवत् है॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्ण नील कापोत लेश्यावालेनिविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिके नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर सतरा सागर सात सागर कछु घाटि है। सो नारकी अपेक्षा है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा सामान्यवत् है। एकजीव अपेक्षा जघन्य पल्योपमका असंख्यातवा भाग है। अंतर्मुहूर्तभी है। उत्कृष्ट तेतीस सागर सतरा सागर सात सागर है। सो कछु घाटि है। पीतपद्मलेश्याविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट दोय सागर अठारा सागर कछु अधिक है। सासादन सम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीव अपेक्षा जघन्य पल्यका असंख्यातवा भाग है। अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट दोय सागर अठारा सागर कछु अधिक है। संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्त संयतका नानाजीवकी अपेक्षा एकजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। शुक्लेश्यावालाविषैं मिथ्यादृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट इकतीस सागर कछु घाटि है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यङ्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अंतर गुणस्थानवत् है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ पल्यके

असंख्यातवें भाग है। अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट इकतीस सागर कछु घाटि है। संयतासंयत अर प्रमत्तसंयतका पीतलेश्यावत् है। अप्रमत्तसंयतका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है। तीन उपशमश्रेणीवालानिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है। उपशांत कषायका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालानिका अर सयोगकेवलीनिका अर लेश्यारहितका गुणस्थानवत् अंतर है॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिका गुणस्थानवत् अंतर है। अभव्यानिका नानाजीव अपेक्षा एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिक सम्यग्दृष्टिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीवके अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव प्रति जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट कोडिपूर्व कछु घाटि है। संयतासंयत अर प्रमत्त अप्रमत्त संयतनिका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर कछु अधिक है। च्यारि उपशमश्रेणीवालानिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस

सागर कछु अधिक है। अवशेषनिका गुणस्थानवत् अंतर है। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टीनिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट कोडिपूर्व देशोन है। संयतासंयतका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है उत्कृष्ट छ्यासठि सागरोपम देशोन है। प्रमत्त अप्रमत्त संयतका नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट तेतीस सागर कछु अधिक है। औपशमिक सम्यग्दृष्टिनिविषैं असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट सात राति दिन है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है। संयतासंयतका नानाजीव अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट चौदह राति दिनका अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है। प्रमत्त अप्रमत्त संयतका नानाजीव अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पंदरह राति दिन है। एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है। तीन उपशमश्रे-णीवालानिका नानाजीव अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पृथक्त्ववर्षका अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्यभी उत्कृष्टभी अंतर्मुहूर्त है। उपशांतकषायका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् है।

एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। सासादनसम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पल्यकै असंख्यातवैं भाग है। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा अर एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीनिविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है। सासादनसम्यग्दृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ पल्यका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। असंयत सम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्ततांई नानाजीव अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालेनिका गुणस्थानवत् अंतर है। असंज्ञीके नानाजीव अपेक्षा एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। दोऊ नामकरि रहितनिका गुणस्थानवत अंतर है ॥

आहारके अनुवादकरि आहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टिका गुणस्थानवत् अंतर है। सासादन-सम्यग्दृष्टि-सम्यग्मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्य

तौ पल्योपमका असंख्यातवा भाग अर अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अंगुलका असंख्यातवा भाग आकाशके प्रदेश जेते हैं तेते समय हैं। ते असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल है। असंयतसम्यग्दृष्टि आदि अप्रमत्तगुणस्थानपर्यंत नानाजीवकी अपेक्षा अंतर नांही है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अंगुलका असंख्यातवा भाग है। ते असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणीके समयप्रमाण हैं। च्यारि उपशमश्रेणीवालानिका नानाजीवकी अपेक्षा गुणस्थानवत् अंतर है। एकजीव अपेक्षा जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त है। उत्कृष्ट अंगुलका असंख्यातवा भाग है। सो असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणीके समयप्रमाण है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालानिका अर सयोगकेवलीनिका गुणस्थानवत् अंतर है। अनाहारकनिविषैं मिथ्यादृष्टिका नानाजीव अपेक्षा एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। सासादनसम्यग्दृष्टीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पल्यकै असंख्यातवैं भाग है। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। असंयतसम्यग्दृष्टिका नानाजीव अपेक्षा जघन्य एकसमय है। उत्कृष्ट पृथक्त्व महीना है। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। सयोगकेवलीका नानाजीवकी अपेक्षा जघन्य तौ एकसमय है। उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्ष है। एकजीव अपेक्षा अंतर नांही है। ऐसैं अंतरका निश्चय कीया॥

आगै भावकूं प्रगट कीजिये ॥ तहां भाव दोय प्रकार। सामान्यकरि गुणस्थान, विशेषकरि मार्गणा। तहां प्रथमही सामान्यकरि मिथ्यादृष्टि तौ औदयिक भाव है। सासादनसम्यग्दृष्टि पारिणामिक भाव है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि क्षायोपशमिक भाव है। असंयतसम्यग्दृष्टि औपशमिक अथवा क्षायिक अथवा क्षायोपशमिक भाव है। इहां असंयतपणां है सो औदयिकभावकरि है। संयतासंयत प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत ऐसै क्षायोपशमिक भाव है। च्यारि उपशमश्रेणीवाला औपशमिक भाव है। च्यारि क्षपकश्रेणीवालानिविषैं अर सयोगकेवली अयोगकेवलीनिविषैं क्षायिक भाव है ॥

विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं प्रथमपृथिवीविषैं नारकी मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंतनिके गुणस्थानवत् भाव है। दूसरी पृथिवी आदि सातमीपर्यंत मिथ्यादृष्टि सासादन सम्यङ्मिथ्यादृष्टीनिकै गुणस्थानवत्। असंयतसम्यग्दृष्टिकै औपशमिक क्षायोपशमिकभाव है। असंयत है सो औदयिकभावकरि है। तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंचनिकै मिथ्यादृष्टि संयतासंयत पर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है। मनुष्यगतिविषैं मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिके गुणस्थानवत् भाव है। देवगतिविषैं देवनिकै मिथ्यादृष्टि आदि असंयतसम्यग्दृष्टिपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रिय विकलत्रयनिकै औदयिकभाव है। पंचेंद्रियनिविषें मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

कायके अनुवादकरि स्थावरकायिकनिकै औदयिक भाव है। त्रसकायिकनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

योगके अनुवादकरि कायवचनमनोयोगीनिकै मिथ्यादृष्टि आदि सयोगकेवलीपर्यंतनिकै अर अयोगकेवलीनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषनपुंसकवेदीनिकै अर वेदरहितनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

कषायानुवादकरि क्रोधमानमायालोभकषायवालेनिकै अर कषायरहितनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मति अज्ञान श्रुत अज्ञान विभंगज्ञानवालेनिकै अर मतिश्रुत अवधि मनःपर्यय केवलज्ञानीनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

संयमका अनुवादकरि सर्वही संयतनिकै अर संयतासंयतनिकै अर असंयतनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

दर्शनानुवादकरि चक्षुर्दर्शन-अचक्षुर्दर्शन-अवधिदर्शन-केवलदर्शनवालेनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

लेश्याके अनुवादकरि छह् लेश्यावालेनिकै अर लेश्यारहितनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिकै मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है। अभव्यनिकै पारिणामिक भाव है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टीविषैं असंयंतसम्यग्दृष्टीकै क्षायिकभाव तौ क्षायिकसम्यक्त्व है। अर असंयतपणां है सो औदयिकभावकरि है। संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयतनिकै क्षायोपशमिक भाव है। सम्यक्त्व क्षायिक है सो क्षायिकभावकरि है। च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिकै औपशमिक भाव है। सम्यक्त्व इहां क्षायिकभावकरि हो है। अवशेपनिके गुणस्थानवत् भाव है। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टीविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीकै क्षायोपशमिक भाव है सो तौ क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है। असंयत है सो औदयिकभावकरि है। संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयतनिकै क्षायोपशमिक भाव है। क्षायोपशमिकसम्यक्त्व है। औपशमिकसम्यक्त्वविषैं असंयतसम्यग्दृष्टीकै औपशमिक भाव उपशमसम्यक्त्व है। असंयत है सो औदयिकभावकरि है। संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयतनिकै क्षायोपशमिक भाव है। सम्यक्त्व औपशमिक है। च्यारि उपशमश्रेणीवालानिकै औपशमिकभाव उपशमसम्यक्त्व है। सासादनसम्यग्दृष्टिकै पारिणामिक भाव है। सम्यग्मिथ्यादृष्टिकै क्षायोपशमिक भाव है। मिथ्यादृष्टीकै औदयिक भाव है ॥

संज्ञीके अनुवादकरि संज्ञीनिकै गुणस्थानवत्। असंज्ञीनिकै औदयिक भाव है। दोऊ संज्ञारहितनिकै गुणस्थानवत् भाव है ॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिकैं अर अनाहारकनिकै गुणस्थानवत् भाव है। ऐसैं भावका निरूपण मोहकर्म अपेक्षा उदाहरणरूप समास भया ॥

आगै अल्पबहुत्वका वर्णन कीजिये है। सो दोय प्रकार। सामान्यकरि, विशेषकरि। तहां प्रथमही सामान्यकरि तीन उपशमश्रेणीवाला सर्वतैं स्तोक कहिये थोरा है॥ ते अपने अपने गुणस्थानकालविषैं प्रवेशकरि तुल्यसंख्या हैं। अर उपशांतकषायवालाभी तितनाही है। बहुरि तीन क्षपकश्रेणीवाला इनितैं संख्यातगुणा है। अर क्षीणकषाय छद्मस्थ वीतरागभी तितनाही है। अर सयोगकेवली अयोगकेवली प्रवेशकरि तुल्यसंख्या है। अर सयोगकेवली अपने कालविषैं भेले होय ते इनितैं संख्यातगुणां हैं। बहुरि अप्रमत्तसंयत संख्यातगुणां हैं। तिनितैं प्रमत्तसंयत संख्यातगुणां हैं। तिनितैं संयतासंयत असंख्यातगुणां है। तिनितैं सासादनसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणा हैं। तिनितैं सम्यग्मिथ्यादृष्टि असंख्यातगुणां हैं। तिनितैं असंयतसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणां हैं। तिनितैं मिथ्यादृष्टि अनंतगुणां हैं ॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिकै मिथ्यादृष्टि आदि अयोगकेवलीपर्यंतनिकै गुणस्थानवत् भाव है। अभव्यनिकै पारिणामिक भाव है ॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टीविषैं असंयंतसम्यग्दृष्टिकै क्षायिकभाव तौ क्षायिकसम्यक्त्व है। अर असंयतपणां है सो औदयिकभावकरि है। संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्तसंयतनिकै क्षायोपशमिक भाव है। सम्यक्त्व क्षायिक है सो क्षायिकभावकरि है। च्यारि उपशमश्रेणीवालेनिकै औपशमिक [illegible] है। सम्यक्त्व इहां क्षायिकभावकरि हो है। अवशेषनिकै गुणस्थानवत् भाव है। क्षायोपशमिक [illegible] शमिक भाव है सो तौ क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है।

योगके अनुवादकरि वचनमनयोगीनिकै पंचेंद्रियवत् काययोगीनिकै गुणस्थानवत् अल्पबहुत है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषवेदीनिकै पंचेंद्रियवत्। नपुंसकवेदीनिकै अर वेदरहितनिकै गुणस्थानवत् अल्पबहुत्व है ॥

कषायके अनुवादकरि क्रोधमानमायाकषायवालेनिकै पुरुषवेदवत्। विशेष यहु जो मिथ्यादृष्टि अनंतगुणा है। लोभकषायवालेनिकै दोय उपशमश्रेणीवाला तुल्यसंख्या है। अर क्षपकश्रेणीवाला तिनितैं संख्यातगुणां है। सूक्ष्मसांपराय शुद्धसंयत उपशमश्रेणीवाला विशेषकरि अधिक है। तिनितैं सूक्ष्मसांपराय क्षपकश्रेणीवाला संख्यातगुणां है। अवशेषनिकै गुणस्थानवत् है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानवालेनिविषैं सर्वतैं स्तोक सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं अनंतगुणां मिथ्यादृष्टि है। विभंगज्ञानीनिविषैं सर्वतैं थोरा सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं असंख्यातगुणां मिथ्यादृष्टि है। मतिश्रुतअवधिज्ञानीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है। मनःपर्ययज्ञानीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाला

विशेषकरि गतिके अनुवादकरि नरकगतिविषैं सर्वपृथ्वीनिविषैं नारकी जीव सर्वतैं स्तोक सासादनसम्यग्दृष्टि हैं। तिनितैं संख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि हैं। तिनितैं असंख्यातगुणां मिथ्यादृष्टि हैं। तिर्यंचगतिविषैं तिर्यंच सर्वतैं थोरा संयतासंयत हैं। अन्यकी संख्या गुणस्थानवत् है। मनुष्यगतिविषैं मनुष्यनिकै उपशमश्रेणीवाला आदिविषैं अर प्रमत्तसंयतानिताईं गुणस्थानवत्। तिनितैं संख्यातगुणां संयतासंयत हैं। तिनितैं सासादनसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणां हैं। तिनितैं संख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं। तिनितैं असंयतसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणां हैं। तिनितैं मिथ्यादृष्टि असंख्यातगुणां हैं। देवगतिविषैं देवनिकै नारकीवत् अल्पबहुत्व है॥ इंद्रियके अनुवादकरि एकेंद्रिय विकलत्रयविषैं गुणस्थानभेद नांही। तातैं अल्पबहुत्वका अभाव है॥ इंद्रिय अपेक्षा कहिये। तहां पंचेंद्रिय आदि एकेंद्रियपर्यंत उत्तरोत्तर बहुत्व है। पंचेंद्रियनिकै गुणस्थानवत्। विशेष यहु जो मिथ्यादृष्टि असंख्यातगुणेही है॥

कायके अनुवादकरि स्थावरकायविषैं गुणस्थानभेद नांही, तातैं अल्पबहुत्वका अभाव है। कायप्रति कहिये है, तहां सर्वतैं थोरा तेजस्कायिक हैं, तिनितैं बहुत पृथिवीकायिक हैं, तिनितैं बहुत अप्कायिक हैं, तिनितैं बहुत वातकायिक हैं, सर्वतैं अनंतगुणां वनस्पतिकायिकै हैं। त्रसकायिकनिकै पंचेंद्रियवत् है॥

योगके अनुवादकरि वचनमनयोगीनिकै पंचेंद्रियवत् काययोगीनिकै गुणस्थानवत् अल्पबहुत है ॥

वेदके अनुवादकरि स्त्रीपुरुषवेदीनिकै पंचेंद्रियवत्। नपुंसकवेदीनिकै अर वेदरहितानिकै गुणस्थानवत् अल्पबहुत्व है ॥

कषायके अनुवादकरि क्रोधमानमायाकषायवालेनिकै पुरुषवेदवत्। विशेष यहु जो मिथ्यादृष्टि अनंतगुणा है। लोभकषायवालेनिकै दोय उपशमश्रेणीवाला तुल्यसंख्या है। अर क्षपकश्रेणीवाला तिनितैं संख्यातगुणां है। सूक्ष्मसांपराय शुद्धसंयत उपशमश्रेणीवाला विशेषकरि अधिक है। तिनितैं सूक्ष्मसांपराय क्षपकश्रेणीवाला संख्यातगुणां है। अवशेषनिकै गुणस्थानवत् है ॥

ज्ञानके अनुवादकरि मतिअज्ञान श्रुतअज्ञानवालेनिविषैं सर्वतैं स्तोक सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं अनंतगुणां मिथ्यादृष्टि है। विभंगज्ञानीनिविषैं सर्वतैं थोरा सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं असंख्यातगुणां मिथ्यादृष्टि है। मतिश्रुतअवधिज्ञानीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है। मनःपर्ययज्ञानीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाला

है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। केवलज्ञानीनिविषैं अयोगकेवलीनितैं संख्यातगुणां सयोगकेवली है ॥

संयमके अनुवादकरि सामयिकच्छेदोपस्थापनशुद्धसंयतनिविषैं दोऊ उपशमश्रेणीवाला तुल्यसंख्या है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। परिहारविशुद्धिसंयतनिविषैं अप्रमत्तनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। सूक्ष्मसांपराय शुद्धसंयमीनिविषैं उपशमश्रेणीवालानितैं क्षपकश्रेणीवाला संख्यातगुणां है। यथाख्यातविहारशुद्धसंयतनिविषैं उपशांतकषायनितैं क्षीणकषायवाले संख्यातगुणां है। अयोगकेवली तितनेंही है। तिनितैं संख्यातगुणां सयोगकेवली है। संयतासंयतनिविषैं गुणस्थान एकही तातैं अल्पबहुत्व नांही। असंयतनिविषैं सर्वतैं स्तोक सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं संख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि है। तिनितैं असंयतसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणां है। तिनितैं अनंतगुणां मिथ्यादृष्टि है ॥

दर्शनके अनुवादकरि चक्षुर्दर्शनवालेनिकै मनोयोगीवत् है। अचक्षुर्दर्शनवालेनिकै काययोगीवत् है। अवधिदर्शनवालेनिकै अवधिज्ञानीवत् है। केवलदर्शनवालेनिकै केवलज्ञानीवत् है ॥

लेश्याके अनुवादकरि कृष्णनीलकापोतलेश्यावालेनिकै असंयतवत् है। पीतपद्मलेश्यावालेनिकै

सर्वतैं स्तोक अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। ऐसैं अन्यगुणस्थानवाले पंचेंद्रियवत् है। शुक्ललेश्यावालेनिकै सर्वतैं स्तोक उपशमश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां क्षपकश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां सयोगकेवली है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं असंख्यातगुणां सम्यग्मिथ्यादृष्टि है। तिनितैं असंख्यातगुणां मिथ्यादृष्टि है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है॥

भव्यके अनुवादकरि भव्यनिके गुणस्थानवत् अल्पबहुत्व है। अभव्यनिके अल्पबहुत्व नांही है॥

सम्यक्त्वके अनुवादकरि क्षायिकसम्यग्दृष्टीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाला है। अन्य प्रमत्तसंयतनिताईं गुणस्थानवत् है। तिनितैं संयतासंयत संख्यातगुणां है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है। क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टि है तिनिविषैं सर्वतैं स्तोक अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है। औपशमिकसम्यग्दृष्टीनिविषैं सर्वतैं स्तोक च्यारि उपशमश्रेणीवाला है। तिनितैं संख्यातगुणां अप्रमत्तसंयत है। तिनितैं संख्यातगुणां प्रमत्तसंयत है।

तिनितैं असंख्यातगुणां संयतासंयत है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है। अवशेषनिकै अल्पबहुत्व नांही है। जातैं विवक्षित एक एक गुणस्थानही है ॥

संज्ञीका अनुवादकरि संज्ञीनिकै चक्षुर्दर्शनवालेवत् है। असंज्ञीनिकै अल्पबहुत्व नांही है। दोऊ संज्ञारहितनिकै केवलज्ञानीवत् है ॥

आहारकके अनुवादकरि आहारकनिकै काययोगीवत् है। अनाहारकनिकै सर्वतैं स्तोक सयोगकेवली है। तिनितैं संख्यातगुणां अयोगकेवली है। तिनितैं असंख्यातगुणां सासादनसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं असंख्यातगुणां असंयतसम्यग्दृष्टि है। तिनितैं अनंतगुणां मिथ्यादृष्टि है। ऐसैं मिथ्यादृष्टि आदिनिकै गत्यादिकविषैं मार्गणाकरि सो सामान्यकरि है। तहां सूक्ष्मभेद आगमतैं अविरोधकरि अंगीकार करनां ॥

इहां सत् आदिका संक्षेप भावार्थ ऐसा जाननां— जो, सत् कहिये वस्तु है, ऐसा अस्तित्वका कहना। संख्या कहिये यह वस्तु केती है, ऐसैं भेदनिकी गणना कहनां। क्षेत्र कहिये यह वस्तु वर्तमानकालमैं एते क्षेत्रमैं है, ऐसा कहना। स्पर्शन कहिये यह वस्तु तीन कालमैं एते क्षेत्रमैं विचरै है, ऐसा कहनां। काल कहिये निश्चय व्यवहाररूप है, सो जिस वस्तु अपेक्षा जेता

कालका परिमाण कहनां। अंतर कहिये एकगुणतैं दूसरै गुण जाय फेरी तिसही गुण आवै ताकै वीचि जेते काल रहै सो विरहकाल है, ताकूं अंतर कहिये, ताका कहनां। भाव कहिये औपशमिक आदि पंच भाव हैं, तिनिका कहना। अल्पबहुत्व कहिये परस्पर दोयकी अपेक्षातैं संख्याका हीनाधिकपणां कहनां। ऐसैं इनि आठ अनुयोगनिकरि वस्तुका अधिगम होय है। तिसका उदाहरण जीवनामा वस्तुका गुणस्थान मार्गणापरि कह्या सो जाननां। ऐसैंही यथासंभव आगमके अनुसार सर्ववस्तुपरि लगावणां। केई नास्तिकवादी वस्तूकूं सर्वथा अभावरूपही कहै हैं, तिनिका निराकरण सत् कहनेतैं होय है। केई वस्तुकूं सर्वथा एक अभेद कहै हैं, तिनिका निषेध भेदनिकी गणनातैं जाननां। केई वस्तुके प्रदेश नांही मानै हैं तिनिका निषेध क्षेत्र कहनेतैं जाननां। केई वस्तुकूं सर्वथा क्रियारहित मानै हैं तिनिका निषेध स्पर्शन कहनेतैं जाननां। अथवा जो कोई वस्तुका सर्वथा कदाचित् प्रलय होना मानै हैं तथा क्षीणकही मानै तिनिका निषेध कालका नियम कहनेतैं होय है। केई वस्तुकूं क्षणिकही मानै हैं तिनिका निषेध अंतरके नियम कहनेतैं होय है। केई वस्तूकूं एकही मानै हैं तथा अनेकही मानै हैं तिनिका निषेध अल्पबहुका नियम कहनेतैं होय है । ऐसैं वस्तु अनंतधर्मात्मक है। ताके द्रव्य क्षेत्र काल भावकी अपेक्षा विधिनिषेधतैं

प्रमाण नय निक्षेप अनुयोगकी विधिकरि साधनेतैं यथार्थज्ञान होनेतैं अधिगमज सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होय है। सो याका विधिनिषेधकी चर्चा श्लोकवार्तिकमैं विशेषकरि है तहांतैं जाननां। ऐसैं आदिविषैं कह्या जो सम्यग्दर्शन ताका लक्षण उत्पत्ति निमित्त स्वामी विषय न्यास अधिगमका उपाय कह्या। याके संबंधकरि जीवादिककाभी सत् परिमाणादिक कहे॥

याके अनंतर सम्यग्ज्ञान विचारनेयोग्य है, सो कहै हैं—

॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥ ९ ॥

याका अर्थ— मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ए पांच ज्ञान है॥ ज्ञानशब्द न्यारान्याराकै लगाईये ऐसैं पांचूही ज्ञान भये। तहां मतिज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतैं इंद्रियमनकरि पदार्थनिकूं जानै सो, अथवा जाकरि जाणिये सो, अथवा जाननेमात्र सो, मतिज्ञान है। बहुरि श्रुतज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतैं वक्ताकरि कही वस्तूका नाम सुननेकरि जानै सो, अथवा जाकरि सुनि वस्तुकूं जानिये सो, अथवा जो श्रवणकरि जाननेंमात्र सो श्रुतज्ञान है। इन दोऊनिका समीप निर्देश कार्यकारणभावतैं कह्या। मतिज्ञान कारणरूप है श्रुतज्ञान कार्यरूप है। बहुरि अवधिज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतैं द्रव्य क्षेत्र काल भावकी मर्याद लीयें रूपी पदार्थकूं प्रत्यक्षपणैं

करि जो जानैं, अथवा जाकरि जानिये, अथवा जाननेमात्र सो अवधिज्ञान है। बहुरि मनःपर्ययज्ञानावरणीयकर्मके क्षयोपशमतें परके मनविषैं प्राप्त जो पदार्थ ताकूं जाणें, अथवा जाकरि जानिये, तथा जो जानना सो मनःपर्ययज्ञान कहिये। इहां परके मनविषैं प्राप्त जो पदार्थकूं मन ऐसा संज्ञा साहचर्यतें कही है। इहां कोई कहै याकै मतिज्ञानका प्रसंग आवै है? ताकूं कहिये इहां मनकी अपेक्षामात्रही है, कार्यकारणभाव नांही है। अपनें प्रतिपक्षी कर्मके क्षयोपशममात्रतैंही भया है। ताकूं अपने परके मनकी अपेक्षामात्रतें मनःपर्यय ऐसी संज्ञाकरि कह्या है। जैसें काहूनें कही या बादलेविषैं चंद्रमाकूं देखो, तहां बादलेकी अपेक्षामात्र है। चंद्रमा बादलेतैं भया तौ नांही। तैसें इहांभी जाननां। बहुरि जा ज्ञानके अर्थि तपस्वी मुनि 'केवंते' कहिये सेवन करै ताकूं केवलज्ञान कहिये। इहां 'केवृ सेवने' ऐसी धातुतें केवलशब्द निपज्या है। अथवा यहु ज्ञान असहाय है बाह्य कछु सहाय न चाहै है। जैसें मतिश्रुतज्ञान इंद्रिय प्रकाशादिकका सहायतें जानैं है, तैसें इहां नांही, केवल एक आत्माहीतें प्रवर्तै है। तातें केवल कहिये। अब इनिका सूत्रविषैं प्रयोगके क्रमका प्रयोजन कहै हैं ॥

केवलज्ञान अंतविषैं पाईये है, तातें अंतहीमें धर्‍या है। ताके निकट मनःपर्ययज्ञान हो

है, तातैं ताके समीप धऱ्या है। तातैं ये दोऊ ज्ञान संयमी मुनिनिहीकै होय है। बहुरि तातैं दूरवर्ति अवधि है तातैं मनःपर्ययकै समीप याकौं कह्या। बहुरि प्रत्यक्ष तीनूं ज्ञाननिकै पहले परोक्ष मति श्रुत ज्ञान कहे। जातैं ए दोऊ सुगम हैं। सर्वप्राणिनिकै बाहुल्यपणैं पाइये है। इनकी पद्धती सुणिये है परिचय कीजिये है। अनुभवमैं आवै है। ऐसैं ए पांच प्रकार ज्ञान है। इनके भेद आगै कहसी। इहां मतिमात्रके ग्रहणतैं स्मरणादिकभी मतिज्ञानहीमैं लेने। केई वादी कहै हैं इंद्रियबुद्धिही एक मतिज्ञान है ताका निराकरण है। तथा केई अनुमानसहित मति मानै हैं। केई अनुमान तथा उपमानसहित मानै हैं। केई अनुमान उपमान अर्थापत्तिसहित तथा अभाव आगमसहित मानै हैं। तिनि सर्वनिका निराकरण है। ए सर्वही मतिज्ञानमैं गर्भित जानने। कोई कहै मति श्रुत ज्ञान तौ एकही है। जातैं दोऊ लार है एकही आत्माविषैं वसै हैं। विशेषभी इनिमैं नांही। ताकूं कहिये इन तीनूंही हेतुतैं इनिकै सर्वथा एकता नांही है। कोई प्रकार कहै तौ विरोध नांही। जातैं लार रहै है इत्यादि कहना दोय विना बनैं नांही। बहुरि विषयके भेदतैंभी भेदही है। श्रुतज्ञानका विषय सर्वतत्त्वार्थकूं परोक्ष जानना है। मतिज्ञानका एता नांही। ऐसैं इनिका भेदाभेदकी चरचा श्लोकवार्तिकतैं जाननी। इहां कोई पूछै— सम्यग्दर्शनका तौ

लक्षणका सूत्र न्यारा कह्या बहुरि ज्ञानका न कह्या सो कारण कहा? ताका उत्तर जो, जहां शब्दकी निरुक्तिमें व्यभिचार आवै तहां न्यारा लक्षण कह्या चाहिये। यातें दर्शन नाम देखनेका प्रधान है। तातें श्रद्धानार्थके निमित्त लक्षण न्यारा कह्या। बहुरि ज्ञानविषैं निरुक्तिहीतें अर्थ अव्यभिचारी है, तातें लक्षण न्यारा न कह्या ऐसा आशय है ॥

आगें कहे हैं, जो पूर्वें कह्या था, जो, प्रमाणनयकरि अधिगम होय है। तहां केई तौ ज्ञानकूं प्रमाण मानै हैं। केई सन्निकर्षकूं प्रमाण मानै हैं। केई इंद्रियकूं प्रमाण कहे हैं। यातें अधिकारमें लीये जे मत्यादि ज्ञान तिनिकै प्रमाणपणाके प्रगट करनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥

याका अर्थ— तत् कहिये पूर्वें कहे जे पांच ज्ञान ते दोय प्रमाण है। इहां तत् शब्द है सो अन्यवादी सन्निकर्ष तथा इंद्रियकूं प्रमाण कल्पै हैं ताके निषेधके अर्थ है। तत् कहिये सो मत्यादिक ज्ञान कहे सोई प्रमाण है। अन्य नांही है। इहां अन्यवादी पूछे जो, सन्निकर्ष तथा इंद्रियकूं प्रमाण मानिये तौ दोष कहां? ताकूं कहिये हैं, जो, सन्निकर्षकूं प्रमाण मानिये तो सूक्ष्म अंतरित विप्रकृष्ट जो परमाणू रामरावणादिक, मेरुपर्वतादिक पदार्थ हैं तिनिका प्रमाणविषैं

अग्रहणका प्रसंग आवै। ते पदार्थ इंद्रियनितैं सन्निकर्ष होय नाही। याहीतैं सर्वज्ञका अभाव आवै। ऐसैंही इंद्रियकूं प्रमाण मानिये तौ येही दोष आवै। जातैं नेत्रादिकका अल्पविषय है। तथा ज्ञेय अनंत है। तथा सर्वही इंद्रियनिके सन्निकर्षभी नांही है। नेत्र अर मनकै प्राप्यकारी कहिये पदार्थनिका प्राप्त होनेका अभाव है अप्राप्यकारी है ताका वर्णन आगै करसी ॥

इहां अन्यवादी कहै हैं, जो तुमनैं ज्ञानकूं प्रमाण कह्या, तौ याका फलका अभाव आवैगा। बहुरि प्रमाणका फल चाहियेही। बहुरि हम कहै हैं तहां फलका सद्भाव नीकै बणै है। जो सन्निकर्ष तथा इंद्रिय तौ प्रमाण है अरु यातैं अर्थका ज्ञान हो है सो प्रमाणतैं जुदा फल हो है, यह कहना युक्त है। ताकूं कहिये, जो तैं कह्या सो अयुक्त है। जातैं जो सन्निकर्षप्रमाण होय अर्थका ज्ञान फल होय तौ प्रमाता अर प्रमेय जो अर्थ ते दोऊ भिडिजाय, तब सन्निकर्ष होय है। सो याका फल जो अर्थका ज्ञान, सो प्रमाताकै अरु प्रमेय पदार्थकै दोऊनिकै हुवा चाहिये। ऐसैं होतैं अन्यपदार्थकैभी अर्थका ज्ञानकी प्राप्ति आवै है। बहुरि वे कहैं, जो, अर्थका ज्ञान तौ चेतन जो आत्मा ताकै होय है। अन्य जडकै कैसैं होय? तौ वाकूं कहिये, आत्माकूं ज्ञानस्वभाव तौ तू मानै नांही। अरु समवाय तैं चेतन मानै है, सो ऐसैं तौ आत्माभी चेतनाविना जडही

ठहरैगा। बहुरि ज्ञानस्वभावही मानैगा तौ तेरी प्रतिज्ञाकी हानि आवैगी। तातैं हम कहे हैं सो युक्त है। ज्ञानकूं प्रमाण कहतैं फलका अभाव है। यह दोष नाही आवै है। कथंचिद्भेदाभेदरूप याका फलभी है। प्रथम तौ अर्थका यथार्थज्ञान होय तब तिस अर्थकेविषैं प्रीति उपजै है। कर्मकरि मैला जो यह आत्मा ताके इंद्रियनिके आलंबनतैं अर्थका ज्ञान होय। ताविषैं उपादेय जानि प्रीति उपजै है। सो यह प्रीति वा प्रमाणका फल है। बहुरि यथार्थज्ञान होय तब रागद्वेषके अभावतैं मध्यस्थभाव होय सो दूसरा यह फल है। बहुरि पहलैं अर्थका अज्ञान था ताका नाश भया सो तीसरा यह फल है। ऐसैं हमारे प्रमाण फलरहित नांही है ॥

अब या प्रमाणशब्दका अर्थ कहे हैं। 'प्रमीयते अनेन' कहिये याकरि वस्तु प्रमाण करिये ऐसैं तौ करणसाधन भया। बहुरि 'प्रमिणोति' कहिये जो वस्तुकूं प्रमाण करनेवाला, सो प्रमाण है, ऐसैं कर्तृसाधन भया। बहुरि 'प्रमितिमात्रं' कहिये वस्तुका प्रमाण करना सो भावसाधन भया। याकौं क्रियासाधनभी कहिये। इहां कोई पूछै, इस प्रमाणकरि कहा प्रमाण करिये! ताकूं कहिये, जीवादिक पदार्थ प्रमाण करिये। फेरि पूछै, जो, जीवादिकका अधिगम तौ प्रमाणकरि करिये। बहुरि प्रमाणका अधिगम काहेकरि करिये? जो अन्य प्रमाण कलिपये तौ

अनवस्था दूषण आवे है। तहां कहिये, अनवस्था न आवैगी। जैसैं घटादिक प्रकाशनेविषैं दीपक कारण है; तैसैं अपने स्वरूपके प्रकाशनेविषैंभी वेही दीपक कारण है। अन्य प्रकाश नांही हेरिये है; तैसैं प्रमाणभी स्वपरप्रकाशक अवश्य माननां। प्रमेयकीज्यों प्रमाणकै अन्यप्रमाणकी कल्पना कीजे तो स्वरूपका जाननेका प्रमाणकै अभाव होय, तब स्मरणकाभी अभाव होय। बहुरि स्मरणका अभाव मानिये तौ व्यवहारका लोप होय। तातैं स्वपरप्रकाशक प्रमाण मानना योग्य है। बहुरि इहां प्रमाणे ऐसा प्रथमाविभक्तीका द्विवचन कह्या है। सो एक तीन आदि प्रमाणकी संख्या अन्यवादी मानै है ताके निषेधकै अर्थि है। तथा आगे दोय संख्याका सूत्रभी कहसी ताके जनावने अर्थि है। अन्यवादी चार्वाक तौ एक प्रत्यक्ष प्रमाणही मानै है। बहुरि बौद्ध प्रत्यक्ष अनुमान ये दोय प्रमाण मानै है। बहुरि नैयायिक वैशेषिक सांख्य हैं ते प्रत्यक्ष अनुमान आगम उपमान ऐसैं च्यारि प्रमाण मानै है। बहुरि मीमांसक च्यारि तौ ए अरु अर्थापत्ति अभाव ऐसै छह प्रमाण मानै है। सो प्रत्यक्ष परोक्ष ए दोय संख्या कहनेतैं सर्वप्रमाण इनिमैं गर्भित होय हैं॥

ऐसैं ए पंचज्ञान प्रमाण कहे। तहां सम्यक् अधिकारतैं सम्यग्ज्ञान है। मिथ्याज्ञान प्रमाण नांही। इहां प्रश्न– जो, ऐसा कह्या है "यथा यत्राविसंवादस्तथा तत्र प्रमाणता॥" याका अर्थ;

जहां जिसप्रकार विसंवाद न आवै तहां तैसैं प्रमाणता। सो काहूकै विपर्ययज्ञान है तहां ताकै बाधा विसंवाद न आवै तेतें प्रमाण ठहऱ्या। तथा काहूकै कालांतरमैं बाधा आवै। काहूकै क्षेत्रांतरमैं बाधा आवै। तथा केईकै कबहू बाधा न आवै। अर विशेषज्ञानीकै ज्ञानमैं बाधा दीखै है। तहां जेतें बाधा न आवै तेतें प्रमाण ठहरै है। सो सम्यग्ज्ञान तौ ऐसा चाहिये जो संशय विपर्यय अनध्यवसायरहित सर्वकाल सर्वक्षेत्र सर्वप्राणीनिकै समान होय। कोई प्रकार बाधा न आवै। जो जहां जैसें अविसंवाद होय तहां तैसैं प्रमाणता है यह वचन कैसैं सिद्ध होयगा? ताका उत्तर— जो, सर्वथानिर्बाध तौ केवलज्ञान है। मतिश्रुत है सो तौ अपने विषयविषैंभी एकदेशप्रमाण है। बहुरि अवधि मनःपर्यय है सो अपने विषयविषैं सामस्त्यकरि प्रमाण है। अधिकविषयविषैं प्रमाण नाही। तातैं च्यान्योंही क्षयोपशमज्ञान प्रमाणभी है अप्रमाणभी है। तातैं जिस विषयविषैं निर्बाध साधे तहां तौ प्रमाण है। बहुरि जहां बाधा आवै तहां अप्रमाण है। जो ऐसैं न होय तौ केवलज्ञानही प्रमाण ठहरै। अन्यज्ञान अप्रमाण ठहरै। तौ व्यवहारका लोप होय। तातैं एकही ज्ञान प्रमाणभी है अप्रमाणभी है। जैसें काहू पुरुषकै नेत्रविषैं विकार था, ताकूं एक चंद्रमाके दोय दीखै, तहां निर्विकारनेत्रवालाकी अपेक्षा दोय चंद्रमाकी संख्या तौ सबाध भई। बहुरि

चन्द्रमाका सामान्यपणां निर्बाध है। तथा निर्विकार नेत्रवालेकूं चंद्रमा तौ एकही दिखै, परंतु निकटही दीखै है। ऊगता जमीसूं लगता दीखै। सो याकी ऊचाईका योजनांकी अपेक्षा सबाध है। तथा शास्त्रकरि ग्रहणका काल तौ निश्चय कीया सो तौ निर्बाध है। परंतु दोय अंगुल च्यारि अंगुल ग्रहण होगा, यह कहनां निर्बाध नांही। जातैं यह विमान केता चौडा है? तामैं केता आच्छादित हुवा? यह तौ प्रत्यक्षज्ञानी जानैं, याकी अपेक्षा सबाध है। ऐसैं मतिश्रुत अपने विषयविषैंभी प्रमाणाप्रमाणस्वरूप है। तथा अन्यभी उदाहरण– जैसैं पर्वत तथा वृक्षोंका समूहरूप वन इत्यादि वस्तु दूरितैं तौ औरसाही दीखै निकट गये औरसाही दीखै ऐसैं जाननां। इहां कोई पूछै, जो ऐसैं है तौ यहु याका ज्ञान प्रमाण है यहु याका ज्ञान अप्रमाण है ऐसा नियम कैसैं कहिये? बहुरि नियम कीयाविना व्यवहार कैसैं प्रवर्तैगा! ताका उत्तर– जो, व्यवहार मुख्यगौणकी अपेक्षातैं प्रवर्तै है। जैसैं काहू वस्तूमैं सुगंध बहुत देखि लोक कहै यह सुगंध द्रव्य है, तहां वा द्रव्यविषैं स्पर्शादिकभी पाईये हैं। परंतु वाकी मुख्यता न करै। तातैं जिनके मतविषैं एकांततैं ज्ञान प्रमाण अप्रमाण दोऊ स्वरूप नांही है तिनिकै यह छद्मस्थका ज्ञानके प्रमाणता न आवैगी। तब अपना मतभी न सिद्ध होगा ॥

वहुरि अन्यवादी ज्ञानकोंही प्रमाण मानि याका स्वरूप लक्षण एकांततैं अन्यप्रकार कहे हैं। सोभी सवाध है। तहां वौद्धमती कहै हैं, जो 'अविसंवादि ज्ञानं प्रमाणं, कहिये जामैं विसंवाद न होय सो ज्ञान प्रमाण है। ताकूं पूछिये; जो कहैगा प्रमाताकी इच्छा जहां पूरि होय जाय तहां अविसंवाद है, तौ स्वप्नादिकका ज्ञानभी प्रमाण ठहरैगा, तहांभी वांछापूरण होय जाय है। वहुरि कहैगा, जो, जहां वस्तूकै अर्थक्रिया ठहरै, तहां अविसंवाद है, तौ गीतादि शब्दका ज्ञान तथा चित्रामादिकका ज्ञानकै प्रमाणता ठहरैगी। तहां स्वरूपमात्रका ज्ञान है, अर्थक्रिया नांही है। ऐसैं वौद्धकरि मान्या अविसंवाद लक्षण वाधासहित है॥ वहुरि औरभी मतके एकांततैं प्रमाणके लक्षण तथा विशेषण जुदे जुदे करे हैं ते युक्तिशास्त्रतैं वाधासहित हैं। ते श्लोकवार्तिकादिकतैं जानने। जैनमतमैं तौ "स्वापूर्वार्थव्यवसायात्मकं ज्ञानं प्रमाणम्" ऐसा लक्षण परीक्षामुखविषै कह्या है। और शास्त्रमैं पाठांतर कह्या है। सोही निर्बाध है। वहुरि प्रमाणका प्रमाणपणां कैसैं होय? तहां सर्वथा एकांतवादी केई तौ तिस प्रमाणहीतैं प्रमाणपणांका निश्चय होय है ऐसैं कहै हैं। केई अन्यतैं प्रमाणता होहै ऐसैं कहै हैं। सो यहु वाधासहित है। स्याद्वादकरि अभ्यासदशामैं तौ प्रमाणका निश्चय प्रमाणहीतैं होय है। वहुरि विना अभ्यासदशामैं परतैं निश्चय होय है ऐसा

र्थंथ सिद्ध कीया है। कोई कहै है "प्रमाणपणा प्रवृत्तिसामर्थ्यतैं निश्चय होय है" सो प्रमाण-
रि प्रतीतिमें आया जो पदार्थ ताकै निकटि होते वाके फलकी प्राप्ति होय तब जानिये कि यह
माण है। यहू प्रवृत्तिसामर्थ्यतैं प्रमाणता आई, परंतु इहां अनवस्था दूषण होय है। जातैं
[illegible] समानजातीय ज्ञानकी प्रमाणता अन्यप्रवृत्तिसामर्थ्यतैं होयगी तब अनवस्था
[illegible] तो जे परीक्षावान् हैं तिनिकै तो प्रमाणका निश्चय होय तब
[illegible] बिना निश्चयभी प्रवृत्ति हो है। बहुरि परीक्षावान्भी कोई पदार्थ-
[illegible] सर्वपदार्थनिकी परीक्षा तो सर्वज्ञकै है। अन्य तो कोई प्रकार
[illegible] है। सो परीक्षक है सोहू अपरीक्षक है, ऐसैं जाननां ॥
[illegible] प्रमाणनिकी संख्याका निराकरण कैसैं है? ताकूं
[illegible] माने है ताकै परकै चित्तकी वृत्तिकी सिद्धि
[illegible] अनुमान मानैगा तब एकही प्रमाण माननां कैसे
[illegible] ए दोय प्रमाण मानै है। ताकै साध्यसाधनके
[illegible] नि प्रमाण चाहियेगा। तब दोयकी संख्या

न रहैगी। व्याप्तिका ज्ञान प्रत्यक्ष अनुमानतैं नाहीं होयगा। स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ए प्रत्यक्ष अनुमानमैं गर्भित न होयगा। बहुरि श्रुत कहिये आगमप्रमाण है। सो आप्तके शब्दके श्रवणतैं होय है। सो यहभी प्रत्यक्ष अनुमानमैं गर्भित न होयगा तब तीन प्रमाण होयगा। बहुरि शब्द तथा उपमानसहित च्यारि प्रमाण मानै है तथा अर्थापत्तिसहित पांच तथा अभावसहित छह मानै है। तिनकै स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ये तिनिमैं गर्भित न होयगे तब संख्या वधि जायगी। तातैं तिनिकी संख्याका नियम नही ठहरे है। तातैं प्रत्यक्ष परोक्ष ए दोय संख्यामैं सर्व भेद गर्भित होय हैं। तातैं यह नियम निर्बाध है ॥

आगै, कहे जे पंचप्रकार ज्ञान ते दोय प्रमाणविषैं गर्भित कीये तथा दोयकी संख्या अन्यप्रकारभी आवै है। तातैं ताकी निवृत्तीकै अर्थि सूत्र कहै हैं ॥

॥ आद्ये परोक्षम् ॥ ११ ॥

याका अर्थ— पांच ज्ञाननिविषैं आद्यके दोय मतिश्रुतज्ञान परोक्ष प्रमाण है। आदि शब्द है सो प्रथमका वचन है। जातैं आदिविषैं होय ताकौं आद्य कहिये। इहां कोई पूछे 'आद्ये' ऐसा द्विवचन है तहां मति श्रुत दोय आये। तहां आदि तौ एक मति है। दूसरा

निर्बाध सिद्ध कीया है। कोई कहै है "प्रमाणपणा प्रवृत्तिसामर्थ्यतैं निश्चय होय है" सो प्रमाणकरि प्रतीतिमें आया जो पदार्थ ताके निकटि होते वाके फलकी प्राप्ति होय तब जानिये कि यह प्रमाण है। यहु प्रवृत्तिसामर्थ्यतैं प्रमाणता आई, परंतु इहां अनवस्था दूषण होय है। जातैं प्रवृत्तिसामर्थ्यका समानजातीय ज्ञानकी प्रमाणता अन्यप्रवृत्तिसामर्थ्यतैं होयगी तब अनवस्था आवैहीगी। बहुरि प्रवृत्ति है सो तौ जे परीक्षावान् हैं तिनिकै तौ प्रमाणका निश्चय होय तब होय है। बहुरि लौकिकजनकै विना निश्चयभी प्रवृत्ति हो है। बहुरि परीक्षावान्भी कोई पदार्थनिविषैं अपरीक्षावान् है। जातैं सर्वपदार्थनिकी परीक्षा तौ सर्वज्ञकै है। अन्य तौ कोई प्रकार परीक्षक है कोई प्रकार अपरीक्षक है। सो परीक्षक है सोहू अपरीक्षक है, ऐसैं जानना॥

बहुरि इहां कोई पूछै, अन्यवादीनिके प्रमाणनिकी संख्याका निराकरण कैसैं है? ताकूं कहिये है, जे अन्यवादी चार्वाक एक प्रत्यक्षप्रमाणही मानै है ताकै परके चित्तकी वृत्तिकी सिद्धि अनुमानविना होयगी नांही। ताकै अर्थि अनुमान मानैगा तब एकही प्रमाण मानना कैसै सिद्ध होयगा? बहुरि बौद्धमती प्रत्यक्ष अनुमान ए दोय प्रमाण मानै है। ताकै साध्यसाधनके व्याप्तिसिद्धि करनेकूं स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ए तीन प्रमाण चाहियेगा। तब दोयकी संख्या

न रहैगी। व्याप्तिका ज्ञान प्रत्यक्ष अनुमानतैं नाहीं होयगा। स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ए प्रत्यक्ष अनुमानमैं गर्भित न होयगा। बहुरि श्रुत कहिये आगमप्रमाण है। सो आप्तके शब्दके श्रवणतैं होय है। सो यहभी प्रत्यक्ष अनुमानमैं गर्भित न होयगा तब तीन प्रमाण होयगा। बहुरि शब्द तथा उपमानसहित च्यारि प्रमाण मानै है तथा अर्थापत्तिसहित पांच तथा अभावसहित छह मानै है। तिनके स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क ये तिनिमैं गर्भित न होयगे तब संख्या वधि जायगी। तातैं तिनिकी संख्याका नियम नही ठहरे है। तातैं प्रत्यक्ष परोक्ष ए दोय संख्यामैं सर्व भेद गर्भित होय हैं। तातैं यह नियम निर्बाध है॥

आगै, कहे जे पंचप्रकार ज्ञान ते दोय प्रमाणविषैं गर्भित कीये तथा दोयकी संख्या अन्यप्रकारभी आवै है। तातैं ताकी निवृत्तीकै अर्थि सूत्र कहै हैं॥

॥ आद्ये परोक्षम् ॥ ११ ॥

याका अर्थ— पांच ज्ञाननिविषैं आद्यके दोय मतिश्रुतज्ञान परोक्ष प्रमाण है। आदि शब्द है सो प्रथमका वचन है। जातैं आदिविषैं होय ताकों आद्य कहिये। इहां कोई पूछै 'आद्ये' ऐसा द्विवचन है तहां मति श्रुत दोय आये। तहां आदि तौ एक मति है। दूसरा

श्रुतके आदिपणां कैसे आवे? ताका उत्तर— जो मुख्य उपचारकी कल्पनातैं दोऊकै आद्यपनां कह्या है । तहां मतिज्ञान तौ मुख्य आदि हैही। बहुरि श्रुत है सो याके समीपही है तातैं उपचारतैं प्रथम कह्या । सूत्रविषैं द्विवचन है ताकी सामर्थ्यतैं गौणकाभी ग्रहण हुवा । याका समास ऐसैं हो है । ‘आद्यं च आद्यं च आद्ये मतिश्रुते’ ऐसैं जाननां । ये दोऊही परोक्षप्रमाण है ऐसा संबंध करनां । इहां कोई पूछे इनिकै परोक्षपणां काहेतैं है? ताका उत्तर— ए दोऊही ज्ञान परकी अपेक्षा लीये है। मतिज्ञान तौ इंद्रियमनतैं होय है । श्रुतज्ञान मनतैं होय है। सो यह सूत्र आगैं कहसी। यातैं पर जे इंद्रिय मन तथा प्रकाश उपदेशादि जे बाह्यनिमिति तिनकी अपेक्षा सहाय लेकरि मतिश्रुतज्ञानावरणीयका क्षयोपशमसहित आत्माकै उपजै है । तातैं परोक्ष कहिये। याहीतैं उपमानादिक प्रमाणभी ऐसैंही उपजै हैं तेभी याहीमैं गर्भित होय हैं । अथवा परोक्ष शब्दका ऐसाभी अर्थ है; जो अक्ष कहिये इंद्रिय तिनतैं दूरवर्ती होय ताकूं परोक्ष कहिये सो श्रुतज्ञान। तथा स्मरण प्रत्यभिज्ञान तर्क स्वार्थानुमान एभी इंद्रियनितैं दूरवर्ती हैं। ऐसें ए मतिज्ञानमैं गर्भित हैं। तातैं एभी परोक्षही हैं। बहुरि अवग्रह ईहा अवाय धारणाज्ञान जे मतिज्ञानके भेद हैं ते इंद्रियनितैं भिडिकर होय हैं। तौभी अक्ष कहिये आत्मा तातैं दूरवर्ती हैं। तातैं

इनिकूं व्यवहारकरि तौ प्रत्यक्ष कहे हैं। परंतु परमार्थतें परोक्षही है ॥ बहुरि केई कहे है, परोक्षज्ञान तो अस्पष्ट जाननां है। सो पदार्थके आलंबनरहित है। तातें मनोराज्यादिककीज्यों निरर्थक है। ते विना समझ्यां कहे है। जातें अर्थका आलंबन तौ प्रत्यक्ष परोक्ष दोऊनिविषैंही है। परंतु स्पष्टता अस्पष्टताका कारण नाहीं। प्रत्यक्ष परोक्ष भेद ऐसैं है जहां अन्यका अंतर पडे नांही। तथा अन्यका सहायविना विशेषनिसहित पदार्थनिकूं जानैं सो तौ स्पष्ट है। बहुरि वीचिमें अन्यका अंतर पडै तथा सहाय चाहै। तथा विशेषनिसहित पदार्थनिकूं न जानै सो अस्पष्ट कहिये। मनोराज्यादिकवत् तो जाकूं कहिये जाका कछु साक्षात् तथा परंपराय विषयही न होय ऐसैं जाननां ॥

आगै इनि परोक्षनितें अन्य जे तीन ज्ञान तिनकूं प्रत्यक्ष कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥

याका अर्थ— अन्यत् कहिये पांच ज्ञानमें तीन ते प्रत्यक्षप्रमाण है ॥ 'अक्ष्णोति' कहिये जानै सो अक्ष कहिये आत्मा ताहीकूं आश्रयकरि उपजै अन्यका सहाय न चाहै ताकूं प्रत्यक्ष कहिये। कैसा है आत्मा? पाया है कर्मका क्षयोपशम जानैं। अथवा क्षीण हुवा है कर्मका आवरण जाका ऐसा आत्माकै होय है सो ऐसा अवधि मनःपर्यय केवलज्ञान है। कोई कहै ऐसै तौ अवधिदर्शन

केवलदर्शनभी है। आत्माहीका आश्रय ले उपजै है तेभी प्रमाण ठहरे। ताकूं कहिये, यहू दोष न आवे है। इहां सूत्रमें ज्ञानहीका अधिकार है। तातैं ज्ञानही लेना, दर्शन न लेना। बहुरि कोई कहै, जो, विभंग तौ ज्ञान है ताका प्रसंग आवैगा यहुभी आत्माहीकूं आश्रय ले उपजै है। ताकूं कहिये, इहां सम्यक्‌का अधिकार है, तातैं विभंगज्ञान न लेनां। यहु विपर्ययस्वरूप है। जातैं मिथ्यात्वके उदयतैं विपरीतपदार्थकौं ग्रहै है। तातैं यहु सम्यक् नाहीं॥

इहां वैशेषिकका आश्रयतैं प्रश्न है; जो, इंद्रियव्यापारतैं होय सो प्रत्यक्ष कहिये। विना इंद्रियव्यापार होय सो परोक्ष कहिये। ये लक्षण यथार्थ बाधारहित है सो माननां। ताका उत्तर जो, यहु अयुक्त है। ऐसैं होय तौ आप्त सर्वज्ञकै प्रत्यक्षज्ञानका अभाव होय। जो इंद्रियज्ञानही प्रत्यक्ष मानिये तौ आप्तकै प्रत्यक्षज्ञान न होय। जो आप्तकैभी इंद्रियपूर्वक ज्ञान कल्पिये तौ ताकै सर्वज्ञपणांका अभाव होय। जो कहै, सर्वज्ञकै मनसूं भया प्रत्यक्ष है तौ मनके चिंतवनपूर्वककैभी सर्वज्ञपणाका तौ अभावही आवैगा। बहुरि कहै, जो ताकै सर्वपदार्थनिके ज्ञानकी आगमतैं सिद्धि हो है। सो ऐसैंभी नाहीं। जातैं आगम तौ प्रत्यक्षज्ञानपूर्वक होय सो प्रमाण है॥

बहुरि बौद्धमती कहै है योगीश्वरनिकै अलौकिक दिव्यज्ञान औरही जातिका है। तौ ऐसैं

कहै प्रत्यक्षपणा तौ ताकै न आवैगा। जातैं ऐसा मानै है, जो इंद्रियप्रति वर्तै ताकूं प्रत्यक्ष कहिये। सो ऐसा मान्यां तब दिव्यज्ञान कहनैतैंभी प्रत्यक्षपना तौ न ठहरै। बहुरि औरभी दोष आवै है। जो सर्वज्ञका तौ अभाव होय है। अरु प्रतिज्ञाकी हानी होय है। सोई दिखाईये है। योगीश्वरकै जो ज्ञान है सो एक एक पदार्थकूं क्रमतैं ग्रहण करै है कि अनेकपदार्थका ग्रहण करनेवाला है? जो एक एक पदार्थकों क्रमतैं ग्रहण करै है; तौ सर्वज्ञपणां नांही ठहरै है। जातैं ज्ञेय तौ अनंत है, सर्वकूं एककाल जानै सर्वज्ञ होय। बहुरि जो अनेक पदार्थकूं ग्रहण करै है; तौ जो बौद्धमती प्रतिज्ञा करी है ताकी हानि आवै है। सो प्रतिज्ञा कहा? 'एक विज्ञान तौ दोय पदार्थकूं न जानै है बहुरि दोय विज्ञान एक पदार्थकूं न जानै है' ऐसी प्रतिज्ञा है, ताकी हानि होय है। अथवा सर्वसंस्कार हैं ते क्षणिक हैं ऐसी प्रतिज्ञा करै है, ताकीभी हानि होय है। जातैं अनेकक्षणवर्ती एक विज्ञान मान्या। अनेक पदार्थका ग्रहण क्रमकरि होय है। बहुरि वै कहै; जो, अनेक पदार्थका ग्रहण एकक्षणवर्तिविज्ञानकै तिस एक कालहीमैं होय है, तौ यह बनै नांही। जातैं जा क्षणमैं ज्ञान उपज्या सो तौ क्षण वा ज्ञानका स्वरूपका लाभहीं होय। जब आप भया ता पीछे अपना जो कार्य पदार्थका जाननां ताप्रति व्यापार करै। उपजनेहीकै क्षण तौ जानै नांही। बहुरि वै

कहे; जो, दीपकवत् जिस समय भया तिस समय पदार्थ प्रकाशे, तौ यहु दृष्टांत मिलै नांही। जातें दीपक तो अनेकक्षणवर्ती हे। ताकै पदार्थनिका प्रकाशन होय हे। वहुरि तिस योगीश्वरके ज्ञानकूं विकल्पतें भेदनितें रहित मानिये तव शून्यताका प्रसंग आवै है। जातैं सर्वपदार्थनिकूं भिन्न जानेविना तौ वह ज्ञान शून्यही है ॥

वहुरि अकलंकदेव आचार्य प्रत्यक्षके तीन विशेषण कीये हैं। स्पष्ट, साकार, अंजसा ऐसैं। तिनिका अर्थ— स्पष्ट तौ जो वीचिमें अन्यकी प्रतीतिका व्यवधान न होय अर वस्तुकूं विशेषनिसहित जानै ऐसा है। सो द्रव्यार्थिकनयकी प्रधानता करिये तव तौ मतिश्रुतज्ञान अस्पष्टही है। जातें द्रव्यका समस्तपणाकूं ए जानै नांही। इंद्रिय मन प्रकाशादिकके सहायतैं किंचित् जानै है। वहुरि पर्यायार्थिक नयकी प्रधानता करिये तव मतिज्ञान व्यवहारके आश्रयतैं किंचित् स्पष्टभी जानै है॥ वहुरि साकार कहनेतें निराकारदर्शनका निषेध है। वहुरि अंजसा कहनेतें विभंगज्ञान तथा इंद्रियमनकरि अन्यथाज्ञान हो है ताका निषेध है। ऐसैं कहनेतैं सूत्रतैंभी विरोध नाही है। जातैं प्रत्यक्ष ऐसा कहनेतैं तौ आत्माधीन है, इंद्रियाधीन नांही है। वहुरि ज्ञानकी अनुवृत्तितैं दर्शनका निषेध है। वहुरि सम्यक्के अधिकारतें कुज्ञानका निषेध है, ऐसैं जाननां ॥

इहां कोई प्रश्न करै, सकलप्रत्यक्ष जो केवलज्ञान सो योगीश्वरनिकै है ऐसा काहेतैं जानिये? ताका उत्तर; जो, भलै प्रकार जाका निर्णय कीया जो बाधकप्रमाणका अभाव तातैं जानिये, जो, योगीश्वरनिकै केवलज्ञान है। जातैं समस्त आवरणके नाशतैं उपजै सो केवलज्ञान है। समस्तवस्तुकूं एककाल इंद्रियादिकै सहायविना सोही ज्ञान जानै, जाकै आवरण न होय। ताका बाधक अल्पज्ञान है नाही। जा ज्ञानका जोही साधक तथा बाधक होय। अन्यज्ञानका अन्यज्ञान बाधक होय नांही यह न्याय है। बहुरि बौद्धमती प्रत्यक्षका लक्षण निर्विकल्प सत्यार्थ कहै है। सो सर्वथा निर्विकल्पक होय सो तौ सत्यार्थ होय नांही। विपर्ययभी निर्विकल्पक है। निर्विकल्पकतैं अर्थका निश्चयही होता नांही। सत्यार्थ काहेतैं होय? बहुरि नैयायिकमती इंद्रियमनकै अर आत्माकै पदार्थतैं सन्निकर्ष होय ताकूं प्रत्यक्ष कहै हैं। सो यहभी अयुक्त है। जातैं ईश्वरकै ज्ञान इंद्रियमनतैं होय तौ सर्वज्ञपनां न होय। जातैं इंद्रियनिकै अर सर्वपदार्थनिकै संबंध नांही। तातैं जो सूत्र प्रत्यक्षका कह्या सोही निराबाध है॥

आगैं, कह्या जो परोक्ष प्रत्यक्ष दोय प्रकार प्रमाण तिनिमैं आदि प्रकारके विशेषकी प्राप्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ मतिः स्मृतिः सञ्ज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥

याका अर्थ— मति स्मृति संज्ञा चिंता अभिनिबोध ए पांच अनर्थांतर कहिये अन्य अर्थ नांही। मतिज्ञानहीके नाम हैं॥ आदिविषैं कह्या जो मतिज्ञान ताके येते पर्यायशब्द कहिये नामांतर हैं। जातें ए सर्वही मतिज्ञानावरण कर्मके क्षयोपशमकरि उपज्या जो उपयोग ताही संबंधी हैं। इनकी श्रुतज्ञानादिविषैं प्रवृत्ति नांही। तहां मननं कहिये मानना इंद्रियमनतैं अवग्रहादिरूप साक्षात् जानना सो तौ मति कहिये। स्मृति कहिये स्मरण। जानेका पीछे यादि करना सो स्मृति स्मरण कहिये। संज्ञा संज्ञान कहिये। जानेको यादिकरि वर्तमान जानेकै जोडिकरि जाननां सो संज्ञान कहिये। याकूं प्रत्यभिज्ञानभी कहिये। चिंतनं चिंता कहिये यहु चिन्ह है तहां इसका चिन्हीभी होय है इत्यादि ऐसा चिंतवन करनां सो चिंता कहिये। याकूं तर्कभी कहिये। अभिनिबोधनं कहिये सन्मुख लिंगादि देखि लिंगी आदिका निश्चय करै सो अभिनिबोध कहिये। याकूं स्वार्थानुमानभी कहिये। इनि शब्दनिका भावसाधनरूप अर्थ कीया है। बहुरि करणसाधन कर्तृसाधन आदिभी यथासंभव जाननां। इनिका नामभेदतैं अर्थभेद होतैभी रूढिके वलतैं मतिके नामांतरही जानने। जैसैं इंद्र शक्र पुरंदर ऐसैं नामभेदतै अर्थभेद होतैंभी समभिरूढनयकी

अपेक्षातैं एक इंद्रहीके नाम हैं। वहुरि इनिका अन्य अन्य अर्थ करिये तब मत्यादि अन्य अन्य होयही हैं। तथापि मतिज्ञानावरणक्षयोपशमकरि उपयोग ताहि न उलंघि वर्तै है। इहां ऐसा अर्थ है। वहुरि सूत्रमैं इति शब्द है सो प्रकारवाची है। या मतिज्ञानका येते पर्यायशब्द हैं ऐसा इतिका अर्थ जाननां। तथा अभिधेयार्थवाचीभी कहिये। जो मति स्मृति संज्ञा चिंता अभिनिबोध ऐसैं येते शब्दनिकरि जो अर्थ कहिये सो एक मतिज्ञान है॥

इहां विशेष कहिये है। सूत्रविषैं इति शब्द प्रकारवाची है। सो बुद्धि तौ मतिका प्रकार जाननां। जातैं पदार्थके ग्रहणके शक्तिस्वरूपकूं बुद्धि कहिये है। वहुरि मेधा स्मृतिका प्रकार है। जातैं शब्दके स्मरणकी शक्तिकूं मेधा कहिये है। वहुरि प्रज्ञा चिंताका प्रकार है। जातैं वितर्कणाका निषेध स्वरूप है। वहुरि प्रतिभा उपमा ये संज्ञाका प्रकार है। जातैं सामान्यपदार्थको सादृश्य दिखावनेरूप है। वहुरि संभव, अर्थापत्ति, अभाव ए स्वार्थानुमानके प्रकार हैं। जातैं ये सर्व लिंगहीतैं जानिये हैं। इहां कोई कहै स्मृति तौ अप्रमाण है सो प्रमाणविषैं कैसे अंतर्भूत होयगी? ताकूं कहिये; जो, स्मृति अप्रमाण होय तौ प्रत्यभिज्ञान न होय तब व्याप्तिकाभी ग्रहण न होय। तब अनुमान काहेतैं होय? अरु अनुमान न होय तब प्रत्यक्षकैभी प्रमाणता न ठहरै। तब सर्व-

शून्यता आवै। तातैं स्मृतिप्रमाण मानेही अन्यप्रमाण सिद्ध होय है। वहुरि स्मृतिकीज्यों अपने विषयविषैं प्रत्यभिज्ञानभी बाधारहित है। अतीतवस्तुका यादि करनां जो स्मरण सो याका कारण है। सो अतीतकूं यादिकरि वर्तमानमैं तिसही वस्तूकूं देखि बहुरि अतीतवर्तमानकी एकता जोडरूपकूं जाननां तथा अतीत सारिखी वस्तु देखि दोऊके समानताका जाननां सो प्रत्यभिज्ञान है सो सत्यार्थ है। जैसैं मैं बालक था सोही मैं अब युवा हूं बूढा हूं इत्यादि। तथा पहलैं घट देख्या था तैसाही यह दूसरा घट है इत्यादि। याके भेद बहुत हैं सो प्रमाणशास्त्रतैं जानने।

बहुरि साध्यसाधनके अविनाभावसंबंधरूप जो व्याप्ति, ताका जाननां सो तर्क है। सोभी प्रमाण है। सो यहु अप्रमाण होय तौ अनुमानभी प्रमाण न ठहरै। बहुरि अनुमानादिकमैं यहु गर्भित होय नाही। तातैं न्याराही प्रमाता जाननां। याका उदाहरण– जैसै धूम अग्निका संबंध देखिकरि ऐसा निश्चय कीया; जो, जहां जहां धूम है तहां तहां नियमकरि अग्नि है। ऐसै निश्चय करनेका नाम तर्क है। सो सत्यार्थ है, तातैं प्रमाण है। जो यहु ज्ञान अप्रमाण होय तौ अनुमान प्रमाण कैसै ठहरै? बहुरि साधन कहिये लिंग–चिन्ह, तातैं साध्य कहिये जाननेयोग्य वस्तु लिंगी, चिन्हवान्, ताका निश्चय करनां सो स्वार्थानुमान है। तहां साधन ताकूं कहिये; जाकी जद

साध्यवस्तु न होय, तहां प्राप्ति न होय। तथा जहां साधन होय तहां साध्य होयही होय ॥

बहुरि साध्यके तीन विशेषण हैं; शक्य, अभिप्रेत, अप्रसिद्ध। तहां जो साधनेकी योग्यता लीये होय सोही साध्य। जामैं योग्यता नांहीं सो साध्य नांही, जैसे आकाशके फूल। बहुरि जो साधनेवाला पुरुष अभिप्रायमैं ले, सोही साध्य, तिसविना जगत्मैं अनेक वस्तु हैं ते वाके साध्य नांही। बहुरि पहलै सिद्ध न हूवा होय, सो साध्य। सिद्ध भये फेरि साधना अफल है। ऐसै साध्यके सन्मुख जो पूर्वोक्त साधनकरि नियमरूप ज्ञान होय, तातैं याकूं अभिनिबोधभी कहिये। इहां कोई कहै; शास्त्रमैं मतिज्ञानसामान्यका नाम अभिनिबोध कह्या है; तुम स्वार्थानुमानकूं अभिनिबोध कैसैं कह्या? ताका उत्तर—जो, सामान्यार्थकी विशेषविषैं प्रवृत्ति होतैं विरोध नांही। जो अवग्रहादि अनेकभेदरूप मतिज्ञान कहिये तादि तौ सामान्यकूं अभिनिबोध कहिये। बहुरि जब विशेष लीजिये तब स्वार्थानुमानकूंभी कहिये। तहां साधनके संक्षेपतैं दोय भेद हैं; उपलब्धि अनुपलब्धि। तहां इंद्रिय मनकरि वस्तुका सद्भावका ग्रहण होय सो तौ उपलब्धि कहिये। बहुरि अभावका ग्रहणकूं अनुपलब्धि कहिये। तहां कार्योपलब्धि जैसैं; या पर्वतमैं अग्नि है, जातैं अग्निका कार्य धूम दीखै है। बहुरि कारणोपलब्धि जैसैं; वर्षा होसी, जातैं याका कारण बादल सघन दीखै

है। स्वभावोपलब्धि जैसें; वस्तु उत्पादव्ययध्रौव्यस्वरूप है, जातैं सत्त्वस्वरूप है। सत्त्वका स्वभाव ऐसाही है। ऐसें ये तीन भेद भये। इत्यादि साधनके अनेक भेद हैं, सो श्लोकवार्तिकतैं जानने ॥ बहुरि अन्यवादी अर्थापत्त्यादिक प्रमाण न्यारे मानै हैं ते सर्व इस मतिज्ञानमैं अंतर्भूत होय हैं, ऐसैं जाननां ॥

आगैं या मतिज्ञानका स्वरूपका लाभविषैं निमित्त कहां है? ऐसें प्रश्न होतें सूत्र कहे हैं—

॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥ १४ ॥

याका अर्थ— तत् कहिये सो मतिज्ञान इंद्रिय अर अनिंद्रिय है निमित्त कहिये कारण जाकूं ऐसा है ॥ प्रथम तौ इंद्रियशब्दका अर्थ कहै हैं। इन्दति कहिये परम ऐश्वर्यरूप वर्तै सो इंद्र है। तहां अर्थतें आत्माका नाम इंद्र कह्या, सो ऐसा ज्ञानस्वभाव जो आत्मा, ताकै ज्ञानावरणकर्मका ऐसा क्षयोपशम होय, जो आप आपतैंही पदार्थनिकूं जाननेकूं असमर्थ होय। ताकै पदार्थ जाननेका कारण चिन्ह होय ताकूं इंद्रिय कहिये। जातैं व्याकरण ऐसा है 'तस्य लिंगम्' इस अर्थमें इंद्रशब्दकै प्रत्यय आया है। अथवा ऐसाभी अर्थ जो गूढ अर्थकूं जनावै ताकूं लिंग कहिये। तहां आत्मा गूढ है– अदृष्ट है। ताके अस्तित्वकूं जनावनेविषैं चिन्ह है तातैं आत्माका लिंग इंद्रिय है। जैसैं लोकमैं अग्निका धूम लिंग है तैसैं जाननां। ऐसै यह स्पर्शादि इंद्रिय हैं ते करण हैं। सो कर्ता जो आत्मा

तिसविना न होय ऐसें ज्ञाता जो आत्मा ताका आस्तित्व जनावै है। अथवा इंद्र ऐसा नाम कर्मका कहिये। ताकरि ये रचे हैं निपजाये हैं। तातैंभी इंद्रिय ऐसा कहिये। ते स्पर्शनादि आगैं कहसी॥

बहुरि अनिंद्रिय नाम मनका है। याकूं अंतःकरणभी कहिये। इहां कोई पूछै है- इंद्र जो आत्मा ताहीका लिंग जो मन ताका नाम इंद्रियका प्रतिषेधकरि अनिंद्रिय ऐसा नाम कैसें दीया? ताका उत्तर-जो, इहां इंद्रियका प्रतिषेधकर नाही है। 'न इन्द्रियं अनिन्द्रियं' ऐसें कहनेमें ईषत् अर्थ लेना। किंचित् इंद्रियकूं अनिंद्रिय कह्या है। जैसें काहू कन्याकूं अनुदरा नाम कह्या, तहां जाकै उदर न होय ताकूं अनुदरा कहिये ऐसा अर्थ न लेना। जाका ईषत् किंचित् पतला क्षीण उदर होय ताकूं अनुदरा कहिये ऐसा अर्थ लेना। बहुरि कोई पूछै है- इहां ईषत् अर्थ कैसें है? ताका उत्तर— ए इंद्रिय हैं ते प्रतिनियत कहिये नियमरूप जुदाजुदा जिनका देश अरु विषय है ऐसें हैं। बहुरि कालांतरस्थायी हैं। जा कालमें विषयतें उपयुक्त न होय ता कालमैंभी अवस्थित हैं। बहुरि मन है सो यद्यपि इंद्र कहिये आत्मा ताका लिंग है तथापि नियमकरि एकही देशविषै तथा एकही विषयका ग्राहक नाही। अन्यकालमें जाका अवस्थान नाही अनवस्थित है चंचल है। याहीतें याकूं अंतःकरण कहिये अभ्यंतर इंद्रिय कह्या है। जातें गुणदोषका विचार

स्मरणविषैं इंद्रियनिकी याकै अपेक्षा नाही है। बहुरि नेत्रादिककीज्यौं बाह्यतैं अन्य मनुष्यादिक तिनिकरि न जाणिये है। ताहीतैं अंतर्गत इंद्रिय ऐसा कहिये है। ऐसे ईषत् अर्थ याविषैं संभवै है॥

बहुरि कोई पूछै है– सूत्रविषैं तत् शब्द किस प्रयोजनकूं है? ताका उत्तर– तत् शब्द मतिज्ञानके कहनेकै अर्थि है। बहुरि कोई कहै है– मतिज्ञान तौ लगताही है अनंतरही है। यातैं ऐसा परिभाषा है, जो, अनंतरकी विधिका सूत्र होय कै निषेधका होय। यातैं ता मतिज्ञानका विना तत् शब्दही ग्रहण होय है। तत् शब्द निरर्थक है। ताकूं कहिये हैं– इहां तत् शब्द है सो इस सूत्रके अर्थिभी है बहुरि अगले सूत्रके अर्थिभी है। जो मत्यादिक पर्याय शब्दकरि कहनेमैं आवै। ऐसा मतिज्ञान है सो इंद्रियानिंद्रियनिमित्तक है। ऐसैं तौ इस सूत्रकै अर्थि भया। बहुरि सोही मतिज्ञान अवग्रह ईहा अवाय धारणास्वरूप है ऐसै आगिले सूत्रकै अर्थि भया। जो ऐसैं न होय तत् न कहिये तौ पहलैं मत्यादिशब्दकरि वाच्य ज्ञान है ऐसैं कहिवेकरि इंद्रिय अनिंद्रियनिमित्तक श्रुतज्ञान है ऐसा प्रसंग आवै। तथा सोही श्रुतज्ञान अवग्रह ईहा अवाय धारणास्वरूप है ऐसा अनिष्ट अर्थका संबंध होय है। बहुरि यहु विशेष जननां– जो ए इंद्रिय मन हैं ते मतिज्ञानके बाह्य उत्पत्तिनिमित्त हैं। अंतरंग निमित्त तौ मतिज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशमही है।

आगें कहे हैं, ऐसें मतिज्ञानका उत्पत्तिका निमित्त तौ जाण्या; परंतु याके भेद केते हैं? यह निर्णय न भया। ऐसा प्रश्न होतै याके भेदनकी प्राप्तिके अर्थि सूत्र कहै हैं–

॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— अवग्रह ईहा अवाय धारणा ए च्यारि मतिज्ञानके भेद हैं ॥ इनिका लक्षण कहिये हैं। विषय जे रूपादिक बहुरि विषयी जे इंद्रिय तिनका संबंध होतै ताका लगताही तौ दर्शन हो है। ताके लगताही वस्तुमात्रका ग्रहण सो अवग्रह है। जैसें नेत्रकरि यह श्वेतरूप है ऐसें ग्रहण सो अवग्रह है। बहुरि अवग्रहकरि ग्रहण कीया जो वस्तु ताका विशेषकी वांछा सो ईहा है। जैसें अवग्रहकरि श्वेतरूप देख्या सो कहा बुगलाकी पंक्ति है अथवा कहा धुजा है? ऐसें याकूं संशय न जाननां। जातैं संशय तौ दोय पक्षविषैं अनिश्चित ज्ञान है अप्रमाण है। बहुरि ईहा एकही पक्षविषैं वांछारूप ज्ञान है। जो बुगलाकी पंकति है तौ वाहीकी वांछा है। जो पताका है तौ वाहीकी वांछा है। बहुरि ईहाकरि जान्या था ताका विशेष अवयवादिकका निर्णय होनेतें जैसा है तैसा नियमरूप निश्चय होना सो अवायज्ञान है। जैसें ईहाविषैं बुगलाकी पंक्तीकी तर्फ वांछा थी। परंतु धुजाका निषेध न कीया। अब इहां ऊंचा चढना नीचा आवनां पांख

हलावनां इत्यादि क्रियाचिन्ह देखी ऐसा निश्चय भया जो बुगलापंक्तिही है, धुजा नांही है; तहां अवायज्ञान कहिये। बहुरि अवायकरि निश्चय कीया जो वस्तु ताका ऐसा दृढज्ञान होय जो और कालमैं न भूलने यादि आवनेकूं कारण होय, तहां धारणाज्ञान हो है। जैसैं अवायज्ञानकरि प्रभातिमैं बुगलापंक्ति देखी थी सोही यहु अब मैं देखी ऐसे ज्ञानकूं कारण जो ज्ञान, सो धारणाज्ञान कहिये। ऐसैं इनि अवग्रहादिकनिका कहनेका अनुक्रम इनकी उत्पत्तिके अनुक्रमतैं कह्या ॥

इहां ऐसा भावार्थ जाननां— जो वस्तु सामान्यविशेषस्वरूप है तिस वस्तुकै अरु इंद्रियनिकै संबंध होतैं प्रथम तौ सामान्य अवलोकनरूप निराकार दर्शन होय है तापीछे ता वस्तुका सामान्य विशेषरूप साकार ग्रहण होय ताकूं अवग्रह कहिये। तापीछे तिसही वस्तूमैं विशेष बहुत हैं तिनिमैंतैं कोई वस्तुके विशेषरूप जाननेकी अभिलापारूप ज्ञान प्रवर्ता, जो, 'यह फलाणा विशेष होगा' ताकूं ईहा कहिये। तापीछे तिसही विशेषकी क्रिया चिन्हि देखी यहु निश्चय भया, जो, 'यहु अभिलापामैं ग्रहण हुईथी सोही है' ताकूं अवाय कहिये। तापीछे तिसहीविषैं ऐसा ज्ञान दृढ भया, जो, 'अन्यकालमैं वाकूं भूलिसी नाही' ताकूं धारणा कहिये। इनिमैं विषयका भेद भया, तातैं गृहीतका ग्रहण नांही है। बहुरि सामान्यपणैं वस्तुका रूप ग्रहण है, तातैं नयभी नांही है।

वहुरि विपय सत्यार्थ निर्बाध है तातैं प्रमाण है। वहुरि इंद्रियमनकै पदार्थसंबंध होनेतैं किंचित् स्पष्टताभी इनिमें है। तातैं व्यवहारकरि प्रत्यक्षभी इनिकूं कहिये हैं। परमार्थतैं परोक्षही है। वहुरि अन्यवादी सर्वथा एकांत वस्तुका स्वरूप मानै हैं। तिनिकै अवग्रहादिक भेदरूप ज्ञानकी कथनीही नांही। ऐसैं जानना ॥

आगें, कह्या जे अवग्रहादिक तिनिके भेदकी प्राप्तिकै अर्थि सूत्र कहे हैं —

॥ बहुबहुविधक्षिप्रानिस्सृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥

याका अर्थ-- कहे जे अवग्रहादिक, ते बहु आदि छह वहुरि छहही इनके प्रतिपक्षी तिनिसहित वारह भये, तिनिका ज्ञान होय है ॥ प्रकृत कहिये पूर्वं कहे जे अवग्रहादिक ज्ञानरूप-क्रियाका विशेष तिनिकी अपेक्षारूप या सूत्रविपैं पष्ठीविभक्तीकरि कर्मका निर्देश कीया है। तहां बहु शब्द तौ यहां संख्या तथा विपुल कहिये समूहपणाका वाचक है। जातैं दोऊमें विशेप नांही। सामान्यसंख्या तथा वहुतका ग्रहण करनां। जैसैं एक दोय वहुत ऐसैं तौ संख्या। वहुरि भात वहुत है दालि वहुत है इहां विपुलताही है संख्या न कही। वहुरि विधशब्द प्रकारवाची है, जैसैं वहुतप्रकार है। वहुरि क्षिप्रशब्दका ग्रहण काल अपेक्षा है। जैसे कोई वस्तु शीघ्र परिणमै। वहुरि अनिःसृत

कहिये जाका समस्त पहल शरीरादिक प्रगट नीसरे न होय सो अनिःसृत है। बहुरि अनुक्त कहिये अभिप्रायहीकरि जाका ग्रहण होय काहूके कहनेकी यामैं मुख्यता नांही। बहुरि ध्रुव कहिये निरंतर जाका जैसाका तैसा ग्रहण होबो करै ताकूं कहिये। बहुरि सेतर कहिये इनिके प्रतिपक्षीकरि सहित लेणै। सो बहुतका तौ प्रतिपक्षी एक तथा अल्प। बहुविधका एकविध। क्षिप्रका अक्षिप्र। अनिःसृतका निःसृत। अनुक्तका उक्त। ध्रुवका अध्रुव। ऐसै ये बारह भये। तिनि अवग्रहके बारहके बारह भेद भये। बहुतका अवग्रह, अल्पका अवग्रह, बहुविधका अवग्रह, एकविधका अवग्रह, क्षिप्रका अवग्रह, अक्षिप्रका अवग्रह, अनिःसृतका अवग्रह, निःसृतका अवग्रह, अनुक्तका अवग्रह, उक्तका अवग्रह, ध्रुवका अवग्रह, अध्रुवका अवग्रह, ऐसैं बारह भेदरूप अवग्रह है। ऐसैंही ईहा, अवाय, धारणा इनि तीनिकैभी बारह बारह भेद कीजिये। तब सर्व मिलै अठतालीस ४८ होय ॥

बहुरि ये पांच इंद्रिय एक मन इनि छहूंनिकरि होय है। तातैं छहबार अठतालीसकूं जोडिये तब दोयसे अठ्यासी भेद होय हैं। बहुरि बहु आदिक छहके नाम सूत्रमैं कहै अरु छह इनि प्रतिपक्षीकूं इतर कहे, ताका प्रयोजन यह है—जो बहु आदिक तौ मतिज्ञानावरणका क्षयोपशम बहुत

होय तब होय है। तातैं ये प्रधान हैं। तातैं इनिकूं पहलै कहे। बहुरि अन्य हैं ते तिसतैं थोरे क्षयोपशमतैं होय हैं। तातैं तिनिकूं पीछे कहे। इहां कोई पूछै है; बहुविषैं अरु बहुविधविषैं कहा विशेष है? तहां कहिये बहुपणा तौ बहुविषैंभी है बहुविधविषैंभी है। परंतु एकप्रकार नानाप्रकारका विशेष है। बहुरि कोई पूछै उक्त निस्सृतविषैं कहा विशेष है? समस्त नीसऱ्या प्रकट होय ताकूं निःसृत कहिये उक्तभी ऐसाही है। तहां कहिये परकै उपदेशपूर्वक ग्रहण होय सो उक्त है आपहीतैं ग्रहण होय सो निःसृत है यहू विशेष है। बहुरि केई आचार्य क्षिप्र निःसृत ऐसा पाठ पढे हैं। तामैं निःसृत पहले छहमैं आवै है। ते याका ऐसैं उदाहरण कहै हैं। जैसै श्रोत्रइंद्रियकरि पहली शब्दका अवग्रह हुवा। तहां यहु मयूरका शब्द है तथा कुरचिका शब्द है ऐसैं कोई जाणै ताकूं तौ निःसृत कहिये। बहुरि अनिस्सृत यातैं अन्य शब्दमात्रही है ऐसा जानै है। बहुरि कोई पूछै, ध्रुवअवग्रहविषैं अरु धारणअवग्रहविषैं कहा विशेष है? तहां कहिये है— क्षयोपशमकी प्राप्तिके कालविषैं शुद्धपरिणामके संतानकरि पाया जो क्षयोपशम तातैं पहले समय जैसा अवग्रह भया तैसाही द्वितीयादिक समयनिविषैं होय है किछु कमभी नाही होय अरु अधिकभी नाही होय है ताकूं तौ ध्रुवावग्रह कहिये। तथा शुद्धपरिणामका अरु संक्लेशपरिणामका मिश्रपणां मिलापतैं क्षयोपशम होय। तातैं

उपज्या जो अवग्रह सो कोई कालविषैं बहुतका होय। कोई कालविषैं अल्पका होय। कोई कालविषैं बहुविधका होय। कोई कालविषैं एकविधका होय। ऐसैं हीन अधिपणातैं अध्रुव अवग्रह होय है। बहुरि धारणा है जो जा पदार्थकूं ग्रह्या ताकूं नाहीं भूलनेका कारण रूप ज्ञान है। ऐसे इनि दोऊनिका बडा अंतर है॥ ऐसे अवग्रहादिक बहु आदिक पदार्थनिका होय है सो सत्यार्थ निर्बाध प्रमाण स्याद्वादमतविषैं सिद्ध होय है। जे सर्वथा एकांतवादी हैं तिनिकै ए ज्ञानके भेद तथा पदार्थके भेद संभवै नांहीं॥

आगैं, जो ए अवग्रहादिक बहु आदिकके जाननेवाले हैं, तथापि बहु आदिक किसके विशेष हैं? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं—

॥ अर्थस्य ॥ १७ ॥

याका अर्थ—ए बहु आदिक बारह हैं ते अर्थके विशेषण हैं॥ नेत्रादिक इंद्रियनिका विषय है सो तौ अर्थ है, ताके बहु आदि विशेषण हैं। इनिकरि विशिष्ट जो अर्थ कहिये वस्तु ताकै अवग्रहादिक होय है। इहां कोई पूछे है; जे बहु आदिक हैं ते अर्थ तौ हैंही। फेरी सूत्र कहनेका कहा प्रयोजन? ताका उत्तर—जो तैं पूछ्या, सो तौ सत्य है। परंतु इहां अन्यवादी कल्पना

करै है तिनिका निषेधकै अर्थि 'अर्थस्य' ऐसा जुदा सूत्र कह्या है। केई वादी ऐमा मानै है, कि रूप आदि गुण हैं तेही इंद्रियनिकरि स्पर्शिये हैं। तिनिकाही अवग्रह है द्रव्यका न हो है। सो यह कहना अयुक्त है। जातैं रूपादिक गुणनिकी तौ मूर्ति आकार नांही जो इंद्रियनिकै स्पर्श होय। यहु मूर्ति तौ द्रव्यकीही है ताहीतैं इंद्रिय भिडै है। तब फेरि वादी कहै है, जो, ऐसैं है तौ लोक ऐसैं कहै है, जो, रूप मैं देख्या, गंध मैं सूंघ्या, सो यहु कहनां न ठहरै। ताकूं कहिये, जो' पर्यायनिकूं प्राप्त होय है तथा पर्याय जाकूं प्राप्त होय ताकूं अर्थ कहिये है। सो अर्थ गुणपर्याय-निका समुदाय द्रव्यही है। ताकै इंद्रियनितैं संबंध होतैं तातैं अभिन्न जे रूपादिक गुण तिनिविषैं ऐसा व्यवहार प्रवर्तै है, जो, रूप देख्या, गंध सूंघ्या इत्यादि ॥

आगैं कहै हैं, कहा ए अवग्रहादिक सर्वही इंद्रिय मनकै होय हैं कि कछु विषयविशेष हैं? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं—

॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥ १८ ॥

याका अर्थ— व्यंजन कहिये अव्यक्त जो शब्दादिक ताकै अवग्रहही होय है। ईहादिक न होय हैं ऐसा नियम है॥ तहां व्यंजन ऐसा शब्दादिका समूह अव्यक्त होय ताका अवग्रह होय।

इहां कोई पूछे है यह सूत्र काहेके अर्थि कह्या? ताका उत्तर, जो, नियमकै अर्थि है। व्यंजनका अवग्रहही होय है। ईहादिक नाही होय है। ऐसा नियमकै अर्थि है। फेरि कोई कहै; जो, ऐसैं है तो नियमका वाचक एवकारशब्द इहां चाहिये। ताकूं कहिये, जो, एवकार नांही चाहिये। जातैं जाका विधान पहली सूत्रमें सिद्ध हुवा होय ताकूं फेरि कहनां सो यहु कहनांही नियमका वाचक है। अवग्रहका विधान पहली सूत्रमैं सिद्ध हुवा। इस सूत्रमैं फेरि अवग्रहका नाम कह्या, तातैंही नियम सिध्द भया। एवकार काहेकूं कहिये? बहुरि इहां कोई प्रश्न करै है– अवग्रहका ग्रहण अर्थमैं तथा व्यंजनमैं तुल्य है। इनिमें विशेष कहा है? ताका उत्तर अर्थावग्रह व्यंजनावग्रह इनि दोऊनिमैं व्यक्त अव्यक्तका विशेष है। सोही कहिये है। जैसें नवा मांटीका डीवाविषैं जलका कणां क्षेपिये तहां दोय तीन आदि कणाकरि सींच्या जेतैं आला न होय तेतैं तो अव्यक्त है। बहुरि सोही डीवा फेरि फेरि सींच्या हुवा मंद मंद आला होय तब व्यक्त है। तैसेंही श्रोत्रादि इंद्रियनिका अवग्रहविषैं ग्रहणयोग्य जे शब्दादि परिणया पुद्गलस्कंध ते दोय तीन आदि समयनिविषैं ग्रह्या हुवा जेतैं व्यक्त ग्रहण न होय तेतैं तो व्यंजनावग्रह हो है। बहुरि फेरि फेरि तिनिका ग्रहण होय तब व्यक्त होय, तब अर्थावग्रह होय है। ऐसैं व्यक्तग्रहणतैं पहलैं तो व्यंजनावग्रह कहिये। बहुरि व्यक्त ग्रहणकूं

अर्थावग्रह कहिये। यातें अव्यक्तग्रहणरूप जो व्यंजनावग्रह तातें ईहादिक न होय है ऐसैं जाननां ॥

आगें, सर्वही इंद्रियनिकै व्यंजनावग्रहका प्रसंग होतें जिनि इंद्रियनिकै व्यंजनावग्रह न संभवे, तिनिका निषेधके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥ १९ ॥

याका अर्थ— नेत्र इंद्रिय अरु मन इनि दोऊनिकरि व्यंजनावग्रह न होय है। जातें ए दोऊ अप्राप्यकारी कहिये पदार्थतें भिडिकरि स्पर्शनकरि नांही जानै हैं दूरिहीतें जाने हैं। जातें अप्राप्त कहिये विना स्पर्श्या अविदिक कहिये सन्मुख आया निकट प्राप्त हूवा बाह्य प्रकाशादिककरि प्रगट कीया ऐसा पदार्थकूं नेत्र जाणे है। बहुरि मन है सो विनां स्पर्श्या–दूर तिष्ठ्या पदार्थकूं विचारमैं ले है। यातें इनि दोऊनिकै व्यंजनावग्रह नाही हो है। बहुरि इहां कोई पूछे है, जो, नेत्रकै अप्राप्यकारिपणां कैसें निश्चय कीजिये? ताका उत्तर– जो, आगमतें तथा युक्तितें निश्चय कीजिये है। सो प्रथम तो शास्त्रमें कह्या है, जो, शब्द तो स्पर्शतें सुणिये है। बहुरि रूप है सो अस्पर्शतें देखिये है। बहुरि गंध स्पर्श रस ये स्पर्श तथा संधाणरूप भये जाणिये है। यहु तो आगम है। बहुरि यह युक्ति है जो नेत्र है ते अप्राप्यकारी है, जातें यह स्पर्शकूं नाही जानै है। जो प्राप्य-

कारी होय तो स्पर्शन इंद्रियकीज्यों स्पर्श्या जो अंजन ताका रूपकूं देख ले। सो अंजनका रूपकूं नेत्र नाही जानै है। यातैं मनकीज्यों नेत्र अप्राप्यकारी है ऐसा निश्चय कीजिये। तातैं नेत्र मन इनि दोऊविना अवशेष च्यारि इंद्रियनिकै व्यंजनावग्रह होय है। ऐसैं या व्यंजनावग्रहके बहु आदि बारह विषयकी अपेक्षा अठतालीस ४८ भेद होय हैं। ऐसैं अर्थावग्रहके २८८ मिलि मतिज्ञानके तीनसै छतीस ३३६ भेद होय हैं। बहुरि नेत्रके अप्राप्यकारीकी विधिनिषेधकी चरचा विशेषकरि श्लोकवार्तिकमैं है। तहांतैं जाननी ॥ कोई कहै, जैसैं नेत्र दूरतैं जानै है तैसैं शब्दभी दूरतैं सुणिये है। तातैं अप्राप्यकारी कहौ। ताकूं कहिये, ऐसैं नाही है। जातैं जिस ठिकाणैंतैं शब्द उपजै है तहांतैं लगाय कर्णइंद्रियके प्रदेशतांईके पुद्गल शब्दरूप होय जाय है, तब सुणिये है। ऐसैंही गंधद्रव्य जहां तिष्ठै है तहांतैं लगाय नासिका इंद्रियके प्रदेशतांईके पुद्गल गंधरूप होय जाय हैं। ते सूंघिये हैं ऐसैं कर्णइंद्रिय तथा घ्राणइंद्रिय प्राप्यकारी है। ऐसैं नेत्र नाही हैं। यहु अप्राप्यकारीही है ॥

आगैं शिष्य पूछै है, जो, मतिज्ञान तौ स्वरूपतैं तथा भेदनसहित कह्या। ताकै लगता श्रुतज्ञान कह्या है। ताका अब लक्षण तथा भेद कहनेयोग्य है। ऐसैं पूछै आचार्य सूत्र कहे हैं—

॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥ २० ॥

याका अर्थ— श्रुतज्ञान है सो मतिज्ञानपूर्वक है । बहुरि दोय भेदरूप है। ते दोय भेद अनेक भेदरूप तथा बारह भेदरूप हैं ॥ यहां यहु श्रुतशब्द है सो सुननेकूं ग्रहणकरी निपजाया है । तोभी रूढिके वशतैं कोईक ज्ञानका विशेष है तामैं वर्ते है । भावार्थ, ज्ञानका नाम है। जैसें कुशल ऐसा शब्द है सो कुश जो डाभ ताकूं छेदै ताकूं कुशल कहिये । ऐसैं व्युत्पत्तितें निपजाया है। तौभी रूढिके वशतैं प्रवीण पुरुषका नाम है तैसें जाननां । बहुरि यह ज्ञानविशेष कह्या सो कहा है? ऐसैं पूछे कहे हैं । 'श्रुतं मतिपूर्वं' कहिये श्रुत है सो मतिपूर्वक है । ऐसैं श्रुतकै प्रमाणरूप ज्ञानपणा है। जो पूरै उत्पत्ति करै ताकूं पूर्व ऐसा कहिये। सो पूर्व ऐसा नाम निमित्तका भया जाकूं कारणभी कहिये । बहुरि मतिके स्वरूप पहलै कह्याही था । सो मति है कारण जाकूं ताकूं मतीपूर्वक कहिये। इहां कोई कहै, जो, मतीपूर्वक श्रुत कह्या सो यहुभी मतिस्वरूपपणांकूंही प्राप्त होयगा। जातैं लोकविषें कारणसारिखाही कार्य देखिये है । तहां कहिये हैं, जो, यहु एकांत नाही अन्यसारिखाभी होय है। जैसें घट है सो दंड चाक आदि कारणकरि निपजै है, परंतु तिस स्वरूप नाही है । बहुरि ऐसाभी है, जो, बाह्यकारण तौ मतिज्ञानादिक विद्यमान होय अरु जाकै श्रुतज्ञानावरणकर्मका प्रबल

उदय होय तौ श्रुतज्ञान होय नाही। श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशमका प्रकर्ष होय तब श्रुतज्ञान उपजै। ऐसैं मतिज्ञान निमित्त मात्र जाननां। मतिसारिखाही श्रुतज्ञान न जाननां ॥

बहुरि इहां कोई कहै है, जो, श्रुतकूं तौ अनादिनिधन मानिये है। याकूं मतिपूर्वक कहनेतैं नित्यपणाका अभाव होय है। जातैं जाका आदि है सो अंतसहितभी होय है। बहुरि पुरुषका कीयापणातैं अप्रमाणभी ठहरै है ॥ तहां आचार्य कहै हैं। यह दोष नाही है। द्रव्यादिक सामान्यकी अपेक्षा तौ श्रुत अनादिनिधन मानिये है। काहू पुरुष कोई क्षेत्रकालविषैं नवीन कीया नाही। बहुरि तिनि द्रव्य क्षेत्र काल भावनिकी विशेषापेक्षाकरि श्रुतका आदिभी संभवै है। तथा अंतभी संभवै है। यातैं मतिपूर्वक कहिये है। जैसैं अंकुर है सो बीजपूर्वक हो है। सोही संतानकी अपेक्षाकरि अनादिनिधन चल्या आवै है। बहुरि अपौरुषेयपणां प्रमाणका कारण नाही है। जो ऐसे होय तौ चोरि आदिका उपदेशका संतान अनादिनिधन अपौरुषेय चल्या आवै है। सो यहुभी प्रमाण ठहरै। या उपदेशका कर्ता कोईकूं यादि नाही, जो, वा पुरुषनैं चोरीका उपदेश चलाया है। बहुरि अनित्य प्रत्यक्षादि प्रमाणही है। अनित्यके प्रमाणता कहिये तौ कहा विरोध है? बहुरि कोई कहै है, प्रथम उपशमसम्यक्त्वकी उत्पत्ति होतैं ज्ञानभी सम्यक् तिसही कालमैं होय है। तातैं

मतिपूर्वकपणां श्रुतकै कैसै ठहरै? ताकूं कहिये। यह कहना अयुक्त है। जातैं ज्ञानकै सम्यक्पणा सम्यक्त्वकी अपेक्षातैं भया है। ज्ञानका स्वरूपका लाभ तौ अनुक्रमतैंही है। ऐसैं मतिपूर्वकपणामें विरोध नाही॥

वहुरि कोई कहै है, मतिपूर्वक श्रुत है यह लक्षण तौ अव्यापक है-सर्वश्रुतज्ञानमैं व्यापै नांही। जातैं श्रुतपूर्वक श्रुत मानिये है। सोही कहिये है। शब्दरूप परिणया जे पुद्गलस्कंध ते अक्षर पदरूप भये। तब घट आदि शब्द कर्ण इंद्रियका विषय भया। तथा ताके रूपादिक नेत्र आदिके विषय भये, पीछे तेही पहले श्रुतज्ञानके विषय भये। तिनिमैं किछु व्यभिचार नांही। तिनितैं कीया है संकेत जानैं ऐसा पुरुष हे सो घट ऐसै शब्दके गोचर जो घट नामा पदार्थ तातैं जलधारणादिक जे कार्य तिनरूप जो दूसरा संबंधका विशेष ताही प्राप्त हो है। तथा धूमादिक पदार्थतैं अग्न्यादिक वस्तुकूं प्राप्त हो है। तिस काल श्रुतज्ञानतैं श्रुतज्ञान भया ऐसैं कहतै आचार्य उत्तर कहै हैं। जो, यह दोष नांही है। तिस श्रुतज्ञानकैभी उपचारतैं मतिपूर्वकपणांही कहिये। जातैं श्रुतज्ञानकैभी कोई ठिकाणै मतिहीका उपचार कीजिये है। जातैं मतिपूर्वकही सोही श्रुतज्ञान भया है ऐसैं जाननां। वहुरि सूत्रमैं भेदशब्द है सो जुदा जुदा कहनां दोय भेदभी है, अनेक-

भेदभी है बारहभेदभी है ऐसैं। तहां दोय भेद तौ अंगबाह्य अर अंगप्रविष्ट ऐसे हैं ॥

बहुरि अंगबाह्य तौ अनेकभेदरूप है। तिनिके नाम दशवैकालिक उत्तराध्ययन आदिक ते चौदह प्रकीर्णक कहावै हैं, तिनिके नाम— सामायिक। चतुर्विंशति स्तव। वंदना। प्रतिक्रमण। वैनयिक। कृतिकर्म। दश वैकालिक। उत्तराध्ययन। कल्पव्यवहार। कल्पाकल्प। महाकल्प। पुंडरीक। महापुंडरीक। निषेधिका। ऐसैं चौदह हैं॥ बहुरि अंगप्रविष्टके बारह भेद हैं। ते कौन सोही कहिये हैं। १ आचार। २ सूत्रकृत। ३ स्थान। ४ समवाय। ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति। ६ ज्ञातृधर्मकथा। ७ उपासकाध्ययन। ८ अंतकृद्दश। ९ अनुत्तरोपपादिक दश। १० प्रश्नव्याकरण। ११ विपाकसूत्र। १२ दृष्टिवाद। ऐसै बारह॥ तहां दृष्टिवादके भेद परिकर्म। सूत्र। प्रथमानुयोग। पूर्वगत। चूलिका ऐसै पांच॥ तहां परिकर्मके भेद १ चंद्रप्रज्ञप्ति। २ सूर्यप्रज्ञप्ति। ३ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति। ४ द्वीपसागरप्रज्ञप्ति। ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति॥ बहुरि चूलिकाके पंच भेद १ जलगता। २ स्थलगता। ३ मायागता। ४ रूपगता। ५ आकाशगता। ऐसै पांच॥ बहुरि पूर्वगतके भेद चौदह १ उत्पाद। २ अग्रायणीय। ३ वीर्यप्रवाद। ४ अस्तिनास्तिप्रवाद। ५ ज्ञानप्रवाद ६ सत्यप्रवाद। ७ आत्मप्रवाद। ८ कर्मप्रवाद। ९ प्रत्याख्याननामधेय। १० विद्यानुवाद

११ कल्याणनामधेय। १२ प्राणावाय। १३ क्रियाविशाल। १४ लोकबिंदुसार ऐसैं चौदह। ऐसैं बारह अंग कहे॥ तिनिके वीस अंक प्रमाण अपुनरुक्त अक्षर हैं। तिनिके पद एकसो बारह कोडि तियालिस लाख अठावन हजार पांच है। एक पदके अक्षर सोलासे चौतीस कोडि तियासी लाख सात हजार आठसे अठ्यासी हैं। प्रकीर्णकनिके अक्षर आठ कोडि एक लाख इक्यासीसे पचेहत्तरि है॥

अर पूर्वनिकी उत्पत्ति ऐसैं है। प्रथम पर्यायज्ञान अक्षरकै अनंतवै भाग सूक्ष्मनिगोद लब्धपर्याप्त जीवकातैं लगाय वधता वधता पर्यायसमास ज्ञान हो है। बहुरि अक्षरज्ञान, अक्षरसमासज्ञान, पदज्ञान पदसमासज्ञान, संघातज्ञान, संघातसमासज्ञान, प्रतिपत्तिज्ञान, प्रतिपत्तिसमासज्ञान, अनुयोगज्ञान, अनुयोगसमासज्ञान, प्राभृतज्ञान, प्राभृतसमासज्ञान, प्राभृतप्राभृतज्ञान, प्राभृतप्राभृसमासज्ञान, वस्तुज्ञान, वस्तुसमासज्ञान, पूर्वज्ञान, पूर्वसमासज्ञान ऐसैं वीस स्थानरूप पूर्वकी उत्पत्ति जाननी। बहुरि पूर्वके चौदह भेद कहे तिनिमैं एकसो पिच्याणवै वस्तु हो हैं। अर एक एक वस्तुमैं वीस वीस प्राभृत कहे हैं। ते गुणतालीससैं प्राभृत होय हैं। इनि अंग अर अंगबाह्यश्रुतके अक्षरनिकी तथा पदनिकी संख्या तथा तिनिमैं जो जो प्रधानताकरि व्याख्यान है सो विशेषकरि गोमटसारमैं कह्या है। तहांतैं जाननां॥

इहां कोई फेरि पूछै है, जो यहु श्रुतज्ञान दोय भेदरूप वारह भेदरूप है सो यहु विशेष काहेतें भया है? तथा ताकी प्रमाणता कैसै है। ताका उत्तर यहु विशेष वक्ताके विशेपतें है। वक्ता तीन प्रकार है। प्रथम तौ सर्वज्ञ है तहां तीर्थंकर तथा सामान्यकेवली वहुरि श्रुतकेवली। वहुरि तिनिके पीछले सूत्रकार टीकाकारतांई भये आचार्य। तिनकूं आरातीय ऐसा नाम कहिये। तहां सर्वज्ञपरमर्षि जिनिकै छद्मस्थके चिंतवनमैं न आवै ऐसी अचिंत्य विभूतिका विशेष पाईये। तिनिनैं अर्थतैं आगम कह्या। ताका प्रमाणपणां तौ प्रत्यक्षज्ञानीपणांतैं तथा निर्दोषपणांतैंही है। वहुरि तिनिके निकटवर्ती जे वुद्धिके अतिशय तथा ऋद्धिकरि युक्त ऐसैं गणधर श्रुतकेवली तिनिकरि रचे अंगपूर्वरूप सूत्र है। ताका प्रमाणपणां सर्वज्ञकी प्रमाणतातैं हैही। ते सर्वज्ञके निकटवर्तीही हैं। वहुरि आरातीय जे उनके पीछले आचार्य तिनिनैं इस कालदोषतैं थोरी आयु थोरी वुद्धि, थोरे सामर्थ्यके धारी जे शिष्य तिनिके उपकारकै अर्थि दश वैकालिकादिक रचै है। ताका प्रमाणपणां अर्थतैं जो सर्वज्ञ तथा गणधरनिनैं कह्या है सोही यह है ऐसे है। जैसैं क्षीरसमुद्रका जल एक घटमैं भरि ल्यावै सो क्षीरसमुद्रकाही है। तैसैं यह सर्वज्ञकी परंपरातैं अर्थ ले आपना वुद्धिसारू कह्या सो वहही है ऐसैं जाननां ॥

इहां कोई पूछे, जो श्रुतशब्दकरि ज्ञानही ग्रहण कीया, तौ ऐसैं वचनरूप जो द्रव्यश्रुत ताकै श्रुतपणां कैसै प्रसिद्ध है? ताका उत्तर- जो, द्रव्यश्रुतकै श्रुतपणां उपचारतैं आवै है। जातैं श्रुतशब्दका कहनांही श्रुतकै द्रव्यश्रुतपणा जनावै है। द्रव्यश्रुत है सो भावश्रुतज्ञानका निमितिकारण है। याहीके निमित्ततैं भावश्रुतज्ञानके भेदभी अंगबाह्य अंगप्रविष्ट आदि भये हैं। जो ऐसैं न होय, तौ ज्ञानका श्रुत ऐसा नाम काहेकूं है? ज्ञानका वाचकही स्पष्ट नाम कहते बहुरि अंग आदिके भेद कहनेतैं अन्यवादी च्यारि भेदरूप वेद कहै हैं। तथा षडंग वेदके कहै हैं। तथा वेदकी सहस्र शाखा कहै हैं। तिनतैं न्यारापणां प्रगट होय है। ते श्रुताभास हैं प्रमाण नांही। बहुरि श्रुत है सो परोक्षप्रमाण है। बहुरि मतिपूर्वक कहनैतें अवध्यादि निमितितैंभी न होय है। अर सर्वथा नित्यपणाका निषेध है। बहुरि कोई श्रुतपूर्वकभी श्रुत हो है। तथापि सोभी मतिपूर्वकही है। जातैं जाकै पूर्ववचन आवै तब वचनके श्रवणरूप मतिज्ञान तौ अवश्य होयही। ताके पीछे श्रुतज्ञान होय। तातैं साक्षात् तौ मतिपूर्वकही होय है। बहुरि स्मृति आदि ज्ञानभी श्रुतज्ञान नांही है। जातैं स्मृति तौ मतिज्ञानहीका विशेष है॥

बहुरि जे मीमांसक शब्दात्मक द्रव्यश्रुत वेदकूं कहै हैं, ताकूं ज्ञानपूर्वक नाही कहै हैं। सर्वथा

नित्य कहे हैं। तिनिके प्रमाणतें विचारिये तब बहुत विरोध आवै है। जातें वेदका उच्चार तौ ज्ञानपूर्वकही है। बहुरि कहै, जो, शब्दकी व्यक्ति ज्ञानपूर्वक है शब्द तौ नित्यही है। तहां कहिये जो शब्दकी व्यक्ति शब्दतें भिन्न तौ नाही शब्दरूपही है॥ बहुरि कहै हैं, जो, वचनके उच्चारकै ज्ञानपूर्वकपणां है। वचन तौ नवीन नाही नित्यही है। जातें याका कर्ता कह्या नाही। बडे बडे ज्ञानी भये याका कर्ता तौ काहूकूंभी यादि न भया। ताकूं कहिये वेदका कर्ता वैशेषिकमतके तौ ब्रह्माके कहै है। जेमिनी कालासुरकूं कहै हैं। बौद्धमती स्वाष्टकातकूं कहै हैं। अपनी अपनी संप्रदायमैं सर्वही कर्ता कहै हैं। तातें ऐसें कैसें कहिये? जो काहूनें कर्ता कह्या नाही। जो कहै बहुतकर्ता बताये तातें यह जानिये कि कर्ता कहना असत्यही है। ताकूं कहिये बहुत कर्ता भये अकर्ता कैसै कहिये। बहुरि अन्य आगमतें ऐसा महान्‌पणाभी वेदकै नाही। जातें कहिये, जो, ऐसा काहूतें कीया जाता नाही तातें अकर्ता कहिये॥

बहुरि कहै, जो, वेदका पढणां वेदका पढनैंपूर्वकही है। जो पहले कोई पढ्या होय तातें पढिये है सो यह कहनाभी अन्यतें समान है। अपने अपने आगमकूं सर्वही अपने अपने आप्तकूं पढावनेवाला कहै है। बहुरि कहै आगमके अर्थकूं साक्षात् प्रत्यक्षकरि वक्ता होय है। तौ ऐसैंही कर्ता

कहिये तौ कहा विरोध है? बहुरि पढावनेवाले विना वेदका पढनां कैसै होय? जो कहै ब्रह्मा स्वर्गविषैं आप अध्ययन करै है पीछे मनुष्यलोकमैं आय औरनिकूं पढावे है, तौ ऐसै तौ सर्वही शास्त्रके पढने पढावनेवाले कहिये। जो ऐसैही अकृत्रिमता ठहरै तौ सर्वही शास्त्र अकृत्रिम ठहरै। बहुरि कहै जो मैं पूर्व शास्त्र पढे थे तेही अबहूं पढाऊं हूं। ऐसा अनुभव तौ काहूकै दीखै नाहीं। तहां कहिये तत्काल हुवा बालक बछा माताका दूध खैंचै है सो अनुभवविना कैसै खैंचै है? जो वाकै अनुभव है तौ खैंचै है, तैसैही शास्त्रका संस्कार पढने पढावनेवालेकै होय तौ कहा विरोध? बहुरि जो अक्षर पद वाक्यनिविषैं व्युत्पत्ति काव्य रचनेवाले कवीश्वरनिकै देखिये है तैसैंही वेदकी रचनाका कर्ता कहिये तौ यामैं कहा विरोध है? तथा ऐसैंभी सुणिये है सामगण तौ सामवेद कीया बहुरि रुचिगिरा रिचा करी। तातैं वेदकै अपौरुषेयपणां कहा रह्या? तातैं भारतादिककीज्यों वेदभी पदवाक्यस्वरूप है। सो पौरुषेयपणाही संभवै है॥

बहुरि वेदकै अकृत्रिमपणां प्रमाणताका कारण मानिये तौ ऐसैंही सर्वपदार्थनिकै अकृत्रिमपणां प्रमाणताका कारण क्यों न कहिये। बहुरि निर्दोष कारणतैं उपजनां। बहुरि अपूर्वार्थपणां बाधारहितपणां प्रमाणताका कारण है। सो अनुमानादि प्रमाणविषैं समान है। तातैं निष्प्रयोजन वेदकै

अपोरुषेयपणां काहेकूं कल्पिये। तातैं आगमके प्रमाणताभी स्याद्वादमतमैं असंभव बाधकप्रमाणतैं साधी है सोही सत्यार्थ है। वहुरि कोई कहै जो शब्दपूर्वकही ज्ञान है ऐसा एकांत है। जातैं ऐसा पदार्थही लोकविषैं नांही जो नामविना होय तथा नामविना निश्चय जाका होय। ताका उत्तर अकलंकदेव आचार्य ऐसै कह्या है, जो नाम कहे पहली स्मृति संज्ञा चिंता आभिनिबोध भेद लीये मतिज्ञान प्रवर्ते है। अवशेष शब्दपूर्वक श्रुतज्ञान है। ऐसै कहनेतैं जो अन्यवादी कहै है; ज्ञानके पूर्व जो निरंतर वचनरूपपणां होय तौ ज्ञानका प्रकाश होय नाही। सो ऐसा कहनांभी निराकरण भया। वचनरूपताविनाही मतिज्ञान प्रकाशै है।

वहुरि शब्दाद्वैतवादीकी मानि कहकरि निराकरण कीजिये है। वहुरि वह कहै, जो, वाणी च्यारि प्रकार है-- वैखरी मध्यमा पश्यंती सूक्ष्मा। तहां उर कंठ आदि स्थाननिकूं भेदिकारि पवन निसऱ्या ऐसा जो वक्ताका सासोछास है कारण जाकूं ऐसा अक्षररूप प्रवर्तती ताकूं तौ वैखरी कहिये। वहुरि वक्ताकी बुद्धि तौ जाका उपादान है कारण है बहुरि सासोछासकूं उलंघि अनुक्रमतैं प्रवर्तती ताकूं मध्यमा कहिये। वहुरि जामैं विभाग नांही सर्व तरह संकोच्या है क्रम जानैं ऐसी पश्यंती कहिये। वहुरि अंतर प्रकाशरूप स्वरूपज्योतीरूप नित्य ऐसी सूक्ष्मा कहिये।

तिनिमें वैखरी मध्यमा इनि दोऊविना तौ इंद्रियज्ञान प्रवर्तै है। सो तौ स्वसंवेदन हमारै इष्ट है। हमभी मानै हैं॥

बहुरि पश्यंती तथा सूक्ष्मा विनाज्ञान नांही प्रवर्तै है। जातैं निश्चयात्मक व्यापारस्वरूप जो ज्ञान सो जो पश्यंती अभेदरूप वाणी ताविनां कैसैं प्रवर्तै? तथा सर्वव्यापक नित्य एकरूप शाश्वती बीजरूप सर्ववाणीका कारण सर्वज्ञानविषैं प्रकाशरूप जो सूक्ष्मा वाणी ताविनां कैसैं प्रवर्तै? ऐसै शब्दाद्वैतवादी कहै हैं। ताकूं कहिये- जो, शब्दब्रह्म तौ तू निरंश मानै है, ताविषैं च्यारी अवस्था कैसै होय? जो होय तौ अंशसहित हूवा अनित्य ठहरै। अद्वैतपणां कैसै ठहरै? जो कहै अविद्यातैं च्यारि अवस्था दीखै है तौ अविद्या कोणकै है? शब्दब्रह्म तौ निरंश है ताकै अविद्या कैसै वणै? तथा निरंश शब्दकी सिद्धि कैसै प्रमाणतैं करिये? इंद्रियनिकरि तौ जाका ग्रहण नांही तथा जाका कछु एकताका लिंग नांही अर स्वसंवेदनमैं आवै नांही, अर आगमतैं भेदकीभी सिद्धि है अभेदही सिद्धि नांही, बहुरि केवल आगमहीतैं अन्यप्रमाणविनां तत्त्वकी सिद्धिभी प्रमाणभूत नांही, बहुरि शब्दब्रह्मतैं जुदाही आगमभी कछु है नांही, बहुरि ताकै भेद अविद्यारूप बतावै तौ अविद्यातैं ताकी सिद्धि कैसै होय। इत्यादि युक्तितैं निरंशशब्दब्रह्मकी सिद्धि होती

नाहीं। तथा ताकी च्यारि वाणीरूप अवस्था होनाहीं वर्णैं नाहीं। बहुरि हमारै स्याद्वादिनिकै सर्वप्रकार सिध्दि हो है ॥

वाणी द्रव्यभाव भेदतैं दोय प्रकार है। तहां द्रव्यवचन दोय प्रकार; एक द्रव्यरूप एक पर्यायरूप। तहां श्रोत्रेंद्रियके ग्रहणमैं आवै ऐसा वचन तौ पर्यायरूप है। ताकूं वैखरी ऐसा नाम कीया ॥ बहुरि भाषावर्गणारूप परिणये जे पुद्गलस्कंध तिनिकूं द्रव्यवचन कहिये ताकूं मध्यमा ऐसा नाम कीया। बहुरि भाववचन दोय प्रकार है। ताके दोय भेद। तहां ज्ञानावरणीयकर्मका उदयका अभावतें भया जो आत्माके अक्षरके ग्रहण करणेकी तथा कहनेकी शक्ति ताकूं तौ लब्धि कहिये, ताका सूक्ष्मा नाम कीया। बहुरि तिस लब्धिकै अनुसारि व्यक्तिरूप भया जो अक्षरके ग्रहण करणेरूप तथा कहनेरूप द्रव्यवचनकूं कारण जो भाव ताकूं उपयोग कहिये ताका नाम पश्यंती किया। सो ए दोऊ आत्माके परिणाम हैं। शब्दरूप पुद्गल नाहीं; शब्दकूं निमित्त है। सो इस लब्धि तथा उपयोगकूं चिद्रूपसामान्य ग्रहणकरि अक्षररूप नाम कहनेकै पहली तौ मतिज्ञानही कहिये। सो तौ वचनपूर्वक नाहीं प्रवर्तै है। बहुरि वचनपूर्वक जो प्रवर्तै सो श्रुतज्ञान है सो वचनपूर्वकही कहिये। ऐसैं कहनेतैं सर्व जघन्य तौ लब्ध्याक्षरज्ञान ताकेभी श्रुतज्ञानपणां सिध्द होय है। सो स्पर्शन इंद्रियतैं भया जो

मतिज्ञान तिस पूर्वक होय है। ऐसैं मतिपूर्वक श्रुत कहनेमैं विरोध नाही है ॥

बहुरि अन्यवादी उपमानप्रमाण जुदा कहै हैं। सोभी इस श्रुतप्रमाणमैंही अंतर्भूत होय है। सोही कहिये हैं। प्रसिद्ध समानधर्मपणांतैं जो साध्यवस्तुको साधिये, ताकूं उपमान कहिये। जैसैं गऊसारिखा यह गवय है। तथा वैधर्म्यतैंभी होय है, जैसैं जो महिप है सो गऊ नाही है। ऐसैं साधर्म्यवैधर्म्यकरि जो संज्ञासंज्ञिसंबंधकी प्राप्ति सो उपमानका अर्थ है। सो ऐसैं याकूं शब्दप्रमाणतैं न्यारा कहै है। तिनिकै दोय आदि संख्याका ज्ञानभी न्यारा प्रमाण ठहरैगा। तथा उपरिले नीचलेका ज्ञान तौ सौपानकेविपैं, तथा पर्वतादिविपैं थिरताका ज्ञान, अपने वंशादिविपैं महान्पणैका ज्ञान, चंद्रमासूर्यादिविपैं दूरवर्तीपणाका ज्ञान, सरसूं आदिविपैं छोटापणाका ज्ञान, रुई आदिविपैं हलकापणाका ज्ञान, अपना घर आदिविपैं निकटवर्तिपणांका ज्ञान, लकूटाचोकूटा आदिविपैं आकारका ज्ञान, कोईविपैं वक्रपणादिका ज्ञान, ए सर्व न्यारे प्रमाण ठहरैंगे। तब आप मानी जो प्रमाणकी संख्या ताका विघटन होगा। तातैं जो संज्ञासंज्ञिसंबंधतैं पदार्थका ज्ञान होय है सो सर्व आप्तके उपदेशपूर्वक है। तातैं आगमप्रमाणमैं अंतर्भूत होय है। ऐसैंही अन्यभी उदाहरण हैं ॥

जैसें सिंहासनपरि बैठा होय सो राजा होय। सुवर्णके सिंहासनपरि बैठी पट्टराणी होय। इस

तरफ बैठा होय सो मंत्री होय। यहु यातैं पूर्वदिसाकी तरफ है। यह यातैं दक्षिणदिसाकी तरफ है। यहु यातैं उत्तरदिसाकी तरफ है। याका यहु नाम है इत्यादि वाक्य पूर्वैं सुणे थे। ताका संस्कार फेरि इनको देखे तब राजादिकका ज्ञान होय। बहुरि षण्मुख स्वामिकार्तिकेय है, ब्रह्मा चतुर्मुख है। ऊंची नासिकावाला सुखदेव है। दूधजलकूं न्यारा करनेवाला जाकै चूंच सो हंस है। सप्तपत्रवाला अशोकवृक्ष है ऐसैं वाक्यनितैं यथार्थकी प्राप्ति सोभी आगम है। तथा रूपकादि अलंकारनितैं ज्ञान होना सोभी आगमप्रमाण है। ऐसैंही उपमानप्रमाणभी आगमप्रमाणही है। बहुरि पूर्वैं जाकूं देख्या था तथा बहुरि फेरि देख्या; तब जाणी " यहू पूर्वैं देख्या सोही है ऐसा जानै " ताकूं प्रतिभा कहिये सो प्रत्यभिज्ञान है, सो मतिज्ञानही है। याकै पूर्वैं शब्द लगाये तब आगमप्रमाण है। बहुरि संभव अभाव अर्थापत्ति अनुमान ए सर्वही नामपूर्वक तौ आगमप्रमाण है। विनां नाम मतिज्ञानरूप प्रमाण है। ऐसैं मतिज्ञान श्रुतज्ञान ए दोऊ पूर्वैं सूत्रमैं परोक्षप्रमाण कहे ते जानने ॥

आगैं प्रत्यक्षप्रमाण कहनेयोग्य है। सो दोय प्रकार है, देशप्रत्यक्ष सकलप्रत्यक्ष। तहां देशप्रत्यक्ष अवधि मनःपर्यय ज्ञान है। सर्वप्रत्यक्ष केवलज्ञान है। तहां पूछै है जो ऐसैं है तौ प्रथमही अवधिज्ञान तीन प्रकारके प्रत्यक्षविषैं आदि है सो कहिये? ऐसैं पूछै कहै हैं– अवधि दोय प्रकार है

एक भवप्रत्यय दूसरा क्षयोपशमनिमित्तक । तहां भवप्रत्ययकूं कहै हैं—

॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— भवप्रत्यय अवधि है सो देवनारकीनिकै होय है ॥ तहां पूछे हैं– भव कहा? तहां उत्तर– आयु नामकर्मका उदयका है निमित्त जाकूं ऐसा आत्माका पर्याय सो भव कहिये, बहुरि प्रत्यय नाम कारणका है। सो भव है कारण ताकूं ताहि भवप्रत्यय कहिये। ऐसा अवधिज्ञान देवनारकी जीवनिकै होय है। इहां कोई पूछे है जो, ऐसैं है तौ क्षयोपशमनिमित्तपणा तिनकै न ठहऱ्या। आचार्य कहै हैं। ऐसा दोष इहां नांही आवै है। जातैं भवके आश्रयतैं इनिकै क्षयोपशम होय है। तातैं प्रधानकारण है ऐसा उपदेश है। जैसैं पक्षीनिकै गमन आकाशविषैं होय है तहां भवही प्रधान-निमित्त है किसिका सिखाया नांही है। तैसैं देवनारकीनिकै व्रतनियमतपश्चरणके अभाव होतैंभी होय है, यातैं भवप्रत्यय कहिये है। बहुरि भवप्रत्यय देवनारकीकैही है अन्यकै नांही ऐसा नियम जानना। जो ऐसैं न होय तौ भव तौ सर्वजीवनिकै साधारण है। तब सर्वहीकै याकी प्राप्ति आवै। बहुरि अवधिकी हीनाधिकप्रवृत्तिभी देखिये है। तातैं यहु क्षयोपशमका विशेष है। बहुरि देवनारकी सर्वहीकै अवधि नांही कहिये। सम्यग्दृष्टिनिहीकै अवधिज्ञान कहिये। जातैं अवधि

ऐसा सूत्रमें ग्रहण है तातें मिथ्यादृष्टीनिकै विभंगअवधि कहिये । बहुरि इनिकै हीनाधिक अवधिका व्याख्यान अन्यशास्त्रनितें जाननां ॥

आगें दूसरा भेदकूं कहै हैं—

॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥

याका अर्थ— क्षयोपशम है निमित्त जाकूं ऐसा छह भेदरूप अवधि है सो शेष जे मनुष्य तिर्यंच तिनिकै होय है ॥ तहां अवधिज्ञानावरणकर्मके देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय होतें बहुरि सर्वघातिस्पर्द्धकनिका उदय अभाव है लक्षण जाका ऐसा क्षय, बहुरि तेही सर्वघातिस्पर्द्धक उदयकूं न प्राप्त भये सत्ता अवस्थारूप उपशम है निमित्त जाकूं सो क्षयोपशमनिमित्त अवधि कहिये । सो शेष जे देवनारकीतें अवशेष रहे मनुष्य तिर्यंच तिनिकै होय है । तिनिमैंभी जिनकै अवधियोग्य सामर्थ्य होय तिनहीकै होय है । जे असैनी तिर्यंच तथा अपर्याप्तक मनुष्य तिर्यंच इस सामर्थ्यतें रहित होय, तिनिकै न होय है । बहुरि संज्ञी पर्याप्तविषैंभी सर्वहीकै न होय है केई सम्यग्दर्शनादि निमित्तकरि सहित होय । तथा जिनिकै कर्मका उपशम क्षय होय तिनहीकै होय है । इहां कोई पूछै, क्षयोपशमविनां तौ अवधि होय नांही, सूत्रमें क्षयोपशमशब्द ग्रहणका

कहा प्रयोजन है? ताकूं कहिये इहां क्षयोपशमका ग्रहण नियमकै अर्थि है। इहां क्षयोपशमही निमित्त है, भव नांही है ॥

सो यह अवधि छह भेदरूप है। अनुगामी अननुगामी वर्धमान हीयमान अवस्थित अनवस्थित ऐसे छह भेद हैं। तहां भवांतरकूं गमन करता जो जीव ताकी लारही अन्यभवमैं साथि सूर्यके प्रकाशकीज्यों चल्या जाय सो तौ अनुगामी कहिये। बहुरि जो भवांतरमैं साथि न जाय जिस भवमैं उपजै तिसहीमैं रहजाय, जैसैं पूठि पीछै प्रश्न करनेवाला पुरुषका वचन परके हृदयमैं प्रवेश न करै तैसैं यहु अवधि जाननां सो अननुगामी कहिये। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादिगुणरूप विशुद्धपरिणामनिकी वृद्धि होनेतैं जिस परिणामकूं लीये उपज्या तातैं वधताही जाय असंख्यातलोकपरिमाणस्थानकनितांई वधै जैसैं वांसानिकै परस्पर भिडनेतैं उपज्या जो अग्नि सो सूके पत्रादिक संचयरूप भया जो इंधनका समूह तापरि पज्या हूवा वधताही जाय तैसैं यह अवधि वर्धमान कहिये। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादिगुणकी हानिरूप जो संक्लेशपरिणाम तिनिकी वृद्धीके योगतैं जिस परिमाणकूं लीये उपज्या होय तातैं घटताही जाय अंगुलकै असंख्यातवै भागमात्र स्थानकनितांई घटै जैसैं परिमाणरूप है उपादानका संतान जाका ऐसा जो अग्नि ताकी शिखा घटतीही जाय तैसैं

यह अवधि हीयमान जाननां। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादिगुणका अवस्थानतैं जिस परिणामकूं लीये उपज्या तेताही रहै पर्यायके अंततांई तथा केवलज्ञान उपजै तहांतांई घटै वधै नांही, जैसैं पुरुषके कोई तिला आदिका चिन्ह जैसा है तैसाका तैसाही रहै, तैसैं यह अवधि अवस्थित जाननां। बहुरि जो सम्यग्दर्शनादि गुणके घटने वधनेके योगतैं जितने परिमाणकूं लीये उपजै तातैं वधेभी घटैभी जैसैं पवनके वेगकरि प्रेर्या जलका लहरी घटै वधै, तैसैं यह अवधि अनवस्थित कहिये। ऐसैं यह अवधि छह प्रकार हो है॥

बहुरि श्लोकवार्तिकमैं याका ऐसा व्याख्यान है– जो अवधिज्ञानावरण क्षयोपशम तौ अंतरंग कारण है। सो दोऊ प्रकारकी अवधिमैं पाईये है। याविना तौ अवधिज्ञान उपजैही नांही। तातैं यहां बाह्यनिमित्त अपेक्षा कथन कीजिये। तब भवप्रत्ययकूं तौ प्रधानकारण भवही है। बहुरि यह क्षयोपशमनिमित्तक कह्या ताकूं गुणप्रत्ययभी कहिये। तहां क्षयोपशमशब्दकरि चारित्रमोहके क्षयतैं भया.जो क्षायिकचारित्र बहुरि चारित्रमोहके उपशमतैं भया उपशमचारित्र, बहुरि दोऊतैं भया क्षयोपशमचारित्र यामैं संयमासंयमभी आय गया। ऐसैं तीन प्रकार चारित्र नामा गुण जो बाह्यनिमित्त तातैं उपजै सो क्षयोपशमनिमित्तक कहिये। ऐसा व्याख्यान है। बहुरि आगमविषैं

सप्रतिपात अप्रतिपात तथा देशावधि परमावधि सर्वावधि ए सर्व अनुगामी आदि छह भेद कहे तिनमैं अंतर्भूत जानने ॥ तहां देशावधि तौ अनुगामीभी बहुरि अननुगामीभी है । बहुरि परमावधि सर्वावधि केवलज्ञान उपजे तहांताई अनुगामीही है । बहुरि देशावधि तौ वर्धमानभी है हीयमानभी है । बहुरि परमावधि वर्धमानही है । बहुरि देशावधि तौ अनवस्थितही है । या प्रकार अवधिज्ञान तौ कह्या ॥

बहुरि ताके लगताही मनःपर्ययज्ञान कहनेयोग्य है, ताके भेदसहित लक्षणका कहनेका इच्छक आचार्य सूत्र कहै हैं—

॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— ऋजुमति तथा विपुलमति ऐसै दोय भेदरूप मनःपर्ययज्ञान है ॥ ऋज्वी कहिये सरल तथा वचन काय मनकरि कीया अरु परके मनकेविषैं प्राप्त भया ऐसा जो पदार्थ ताके जाननेतैं निपजाई जो मति कहिये ज्ञान जाकै होय, ताकूं ऋजुमति कहिये । बहुरि विपुला कहिये वक्र तथा वचन काय मनकरि कीया अरु परके मनविषैं प्राप्त भया जो पदार्थ ताकरि नांही निपजाई स्वयमेवही भई ऐसी जो मति कहिये ज्ञान जाकै होय, ताकूं विपुलमति कहिये । याका

समासकरि ऋजुविपुलमती ऐसा द्विवचन कीया है ॥ तहां मतिशब्द एकहीकरि अर्थ आय गया। तातैं दूसरा मतिशब्द न कह्या। अथवा ऐसाभी समास होय है ऋजु बहुरि विपुल ए दोऊही मति है। तातै दोऊही जहां होय ते दोऊही ऋजुविपुलमती है। ऐसैं कहनेतैं यहु मनःपर्ययज्ञान दोय प्रकार भया ऋजुमति विपुलमति ऐसैं। अब याका लक्षण कहे हैं ॥

वीर्यांतराय मनःपर्ययज्ञानावरणकर्मका तौ क्षयोपशम बहुरि अंगोपांगनामा नामकर्मका उदयका लाभके अवलंबनतैं आत्माकै परके मनके संबंधकी पाई है प्रवृत्ति जानैं ऐसा जो ज्ञानोपयोग ताकूं मनःपर्ययज्ञान कहिये। इहां कोई कहै, मनके संबंधकरि भया तातैं यामैं मतिज्ञानका प्रसंग आवै है। तहां कहिये, याका उत्तर तौ पूर्वै सामान्यज्ञानके सूत्रके व्याख्यानमैं कह्या था, इहां मन अपेक्षामात्र है उत्पत्तिकारण नाही। परके मनविषैं तिष्ठता पदार्थकूं यहु जानै है एतावन्मात्र अपेक्षा है। तहां ऋजुमतिज्ञान है सो कालतैं जघन्य तौ आपके तथा अन्यके दोय तथा तीन भवका ग्रहणकूं कहै। बहुरि उत्कृष्ट सात आठ भव कहै पहलेभी अरु अगलेभी। बहुरि क्षेत्रतैं जघन्य तौ च्यारितैं ले आठ कोशतांईकी कहै। उत्कृष्ट च्यारि योजनतैं ले आठ योजनतांईकी कहै। बाह्यकी नाही कहै। बहुरि विपुलमतिज्ञान है सो कालतैं जघन्य तौ सात आठ भव अगिले पिछलेका ग्रहण

कहै। उत्कृष्ट असंख्यात भव अगिले पिछलेका ग्रहण कहै। वहुरि क्षेत्रतैं जघन्य तौ च्यारितैं ले आठ योजनताईकी कहै। उत्कृष्ट मानुषोत्तरपर्वतकै माहिली कहै वारली न कहै ॥

ऐसैं कहे जे मनःपर्ययज्ञानके दोय भेद तिनिविषैं विशेपकी प्राप्तिके अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ विशुध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥ २४ ॥

याका अर्थ-- दोऊ मनःपर्ययज्ञानके विषैं विशुद्धि अरु अप्रतिपात इनि दोय विशेपनिकरि विशेप है। अपने आवरण जो कर्म ताके क्षयोपशम होतैं आत्माकै विशुद्धता उज्वलता होय ताकूं विशुद्धि कहिये। संयमतैं छूटनेकूं प्रतिपात कहिये, जो प्रतिपात नाही ताकूं अप्रतिपात कहिये। उपशांतमोहवाले जीवकै चारित्रमोहका उदय होतैं संयमरूप शिखरतैं प्रतिपात हो है उलटा आय पडै है। वहुरि क्षीणकपायवालेकै पडनेका कारण नाही। तातैं उलटा न आवै है अप्रतिपात हो है। इनि दोऊनिकरि ऋजुमति विपुलमति मनःपर्ययज्ञानमैं भेद है। तहां विशुद्धिकरि तौ ऋजुमतितैं विपुलमतिज्ञान द्रव्य क्षेत्र काल भावके विशेप जाननेकरि अतिशयकरि विशुद्ध है जो कार्माणद्रव्यकै अनंतवै भाग अंतका भाग सर्वावधिज्ञान जानै है। ताकूं अनंतका भाग देतैं अंतका भाग ऋजुमति मनःपर्ययज्ञानका विपय है। ताकूं अनंतभागरूप कीये अनंतका भागकूं विपुलमतिज्ञान जानै है।

इहां अनंतकी गणतिका अनंतभेद है। तातें फेरि फेरि अनंतका भाग कहा है। ऐसें द्रव्यकी अपेक्षा विशुद्धि कही। क्षेत्रकालकी पूर्वं कहीही थी। बहुरि भावकी अपेक्षा विशुद्धि अतिसूक्ष्म द्रव्यके जाननेहीतें जाननी। प्रकृष्ट क्षयोपशमके योगतें विशुद्धि घणी होय है। बहुरि अप्रतिपात करिकेभी विपुलमति विशिष्ट जाननां। जातें जाकै विपुलमति होय ताकै चारित्र वर्धमानही होय है। तातें उलटा न आवै। बहुरि ऋजुमति ज्ञानवाला कषायका उदयतें हीयमानचारित्रभी होय है। तातें उलटाभी आवै, तातें प्रतिपातीभी होय है॥

आगें, इस मनःपर्ययज्ञानका विशेष कह्या अवधि मनःपर्ययमैं काहेतें विशेष है सो कहो? ऐसें प्रश्न होतें सूत्र कहै है—

॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— अवधिज्ञान बहुरि मनःपर्ययज्ञान इनि दोऊनिमैं विशुध्दि कहिये उज्वलता, बहुरि क्षेत्र जहां तिष्ठते भावनिकूं जानैं, बहुरि स्वामी जाकै यहु ज्ञान होय सो आत्मा, बहुरि विषय ज्ञेय वस्तु इनि च्यारिके भेदतें भेदविशेष है। सोही कहिये हैं। मनःपर्ययज्ञानका विषय सूक्ष्म है, तातें तो अवधितें अतिशयकरि विशुध्द है उज्वल है। बहुरि क्षेत्र पहली कह्याही था। सो अवधिका

क्षेत्र तौ घणां है याका थोरा है। वहुरि स्वामी मनःपर्ययज्ञानका तौ प्रमत्तगुणस्थानतैं ले क्षीणकपायगुणस्थानतांई संयमीही होय है। तामैंभी उत्तमचारित्रवालाही होय। तामैंभी वर्धमानचारित्रवालाही होय है। तामैंभी सप्तविध ऋद्धिमैंसूं कोई ऋध्दिधारी होय ताहीकै होय है अन्यकै नाही होय। वहुरि तिनिमैंभी कोईसेकै होय है सर्वही ऋद्धिधारीनिकै न होय है। वहुरि अवधि है सो च्यारीही गतिके जीवनिकै होय है। ऐसैं स्वामीके भेदतैं इनिमैं भेद है। वहुरि विषयकी अपेक्षा भेद है सो आगैं कहसी ॥

आगैं केवलज्ञानका लक्षण कहनेका अवसर है। ताकूं छोडि ज्ञाननिका विषयका नियम विचारिये है। काहेतैं? जातैं केवलज्ञानका स्वरूप दशम अध्यायमैं " मोहक्षयात् " इत्यादि सूत्र कहसी। जो ऐसैं है तौ आधके मति श्रुत दोय ज्ञान तिनिका विषयनियम कहा? ऐसैं प्रश्न होतैं सूत्र कहे हैं—

॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥ २६ ॥

याका अर्थ— मति श्रुत इनि दोऊ ज्ञाननिका विषयका नियम द्रव्यनिकैविषैं केईक पर्यायविषैं है, सर्वपर्यायविषै नाही है ॥ तहां निबंध कहिये विषयका नियम। इहां कोई कहै विषयका

कैसें जान्या? विषयशब्द तौ सूत्रमैं नाही ॥ ताकूं कहिये— विषयशब्द पहले सूत्रमैं कह्या है सो लेना, ताकै विभक्तिभी लगाय लेणी। बहुरि द्रव्येषु ऐसा बहुवचनतैं सर्वद्रव्य जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल ग्रहण करने। तिनके असर्वपर्याय कहिये केईक पर्याय लेने। ऐसें केईक पर्यायनिसहित सर्वद्रव्य मतिश्रुतज्ञानके विषयभावकूं प्राप्त हो हैं। सर्वपर्यायनिसहित इनिका विषय नाही है जातैं ते पर्याय अनंत हैं। इहां कोई कहै, धर्मास्तिकायादिक जे अतींद्रिय हैं ते इंद्रियज्ञान जो मतिज्ञान ताके विषय कैसें होय? यातैं सर्वद्रव्यनिविषैं मतिज्ञान प्रवर्तै यह कहना अयुक्त है। ताकूं कहिये— ए दोष इहां नाही आवै। जातैं अनिंद्रिय कहिये मन नामा अंतरंग कारण है, तातैं नोइंद्रियज्ञानावरणकर्मके क्षयोपशमकी लब्धिपूर्वक उपयोग अवग्रहादिरूप पहली प्रवर्तै है। तातैं तत्पूर्वक श्रुतज्ञान सर्वद्रव्यनिविषैं स्वयोग्यविषै प्रवर्तै है ऐसें जाननां ॥ इहां कोई अन्यवादी कहै, जो मतिज्ञान श्रुतज्ञान तौ स्वप्नवत् है। बाह्यपदार्थकूं अवलंबीकरि नाही उपजै है। जैसें स्वप्नाका कोई बाह्यपदार्थ सत्यार्थ नाही तैसें यहभी है। ताकूं कहिये, यह कहनां अयुक्त है। जातैं ऐसें कहतैं सर्वशून्यता ठहरै है। प्रथम तौ आपकै पैला दूसरा आत्मा बाह्यार्थ है सो मतिश्रुतज्ञान ताकूं ग्रहण करै है। जो ताका अभाव मानिये तौ पैलाकै आप बाह्यार्थ है सो आपकाभी अभाव भया।

ऐसै दोऊके भावतैं सर्वशून्यता आई। वहुरि जो पैला आत्मा सत्यार्थ है तौ घटादिक पदार्थभी सत्यार्थ कैसै न होय?। इहां फेरि कोई वादी कहै, इंद्रियज्ञान तौ बाह्यपदार्थकूं अवलंबै है बहुरि स्मरणादिक तौ निरालंबन है। ताकूं कहिये— अनुभवपूर्वक स्मरणादि प्रवर्तै है, तातैं निरालंबन नांही। बहुरि श्रुतज्ञान है सोभी अर्थालंबनस्वरूप है। जातैं श्रुतज्ञानतैं वस्तुकूं जाणि जो तिस वस्तुविषैं प्रवर्तै है तहां वाधा नांही है। जो श्रुतज्ञानगोचर वस्तुविषैं बाधा नांही सो तौ श्रुतज्ञान वस्तुके आलंबनस्वरूप सत्यार्थ है। बहुरि जहां बाधा होय, सो वह श्रुतज्ञान नांही श्रुताभास है॥

आगैं मतिश्रुतके लगताही कहनेयोग्य जो अवधिज्ञान ताका विषयका नियम कहा है? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं—

॥ रूपिष्ववधेः ॥ २७ ॥

याका अर्थ— अवधिज्ञानका विषयका नियम रूपी पदार्थनिविषैं है॥ इहां सूत्रविषैं विषयनिबंधशब्दकी अनुवृत्ति पहले सूत्रनितैं लेणी। बहुरि रूपी कहनेतैं पुद्गलद्रव्य ग्रहण करनां तथा पुद्गलद्रव्यके संबंधसहित जीवद्रव्य लेने। बहुरि रूपीविषैंही विषयनिबंध है ऐसा नियम करनेतैं अरूपीद्रव्य न लैणे याके विषय नांही। बहुरि रूपीद्रव्यविषैंभी केईक पर्याय अपनेयोग्य हैं तेही

विषय हैं। सर्वपर्याय याका विषय नांहीं ॥

आगें याके लगताही कहनेयोग्य जो मनःपर्ययज्ञान ताका कहा विषयनियम है? ऐसें पूछे सूत्र कहे हैं--

॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥ २८ ॥

याका अर्थ-- सर्वावधिका विषयकूं अनंतका भाग देतैं पाया जो सूक्ष्मपुद्गलस्कंध ताविषें या मनःपर्ययज्ञानका विषयका नियम है॥ जो रूपी द्रव्य सर्वावधिज्ञानका विषय कह्या ताकूं अनंतभागरूप कीया तिस एक भागविषें या मनःपर्ययज्ञान प्रवर्तें है। इहां ऐसा जाननां, जो, परमावधिका विषयभूत पुद्गलस्कंधकूं अनंतका भाग दीये तो एक परमाणुमात्र सर्वावधिका विषय होग है। बहुरि ताकूं अनंतका भाग दीये ऋजुमति मनःपर्ययका विषय है। बहुरि ताकूंभी अनंतभाग दीये विपुलमति मनःपर्ययका विषय है। इहां कोई पूछे सर्वावधिका विषय तौ एक परमाणुमात्र कह्या ताकूं अनंतका भाग देनां कह्या सो एकपरमाणूकूं कैसैं भाग देना? तहां ऐसा उत्तर- जो, एकपरमाणूमें स्पर्श रस गंध वर्णके अनंतानंत अविभागप्रतिच्छेद हैं, तिनिके घटने वधनेकी अपेक्षा अनंतका भाग संभवै है। जैसा परमाणू अवधिज्ञान जान्या तिसके अनंतवै

भागकूं मनःपर्ययज्ञान जानै है। तथा एकपरमाणुमात्रस्कंधभी होय है। ताविषैं सूक्ष्मभाव परिणये अनंतपरमाणु होय हैं। तिस अपेक्षाभी अनंतका भाग संभवै है। तहां स्वयोग्य केईक पर्यायरूप पुद्गलस्कंध लेना सर्वद्रव्यपर्यायकाभी विषय नांही ॥

आगैं, अंतविषैं कह्या जो केवलज्ञान ताका कहा विषयनियम है? ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं—

॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥

याका अर्थ—– केवलज्ञानका विषयका नियम सर्वद्रव्य सर्वपर्यायनिविषैं है ॥ इहां द्रव्य तथा पर्याय ऐसैं इतरेतरयोग नामा द्वंद्वसमासतैं वृत्ति करणी। तहां सर्वपद दोऊके लगावणां। तब सर्वद्रव्य तथा सर्वपर्यायनिविषैं विषयनियम है ऐसा अर्थ भया ॥ तहां जीवद्रव्य तौ अनंतानंत है। बहुरि पुद्गलद्रव्य अणुस्कंधका भेदकरि जीवद्रव्यतैं अनंतानंतगुणे है। धर्म अधर्म आकाश ए तीन एक एक द्रव्य है। तातैं तीनही है। बहुरि कालद्रव्यके कालाणु असंख्यातद्रव्य हैं। तिनि सर्व द्रव्यनिके पर्याय अतीत अनागत वर्तमानरूप जुदे जुदे अनंतानंत हैं। तिनि सर्वद्रव्य सर्वपर्यायनिके समूहविषैं ऐसा किछुभी नांही है, जो, केवलज्ञानके विषयपणांकूं उलंघै। जातैं यहु ज्ञान अपरिमित माहात्म्यरूप है। ऐसा जनावनेकूं सर्वद्रव्यपर्यायविषयस्वरूप केवलज्ञान है ऐसा

कह्या है। इहां यहु विशेप अर्थ जाननां, जो कोई अन्यवादी कहै है सर्वज्ञपुरुष आत्माहीकूं जानै है। इस सिवाय पदार्थ कोई नांही। ऐसे कहनेवालेका निपेधकै अर्थि सर्वकूं जानै है ऐसा कह्या है। बहुरि द्रव्यके बहुवचन कहनेतें बहुतद्रव्यनिकी सिद्धि भई। बहुरि पर्यायशब्दकै बहुवचन कहनेतैं केई वादी वर्तमान पर्यायके ज्ञानीहीकूं सर्वज्ञ कहै है। ताका निपेध है। बहुरि जो सर्वद्रव्यका ज्ञाता न होय तौ सर्वके उपकाररूप उपदेश कैसें प्रवर्तै? जातैं धर्मअधर्मका स्वरूप अतिसूक्ष्म है। सो सर्वका ज्ञाताविना यथार्थ धर्मअधर्मका स्वरूप कैसे जानै। बहुरि ज्ञान जीवनिविपैं हीनाधिक दीखै है। सो याहीतैं जानिये है कोई जीवविपैं उत्कृष्ट अधिकतारूपभी है। ऐसें अनुमानमैं केवलज्ञानका अस्तित्व सिद्ध होय है। ऐसा ज्ञान इंद्रियादिकका सहायविना सर्वद्रव्यपर्यायनिकूं एककाल जानै है। ऐसा निर्बाध सिद्ध होय है। ताहीकै वीतरागपणा निर्दोपपणां संभवै है। बहुरि तिसहीतैं हेय उपादेय पदार्थका यथार्थ उपदेश प्रवर्तै है ऐसा निश्चय करनां ॥

आगें पूछे है, मत्यादिज्ञानका विपयनियम तौ वर्णन कीया, परंतु यह न जान्यां, जो एक आत्माविपैं एककाल अपने अपने निमित्तके निकट होतैं प्रवर्तते जे ज्ञान ते केते होय हैं? ऐसा प्रश्न होतें सूत्र कहै हैं—

॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥ ३० ॥

याका अर्थ— एक आत्माविषैं एककाल एक तथा दोय तथा तीन तथा च्यारि ऐसैं भाज्य रूप च्यारितांई होय है ॥ इहां एकशब्द संख्यावाची है। बहुरि आदिशब्द है सो अवयववाची है एक है आदि जिनकै ते एकादीनि ऐसा समास है। भाज्यानि कहिये भेदरूप करने। युगपत् कहिये एककालविषें। एकस्मिन् कहिये एक आत्माविषैं। आ चतुर्भ्यः कहिये च्यारितांई होय है। तहां एक होय तौ केवलज्ञानही होय, याकी साथ अन्य क्षायोपशमिक ज्ञान होय नांही। दोय होय तौ मतिश्रुतज्ञान होय। तीन होय तौ मतिश्रुतअवधि होय अथवा मतिश्रुतमनःपर्ययज्ञान होय। च्यारि होय तौ मतिश्रुत अवधि मनःपर्यय च्यार्‍योंही होय। पांच एककाल न होय। जातैं केवलज्ञान क्षायिक असहायरूप है ॥ इहां प्रश्न, जो क्षायोपशमिकज्ञान तौ एककाल एकही प्रवर्तता कह्या है। इहां च्यारी कैसैं कहे? ताका उत्तर, जो, ज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशम होतैं च्यारी ज्ञानकी जाननशक्तिरूप लब्धि एककाल होय है। बहुरि उपयोग इनिका एककाल एकही होय है। ताकी एक ज्ञेयतैं उपयुक्त होनेकी अपेक्षा स्थितिभी अंतर्मुहूर्तकी कही है। पीछे ज्ञेयांतर उपयुक्त होय जाय है क्षयोपशम जिनिका होय है ते लब्धिरूप एककालही है। इहां कोई कहै उपयोग

अपेक्षाभी सांकलीके भक्षण करतैं रूपादिक पांचका ज्ञान एककालही दीखै है वर्ण सांकलीका दीखै है, स्वाद लेही है। गंध वाका आवैही है। स्पर्शभी सचीकणा आदि जानैही है। भक्षण करतैं शब्द होय है। सो सुणैंही है। ऐसैं पांचका ज्ञान एककालभी देखिये है। ताकूं कहिये, जो, इहां उपयोगका फिरणकी शीघ्रता होतैं कालभेद न जान्या जाय है। जैसैं कमलका पत्र दोय च्यारिमैं सूईका प्रवेश होतैं कालभेद जान्या न जाय अरु कालभेद हैही। तैसैं इहांभी जाननां ॥

आगैं, कहे जे ज्ञान ते ज्ञानही नाम पावै हैं कि अन्यथाभी हैं? ऐसैं प्रश्न होतैं सूत्र कहै हैं—

॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— मति श्रुत अवधि ए तीन ज्ञान हैं ते विपर्ययस्वरूपभी हो हैं। चकारतैं सम्यक्भी हैं॥ विपर्यय कहिये मिथ्या, जातैं इहां सम्यक्का अधिकार है। वहुरि चशब्द समुच्चयार्थ है विपर्ययभी है, सम्यक्भी है ऐसैं भेले कहे है। इहां कोई पूछै है, इनिके विपर्यय काहेतैं होय है? ताकूं कहै हैं- मिथ्यादर्शनके उदयकरि सहित एक आत्माविषैं समवायरूप एकता होय है, तातैं विपर्यय कहिये। जैसैं कडा तूंबा गिरिसहित होय तामैं दूध क्षेपिये तौ वह दूधभी कडा हो जाय।

१ वडी पुरी.

तैसैं मिथ्यादर्शनके उदयकरि सहित ज्ञानभी मिथ्या होय है। इहां विशेष जाननां- जो, विपर्यय कहनेतैं मिथ्याज्ञान कह्या है सो संशय विपर्यय अनध्यवसायभी लेना। तथा चशब्दतैंभी इनिका समुच्चय हो है। तहां मतिश्रुतज्ञानकै तौ तीनूंही होय हैं। जातैं संशय इंद्रियमनतैंही उपजै है। यह स्थाणु है कि पुरुष है ऐसा याका स्वरूप है। सो यहु सामान्य देखै ताका विशेष न देखै तातैं तथा दोय विषयके स्मरणतैं हो है। बहुरि अवधिकी उत्पत्तिविषैं इंद्रियमनका व्यापार है नाही, तातैं सो संशयस्वरूप नाही है। बहुरि दृढ उपयोगकी अवस्थाविषैं याकै विपर्यय कहिये है। सो मिथ्यात्वश्रद्धानका सहभावपनातैं है। तथा शीघ्र उपयोग संकोचनतैं कदाकाल अनध्यवसायस्वरूपभी हो है। ऐसैं याकै दोयही होय है संशय नाही। इहां कोई प्रश्न करै है, जो कटुक तुंबाविषैं तौ आधारके दोषतैं दूध कटुक हो है ज्ञानविषैं तौ विषयका ग्रहण सम्यग्मिथ्याविषैं समान हो है। जैसैं मिथ्यादृष्टि नेत्रादि मतिज्ञानकरि रूपादिककूं देखै है तैसैंही सम्यग्दृष्टिभी देखै है। बहुरि जैसैं सम्यग्दृष्टि श्रुतज्ञानकरि रूपादिककूं जानै है पैलेनकूं कहै है तैसैंही मिथ्यादृष्टिभी कुश्रुतज्ञानकरि जानै है। तथा अन्यकूं कहै है। बहुरि अवधिज्ञानकरि सम्यग्दृष्टि जैसैं रूपीपदार्थनिकूं जानै है तैसैही मिथ्यादृष्टि विभंगज्ञानकरिभी जानै है। याका उत्तरके अर्थि सूत्र कहै हैं---

॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥

याका अर्थ—— मिथ्यादृष्टिकै विपर्यय होय है सो सत्का तथा असत्का विशेष न जाननेतैं अपनी इच्छातैं जैसैं तैसैं ग्रहण करनेतैं होय है। जैसैं मदिरादिकतैं उन्मत्त भया पुरुष अपनी इच्छातैं जैसैं तैसैं वस्तुकौं ग्रहण करै तैसैं मिथ्यादृष्टिभी छती अणछती भली बुरीका विशेष जान्यां विना अपनी इच्छातैं ग्रहण करै है॥ इहां सत् ऐसा तौ विद्यामानवस्तुकूं कहिये असत् अविद्यमानकूं कहिये। इनि दोऊनिका आविशेपेण कहिये विशेष न करै, कदा विद्यमानकूं अविद्यमान कहै, कदा विद्यमानकूं विद्यमानभी कहै, कदा अविद्यमानकूं विद्यमान कहै, कदा अविद्यमानकूं अविद्यमानभी कहै, ऐसैं अपनी इच्छातैं जैसें तैसें ग्रहणकरि कहै। तहां विपर्यय कहिये जैसैं रूपादिक वस्तु छती होय तौभी कहै नाही है। कदा अणछतीकूंभी कहै है छती है। कदा छतीकूं छतीभी कहै। कदा अणछतीकूं अणछतीभी कहै। ऐसैं मिथ्यादर्शनके उदयतैं अन्यथा निश्चय करै है। जैसैं पित्तज्वरकरि आकुलित चित्तभ्रमवाला कदाकाल तौ माताकूं भार्या कहै, कदा भार्याकूं माता कहै, कदा माताकूं माताभी कहै, कदा भार्याकूं भार्याभी कहै ऐसैं अपनी इच्छातैं मानै। तातैं जैसाकूं तैसाभी कहै है, तो ताके सम्यग्ज्ञान नांही है॥

ऐसें मत्यादिज्ञानविषें जो घटपटादिकका जैसाका तैसा ज्ञान है तौभी विपर्ययही जानना सोही कहिये हैं, कोई आत्माकेंविषै मिथ्यादर्शनका उदयतै परिणाम होय है। सो रूपादिकका ज्ञान नेत्रादिककरि जैसाका तैसाभी होय तोभी तिसविषै कारणविपर्यास भेदाभेदविपर्यास स्वरूपविपर्यास ए तीन विपर्यास उपजावे है। तहां प्रथमही कारणविपर्यासकूं कहै है। तहां रूपादिक नेत्रादिककरि दीखै तो जैसेके तैसे दीखै, परंतु मिथ्यादृष्टि ताका कारण अन्यथा कल्पै। जैसै ब्रह्माद्वैतवादी कहै है, रूपादिकनिका कारण एक अमूर्तिक नित्य ब्रह्मही है ब्रह्महीतै भये है। सांख्यमती कहै है रूपादिकनिका कारण अमूर्तिक नित्य प्रकृति है, प्रकृतितै ए उपजै है॥ बहुरि नैयायिक वैशेषिक-मती कहै है, पृथ्वी आदि जातिभेदरूप परमाणु हैं, तिनिमें पृथ्वीविषै तौ स्पर्शादि च्यारि गुण है। बहुरि अप्‌विषै गंधवर्जित तीन गुण है। बहुरि अग्निविषै स्पर्श वर्ण ए दोय गुण हैं। बहुरि वायुविषै एक स्पर्शगुणही है। ऐसैं च्यारिही अपनी अपनी जातिके स्कंधरूप कार्य निपजावै है॥ बहुरि बौद्धमती कहै है, पृथ्वी आदि च्यारि भूत है। इनिकै स्पर्श रस गंध वर्ण ए च्यारि भौतिकधर्म है। इनि आठनिका समुदायरूप परमाणु होय है। ताकूं अष्टक नाम कहिये है॥ बहुरि चार्वाकमती कहै हैं, पृथ्वी अप् तेज वायु ए च्यारि काठिण्यादि गुण, तथा द्रवत्वादि, उष्णत्वादि, ईरणत्वादि,

गुणरूप जातिभेदनै लीया परमाणु है, ते पृथ्वी आदि स्कंध निपजावे है। ऐसै तौ कारणविषे विपर्यय होय हे ॥ बहुरि भेदाभेदविपर्यास ऐसै है- जो, कारणतै कार्य सर्वथा भिन्नही है। जैसैं पृथ्वी आदि परमाणु नित्य है। तिनितैं स्कंधकार्य निपजे ते सर्वथा भिन्नही है ऐसै कहै हैं। तथा गुणतै गुणी भिन्नही है ऐसे कहै ॥ बहुरि कारणतै कार्य सर्वथा अभिन्नही है। जैसैं घटपटादि ग्रामपर्वतादि ब्रह्मतैं निपजै हैं ते ब्रम्हही हैं जुदे नांही। इत्यादि भेदाभेदविपर्यास है। जहां भेद होय तहां अभेदही कल्पना, जहां अभेद होय तहां भेदही कल्पना, ऐसैं विपर्यय है ॥

बहुरि स्वरूपविपर्यास जैसैं रूपादिक हैं ते निर्विकल्प निरंश हैं, इनिमैं अंशभेद नांही। तथा रूपादिक बाह्यवस्तु हैही नांही, तदाकार परिणया ज्ञानही है। ताके आलंबनरूप बाह्यवस्तु नांही है इत्यादि अन्यभी बहुत हैं। ते प्रत्यक्ष अनुमान प्रमाणतैं विरुध्द मिथ्यादर्शनके उदयतैं कल्पना होय है ॥ बहुरि तहां श्रद्धान प्रतीति रुचि उपजावै हैं। तातैं ते मत्यज्ञान श्रुताज्ञान विभंगज्ञान होय हैं। बहुरि सम्यग्दर्शन है सो यथार्थ वस्तुविषैं श्रद्धान रुचि प्रतीति उपजावै है। तातै तेही मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान हो हैं ॥ इहां विशेष कहै हैं— विपर्यय दोय प्रकार है। एक आहार्यविपर्यय दूसरा सहजविपर्यय। तहां मतिअज्ञान तथा श्रोत्र इंद्रिय विनां अन्य इंद्रियपूर्वकै श्रुतअज्ञान अर

विभंगज्ञान ए तो सहजविपर्यय हैं। जातैं ए परके उपदेशविना स्वयमेव प्रवर्तै है। बहुरि श्रोत्र मतिपूर्वक श्रुताज्ञान है सो आहार्यविपर्यय है। जातैं यहु परके उपदेशतैं प्रवर्तै है। तहां सत्के विषैं असत्का ज्ञान परोपदेशतैं प्रवर्तै है। सोही कहिये– स्वरूपतैं सर्ववस्तु सत्स्वरूप है।' तोभी शून्यवादी असत्स्वरूपही कहै है। बहुरि ग्रहणकरणेयोग्य वस्तु तथा ग्रहणकरणेवाला ज्ञान दोऊ स्वरूपतैं सद्रूप है। तोभी संवेनाद्वैतवादी एक संवेदनहीकूं सत् कहै है। दूसराकूं असत् ही कहै है। तथा चित्राद्वैत कहै है। तथा पुरुषाद्वैत कहै है। तथा शब्दाद्वैत कहै है। तथा बाह्यपदार्थ भिन्न हैं तिनिकूं एक विज्ञानांडकी कल्पना करै है। बहुरि बाह्यतरंग पदार्थ सादृश्यभी है। तिनिकूं सर्वथाविसदृशही कहै है। बहुरि विसदृशकूं सर्वथा सदृशही कहै है। बहुरि द्रव्य होतैंभी पर्यायमात्र कहै है। पर्याय छतै द्रव्यमात्रही कहै है। बहुरि द्रव्यपर्याय अभेद होतैंभी भेदरूपही कहै है। तथा अवक्तव्यही कहै है। बहुरि ध्रौव्यरूप होतैंही उत्पादव्ययरूपही कहै है। तैसैंही विशेषकरि जीव होतैंभी जीवका नास्ति कहनां। बहुरि अजीव होतैंभी तिसका असत्त्व कहनां। बहुरि कर्मका आस्रव होतैंभी ताका अभाव कहनां। तैसैंही संवर, निर्जरा, मोक्ष, होतैंभी तिनिका अभाव कहनां। ऐसैंही जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल, द्रव्यनिके होतैंभी तिनिका अभाव कहनां। इत्यादि अनेक प्रकार छती वस्तूकूं

अणछती कहनां अनेकप्रकार जाननां । बहुरि अणछतीकूं छती कहनां । जैसैं पररूपादिककरि वस्तु असत्स्वरूप है तोभी तिसको सर्वथा सत्स्वरूप कहनां । इत्यादिक पहलै कहे तिसका उलटा जाननां॥

बहुरि देशकालस्वभावकरि अदृष्ट जे पदार्थ तिनिविषैं बौद्धमतीनिकै संशय है । केई शून्यवादीनिकै पृथ्वी आदिक तत्त्वनिविषैं संशय है । बहुरि केईकनिकै सर्वज्ञके अस्तित्वविषैं संशय है । बहुरि केईकनिकै प्रलापमात्रके आश्रयतैं सर्वही तत्त्वविषैं अनध्यवसाय है । ते कहै है काहेतैं निर्णय कीजिये ? हेतुवादरूप तर्कशास्त्र है ते तो कही ठहरै नांही । बहुरि आगम है ते जुदे जुदे हैं, कोई कछू कहै कोई कछु कहै तिनिका ठिकानां नाही । बहुरि सर्वका ज्ञाता कोई मुनि प्रत्यक्ष नांही ताके वचन प्रमाण कीजिये । बहुरि धर्मका स्वरूप यथार्थ सूक्ष्म है सो कैसैं निर्णय होय ? तातैं जो बडा जिस मार्ग चले आये तैसैं चलनां प्रवर्तनां, निर्णय होता नांही, ऐसैं अनध्यवसाय है ॥

ऐसैंही मतिज्ञानरूप विनां उपदेश सहजविपर्यय होय है । ताके भेद अवग्रहादि तथा स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क । स्वार्थानुमानकरि पदार्थकूं अन्यथा ग्रहण करनेतैं विपर्यय होय है । तहां स्वार्थानुमान विपर्ययरूप हेत्वाभास च्यारि प्रकार है असिद्ध विरुद्ध अनेकांतिक अकिंचित्कर । सो इनिका स्वरूप परीक्षामुख न्यायदीपिकादि शास्त्रनितैं जाननां । बहुरि शास्त्रके वाक्यके अर्थ करनेविषैं

विपर्यय हो है। जैसे केई नियोगकूं वाक्यार्थ कहै है। केई भावनाकूं वाक्यार्थ कहै है। केई धात्वर्थकूं वाक्यार्थ कहै है। केई विधिकूं वाक्यार्थ कहै है। केई यंत्रारूढकूं वाक्यार्थ कहै है। केई अन्यापोह कहिये निषेधकूं वाक्यार्थ कहै है। इत्यादि वाक्यार्थविषैं विपर्यय है। तिनिकी चरचा श्लोकवार्तिक तथा देवागमस्तोत्रकी टीका अष्टसहस्रीविषैं है तहांतैं समझणी॥ बहुरि अवधिज्ञानविषैं विपर्यय देशावधिहीं होय है। परमावधि सर्वावधि मनःपर्यय है ते केवलज्ञानकीज्यौं विपर्ययरूप नांही होय है। जातैं सम्यग्दर्शन विनां होते नाही। ऐसै प्रमाण अप्रमाणका भेद दिखावनेकै अर्थि विपर्ययज्ञानका स्वरूप कह्या॥

आगैं, प्रमाण तौ परोक्ष प्रत्यक्षरूप दोय प्रकार ज्ञानहीकूं कह्या। बहुरि प्रमाणके एकदेश जे नय ते "प्रमाणनयैरधिगमः।" ऐसा सूत्रविषैं प्रमाणकै अनंतर नय नाममात्र कहे तिनका निर्देश करना। ऐसा प्रश्न होतैं सूत्र कहै है—

॥ नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवम्भूता नयाः ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, एवंभूत ऐसैं ये सात नय हैं॥ इनिका सामान्यलक्षण बहुरि विशेषलक्षण कहनेयोग्य है। तहां अनेकधर्मस्वरूप जो वस्तु

ताविषें अविरोधकरि हेतुरूप अर्पण करनेतें साध्यके विशेषका यथार्थस्वरूप प्राप्त करनेकूं व्यापाररूप जो प्रयोग करना सो नयका सामान्यलक्षण है। इहां कोई कहै नयका सामान्यलक्षण कीया सो हेतुरूपही भया, जातें साध्यकूं प्राप्त करै सोही हेतु। ताकूं कहिये, हेतु तौ जिस साध्यकूं साधै तहांही रहै। बहुरि लक्षण है सो सर्वनयनिमें व्यापै, तातै सामान्यलक्षण हेतु नांही है। बहुरि कोई कहै, एकधर्मकै दूसरा धर्मतें विरोध है। सो धर्मके ग्राहक नयनिकैभी विरोध है। तहां अविरोध कैसे होय? ताकूं कहिये, जो प्रत्यक्ष अनुमानकरि बाधित ऐसा सर्वथा एकांतरूपकरि ग्रहण करनां सो तौ विरुद्धरूप है– नयाभास है। बहुरि जो वस्तुका धर्म कथंचित्प्रकार अनेकांतस्वरूप ग्रहण करै, सो सर्वनय समानधर्मरूप भये। तिनिमें विरोध काहेका? जैसें साध्यवस्तुका समानधर्मरूप दृष्टांत कहिये, तामें विरोध नांही तैसें इहाभी अविरोध है। याका उदाहरण, जैसें सर्ववस्तु सद्रूप है। जातें अपने द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं लीये है ॥

सो यह नय संक्षेपतें दोय प्रकार है, द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक ऐसें। तहां द्रव्य तथा सामान्य तथा उत्सर्ग तथा अनुवृत्ति ए सर्व एकार्थ है। ऐसा द्रव्य जाका विषय सो द्रव्यार्थिक है। बहुरि पर्याय तथा विशेष तथा अपवाद तथा व्यावृत्ति ए सर्व एकार्थ है। ऐसा पर्याय जाका विषय सो

पर्यायार्थिक है। इनि दोऊनिके भेद नैगमादि है। तहां नैगम, संग्रह, व्यवहार, ए तीन तौ द्रव्यार्थिक है। बहुरि ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ, एवम्भूत ऐ च्यारि पर्यायार्थिक है। तामैं भी नैगम, संग्रह व्यवहार, ऋजुसूत्र ए च्यारि तौ अर्थकूं प्रधानकरि प्रवर्तैं है तातैं अर्थनय कहिये। बहुरि शब्द समभिरूढ एवंभूत ए तीन शब्दकूं प्रधानकरि प्रवर्तैं है तातैं शब्दनय कहिये। इहां कोई पूछै, पर्यार्थिक तौ नय कह्या अरु गुणार्थिक न कह्या सो कारण कहां? ताका उत्तर सिद्धांतमैं पर्याय सहभावी क्रमभावी ऐसैं दोय प्रकार कहे है। तहां सहभावी पर्यायकूं गुण संज्ञा कही है। क्रमभावीकूं पर्याय संज्ञा कही है। तातैं पर्याय कहनतैं यामैं गुणभी जानि लेना ऐसैं जाननां। विस्तारकरि ए सात नय कहे। बहुरि अतिविस्तारकरि नय संख्यात है। जातैं जेते शब्दके भेद हैं तेतेही नय कहे हैं ॥

अन्यमती बौद्धतौ विज्ञान, वेदना, संज्ञा, संस्कार, रूप ए पांच स्कंध कहे हैं। बहुरि नैयायिक प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धांत, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रहस्थान ऐसै सोलह पदार्थ कहे हैं। बहुरि वैशेषिक द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव, ऐसै सात पदार्थ कहे हैं। बहुरि सांख्य एक तौ प्रकृति, बहुरि

प्रकृतिके विकार प्रधान १। अहंकार २। कर्मेंद्रिय ५। ज्ञानेंद्रिय ५। मन १। स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द ए ५। तन्मात्रा; बहुरि पृथ्वी अप् तेज वायु आकाश ए पंचभूत ऐसैं तेईस प्रकृतिके विकार बहुरि एक पुरुष निर्विकार ऐसै पचीस तत्त्व कहै हैं। ते सर्वही द्रव्यपर्यायसामान्यविषें अंतर्भूत है । कथंचित् वस्तुधर्म हैं। तातैं सुनयके विषय हैं। बहुरि अन्यवादी इनिकूं सर्वथाएकांत अभिप्रायकरि कल्पे हें। सो तिनिका अभिप्राय मिथ्या है ऐसैं जाननां।

आगैं नयनिका विशेपलक्षण कहैं हैं। तहां प्रथमही नैगमका कहै हैं। अपने सन्मुख वर्तमानकालविषैं पूर्ण रच्या हुवा वस्तु नांही, ताका अपने ज्ञानविषैं संकल्प करनां जो 'यहु वस्तु इस वर्तमानकालमैं है–' ऐसै संकल्पका ग्रहण करनेवाला अभिप्राय सो नैगमनय है। इहां उदाहरण, जैसैं काहू पुरुषकूं कोई पुरुष कुंहाडी लीये चालताकूं पूछी "तूं कौण अर्थ जाय है?" तब वह कहै, मैं प्रस्थ लेनेकूं जाऊं हूं। तहां वाकैं प्रस्थ अवस्था निकट बण्या विद्यमान नांही। जायकरि लकडी काटि प्रस्थ बणावैगा, तब होगा। परंतु वाके मनविषैं ज्ञानमैं प्रस्थका संकल्प विद्यमान है, सोही इस नैगमनयका विषय है। इहां प्रस्थ ऐसा परिमाणविशेपका नाम है। लकडीके पाई, माणी इत्यादि धान्य तोलणेके बणे हैं, ताका नाम है। तथा कोई याका अर्थ लकडीका भाराभी कहै हैं।

तथा कोई पुरुष इंधन जल आदि सामग्री भेली करै था, ताकूं कोई पूछी, तूं कहा करै है? तब वह कहै, मै भात पचाऊं हूं, तब तहां भात अवस्था तिसकै निकट वर्तमान नांही, भात पचैगा तब होयगा। तथापि तिस भातकै अर्थि व्यापार करतैं आगामी भात पचैगा ताका संकल्प याके ज्ञानमै विद्यमान अनुभवगोचर है। सो यहु संकल्प नैगमनयका विषय है। ऐसीही विना रची दूर क्षेत्र कालमैं वर्तती जो वस्तु ताका संकल्पकूं यहु नैगमनय अपना विषय करै है॥ इहां कोई पूछै- आगामी होणी विषैं वर्तमान संज्ञा करी। तातैं यहु तौ उपचारमात्र भया॥ ताकूं कहिये- बाह्य वस्तुकी याकै मुख्यता नांही, अपने ज्ञानका संवेदनरूप संकल्प विद्यमान है। सो याका विषय है। तातैं उपचारमात्र नांही। बहुरि याका विषय एकही धर्म नांही, अनेक धर्मनिका संकल्प है, तातैंभी याकूं नैगम कह्या है। दोय धर्म तथा दोय धर्मी, तथा एक धर्मी एक धर्म ऐसैं याके अनेकप्रकार संकल्पतैं अनेकभेद हैं। कोई कहै, ऐसैं तौ दोऊनिके ग्रहण करनेतैं यह प्रमाणही भया। ताकूं कहिये, प्रमाण तौ दोऊनिकूं प्रधानकरि जानै है। यहु नैगम दोऊमैं एककूं प्रधान करै है, एककूं गौण करै है, ऐसा विशेष जाननां॥

या नैगमके भेद तीन हैं। द्रव्यनैगम, पर्यायनैगम, द्रव्यपर्यायनैगम। तहां द्रव्यनैगमके दोय

भेद है शुद्धद्रव्यनैगम अशुद्धद्रव्यनैगम। बहुरि पर्यायनैगमके तीन भेद, अर्थपर्यायनैगम व्यंजनपर्यायनैगम, अर्थव्यंजनपर्यायनैगम। बहुरि द्रव्यपर्यायनैगमके च्यारि भेद शुद्धद्रव्यार्थपर्यायनैगम, अशुध्दद्रव्यार्थपर्यायनैगम, शुध्दद्रव्यव्यंजनपर्यायनैगम अशुध्दद्रव्यव्यंजनपर्यायनैगम। ऐसै नैगमनयके नव भेद भये। तहां उदाहरण— जो, संग्रहनयका विषय सन्मात्र शुध्दद्रव्य है ताका यहु नैगमनय संकल्प करै है जो सन्मात्र द्रव्य समस्तवस्तु है, ऐसै कहे तहां सत्‌तौ विशेषण भया तातैं गौण है। बहुरि द्रव्य विशेष्य भया तातैं मुख्य है। यहु शुध्दद्रव्यनैगम है। बहुरि जो पर्यायवान् है सो द्रव्य है, तथा गुणवान है सो द्रव्य है ऐसा व्यवहारनय भेदकरि कहै है। ताका यहु नैगमनय संकल्प करै है। तहां पर्यायवान् तथा गुणवान् यहु तौ विशेषण भया, तातैं गौण है। बहुरि द्रव्य विशेष्य भया तातैं मुख्य है। ऐसैं अशुद्धद्रव्यनैगमनय भया॥ बहुरि प्राणीकै सुखसंवेदन है सो क्षणध्वंसी है ऐसैं क्षणध्वंसी ऐसा तौ सत्ताका अर्थपर्याय है सो विशेषण है। बहुरि सुख है सो संवेदनका अर्थपर्याय है सो विशेष्य भया तातैं मुख्य है। तातैं यहु अर्थपर्यायनैगम भया॥ बहुरि पुरुषविषैं चैतन्य है सो सत् है इहां सत् नामा व्यंजनपर्याय है सो विशेषण है। बहुरि चैतन्यनामा व्यंजनपर्याय है सो विशेष्य है तातैं मुख्य है। यहु व्यंजनपर्याय नैगम है। बहुरि धर्मात्माविषैं

सुखजीवीपणां है। इहां सुख तौ अर्थपर्याय है सो विशेषण है। बहुरि जीवित व्यंजनपर्याय है सो विशेष्य है, तातैं मुख्य है। यहु अर्थव्यंजनपर्यायनैगम है। बहुरि संसारविषैं सत् विद्यमान सुख है सो क्षणमात्र है। इहां सत् शुद्धद्रव्य है सो विशेषण है। सुख है सो अर्थपर्याय है सो विशेष्य है, तातैं मुख्य है। यह शुद्धद्रव्य अर्थपर्याय नैगम भया॥ बहुरि विषयी जीव है सो एक क्षण सुखी है इहां जीव है सो अशुद्धद्रव्य है सो विशेष्य है। सुख है सो अर्थपर्याय है सो विशेषण है तातैं गौण है। यहु अशुद्धद्रव्य अर्थपर्यायनैगम भया॥ बहुरि चित्सामान्य है सो सत् है इहां सत् ऐसा शुद्धद्रव्य है सो तौ विशेषण है तातैं गौण है। चित् है सो व्यंजनपर्याय है सो विशेष्य है तातैं मुख्य है। ताका यहु शुद्धद्रव्यव्यंजनपर्यायनैगम भया॥ बहुरि जीव है सो गुणी है इहां जीव है सो अशुद्धद्रव्य है, सो विशेष्य है सो मुख्य है। बहुरि गुण है सो व्यंजनपर्याय है, सो विशेषण है तातैं गौण है। यह अशुद्धद्रव्यव्यंजनपर्याय नैगम भया। ऐसैं नैगमनयके नव भेद हैं ते संग्रहादि छह मिले पंघरा होय है॥

आगैं संग्रहनयका लक्षण कहै हैं। अपनी एक जातिके वस्तुनिकूं अविरोध करिये एकप्रकार-पणांकूं प्राप्तिकरि जिनमें भेद पाईये ऐसे विशेषनिकूं अविशेषकरि समस्तकूं ग्रहण करै ताकूं संग्रहनय

कहिये। इहां उदाहरण। जैसैं सत् ऐसा कहतैं सत् ऐसा वचनकरि तथा ज्ञानकरि अन्वयरूप जो चिन्ह ताकरि अनुमानरूप कीया जो सत्ता ताके आधारभूत जे सर्व वस्तु तिनिका अविशेषकरि संग्रह करै जो सर्वही सत्तारूप है ऐसैं संग्रहनय होय है। तथा द्रव्य ऐसा कहते जो गुणपर्यायनिकरि सहित जीव अजीवादिक भेद तथा तिनिके भेद तिनिका सर्वनिकी संग्रह होय है। तथा घट ऐसा कहतै घटका नाम तथा ज्ञानके अन्वयरूप चिन्हकरि अनुमानरूप कीये जे समस्त घट तिनिका संग्रह होय है। ऐसैं अन्यभी एकजातिके वस्तुनिकूं मेला एककरि कहै तहां संग्रह जानना। तहां सत् कहनेतैं सर्ववस्तूका संग्रह भया। सो यहु तौ शुद्धद्रव्य कहिये। ताका सर्वथा एकांत सो संग्रहाभास कुनय है। सो सांख्य तौ प्रधानकूं ऐसा कहै हैं। बहुरि व्याकरणवाले शब्दाद्वैतकूं कहै हैं। वेदांती पुरुषाद्वैत कहै हैं। बौद्धमती संवेदनाद्वैत कहैं हैं। सो ये सब नय एकांत है। बहुरि या नयकूं परसंग्रह कहिये। बहुरि द्रव्यमैं सर्वद्रव्यनिका संग्रह करै। पर्यायमैं सर्वपर्यायनिका संग्रह करै सो अपरसंग्रह है। ऐसेही जीवमैं सर्वजीवनिका संग्रह करै। पुद्गलमैं सर्वपुद्गलनिका संग्रह करै। घटमैं सर्व घटनिका संग्रह करै। इत्यादि जानना॥

आगैं व्यवहारनयका लक्षण कहै हैं। संग्रह नयकरि ग्रहण कीये जे वस्तु तिनिका विधिपूर्वक

व्यवहरण कहिये भेदरूप करणां सो व्यवहारनय है। कोई पूछै विधि कहां? ताकूं कहिये जो संग्रहकरि ग्रह्या पदार्थ है ताहीकूं पहलीले अरु भेद करै सो विधि कहिये, जैसैं संग्रहकरि सत् ग्रहण कीया सो जो विशेषकी अपेक्षा रहित होय तौ तासूं व्यवहार प्रवर्तै नांही। तातैं व्यवहारनयका आश्रय करिये तब ऐसैं कहिये, जो सत् कह्या सो द्रव्यरूप है, तथा गुणरूप है ऐसैं सत्‌विषैं भेदकरै तब व्यवहार प्रवर्तै। तथा द्रव्य ऐसा संग्रह ग्रहण कीया सोभी विशेषनिकी अपेक्षा रहित होय तौ व्यवहार प्रवर्तै नांही। तातैं व्यवहारका आश्रय लीजिये तब द्रव्य है सो जीवद्रव्य है तथा अजीवद्रव्य है; ऐसैं भेदकरि व्यवहार प्रवर्तै। ऐसैही जीवद्रव्यका संग्रह होय तामैं देव नारकादि भेद होय अजीवका संग्रह करै तब घटादिकका भेद होय। ऐसै यहु नय तहांताईं चल्या जाय जहां फेरि भेद न होय। सो जहां ऋजुसूत्रका विषय है ताकै पहलैताईं संग्रह व्यवहार दोऊ नय चले जाय है।

आगैं ऋजुसूत्र नयका लक्षण कहै हैं। ऋजु कहिये सरल सूधा सूत्रयति कहिये करै है ताकूं ऋजुसूत्र कहिये। तहां पूर्व कहिये पहलै, अतीत-गये, तथा अपर कहिये पीछै होयगा ऐसै तीन कालके गोचर जे भाव तिनिकूं उलंघिकरि वर्तमानकाल पर्यायमात्रका ग्रहण करनेवाला यहु ऋजुसूत्रनय है। जातैं अतीत तौ विनशि गये। बहुरि अनागत उपजेही नांही। तिनिकरि तौ

व्यवहारका अभावही है। तातैं वर्तमानहीतैं व्यवहार प्रवर्तै है। इहां कोई कहै है अतीत अनागतकाभी लोकविषैं व्यवहार है सो कैसे चलै? ताकूं कहिये या नयका तौ यहुही विषय है सो दिखाया। वहुरि लोकव्यवहारतौ सर्वनयके समूहकरि साधनें योग्य है। जहां जैसी नयका कार्य होय तहां तैसा नय ग्रहण करनां। या नयका सर्वथा एकांत अभिप्राय बौद्धमती करै है। द्रव्यकातौ लोप करै है। क्षणस्थायी वस्तु कहै है। तिनिकै सर्वव्यवहारका लोप आवै है॥

आगैं शब्दनयका लक्षण कहै हैं। लिंग, संख्या, साधन, इत्यादिकका व्यभिचारकूं दूरि करनेविषैं तत्पर सो शब्दनय है। तहां प्रथमही लिंगव्यभिचार स्त्रीलिंगविषैं पुरुषलिंग कहना, जैसैं, तारका यह स्त्रीलिंग है ताकूं स्वाति ऐसा पुरुषलिंग कहना। वहुरि पुरुषलिंगविषैं स्त्रीलिंग कहना, जैसैं, अवगमः ऐसा पुरुषलिंग है ताकूं विद्या ऐसा स्त्रीलिंग कहनां। वहुरि स्त्रीलिंगविषैं नपुंसकलिंग कहनां, जैसैं, वीणा ऐसा स्त्रीलिंग है ताकूं आतोद्य ऐसा नपुंसकलिंग कहनां। वहुरि नपुंसकलिंगविषैं स्त्रीलिंग कहनां, जैसैं, आयुध ऐसा नपुंसकलिंग है, ताकूं शक्ति ऐसा स्त्रीलिंग कहनां। वहुरि पुरुषलिंगविषैं नपुंसकलिंग कहना, जैसें पट ऐसा पुरुषलिंग है, ताकूं वस्त्र ऐसा नपुंसकलिंग कहनां। वहुरि नपुंसकलिंगविषै पुरुषलिंग कहनां, जैसैं, द्रव्य ऐसा नपुंसकलिंग है, ताकूं परशु ऐसा

पुरुषलिंग कहनां। बहुरि एकही वस्तूके तीनूं लिंग कहनां, जैसें, तारका यहु स्त्रीलिंग है, ताहीकूं पुष्यः ऐसा पुरुषलिंग तथा नक्षत्र ऐसा नपुंसकलिंग कहनां। इत्यादि लिंगव्यभिचार है। बहुरि संख्याव्यभिचार एकवचनविषैं द्विवचन, जैसें नक्षत्र ऐसा एकवचन है, तहां पुनर्वसू ऐसा द्विवचन कहनां। बहुरि एकवचनविषैं बहुवचन, जैसें नक्षत्र ऐसा एकवचन है, तहां शतभिषजा ऐसा बहुवचन कहनां। बहुरि द्विवचनविषैं एकवचन, जैसें 'गोदौ' ऐसा द्विवचन है, तहां ग्रामः ऐसा एकवचन कहनां। बहुरि द्विवचनविषैं बहुवचन, जैसें, पुनर्वसू ऐसा द्विवचन है, तहां पंचतारका ऐसा बहुवचन कहनां। बहुरि बहुवचनविषैं एकवचन, जैसें, आम्रा ऐसा बहुवचन है, तहां वन ऐसा एकवचन कहनां। बहुरि बहुवचनविषैं द्विवचन, जैसें, देवमनुष्याः ऐसा बहुवचन है, तहां उभौ राशी ऐसा द्विवचन कहनां। ऐसें संख्याव्यभिचार है॥

बहुरि साधनव्यभिचार, ताकूं पुरुषव्यभिचारभी कहिये "एहि मन्ये रथेन यास्यसि। नहि यास्यसि। न यातस्ते पिता" याका अर्थ– एहि ऐसा मध्यमपुरुषका एकवचन है, तथापि याका 'एमि' ऐसा अर्थ करनां, जो, मैं जाऊं हूं सो। 'मन्ये' ऐसा उत्तमपुरुषका एकवचन है, तहां मध्यमपुरुषका 'मन्यसे' ऐसा कहना, जो, तूं ऐसैं मानै है। जामैं 'रथेन' कहिये रथ चढि।

यास्यसि याका 'यास्यामि' ऐसा कहनां, जो, जाऊंगा सो। 'नहि यास्यसि' कहिये नांही जायगा, तेरा पिताभी ऐसें गया नांही। भावार्थ– हास्यका प्रसंगविषैं ऐसा कहनां होय है। जो तूं मानै है मै रथ चढिकरि जाऊं, सो ऐसें तेरा पिताभी न गया, तूं कैसा जायगा? तहां तूं कहनेकी जायगा तौ हूं कहनेका शब्द कह्या। वहुरि हूं कहनेकी जायगा तूं कहनेका शब्द कह्या। तव पुरुषव्यभिचार भया॥

वहुरि कालव्यभिचार; जैसैं "विश्वदृश्वाऽस्य पुत्रो जनिता" याका अर्थ– जिहि विश्व कहिये लोककूं देख्या सो पुत्र याकै होसी। विश्वकूं देख्या यहु तौ अतीतकालवाचक शब्द है। वहुरि जनिता यहु आगामी कालवाचक शब्द है। सो इहां कालव्यभिचार भया। वहुरि 'भाविकृत्य-मासीत्' ऐसें कहै, तैं भावि कहिये होणहार कार्य 'आसीत्' कहिये हूवा, सो इहांभी अतीत अनागतकालका व्यभिचार भया॥

वहुरि उपग्रहव्यभिचार, जो 'तिष्ठति' ऐसा परस्मैपद धातु है, ताका 'संतिष्ठते' 'प्रतिष्ठते' ऐसा भया। वहुरि 'रमते' ऐसा आत्मनेपदी धातु है ताका 'विरमति उपरमति' ऐसा भया। ऐसें उपसर्गके वलतैं आत्मनेपदी धातूका परस्मैपदवचन भया। वहुरि परस्मैपदीका आत्मनेपदी भया। ऐसे उपग्रहव्यभिचार है॥

बहुरि कारकव्यभिचार 'सेना पर्वतमधिवसति' इहां सेना पर्वतके समीप वसै है ऐसा आधार है, सो सप्तमी विभक्ति चाहिये, तहां द्वितीया कही। तातैं कारकव्यभिचार भया। याप्रकार व्यवहार नय है ताहि अन्याय मानै है। जातैं अन्य अर्थका अन्य अर्थकरि संबंध होय नांही। जो अन्य अर्थका अन्यतैं संबंध होय, तो घटका पट होय जाय, पटका महल हो जाय। तातैं जैसा लिंग आदि होय तैसाही न्याय है। इहां कोई कहै, लोकविषैं तथा शास्त्रविषैं विरोध आवैगा। ताकूं कहिये, विरोध आवै तौ आवो, इहां तौ यथार्थस्वरूप विचारिये है। औषधी रोगीकी इच्छाकै अनुसार तौ है नांही ॥

आगैं, समभिरूढनयका लक्षण कहै हैं। नाना अर्थनिविषैं समभिरोहणात् कहिये प्राप्त होनेतैं समभिरूढ है। जातैं एकशब्दके अनेक अर्थ हैं, तिनिमैंसूं कोई एक अर्थकूं ग्रहणकरि तिसहीकूं कह्या करै, जैसैं, गौ ऐसा शब्द वचनादि अनेक अर्थविषैं वर्तै है। तौभी गऊ नाम पशुका ग्रहणकरि तिसहीकूं गऊ कहै। अथवा शब्दका कहना है, सो अर्थगतिकै अर्थि है। तहां एक अर्थका एकही शब्दकरि गतार्थपणा है, तातैं वाका दुसरा पर्यायशब्द कहिये नाम कहनां सो निष्प्रयोजन है। इहां कोई कहै, शब्दका तौ भेद है। ताकूं कहिये अर्थभेदभी अवश्य चाहिये। ऐसैं यहु समभि-

रूढनय नाना अर्थविषैं प्राप्त होय है, तातैं समभिरूढ है। जैसैं इंदनात् कहिये परमैश्वर्यरूप क्रिया करै तब इंद्र है। शकनात् कहिये समर्थरूप वर्तैं तब शक्र कहिये। पूर्दारणात् कहिये पुरके विदारणक्रियारूप वर्तैं तब पुरंदर है। ऐसैं यहु समभिरूढनय एकही अर्थकूं ग्रहणकरि प्रवर्तै है। अथवा जो जहां प्राप्त है तहांही प्राप्त होय करि वर्तै है, तातैं समभिरूढ है। जैसैं काहूकूं कोई पूछै तूं कहां तिष्ठै है? वह कहै, मैं मेरे आत्माविषैं तिष्ठूं हूं ऐसैंभी समभिरूढ है। जातैं अन्यका अन्यविषैं प्रवर्तना न हो है। जो अन्यका अन्यविषैं प्रवृत्ति होय, तौ ज्ञानादिककी तथा रूप आदिककी आकाशविषैंभी वृत्ति होय। सो है नांही ॥

आगैं एवंभूतनयका लक्षण कहै हैं। जिस स्वरूपकरि जो वस्तु होय तिसही स्वरूपकरि ताकूं कहै, निश्चय करावै सो एवंभूत है। जो वस्तु जिस नामकरि कहिये तिसही अर्थकी क्रियारूप परिणमता होय तिसही काल वा वस्तूकूं तिस नामकरि कहै अन्यकाल अन्यपरिणतिरूप परिणमताकूं तिस नामकरि न कहै। जैसैं इंद्र ऐसा नाम है, सो परमैश्वर्यरूप क्रिया करता होय तबही इंद्र कहै, अभिषेक करतैं तथा पूजा करतैं ताकूं इंद्र न कहै। तथा जिस काल गमन करै तिस कालही गऊ कहै बैठीकूं गऊ न कहै सूतीकूं गऊ न कहै। अथवा जिस स्वरूपकरि जिसका ज्ञान

तदाकार भया होय तिसही स्वरूपकरि निश्चय करावे। जैसें इंद्रका आकाररूप ज्ञान परिणया होय तथा अग्निका आकाररूप ज्ञान भया होय तिस ज्ञान सहित आत्माकूं इंद्र तथा अग्नि कहै। इहां कोई कहै नामक्रियारूप परिणयाकूंही कहै तौ नामके कारण तो जाति, गुण, द्रव्यभी है तिनकूं कैसे कहै? ताकूं कहिये, जेते जाति आदिकतैं भये नाम हैं ते सर्वही क्रियाविषैं अंतर्भूत हैं विनाक्रिया निष्पत्ति नांही। जैसें जातिवाची अश्वशब्द है, सोभी शीघ्रगमन क्रिया करै, ताकूं अश्व कहिये, ऐसे क्रियावाची होय है। तथा शुक्ल ऐसा गुणवाची शब्द है, सो शुचिक्रियारूप परणवै, ताकूं शुक्ल कहिये, ऐसे क्रियावाची होय है। तथा दंडी ऐसा संयोगी द्रव्यवाची है, सोभी दंड जाकै होय ताकूं दंडी कहिये, ऐसै क्रियावाची होय है। तथा विषाणी ऐसा समवायद्रव्यवाची शब्द है, सोभी विषाण कहिये सींग जाकै होय, ताकूं विषाणी कहिये। ऐसैही वक्ताकी इच्छातै भया नाम, जैसै देवदत्त ऐसा काहूका नाम वक्ता कह्या ताकाभी जब स्वार्थ करिये, तब जो देव दीया होय, तथा देवनिमित्त दे, ताकूं देवदत्त कहिये, ऐसै क्रियावाची होय है, ऐसै जानना ॥

ऐसै ए नैगमादिक नय कहे ते आगे अल्पविषय है। तिस कारणतै इनिका पाठका अनुक्रम है। पहले नैगम कह्या ताका तो वस्तु सद्रूप तथा असद्रूप इत्यादि अनेकधर्मरूप है। ताका

संकल्प विषय है। सो यह नयतौ सर्वतैं महाविषय है। याकै पीछे संग्रह कह्या सो याका विषय सत् द्रव्यत्व आदिही है। इनिकै परस्पर निषेधरूप जो असत् आदि सो विषय नांही है। तातै तिसते अल्पविषय है। बहुरि याके पीछै व्यवहार कह्या सो याका विषय संग्रहके विषयका भेद है। तहां अभेद विषय रहि गया। तातैं तिसतैं अल्पविषय है। बहुरि याकै पीछे ऋजुसूत्र कह्या सो याका विषय वर्तमानमात्र वस्तुका पर्याय है सो अतीत अनागत रहि गया। तातैं तिसतैं अल्प विषय है। याके पीछै शब्दनय कह्या सो याका विषय वस्तुकी संज्ञा है। एक वस्तूके अनेक नाम हैं। तहां काल कारक लिंग संख्या साधन उपग्रहादिक भेदतैं अर्थकूं भेदरूप कहै। सो इनिका भेद होतैंभी वर्तमानपर्यायरूप वस्तूकूं अभिन्न मानता जो ऋजुसूत्र तातैं अल्पविषय भया। जातैं एक भेद करतैं अन्य भेद रहि गये। बहुरि याकै पीछे समभिरुढ कह्या, सो एक वस्तुके अनेक नाम हैं तिनिकूं पर्यायशब्द कहिये तिनि पर्यायशब्दनिका एकही अर्थ मानता जो शब्दनय तातैं समभिरूढ अल्प विषय है। तातैं तिनि पर्यायशब्दनिके जुदे जुदेभी अर्थ हैं। सो यह जिस शब्दकूं पकडै तिसही अर्थरूपकूं कहै। तब अन्य शब्द यातैं रहि गये तातैं अल्पविषय भया। बहुरि एवंभूत याके पीछै कह्या। सो याका विषय जिस शब्दकूं पकड्या तिस क्रियारूप परिणमता पदार्थ है। सो अनेक-

क्रिया करना। एकही कहता जो समभिरूढ तातैं अल्पविषय भया। ऐसैं उत्तरोत्तर अल्पविषय है।

इहां दृष्टांत, जेसैं एक नगरविषैं एक वृक्ष उपरि पक्षी बोले था, ताकूं काहूंनैं कही, या नगर-विषैं पक्षी बोलै है। काहूनैं कही, या नगरमैं एक वृक्ष है तामैं बोलै है। काहूनैं कही, या वृक्षका एक बडा डाला है तामैं बोलै है। काहूंनैं कही, इस डालेमैं एक शाखा छोटी डाली है तामैं बोलै है। काहूनैं कही, इस डाहलेके एक देशविषैं बेठा बोलै है। काहूनैं कही, पक्षी अपने सरीरविषैं बोलै है। काहूनैं कही वाके शरीरमैं कंठ है तामैं बोलै है। ऐसे उत्तरोत्तर विषय छूटता गया। सो यह अनुक्रम-तैं इनि नयनिके वचन जानने। नैगमनयनैंतो वस्तुका सत् असत् दोऊ लिये। संग्रह नयनैं सत्‌ही लीया। व्यवहारनैं सत्का एक भेद लीया। ऋजुसूत्रनैं वर्तमानकूंही लीया। शब्दनैं वर्तमान सत्‌मैंभी भेदकरि एक कार्य पकड्या। समभिरूढनैं वा कार्यके अनेक नाम थे तिसमैं एक नामकूं पकड्या। एवंभूतनैं तामैभी जिस नामकूं पकड्या तिसही क्रियारूप परिणामताकूं पकड्या। ऐसैही जिस पदार्थकूं साधिये तापरि सर्वहीपरि ऐसे नय लगाय लेनैं। बहुरि पहला पहला नय तौ कारणरूप है। अगिला अगिला कार्यरूप है। ता कार्यकीं अपेक्षा स्थूलभी कहिये। ऐसे ये नय पुर्वपूर्वतौ विरुद्धरूप महाविषय है। उत्तर उत्तर अनुकूलरूप अल्पविषय है। जातैं पहला नयका विषय

अगिले नयमें नांही तातें विरुद्ध है। अगिलेका विषय पहलेमें गर्भित है तातें ताके अनुकूलपणां है ॥ ऐसें ये नयभेद काहेतें होय है? जातें द्रव्य अनंत शक्तिकूं लीये है तातें एक एक शक्ति प्रति भेदरूप भये बहुत भेद होय हैं। ऐसें ए नय मुख्यगौणपणां करि परस्परसापेक्षरूप भये संते सम्यग्दर्शनके कारण होय हैं। जैसें सूतके तार आदि हैं ते पुरुषके अर्थक्रियाके साधनकी सामर्थ्यतें यथोपायं कहिये जैसें वस्त्रादिक बणि जाय तैसा उपायकरि थापे हुये वस्त्रादिक नाम पावै है। बहुरि वह तार जो परस्पर सापेक्षारहित न्यारे न्यारे होय तौ वस्त्रादिक नाम न पावै तैसैंही ये नय जानने॥

इहां कोई कहै यह तारनिका उदाहरणतौ विषम उपन्यास है मिल्या नांही। जातें तार आदिकतौ अपेक्षारहित न्यारेन्यारेभी अर्थमात्रा कहिये प्रयोजनकूं सिद्ध करै है। तथा अर्थक्रिया करै है। जैसै कोई तार तो न्यारा शीकनिके बांधनेकूं शस्त्रके घाव सीवनेकूं समर्थ होय है। कोई तार वेलिसीय आदिका ऐसा होय जो भारा आदि बांधनेकूं समर्थ है। बहुरि ये नय जब निरपेक्ष होय तब किछुभी सम्यग्दर्शनकी मात्राकूं नांही उपजावै है। तहां आचार्य कहै हैं, यह दोष इहां नांही है॥ जातें हमनैं कह्या ताका ज्ञान तुमारै हवा नांही। कहे अर्थकूं विना समझ्या यह उराहना दीया। हमनैं तो ऐसें कह्या है 'निरपेक्ष तार आदि

कहै ते वस्त्रादिकार्य नांही है। वहुरि तुमनैं कह्या सो तौ पटादिकार्य नांही है केवल तार आदिहीका न्याराही कार्य है। सोभी कार्य जो तार आदि अपने अवयवसहित न होय तौ तिनितैं न होय। तातैं हमारी पक्षसिद्धि है। सापेक्षही कार्य उपजावै है। वहुरि कहै तार आदिविषैं वस्त्रादिकार्य शक्तिरूप है। तौ नयानिविषैंभी निरपेक्षनिविषैं ज्ञानरूप तथा शब्दरूपनिविषैं कारणके वसतैं सम्यग्दर्शनका कारणपणाका विशेपरूप परिणवनके सद्भावतैं शक्तिरूप सम्यग्दर्शनका कारणका आस्तित्व है। तातैं हमारा दृष्टांत विषम नांही है, समही है, मिलता है॥

आगैं इनि नियमकै परस्पर मुख्यगौणपणांकी सापेक्षाकरि विधिनिपेधतैं सप्तभंग उपजै हैं सो कहिये हैं। तहां नैगमकै तौ संग्रहादि छह नयनिकरि न्यारे न्यारे छह सप्तभंग होय है। वहुरि संग्रहकै व्यवहारादिककरि पांच होय हैं। वहुरि व्यवहारकै ऋजुसूत्रादिककरि च्यारि होय हैं। वहुरि ऋजुसूत्रके शब्दादिककरि तीन होय हैं। वहुरि शब्दके समभिरूढादिककरि दोय होय हैं॥ वहुरि समभिरूढकै एवंभूत नयकरि एकही होय है। ऐसै मूलनयनिकै तौ विधिनिपेधकरि इकइस सप्तभंगी भई। वहुरि नैगमनयके नव भेद हैं अर संग्रहके पर अपर करि दोय भेद हैं तातैं तिनके विधिनिपेधतैं अठारह सप्तभंगी होय है। ऐसैही पर अपर व्यवहारकै अठारह होय है। वहुरि ऋजुसूत्रकरि नव

सप्तभंगी हो है। बहुरि शब्दके काल आदि छह भेदनिकरि चोवन सप्तभंगी होय है। बहुरि समभिरूढकरि नव एवंभूतनयकरि नव। ऐसै ये एकसौ सतरा सप्तभंगी भई। ऐसै संग्रहके दोय भेदनितैं व्यवहारादिके भेदनिकरि बाईस, बहुरि व्यवहारके दोय भेदनितैं ऋजुसूत्रादिकके अठारह, बहुरि ऋजुसूत्रके शब्दभेदकरि छह, बहुरि शब्दके भेदनिके समभिरूढ एवंभूतकरि बारह, ऐसै अष्ठावन होय सब मिलि एकसौ पचहत्तरि भेदनिकी अपेक्षा भये, दोऊ मिलि एकसौ छिनवे भये। बहुरि उलटे करिये तब तेही भंग होय है। ऐसैही उत्तरोत्तर भेदनिकरि शब्दथकी संख्यातसप्तभंगी होय है। तहां पूर्वं प्रमाणसप्तभंगीविषैं भंगनिका विचार कह्या। तैसै इहांभी जाननां ॥

विशेष इतनां– जो, तहां जिस पदार्थकूं साधनां ताका काल आदि आठ भेदनिकरि सकलादेश करनां। इहां तिनिका विकलादेश करनां। जिस धर्मके नामकरि पदार्थकूं कह्या तिसही धर्मविषैं सर्वधर्मनिका काल आदिकरि अभेदवृत्ति करनां सो तौ सकलादेश है। बहुरि जिस धर्महीका काल आदि' कहनां दुसरे धर्मतैं भेदवृत्ती कहनां तहां विकलादेश हो है। सो पूर्वं उदाहरणकरि कह्याही है। जैसै नैगमनयनैं प्रस्थका संकल्प कीया तहां संग्रहनय कहै यहु प्रस्थ संकल्पमात्र नांही सद्रूप है। तहां विधिनिषेध भया। तब कथंचित् प्रस्थ, कथंचित् अप्रस्थ, कथंचित् प्रस्थाप्रस्थ, कथंचित् अवक्तव्य

कथंचित् प्रस्थ अवक्तव्य, कथंचित् अप्रस्थ अवक्तव्य, कथंचित् प्रस्थाप्रस्थ अवक्तव्य ऐसैं सात भये। तैसैंही सर्वनयके विषयविषैं विधिनिषेध लगाय साधने। इहां कोई पूछै; जो, द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयके भेदरूप नैगमादिक सात भेद कहे ते तो जाणे। परंतु शास्त्रनिमैं निश्चयव्यवहार नयकी कथनी बहुत। सो यहु न जाणी, जो, ये निश्चयव्यवहारनय कहां कहे है? इनिका विषय कहा है?। ताका उत्तर– जो, नयचक्र ग्रंथ गाथाबंध है। तहां ऐसैं कह्या है– जो निश्चयनय व्यवहारनय हैं ते सर्व नयनिका मूलभेद हैं। इनि दोय भेदनितैं सर्वनयभेद प्रवर्ते हैं। तहां निश्चयके साधनेकूं कारण द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक दोऊ नय हैं। वस्तुका स्वरूप द्रव्यपर्यायस्वरूपही है। तातैं इनि दोऊ नयनितैं साधिये है।। तातैं ये दोऊही तत्त्वस्वरूप हैं। सत्यार्थ हैं॥

बहुरि व्यवहार है सो उपनय है। ताके तीन भेद हैं सद्भूतव्यवहार, असद्भूतव्यवहार, उपचरितव्यवहार। तिनिके उत्तर भेद आठ हैं। तहां सद्भूतके दोय भेद। तहां गुणगुणी तथा पर्यायपर्यायी द्रव्यनिविषैं कर्ताकर्म आदि कारककी प्रवृत्तिके सद्भावतैं संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजनादिकके भेदतैं शुद्धद्रव्यविषैं भेद कहै। सो तौ शुद्धसद्भूतव्यवहार है। तैसैही एकद्रव्यके एकही प्रदेश है, भिन्नक्षेत्र नाही, तौऊ संख्यात असंख्यात अनंतप्रदेशादिक कहै। सोऊ शुद्धसद्भूतव्य-

वहार है। वहुरि एकही द्रव्य परके निमित्ततैं विकार उसही सतमैं भया था ताकी अपेक्षा लेकरि संज्ञादिककरि भेद कहे है। तहां अशुद्धसद्भूतव्यवहार है। ऐसें दोय भेद सद्भूतव्यवहारके भये ॥

वहुरि अन्यवस्तूका गुण अन्यके कहै सो असद्भूतव्यवहार है। ताके तीन भेद। तहां जैसै वहुत पुद्गलके परमाणुद्रव्य मिलि एक स्कंध नाम पर्याय वण्या ताकूं कहे ' ए पुद्गलद्रव्य है, तहां समानजातीय असद्भूतव्यवहार भया। वहुरि जहां एकेंद्रियादिक देह ते पुद्गलस्कंध हैं तिनिकूं जीव कहै। तहां असमानजातीय असद्भूतव्यवहार भया। वहुरि जहां मतिज्ञानकूं मूर्तिक कहनां जातैं मूर्तिकतैं उपजै है तथा रुकै है। तहां मतिज्ञान तौ अमूर्तिक जीवका धर्म है। वहुरि मूर्तिकपणां पुद्गलका धर्म है। तहां मिश्र असद्भूतव्यवहार भया। तथा ज्ञेयविषैं ज्ञान है ऐसें कहना तहां ज्ञेय जीव अजीव दोऊ है। तातैंभी मिश्र भया। ऐसैं तीन भेद असद्भूतव्यवहारके भये ॥

वहुरि उपचारव्यवहारकेभी तीन भेद हैं। तहां द्रव्य गुण पर्यायके परस्पर उपचार करिये तब भेद होय है। तहां एकप्रदेशी परमाणूकूं वहुप्रदेशी पुद्गलद्रव्य कहनां तहां द्रव्यविषैं पर्यायका उपचार भया। वहुरि महलकूं श्वेत कहनां तहां द्रव्यविषैं गुणका उपचार भया। वहुरि मतिज्ञान ज्ञानकूं कहनां तहां गुणके विषैं पर्यायका उपचार भया। वहुरि स्कंधपर्यायकूं पुद्गलद्रव्य कहनां तहां

पर्यायके विषै द्रव्यका उपचार भया । बहुरि देहकूं सुंदर देखि ताकूं उत्तमरूप कहनां तहां पर्यायविषैं गुणका उपचार भया । इत्यादिक उपचार जानने । बहुरि उपचारका उपचारपरि तीनूं भेद लगावणे । तहां पुत्रादिक मेरे हैं, मै इनिका हौं ऐसें कहनां सो समानजातीय उपचारका उपचार है । बहुरि वस्त्र आभरणादिक मेरे हैं ऐसैं कहनां सो विजातीय उपचारका उपचार है । बहुरि देश गढ राज्य पुर मेरे हैं ऐसैं कहना मिश्रउपचारका उपचार है । ऐसैं व्यवहारनय अनेकरूप प्रवर्तै है ॥

बहुरि श्लोकवार्तिकमैं ऐसैं कह्या है– जो एवंभूतनय तौ निश्चय है । जातैं जिसकी जो संज्ञा होय तिसही क्रियारूप परिणमता पदार्थ होय सो याका विषय है । जैसै चैतन्य अपनां चैतन्यभावरूप परिणमै ताकूं चैतन्यही कहै । क्रोधीकूं क्रोधीही कहै इत्यादि । बहुरि व्यवहार अशुद्धद्रव्यार्थिककूं कह्या है। जातैं दोय भाव तथा द्रव्य मिलेविना व्यवहार चलै नांही। दोय मिलै तब अशुद्धता भई । सो यह निर्देशादिक अधिकारमैं लिखीही है । इहां प्रश्न, जो, अध्यात्मग्रन्थनिमैं कह्या है, जो, निश्चयनय तौ सत्यार्थ है व्यवहार असत्यार्थ है–त्यजनेयोग्य है, सो यहु उपदेश कैसै है? ताका उत्तर– जो; उपदेश दोय प्रकार प्रवर्तै है । तहां एक तौ आगम । तामैं तौ निश्चय द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक दोऊही नय परमार्थरूप सत्यार्थ कहे हैं । अर प्रयोजन अर निमित्तके वशतैं अन्यद्रव्यगुणप-

र्यायनिका अन्यद्रव्यगुणपर्यायनिविषैं आरोपण करनां, सो उपचार है। याकूं व्यवहार कहिये असत्यार्थभी कहिये गौणभी कहिये। बहुरि दूसरा अध्यात्म उपदेश। तामैं अध्यात्मग्रंथका आशय यह है, जो, आत्मा अपना एक अभेद नित्य शुद्ध असाधारण चैतन्यमात्र शुध्दद्रव्यार्थिकनयका विषयभूत है। सो तौ उपादेय है ॥

बहुरि अवशेष भेद पर्याय अनित्य अशुध्द तथा साधारण गुण तथा अन्यद्रव्य ए सर्व पर्यायनयके विषय ते सर्व होय हैं। काहेतैं? जातैं यह आत्मा अनादितैं कर्मबंधपर्यायमैं मग्न है। क्रमरूप ज्ञानतैं पर्यायनिकूंही जाणै है। अनादि अनंत अपना द्रव्यत्वभावका याकै अनुभव नाही। तातैं पर्यायमात्रमैं आपा जानै है। तातैं ताकूं द्रव्यदृष्टि करावनेके अर्थि पर्यायदृष्टीकूं गौणकरि असत्यार्थ कहिकरि एकांतपक्ष छुडावनेके अर्थि झूठा कह्या है। ऐसा तौ नाही, जो, ए पर्याय सर्वथाही झूठे हैं कछु वस्तु नाही आकाशके फूलवत् हैं। जो अध्यात्मशास्त्रका वचनकूं सर्वथा एकांत पकडि पर्यायनिकूं सर्वथा झूठा मानै तौ वेदांती तथा सांख्यमतीकीज्यौं मिथ्यादृष्टि ठहरै है। पहलै तौ पर्यायबुद्धिका एकांत मिथ्यात्व था। अब ताकूं सर्वथा छोडि द्रव्यनयका एकांत मिथ्यादृष्टि होगा, तब गृहीतमिथ्यात्वका सद्भाव आवैगा। बहुरि उपनयके भेदनिविषें सद्भूत

असद्भूत उपचार कहे हैं। ते कथंचित् असत्यभी मानने। जातें ऐसा कह्या है, जो, प्रयोजन तथा निमित्तके वशतैं प्रवर्तै अन्यकूं अन्य कहनां तहां उपचार है सो परस्पर द्रव्यनिकै निमित्तनैमित्तिक भाव है। सो तो सत्यार्थ हैही। तातैं संसार मोक्ष आदि तत्त्वनिकी प्रवृत्ति है। जो निमित्त नैमित्तिकभाव झूठा होय तौ संसार मोक्ष आकाशके फूलज्यौं ठहरै। बहुरि तैसैंही जहां पुरुषका प्रयोजन है ताकै अर्थि जो प्रवृत्ति है सोभी कथंचित् सत्यार्थ है। जो प्रयोजन तथा प्रयोजनका विषय पदार्थ सर्वथा असत्यार्थ होय तो आकाशके फूलकीज्यौं झूठा ठहरै। तथा एकेंद्रियादिक जीवकूं व्यवहारकरि जीव कह्या है। सो व्यवहार सर्वथा झूठाही होय तौ जीवहिंसादिकका कहन झूठा ठहरै। परमार्थतैं जीव तौ नित्य है अमर है। एकेंद्रियादिक जीव कहनां झूठ है झूंठाके घातविषैं काहेकी हिंसा? तथा याका विस्तार कहांताई कहिए? जे व्यवहारकूं सर्वथा असत्यार्थ कहे हैं ते तौ सर्व व्यवहारके लोप करनेवाले तीव्रमिथ्यात्वके उदयतैं गाढे मिथ्यादृष्टि हैं-जिनमततैं प्रतिकूल हैं, तिनिकी संगतिही स्वपरकी घातक है ऐसा जाननां॥

बहुरि नयचक्रमें नयनिके भेद ऐसे कहे हैं। द्रव्यार्थिकके भेद १०। तहां कर्मोपाधिनिरपेक्ष, जैसें, संसारी जीव सिद्धसमान हैं। उत्पाद व्यय गौणकरि केवल ध्रौव्यरूप सत्ताकूं ग्रहै, जैसें

सद्रूप नित्यद्रव्य है। भेदनिरपेक्षप जैसैं, गुणपर्यायतैं द्रव्य अभिन्न हैं। कर्मोपाधि सापेक्ष जैसैं, जीव रागादिस्वरूप है। उत्पादव्ययमुख्यकरि जैसैं, सत् है सो उत्पादव्ययध्रौव्यरूप द्रव्य है। भेदसापेक्ष जैसैं, द्रव्य है सो गुणपर्यायवान् है। अन्वयद्रव्यार्थिक जैसैं, द्रव्य गुणस्वरूप है। स्वद्रव्यादिग्राहक जैसैं, अपने द्रव्य क्षेत्र काल भावकरि द्रव्य सद्रूप है। परद्रव्यादिग्राहक जैसैं, परद्रव्य क्षेत्र काल भावकरि द्रव्य असद्रूप है। परमभावग्राहक जैसें, जीवद्रव्यकूं शुद्ध अशुद्ध उपचारादिकरि रहित चैतन्यमात्र कहै। ऐसैं दश भेद भये ॥

वहुरि पर्यायार्थिकके छह भेद हैं। अनादिनित्यपर्यायग्राही जैसैं, चंद्रमा सूर्यादिकके विमान मेरुपर्वतादिक नित्य हैं। सादिनित्यपर्यायार्थिक जैसैं, कर्म नाशिकरि सिद्ध भये ते सादिनित्यपर्याय हैं। सत्तागौणकरि उत्पादव्ययरूप पर्यायार्थिक जैसैं, पर्याय समयस्थायी हैं। उत्पादव्ययध्रुवरूप सत्ताग्राही पर्यायार्थिक जैसैं, समय समय पर्याय उत्पादव्ययध्रौव्यरूप हैं। कर्मोपाधिनिरपेक्ष स्वभाव नित्य शुद्ध पर्यायार्थिक जैसैं, संसारी जीवके पर्याय सिध्दके पर्यायसमान शुध्द हैं। कर्मोपाधिसापेक्ष अशुद्ध अनित्य पर्यायार्थिक जैसै, संसारी जीव उपजै विनसै हैं। ऐसैं पर्यायार्थिकके छह भेद कहै। ऐसैं प्रत्यक्षपरोक्षप्रमाण द्रव्यार्थिकपर्यायार्थिकनयनिकरि तथा निर्देशादिक वा

सत् आदिक अनुयोगनिकरि तत्त्वार्थनिका अधिगम होय है। सो तत्त्वार्थ, नाम स्थापना द्रव्य भाव इनि च्यारि निक्षेपनिकरि स्थापि तिनिका अधिगम करनां। यहू अधिगमज सम्यग्दर्शनकी उत्पत्तिकूं कारण है। निसर्गज सम्यग्दर्शन तौ मति अवधि ज्ञानकरि होय है। बहुरि अधिगमज है सो गुरूपदेशके आधीन है। तातैं श्रुतज्ञानरूप जो प्रमाणनयादिकका ज्ञान सो गुरूके मुख श्रवण कीयेतैं होय है। सो शास्त्रका श्रवण पठन पाठन निरंतर करनां योग्य है। यहही भव्यजीवनिकूं स्वर्गमोक्षका साधन है॥

अब प्रमाणनयनिकरि तत्त्वार्थनिका अधिगम कहिये ज्ञान हो है ताका स्वरूप कहिये हैं। तहां तत्त्वार्थाधिगम दोय प्रकार है, स्वार्थ परार्थ ऐसें। तहां स्वार्थ तौ ज्ञानस्वरूप है। बहुरि परार्थ वचनात्मक है। सोभी दोय प्रकार है। एक तौ वीतरागीकै होय। ताकूं वीतरागकथा कहिये। दूसरा वादिप्रतिवादी जिनिकै हार जीतकी इच्छा होय तिनिकै होय। ताकूं विजिगीषुकथा कहिये। तहां वीतरागकै तौ गुरुशिष्य होय तथा विशेषज्ञानी दोनूंही होय तिनिकै होय। तहां वीतरागी- निकी चरचाकी हद तौ तत्त्वनिर्णय हो चुकै तबतांई है। बहुरि वादिप्रतिवादीनिकै हारजीति होय चुकै तबताई कहै। तहां इसके च्यारि अंग हैं। वादी प्रतिवादी सभाके लोक सभापति ऐसे। वादि-

प्रतिवादीविना तौ वाद प्रवर्तैही नाही । सभाके लोकविना साख कौन भरे । सभापतिविना हारे जीते निग्रह अनुग्रह कौन करे । तातैं चार्‍योंही चाहिये ॥

इहां नैयायिक कहे हैं– जो, वाद है सो तत्त्वनिर्णयका कारण है । यातैं तत्त्वनिर्णय दृढ होय है । जगमैं सत्यार्थतत्त्वकी प्रभावना होय तब लोकमैं प्रतिष्ठा होय तातैं यहही वीतरागकथा है । ताकूं कहिये, जो, वीतरागकथाविषैं तौ सभाका तथा सभापतिका नियम नाही । वहुरि विजिगीषुकथाविषैं नियमही है । वहुरि कही जो वादविषैं सर्वलोकके तत्त्वकी दृढता होय है प्रभावना होय है, सो यह तौ सत्य है । परंतु जहां आपकी हार होय तहां स्वमतका विध्वंसभी होय है । सो वाद तौ हारिजीतिहीका कारण है, तातैं वीतरागीनिकै यह संभवे नाही । वहुरि जहां अपनी ऐसी सामर्थ्य होय, जो, मै वादमैं हारूंगा नाही जीतूंहीगा, तौ याकूं सामग्री वहुत चाहिये । प्रथम तौ यथार्थहेतुवाद अहेतुवादकरि आपके तत्त्वका निर्णय चाहिये । दूसरा तपश्चरणादिकरि अपनी प्रतिष्ठा जगतमैं भई होय ऐसा चाहिये । वहुरि कछू देवता इष्टका अतिशय चमत्कारकी आपकै सिद्धि भई चाहिये । वहुरि राजा आदिकी पक्ष अपनी चाहिये । पक्षविनां आप सांचाभी होय तौ निष्पक्षीकौ पैला पक्ष प्रबलवाला झूठा करि डारै इत्यादि सामग्री होय, अवश्य जीतनेका आपका निश्चय होय

तब वाद जीति मतकी प्रभावना करै तो उचितही है। विनासामग्री वाद करै अरु हारै तौ स्वमतका विध्वंसही होय। तातैं यह निश्चय जानूं, जो, वाद एकांततैं तौ तत्त्वनिर्णयकूं कारण नांही, हारजीतिही मुख्यता है। बहुरि वीतरागकथा है सोही तत्त्वनिर्णयकूं कारण है॥

ऐसैं इस प्रथम अध्यायविषैं ज्ञानका बहुरि दर्शनका तौ स्वरूप वर्णन कीया। बहुरि नयनिका लक्षण कह्या। बहुरि ज्ञानका प्रमाणपणां कह्या॥

दोहा— दर्शनबोध यथार्थता। नयलक्षण वणवाय॥
ज्ञान पंचकै मानता। कही आदि अध्याय॥ १॥

सवईया तेईसा— जे पढि हैं अधिकार पढै नर ते चढि हैं निजरूप रमंता।
जे कढि हैं मुख यामय वाक्य सु चढि हैं सब ऊपरि संता॥
जे करि हैं निति पूजन भव्य सुपुण्य लहै परलोक गमंता।
जे परि हैं थुति गाय सुपाय निबोध फुरै तिनिकूं जु अनंता॥ १॥

ऐसैं तत्वारथका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं प्रथम अध्याय संपूर्ण भया॥

॥ नमो वीतरागाय ॥

॥ अथ द्वितीयाध्यायका आरंभ कीजिये हैं ॥

दोहा— उदयज उपशम मिश्र तजि, क्षायिक भाव उघारि ॥
जीवभाव उज्जल कियो, नमू ताहि मद छारि ॥ १ ॥

ऐसें मंगलकरि सर्वार्थसिद्धिटीकाकारका वचन लिखिये हैं। तहां शिष्य पूछे है, हे भगवन्! सम्यग्दर्शनका विषय भावकरि कहे जे जीवादितत्त्वनिमैं आदिविषैं कह्या जो जीव, ताका स्वतत्त्व कहिये निज यथार्थ असाधारणस्वरूप कहा है? सो कहिये। ऐसें पूछैतें आचार्य सूत्र कहे हैं—

॥ औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च॥ १ ॥

याका अर्थ— औपशमिक क्षायिक मिश्र औदयिक पारिणामिक ए पांच भाव हैं ते जीवके निजतत्त्व हैं॥ तहां आत्माविषैं कर्मकी निजशक्तिका कारणके वशतें अनुद्भूति कहिये उदय न

होना सो उपशम है। जैसैं कतकादि कहिये निर्मली आदि वस्तुके संबंधतैं जलविषैं कर्दमका उपशम होय जलकै पींदै बैठी जांय ऊपरितैं जल उज्जल होय जाय, तैसैं उपशम जाननां। बहुरि कर्मकी अत्यंतनिर्वृति होय तत्त्वमैंसूं उठि जाय सो क्षय है। जैसैं उसही जलकों निर्मल पात्रमैं लीजिये तब कर्दमका अत्यंत अभाव है। तैसैं क्षय जाननां। बहुरि उपशमभी क्षयभी दोऊ स्वरूप होय तहां मिश्र है। जैसैं तिसही जलविषैं कतकादि द्रव्य डारै कर्दमका क्षीणाक्षीणवृत्ति कहिये किछु तौ पींदै बैठ्या किछू गलदाई रही किछु बाहरि निकस्या, तैसैं क्षयोपशम जाननां। बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावके निमित्ततैं कर्मके फलकी प्राप्ति कहिये उदय आवनां प्रकट होनां सो उदय है। बहुरि द्रव्यका आत्मलाभ कहिये निजस्वरूपका पावनां जातैं होय सो परिणाम है। जैसैं सुवर्णके पीततादि गुण, कंकण कुंडल आदि पर्याय, तैसै परिणाम जाननां। इहां कर्म आदिकका निमित्त नाही लेना। तहां उपशम है प्रयोजन जाका ताकूं औपशमिक कहिये। यहां प्रयोजनार्थमैं इक प्रत्ययतैं सिद्धि कीया है। ऐसैंही क्षायिक क्षायोपशमिक औदयिक पारिणामिक जाननां। ते पांच भाव असाधारण जीवके स्वतत्त्व कहिये ॥

अब इनिका अनुक्रमका प्रयोजन कहे हैं। इहां सम्यग्दर्शनका प्रकरण है। तहां तीन प्रकार

सम्यग्दर्शनविषैं औपशमिक पहलै होय है। अनादिमिथ्यादृष्टीकै प्रथमही औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्ति होय है। तातैं सूत्रविषैं याकूं आदिविषैं कह्या है। ताकै पीछै क्षायिक ग्रहण कीया है। जातैं यहु निर्मलताईमैं याकी स्पर्द्धा बरोबरी करै है, प्रतियोगी है। तथा संसारी जीवनिकी अपेक्षा द्रव्यनिकी गणती कीजिये तब औपशमिकवाले जीवनितैं असंख्यातगुणे क्षायिकवाले जीव हैं। काहेतैं? जातैं औपशमिककाल अंतर्मुहूर्तमात्र है। तामैं भेले होय तब अल्पही होय। यातैं क्षायिकका काल संसारीकी अपेक्षा तेतीस सागर किछू अधिक है। सो वातैं असंख्यातगुणा भया। तातैं तहां जीवनिकी संख्याभी असंख्यातगुणी भई। ताकै पीछै मिश्र कहिये क्षायोपशमिकका ग्रहण है। जातैं इहां दोऊ स्वरूप है। तथा जीवभी इहां असंख्यातगुणे होय हैं। याका काल छयाछटी सागरका है। बहुरि ताकै पीछै औदयिक पारिणामिकका ग्रहण अंतमैं कीया। जातैं इहांभी जीवनिकी संख्या तिनितैं अनंतगुणी है। इहां कोई कहै है, जो, या सूत्रमैं भावनिकै जुदी जुदी विभक्तिकरि वाक्य कीया सो कौन कारण? द्वंद्वसमासतैं निर्देश करना था। कैसैं? "औपशमिकक्षायिकमिश्रौदयिकपारिणामिकाः" ऐसैं। इस भांति कीये दोय चकार न आवते तब सूत्रमैं अक्षर थोरे होते। ताकूं कहिये, ऐसी आशंका न करणी। जातैं इहां मिश्र ऐसा कह्या है सो दोय अन्य गुणकी

अपेक्षा है। तातैं वाक्यविषैं चकार शब्दतैं पहले कहे जो औपशमिक क्षायिक ए दोय; तेही मिश्रमैं ग्रहण करने अन्य न लेणे। वहुरि कहै, जो, क्षायोपशमिक ऐसा शब्द क्यों न कह्या मिश्र काहेकूं कह्या? तहां कहिये, क्षायोपशमिक कहनेमैं गौरव होय है-अक्षर सूत्रमैं वधि जाय। तातैं वाक्यकरि मिश्र ग्रहण कीया है। वहुरि मिश्रका ग्रहण वीचि कीया, ताका यहू प्रयोजन है, जो, पहले पिछले दोनूंकी अपेक्षा लेणी है। औपशमिक क्षायिक तौ भव्यहीकै होय है। वहुरि मिश्र है सो भव्यकैभी होय अभव्यकैभी होय। वहुरि औदयिक पारिणामिक ए दोऊभी भव्य तथा अभव्य दोऊहीकै होय। तातैं मिश्रका वीचि ग्रहण है॥

वहुरि कोई पूछै है, भावशब्दकी अपेक्षा स्वतत्त्व शब्दकै ताकै लिंग तथा संख्याका प्रसंग आवै है। जातैं भावशब्द पुरुषलिंगी है। तातैं स्वतत्त्वकैभी पुरुषलिंग चाहिये। तथा भावनिकी संख्या वहुत है, तातैं स्वतत्त्वकै वहुवचन चाहिये। ताकूं कहिये स्वतत्त्वशब्द है सो उपात्तलिंग संख्यारूप है याका लिंग पलटै नाही। तथा तत्त्वशब्द भाववाची है। तातैं भावकै एकही वचन होय है। जातैं तस्य भावस्तत्त्वं ऐसा है, तातैं संख्याभी पलटै नांही तातैं दोष नांही। वहुरि इहां ऐसा विशेष जाननां, जो, जीवकै पांच भाव कहे तातैं चैतन्यमात्रही नांही है। सांख्यमती पुरुषका

स्वचैतन्यमात्र माने है। बहुरि बुध्यादिक विशेषगुणकाभी वैशेषिक मतवाला पुरुषकै अभाव मानै है। बहुरि वेदांतमती आनंदमात्र ब्रह्मस्वरूप मानै है। बौद्धमती चित्कूं प्रभाकर मात्र मानै है। सो सर्वथा एकांततें यहु बणै नांही। पंचभावरूपही जीवका स्वरूप प्रमाणसिद्ध है ऐसा जाननां ॥

आगें शिष्य पूछे है, तिस आत्माके पंच औपशमिकादिक भाव कहे ते कहा उत्तरभेद-सहित है कि अभेदरूप है? ऐसै पूछै उत्तर कह्या, जो, भेदसहित है। फेरि पूछै, जो, ऐसै है तौ तिनिके भेद कहो। ऐसैं पूछै आचार्य सूत्र कहै हैं—

॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥ २ ॥

याका अर्थ— पहलै सूत्रमैं पंच भाव कहे। तिनके अनुक्रमतैं दोय नव अठारह इकईस तीन ए भेद हैं॥ तहां दोय आदिक संख्याशब्दनिका द्वंद्वसमासकरि अरु भेदशब्दकै स्वपदार्थवृत्ति तथा अन्यपदार्थवृत्ति जाननी। कैसै सोही कहिये है। दोय बहुरि नव बहुरि अठारह बहुरि इकईस बहुरि तीन ऐसै तौ द्वंद्ववृत्ति भई। बहुरि तेही भेद ऐसै स्वपदार्थवृत्ति भई। ए कहे तेही भेद हैं। ऐसैं भेदशब्द संख्याहीका संबंधी भया। तब ऐसै संबंध होय पांचौं भावनिका बहुवचन षष्ठीविभक्ति करि कहनां, जो, ये भेद पांच भावनिके हैं। बहुरि ते हैं भेद जिनके इहां अन्यपदार्थवृत्ति भई।

जातैं ये भेद पूर्वोक्त भावनिके हैं। तहां विभक्ति भावनिके सूत्रमैं कही सोही रही। बहुरि यहां यथाक्रम ऐसा वचन है सो यथासंख्यके जानने अर्थि है। बहुरि भेदका न्यारा न्यारा संबंध करणा। तातैं औपशमिक दोय भेदरूप है। क्षायिक नव भेदरूप है। मिश्र अठारह भेदरूप है। औदयिक इकईस भेदरूप है। पारिणामिक तीन भेदरूप है। ऐसैं जानिये है॥

आगैं शिष्य पूछै है, जो, ऐसैं है तो औपशमिकके दोय भेद कौनसे हैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं–

॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥

याका अर्थ— औपशमिकभावके भेद औपशमिकसम्यक्त्व औपशमिकचारित्र ए दोय हैं॥ सम्यक्त्वचारित्र तौ पूर्वैं जिनका लक्षण कह्या तेही जानने। बहुरि पूछै है, तिनिके औपशमिकपणा कैसै है? तहां कहिये है, चारित्रमोह दोय प्रकार है। एक कषायवेदनीय एक नोकषायवेदनीय। तहां कषायवेदनीयका भेदनिमैंसूं अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि लेनें। बहुरि 'दर्शनमोहके तीन भेद हैं मिथ्यात्व सम्यक्त्वप्रकृति सम्यङ्मिथ्यात्व ऐसै। इनि सात प्रकृतिनिका उपशमतैं औपशमिकसम्यत्व होय है। इहां कोई पूछै है, अनादिमिथ्यादृष्टि भव्यकै कर्मका उदयकरि कलुषपणां है, ताकै उपशम काहेतैं होय? ताका समाधान— काललब्धि आदिके

निमित्ततैं होय है। तहां प्रथम तौ कर्मसहित आत्मा भव्यजीवकै संसार अर्द्धपुद्गलपरिवर्तन नामा कालमात्र अवशेष रहै, तब प्रथमोपशमसम्यक्त्वके ग्रहण करनेयोग्य होय है। जो संसार अधिका बाकी होय तौ सम्यक्त्वग्रहण न होय। ऐसैं एक तौ काललब्धि यहु है। बहुरि दूसरी काललब्धि यहु है, जो, कर्मकी स्थिति उत्कृष्ट जाकै बंधती न होय तथा सत्ताका कर्मकी होय तथा जघन्यस्थितिबंधकी तथा सत्ताकी होय तौ तिस अवसरमैं सम्यक्त्वका लाभ न होय। तौ कहां होय? जब अंतःकोटाकोटी कहिये एक कोडाकोडी सागरमैं नीचै स्थिति लीये कर्मबंध भावकूं प्राप्त होय, तथा विशुध्दपरिणामके वशतैं सत्ताका कर्मबंधकी स्थितितैं संख्यात हजार सागर घाटि रह जाय, तब प्रथमसमम्यत्वग्रहणयोग्य होय॥ बहुरि तीसरी काललब्धि भवकी अपेक्षा है। जो भव्यजीव पंचेंद्रिय होय संज्ञी होय पर्याप्त अवस्थासहित होय सर्वतैं विशुध्दपरिणाम होय सो प्रथमोपशमसम्यक्त्वकूं उपजावै है। बहुरि आदिशब्दकरि जातिस्मरण आदिक लेणे। बहुरि समस्त मोहनीयकर्मके उपशमतैं उपशमचारित्र होय है। तहां सूत्रमैं सम्यक्त्वका आदि वचन है सो चारित्र सम्यक्त्वपूर्वकही होय है। आत्मा पहली सम्यक्त्व अवस्थारूप होय है। अब आत्माके चारित्र अवस्था प्रकट हो है॥

इहां सम्यक्त्वकी उत्पत्तिका विशेप लिखिये हैं। तहां प्रथमोपशमसम्यक्त्व उपजे पीछे अंतर्मुहूर्तकाल रहै है। तहां मिथ्यात्वकर्मकूं तीन प्रकार विभाग करै मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्प्रकृतिमिथ्यात्व ऐसे। बहुरि यह कहां उपजै है? तहां नारकी तौ तहां उपजे पीछे अंतर्मुहूर्त पीछे उपजावै है। पहली दूसरी तीसरी पृथ्वीवाला तौ केई तौ जातिस्मरणतैं केई धर्मश्रवणतैं केई वेदनाकरि पीड्या हूवा उपजावै है। बहुरि नीचली च्यार पृथ्वीवाला धर्मश्रवणविना दोयही कारणतैं उपजावै है। बहुरि तिर्यंच उपजे पीछे च्यारितैं ले आठ दिनके उपरि उपजावै है। तहां जातिस्मरण धर्मश्रवण जिनबिंबदर्शन ए तीन कारण हैं। बहुरि मनुष्य नवमां वर्पतैं उपजावै है। आठवर्षतांई नांही उपजै है। तहांभी जातिस्मरण धर्मश्रवण जिनबिंबदर्शन ए तीन कारण हैं। बहुरि देवगतिविषैं उपजे पीछे अंतर्मुहूर्त पीछे उपजावै है। तहां भवनवासीनितैं ले सहस्रारस्वर्गतांईका तौ जातिस्मरण धर्मश्रवण जिनमहिमाका दर्शन देवनिकी ऋद्धिका देखना इनि च्यारि कारणतैं उपजावै है। बहुरि आनतादि च्यारि स्वर्गनिके देवनिकै ऋद्धिदर्शनविना तीन कारणतैं। बहुरि नव ग्रैवेयकका जातिस्मरण धर्मश्रवण ए दोयही कारणतैं उपजावै है ऐसैं जानना॥

आगैं, जो क्षायिकभाव नवप्रकार कह्या ताके भेदस्वरूपके प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥ ४ ॥

याका अर्थ— केवलज्ञान केवलदर्शन क्षायिकदान लाभ भोग उपभोग वीर्य वहुरि चकारतें क्षायिकसम्यक्त्व क्षायिकचारित्र ऐसै नव प्रकार क्षायिकभाव है। इहां चशब्द है सो सम्यक्त्वचारित्र पूर्वसूत्रमैं कहे तिनिका ग्रहणकै अर्थि है। वहुरि ज्ञानावरण नामा कर्मके अत्यंतक्षयतैं तौ केवलज्ञान क्षायिक हो है। वहुरि तैसैंही दर्शनावरण नामा कर्मके अत्यंतक्षयतैं केवलदर्शन क्षायिक हो है। वहुरि दानांतराय नामा कर्मके अत्यंत क्षयतैं अनंतप्राणीनिके उपकार करनेवाला क्षायिक अभयदान होय है। वहुरि लाभांतराय नामा कर्मके अत्यंत अभावतैं नाही है कवलाहारकी क्रिया जिनिके ऐसे जे केवली भगवान् 'जिनिके शरीरके वलाधानके कारण अन्यमनुष्यनिके ऐसैं नाही' परमसुन्दर सूक्ष्म समय समय प्रति अनंते पुद्गलके परमाणू संवंधकूं प्राप्त होय है, नोकर्मका समयप्रवृद्ध ऐसा आवै है सो क्षायिकलाभ है। वहुरि भोगांतराय नामा कर्मके समस्तके अभावतैं अतिशयवान् पुष्पवृष्टि आदिक अनेकाविशेप लिये अनंते क्षायिक भोग हैं। वहुरि उपभोगांतरायनामा कर्मके निरवशेप प्रलय होनेतैं सिंहासन चामर छत्रत्रयादिक विभूति प्रगट भये, ते क्षायिक अनंत उपभोग हैं। वहुरि वीर्यांतराय कर्मके अत्यंत क्षयतैं क्षायिक अनंतवीर्य प्रगट भया है। वहुरि पूर्व

कहि जे मोहकी सात प्रकृति तिनिका अत्यंत नाश होनेतैं क्षायिकसम्यक्त्व हो है। बहुरि चारित्रमोहके अत्यंत अभावतैं क्षायिकचारित्र प्रकट हो है। ऐसैं क्षायिकके नव भाव हैं। इहां प्रश्न, जो, क्षायिकका दानादिक भावकरि कीया अभयदानादिक है, तौ सिद्धनिकैभी अभयदानादिकका प्रसंग आवै है। ताका उत्तर आचार्य कहै है, यह दोष इहां नाही आवै है। अरहंतनिकै शरीरनामा नामकर्म तथा तीर्थंकरनामा नामकर्मका उदय पाइये है ताकी अपेक्षातें कहै है। बहुरि तिनि कर्मनिका अभावतैं सिद्धनिकै इनिका प्रसंग नाही है। फेरी पूछै, जो, ऐसैं है तौ सिद्धनिकै इनि भावनिकी कैसैं प्रवृत्ति है? ताका उत्तर— परम उत्कृष्ट अनंतवीर्य अव्याबाधस्वरूपकरिही तिनिकी तहां प्रवृत्ति है। जैसैं केवलज्ञानरूपकरि अनंतवीर्यकी प्रवृत्ति हो है, तैसें यहुभी जाननां॥

आगैं, जो क्षायोपशमिक भाव अठारा भेदरूप कह्या ताका भेदनिका निरूपणकै अर्थि सूत्र कहै हैं॥

॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥

याका अर्थ— ज्ञान चारी भेद, अज्ञान तीन भेद, दर्शन तीन भेद, अंतरायका क्षयोपशमरूप लब्धि पांच भेद, ऐसैं पंधरा तौ ये, बहुरि क्षायोपशमिकसम्यक्त्व क्षायोपशमिकचारित्र संयमासंयम ऐसै तीन ये सब मिलि अठारह क्षायोपशमिकभाव हैं॥ च्यारि बहुरि तीन बहुरि तीन बहुरि पंच

ऐसे द्वंद्ववृत्तिकरि बहुरि ए हैं भेद जिनिके ऐसैं भेदशब्दतैं वृत्ति करनी। यथाक्रमकी पूर्वसूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। च्यारि आदि संख्या ज्ञानादिककै लगावणी। ऐसै च्यारि ज्ञान मति श्रुत अवधि मनःपर्यय। तीन अज्ञान कुमति कुश्रुत विभंग। तीन दर्शन चक्षु अचक्षु अवधि। पांच लब्धि दान लाभ भोग उपभोग वीर्य। ऐसै पंधरे भये। तहां सर्वघातिस्पर्द्धकनिका तौ उदयक्षयतैं बहुरि तिनिहीका सत्तारूप उपशमतैं बहुरि देशघातिस्पर्द्धक उदय होतैं क्षायोपशमिक भाव होय है। तहां ज्ञानादिककी प्रवृत्ति अपने आवरण तथा अंतरायके क्षयोपशमतैं होय है। बहुरि सम्यक्त्व इहां वेदकसम्यक्त्व लेणा। यहु अनंतानुबंधी कषायका चतुष्कका तथा मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व इनि दोऊनिका उदयक्षयतैं तथा सत्तारूप उपशमतैं बहुरि सम्यक्त्वप्रकृतिके देशघातिस्पर्द्धकका उदय होतैं जो तत्त्वार्थश्रद्धान हो है सो क्षायोपशमिकसम्यक्त्व है। बहुरि अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान इनि बारह कषायनिका उदयक्षयतैं बहुरि सत्तारूप उपशमतैं बहुरि संज्वलनकषायके चतुष्कमैं किसी एक कषायके देशघातिकस्पर्द्धकनिका उदय होतैं बहुरि हास्यादि नोकषायका यथासंभव उदय होतैं जो त्यागरूप आत्माका परिणाम होय सो क्षायोपशमिकचारित्र है। बहुरि अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान कषायका अष्टकका उदयक्षयतैं बहुरि सत्तारूप उपशमतैं बहुरि प्रत्याख्यानकषायका उदय होतैं बहुरि संज्वलन

कपायके देशघातिस्पर्द्धकनिका उदय होतैं बहुरि नोकषाके नवकका यथासंभव उदय होतैं आत्माके विरताविरत परिणाम हो है सो क्षायोपशमिक संयमासंयम है। याकूं देशविरति भी कहिये।।

इहां कोई पूछै, स्पर्द्धक कहां ? ताका समाधान– जो, कर्मके परमाणूंनिविषैं फल देनेकी शक्तिरूप रस है तिनिके अविभागप्रतिच्छेदका समूहकी पंक्ति क्रमरूप वृद्धि तथा हानि ते स्पर्द्धक कहिये हैं। तहां उदयमैं आया जो कर्मपरमाणूनिका एकसमयविषैं एकसमयप्रवृद्ध, तामैं सिद्ध राशिके अनंतवै भाग अभव्यराशितैं अनंतगुणे परमाणू होय हैं, तिनिविषैं सर्व जघन्यगुण जामैं होय ऐसा एक परमाणू लेणा। ताका अनुभागकूं बुद्धिकरि छेदनतैं जहां ऐसा छेद होय ताका फेरि दुसरा छेद न होय ऐसैं अविभागपरिच्छेद सर्वजीवानितैं अनंतगुणां है, ताकी एक राशि कीजिये ताका नाम वर्ग है। बहुरि समान अविभागपरिच्छेदके समूहरूप परमाणूनिके समूहका नाम वर्गणा है। तहां थोरेसूं थोरे अविभागपरिच्छेदके परमाणूनिका नाम जघन्यवर्ग है। तिसके समान परमाणूरूप वर्गके समूहका नाम जघन्यवर्गणा है। बहुरी जघन्यवर्गतैं एक अविभागपरिच्छेद वधता तामैं पाईये ऐसी परमाणूनिके समूहका नाम द्वितीयवर्गणा है। ऐसैं जहांतांई एक एक अविभागप्रतिच्छेदानिका क्रम लीये जेती वर्गणा होय तितनी वर्गणांनिके समूहका नाम जघन्यस्पर्द्धक है।

बहुरि यातैं ऊपरि जघन्यवर्गणाके वर्गनिविषैं जे अविभागप्रतिच्छेद थे तिनितैं दूणे जिस वर्गणाके वर्गविषैं अविभागप्रतिच्छेद होय तहांतैं द्वितीयस्पर्द्धकका प्रारंभ होय तहांभी एक एक अविभागप्रतिच्छेद बधनेका क्रमरूप वर्गनिका समूहरूप जेती वर्गणा होय तिनिके समूहका नाम द्वितीय स्पर्द्धक है। बहुरि ऐसैंही प्रथमस्पर्द्धककी प्रथमवर्गणाके वर्गनिविषैं जेते अविभागप्रतिच्छेद थे तिसतैं तिगुणे जिस वर्गणाके वर्गनिविषैं अविभागप्रतिच्छेद पाईये तहांतैं तीसरे स्पर्द्धकका प्रारंभ होय, ऐसैंही वर्गणाके समूहका नाम स्पर्द्धक है। सो ऐसे स्पर्द्धक अभव्यराशितैं अनंतगुणा अरु सिद्धराशिकै अनंतवै भाग एक उदयस्थानविषैं हो है ऐसैं जाननां ॥

आगै जो इकईस भेदरूप औदयिक भाव कह्या ताके भेदनिके नाम कहनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिध्दलेश्याश्चचतुश्चतुरत्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥६

याका अर्थ— गति च्यारि भेद, कषाय च्यारि भेद, लिंग कहिये वेद तीन भेद, मिथ्यादर्शन एक, अज्ञान एक, असंयम एक, असिद्ध एक, लेश्या छह, ऐसे इकईस भेदरूप औदयिक भाव है॥ तहां यथाक्रम ऐसी तौ पूर्वसूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। तिसके संबंधतैं गति तौ च्यारि भेद, नरकगति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति। तहां अपने अपने नामकर्मकी प्रकृतिके उदयतैं होय

है तातें औदयिक है। बहुरि कषाय च्यारि भेद क्रोध, मान, माया, लोभ। तेभी अपनी अपनी मोहनीयप्रकृतिके उदयतें होय हैं तातें औदयिक हैं। लिंग तीन भेद स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसकवेद। तेभी अपनी अपनी प्रकृतिके उदयतें होय हैं तातें औदयिक हैं। मिथ्यादर्शन मिथ्यात्वनाम मोहनीयकी प्रकृतिके उदयतें होय है। याकरि परिणाम तत्त्वार्थका अश्रध्दानरूप है। बहुरि ज्ञानावरण नामा कर्मके उदयतें पदार्थनिका ज्ञान न होय सो अज्ञान। बहुरि चारित्रमोहके सर्वघातिकस्पर्द्धकनिके उदयतें असंयम होय सो औदयिक असंयत है। बहुरि सामान्यकर्मनिके उदयकी अपेक्षारूप असिध्दपणा औदयिक है। बहुरि लेश्या द्रव्यभावरूप दोय है। सो इहां जीवके भावका अधिकार है तातें द्रव्यलेश्या न लेणी। भावलेश्या लेणी। सो कषायनिके उदयकरि रंजित जो योगनिकी प्रवृत्ति सो लेश्या है। सो छह प्रकार है। कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल ऐसें। इहां प्रश्न— जो, उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवली इनिविषें शुक्ललेश्या आगममें कही है। तहां कषायका उदयका तो अभाव है। औदयिकपणा नाही बनेगा। ताका उत्तर- आचार्य कहे हैं— जो, यहु दोष इहां नाही है। इहां पूर्वभाव जनावनेकी नयकी अपेक्षा है। जो योगनिकी प्रवृत्ति कषायनिकरि अनुरंजित पहले थी, सोही उपचारतें इहां जाननी। तातें औदयिकही कहिये। बहुरि योगके अभावतें

बहुरि यातैं ऊपरि जघन्यवर्गणाके वर्गनिविषैं जे अविभागप्रतिच्छेद थे तिनितैं दूणे जिस वर्गणाके वर्गविषैं अविभागप्रतिच्छेद होय तहांतैं द्वितीयस्पर्द्धकका प्रारंभ होय तहांभी एक एक अविभागप्रतिच्छेद वधनेका क्रमरूप वर्गनिका समूहरूप जेती वर्गणा होय तिनिके समूहका नाम द्वितीय स्पर्द्धक है। बहुरि ऐसैंही प्रथमस्पर्द्धककी प्रथमवर्गणाके वर्गनिविषैं जेते अविभागप्रतिच्छेद थे तिसतैं तिगुणे जिस वर्गणाके वर्गनिविषैं अविभागप्रतिच्छेद पाईये तहांतैं तीसरे स्पर्द्धकका प्रारंभ होय, ऐसैंही वर्गणाके समूहका नाम स्पर्द्धक है। सो ऐसै स्पर्द्धक अभव्यराशितैं अनंतगुणा अरु सिद्धराशिकै अनंतवै भाग एक उदयस्थानविषैं हो है ऐसैं जाननां ॥

आगै जो इकईस भेदरूप औदयिक भाव कह्या ताके भेदनिके नाम कहनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिध्दलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥६॥

याका अर्थ— गति च्यारि भेद, कषाय च्यारि भेद, लिंग कहिये वेद तीन भेद, मिथ्यादर्शन एक, अज्ञान एक, असंयम एक; असिद्ध एक, लेश्या छह, ऐसै इकईस भेदरूप औदयिक भाव है ॥ तहां यथाक्रम ऐसी तौ पूर्वसूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। तिसके संबंधतैं गति तौ च्यारि भेद, नरकगति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति। तहां अपने अपने नामकर्मकी प्रकृतिके उदयतैं होय

है तातैं औदयिक है। बहुरि कषाय च्यारि भेद क्रोध, मान, माया, लोभ। तेभी अपनी अपनी मोहनीयप्रकृतिके उदयतैं होय हैं तातैं औदयिक हैं। लिंग तीन भेद स्त्रीवेद, पुंवेद, नपुंसकवेद। तेभी अपनी अपनी प्रकृतिकै उदयतैं होय हैं तातैं औदयिक हैं। मिथ्यादर्शन मिथ्यात्वनाम मोहनीयकी प्रकृतिके उदयतैं होय है। याकरि परिणाम तत्त्वार्थका अश्रध्दानरूप है। बहुरि ज्ञानावरण नामा कर्मके उदयतैं पदार्थनिका ज्ञान न होय सो अज्ञान। बहुरि चारित्रमोहके सर्वघातिकस्पर्द्धकनिके उदयतैं असंयम होय सो औदयिक असंयत है। बहुरि सामान्यकर्मनिके उदयकी अपेक्षारूप आसिध्दपणां औदयिक है। बहुरि लेश्या द्रव्यभावरूप दोय है। सो इहां जीवके भावका अधिकार है तातैं द्रव्यलेश्या न लेणी। भावलेश्या लेणी। सो कषायनिके उदयकरि रंजित जो योगनिकी प्रवृत्ति सो लेश्या है। सो छह प्रकार है। कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल ऐसैं। इहां प्रश्न– जो, उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवली इनिविषें शुक्ललेश्या आगममें कही है। तहां कषायका उदयका तो अभाव है। औदयिकपणा नाही बनेगा। ताका उत्तर· आचार्य कहै हैं– जो, यहु दोष इहां नाही है। इहां पूर्वभाव जनावनेकी नयकी अपेक्षा है। जो योगनिकी प्रवृत्ति कषायनिकरि अनुरंजित पहलैं थी, सोही उपचारतैं इहां जाननी। तातैं औदयिकही कहिये। बहुरि योगके अभावतैं

अयोगकेवली लेश्यारहित है ऐसा निश्चय कीजिये है। इहां कोई पूछे अन्यप्रकृतिनिके उदयतैं भये भाव औदयिकभावनिमैं क्यों न कहे? ताका समाधान- जो, इनिही भावनिमैं गर्भित जानने। शरीरादिक पुद्गलविपाकीनिका तौ इहां जीवभाव कहनेतैं अधिकारही नाही। बहुरि जाति आदि जीवविपाकीगतिमैं गर्भित जानने। बहुरि दर्शनावरणीयका उदय मिथ्यादर्शन कहनेतैं गर्भित कीया है। जातैं अतत्त्वार्थश्रध्दानकाभी नाम मिथ्यादर्शन है। बहुरि अन्यथा देखनेकाभी नाम मिथ्यादर्शन है। बहुरि हास्यादिक वेदनिके सहचारी हैं। तातैं वेदनिमैं गर्भित भये। बहुरि वेदनीय आयु गोत्रका उदयभी अघातिया है सो गतिमैं गर्भित जानने ॥

आगै, पारिणामिक भाव तीन भेदरूप कह्या ताके भेदनिके प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥

याका अर्थ—जीवत्व, भव्यत्व अभव्यत्व ए तीन पारिणामिक भावके भेद हैं॥ ए तीन भाव पारिणामिक अन्यद्रव्यनितैं असाधारण आत्माके जानने। जातैं कर्मका उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशमकी अपेक्षा इनिमैं नांही है। द्रव्यके परिणामकीही अपेक्षारूप है। तहां जीवत्व तौ चैत-न्यकूं कहिये। बहुरि सम्यग्दर्शनादि भावकरि परिणमैगा ताकूं भव्य कहिये। बहुरि सम्यग्दर्शनादिक

जाके न होयगे सो अभव्य कहिये। ए तीन भाव जीवके पारिणामिक हैं। इहां प्रश्न– जो अस्तित्व, नित्यत्व, प्रदेशवत्त्व इत्यादिकभाव हैं तेभी पारिणामिक हैं, तिनिकाभी इस सूत्रमैं ग्रहण चाहिये। ताका उत्तर– जो, इनिका ग्रहण न चाहिये। अथवा चशब्दकरि कीयाभी है। फेरि पूछे है, जो, ग्रहण कीया है तौ तीनकी संख्या विरोधी जाय है। तहां कहिये, जो, ए असाधारण जीवके भाव पारिणामिक तीनही हैं। बहुरि अस्तित्व आदि हैं ते जीवकैभी हैं अजीवकेभी हैं तातैं साधारण हैं। यातैं चशब्दकरि न्यारे ग्रहण कीजिये। इहां तर्क– औपशमिकादिभाव जीवके नाही बणै हैं। जातैं आत्मा अमूर्तिक है। तातैं ते भाव कर्मबंधकी अपेक्षारूप हैं। अमूर्तिकके कर्मबंध युक्त नाही। तहां उत्तर– जो, आत्मा अमूर्तिकही है ऐसा एकांत नाही है। इहां अनेकांत है। आत्मा कर्मबंधपर्यायकी अपेक्षा तिस कर्मके बंधनतैं कथंचित् मूर्तिक है। शुद्धस्वरूपकी अपेक्षा कथंचित् अमूर्तिक है। तहां फेरि तर्क करे है; जो, ऐसैं है तौ कर्मबंधका बंधनतैं आत्माका एकत्वपणां ठहऱ्या, तब अभेद ठहऱ्या, तब भेद कैसे बणैगा? ताकूं कहिये; यहु दोप नाही आवै है। जातैं बंधपर्यायकी अपेक्षा एकत्वपणाकूं होतैंभी लक्षणभेदतैं या आत्माकै अर कर्मकै नानापणा अनेकपणां है ऐसा निश्चय कीजिये। सोही इहां सिध्दांतकी गाथा है ताका अर्थ– बंधप्रति तौ

जीवकै अर कर्मकै एकत्वपणा है बहुरि लक्षणभेदतैं नानापणा है। तातैं जीवकै अमूर्तिकभाव है, सो अनेकांततैं सधै है ॥ ऐसैं जीवके पंचभाव कहनेतैं सांख्यमती आदिक आत्माकूं शुद्धही एकांत करि मानै हैं, तिनिका निराकरण भया। जातैं सर्वथा शुध्दही होय, तौ संसार बंध मोक्ष तथा मोक्षका उपाय आदिकी कथनी सर्व मिथ्या ठहरै। बहुरि पंचभावरूप आत्मा कहनेतैं स्याद्वादनयकरि बंधमोक्षादि सर्वही कथंचित्प्रकार सिद्ध होय है। ऐसैं सात सूत्रनिकरि जीवके पंचभावनिका वर्णन कीया ॥

आगै, जो बंधप्रति एकत्व है सो लक्षणभेदतैं बंध अरु आत्मा जुदे जाने जाय हैं। सो जीवका कहा लक्षण है? जातैं जुदा जानिये सो कहौ ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥

याका अर्थ— उपयोग है सो जीवका लक्षण है ॥ उभयनिमित्त कहिये बाह्य अभ्यंतरकारणनिके वशतैं उपज्या जो चैतन्यकै अनुविधायी कहिये जुड्या हुवा चैतन्यहीका परिणाम सो उपयोग है। तिसकरि आत्माकै बंधप्रति एकपणाकूं होतैंभी आत्मा जुदा लखिये है। जैसैं सोना रूपाका एकपिंड होतैंभी पीत श्वेतवर्ण आदिकरि भेद जान्या जाय है तैसैं भेद जानिये है ॥

इहां तत्त्वार्थवार्तिक टीकाके अनुसार कछु लिखिये है। तहां बाह्य अभ्यंतर दोय कारण कहे तहां

बाह्यकेभी दोय भेद कहैं एक आतमभूत एक अनातमभूत । तहां आतमभूत तौ शरीरके संबंधरूप इंद्रियनकूं कहे । बहुरि दीपक प्रकाशादिक अनातमभूत कहे । बहुरि अभ्यंतर कारणभी आतमभूत अनातमभूतकरि दोय भेद कहे। तहां द्रव्यमन वचन कायके योग पुद्गलरूप हैं तिनिकूं अनातमभूत कह्या। बहुरि आत्माके चैतन्यभावतैं तन्मय जे प्रदेश तिनिमैं वीर्यांतराय ज्ञानदर्शन आवरणके क्षयोपशम तथा क्षयके अनुसार उज्जलता होय ऐसा भावयोग ताकूं आत्मभूत कह्या। तहां इनिका यथासंभव सन्निधान होतैं आत्माका चैतन्यस्वभाव है। सो अनुविधान कहिये अन्वय परिणामरूप प्रवर्तैं वा परिणामकूं उपयोग कहिये। इहां कोई कहै– चैतन्यके परिणाम सुख दुःख मोहरूपभी हैं ते परिणामभी ग्रहण चाहिये। अगले सूत्रमैं उपयोगके भेद ज्ञानदर्शनही कहे, सो पूर्वापरविरोध आवै है। ताका समाधान– इहां चैतन्यसामान्यका ग्रहणतैं सर्वहीका ग्रहण होय है। परंतु अगिले सूत्रमैं भेद कीये जो दर्शनज्ञान तेही इहां ग्रहण करने। जातैं सामान्यका जो विशेष सर्वही अवस्थामैं व्यापक होय सोही लक्षणप्रकरणमैं लेणा, तातैं विरोध नांही। अब इहां पूछै है, जो, लक्षण कहा? तहां कहिये हैं, जहां बहुत वस्तु मिली होय, तिनिमैं जिस चिन्हकरि वस्तुकी जुदायगी जाणी जाय तिस चिन्हकूं लक्षण कहिये। सो यहु आतमभूत अनातमभूत भेद-

करि दोय प्रकार है। जैसें अग्निके उष्णपणां सो तौ आत्मभूत है। दंडी पुरुषकै दंड सो अनात्मभूत है। सो इहां आत्माका उपयोग लक्षण आत्मभूत जाननां ॥

इहां कोई कहै, जो, उपयोग तौ असाधारणधर्म है, तातैं लक्षण नांही, गुणकै अरु गुणीकै अन्यपणां है। जातैं लक्ष्यलक्षणकै भेद है। ताकूं कहिये, सर्वथा भेद होतैं अनवस्था हो है। तातैं कथंचिद्भेदाभेदात्मक होतैं लक्ष्यलक्षणभावकी सिध्दि है। जाके मतमैं आत्मा एकांतकरि नित्य अभेद ज्ञानस्वरूप है, ताके मतमैं ज्ञानके परिणाम जे अनेक ज्ञेयाकार होनां ऐसा उपयोग नांही सिद्ध हो है तहां सर्वव्यवहारका लोप हो है। तातैं चैतन्यके परिणामकूं उपयोग मानै सर्व सिद्धि है। सोही उपयोग लक्षण है आत्मा लक्ष्य है। इहां कोई कहै, आत्मा लक्ष्यही नांही तब लक्षण काहेका? विनालक्ष्य लक्षण कहना सुसाके सींगवत् मींडककै चोटीवत् वांझके पुत्रवत् आकाशके फूलवत् अभावरूप है॥ बहुरि जो आत्माभी मानिये, तौ ज्ञानदर्शन तौ अनवस्थित है। सो लक्षण बणै नांही। अनवस्थितकूंभी लक्षण मानिये तौ जब लक्षणका अभाव होय तब लक्ष्यकाभी अभावही आवै है। ताकूं कहिये, आत्माका अभाव कहनां युक्त नांही। जातैं जो आत्माका अभाव कारणपणाके अभावतैं मानिये तौ आत्माके नारकादि पर्याय तौ मिथ्यादर्शनादिक

कारणतैं होयही है। बहुरि नारकादिपर्याय हैं ते द्रव्यविना निराश्रय होय नांही। तातैं इनिका आश्रय आत्मा द्रव्य हैही। तब कारणपणाका अभाव कैसैं? बहुरि सत है सो विनाकारणभी कहिये। सत्‌ही भया तब कारण काहेकूं चाहिये? बहुरि मींडकके चोटीका अभावका दृष्टांत है सो मींडक आदि तथा चोटी आदिका सत्त्व मानिकरि मींडक आदिकै संबंधका अभाव मानिये है। तहां सत्त्व असत्त्व दोऊ पक्षका ग्रहण है। तातैं यहु दृष्टांतभी मिलै नांही। जातैं यहु जीव कर्मके वशतैं अनेक जातिके संबंधकूं पावै है। जब मींडक भया तब तौ चोटीका संबंध न भया। बहुरि जब स्त्रीपर्याय पाई तब चोटी पाई। तब मींडकभी वेही जीव था। स्त्रीपर्यायमैं आया तब पूर्वपर्यायकी अपेक्षा स्त्रीकूं मंडुक कहि याकै चोटी कहिये तौ दोष नांही। तैसैंही आकाशके फूलके दृष्टांतकैभी बणै है। जातैं कर्मके उदयतैं जीव वृक्ष भया। तब जीवपुद्गलके समुदायकूं फूल ऐसा नाम कहिये। ऐसैं पुद्गलद्रव्यतैं फूल व्याप्त है तैसैंही आकाशतैंभी व्याप्त कहिये॥

इहां कहै, जो, वृक्षरूप पुद्गलकृत उपकारकरि वृक्षका फूल कहिये है तहां कहिये आकाशका कीया अवगाहना उपकारकी अपेक्षा आकाशका फूल कहिये तौ कहा दोष? वृक्षतैं तौ छूटैभी है। आकाशमैं तौ सदा रहै तातैं नित्यसंबंध है। बहुरि कहै, फूल आकाशतैं जुदा वस्तु है, तातैं

आकाशका न कहिये। तो ऐसैं तो वृक्षतैंभी जुदा पदार्थ है, तातैं वृक्षकाभी न कहिये इत्यादि युक्तितैं दृष्टांतभी बणता नाही। तातैं कारणके अभावतैं आत्माका अभाव मानिये तौ यह तौ बणै नाही। बहुरि अनवस्थित उपयोगके लक्षणपणाका अभाव कहै, सो चेतन्यका परिणाम ज्ञेयाकार परिणमैही है। सामान्य उपयोग तौ नित्यही रहै है। याहीतैं भेदाभेदात्मक वस्तुका स्वरूप निर्बाध सिध्द है। बहुरि कहै, जो, आत्मा प्रत्यक्ष नाही, तातैं अभाव मानिये। तहां कहिये, शुद्ध आत्मा तौ सकलप्रत्यक्ष केवलज्ञानगोचर है। बहुरि कर्मनोकर्मबंधसहित आत्मा अवधि मनःपर्यय ज्ञानकैभी गम्य है। बहुरि कहै, इंद्रियप्रत्यक्ष नाही, तातैं अप्रत्यक्ष है। तौ इंद्रियज्ञान तौ परोक्ष है। बहुरि मानसप्रत्यक्षगम्य कहिये है, सो यहभी व्यवहारनयतैं सिद्ध हो है। परमार्थतैं तौ मानसप्रत्यक्ष परोक्षही है। ऐसैंही अन्यवादीनिकरि कल्पित आत्माका अभाव साधनेके हेतु ते बाधासहित जानने जातैं आत्मा प्रतीतिसिद्ध है। बहुरि याका लक्षण उपयोग है सो प्रतीतिसिद्ध है। याकी विशेष चरचा श्लोकवार्तिक तत्त्वार्थवार्तिकतैं जाननी ॥

इहां कोई पूछै, पूर्वै जीवका स्वतत्त्व भाव कह्या बहुरि लक्षण कह्या, सो स्वतत्त्व अरु लक्षणमैं कहा विशेष है? ताका समाधान, जो, स्वतत्त्व तौ लक्ष्य आत्माही है। बहुरि लक्षण है सो लक्षणही

है। सो लक्षण है सो लक्ष्य नाहीं है। जातैं लक्ष्यलक्षणविषैं कथंचित् भेदाभेदकी सिध्दि पूर्वैं कही है। तहां क्षायिक तथा क्षायोपशमिक भावविषैं ज्ञानदर्शन भेदरूप कहे हैं। तिनि दोऊनिमैं सामान्यव्यापी उपयोगकूं इहां लक्षण कह्या है। चैतन्यशक्तिकी लब्धि है सो तौ नित्य है। ताकी व्यक्ति पंचभावरूप अनेक हैं। तिनिमैं उपयोगभी है सो छद्मस्थकै अनित्य है। ताकी स्थिति एक ज्ञेयकेविषैं रहना उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तमात्र कह्या है। बहुरि अनुभवगोचर है, तातैं प्रसिद्ध है। लक्षण प्रसिद्धहीकूं कहिये है। आत्मा लक्ष्य है सो शक्तिव्यक्तिमय है अरु लक्षण व्यक्तिही है। तातैं आत्माकी सिद्धि वादिप्रतिवादिप्रसिद्ध उपयोगहीतैं होय है। तातैं उपयोगकूं लक्षण कह्या है॥

आगैं, कह्या जो उपयोग, ताके भेद दिखावनेके अर्थ सूत्र कहे हैं—

॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— पूर्वसूत्रमैं उपयोग कह्या, सो ज्ञानदर्शन भेदकरि दोय प्रकार है। तहां आठ भेदरूप ज्ञान है। च्यारि भेदरूप दर्शन है॥ उपयोग दोय प्रकार है ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोग ऐसैं। तहां ज्ञानोपयोग आठ भेदरूप है मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, मत्यज्ञान, श्रुताज्ञान, विभंगज्ञान ऐसैं आठ भेद। बहुरि दर्शनोपयोग च्यारि प्रकार है चक्षुदर्शन,

अचक्षुर्दर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन ऐसैं च्यारि भेद ॥ इहां पूछे, जो, दर्शनज्ञानविषैं भेद कहा? तहां कहे हैं, साकार अनाकारके भेदतैं भेद है। साकार तो ज्ञान है, जातैं ज्ञेयके आकार होहै। अनाकार दर्शन है, जातैं सत्तामात्र आकारकरि रहित ग्रहण करै है। सो ए दोऊ छद्मस्थ जीवकै तो अनुक्रमतैं वर्तै है। पहलै दर्शन हो है, पीछै ज्ञान हो है। बहुरि निरावण जे केवली तिनिकै दोऊ युगपत् एककाल प्रवर्तै है। इहां सूत्रविषैं दर्शनतैं पहली ज्ञान कह्या है सो ज्ञान पूज्य प्रधान है। तथा इहां सम्यग्ज्ञानका प्रकरण है तातैं कह्या है। बहुरि पूर्वैं ज्ञान पांच प्रकार कह्या है। इहां उपयोग कहनेतैं विपर्ययज्ञानभी ग्रहण कीया है। तातैं आठ प्रकार कह्या है। ऐसैं दोय सूत्रकरि कह्या जो उपयोग लक्षण सो जीवकै शरीरतैं भेदकूं साधै है। जैसैं उष्णजलकी अवस्थामैं द्रवपणा अरु उष्णपणा जल अग्निका भेदकूं साधै है। जैसैं जहां दोय वस्तुका एक पिंड होय तहां लक्षण भेदतैंही भिन्नता दीखै है ऐसा जाननां ॥

आगैं, ऐसे उपयोगकरि सहित जे जीव उपयोगी ते दोय प्रकारके हैं, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥

याका अर्थ— उपयोगवाले जीव संसारी बहुरि मुक्त कहिये सिद्ध ऐसे दोय प्रकार हैं ॥

' संसरणं ' कहिये परिभ्रमण परिवर्तन सो संसार है। तहां लक्षण ऐसा, जो, अपने भावकरि बांधे जे कर्म तिनिके वशतैं भवतैं भवांतरकी प्राप्ति ताकूं संसार कहिये। ऐसा संसार जिनिके होय ते संसारी जीव कहिये। सो यहु परिवर्तन पंचप्रकार है द्रव्यपरिवर्तन, क्षेत्रपरिवर्तन, कालपरिवर्तन, भवपरिवर्तन, भावपरिवर्तन ऐसे पांच प्रकार। तहां द्रव्यपरिवर्तन दोय प्रकार, एक नोकर्मपारिवर्तन दूसरा कर्मपरिवर्तन। तहां नोकर्मपरिवर्तन कहिये है। तीन शरीर छह पर्याप्तिके योग्य जे पुद्गलपरमाणूके स्कंध एक जीव एकसमयविषैं ग्रहण कीये ते स्निग्ध रूक्ष वर्ण गंध आदि तीव्र मंद मध्यमभावकरि जैसे तिष्ठते द्वितीयादिक समयविषें खिरे बहुरि द्वितीयादिक समयविषैं विना ग्रहे परमाणू अनंतवार ग्रहण करै, तिनिकूं उलंघिकरि बहुरि पहले ग्रहे थे तिनिमैंके गृहीतभी बहुरि नवे ग्रहण करै तेभी दोऊ मिले ग्रहण करै तिनिकूं मिश्र कहिये। तेभी अनंतवार अनंतवार ग्रहण करै तिनिकूं उलंघिकरि बहुरि बीचिमैं गृहीत ग्रहे थे ते गृहीतग्रहण होते जाय ते अनंतवार ग्रहणमैं आवै तिनिकूं उलंघिकरि जामैं जे पहले समये परमाणू ग्रहे थे तेही तैसेही स्पर्शादिके अविभागपारिच्छेदनिकी संख्या लिये तथा तितनेही परमाणूकूं लीये समयप्रबुध्द ग्रहण करै ऐसैं होतैं जो काल भया तब एक नोकर्मद्रव्यपरिवर्तन हो है ॥

बहुरि कर्मद्रव्यपरिवर्तन कहिये हैं। तहां एकसमयविषैं एक जीव अष्टविध कर्मभावकरि जे पुद्गल ग्रहण कीये ते समय अधिक आवलीमात्र काल पीछे द्वितीयादिक समयविषैं निर्जरारूप भये फेरि पहलै कह्या तिसही विधानकरि अगृहीत गृहीत मिश्र अनंतवार ग्रहण करतैं जब कोई समय ऐसा होय तामैं पहले समये तिसही जीव जैसैं स्पर्शादिकके अविभागपरिच्छेदकी संख्याकूं लीये तितनेही समयप्रबद्धमैं आय जाय तब तितनाही काल एककर्मद्रव्यपरिवर्तनका होय है। ऐसैं द्रव्य-परिवर्तन कहिये। इहां गाथा उक्तं च है ताका अर्थ— इस पुद्गलपरिवर्तनरूप संसारविषैं इस जीवनैं सर्वही पुद्गल निश्चयकरि अनंतवार अनुक्रमतैं ग्रहण करि करि छोडे है॥

आगैं क्षेत्रपरिवर्तन कहिये हैं। कोई जीव सूक्ष्म निगोदिया अपर्याप्तक सर्व जघन्य अवगाहनारूप प्रदेश शरीरकूं पाइ इस लोकविषैं मध्यके आठ प्रदेशनिकूं अपने शरीरके मध्यदेशकरि उपज्या। पीछै क्षुद्रभवकी आयु स्वासकै अठारहै भाग मऱ्या। बहुरि सोही जीव तिसही अवगाहनाकरि फेरि उपजिकरि मूवा। ऐसैंही तीसरी वार चौथी वार इत्यादि अपने शरीरके घन अंगुलकै असंख्यातवै भाग असंख्यात प्रदेश है तेतीही वार उपजवो कीया। बीचिमैं अन्य अवगाहना तथा अन्य क्षेत्रमें उपजवो कीया अनंतवार ते गिणिये नाही। बहुरि ऐसैं एक एक प्रदेश बधता सर्वलो-

कका क्षेत्रकूं परसिकरि अनुक्रमतैं उपजै अनुक्रमविना उपजै सो न गिणिये। ऐसै सर्वलोक अपना जन्मक्षेत्र करै ताकूं जेता कछु अनंतकाल वीतै ताकूं एक क्षेत्रपरिवर्तन कहिये। इहां उक्तं च गाथा है। ताका अर्थ— इस क्षेत्रसंसारविषैं भ्रमता यहु जीव सो अनंत अवगाहनारूप शरीरकूं पाय इस सर्वलोकका क्षेत्रविषैं अनुक्रमतैं उपज्या तहां ऐसा क्षेत्र न रह्या जहां न उपज्या ॥

आगैं कालपरिवर्तन कहिये हैं। कोई जीव उत्सर्पिणी कालकै पहलै समय उपज्या अपनी आयु पूरी भये मूवा। बहुरि सोही जीव दूसरे उत्सर्पिणी कालकै दूसरे समय उपज्या- फेरि आयु पूर्णकरि मूवा। बहुरि सोही जीव तीसरे उत्सर्पिणी कालकै तीसरे समय उपज्या। ऐसैंही सोही जीव चौथे उत्सर्पिणी कालकै चौथे समय जन्म्यां। ऐसैंही अनुक्रमतैं दशकोडाकोडि सागरका उत्सर्पिणी कालका समयनिविषैं निरंतर जन्म लेवो कीया बीचिबीचिमैं विना अनुक्रमतैं और और समयनिमैं जन्म लीया सो न गिणिये। बहुरि ऐसैंही अवसर्पिणी कालकै समयनिविषैं जन्म लीया। ताकैभी ऐसैंही दशकोडाकोडि सागरकै समय वीतै। बहुरि जैसै जन्म लीया तैसैंही मरण तिनि समयनिविषैं अनुक्रमतैं करै तहां जेता कछु अनंतानंतकाल वीतै ताकूं एक कालपरिवर्तन कहिये। इहां उक्तं च गाथा है ताका अर्थ— यहु जीव कालपरिवर्तननामा संसारविषैं भ्रमता उत्सर्पिणी अवसर्पि-

णीके समयनिकी पंक्तिविषैं जन्म लीया तथा मरण कीया अनेकवार, तामैं कोई समय अवशेष न रह्या ऐसैं भ्रम्या ॥

आगैं भवपरिवर्तन कहिये हैं। नरकगतिविषैं सर्व जघन्य आयु दश हजार वर्षकी है। तिस आयूकूं पाय तहां प्रथम नरकके पहले पाथडे उपज्या। पीछे अन्यगत्यादिविषैं भ्रमण करते फेरि कोई कालविषैं तिसही आयूकूं पाय तिसही पाथडे उपज्या। ऐसैंही दश हजार वर्षके समय होय तेतीवार तौ तिसही आयु सहित तहांही उपजवो कीया। बीचिमैं अन्य जायगा उपज्या सो न गिणिये। पीछे एकसमयाधिक दश हजार वर्षकी आयु पाय उपज्या। पीछे दश हजार वर्ष दोय ाधिककी आयु पाय उपज्या। इसही अनुक्रमकरि तेतीस सागरकै समय जन्मतैं तथा मरणतैं करै। अनुक्रमरहित बीचिबीचि अन्यगति तथा आयुकरि उपजै तौ ते न गिणिये ऐसैं भ्रमतैं बहुरि तैसैंही तिर्यंचके गतिविषैं जघन्य आयु अंतर्मुहूर्तकी पाय उपज्या। पहले अनुक्रमकीज्यौं तीन पल्य प्रमाण आयुके समयनिविषैं अनुक्रमतैं उपजै मरै। बहुरि तैसैंही मनुष्यगतिकी ल्यकी आयुके समयनिविषैं अनुक्रमतैं उपजै मरैं। तैसैंही देवगतिके आयु ग्रैवेयकनिकी कतीस सागरतांईकी आयुके समय तिनिविषैं तहां उपजै मरै जेता अनंताअनंतकाल वीतै

ताकूं एक भवपरिवर्तन कहिये । इहां उक्तं च गाथा है ताका अर्थ— यहु जीव भवपरिवर्तननाम संसारविषें मिथ्यात्वकरि सहित हवा संता नरककी जघन्य आयुतें लगाय ग्रैवेयकनिकी उत्कृष्ट आयुपर्यंत अनेकवार भवनिकी स्थिति आयु पाय पाय भ्रम्या है ॥

आगें भावपरिवर्तन कहिये हैं। तहां जीवके परिणामकूं भाव कहिये । सो कोई जीव संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्तक मिथ्यादृष्टि ज्ञानावरण कर्मकी प्रकृतिकी अपने योग्य जघन्यस्थिति अंतःकोटाकोटी कहिये कोडाकोडी सागरके नीचै कोडिकै ऊपरिकीकूं प्राप्त होय । ताकूं कारण कषायाध्यवसायस्थान असंख्यात लोकपरिमाण है। तिनि एक एक स्थानविषें अनंतानंत अविभागपरिच्छेद हैं। जिनिमें अनंतभागवृद्धि असंख्यातभागवृद्धि संख्यातभागवृद्धि संख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणवृद्धि अनंतगुणवृद्धि तथा तैसैंही हानिभी । ऐसैं षट् स्थानपति हानिवृद्धि संभवे ऐसे है । ते इस अंतःकोटाकोटी सागरकी स्थिति बंधनेकूं कारण जीवके कषायभावके स्थान असंख्यात लोककै जेते प्रदेश होय तेते हैं । तहां इनि कषायस्थाननिविषैं एकएकविषैं अनुभागबंधाध्यवसायस्थान जे अनुभागबंधकूं कारण जे परिणाम ते असंख्यात लोकपरिणाम हैं। तहां कोई जीव जघन्यस्थितिकूं बांधे तहां वाकूं कारण जे कषायस्थान तिनिमैंसूं जघन्यस्थान लीजिये । बहुरि तिसि कषायस्थानविषैं अनुभावकूं कारण जे

स्थान तिनिमैंसूंभी सर्वजघन्य लीजिये। तहां यो तिस प्रकृतिबंधकूं कारण जे योगस्थान ते श्रेणीके असंख्यातवै भागपरिमाण असंख्यात हैं। ते अविभागप्रतिच्छेदनकरि अनंतभागवृध्दि रहित अनंतगुणवृध्दिरहित चतुःस्थानरूपही है। तिनिमैंसूं एक तिस प्रकृतिके योग्य योगस्थान लीजिये। तहां योगस्थान पलटै तब द्वितीय तृतीय ऐसैं जगत् श्रेणीकै असंख्यातभागमात्र जे योगस्थान ते अनुक्रमतैं होय। बीचिबीचि अन्यकषायस्थान अन्य अनुभागस्थान अन्य योगस्थान होय ते न गिणिये। ऐसैं जब श्रेणीकै असंख्यातवै भाग योगस्थान होय चुकै तब एक अनुभागस्थान पलटै। ऐसै असंख्यात लोकप्रमाण अनुभागस्थानविषैं एकएकविषैं योगस्थानश्रेणीकै असंख्यातवै भाग-परिमाण होते जाय तब अनुभागस्थान असंख्यात लोकपरिमाण अनुक्रमतैं होय चुकै तब एक कषायस्थान पलटै। तब दूसरा कषायस्थान पलटै। तब दूसरा कषायस्थानविषैंभी तैसैंही अनुभाग-स्थान तथा योगस्थान होय। बहुरि तीसरे कषायस्थानविषैं अनुभागस्थान योगस्थान होय। ऐसैंही असंख्यातलोकपरिमाण कषायस्थान होय चुकै तब एक स्थितिस्थान पलटै। दूसरा स्थितिस्थान पलटै। दूसरा स्थितिस्थान समयाधिक अतंःकोटाकोटी प्रमाण लीजिये। बहुरि तैसैंही असंख्यात लोकप्रमाण कषायस्थान तिनि एकएकविषैं असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागस्थान होय। बहुरि तिनि

एकएक अनुभागस्थानविषैं असंख्यात योगस्थान होय तब तीसरा स्थितिस्थान समयाधिक लीजिये। ऐसैंही ज्ञानावरणीयकर्मकी उत्कृष्टस्थिति तीस कोडाकोडी सागरकी है। तिनिके समयाधिकक्रमकरि पूर्वं कहे तैसे कषायस्थान होय बीचिबीचिमैं और और भाव जीवके होय ते न गिणिये। ऐसैं सर्वकर्मकी स्थिति मूलप्रकृति तिनिकी तथा उत्तरप्रकृतिनिकूं कारण कषायस्थान अनुभागस्थान योगस्थानकी पलटनी अनुक्रमरूप होय चुकै। ताकूं जो अनंतानंतकाल वीतै तब एक भावपरिवर्तन कहिये। इनिका काल उत्तरोत्तर अनंतानंतगुणां जाननां। द्रव्यपरिवर्तनका अनंतकाल, तातैं अनंतगुणां क्षेत्रपरिवर्तनका काल, तातैं अनंतगुणां कालपरिवर्तनका काल, तातैं अनंतगुणां भवपरिवर्तनका काल, तातैं अनंतगुणां भावपरिवर्तनका काल, ऐसैं जाननां। इहां उक्तं च गाथा है ताका अर्थ– मिथ्यात्वकरि जीव या भावसंसारविषैं भ्रमता सर्व प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशबंधके जेते स्थान हैं ते सर्वही पाये। ऐसैं पंचप्रकार संसारतैं जे जीव रहित भये सिद्ध भये ते मुक्तजीव कहिये। इहां संसारीनिका पहलै ग्रहण कीया है। जातैं मुक्तका नाम संसारपूर्वक है। तथा संसारीनिके भेद बहुत हैं। तथा संसारी जीव अनुभवगोचर हैं। मुक्त अत्यंतपरोक्ष है। ऐसाभी हेतुतैं संसारीनिका पहलै ग्रहण कीया है॥

आगें कहै हैं, जो, ए संसारी जीव हैं ते दोय प्रकार हैं ताका सूत्र—

॥ समनस्कामनस्काः ॥ ११ ॥

याका अर्थ– संसारी जीव हैं ते समनस्क कहिये मनसहित अमनस्क कहिये मनरहित ऐसैं दोय प्रकार हैं ॥ तहां मन दोय प्रकार है; द्रव्यमन, भावमन। तहां पुद्गलविपाकी कर्मप्रकृतिके उदयकी है अपेक्षा जाकूं ऐसा हृदयस्थानविषैं फूले कमलकै आकार सूक्ष्म पुद्गलका प्रचयरूप तिष्ठै है सो तौ द्रव्यमन है। बहुरि वीर्यांतराय तथा नोइंद्रियावरण नामा ज्ञानावरणीय कर्मके क्षयोपशमकी है अपेक्षा जाकै ऐसा आत्माकै विशुद्धि सो भावमन है। तिस मनकरि सहित होय ते तौ समनस्क हैं। बहुरि जिनिकै मन विद्यमान नांही है ते अमनस्क हैं। ऐसैं मनके सद्भाव अभावकरि संसारीनिके दोय भेद हो हैं। इहां समासविषैं समनस्कका पूर्वनिपात है, सो पूज्य प्रधानपणांतें है। जातैं समनस्ककै गुणदोषका विचारसहितपणां है, तातैं प्रधान है ॥

आगैं फेरि संसारी जीवनिके भेदकी प्राप्तिके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १२ ॥

याका अर्थ– संसारी जीव हैं ते त्रस हैं तथा स्थावर हैं ऐसे दोय प्रकार हैं ॥ इहां कोई कहै

सूत्रविषैं संसारीका ग्रहण निरर्थक है। जातैं पहलै सूत्रमैं संसारीका नाम कह्या है, तातैं प्रकरणतैंही जानिये है। ताका समाधान, जो, निरर्थक नांही। जातैं पहलै याकै अनंतर सूत्र है, तामैं समनस्क अमनस्क कहे, ते संसारी ऐसे जाननेके अर्थि हैं। जो पूर्वसूत्रका विशेषण न करिये तौ ताकै पूर्व सूत्र "संसारिणो मुक्ताश्च,, ऐसा है, सो इस सूत्रका यथासंख्य संबंध होय तब समनस्क तौ संसारी अमनस्क मुक्त ऐसा अनिष्ट अर्थ होय। तातैं इस सूत्रमैं संसारीका आदिविषैं ग्रहण युक्त है॥ बहुरि यहु पूर्वापेक्षभी है, तैसैंही अगलीभी अपेक्षा है। जातैं संसारी दोय प्रकारके हैं त्रस हैं स्थावर हैं। तहां त्रस नामा नामकर्मकी प्रकृतिके उदयके वशतैं भये ते त्रस हैं। बहुरि स्थावरनामा नामकर्मकी प्रकृतिके उदयके वशतैं भये ते स्थावर हैं। इहां कोई कहै; इनि शब्दनिका अर्थ तौ ऐसा है, पीडित होय भयसहित होय भागै चालै ते त्रस बहुरि तिष्ठनेहीका स्वभाव जिनिका होय ते स्थावर सो ऐसा अर्थही क्यों न कहौ? ताका समाधान ऐसा कहै, आगमतैं विरोध आवै है। आगमविषैं ऐसा कह्या है, कायानुवादविषैं जो त्रस नाम द्वींद्रियतैं लगाय सयोगकेवलीपर्यंत है। तातैं चलने न चलनेकी अपेक्षातैं त्रस स्थावरपणां नाही है। कर्मोदयकी अपेक्षाहीतैं है। बहुरि इस सूत्रमें त्रसका ग्रहण आदिविषैं कीया है सो याकै अक्षर अल्प है तथा पूज्य प्रधान है तातैं है

पूज्यपणा सर्व उपयोग याकै संभवै है ताकी अपेक्षा है ॥

इहां विशेष; जो, चलनेहीकी अपेक्षा त्रस कहिये तौ पवनादिक त्रस ठहरै, गर्भादिकविषैं स्थावरही ठहरै। बहुरि तिष्ठनेहीकी अपेक्षा स्थावर कहिये तौ पवनादिक स्थावर न ठहरै, तातैं कर्मोदय अपेक्षाही युक्त है। बहुरि सर्वजीवनिकूं स्थावरही कहिये त्रस न कहिये। जातैं जीव क्रियातैं रहित सर्वगति है तौ जीवतत्त्वके नाना भेद न ठहरै। तातैं क्रियासहित कथंचित् असर्वगतिहि माननां। बहुरि सर्वजीवनिकूं त्रसही मानिये स्थावर न मानिये तौ वनस्पतिकायिकादिक जीव न ठहरै। जातैं चलतेकूंही जीव कहै तब सूता मूर्च्छित अंडेमें तिष्ठताभी जीव न ठहरै। जो कहै तिनिका आकारविशेष है, तातैं जीव हैं तौ ऐसै वनस्पतिकेभी जलादि आहार पावनें न पावनेतैं हरित होना सूकी जाना ऐसैं लक्षणतैं जानिये ए जीव हैं। तातैं स्थावर त्रस दोऊही भेद माननां युक्त है ॥

आगैं, त्रसका भेद पहली कहना अनुक्रम है, ताकूं उलंघ्य एकेंद्रियस्थावरके भेद प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं। जातैं एकेंद्रियके भेद बहुत नाहीं कहने हैं। तातैं तिनिकूं पहली कहि जाय है-

॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥

याका अर्थ— पृथिवी अप् तेज वायु वनस्पति ए पंच स्थावर जीव हैं ॥ स्थावर नामा नामकर्मकी प्रकृतिके भेद पृथिवीकायिकादि कहे। ताके उदयके निमित्ततैं जीवनिके पृथिवीकायिकादिक संज्ञा जाननी। इनिके शब्द पृथनादिक धातुनितैं निपजे हैं। तौभी रूढिके वशतैं पृथनादिक कहिये विस्तारादिक अर्थकी इहां अपेक्षा न करणी। इनि पृथिवी आदिके आर्ष कहिये ऋषिनिके आगमविषैं च्यारि च्यारि भेद कहे हैं। सोही कहिये पृथिवी, पृथिवीकाय, पृथिवीकायिक, पृथिवीजीव। अप्, अप्काय, अप्कायिक, अप्जीव। तेज, तेजकाय, तेजकायिक, तेजजीव। वायु, वायुकाय, वायुकायिक, वायुजीव। वनस्पति, वनस्पतिकाय, वनस्पतिकायिक, वनस्पतिजीव ऐसैं। तहां अचेतनपुद्गल अपने स्वभावहीतैं कठिणता आदि गुणसहित है ताकूं तौ पृथिवी कहिये। जातैं अचेतनपणातैं पृथिवीकाय नामकर्म प्रकृतिके उदयविनाभी पृथनक्रिया जो फैलाना आदि क्रिया ताकरि सहित पृथिवी हैही। अथवा दूसरा अर्थ यहु, जो, जामैं अगिले तीनूं भेद पाइये ऐसा सामान्यकूंभी पृथिवी कहिये। बहुरि पृथिवीकायिक जीव जामें था सो मूवा ताका शरीर रह्या ताकूं पृथिवीकाय कहिये। जैसैं मूवा मनुष्यका काय होय तैसैं। बहुरि पृथिवीकाय जाकै

पूज्यपणा सर्व उपयोग याकै संभवै है ताकी अपेक्षा है ॥

इहां विशेष; जो, चलनेहीकी अपेक्षा त्रस कहिये तौ पवनादिक त्रस ठहरै, गर्भादिकविषै स्थावरही ठहरै। बहुरि तिष्ठनेहीकी अपेक्षा स्थावर कहिये तौ पवनादिक स्थावर न ठहरै, तातैं कर्मोदय अपेक्षाही युक्त है। बहुरि सर्वजीवनिकूं स्थावरही कहिये त्रस न कहिये। जातैं जीव क्रियातैं रहित सर्वगति है तौ जीवतत्त्वके नाना भेद न ठहरै। तातैं क्रियासहित कथंचित् असर्वगतिहि माननां। बहुरि सर्वजीवनिकूं त्रसही मानिये स्थावर न मानिये तौ वनस्पतिकायिकादिक जीव न ठहरै। जातैं चलतेकूंही जीव कहै तब सूता मूर्च्छित अंडेमें तिष्ठताभी जीव न ठहरै। जो कहै तिनिका आकारविशेष है, तातैं जीव हैं तौ ऐसै वनस्पतिकेभी जलादि आहार पावने न पावनेतैं हरित होना सूकी जाना ऐसैं लक्षणतैं जानिये ए जीव हैं। तातैं स्थावर त्रस दोऊही भेद माननां युक्त है ॥

आगैं, त्रसका भेद पहली कहना अनुक्रम है, ताकूं उलंघ्य एकेंद्रियस्थावरके भेद प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहे हैं। जातैं एकेंद्रियके भेद बहुत नाहीं कहने हैं। तातैं तिनिकूं पहली कहि जाय है–

॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥

याका अर्थ— पृथिवी अप् तेज वायु वनस्पति ए पंच स्थावर जीव हैं ॥ स्थावर नामा नामकर्मकी प्रकृतिके भेद पृथिवीकायिकादि कहे। ताके उदयके निमित्ततैं जीवनिकै पृथिवीकायिकादिक संज्ञा जाननी। इनिके शब्द पृथनादिक धातुनितैं निपजे हैं। तौभी रूढिके वशतैं पृथनादिक कहिये विस्तारादिक अर्थकी इहां अपेक्षा न करणी। इनि पृथिवी आदिके आर्ष कहिये ऋषिनिके आगमविषैं च्यारि च्यारि भेद कहे हैं। सोही कहिये पृथिवी, पृथिवीकाय, पृथिवीकायिक, पृथिवीजीव। अप्, अप्काय, अप्कायिक, अप्जीव। तेज, तेजकाय, तेजकायिक, तेजजीव। वायु, वायुकाय, वायुकायिक, वायुजीव। वनस्पति, वनस्पतिकाय, वनस्पतिकायिक, वनस्पतिजीव ऐसैं। तहां अचेतनपुद्गल अपने स्वभावहीतैं कठिणता आदि गुणसहित है ताकूं तौ पृथिवी कहिये। जातैं अचेतनपणातैं पृथिवीकाय नामकर्म प्रकृतिके उदयविनाभी प्रथनक्रिया जो फैलाना आदि क्रिया ताकरि सहित पृथिवी हैही। अथवा दूसरा अर्थ यहु, जो, जामैं अगिले तीनूं भेद पाइये ऐसा सामान्यकूंभी पृथिवी कहिये। बहुरि पृथिवीकायिक जीव जामैं था सो मूवा ताका शरीर रह्या ताकूं पृथिवीकाय कहिये। जैसैं मूवा मनुष्यका काय होय तैसैं। बहुरि पृथिवीकाय जाकै

होय ऐसा जीव ताकूं पृथिवीकायिक कहिये । सो यहु, पृथिवी शरीरके संबंधसहित है । बहुरि पृथिवीकायनामानामकर्मकी प्रकृतिका जाकै उदय आया अन्यकायके शरीरतैं छूट्या जेतैं पृथिवीकाय शरीर नांही ग्रहण कीया जेतैं अंतरालमैं कार्मणयोगमें तिष्ठै तेतैं ताकूं पृथिवीजीव कहिये । ऐसैंही अप्कायादिकविषैं अर्थ लगा लेणां ॥ ए पांच स्थावरजीव हैं। तिनिकै प्राण च्यारि । स्पर्शनेंद्रिय-प्राण, कायबलप्राण, उच्छ्वासनिश्वासप्राण, आयुप्राण ऐसैं ॥ इहां विशेष जो, केवलज्ञानतैं लगाय अनादिकर्मसंयोगतैं घटतैं घटतैं ज्ञानका अपकर्ष करिये तब सूक्ष्मज्ञान एकेंद्रियनिकै रहै है । इहां प्रश्न, जो, घटतैं घटतैं जडही क्यों न रह्या? ताकूं कहिये घटना तौ आपहीविषैं कहिये । जड तौ अन्य द्रव्य है । जातैं प्रध्वंसाभाव सत्त्वहीकै कहिये । बहुरि सत्त्वका अत्यंत अभावभी युक्त नांही । कोई कहै, कर्मका अत्यंत अभाव कैसैं है? ताकूं कहिये कर्मरूप पुद्गल भये थे तिनिका कर्मभावका नाश होय पुद्गलपरमाणूंनिका तौ अभाव न भया । ऐसैं एकेंद्रियनिविषैं ज्ञानका परम अपकर्ष निश्चय कीजिये । तातैं स्थावरजीवनिका सद्भाव युक्त है ॥

आगैं कहै हैं, जो, त्रसजीव कोन हैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥ १४ ॥

याका अर्थ— द्वींद्रियजीवनैं आदि देकरि तेइंद्रिय चौइंद्रिय पंचेंद्रिय ऐसै त्रसजीव हैं ॥ दोय हैं इंद्रिय जाकै ताकूं द्वींद्रिय कहिये। बहुरि द्वींद्रिय हैं आदि जिनिकै ते द्वींद्रियादिक कहिये। इहां आदिशब्द है सो आगमविषैं इनिकी व्यवस्था है, ताका वाचक कहिये हैं। द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय ऐसै। इहां तद्गुणसंविज्ञान समासका ग्रहण है। तातैं द्वींद्रियकाभी ग्रहण करनां। जातैं या समासमैं आदिकाभी पदार्थ ग्रहण हो है। बहुरि पूछै है, इनिके प्राण केते केते हैं? तहां कहिये हैं। द्वींद्रियके छह प्राण हैं। च्यारि तौ एकेंद्रियकै पहलै कहे तेही लेणे। बहुरि रसना इंद्रिय बहुरि वचनबल ये दोय अधिक कीये छह भये। बहुरि त्रींद्रियकै प्राण इंद्रियकरि अधिक सात प्राण हैं। बहुरि चतुरिंद्रियके चक्षु इन्द्रियकरि अधिक आठ प्राण हैं। बहुरि पंचेंद्रियके तिर्यंचनिविषैं असंज्ञीकै तो कर्ण इंद्रियकरि अधिक नव हैं। बहुरि संज्ञीके मनबलकरि अधिक दश प्राण हैं। ऐसै पांच सूत्रनिकरि सर्व संसारी जीव कहे। इहां कोई पूछै, विग्रहगति अंतरालमैं इंद्रिय नाही तिनिका ग्रहण कैसै भया? तहां कहिये, जो, त्रसस्थावर नामकर्मका उदय विग्रहगतिमैंभी है। तिस विना होय तौ मुक्तजीव ठहरे, तातैं तेभी आय गये ॥

आगें, द्वींद्रिय आदि ऐसा कह्या तहां आदिशब्दमें कहांताईं गिणनां? ताकी संख्याकी

मर्यादा जनावनेकूं नियमका सूत्र कहै हैं—

॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५ ॥

याका अर्थ— इंद्रिय पांच हैं ॥ इंद्रियशब्दका अर्थ तौ पहलै कह्याही था, जो इंद्र कहिये आत्मा संसारी जीव ताका लिंग कहिये जनावनेका चिन्ह। तथा इंद्र जो नामकर्म ताकरि रचे जे आकार ते इंद्रिय हैं। बहुरि पंच शब्दकरि नियम किया, जो इंद्रिय पांचही हैं, हीनाधिक नाही। इहां अन्यमती कहै, जो, कर्मइंद्रिय कहिये वचन हाथ पायु उपस्थ इनिकाभी ग्रहण चाहिये। ताकूं कहिये, इहां न चाहिये। जातैं इहां आत्माका उपयोगका प्रकरण है। तातैं उपयोगके कारणही ग्रहण चाहिये। क्रियाके साधन नाही कहे। जो क्रियासाधनभी कहिये तौ अनवस्था आवै। अंगोपांग नामा नामकर्मनैं रचे जे क्रियाके साधन ते सर्वही ग्रहण कीये चाहिये। वचनादिक पांचही ग्रहण कैसै होय? ॥

आगैं, तिनि इंद्रियनिके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ द्विविधानि ॥ १६ ॥

याका अर्थ— जे इंद्रिय कहे ते द्रव्येंद्रिय भावेंद्रियकरि दोय प्रकार हैं ॥ इहां विधशब्द है सो

प्रकारवाची है। ताका समास ऐसा होय है, दोय प्रकार जाके ताकूं द्विविध कहिये दोय प्रकार हैं। ऐसा अर्थ भया। ते कौन? द्रव्येंद्रिय भावेंद्रिय ऐसैं ॥

तहां द्रव्येंद्रियके स्वरूपका निर्णयके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥ १७ ॥

याका अर्थ— निर्वृति उपकरण ऐसै दोय प्रकार द्रव्येंद्रिय है ॥ तहां जो कर्मकारि रची होय ताकूं निर्वृति कहिये। सो दोय प्रकार है। बाह्य निर्वृति अभ्यंतर निर्वृति। तहां जो उत्सेध अंगुलकै असंख्यातवै भाग परिणाम शुध्द जे आत्माके प्रदेश, ते न्यारे न्यारे नेत्र आदि इंद्रियनिके आकारकारि अवस्थित होय तिनिकी वृत्ति सो तौ अभ्यंतरनिर्वृति है। बहुरि तिनि आत्माके प्रदेशनिविषैं इंद्रिय है नाम जिनिके ऐसै जे न्यारे न्यारे आकार नामकर्मके उदयकारि निपजाये हैं अवस्थाविशेष जिनिकै ऐसे ते पुद्गलके संचय समूह सो बाह्यनिर्वृति है। बहुरि जो निर्वृतीका उपकार करै सो उपकरणभी दोय प्रकार है। अभ्यंतर उपकरण बाह्य उपकरण। तहां काला धौला जो नेत्रनिविषैं मंडल गोलाकार आदि है सो तौ अभ्यंतर है। बहुरि वांफणी तथा नेत्र जाकै ढकै ऐसे डोला इत्यादि बाह्य उपकरण है। तैसेही अन्य इंद्रियके जानने ॥

आगैं भावेंद्रियकूं कहिये हैं। ताका सूत्र--

॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥ १८ ॥

याका अर्थ-- लब्धि उपयोग ए दोऊ भाव इंद्रिय हैं॥ तहां ज्ञानावरणके क्षयोपशमका विशेषकी प्राप्ति सो लब्धि है। बहुरि जाके निकट होतैं आत्मा द्रव्य इंद्रियरूप निर्वृतिव्यापार करै प्रवर्तै ऐसा जो लब्धि जाकूं निमित्त होय ऐसा जो आत्माका परिणाम सो उपयोग है। भावार्थ जो ज्ञेयके आकार परिणमनरूप ज्ञान होय सो उपयोग कहिये ऐसै ए दोऊ भावेंद्रिय हैं। इहां कोई पूछे है, जो, उपयोग तौ इंद्रियका फल है ताकूं इंद्रिय कैसै कहिये? ताका समाधान, जो, कारणका धर्म होय ताकूं कार्यविषैंभी देखिये है। ऐसै घटकै आकार परिणम्या ज्ञानकूं घट ऐसा कहिये ऐसै है। बहुरि इंद्रियशब्दका स्वार्थ है सोभी उपयोगविषैं मुख्य है तातैंभी इंद्रिय कहिये। जैसैं इंद्र कहिये आत्मा ताका लिंग होय ताकूं इंद्रिय कहिये, सो यहुभी अर्थ उपयोगविषैं मुख्यपणैं है। जातैं ऐसा कह्या है, जो, उपयोगलक्षण जीव है। सो यातैं उपयोगकूं इंद्रिय कहना न्याय्य है॥

आगैं कहे जे इंद्रिय तिनिकी संज्ञा तथा अनुक्रम प्रतिपादनै अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥ १९ ॥

याका अर्थ--- स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु श्रोत्र ए पांच इंद्रियनिके नाम हैं ॥ इनिके नामनिका निरुक्ति अर्थ कहिये है। लोकविषैं इंद्रियनिकै पराधीन विवक्षा देखिये है। जैसैं लोक कहै है मै इनि नेत्रनिकरि नीकै देखूं हूं। तथा मै इनि काननिकरि भलै सुणूं हूं। तातैं परतंत्रपणातैं स्पर्शनादिकके करण अर्थपणां है सोही कहिये है। वीर्यांतराय मतिज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम वहुरि अंगोपांगनामा नामकर्मका उदयका लाभका आलंबनतैं आत्मा जाकरि विषयकूं स्पर्शै ताकूं स्पर्शन कहिये। ऐसैंही जाकरि अपने विषयकूं आस्वादै ताकूं रसन कहिये। ऐसैंही जाकरि सूंघै ताकूं घ्राण कहिये। ऐसैंही जाकरि देखै ताकूं चक्षु कहिये। ऐसैंही जाकरि सुणै ताकूं श्रोत्र कहिये। वहुरि लोकविषैं स्वतंत्र कहिये स्वाधीन विवक्षाभी है। जैसे लोक कहै है ए मेरे नेत्र नीके देखै हैं। ए मेरे कान नीकै सुणै हैं इत्यादि। तातैं स्वतंत्र अर्थ कीजिये तब कर्ता अर्थभी होय है। जैसैं जो विषयकूं स्पर्शै सो स्पर्शन कहिये। ऐसैंही जो आस्वादै ताकूं रसन कहिये। सूंघै ताकूं घ्राण कहिये। देखै ताकूं चक्षु कहिये। सुणै ताकूं श्रोत्र कहिये। इनिका सूत्रमैं संज्ञाका अनुक्रम है। सो एकेंद्रियादि जीवनिकै एक एक वधै ताका अनुक्रम जनावनेके अर्थि है सो आगै कहसी ॥ इहां विशेष, जो, स्पर्शनका आदिविषैं ग्रहण कीया है। जातैं यह शरीरव्यापी है। रसन घ्राण

चक्षु अल्पव्यापी है। वहुरि श्रोत्र अंतमैं कह्या, जातैं यहु बहु उपकारी है। धर्मश्रवणादि उपकार यातैं प्रधानताकरि है। बहुरि इनि इंद्रियनिके विषैं परस्पर भेदभी है। जातैं अपने अपने विषयकूं ग्रहण करे हैं। बहुरि अभेदभी है। जातैं भाव इंद्रिय तौ एक आत्माहीका परिणाम है। द्रव्यइंद्रिय एक पुद्गलका परिणाम है ॥

आगैं इनि इंद्रियनिका विषय दिखावनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥ २० ॥

याका अर्थ-- स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द ये पंचेंद्रियनिके पांच विषय हैं ॥ इहां स्पर्शादिशब्दनिकै द्रव्यपर्यायकी प्रधानविवक्षाविषैं कर्मसाधन तथा भावसाधन जाननां। तहां द्रव्यप्रधान विवक्षाविषैं तौ कर्मसाधन है। जो स्पर्शिये ताकूं स्पर्श कहिये। आस्वादिये ताकूं रस कहिये। सूंघिये ताकूं गंध कहिये। वर्णिये ताकूं वर्ण कहिये। जो शब्दरूप होय ताकूं शब्द कहिये। बहुरि पर्यायकी प्रधानविवक्षाविषैं भावसाधन है। स्पर्शना सो स्पर्श है। रसना सो रस है। सूंघना सो गंध है। वर्णना सो वर्ण है। शब्द होना सो शब्द है। बहुरि इनिका अनुक्रम इंद्रियनिकै अनुक्रमतैं कह्या है ॥

आगैं कहै हैं, जो मन अनवस्थित है तातैं यहु इंद्रिय नाही। ऐसैं याकै इंद्रियपणां निषेध्या है। सो कहा यहु मन उपयोगका उपकारी है की नांही है? तहां कह्या जो उपकारी है मनविना इंद्रियनिकै विषयनिविषैं विशिष्ट अपने प्रयोजनरूप प्रवृत्ति नांही होय है। तब पूछे है, मनकै अर इंद्रियनिकै सहकारी मात्रही प्रयोजन है कि कछु औरभी प्रयोजन है? ऐसैं पूछे मनका प्रयोजन दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥

याका अर्थ— अनिंद्रिय कहिये मन ताका श्रुत कहिये श्रुतज्ञानगोचर पदार्थ है सो विषय है प्रयोजन है॥ श्रुतज्ञानका विषय जो अर्थ ताकूं श्रुत कहिये। सो अनिंद्रिय कहिये मन ताका विषय है। जातें पाया है श्रुतज्ञानावरण कर्मका क्षयोपशम जानैं ऐसा जो आत्मा ताकै सुणे पदार्थविषैं मनका आलंबनस्वरूप ज्ञानकी प्रवृत्ति है। अथवा श्रुतज्ञानकूंभी श्रुत कहिये है। सो यह ज्ञान अनिंद्रियका अर्थ कहिये प्रयोजन है। यहु प्रयोजन मनकै स्वाधीनही साध्यरूप है। इंद्रियनिका आधीनपणां यामें नाही है। इहां कोई कहै सुननां तौ श्रोत्र इंद्रियका विषय है। ताका समाधान, जो, सुननां तौ श्रोत्र इंद्रियका विषय है सो तौ मतिज्ञान है। तिस पीछे जीवादि पदार्थ विचारिये

सो श्रुतज्ञान है। सो मनहीका विषय है ॥

आगैं, न्यारे न्यारे विषय जिनके ऐसे कहे जे इंद्रिय, तिनिके स्वामिपणांका निर्देश कीया चाहिये। तहां पहली कह्या जो स्पर्शन इंद्रिय ताका स्वामीपणाका नियमकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥ २२ ॥

याका अर्थ-- वनस्पति है अंत जिनिकै ऐसे जे पूर्वोक्त पृथिवी अप् तेज वायु वनस्पति तिनिकै एक कहिये एक स्पर्शन इंद्रिय है ॥ एक कहिये पहला स्पर्शन इंद्रिय सो पृथिवीतें लगाय वनस्पतिपर्यंत जीवनिकै जाननां। तिस स्पर्शन इंद्रियका उत्पत्तिकारण कहिये है। वीर्यांतराय स्पर्शन इंद्रियावरणनामा ज्ञानावरण कर्मके क्षयोपशम होतैं बहुरि अवशेष इंद्रियज्ञानावरणकर्मका सर्वघातिस्पर्द्धकनिका उदय होतैं बहुरि शरीर नामा नामकर्मका उदयका लाभका अवलंबन होतें एकेंद्रियजाति नामकर्मका उदयके वशवर्तिपणां होतैं जीवकै एक स्पर्शन इंद्रिय प्रकट होय है। तातैं स्पर्शन इंद्रियके स्वामी पांच स्थावरकायके जीव हैं। ऐसैं जाननां ॥

आगैं, अन्य इंद्रियनिके स्वामी दिखावनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥ २३ ॥

याका अर्थ— कृमि कहिये लट आदिक, पिपीलिका कहिये कीडी, आदिक, भ्रमर कहिये भौरा आदिक, मनुष्य आदिक इनिकै स्पर्शन पीछै एक एक इंद्रिय बधती है ॥ एक एक ऐसा वीप्सा कहिये वारवार कहणेका अर्थमें दोय वार एकशब्द कह्या है। तहां कृमिकूं आदिकरि अरु इंद्रियविषैं स्पर्शनकूं आदिकरि एक एक बधता जोडनां। बहुरि आदिशब्द सर्वकै जुदा जुदा कहनां। इहां कृमि कहिये लटकूं आदिकरि जीवनिकै रसनकरि अधिक स्पर्शन है। स्पर्शन रसन ए दोय इंद्रिय हैं। बहुरि पिपीलिका कहिये कीडी आदिक जीवनिकै स्पर्शन रसन घ्राण ऐसे तीन इंद्रिय हैं। बहुरि भ्रमर आदिक जीवनिकै स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु ऐसे च्यारि इंद्रिय हैं। बहुरि मनुष्य आदि जीवनिकै स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु श्रोत्र ऐसे पांच इंद्रिय हैं। ऐसे एकएक बधता यथासंख्य जाननां। इनकी उत्पत्ति स्पर्शनकी उत्पत्तिकीज्यों कर्मनिके निमित्ततैं हो है। तहां आगै आगै जे इंद्रिय जिनिकै नाही, तिनिकै तिनि इंद्रियावरण कर्मका सर्वघातिस्पर्द्धकनिका उदय जानि लेना ॥

आगें, ए कहे जे दोय भेदरूप तथा इंद्रियभेदकरि पंचप्रकार संसारी जीव तिनिविषैं पंचेंद्रियके भेद न कहे, तिनिकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ सञ्ज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥

याका अर्थ— पंचेंद्रिय जीवनिविषें जे मनसहित हैं ते संज्ञी हैं ॥ मन तौ पूर्वें कह्या, सो जाननां। तिस मनकरि सहित होय ते समनस्क ते संज्ञी हैं। संज्ञीके कहनेकी सामर्थ्यहीतैं अवशेष संसारी जीव रहे ते असंज्ञी हैं ऐसा सिद्ध भया। तातैं याका न्यारा सूत्र न कह्या। इहां कोई तर्क करै है, जो, संज्ञी ऐसा कहनेतैंही अर्थ तौ आय गया। ताका समनस्क ऐसा विशेषण तौ अनर्थक है। जातैं मनका व्यापार हितकी प्राप्ति अहितका परिहारकी परीक्षा करना है, सो संज्ञाभी सोही है। ताका समाधान, जो, ऐसा कहनां युक्त नांही। जातैं संज्ञा ऐसा शब्दके अनेक अर्थ हैं तहां व्यभिचार आवै है। तहां प्रथमतौ संज्ञा नामकूं कहिये है। सो नामरूप संज्ञा जाकै होय सो संज्ञी ऐसा कहतैं सर्वही प्राणी नामसहित हैं तहां अतिप्रसंग भया। बहुरि कहै संज्ञा संज्ञानं कहिये भले ज्ञानकूं कहिये है। तौ तहांभी अतिप्रसंग है। जातैं संज्ञान सर्वही प्राणिनीकै है। बहुरि आहार आदि अभिलापकूंभी संज्ञा कहिये है। तहांभी अतिप्रसंगही होय। जातैं यहभी सर्वही प्राणीनिकै पाईये है। तातैं समनस्कविशेषण सफल है। बहुरि ऐसै कहै गर्भके विषैं तिष्ठता जीव तथा अंडेविषैं तिष्ठता तथा मूर्छित भया तथा सूता इत्यादि अवस्थारूप प्राणीनिकै हित अहितकी परीक्षाका

अभाव होतैंभी मनके सद्भावतैं संज्ञीपणा वणै है ॥ इहां विशेष, जो, शिक्षा क्रिया आलापका ग्रहण-रूप संज्ञा जाकै होय सोही संज्ञी है । बहुरि केई कहे हैं, जाकै स्मरण होय सो संज्ञी है, तहां ऐसा जाननां, जो, स्मरणसामान्य तौ सर्वही प्राणीनिकै है । तत्कालका हूवा बच्छा माताके स्तनकूं लागि जाय है, सो पूर्व आहारकरही आया है । तातैं आहारकी अभिलाषारूप संस्कारका स्मरण वाकै है । इत्यादि उदाहरण सर्वजीवांकै अनेक जन्ममैं अनुभवता आया है । सो अभिलाषारूप संज्ञा तौ सर्वहीकै स्मरणसामान्य है । बहुरि स्मरणविशेष सो शिक्षा क्रिया आलापविपैं है, हैही । ऐसै जीवका स्वरूपतत्व स्वलक्षणभेद इंद्रिय मन अर इंद्रिय मनके विषय स्वामी कहे, ते सामान्य तौ संग्र-हनयकरि विशेष व्यवहारनयकरि दोऊ प्रमाणकरि जानने ॥

आगैं पूछे है, हिताहितका विचार प्राणीनिकै मनके विचारपूर्वक है, तौ नवा शरीरप्रति ग्रहणकूं उद्यमी भया अगिला शरीर छूटि गया तब मन तौ है नांही, तौ याके कर्मका आस्रव होय है । सो काहेतैं हो है? ऐसैं पूछैं उत्तर कहे हैं—

॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— विग्रहगति कहिये अंतरालविपैं अनाहारक अवस्थामैं कार्मणयोग है ॥ विग्रह-

नाम देहका है। ताके अर्थि जो गति कहिये गमन करै, ताकूं विग्रहगति कहिये। अथवा विग्रह कहिये व्याघात कर्मका आस्रव होतैंभी नोकर्मपुद्गलका निरोध कहिये रुकना। ऐसैं विग्रहकरि गमन करै सो विग्रहगति है। बहुरि सर्वशरीरनिका बीजभूत उत्पत्ति करणहारा शरीर सो कार्मण शरीर है। ताकूं कर्म कहिये। बहुरि योग वचन मनकायके पुद्गलवर्गणा है निमित्त जाकूं ऐसा आत्माके प्रदेशनिका चलाचलपणां है। तिस कार्मणशरीरकरि कीया जो योग, सो विग्रहगतिविषैं है। ऐसा विग्रहगतिविषैं कर्मका ग्रहणभी होय है। बहुरि देशांतरका संक्रमणभी होय है॥ इहां विशेष, जो, कोई कोई कहै है, आत्मा तो सर्वगति है ताकै गमनक्रिया नाही। बहुरि पूर्वशरीर छूट्या तब उत्तरशरीर धार्‍या तब अंतरालभी नाही। ताका समाधान, जो, आत्मा गमनक्रिया-सहित प्रत्यक्ष दीखै है। जातैं आत्मा शरीरप्रमाण है सो तौ अनुभवगोचर है। बहुरि शरीरकी साथि याका गमन है। बहुरि अन्यशरीरग्रहण करै तब अंतरालमैं कार्मणशरीर न होय तौ तहां मुक्तजीव-वत् कर्मका ग्रहणभी न होय, तब नवीन शरीर काहेकूं धारै? तातैं गमनभी करै है अरु अंतरालमैं कार्मणयोगभी है। यह निश्चय है॥

आगें, देशांतरनैं गमन करता जे जीवपुद्गल तिनिकै गमन श्रेणीबंध सूधा होय है कि जैसें

तैसें? ऐसें पूछे सूत्र कहे हैं—

॥ अनुश्रेणि गतिः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— जीवनिका तथा पुद्गलनिका गमन आकाशके श्रेणीबंध प्रदेशनिविषैंही होय है, विदिशारूप न होय है ॥ लोकके मध्यतैं लगाय ऊर्ध्व अधः तिर्यक् आकाशके प्रदेशनिका अनुक्रमतैं पंक्तिरूप अवस्थान ताकूं श्रेणी कहिये । इहां अनुशब्द श्रेणीके अनुक्रमकूं कहे हैं। जीवकी तथा पुद्गलनिकी गति सूधी होय है ऐसा अर्थ है। इहां कोई पूछे है, जीवका तौ अधिकार है, इहां पुद्गलका ग्रहण कैसें कीया? ताका उत्तर, जो, इहां गमनका ग्रहण है सो गमन जीवकैभी है.पुद्गलकैभी है। तातैं दोऊका ग्रहण करना। जो जीवनिहीकै गति मानिये तौ गतिग्रहण अनर्थक होय जातैं गतिका अधिकार हैही। बहुरि उत्तरसूत्रविषैं जीवका ग्रहण है तातैं इहां पुद्गलकीभी प्रतीति होय है। बहुरि कोई पूछे है, चंद्रमा आदि ज्योतिषी देवनिकै मेरुकी प्रदक्षिणाके कालविषैं विद्याधरादिकके विनाश्रेणीभी गमन है। विदिशारूप वक्रगमनभी है। ऐसें कैसें कह्या? गमन है। ताका उत्तर- इहां कालका तथा क्षेत्रका नियमकरि कह्या है। तहां कालमैं अन्यभवकूं गमन हो है। तथा मुक्तजीवनिकै ऊर्ध्व गमन हो है। तिस

कालमें श्रेणीरूपही गमन हो है। तहां तौ कालनियम है। बहुरि ऊर्ध्वलोकतैं अधोलोक अधोलोकतैं ऊर्ध्वलोक तिर्यक् लोकतैं नीचै उपरि गमन करै सो श्रेणीरूपही करै। तथा पुद्गलकी परमाणू एक समयमें चोदा राजू गमन करै सो सूधाही गमन है। ऐसैं देशका नियम है। बहुरि औरप्रकार गमन है सो नियम नाहीं-सूधाभी होय वक्रभी होय ॥

आगें तिसहीका विशेष जाननेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ अविग्रहा जीवस्य ॥ २७ ॥

याका अर्थ— मुक्तजीवकी गति अविग्रहा कहिये वक्रताकरि रहित है। श्रेणीबंध गति करि एक समयविषैं सिद्धिक्षेत्रविषैं जाय तिष्ठै है॥ विग्रहनाम व्याघातका है। ताकूं कौटिल्य कहिये वक्रताभी कहिये। ऐसा विग्रह जहां नाहीं सो अविग्रह कहिये। ऐसी अविग्रह गति है, सो मुक्तजीवकै है। इहां मुक्तजीवका नाम कैसैं जानिये? जो अगले सूत्रमें संसारीका नाम है, तातैं जानिये यहां मुक्तजीव है। बहुरि इहां कोई तर्क करै है, अनुश्रेणि गति है, इस सूत्रकरिही अन्य गतिका निषेध भया, फेरि इस सूत्रकरि कहा प्रयोजन रह्या? ताका समाधान, पूर्वसूत्रविषैं अनुश्रेणि गति तौ कही। तहां इस सूत्रकरि ऐसा जानिये, जो, कहूं श्रेणीविनांभी गमन है, ताकै अर्थि

यह सूत्र है। इहां फेरी कहै, देशकालका नियम तहांही कह्या है। ताकूं कहिये, सूत्रविषैं देशकालका नियम कह्या नाही, तातैं इस सूत्रतें जान्या जाय है ॥

आगे, जो कर्मके संगतें रहित असंग जो आत्मा ताकै तौ प्रतिबंधरहित लोकके अंततांई गमनकालके नियमरूप जानिये है। बहुरि देहसहित जो संसारी जीव है ताकी गति प्रतिबंध सहित है कि मुक्त आत्माकीज्यों सूधी है? ऐसैं पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥

याका अर्थ— संसारी जीवकी गति विग्रहसहित है मोडा खाय है। तहां च्यारि समयकै पहली पहली तीन मोडारूप है ॥ इहां प्राक् चतुर्भ्यः ऐसा शब्द तौ काल जो समय ताका नियमके अर्थि है। प्राक् शब्दका मर्यादा अर्थ है। तहां चौथा समय पहली विग्रहवान् गति हो है। चौथाविषैं विग्रह कहिये मोडा नांही है। इहां पूछै है, जो, चौथे समये विग्रहगति काहेतें नांही? ताका उत्तर, जो, प्राणी, सर्वोत्कृष्ट विग्रह है निमित्त जाकूं ऐसा क्षेत्रकूं निष्कुट ऐसी संज्ञा है, तहां उपजनां होय तहां अनुश्रेणिका अभावतें इषुगतिका अभाव होतें निष्कुटक्षेत्र पहुंचनेकूं तीन जामैं मोडा ऐसा त्रिविग्रहगति आरंभै है। तिस सिवाय ऐसा क्षेत्र नांही जामैं मोडा खाय पहुंचै। तातैं तीनही

समय विग्रह है। चौथे समयमें नांही। इहां सूत्रमें चशब्द है सो संसारीकी गति विग्रहसहितभी है विग्रहरहितभी है ऐसा समुच्चयकै अर्थि है॥ इहां विशेष, जो, गति कही तिनकी संज्ञा आगमविषें ऐसी है इषुगति, पाणिमुक्त, लांगलिका, गोमूत्रिका। तहां इषुगति तौ विग्रहरहित है। ताकां दृष्टांत जैसें इषु कहिये तीर चालै सो सूधा ठिकाणें पहुचै तैसें इषुगति है। याका काल एकसमयही है। सो संसारीनिकैभी हो है। वहुरि मुक्तजीवकैभी हो है। वहुरि पाणिमुक्तविषें एक मोडा हो है। याका काल दोय समय है। तहां जैसें पाणि कहिये हाथ ताविषैं जलादिक द्रव्य होय ताकूं क्षेपिये तब एक मोडा ले, सो यहु संसारीकैही होय है। वहुरि लांगली गति है ताविषें दोय मोडा ले है। याका काल तीन समय है। जैसें लांगल नाम हलका है ताकै दोय मोडा होय है यहुभी संसारीकैही है। वहुरि गोमूत्रिका गतिका काल च्यारि समय हैं ताविषें तीन मोडा ले है। चौथे समय निष्कुटक्षेत्रविषें पहुंचे है। जैसें गऊ मूतता चल्या जाय तब मूतविषैं केई मोडा होय हैं सो इहां उपमामात्र है। तिनकूं वहुही कहिये तातैं तीनही मोडा हैं। यहुभी संसारीकैही होय है॥

आगे पूछै है, विग्रहवती गतिका तौ कालका नियम कह्या वहुरि अविग्रहवतीका कालनियम केता है? ऐसें पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥ २९ ॥

याका अर्थ— अविग्रहगति है सो एक है समय है काल जाका ऐसी है ॥ एक है समय जाकै ताकूं एकसमया कहिये। नांही विद्यमान है विग्रह जाकै ताकूं अविग्रहा कहिये। ऐसै गतिसहित जे जीवपुद्गल तिनिकी गति अव्याघात कहिये रुकनां मोडा लेना तिनिविनां एकसमय-कालमात्र है। याहीकूं ऋजुगति कहिये है सो क्षेत्र अपेक्षा लोकके अंततांई है। अधोलोकतैं लगाय ऊर्ध्वलोकपर्यंत लोकका अंत चौदह राजू है। सो जीव पुद्गल सूधा गमन करै तौ एक समयमैं चौदह राजू पहुंचै ऐसा भावार्थ जानना ॥

आगैं, अनादिकर्मबंधका संतानविषैं मिथ्यादर्शन आदि कारणके वशतैं कर्मनिकूं ग्रहण करता जो यहु जीव सो विग्रहगतिविषैंभी आहारकहीका प्रसंग आवै है। तातैं तिसका नियमकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ एकं द्वौ त्रीन् वाऽनाहारकः ॥ ३० ॥

याका अर्थ— विग्रहगतिविषैं यहु जीव एकसमय अथवा दोय समय तथा तीन समय अंना-हारक है, नोकर्मवर्गणाका आहार नांही है ॥ इहां समयका तौ अधिकारतैं संबंध कर लेना।

बहुरि सूत्रमें वा शब्द विकल्पके अर्थि है। जैसी इच्छा होय तहांही रह जानां सो विकल्प है। जैसे पाणिमुक्तगति करै सो एकसमयही अनाहारक रहै। लांगलिकगति करै सो दोय समयही अनाहारक रहै। गोमूत्रिकागति करै सो तीन समय अनाहाक रहै। आगै चौथा समय आहारकहीका है। जातैं ऐसा क्षेत्र नांही जो फेरि मोडा खाय। तहां औदारिक वैक्रियिक आहारक ए तीन शरीर तथा आहार आदि छह पर्याप्तके योग्य पुद्गलवर्गणाका ग्रहण सो आहार कहिये। जातैं यहु आहार नांही सो अनाहारक है। बहुरि कर्मवर्गणाका ग्रहण जेतैं कार्मण शरीर है तेतैं निरंतर है। तहां उपजनेके क्षेत्रप्रति जो ऋजुगतिही करै तो आहारकही है। बहुरि विग्रहगतिविषें तीन समय अनाहारक रहै है। ऐसैं गमनविशेषका निरूपण छह सूत्रनिकरि कीया॥

आगें, ऐसैं भवांतरनौ गमन करता जो जीव ताकै नवीन शरीरकी उत्पत्तिका प्रकार प्रतिपादनकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ सम्मूर्छनगर्भोपपादा जन्म ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— जीव नवीन शरीर धरै है ताकै जन्म तीन प्रकार हैं। संमूर्छन गर्भ उपपाद ऐसैं॥ तहां ऊर्ध्व अधो तिर्यक् ऐसै तीन जे लोक तिनिविषें जहां तहां अवयवसहित देह बनि

जाय ताकूं संमूर्छन कहिये। संमूर्छन शब्दका अर्थ अवयवका कल्पन है॥ बहुरि स्त्रीके उदरविषैं वीर्यलोहीका गरण कहिये मिश्रित होनां मिलनां सो गर्भ है। अथवा माताकरि उपयुक्त कीया जो आहार ताका जाविषैं गरणा कहिये निगलना होय सो गर्भ कहिये॥ बहुरि जाविषैं प्राप्त होयकरिही उपजै उठै चलै ऐसा देवनारकीनिका उपजनेका स्थान ताकूं उपपाद कहिये॥ ए तीन संसारी जीवनिके जन्मके प्रकार हैं। सो शुभ अशुभ परिणामके निमित्ततैं बंध्या जो कर्म ताके भेदनिके उदयकरि कीये होय हैं। इहां विशेष, जो, एकजन्मके भेद सामान्यपणैं कीये हैं इनिहीकै विशेषकरि भेद कीजिये तौ अनेक हैं। बहुरि गर्भजन्म तथा उपपादजन्मके कारण तौ प्रगट हैं। बहुरि संमूर्छन जन्मके बाह्य कारण प्रत्यक्षगोचर नांहीभी हैं। जहां तहां उत्पत्ति होय जाय है ऐसैं जाननां॥

आगैं, अधिकाररूप कीया जो संसारके भोगनेकी प्राप्तिका आश्रयभूत जन्म, ताकी योनिके भेद कह्या चाहिये। ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ सचित्तशीतसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— सचित्त शीत संवृत इनितैं इतर अचित्त उष्ण विवृत बहुरि तीनूंहीके मिश्रतैं ऐसैं नव भेद योनिके हैं। आत्माका चैतन्यका विशेषरूप परिणाम सो तौ चित्त है। तिस चित्तकरि

सहित होय सो सचित्त कहिये। बहुरि शीत है सो स्पर्शका विशेष है। जैसें वर्णका भेद शुक्ल। तहां शीत ऐसा द्रव्यवचनभी है गुणवचनभी है। तातें शीत कहनेतें शीतल द्रव्यभी लेना। बहुरि संवृत नाम आच्छादित ढकेका है। जाका प्रदेश लखनेमें न आवै। बहुरि इतरकरि सहित होय ताकूं सेतर कहिये। प्रतिपक्षी सहित होय ते अचित्त उष्ण विवृत बहुरि दोऊ मिलै तहां मिश्र कहिये। सचित्ताचित्त शीतोष्ण संवृतविवृत ऐसे नव भये। इहां सूत्रमें चशब्द है सो मिश्रकूंभी योनिही कहे है। जो चशब्द न होय तौ सचित्तादिक कहे तिनिकाही विशेषण मिश्र शब्द ठहरै तातें मिश्रभी योनि है ऐसा समुच्चय चशब्द करै है। बहुरि एकश ऐसा शब्द है सो वीप्सा कहिये फेरि फेरि ग्रहणके अर्थमें है। सो मिश्रका ग्रहण तीनूं जायगा अनुक्रमरूप लेनां जनावै है। तातें ऐसा जान्या जाय है जो सचित्त, अचित्त, मिश्र, शीत, उष्ण, मिश्र, संवृत, विवृत, मिश्र ॥ बहुरि ऐसें मति जानू, जो, सचित्त शीत याका मिश्र इत्यादि। बहुरि सूत्रमें तत् शब्द है सो ये योनिजन्मके प्रकार हैं ऐसा जनावनेकूं है। ए नव योनि तीन प्रकार जन्म कहे तिनिहीके प्रकार हैं ऐसैं जाननां

इहां कोई कहै है, योनि अरु जन्मविषैं भेद नांही—अविशेष है। ताका समाधान— आधार आधेयका भेदतें भेद है। इहां योनि तौ आधार है जन्मके प्रकार हैं ते आधेय हैं। जातें सचित्त

आदि योनिकै आधार आत्मा संमूर्छनादि जन्मकरि शरीर आहार इंद्रियादिककै योग्य पुद्गलनिकूं ग्रहण करै है। तहां देवनारकीनिकी तौ अचित्तयोनि है। जातैं इनिके उपजनेके ठिकाणे हैं ते पुद्गलके स्कंध अचित्त हैं। बहुरि गर्भज प्राणी हैं तिनिकी मिश्र योनि है। जातैं इनिकै उपजनेके ठिकाने माताके उदरविषें वीर्य लोही तौ पुद्गल है, सो अचित्त कहिये। बहुरि माताका आत्मा चित्तवान् है। तातैं तिसकरि मिश्र कहिये। बहुरि संमूर्छन प्राणी हैं ते तीनूंही प्रकारके योनिमैं उपजे हैं। केई तौ सचित्तयोनिविषैं उपजे हैं। जैसै असाधारण शरीरवाले जीवनिकै एकही शरीरमें बहुत जीव हैं। तातैं परस्पर आश्रयतैं सचित्त हैं। केई अचित्तयोनिविषें उपजै हैं। तिनिके उपजनेके ठिकाणे पुद्गलस्कंधही हैं। केई मिश्रयोनि हैं ॥

बहुरि देवनारकीनिकै तौ शीतोष्णयोनि है। तिनिके उपजनेके ठिकाणे केई तौ शीत हैं केई उष्ण हैं। बहुरि तेजसकायके जीवनिकी योनि उष्णही है। अन्यप्राणी केई शीतयोनिमें उपजे हैं केई उष्णमें उपजे हैं केई मिश्रमें उपजै हैं। बहुरि देव नारकी एकेंद्रिय जीव इनिकी योनि तौ संवृत है। देवनारकी तौ संपुटमैं उपजै हैं। एकेंद्रिय जीवभी ढकी योनिमेंही उपजे हैं। बहुरि विकलत्रय विवृतयोनिविषें उपजे हैं ॥ बहुरि गर्भज मिश्रयोनिविषें उपजै हैं। केई प्रदेश गूढ हैं केई प्रदेश

उघडता हैं। इनिके भेद चउराशी लाख हैं सो आगमविषें कह्या है। ताकी एक गाथा है ताका अर्थ- नित्य निगोद इतर निगोद बहुरि धातु कहिये पृथिवी आप तेज वायु ऐसै छह तौ सात सात लाख हैं। ताके बियालीस लाख भये। बहुरि तरु कहिये वनस्पति सो दस लाख हैं। ऐसै एकेंद्रियके तो बावन लाख भये। बहुरि विकलत्रय बेंद्रिय दोय लाख, तेंद्रिय दोय लाख, चौइंद्रिय दोय लाख ऐसै छह लाख। बहुरि देव च्यारि लाख, नारकी च्यारि लाख, पंचेंद्रिय तिर्यंच च्यारि लाख, मनुष्य चौदह लाख ऐसै पंचेंद्रियके छवीस लाख। सब मिली चवराशी लाख भये। इनिका विशेषस्वरूप प्रत्यक्षज्ञानीनिकै गम्य है॥

आगै, इस नव योनिसंकटविषैं तीन प्रकार जन्म लेते जे सर्व संसारी प्राणी, तिनिका जन्मका नियमकै अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— जरायुज अंडज पोत ए तीन प्रकारके प्राणीनिकै जन्म गर्भही है॥ तहां जो जालवत् परिवरण कहिये जारितैं वेष्ट्या होय बहुरि जाविषैं मांस लोही फिरि रह्या होय सो तौ जरायु कहिये। तिसिविषैं जो उपजै सो जरायुज कहिये। बहुरि नख ऊपरिकी त्वचा सारिखा होय

ऊपरि कठिण करडा होय त्वचामांही लोहीकरि वेष्टित होय गोलाकारसा होय सो अंड है। ताविषैं उपजै ताकूं अंडज कहिये। बहुरि जो ऊपरि वेढ्याविनांही होय सो योनितैं निसरताई संपूर्ण अवयव शरीरसहित चलनादिककी सामर्थ्यसहित होय सो पोत कहिये। ए तीनूंही गर्भयोनि कहिये॥

आगै पूछै है, जो जरायुज अंडज पोत जीवनिकै तौ गर्भतैं उपजनेका नियम कह्या। अब उपपादजन्म कौनकै होय है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ देवनारकाणामुपपादः ॥ ३४ ॥

याका अर्थ— देवनारकी जीवनिकै उपपादजन्म है॥ देवनिकै बहुरि नारकीनिकै उपपादजन्म जाननां। और जन्म नांही है ऐसा नियम जाननां॥

आगै पूछै है, इनि सिवाय अन्य जीवनिकै कौनसा जन्म है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनम् ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— गर्भजन्म अरु देव नारकीसिवाय अन्यजीव रहे तिनिकै सम्मूर्च्छन जन्म है॥ गर्भज बहुरि औपपादिक जीवनिविनां अवशेष अन्यजीव रहे तिनिकै सम्मूर्छन जन्म है। ऐसे ए तीनूंही सूत्र नियमके अर्थि हैं। दोनू तरफां नियम इनिकै जाननां। कैसै? जरायुज अंडज

पोतनिकैही गर्भजन्म है। अथवा इनिके गर्भही जन्म है। अन्य नांही। वहुरि देव नारकीनिकैही उपपाद जन्म है। अथवा इनिके उपपादजन्मही है। अन्य नांही। वहुरि अवशेष जीवनिकैही सम्मूर्च्छन जन्म है। अथवा इनिकै संमूर्च्छन जन्मही है अन्य नांही। ऐसैं दोऊ तरह नियम जाननां॥ ऐसैं पांच सूत्रनिकरि जन्म अरु तिनि जन्मसहित जीवानिका निरूपण कीया॥

आगैं पूछे है, तिनि संसारी जीवनिकै तीन जन्म कहे तथा अनेक भेदनिसहित नवयोनि कहे। तिनिके शुभ अशुभ कर्मका उदयकरि निपजाये वहुरि वंधके फलके भोगनेके आधार शरीर कौन कौन हैं? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं--

॥ औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥

याका अर्थ-- औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस कार्मण ए पांच शरीर कर्मफल भोगनेंके आधार हैं॥ विशिष्टनामकर्म कहिये शरीरनामा नामकर्म ताके उदयतैं भये ऐसे, शीर्यंते कहिये गलै शिडै झडै ते शरीर हैं। शरीर नामा नामकर्मकी प्रकृति औदारिकादिक हैं तिनिके उदयतैं औदारिकादिककी प्रवृत्ति पाईये है। तातैं ते पांच नाम हैं। तहां उदार नाम स्थूलका है। वडा दीखै ताकूं उदार कहिये सो उदारविषैं भया होय सो अथवा उदार है प्रयोजन जाका ताकूं औदारिक कहिये।

वहुरि अणिमादिक आठ गुण तिनिका ईश्वरपणाका योगतैं एक अनेक छोटा वडा शरीर अनेकप्रकार करणां सो विक्रिया कहिये। सोही है प्रयोजन जाका ताकूं वैक्रियिक कहिये। वहुरि सूक्ष्म पदार्थका निर्णयके अर्थि तथा असंयमके दूरि करनेकी इच्छा करि प्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिकरि रचिये सो आहारक है। वहुरि तेजका कारण अन्य देहकूं दीप्तिरूप करनेको निमित्त तथा तेजके विषें भया सो तैजस है। वहुरि कर्मनिका कार्य सो कार्मण है। कर्मके कार्य सर्वही शरीर है परंतु रूढीके वशतैं विशेषपणांकरि कार्मणहीकूं कर्मका कार्यरूप निरुक्ति करी है। इहां कोई पूछे, अन्यशरीरकूं कार्मण निमित्त है वहुरि कार्मणकूं कहा निमित्त है? ताका समाधान, जो, कार्मणकूं कार्मणही निमित्त है। अथवा जीवके परिणाम मिथ्यादर्शनादिक निमित्त हैं ॥

आगे जैसें औदारिककी इंद्रियनिकरि उपलब्धि है यहु इंद्रियनिकरि ग्रहण होय है तैसें अन्यशरीरका ग्रहण काहेतें न होय है? ऐसें पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— औदारिकतें आगिले आगिले शरीर सूक्ष्म हैं ॥ इहां परशब्दका अनेक अर्थ है। तौभी विवक्षातें व्यवस्थार्थके विषें गति है। वहुरि वीप्सा कहिये दोयवार परशब्द कहा सो

औदारिक तौ स्थूल है, यातैं सूक्ष्म वैक्रियिक है, यातैं सूक्ष्म आहारक है, यातैं सूक्ष्म कार्मण है, ऐसैं जाननेके अर्थि है ॥

आगै कहै हैं, कि, कोई जानैगा, जो, ये शरीर परे परे सूक्ष्म है, तौ प्रदेश कहिये परमाणूभी इनिविषैं थोरे थोरे होहिंगे। ऐसी आसंकाकूं दूरि करनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ प्रदेशतोऽसङ्ख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥ ३८ ॥

याका अर्थ-- तैजसतैं पहले पहले शरीर औदारिकतैं लगाय आहारकताईविषैं परमाणु असंख्यात असंख्यात गुणे हैं ॥ प्रदेश नाम परमाणूका है। वहुरि संख्यासूं अतीत होय ते असंख्यात हैं। सो जहां असंख्यातका गुणाकार होय ताकूं असंख्येयगुणां कहिये। सो इहां परमाणूनितैं असंख्यातगुणां कहना, अवगाहना न लेनी। वहुरि परं परं इस शब्दकी पहले सूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। बहुरि कार्मणतांईके निषेधके अर्थि प्राक् तैजसात् ऐसा कह्या। तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, औदारिकके परमाणूनितैं तौ असंख्यातगुणे परमाणू वैक्रियिकविषैं बहुरि वैक्रियिकतैं असंख्यातगुणें आहारकविषैं है। इहां कोई पूछै, असंख्यातके भेद असंख्यात हैं तहां गुणाकार कैसा असंख्यातका लेनां? ताका समाधान, इहां पल्योपमका असंख्यातवा भागका गुणाकार लेना ॥ फेरि कोई पूछै है, जो,

परें परें सूक्ष्म कहे अर परमाणू बहुत बहुत कहे सो ऐसें तो परें परें बडे चाहिये। ताका उत्तर, जो, बंधानका विशेष ऐसाही है, जो खैंचि गाढा बांधै तो छोटा होय जाय, ढीला बांधै तो बडा दीखै जैसें रूईका पिंड तौ बडा दीखै बोझ थोडा। बहुरि लोहका पिंड छोटा दीखै बोझ बहुत ऐसे जाननां॥

आगे, अगिले दोय शरीर तैजस कार्मण तिनिमैं परमाणु इनिसमान हैं, कि किछु विशेष है? ऐसें पूछे उत्तर कहै हैं—

॥ अनन्तगुणे परे ॥ ३९ ॥

याका अर्थ-- अगिले दोऊ तैजस कार्मण शरीरविषैं परमाणु पहलेतैं अनंतानंत गुणै हैं॥ इहां प्रदेशतः ऐसी तो पहले सूत्रतैं अनुवृत्ति लेणी। तातैं आहारकतैं तैजसविषैं परमाणु अनंतगुणे हैं। बहुरि तैजसतैं अनंतगुणे कार्मणविषैं हैं। इहां गुणाकार अभव्यराशितैं अनंतगुणां सिद्धराशिके अनंतवे भाग ऐसा अनंतका है॥

आगे, आशंका करै है, जो, मूर्तिकद्रव्यका संचय होतैं जैसे भालि भीतिमैं प्रवेश करता रुकि जाय है, तैसें शरीरसहित संसारी जीव गमन करै तब मूर्तिक पुद्गलके स्कंधनितैं रुकि जाता होयगा। ताकूं कहिये, जो, नांही रुकै है। ए दोऊ शरीर ऐसे हैं। ताका सूत्र कहै हैं—

॥ अप्रतिघाते ॥ ४० ॥

याका अर्थ— तैजस कार्मण ए दोऊ शरीर अप्रतिघाते कहिये रुकनेतें रहित हैं ॥ मूर्तिक करि रुकना ताकूं प्रतिघात कहिये। सो जहां नांही सो अप्रतिघात है। सो तैजस कार्मण ए दोऊ अप्रतिघात हैं। जातें ए सूक्ष्म परिणमनरूप हैं। जैसें लोहका पिंडमें अग्नि प्रवेश करै तैसें ए वज्रपटलविषैंभी प्रवेश करि जाय रुकै नांही। इहां कोई कहै, वैक्रियिक आहारकभी काहूकरि रुकै नांही तेभी ऐसें क्यों न कहे? ताका समाधान, जो, इहां सर्वक्षेत्रविषैं नांही रुकनेकी विवक्षा है। जैसें तैजस कार्मणका सर्वलोकविषैं अप्रतिघात है, तैसें वैक्रियिक आहारकका नांही है। इनिका गमन त्रसनाडीमांहीही है। सिवाय प्रतिघातही है ॥

आगैं पूछै है, कि- इनि दोऊ शरीरनिका एताही विशेष है कि किछु औरभी है? ऐसें पूछै विशेष है, ताका सूत्र कहै हैं--

॥ अनादिसम्बन्धे च ॥ ४१ ॥

याका अर्थ-- ए दोऊ शरीर अनादितें संबंधरूप हैं। और शरीर छूटि नवीन बणै है तैसें ये नांही हैं ॥ इहां चशब्द है सो विकल्प अर्थविषैं है। जातें ऐसा अर्थ भया, अनादिसंबंधभी

है सादि संबंधभी है। तहां कार्यकारणका अनादिसंतानकी अपेक्षा तौ अनादिसंबंधरूप है। बहुरि विशेषकी अपेक्षा सादिसंबंध है। सो बीजवृक्षकीज्यों जानने। जैसें औदारिक वैक्रियिक आहारक जीवकै कदाचित् होय है, तैसै तैजसकार्मण नाहीं है। ये नित्यसंबंधरूप हैं। संसारके क्षयपर्यंत संबंध रहे है। जिनिके मतमें शरीर अनादिसंबंधही है तथा सादिसंबंधही है ऐसा पक्षपात है तिनिकै अनादिसंबंध है। तहां अंत नाहीं। तब मुक्त आत्माका अभावका प्रसंग भया। बहुरि सादिसंबंध होतें शरीर नवीन भये। पहली आत्मा शुद्ध ठहऱ्या; तब नवीन शरीरका धारण काहेतें भया? ऐसे दोष आवै है॥

आगें पूछे है, ए तैजस कार्मण शरीर कोईक प्राणीकै होय है कि अविशेष है? ऐसें पूछे सूत्र कहै हैं

॥ सर्वस्य ॥ ४२ ॥

याका अर्थ— ए दोऊ शरीर सर्व संसारी जीवनिकै हो हैं॥ इहां सर्व शब्द निरवशेषवाची है। समस्त संसारी जीवनिकै तैजस कार्मण दोऊ शरीर हैं॥

आगें, ते औदारिकादि ५ शरीर सर्वसंसारी जीवनिकै अविशेषकरि होय हैं, तहां सर्व एकही काल होय है ऐसा प्रसंग होतें जे शरीर एकजीवकै एककाल संभवै तिनिके दिखावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३ ॥

याका अर्थ— तिनि तैजस कार्मण दोऊनिकूं आदिकरि एक जीवकै एककालविषैं दोयभी होय, तीनभी होय, च्यारितांई होय ऐसैं भाज्यरूप करनां। पांच न होय। यह तत् शब्द है सो प्रकरण जिनका है ऐसे तैजस कार्मणके ग्रहणके अर्थि है। ते हैं आदि जिनिके ते तदादि कहिये। बहुरि भाज्य कहिये विकल्परूप विभागरूप करने। ते कहां तांई? च्यारीतांई करने। तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, एककाल एकजीवकै कोईकै तौ तैजसकार्मण दोयही होय, ते तौ अंतरालमैं विग्रहगतिमैं जानने। बहुरि कोई जीवकै औदारिक तैजस कार्मण ए तीन होय, ते मनुष्यतिर्यंचकै जानने। बहुरि कोई जीवकै वैक्रियिक तैजस कार्मण ए तीन होय, ते देव नारकीनिकै जानने। बहुरि कोई जीवकै औदारिक आहारक तैजस कार्मण ए च्यारि होय, ते प्रमत्त गुणस्थानवर्त्ती मुनिकै जानने। ऐसै भाज्यरूप जानने ॥

आगैं, फेरि तिनहीविषैं विशेषकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥ ४४ ॥

याका अर्थ— तैजसशरीरभी लब्धिप्रत्यय होय है ॥ इहां अपि शब्दकरि लब्धिप्रत्ययका

याका अर्थ— अंतका कार्मण शरीर उपभोगरहित है ॥ अंतविषैं होय ताकूं अंत्य कहिये। सो इहां सूत्रपाठमैं अंतविषैं कार्मण कह्या है सो अंत्य है। बहुरि इंद्रिय द्वारिकरि शब्दादिकका ग्रहण सो उपभोग है। तिसका जाकै अभाव सो निरुपभोग है। सो ऐसा कार्मणशरीर है। जातैं विग्रहगति अंतरालविषैं इंद्रियनिकी क्षयोपशमरूप लब्धि होतैंभी द्रव्येंद्रियकी निर्वृतिका अभाव है। तातैं शब्दादिका उपभोगका तहां अभाव है। इहां कोई तर्क करै है, जो, तैजसभी निरुपभोग है, कार्मणही निरुपभोग कैसैं कह्या? ताका समाधान, तैजसशरीरका इहां उपभोगका विचारविषैं अधिकार नांही। जातैं याकूं योगनिमित्तभी नांही कह्या है, ऐसैं जाननां ॥

आगैं पूछै है, जो, तीन प्रकार जन्म कहे तिनिविषैं ए शरीर उपजै है, सो तीनूंही जन्मविषैं अविशेषकरि उपजै है, कि किछु विशेष है? तहां कहै हैं, विशेष है, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ गर्भसम्मूर्च्छनजमाद्यम् ॥ ४५ ॥

याका अर्थ— आदिका शरीर औदारिक सो गर्भतैं तथा संमूर्छनतैं उपजै है ॥ सूत्रपाठ अपेक्षा आदिविषैं होय सो आद्य कहिये, सो औदारिक लेना। जो गर्भतैं उपजै बहुरि संमूर्च्छनतैं उपजै सो सर्व औदारिक जाननां ॥

आगें, इसके लगता कह्या जो वैक्रियिक, सो कैसें जन्मविषैं उपजै है? ऐसें पूछै सूत्र कहै हैं——

॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥ ४६ ॥

याका अर्थ— वैक्रियिक शरीर है सो उपपादजन्मविषैं उपजै है। उपपादविषैं होय सो औपपादिक कहिये। सो सर्व वैक्रियिक जाननां ॥

आगैं पूछै है, जो, वैक्रियिक औपपादिक है तौ उपपादविषैं न उपजै ताकै वैक्रियिकपणाका अभाव आया। ऐसैं कहतें उत्तरका सूत्र कहै हैं

॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ४७ ॥

याका अर्थ—— लब्धितैं भयाभी वैक्रियिक कहिये है॥ इहां चशब्दकरि वैक्रियिकसंबंध करनां। तपके विशेपतैं ऋद्धिकी प्राप्ति होय, ताकूं लब्धि कहिये। ऐसी लब्धि जाकूं कारण होय सो लब्धिप्रत्यय कहिये। सो वैक्रियिक लब्धिप्रत्ययभी होय है ऐसा जाननां ॥

आगे पूछै है, कि लब्धिप्रत्यय वैक्रियिकही है कि औरभी है? ऐसा पूछै सूत्र कहै हैं——

॥ तैजसमपि ॥ ४८ ॥

संबंध करनां सो तैजसभी लब्धिप्रत्यय होय है ऐसा जाननां । इहां विशेष जो, तैजसके दोय भेद कहे एक निःसरणस्वरूप दूसरा अनिःसरणस्वरूप । तहां निःसरणस्वरूप दोय प्रकार, शुभ· तैजस अशुभतैजस । सो यहु तौ लब्धिप्रत्यय कहिये । बहुरि अनिःसरणस्वरूप है सो सर्वसंसारी जीवनिकै पाइये । सो लब्धिप्रत्ययतैं भिन्न जननां ॥

आगैं, वैक्रियिक पीछे कह्या जो आहारक शरीर, ताका स्वरूपका निर्धार करनेकै अर्थि तथा स्वामी कहनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसँयतस्यैव ॥ ४९ ॥

याका अर्थ-- शुभ है विशुद्ध है व्याघातरहित है ऐसा आहारकशरीर प्रमत्तसंयमी मुनि· कैही होय है ॥ इहां शुभ ऐसा नाम तौ आहारककाययोग शुभकर्महीका कारण है, तातैं है । याकै होतैं शुभ प्रकृतिही बंध होय है । इहां कारणविषैं कार्यका उपचार है । जैसैं अन्नकूं प्राण कहिये है । बहुरि विशुद्ध ऐसा नाम है सो पुण्यकर्मका उदयहीतैं यह होय है, तातैं विशुद्ध कहिये निर्मल बहुरि पापकर्मकरि मिल्या नांही ऐसा निर्दोषकर्म ताका कार्य है, तातैं विशुद्ध ऐसा कहिये है । इहां कारणविषैं कार्यका उपचार है । जैसैं कपासके तारनिकूं कपासही कहिये । बहुरि

आगें, इसके लगता कह्या जो वैक्रियिक, सो कैसें जन्मविषें उपजे है? ऐसें पूछै सूत्र कहे हैं--

॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥ ४६ ॥

याका अर्थ— वैक्रियिक शरीर है सो उपपादजन्मविषें उपजे है। उपपादविषें होय सो औपपादिक कहिये। सो सर्व वैक्रियिक जाननां ॥

आगें पूछै है, जो, वैक्रियिक औपपादिक है तौ उपपादविषें न उपजे ताकै वैक्रियिकपणाका अभाव आया। ऐसें कहतें उत्तरका सूत्र कहे हैं

॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ४७ ॥

याका अर्थ-- लब्धितैं भयाभी वैक्रियिक कहिये है ॥ इहां चशब्दकरि वैक्रियिकसंबंध करनां। तपके विशेपतैं ऋद्धिकी प्राप्ति होय, ताकूं लब्धि कहिये। ऐसी लब्धि जाकूं कारण होय सो लब्धिप्रत्यय कहिये। सो वैक्रियिक लब्धिप्रत्ययभी होय है ऐसा जाननां ॥

आगे पूछै है, कि लब्धिप्रत्यय वैक्रियिकही है कि औरभी है? ऐसा पूछे सूत्र कहे हैं--

॥ तैजसमपि ॥ ४८ ॥

संबंध करनां सो तैजसभी लब्धिप्रत्यय होय है ऐसा जाननां। इहां विशेष जो, तैजसके दोय भेद कहे एक निःसरणस्वरूप दूसरा अनिःसरणस्वरूप। तहां निःसरणस्वरूप दोय प्रकार, शुभ-तैजस अशुभतैजस। सो यहु तौ लब्धिप्रत्यय कहिये। वहुरि अनिःसरणस्वरूप है सो सर्वसंसारी जीवनिकै पाईये। सो लब्धिप्रत्ययतैं भिन्न जननां॥

आगैं, वैक्रियिक पीछे कह्या जो आहारक शरीर, ताका स्वरूपका निर्धार करनेकै अर्थि तथा स्वामी कहनेकै अर्थि सूत्र कहे हैं--

॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसँयतस्यैव ॥ ४९ ॥

याका अर्थ-- शुभ है विशुद्ध है व्याघातरहित है ऐसा आहारकशरीर प्रमत्तसंयमी मुनि-कैही होय है॥ इहां शुभ ऐसा नाम तौ आहारककाययोग शुभकर्महीका कारण है, तातैं है। याकै होतैं शुभ प्रकृतिही वंध होय है। इहां कारणविषैं कार्यका उपचार है। जैसैं अन्नकूं प्राण कहिये है। वहुरि विशुद्ध ऐसा नाम है सो पुण्यकर्मका उदयहीतैं यह होय है, तातैं विशुद्ध कहिये निर्मल वहुरि पापकर्मकरि मिल्या नांही ऐसा निर्दोषकर्म ताका कार्य है, तातैं विशुद्ध ऐसा कहिये है। इहां कारणविषैं कार्यका उपचार है। जैसैं कपासके तारनिकूं कपासही कहिये। वहुरि

दोऊ रीतिकरि इसके व्याघात कहिये रुकनां सो नांही तातैं अव्याघाति कहिये। इस आहारकशरीरकरि अन्य रुकै नांही तथा अन्यकरि यहुभी रुकै नांही। वहुरि च शब्द है सो समुच्चयकै अर्थि है। कदाकाल तौ लब्धिविशेषका सद्भाव जनावनेकै अर्थि हो है। कदाकाल सूक्ष्मपदार्थका निर्णय करावनेकूं होय है। तहां संयमके रक्षाकै अर्थि है ऐसा प्रयोजन पहले कह्या। ताका समुच्चय चशब्द करै है। वहुरि जिस काल आहारकशरीर प्रवर्तनेका मुनिकै अवसर है तिस काल मुनि प्रमादसहित होय है। तातैं प्रमत्तसंयतहीकै यह होय है ऐसा कह्या है। इहां क्रियारूप प्रवर्तै ताकूं प्रमाद कहै है। ऐसा मति जानूं, जो, अविरतकीज्यौं प्रमाद होय है। एवकारतैं यह नियम कीया है, जो, प्रमत्तसंयमी मुनिकै होय है, अन्यकै नांही होय है। ऐसैं मति जानुं, जो, प्रमत्तसंयमी मुनिकै आहारकही होय है औदारिक नांही होय है। औदारिक तौ हैही ॥ ऐसैं चौदह सूत्रनिकरि पांच शरीरनिका निरूपण कीया ॥

इहां विशेष— केई अन्यवादी तौ कार्मणशरीर नांही मानै हैं। कहै हैं, कर्म आत्माहीका अदृष्ट नामा गुण है, ताका शुभाशुभ फल है। सो यहु माननां अयुक्त है। द्रव्यादृष्ट तौ पौद्गलिक कार्मण है। ताके निमित्ततैं भावादृष्ट जीवका गुण है। वहुरि केई अन्यमती कहै हैं भावकर्मही

क्रोधादिक आत्माका भाव है, द्रव्यकर्म नांही, सोभी अयुक्त है। जीवकूं वंदीखानेज्यौं पराधीन करनेवाला पुद्गल पर्यायरूप द्रव्यकर्मभी है। वहुरि केई अन्यमती स्वप्नमात्र शरीरकूं कहे हैं। सोभी अयुक्त है। जो स्वप्नमात्रही होय, तौ जैसें स्वप्नाविषें केई वस्तु देखै, जागै तब कछू दीखै नाहीं, तैसें यहू शरीरभी न दीख्या चाहिये। सो ऐसें है नांही। वहुरि कोई अन्यमती आत्माकै ज्ञानमात्र शरीर मानै है, सोभी अयुक्त है। पुद्गलमय शरीरविनां शरीरकै अर आत्माकै भेद कैसें जान्या जाय?। ज्ञानं तौ आत्माका धर्म है, तिस स्वरूपतैं तौ जुदा है नांही। ऐसैंही कोई शरीरकूं औरप्रकारभी कहे है। ते इनि पंच शरीरनिमें सर्व अंतर्भूत होय हैं। अन्य कछु है नांही॥

आगें पूछे है, जो ऐसे शरीरनिकौं धारते जे संसारी जीव, तिनिकै गतिप्रति तीनूं वेदही होय हैं, कि किछु वेदनिका नियम है? ऐसें पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ नारकसम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥ ५० ॥

याका अर्थ— नारकी जीव तथा संमूर्छन जीव ये नपुंसकलिंगीही होय हैं॥ नारकी तो आगे कहसी। जे नरकनिविषैं उपजे ते नारक हैं। वहुरि संमूर्छन कहिये अवयवनिसहित शरीर जहां तहां उपजनां सो जिनकै होय ते संमूर्छन कहिये। वहुरि चारित्र-

मोहनामा कर्मकी प्रकृति नोकषाय ताका भेद जे नपुंसकवेद ताका उदय बहुरि अशुभ नामा कर्मका उदयतें स्त्रीभी नांही पुरुषभी नांही ऐसे नपुंसक होय हैं ते नारक। बहुरि संमूर्छन नपुंसकही होय हैं। ऐसा नियम जाननां। तहां स्त्रीपुरुषसंबंधी मनोज्ञ शब्द गंध रूप रस स्पर्शका संबंधके निमित्ततें होय। ऐसैं तिनिके क्योंभी सुखकी मात्रा नांही है॥

आगें पूछे है, जो ऐसा नियम है तौ अर्थतें ऐसा आया जो, कहे जे नारक संमूर्छन तिनितैं अवशेष रहे, ते तीनूं वेदसहित हैं, यातें जहां नपुंसकलिंगका अत्यंतनिषेध है ताकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं॥

॥ न देवाः ॥ ५१ ॥

याका अर्थ— देव हैं ते नपुंसकलिंगी नांही हैं॥ स्त्रीसंबंधी तथा पुरुषसंबंधी जो उत्कृष्ट सुख है, शुभगति नामा कर्मका उदयतैं भया ऐसा, सो देव अनुभवै हैं भोगवै हैं। यातें तिनिविषैं नपुँसक नांही हैं॥

आगें पूछें है, अन्य जीव रहे तिनिके केते वेद हैं? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥

याका अर्थ— नारक संमूर्छन देव इनि सिवाय अवशेष रहे जे गर्भज तिर्यंच तथा

मनुष्य, ते तीनूं वेदसहित हैं ॥ तीन हैं वेद जिनिकै ते त्रिवेद कहिये । ते वेद कैसै? स्त्री पुरुष नपुंसक । इहां पूछै है, तिनि वेदनिका अर्थ कहा? तहां कहै हैं, जो वेदिये ताकूं वेद कहिये । ताका लिंग ऐसा अर्थ है । सो दोय प्रकार है द्रव्यलिंग भावलिंग । तहां द्रव्यलिंग तौ नामकर्मके उदय तैं भये ऐसै योनि तथा मेहन आदि आकारसहित होय है । बहुरि भाववेद नोकषाय नामा जो वेदकर्म ताकै उदयतैं आत्माका परिणाम है । तहां जाविषैं गर्भधारण होय सो तौ स्त्री है । बहुरि जो अपत्य कहिये पुत्रादिककूं उपजावै सो पुरुष है । बहुरि इनि दोऊ शक्तिनितैं रहित होय सो नपुंसक है । बहुरि इनिकी संज्ञा है सो रूढिशब्दरूप है । रूढिशब्दकी व्युत्पत्ति कीजिये है सो तिस व्युत्पत्तिमात्र प्रयोजनकै अर्थिही है । जैसें गऊ शब्दकी निरुक्ति करिये, जो चालै ताकूं गऊ कहिये । सो इहां निरुक्ति रूढिहीतैं जाननी । जातैं बैठा सोवता गऊकूंभी गऊही कहिये । ऐसै रूढि जाननी । जो ऐसै न मानिये तौ गर्भधारणक्रियाहीकूं प्रधान मानिये तौ बालस्त्री तथा वृद्धस्त्री तिर्यंचणी मनुष्यणी तथा देवांगना तथा कार्मणकाययोगविषैं अंतरालमैं तिष्ठती स्त्रीनिकै गर्भधारण नांही, तब स्त्रीपणाका नाम न ठहरै । तथा पुत्रादिक उपजायेविनां इनिका पुरुषपणाका नाम न ठहरै । तातैं इहां

नामविषें रूढीही प्रधान है। ऐसै ये तीन वेद शेष जे गर्भज तिनिकै होय हैं। इनिकी भाव अनुभवकी अपेक्षा ऐसै कहै है। स्त्रीका तौ अंगारेकी अग्नि चिमक्याही करै तैसै है। बहुरि पुरुषका तृष्णाकी अग्नि जैसें चिमकै तौ बहुत परंतु अल्पकालमैं बुझि जाय तैसैं है। बहुरि नपुंसकके ईंटनिका कजावाकी अग्नि जैसैं प्रजल्याही करै, बुझै नांही, तैसैं है ॥

आगें, जो ए जन्म योनि शरीर लिंगके संबंधकरि सहित जे देवादिक प्राणी ते विचित्र पुण्यपापके वशीभूत च्यारी गतिविषैं शरीरनिकूं धारते संते यथाकाल आयूकूं पूर्णकरि अन्यशरीरकूं धारै हैं कि विना आयु पूर्ण कीयाभी अन्यशरीरकूं धारै हैं? ऐसैं पूछै उत्तर कहै हैं—

॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

याका अर्थ— औपपादिक कहिये देव नारकी बहुरि चरमोत्तमदेह कहिये चरम शरीर जिनकै उत्तम देह बहुरि असंख्यातवर्षका जिनिका आयु ऐसे भोगभूमियां ए सर्व अनपवर्त्यायु कहिये पूर्ण आयुकरि मरै हैं। इनिका आयु छिदै नांही ॥ औपपादिक तौ देवनारक पूर्वै कहे तेही। बहुरि चरम शब्द है सो अंतका वाची है। याका विशेषण उत्तम कहिये उत्कृष्ट है। ऐसा चरम उत्तम देह जिनिकै होय ते चरमोत्तमदेह कहिये। ऐसैं कहतैं जिनकै तिसही जन्मतैं निर्वाण होना है ऐसे

चरमशरीरी संसारका जिनिंके अंत भया ऐसे तद्भवमोक्षगामी हैं ऐसा अर्थ भया ॥ बहुरि असंख्येय कहिये संख्यातें रहित उपमाप्रमाण जे पल्यादिक तिनिकरि जान्या जाय ऐसे असंख्यात वर्षका जिनिका आयु ऐसे उत्तरकुरु आदि भोगभूमिविषैं उपजै मनुष्यतिर्यंच ऐसैं ए सर्व अनपवर्त्यायुष्क हैं। विष शस्त्र आदिक बाह्यकारण तिनिके वशतैं घटिजाय ताकों अपवर्त्य कहिये। इनिका आयु बाह्यकारणतें घटे नांही ऐसा नियम है। अन्यका नियम नांही। इहां चरमदेहका उत्तम विशेषण है सो उत्कृष्टपणाके अर्थि है, अन्य अर्थ नांही है। केई चरमदेहा ऐसाही पाठ पढे हैं ॥

इहां विशेष जो, चरमशब्दका उत्तमविशेषण है सो उत्कृष्टवाची है। तहां तत्त्वार्थ वार्तिकमैं ऐसें कह्या है, जो, चक्रवर्त्यादिका ग्रहण है। इहां कोई कहै, अंतका चक्रवर्ती ब्रम्हदत्त तथा अंतका वासुदेव श्रीकृष्ण इत्यादिकका आयु अपवर्तन हुवा सो इहां अव्याप्ति भई। ताका समाधान, जो, चरमशब्दका उत्तम विशेषण है। तातैं चरमशरीरी तद्भवमोक्षगामी होय तिनिका शरीरका उत्तम विशेषण है। तातें दोष नांही। इहां तर्क, जो, काल आये विनां तौ मरण होय नांही। ताका समाधान, जैसें आमका फल पालमें दीये शीघ्र पकै है, तैसें कारणके वशतें आयु बांध्या था ताकी उदीरणां होय पहलेही मरण होय जाय है, ऐसें जाननां। बहुरि जैसें चतुर वैद्य

वायु आदि रोगका काल आयेविनांही वमन विरेचनादिके प्रयोगकरि श्लेष्मादिकका निराकरण करे है, तैसें इहांभी जाननां। ऐसें न होय तौ वैद्यकशास्त्र मिथ्या ठहरै॥ इहां फेरी कहै, जो, रोगतें दुःख होय ताका दूरि करनेके अर्थि वैद्यकका प्रयोग है। ताकूं कहिये दुःख होय ताकाभी इलाज करै है बहुरि दुःख नांही होय तहां अकालमरण न होने निमित्तभी प्रयोग करै है॥

इहां कोई कहै, जो, आयुका उदीरण रूप क्षय है निमित्त जाकूं ऐसा अकालमरणका इलाज कैसें होय? ताकूं कहिये असातावेदनीयका उदयकरि आया दुःखका इलाज कैसें होय? जैसें असातावेदनीयका उदय तौ अंतरंग कारण बहुरि बाह्य वातादि विकार होतें ताका प्रतिपक्षी औषधादिकका प्रयोग कीजिये तब दुःख मिटि जाय है। तैसैंही आयुकर्मका उदय अंतरंग कारण होतें बाह्य जीवितव्यके कारण पथ्य आहारादिकका विच्छेद होतें आयुकी उदीरणा होय मरण होय जाय अरु पथ्य आहारादिककी प्राप्ति होतें उदीरणा न होय जीवितव्य रहै है तब अकालमरण न होय है ऐसें जाननां। बहुरि कोई कहै आयु होतैंभी मरण होय तौ तहां कर्मका फल दीया विनां नाश ठहरै है। ताकूं कहिये, असातावेदनीयका उदय होतैंभी ईलाजतें मिटै तब कर्म फलरहित कैसें न भया?। फेरि कहै, कडी औषधिके ग्रहणकी पीडामात्र दुःख असातावेदनीय फल

दे है तातैं विनां फल नाही । ताकूं कहिये, ऐसैंही आयुकर्मभी जीवनमात्र तौ फल दीयाही अफल कैसे ठहऱ्या? विशिष्ट फलका देनां दोऊही कर्मनिकै समान भया । तातैं यह सिद्धि भई, जो, कोईकै अल्पमृत्युभी होय है, जेती पूर्वभवविषैं आयुकर्मकी स्थिति बांधी थी ताकी बाह्य विष शस्त्रादिकके निमित्तनैं स्थिति घटिजाय उदीरणां होय तब मरण होय जाय । इहां ऐसाभी दृष्टान्त है, जैसैं जल आदिकतैं आला वस्त्र चौडाकरि तापमैं सुकावै तब शीघ्र सूकै तैसैंभी जाननां ॥ ऐसैं दूसरा अध्याय समाप्त कीया ॥

दोहा— इस दूजे अध्यायमैं । जीवतत्त्वका रूप ॥
वर्णन है बहुभेदतैं । जानूं भव्य अनूप ॥ १ ॥

सवैया— जीवके स्वतत्त्व भाव लक्षण दृग्बोध धाव भवी सिद्ध आदि भेद कहे विस्तारसूं ।
इंद्रियनिका दोय रूप विषयका अपार रूप गतिभेद भिन्न भिन्न गहो इतवारसूं ॥
जन्मयोनि नानाभांति भवमें अनेकजाति देहके विधान जीव लहै जु विकारसूं ।
वेदका नियम आयु घटै बंधै ताकी रीति दूजे अधिकार भाषी मुनीश विचारसूं ॥ २ ॥
ऐसें तत्त्वार्थका है अधिगम जामें ऐसा जो दशाध्यायरूप मोक्षशास्त्र ताकै विषैं

द्वितीय अध्याय पूर्ण भया.

॥ नमो वीतरागाय ॥

॥ आगै तीसरा अध्यायका प्रारंभ है ॥



दोहा— अधो मध्य ऊरध सकल । जीवनिवास निवारि ॥
कहे भव्य उपकारकूं । नमूं ताहि तन टारि ॥ १ ॥

ऐसैं मंगल अर्थि नमस्कार करि तीसरे अध्यायकी वचनिका लिखिये हैं । तहां सर्वार्थसिद्धि नामा टीकाविषें प्रारंभ है जो 'भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणां' इत्यादि सूत्रविषैं नारकजीव कहे । तहां शिष्य पूछे है, ते नारकी कौन हैं? तिनिके प्रतिपादनके अर्थि प्रथम तौ तिनिका आधारका निर्देश करे हैं । ते कहां वैसै हैं, तिनि पृथ्वीनिका नाम कहै हें, ताका सूत्र--

॥ रत्नशर्करावालुकापङ्कधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनाम्वुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥ १ ॥

याका अर्थ-- रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पंकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा महातमःप्रभा

ए सात अधोलोकविषैं नीचैंनिचै तीन वातवलय और आकाशकै आधार पृथ्वी है ॥ इहां रत्नादिशब्दनिका द्वंद्वसमासकरि वृत्ति है तिनिकै प्रभाशब्द न्यारा न्यारा जोडनां । बहुरि साहचर्यतें तैसाही नाम है। तातैं रत्नप्रभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पंकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा महातमःप्रभा ऐसे नाम सिद्ध भये हैं। तहां भूमिका ग्रहण तौ आधारके जनावनेके अर्थि है। जैसें स्वर्गके पटलनिके जुदे जुदे विमान हैं तहां भूमिका आश्रय नांही, तैसें इहां नांही है। नारकीनिकै आवास भूमीके आश्रय हैं। बहुरि तिनि भूमिनिके आलंबनके निर्णयकै अर्थि घनांबुवातादि शब्दका ग्रहण है। घन अंबु वात आकाश ए हैं प्रतिष्ठा कहिये आधार जिनिका ते ऐसे हैं। ए भूमि तौ घनोदधि वातवलयकै आधार है। बहुरि घनोदधि वातवलय घनवातवलयकै आधार है। बहुरि घनवातवलय तनुवातवलयकै आधार है। तनुवातवलय आकाशका आधार है। बहुरि आकाश आपहीकै आधार है। आकाश सर्वतैं बडा है, सो अन्य आधारकी कल्पना नांही। ए तिनूंही वातवलय वीस वीस हजार योजन न्यारे न्यारे मोटे हैं। सप्त शब्दका ग्रहण अन्यसंख्याके निराकरणकै अर्थि है, सातही हैं, आठ नांही नव नांही। बहुरि अधोऽधो शब्द है सो तिर्यक् फैली बात तथा ऊर्ध्वकै निषेधकै अर्थि है॥

इहां विशेष जो, रत्नप्रभाभूमि है सो चित्र वज्र वैडूर्य लोहित होत ड्रेमसार गल्व गोमेध प्रवाल ज्योति रसांजन मूल काकस्फटिक चंदनवर्वक वकुल शिलामय ए सोलह प्रकारके रत्ननिकी प्रभा सहचरित है। तातैं याका रत्नप्रभा नाम कहे है। सो एक लाख अशी हजार योजनकी मोटी है। तामें तीन भाग हैं। उपरि तौ खरभाग है, सो तौ सोला हजार योजनका है। सो तौ चित्र आदि रत्न कहे तिनिकरि रचित है। ताकै नीचै पंकभाग है सो चौरासी हजार योजनका मोटा है। ताकै नीचै अब्बहुल भाग है सो असी हजार योजनका मोटा है। तहां पहले खरभागविषैं हजार योजन उपरिके तथा हजार योजन नीचैके छोडि बीचके चौदह हजार योजनविषैं किन्नर किंपुरुष महोरग गंधर्व यक्ष भूत पिशाच ए सात जातिके तौ व्यंतर बहुरि नाग विद्युत् सुपर्ण अग्नि वात स्तनित उदधि द्वीप दिक्कुमार ए नव जातिके भवनवासीनिके आवास हैं। पंकभागविषैं राक्षस व्यंतर अरु असुरकुमार भवनवासीनिके निवास हैं। बहुरि अब्बहुल भागविषैं नरक हैं। बहुरि दूसरी शर्कराप्रभा भूमिकी मोटाई बत्तीस हजार योजनकी है। तीसरी वालुकाप्रभा भूमिकी मोटाई अठ्ठाईस हजार योजनकी है। बहुरि चौथी पंकप्रभा भूमिकी मोटाई चोईस हजार योजनकी है। बहुरि पांचईं धूमप्रभा भूमिकी मोटाई वीस हजार योजनकी है। बहुरि छठी तमःप्रभा भूमिकी

मोटाई सोला हजार योजनकी है वहुरि सातई महातमःप्रभा भूमिकी मोटाई आठ हजार योजनकी है। वहुरि तिनि भूमिनिका अंतर असंख्यात कोडि योजनका जुदा जुदा है। तथा तिर्यक्भी एताही है॥

भावार्थ— एक एक राजूका अंतराल है। अरु सप्तमी पृथ्वीके नीचै तौ सात राजू तिर्यक् है। पहली पृथिवी मध्यलोक ऊपरि एक राजू तिर्यक् है॥ इहां अन्यमती कहै हैं, पृथ्वी काछिवाकै आधार है, तथा वराहकै दंतनिपरि है, सो यह कहनां प्रमाणसिद्ध नांही। जातें काछिवा वराहकाभी अन्य आधार कल्पनेका प्रसंग है। तथा केई कहै हैं, पृथ्वीका गोल तौ भ्रमता रहै है। अरु ज्योतिश्चक्र स्थिर है। सो यहभी कहना सबाध है। वहुरि केई कहे हैं, पृथिवी नीचे चलीही जाय है, अवस्थित नांही। सोभी कहना बनै नांही। इत्यादि अनेक कल्पना करै हैं, सो असत्य है। इहां कोई पूछै, तुमने कह्या ताकी प्रमाणता काहेतें करै? ताकूं कहिये, हमारा कहनां सर्वज्ञके आगमकी परंपरातैं निर्बाध है, तहां स्याद्वादन्यायकरि युक्तितैंभी सिद्ध है। याकी चरचा श्लोकवार्तिकमैं विशेष करी है। तहांतें जाननी ॥

आगें पूछै है, कि ए भूमि हैं तिनिमैं नारकीनिके सर्वत्र आवास हैं, कि कहूं कहूं हैं?

ऐसें पूछे ताके निर्धारके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम्२

याका अर्थ— तिनि भूमिनिविषैं अनुक्रमतैं तीस लाख पचीस लाख पंदरा लाख दश लाख तीन लाख पांच घाटि एक लाख अरु पांच एते नरक कहिये बिला हैं। ते रत्नप्रभादिक भूमि तिनिविषैं इस संख्याकरि नरक कहिये बिला गिणिये। तहां रत्नप्रभाविषैं तीस लाख हैं। शर्कराप्रभाविषैं पचीस लाख हैं। वालुकाप्रभाविषैं पंदरा लाख हैं। पंकप्रभाविषैं दस लाख हैं। धूमप्रभाविषैं तीन लाख हैं। तमःप्रभाविषैं पांच घाटि एक लाख हैं। महातमःप्रभाविषैं पांचही हैं॥ बहुरि रत्नप्रभाविषैं तेरह प्रस्तार हैं तिनिकूं पाथडा कहिये हैं। बहुरि आगैं दोय दोय घाटि हैं। तहां दूसरै ग्यारा, तीसरै नव, चौथै सात, पांचवै पांच, छठै तीन, सातवै एक ऐसै प्रस्तार जानने। बहुरि इनि भूमिनिका अन्य विशेष लोकनियोगशास्त्रतैं जाननां॥

इहां किछु विशेष लिखिये हैं। तहां रत्नप्रभाविषैं अब्बहुलभागविषैं ऊपरि नीचे हजार हजार योजन छोडि बीचिमैं बिला हैं। ते इंद्रक, श्रेणीबंध, प्रकीर्णक ऐसे तीन प्रकार हैं। तहां तेरह प्रस्तार हैं। तहां तेरहही बीचि बीचि इंद्रक हैं। तिनिके नाम सीमंतक, सीर, परोरुक, भ्रांत,

उद्भ्रांत, संभ्रांत, असंभ्रांत, विभ्रांत, तप्त, त्रस्त, व्युत्क्रांत, अवक्रांत, विक्रांत ऐसे नाम हैं। वहुरि शर्कराप्रभाविषैं ग्यारह प्रस्तार हैं। तिनिमैं ग्यारहही वीचिवीचि इंद्रक हैं। तिनिके नाम स्तनक, संस्तनक, वनक, घाट, संघाट, जिव्ह, उज्जिव्हिक, आलोल, लोलुक, स्तन आलोलुक ऐसें। वहुरि वालुकाप्रभाविषैं नव प्रस्तार हैं। तिनिमैं नव इंद्रक तिनिके नाम तप्त, त्रस्त, तपन, आतापन, आदिदाघ, प्रज्वलित, संज्वलित, उज्वलित, संप्रज्वलित ऐसे। वहुरि पंकप्रभाविषैं सात प्रस्तार हैं। तिनिमैं सात इंद्रक तिनिके नाम आर मार तार वर्चस वैमनस्क खाट आखाट ऐसे। वहुरि धूमप्रभाविषैं पांच प्रस्तार हैं तहां पांच इंद्रक हैं। तिनिके नाम तम, अभ्र, झप, अंत, तमिस्र ऐसें। वहुरि तमःप्रभाविषैं तीन प्रस्तार हैं। ताविषैं तीन इंद्रक हैं। तिनिके नाम हिम, वर्दल, ललुक। वहुरि महातमःप्रभाविषैं एक प्रस्तार है। तामैं अप्रतिष्ठान नामा एक इंद्रक है। तहां इंद्रकनिकै च्यारयों दिशामैं च्यारि श्रेणी हैं। च्यारयों दिशासंबंधी श्रेणीवंध बिला तौ गुणचास गुणचास हैं। वहुरि विदिशासंबंधी अठतालीस अठतालीस हैं। पीछे सातई पृथिवीका प्रस्तारताई एक एक घटता गया सो श्रेणीवंध तौ एक एक रह गया। विदिशामैं रहाही नांही। ऐसें इनिकी संख्या पूर्वै

कही सो न्यारी न्यारी पृथ्वीसंबंधी जानि लेनी। तहां सप्तम पृथिवीके श्रेणीबंध च्यारि रहे। तिनिका नाम पूर्वदिशाविषैं काल, दक्षिणदिशाविषैं महाकाल, पश्चिमदिशाविषैं रौरव, उत्तरदिशाविषैं महारौरव ऐसै हैं। बहुरि सर्व बिला चौरासी लाख हैं। तहां इंद्रक तौ गुणचास हैं। श्रेणीबंध नव हजार छहसै च्यारि हैं। बहुरि प्रकीर्णक तियासी लाख निवै हजार तीनसौं सैंतालीस हैं। तिनिमैं सर्वही भूमीमैं पांचवै भाग बिला तौ संख्यात हजार संख्यात हजार योजननिके विस्तार हैं। बहुरि अवशेष च्यारि भाग बिला असंख्यात लाख असंख्यात लाख योजनकै विस्तार हैं। इन सर्वही बिलानिके नाम अशुभही अशुभ जाननैं ॥

आगैं, तिनि भूमिनिविषैं नारक जीवनिकै अन्यविशेष कहा है? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ नारका नित्याशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥

याका अर्थ— इनि भूमिनिविषैं नारकजीव हैं ते सदा अशुभतर हैं लेश्या परिणाम देह वेदना विक्रिया जिनिकै ऐसे हैं॥ लेश्यादिकका अर्थ तौ पहलै कह्या, सोही जाननां। अशुभतर ऐसा विशेषण तिनिका अधिकपणांके अर्थि है। सो तिर्यंचनिकै जैसै अशुभलेश्यादिक हैं तिनितैं अधिके नारकीनिकै जानने। अथवा ऊपरिके नारकीनिकै जैसै हैं, तिनितैं अधिके

अधिके नीचे नीचे जानने। बहुरि नित्य शब्द है सो दुःखमें दुःख चल्याही जाय ऐसे अर्थमें है। तहां पहली दूसरी पृथिवीके जीवनके तौ कापोतलेश्या है। बहुरि तीसरी पृथिवीवालेनिकै ऊपरिकेकै तौ कापोत है। नीचलेकै नीललेश्या है। चतुर्थीवालेकै नीलही है। पंचमीवालेकै ऊपरिकेकै तौ नील है। नीचलेकै कृष्ण है। छठीवालेकै कृष्ण है। सातमीवालेकै परमकृष्ण है। ऐसें द्रव्यलेश्या तौ आयुपर्यंत एकसी है। बहुरि भावलेश्या अंतर्मुहूर्तमैं पलटवो करै है। बहुरि परिणाम स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द हैं। ते क्षेत्रका विशेषके निमित्तके वशतैं अतिदुःखके कारण अशुभतर हैं। बहुरि जिनिका देह अशुभनामकर्मके उदयतैं अत्यंत अशुभतर है, बुरि आकृति हुंडकसंस्थानरूप है तिनिकी उंचाई प्रथमपृथिवीविषैं तौ सात धनुष तीन हात छह अंगुलप्रमाण है। बहुरि नीचै नीचै दूणा दूणा जाननां। बहुरि नारकीजीवनिकै अभ्यंतर तौ असातावेदनीयका उदय होतैं बहुरि बाह्य अनादिका शीतोष्णरूप पृथिवीका स्वभावकरि उपजी तीव्रवेदना है। तहां पहली दूसरी तीसरी चौथी पृथिवीविषैं तौ बिला उष्णही है। बहुरि पंचमीविषैं ऊपरि तौ उष्णवेदनारूप दोय लाख बिला हैं। नीचै एक लाख बिला शीतवेदनारूप हैं। बहुरि छठी सातमी-विषैं शीतवेदनाही है। बहुरि ते नारकी विक्रिया करै, ते आप तौ जाणैं मै शुभही करौंगा परंतु

अशुभविक्रियारूपही परिणमै। बहुरि आप तौ जाणैं मै सुखका कारण उपजाऊं हूं। परंतु तहां दुःखके कारणही उपजै। ऐसैं ए भाव नीचै नीचै अशुभतैं अशुभ अधिके अधिके जानने ॥

आगैं पूछै है, इनि नारकी जीवनिकै दुःख है, सो शीतउष्णजनितही है, कि अन्यप्रकारभी है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥ ४ ॥

याका अर्थ-- नारकजीव परस्पर आपसमैं उपजाया है दुःख ज्यां ऐसे हैं॥ इहां पूछै है, कि परस्पर उपजाया दुःख कैसे है? तहां कहिये है, नारकीनिकै भवप्रत्ययनामा अवधि हो है ताकूं मिथ्यात्वके उदयतैं विभंगभी कहिये। इसतै दुःखके कारणनिकूं दूरिहीतैं जाणै हैं। बहुरि निकटतैं परस्पर देखनेतैं कोप प्रज्वलै है। बहुरि पूर्वभवका जातिस्मरण होय, तातैं तीव्रवैर यादि आवै है। जैसैं श्वानकै अरु स्यालकै परस्पर वैरका संबंध है, तैसैं अपने परके परस्पर घातविषैं प्रवर्तैं हैं। बहुरि आपही विक्रियाकरि तरवारि कुहाडी फरसी भिंड माल शक्ति तोमर सेल लोहके घन इत्यादिक शस्त्रनिकरि बहुरि अपने हाथ पग दांतनिकरि छेदनां भेदनां छोलनां काटनां इत्यादिक क्रियाकरि परस्पर अतितीव्र दुःख उपजावै हैं॥

आगें, कहा एतावत् ही दुःखकी उत्पत्तिके कारण तथा प्रकार हैं औरभी कछु है? ऐसें पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ सङ्क्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक्चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— क्लेशपरिणामसहित जे असुरकुमारके देव ते उपजावै है दुःख जिनिकूं ऐसे नारकी जीव तीसरे नरकपर्यंत हैं ॥ देवगति नामकर्मका भेद जो असुरत्वसंवर्तन ताके उदयतैं परकूं दुःख देवै ते असुर कहिये। पूर्वजन्मविषैं इनि देवनिनैं ऐसाही अतितीव्र संक्लेश परिणामकरि पापकर्म उपार्ज्या है। ताके उदयतैं निरंतर संक्लेशसहित असुर हो हैं। तिनिमैं केई अंब अंबरीष आदि जातिके असुर हैं, ते नारकीनिकूं दुःख उपजावै हैं। सर्वही असुर दुःख नांही उपजावे हैं। बहुरि इनि असुरनिका गमनकी मर्यादा दिखावनेकूं "प्राक् चतुर्थ्याः" ऐसा वचन है। ऊपरकी तीन पृथिवीविषैं असुर बाधा करै हैं। आगै चौथी पांचई छठी सातईविषैं इनिका गमन नांही। इहां कोई पूछे, ए देव इनि नारकीनिकूं दुःख दे हैं, सो इनका कहा प्रयोजन है? । तहां कहिये, जो, ए देव ऐसैही पापकर्ममैं लीन हैं। जैसें इहां कोई मींढे भैंसे कूकडे तीतर मल्ल इनिकूं लडाय कलह देखि हर्ष मानै हैं; तैसें नारकीनिकी कलह दुःख देखि अति हर्ष मानै हैं। ए यद्यापि देव

भये हैं तथापि निदानादिकरि अज्ञान तपका फलतैं इनिकूं परका दुःख आदि अशुभही हर्षका कारण हो है। बहुरि चशब्द है सो पहले सूत्रमें कह्या जो दुःख, ताकै समुच्चयकै अर्थि है। तीव्र तपाया गाल्या जो लोह ताम्र ताकौ पायवाकरि, बहुरि तपाया लोहका स्तंभतैं चेपनां, बहुरि कूटशाल्मली कहिये सूली तापरि चढाय उतारणा, बहुरि लोहके घनका घात करनां, कुहाडी छुराव सोलातैं काटणां छोलणां, बहुरि क्षारा पाणी तथा ताते तेलतैं सीचनां, बहुरि लोहके कडाहमैं पचावनां, भांडमैं भूंदनां, बहुरि भोभलीमें भुलसनां, बहुरि वैतरणी नदीमें डबोवनां, घाणीमैं पीलना इत्यादिकानिकरि नारकीनिकूं दुःख उपजावै हैं। ऐसैं छेदनभेदनादिकरि शरीर खंड खंड होय जाय है। तौभी आयु पूर्ण हूवाविना मरण नांही होय है। जातैं नारकीनिका आयु अनपवर्त्य कह्या है, सो छिदै नांही ॥

आगैं पूछै है, "जो इनि नारकीनिका आयु छिदै नांही सो आयुका परिमाण केता है सो कहौ" ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— नरकके जीवनिकी आयू उत्कृष्ट पहली पृथिवीमें तो एक सागरकी,

दूसरीमें तीन सागर, तीसरीमें सात सागर, चौथीमें दश सागर, पांचमीमें सतरा सागर, छठीमें बाईस सागर; सातमीमें तेतीस सागर ऐसे हैं ॥ इहां यथाक्रम शब्दकी तौ ऊपरीतें अनुवृत्ति है। तिनि भूमिनिविषें अनुक्रमकरि यथासंख्य स्थिति लगावणी। तहां रत्नप्रभाविषें तौ उत्कृष्ट स्थिति एक सागरकी है। शर्कराप्रभाविषें तीन सागरकी है। वालुकाप्रभाविषें सात सागरकी है। पंकप्रभाविषें दश सागरकी है। धूमप्रभाविषें सतरा सागरकी है। तमःप्रभाविषें बाईस सागरकी है। महातमःप्रभाविषें तेतीस सागरकी है। ऐसी उत्कृष्टस्थिति है ॥ तिनि भूमिनिविषें नारकी जीवनिकी आयु है, भूमीकी स्थिति यहु नांही है ॥

आगें कहे हैं, सातभूमिरूप विस्तारकूं धरै अधोलोक तौ कह्या। अब तिर्यक् लोक कह्या चाहिये। सो तिर्यक् लोक ऐसा नाम कैसे हैं? जातें स्वयंभूरमण समुद्रपर्यंत असंख्यात तिर्यक्प्रचयरूप अवस्थित द्वीप समुद्र हैं। तातें तिर्यक् लोक नाम है। इहां पूछे है, ते द्वीप समुद्र तिर्यक् अवस्थित कौन कौन हैं? ऐसें पूछे सूत्र कहे हैं—

॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— जम्बूद्वीप लवण समुद्र इनिकूं आदि देकरि भले भले जिनके नाम ऐसे द्वीप

समुद्र हैं ॥ जम्बूद्वीपादिक तौ द्वीप बहुरि लवणोदादिक समुद्र ऐसे जे लोकमैं भले भले नाम हैं ते इनि द्वीपसमुद्रनिके हैं। तहां जंबूद्वीप तौ द्वीप बहुरि लवणोदधि समुद्र, धातकीखंड द्वीप कालोदधि समुद्र, पुष्करवरद्वीप पुष्करवर समुद्र, वारुणीवर द्वीप वारुणीवर समुद्र, क्षीरवरद्वीप क्षीरवर समुद्र, घृतवरद्वीप घृतवर समुद्र, इक्षुवरद्वीप इक्षुवर समुद्र, नंदीश्वरवर द्वीप नंदीश्वरवर समुद्र, अरुणवरद्वीप अरुणवर समुद्र, ऐसै असंख्यात द्वीप समुद्र स्वयंभूरमणपर्यंत जानने ॥

इहां विशेष जो, जंबूद्वीपका नाम जंबूवृक्ष यामैं है तातैं याकी अनादितैं यह संज्ञा है। सो यह जंबूवृक्ष कहा है सो कहिये हैं। उत्तरकुरु भोगभूमिविषैं पांचसै योजनकी चौडी एक जगती कहिये पृथिवी है। ताकूं स्थानीभी कहिये। ताकी क्यूं अधिक तिगुणी परिधि है। सो बाह्यतैं केते एक प्रदेश क्रमहानिरूप छोडि बीचिमैं बारा योजन ऊंची है। फेरि क्यों प्रदेश क्रमहानिरूप छोडि अंतमैं दोय कोस उंची है। ताकै चौगिरद सुवर्णमयी पद्मवर वेदिका कहिये भीति है। ताकै बीचिही बीचि नानारत्नमय पीठ है। आठ योजनका लांबा है। च्यारी योजनका चौडा है। च्यारीही योजनका ऊंचा है। ताकै चौगिरदा बारह वेदिनिकरि वेढ्या है। तिनि वेदिनिके चार्‍यों तरफ च्यारी तोरण हैं। ते श्वेत हैं। सुवर्णके तूपनिकरि सहित हैं। ता पीठके ऊपरि

फेरि उपपीठ है सो एक योजनका लांबा चौडा है, दोय कोस ऊंचा है। ताकै वीचि जंबूवृक्ष है। सुदर्शन है नाम जाका स्कंध दोय योजन ऊंचा है। छह छह योजन ऊंचा डाहला है। वीचि छह योजन चौडा मंडल है। आठ योजन लंबा है। ताकै चौगिरद इस वृक्षतैं आधे प्रमाण लीये एकसो आठ छोटे जंबूवृक्ष हैं। तिनिकरि वेढ्या है। देवदेवांगनाकरि सेवनीक है। यह वर्णन तत्त्वार्थवार्तिकतैं लिख्या है। अर त्रिलोकसारविषैं याका वर्णन विशेषकरि है। तथा किछू विवक्षाकाभी विशेष है। सो तहांतैं जानना। ऐसै वृक्षके योगतैं जंबूद्वीप नाम है। यह वृक्ष पृथिवीकाय है, वनस्पतिकाय नांही है। बहुरि लवणरससारिखा जलके योगतैं लवणोद जाननां ॥

आगैं इनि द्वीप समुद्रनिका विष्कंभ कहिये चौडाई तथा सन्निवेश कहिये अवस्थानविशेष संस्थान कहिये आकार इनिके विशेषनिकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥ ८ ॥

याका अर्थ— जंबूद्वीपतैं लगाय सर्वद्वीप समुद्र दूणे दूणे विस्तार हैं। बहुरि यह पहले पहले ऊपरि परिक्षेपी कहिये वेढे हैं। वलय कहिये गोल कडाकी आकृति हैं। द्विर्द्वि ऐसा वीप्सा कहिये

समुद्र हैं ॥ जम्बूद्वीपादिक तौ द्वीप बहुरि लवणोदादिक समुद्र ऐसे जे लोकमैं भले भले नाम हैं ते इनि द्वीपसमुद्रनिके हैं। तहां जंबूद्वीप तौ द्वीप बहुरि लवणोदधि समुद्र, धातकीखंड द्वीप कालोदधि समुद्र, पुष्करवरद्वीप पुष्करवर समुद्र, वारुणीवर द्वीप वारुणीवर समुद्र, क्षीरवरद्वीप क्षीरवर समुद्र, घृतवरद्वीप घृतवर समुद्र, इक्षुवरद्वीप इक्षुवर समुद्र, नंदीश्वरवर द्वीप नंदीश्वरवर समुद्र, अरुणवरद्वीप अरुणवर समुद्र, ऐसे असंख्यात द्वीप समुद्र स्वयंभूरमणपर्यंत जानने ॥

इहां विशेष जो, जंबूद्वीपका नाम जंबूवृक्ष यामैं है तातैं याकी अनादितैं यह संज्ञा है। सो यह जंबूवृक्ष कहा है सो कहिये हैं। उत्तरकुरु भोगभूमिविषैं पांचसै योजनकी चौडी एक जगती कहिये पृथिवी है। ताकूं स्थानीभी कहिये। ताकी क्यूं अधिक तिगुणी परिधि है। सो बाह्यतैं केते एक प्रदेश क्रमहानिरूप छोडि बीचिमैं बारा योजन ऊंची है। फेरि क्यों प्रदेश क्रमहानिरूप छोडि अंतमैं दोय कोस उंची है। ताकै चौगिरद सुवर्णमयी पद्मवर वेदिका कहिये भीति है। ताकै बीचिही बीचि नानारत्नमय पीठ है। आठ योजनका लांबा है। च्यारी योजनका चौडा है। च्यारीही योजनका ऊंचा है। ताकै चौगिरदा बारह वेदिनिकरि बेढ्या है। तिनि वेदिनिके चार्‍यों तरफ च्यारी तोरण हैं। ते श्वेत हैं। सुवर्णके तूयानिकरि सहित हैं। ता पीठके ऊपरि

फेरि उपपीठ है सो एक योजनका लांबा चौडा है, दोय कोस ऊंचा है । ताकै बीचि जंबूवृक्ष है । सुदर्शन है नाम जाका स्कंध दोय योजन ऊंचा है। छह छह योजन ऊंचा डाहला है। बीचि छह योजन चौडा मंडल है । आठ योजन लंबा है । ताकै चौगिरद इस वृक्षतें आधे प्रमाण लीये एकसो आठ छोटे जंबूवृक्ष हैं । तिनिकरि वेड्या है । देवदेवांगनाकरि सेवनीक है । यह वर्णन तत्त्वार्थवार्तिकतें लिख्या है। अर त्रिलोकसारविषैं याका वर्णन विशेषकरि है । तथा किछू विवक्षाकाभी विशेष है । सो तहांतें जानना । ऐसे वृक्षके योगतें जंबूद्वीप नाम है । यह वृक्ष पृथिवीकाय है, वनस्पतिकाय नांही है । बहुरि लवणरससारिखा जलके योगतें लवणोद जाननां ॥

आगें इनि द्वीप समुद्रनिका विष्कंभ कहिये चौडाई तथा सन्निवेश कहिये अवस्थानविशेष संस्थान कहिये आकार इनिके विशेषनिकी प्रतिपत्तिके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥ ८ ॥

[illegible]का अर्थ— जंबूद्वीपतें लगाय सर्वद्वीप समुद्र दूणे दूणे विस्तार हैं। बहुरि यह पहले पहले [illegible]रि परिक्षेपी कहिये वेढे हैं। वलय कहिये गोल कडाकी आकृति हैं। द्विर्द्वि ऐसा वीप्सा कहिये

...मुद्र हैं ॥ जम्बूद्वी... इनि द्वीपसमु... कहनेविषैं वचन है । सो चौडाईके दूणापणा कहनेके अर्थि है । आदि जो ...का विस्तार है तातैं दूणा लवणसमुद्रका है । तातैं दूणा दूसरा धातकीखंडद्वीप है । तातैं दूणा दूसरा कालोदधि समुद्र है । ऐसैं जाननां । वहुरि पहले पहले ऊपरि परिक्षेपि कहिये वेड्या है, ग्राम नगरादिकीज्यों अवस्थान मति जाणु । वहुरि वलयाकृति कहिये गोल कडाकीज्यों आकार है, चोकूंणां आदि आकार नांहीं है ॥

आगैं पूछै है, जंबूद्वीपका ठिकाणा आकार चौडाईका प्रमाण कह्या चाहिये । जातैं आगिले ...नेका विस्तारादिकका ज्ञान जाकरि होय । ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— तिनि द्वीप समुद्रनिकै बीचि जंबूद्वीप है सो गोल है । ताकै बीचि मेरुपर्वत है । वहुरि लाख योजनका चौडा है ॥ तिनिपूर्वक द्वीप समुद्रनिकै मध्य जंबूवृक्षकरि ...पा द्वीप है । सो कैसा है? मेरु तौ जाकै नाभिकीज्यों है । वहुरि सूर्यके विमान... है । वहुरि शतसहस्र कहिये एक लाख योजनका विष्कंभ कहिये चौडा है । भोगभूमिविषैं अनादिनिधन पृथ्वीकायरूप अकृत्रिम परिवारवृक्षनिसहित जंबू

नामा वृक्ष है। ताके नामतैं या द्वीपकाभी नाम जंबूद्वीप है ॥

आगै, तहां जंबूद्वीपविषैं छह कुलाचलनिकरि भेदरूप कीया ऐसै सात क्षेत्र हैं, ते कौन है? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १० ॥

याका अर्थ— तिस जंबूद्वीपविषैं भरत हैमवत हरि विदेह रम्यक हैरण्यवत ऐरावत ए सात क्षेत्र हैं ॥ इहां भरतादिक संज्ञा अनादिकालतैं प्रवर्तै है। इनिकूं काहूका निमित्त नांही। तहां जंबूद्वीपकी दक्षिण दिशाका विभागविषैं हिमवान् कुलाचल अरु तीन तरफ लवणसमुद्रकै बीचि तौ भरतक्षेत्र है, सो चढाया धनुष्यकै आकार है। बहुरि याके विजयार्द्धपर्वततैं तथा गंगा सिंधू नदीतैं भेद होय छह खंड भये हैं। बहुरि छोटा हिमवान् कुलाचलकी उत्तरदिशानैं अरु महाहिमवान् कुलाचलकी दक्षिणदिशानैं पूर्वपश्चिमके लवण समुद्रकै बीचि हैमवतक्षेत्र है। बहुरि निषध कुलाचलकी दक्षिणदिशानैं अर महाहिमवान् कुलाचलकी उत्तरदिशानैं बहुरि पूर्वपश्चिमके लवणसमुद्रकै अंतरालमैं हरिक्षेत्र है। बहुरि निषधकुलाचलकी उत्तरदिशानैं अरु नीलकुलाचलकी दक्षिणदिशानैं पूर्वपश्चिमके लवणसमुद्रकै बीचि विदे-

मुद्र है ॥ जम्बूद्वी
इनि द्वीपसमु... कहनेविषैं वचन है । सो चौडाईके दूणापणा कहनेके अर्थि है । आदि जो ...का विस्तार है तातैं दूणा लवणसमुद्रका है । तातैं दूणा दूसरा धातकीखंडद्वीप है । तातैं दूणा दूसरा कालोदधि समुद्र है । ऐसैं जानना । बहुरि पहले पहले ऊपरि परिक्षेपि कहिये वेड्या है, ग्राम नगरादिकीज्यों अवस्थान मति जाणु । बहुरि वलयाकृति कहिये गोल कडाकीज्यों आकार है, चोकूंणां आदि आकार नांहीं है ॥

आगैं पूछै है, जंबूद्वीपका ठिकाणा आकार चौडाईका प्रमाण कह्या चाहिये । जातैं आगिले द्वीप समुद्रनिका विस्तारादिकका ज्ञान जाकरि होय । ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— तिनि द्वीप समुद्रनिके बीचि जंबूद्वीप है सो गोल है । ताकै बीचि मेरुपर्वत नाभिकीज्यों है । बहुरि लाख योजनका चौडा है ॥ तिनिपूर्वक द्वीप समुद्रनिके मध्य जंबूवृक्षकरि लक्षित जंबूनामा द्वीप है । सो कैसा है? मेरु तौ जाकै नाभिकीज्यों है । बहुरि सूर्यके विमान-... गोलाकार है । बहुरि शतसहस्र कहिये एक लाख योजनका विष्कंभ कहिये चौडा है । ...उरु भोगभूमिविषैं अनादिनिधन पृथ्वीकायरूप अकृत्रिम परिवारवृक्षनिसहित जंबू

नामा वृक्ष है। ताके नामतैं या द्वीपकाभी नाम जंबूद्वीप है ॥

आगे, तहां जंबूद्वीपविषैं छह कुलाचलनिकरि भेदरूप कीया ऐसे सात क्षेत्र हैं, ते कौन है? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १० ॥

याका अर्थ— तिस जंबूद्वीपविषैं भरत हैमवत हरि विदेह रम्यक हैरण्यवत ऐरावत ए सात क्षेत्र हैं ॥ इहां भरतादिक संज्ञा अनादिकालतैं प्रवर्तै है। इनिकूं काहूका निमित्त नांही। तहां जंबूद्वीपकी दक्षिण दिशाका विभागविषैं हिमवान् कुलाचल अरु तीन तरफ लवणसमुद्रकै वीचि तौ भरतक्षेत्र है, सो चढाया धनुष्यके आकार है। बहुरि याके विजयार्द्धपर्वततैं तथा गंगा सिंधू नदीतैं भेद होय छह खंड भये हैं। बहुरि छोटा हिमवान् कुला-

अरु महाहिमवान् कुलाचलकी दक्षिणादिशानैं पूर्वपश्चिमके लवण समुद्रकै

हुरि निषध कुलाचलकी दक्षिणादिशानैं अर महाहिमवान् कुलाचलकी

लवणसमुद्रकै अंतरालमैं हरिक्षेत्र है। बहुरि निषधकुलाच-

नीलकुलाचलकी दक्षिणादिशानैं पूर्वपश्चिमके लवणसमुद्रकै बीचि विदे-

हक्षेत्र है। वहुरि नीलकुलाचलके उत्तरादिशानैं अरु रुक्मिकुलाचलके दक्षिणादिशानैं पूर्वपश्चिमके समुद्रके बीचि रम्यक क्षेत्र है। वहुरि रुक्मिकुलाचलतैं उत्तरदिशानैं अरु शिखरिकुलाचलतैं दक्षिणदिशानैं अरु पूर्वपश्चिमके लवणसमुद्रके अंतरालमैं हैरण्यवतक्षेत्र है। वहुरि शिखरिकुलाचलतैं उत्तरादिशानैं अरु तीनूंही तरफा लवणसमुद्रके बीचि ऐरावतक्षेत्र है। सो याके विजयार्ध पर्वत तथा रक्ता रक्तोदा नदीकरि भेदे छह खंड भये हैं ॥

आगैं पूछे है, कि छह कुलाचल हैं ऐसैं कह्या, ते कौंन हैं तथा कैसैं व्यवस्थित हैं? ऐसैं पूछ सूत्र कहै हैं—

॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ११

याका अर्थ— तिनिक्षेत्रनिके विभाग करनेवाले पूर्वपश्चिम लंबे ऐसे हिमवान् महाहिमवान् निषध नील रुक्मी शिखरी ए छह कुलाचल हैं। इनि क्षेत्रनिका विभाग करै तिनिकूं तद्विभाजन कहिये। वहुरि पूर्वपश्चिम दोऊ दिशाकी तरफ लंबे पूर्वपश्चिम दिशाकी कोटीतैं लवणसमुद्रकूं स्पर्शनेवाले हिमवत् आदि अनादिकालतैं प्रवर्ती है संज्ञा जिनिकी क्षेत्रनिके विभागके कारण हैं, तातैं वर्षधर कहिये। ऐसे कुलाचल पर्वत छह हैं। तहां हिमवान तौ भरतक्षेत्रकी अरु

हैमवतक्षेत्रकी सीमाविषैं तिष्ठै है। ताकूं क्षुद्रहिमवान्‌भी कहिये। सो, सौ योजनका ऊंचा है। वहुरि हैमवतक्षेत्र अरु हरिक्षेत्रका विभाग करनेवाला महाहिमवान् दोयसौ योजनका ऊंचा है। वहुरि महाविदेहक्षेत्रकी तौ दक्षिणदिशानैं अरु हरिक्षेत्रतैं उत्तरदिशानैं निषधनामा कुलाचल है। सो च्यारिसै योजन ऊंचा है। वहुरि उत्तरदिशाविषैंभी पर्वत अपने अपने क्षेत्रके विभाग करनेवाले नील रुक्मी शिखरीं ए तीन हैं सो पूर्वोक्त च्यारीसै दोयसै एकसो योजन ऊंचा है सो जाननां ॥ वहुरि इनिका मूल अवगाह पृथिवीविषैं ऊंचाईतैं चौथे भाग जाननां ॥

आगैं तिनि कुलाचलनिका वर्णका विशेषकी प्रतिपत्तीके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥ १२ ॥

याका अर्थ— ये कुलाचल हेम कहिये पीतवर्ण, अर्जुन कहिये श्वेतवर्ण, तपनीय कहिये तापा सोना सारिखा रक्तवर्ण, वैडूर्य कहिये नीलवर्ण, रजत कहिये श्वेत, हेम कहिये पीत ऐसे वर्णमय हैं॥ जे ए कहे हिमवत् आदि कुलाचल ते अनुक्रमतैं हेमादिकमयी जाननें। तहां हेममय तौ हिमवान् है, सो पीला पाटसारिखा वर्ण है। वहुरि अर्जुनमय महाहिमवान् है, सो शुक्ल है। वहुरि तपनीयमय निषध है सो दुपहरीके सूर्यके वर्णसारिखा है। वहुरि वैडूर्यमय नील है, सो

मोरके कंठसारिखा है। बहुरि रजतमय रुक्मी है, सो शुक्ल है। बहुरि हेममय शिखरी है, सो पीले पाटसारिखा वर्ण है ॥

आगें इनिका फेरिभी विशेषके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥

याका अर्थ— इनि कुलाचलनिके पसवाडे तौ मणिनिकरि चित्रित हैं। बहुरि मूलतैं ले ऊपरितांई समान चौडे हैं। अनेकवर्ण अरु प्रभाव कहिये महिमा इत्यादि गुणनिकरि सहित जे मणिनिकरि विचित्रित हैं पार्श्व कहिये पसवाडे जिनिके ऐसे हैं। बहुरि आकार जिनिका मूलतें लगाय मध्य तथा उपरितांई समान है, चौरस भितीकीज्यों बराबर है ॥

आगै तिनि कुलाचलनिके ऊपरि द्रह हैं ते कहिये हैं—

पद्ममहापद्मतिगिंछकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥

याका अर्थ— तिनि हिमवत् आदि कुलाचलनि ऊपरि अनुक्रमतैं पद्म महापद्म तिगिंछ केसरी महापुण्डरीक पुण्डरीक ए द्रह जानने ॥

आगै आदिका जो पद्मद्रह ताका आकारविशेषकी प्रतिपत्तीकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो ह्रदः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— पद्म द्रह है सो पूर्वपश्चिम दिशातैं तौ हजार योजन लंबा है । बहुरि उत्तर दक्षिण दिशानैं पांचसै योजन। विस्तार है । बहुरि वज्रमय याका तल है । बहुरि अनेक प्रकारके मणि तथा सुवर्ण तथा रजत तिनिकरि विचित्रित जाका तट है ॥

आगैं याका अवगाह कहिये उंडाई जाननेंके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥

याका अर्थ—पद्मद्रहकी उंडाई दश योजन है ॥

आगैं, तिस द्रहविषैं कमल है, ताका सूत्र कहै हैं—

॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥ १७ ॥

याका अर्थ— या द्रहमैं एक योजन प्रमाण कमल है । तामैं कोश कोशके लंबे तौ पत्र हैं । बहुरि दोय कोशके चौडी बीचिकी कर्णिका है। बहुरि जलके तलतैं दोय कोश ऊंचा नाल है । बहुरि एताही पत्रनिकी मोटाई है ॥

आगैं अन्य द्रहनिकी लंबाई चौडाई तथा कमलांकी लंबाई चौडाई जनावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं-

॥ त[illegible]ह्रदाः पुष्कराणि च ॥ १८ ॥

याका अर्थ— पहले [illegible] मलतैं दूणे दूणे लंबाई चौडाई रूप अगिले अगिले द्रह तथा कमल जाननां ॥ तहां [illegible] दूणा दोय हजार योजन लांबा हजार योजन चौडा वीस योजन ऊंडा महापद्म द्रह जाननां। [illegible] यातैं दूणां च्यारि हजार योजन लांबा दोय हजार योजन चौडा चालिस योजन ऊंडा तिगिंछ द्रह जाननां । याही भांति कमल दोय योजन च्यारि योजनका लांबा चौडा आदि जाननां ॥

आगैं तिनि कमलनिविषैं निवास करनेवाली देवीनिके नाम आयु परिवार प्रतिपादनेकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः
पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥ १९ ॥

याका अर्थ— तिनि कमलनिकी कर्णिकाके मध्यदेशके विषैं सरदके निर्मल पूर्ण चंद्रमाकी द्युतिके जीतनहारे कोश लंबे अर्धकोश चौडे कछु घाटि कोशके ऊंचे महल हैं। तिनिविषैं निवास करनेवाली देवी हैं श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी ए हैं नाम जिनिके ते वसे हैं। तिनकी एक

एक पल्यकी आयु है। बहुरि सामानिक जातिके देव बहुरि पारिषदजातिके देव तिनिकरि सहित वर्ते हैं। तिस कमलके परिवारकमल हैं। तिनिकै ऊपरि महल हैं। तिनिविषैं सामानिक देव वसै हैं। तथा पारिषद देव वसै हैं ॥

आगैं, जिनि नदीनिकरि ते क्षेत्र भेदे ते नदी कहिये हैं—

॥ गङ्गासिन्धूरोहिद्रोहितास्याहरिध्दरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥

याका अर्थ— तिनि क्षेत्रनिके मध्य गमन करै ऐसी चौदह नदी हैं। तिनिके नाम गंगा सिंधू रोहित् रोहितास्या हरित् हरिकांता सीता सीतोदा नारी नरकांता सुवर्णकूला रूप्यकूला रक्ता रक्तोदा ऐसैं। सरित् कहनेतैं तो वापी नांही है। बहुरि तन्मध्य कहनेतैं इत उत नांही गई हैं ॥

आगैं, सर्वनदीनिका एक जायगा प्रसंगके निषेधकूं दिशाका विशेषकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं·

॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥

याका अर्थ— दोय दोय नदी एक एक क्षेत्रविषैं हैं। ऐसैं वाक्यविशेष जोडनेतैं सर्वका एक जायगा प्रसंगका निषेध है। बहुरि पूर्वाः पूर्वगाः ऐसैं वचनतैं दिशाका विशेषकी प्राप्ति है। तहां जे

पाठमें दोय दोयमें पहली कही जो नदी, ते पूर्वदिशाके समुद्रकूं गई हैं। इहां पहली कही सात नदीतें पूर्वदिशाकूं गई होयगी ऐसा नांही है। जातें दोय दोयमैंसूं पहली पहली लेणी ऐसैं जानना॥

आगें, पहली पहली तौ पूर्वदिशाकूं गई बहुरि अन्य किसि दिशाकूं गई? तिनिकी दिशाका विभागकी प्रतिपत्तिकै अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥

याका अर्थ-- दोय दोयमैं जो अवशेप रही ते नदी पश्चिमके समुद्रकूं गमन करै हैं, ऐसी प्रतीति करनी॥ तहां पद्मद्रहके पूर्वद्वारतैं निकसी जो गंगानदी सो तौ भरतक्षेत्रमैं होय पूर्वसमुद्रकूं गई। बहुरि पश्चिमद्वारतैं निकसी सिंधू सो भरतक्षेत्रमैं होय पश्चिमादिशाके समुद्रकूं गई। बहुरि उत्तरद्वारतैं निकसी रोहितास्या सो हैमवतक्षेत्रमैं होय पश्चिमके समुद्रमैं गई। बहुरि महापद्म द्रहके दक्षिणद्वारतैं निकसी रोहित नाम नदी सो हैमवतक्षेत्रमैं होय पूर्वदिशाके समुद्रमैं गई। बहुरि महापद्म द्रहके उत्तरद्वारतैं निकसी हरिकांता नाम नदी सो हरिक्षेत्रमैं होय पश्चिमके समुद्रकूं गई। बहुरि तिगिंछ द्रहके दक्षिणद्वारतैं निकसी हरितनदी सो हरिक्षेत्रमैं होय पूर्वदिशाके समुद्रकूं गई। बहुरि तिगिंछ द्रहके उत्तरद्वारतैं निकसी सीतोदा नदी सो विदेहक्षेत्रमैं होय पश्चिमसमुद्रकूं गई।

बहुरि केसरी द्रहके दक्षिणद्वारतैं निकसी सीता नदी सो विदेहक्षेत्रमैं होय पूर्वके समुद्रकूं गई। बहुरि केसरी द्रहके उत्तरके द्वारतैं निकसी नरकांता नदी सो रम्यकक्षेत्रमें होय पश्चिमकै समुद्रमें गई बहुरि महापुंडरीक द्रहके दक्षिणके द्वारतैं निकसी नारी नाम नदी सो रम्यकक्षेत्रमैं होय पूर्वके समुद्रमैं गई। बहुरि महापुंडरीक द्रहके उत्तरके द्वारतैं निकसी रूप्यकूला नाम नदी सो हैरण्यवत-क्षेत्रमैं होय पश्चिमके समुद्रकूं गई। बहुरि पुंडरीक द्रहके दक्षिणद्वारतैं निकसी जो सुवर्णकूला नामा नदी सो हैरण्यवत क्षेत्रमैं होय पूर्वके समुद्रकूं गई। बहुरि पुंडरीक द्रहके पूर्वतोरणद्वारतैं निकसी जो रक्ता नामा नदी सो ऐरावतक्षेत्रमैं होय पूर्वसमुद्रमैं गई। बहुरि पुंडरीक द्रहके पश्चिम तोरणद्वारतैं निकसी रक्तोदा नामा नदी सो ऐरावत क्षेत्रमैं होय पश्चिम समुद्रमैं गई ॥

आगैं, इनि नदीनिकी परिवारनदीनिके प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृता गङ्गासिन्ध्वादयो नद्यः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— इहां गंगा सिंधू आदिका ग्रहण कोन प्रयोजन है? तहां कहै हैं, पूर्वोक्त नदीनिके ग्रहणके अर्थि है। इहां ऐसी आशंका न करनी; जो, अनंतर सूत्रमैं नदीनिका नाम हैही इहां फेरि न चाहीये। जातैं व्याकरणमैं ऐसी परिभाषा है, जो अनंतरका विधि होय

के प्रतिपेध होय। तहां कहिये अनंतर सूत्रतैं पश्चिमकूं गई नदीनिकाही ग्रहण होय है। तातैं [illegible] युक्त है। इहां पूछै है कि, गंगादिकांही ग्रहण होऊ। ताकूं कहिये, [illegible] तिनिहीका ग्रहण आवै है। तातैं सर्वही ग्रहणके अर्थि गंगासिंध्वादिका [illegible] ग्रहण है सो दूणां दूणांका संबंधके अर्थि है। गंगा चौदा हजार [illegible]ही सिंधूभी चौदा हजार नदीनिकरि परिवारित है। ऐसैं अगली [illegible]विदेहताईं दूणी दूणी जाननी। तातैं परै आधि आधि घटती जाननी ॥

[illegible]निकी चौडाई जाननेकै अर्थि सूत्र कहै है—

[illegible]जनशतविस्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥ २४ ॥

भरतक्षेत्र है सो पांचसै छवीस योजन छह कलाके विस्तार है। इहां कला [illegible]के उगणीस भाग करिये तामैं छह भाग लीजिये ऐसा अर्थ है ॥

[illegible]गिले क्षेत्रनिका तथा कुलाचलनिका विस्तार जनावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— तिस भरतक्षेत्रतैं कुलाचल तथा क्षेत्र दूणां दूणां विस्ताररूप हैं। ते विदेह

क्षेत्रतांई जानने। हिमवत्कुलाचल एक हजार बावन योजन बारा कला है। हैमवतक्षेत्र इकईससैं पांच योजन पांच कला है। महाहिमवान् कुलाचल च्यारि हजार दोयसै दश योजन दश कला है हरिक्षेत्र आठ हजार च्यारिसैं इकईस योजन एक कला। निषध कुलाचल सोला हजार आठसै बयालीस योजन दोय कला। विदेहक्षेत्र तेतीस हजार छहसै चौराशी योजन च्यारि कला। ऐसा जानना॥

आगैं, अगिलेनिका विस्तार कैसें है? ऐसें पूछे सूत्र कहै हैं--

॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥ २८ ॥

याका अर्थ-- उत्तरा कहिये ऐरावतादिक नीलकुलाचलतांई ते भरतादिक जे दक्षिणकी तरफके तिनिके तुल्य कहिये समान हैं। यहु विशेष-- पहलें कहे जे द्रह तथा कमल तिनिकै सर्वकै दक्षिणदिशातुल्य उत्तरदिशाके जानि लेनै॥

आगै पूछै है कि, कहे जे भरतादि क्षेत्र तिनिके मनुष्यनिकै अनुभव आयु काय भोगोपभोगादिक सदा तुल्य हैं, कि किछू विशेष है? ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ भरतैरावतयोर्वृध्दिन्हासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥ २७ ॥

याका अर्थ— वृध्दिन्हासौ कहिये वधना घटना सो भरत तथा ऐरावतक्षेत्रनिविषैं तिष्ठते मनुष्य-

के भोगोपभोग आयु कायप्रमाणादिक उत्सर्पिणी अवसर्पिणीरूप छह काल तिन करि पाईये है ॥

है। सुषमसुषमा। सुषमा। सुषमदुःषमा। दुःषमसुषमा। दुःषमा।
भी छह प्रकार है। सो पूर्वोक्ततैं उलटा गिणनां। तहां अति-
मा। सुषमा। सुषमसुषमा ऐसैं। इनिका कालका प्रमाण
दोऊनिकौं भेले कीये कल्पकाल कहिये। तहां सुषम-
कालकी आदिविषैं मनुष्य उत्तरकुरु भोगभूमिके मनु-
घटतैं घटतैं सुषमाकाल तीन कोडाकोडि सागरका होय
के मनुष्यनसारिखे होय है। तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैं घटतैं
कोडि सागरका होय है। तिसकी आदिविषैं मनुष्य हैमवतक्षेत्रके मनुष्य
हांतैं अनुक्रमतैं घटतैं घटतै दुःषमसुषमाकाल बियालीस हजार बरस घाटि
एक कोडाकोडि सागरका होय है। तिसकी आदिविषैं मनुष्य विदेहक्षेत्रके मनुष्यनिके तुल्य होय
हैं। तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैंघटतैं दुःषमाकाल इकईस हजार वरषका होय है। तहांतैं अनुक्रमतैं घटतैं
घटतैं अतिदुःषमाकाल इकईस हजार वर्षका होय है। ऐसैंही उत्सर्पिणीभी उलटा अनुक्रमरूप जानना।

आगैं पूछै है कि, अन्यभूमिनिकी कहा अवस्था है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं--

॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥ २८ ॥

याका अर्थ— तिनि भरत ऐरावत क्षेत्र सिवाय रहे जे क्षेत्र ते 'अवस्थिताः' कहिये जैसे हैं तैसेही रहै हैं ॥ तहां उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल नांही पलटै है ॥

आगैं पूछै है, तहांके मनुष्यनिकी आयु समानही है कि किछु विशेष है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं–

॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥ २९ ॥

याका अर्थ— हैमवतक कहिये हैमवतक्षेत्रके मनुष्य तिनिकी आयु एक पल्यकी है । इसकूं जघन्यभोगभूमिका क्षेत्र कहिये। बहुरि हरिवर्षके मनुष्यनिकी आयु दोय पल्यकी है। इसकूं मध्यभोगभूमिका क्षेत्र कहिये। बहुरि देवकुरुभोगभूमिका मनुष्यनिकी आयु तीन पल्यकी है। इसकूं उत्तमभोगभूमि कहिये। तहां पांच मेरुसंबंधी पांच हैमवतक्षेत्रनिविषैं सुषमदुःषमा सदा अवस्थित है। तहांके मनुष्यनिका आयु एक पल्यका अरु काय दोय हजार धनुष्यनिका है। बहुरि एकदिनके अंतरतैं आहार करे हैं। बहुरि नीलकमलसारिखा शरीरका वर्ण है। बहुरि पांच हरिक्षेत्रनिविषैं सुषमा सदा अवस्थित है। तहांके मनुष्यनिकी आयु दोय पल्यकी है। चारि हजार

धनुष्यका काय है । दोय दिनकै अंतरतैं आहार करै है। बहुरि शंखवर्णधवल शरीर है। बहुरि पांच देवकुरुक्षेत्रनिविषें सुषमासुषमा सदा अवस्थित है। तहांके मनुष्यनिकी आयु तीनपल्यकी है। छह हजार धनुषकी काय है। तीन दिनके अंतरतैं आहार करै है। सुवर्णवर्ण शरीर है ॥

आगें उत्तरदिशाकेनिविषें कहा अवस्था है? ऐसें पूछै सूत्र कहै हैं-

॥ तथोत्तराः ३० ॥

याका अर्थ-- जैसे दक्षिणदिशाकेनिविषें कहे तैसेही उत्तरदिशाके जानने। हैरण्यवतका तौ हैमवतककेनिकै तुल्य है। रम्यकके हरिवर्षकेनिकै तुल्य है। उत्तरकुरवरका देवकुरवरनिकै समान है। ऐसें जानना ॥

आगें विदेहक्षेत्रनिकेविषें कहा स्थिति है? ऐसें पूछै सूत्र कहै हैं--

विदेहेषु सङ्ख्येयकालाः ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— पंचमेरुसंबंधी पंचविदेहक्षेत्रनिविषें मनुष्यकी आयु संख्यातवर्षकी है। तहां काल सुषमदुःषमाका अंतिसारिखा सदा अवस्थित है। काय पांचसै धनुषका है । नित्य आहार करै है। उत्कृष्ट आयु एककोडि पूर्वका है। जघन्य आयु अंतर्मुहूर्तका है। तहां पूर्वके परिमाणकी गाथाका

अर्थ— सतरि लाख कोडी वर्ष वहुरि छपनहजार कोडि वर्ष एक पूर्व होय है ॥

आगैं, कह्या जो भरतक्षेत्रका विस्तार ताकूं अन्यप्रकारकरि कहै हैं—

॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— जंबूद्वीपका विस्तार लाख योजनका है। ताकै एकसो निवै भाग करिये तिनिमैं एक भाग मात्र विस्तार भरतक्षेत्रका है। सो पूर्वैं कह्या पांचसै छवीस योजन छह कला परिमाण हो है ॥

आगैं, कह्या था, जो, जंबूद्वीपकूं वेढिकरि वेदी तिष्ठै है, तातैं परै लवणसमुद्र दोय लाख योजन विस्ताररूप वलयाकार तिष्ठै है, तातैं परै धातकीखंड द्वीप च्यारि लाख योजन वलयविस्ताररूप है। तहां क्षेत्र आदिककी संख्याकी विधिका ज्ञानकै अर्थि सूत्र कह्या है—

॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— इहां भरतादिक्षेत्रनिका फेरि कहनां विवक्षित है। तहां पूछै है, जो, द्विशब्दपरि सुप्रत्यय कैसैं कीया? ताका उत्तर जो, इहां क्रियाका अध्याहार करनां है। ताके जनावनेकूं सु प्रत्यय कीया जैसैं कोईक महलकूं दूजे महलका परिमाण कहना होय तहां ऐसैं

धनुष्यका काय है । दोय दिनके अंतरतैं आहार करै है। बहुरि शंखवर्णधवल शरीर है। बहुरि पांच देवकुरुक्षेत्रनिविषैं सुषमासुषमा सदा अवस्थित है। तहांके मनुष्यनिकी आयु तीनपल्यकी है। छह हजार धनुषकी काय है। तीन दिनके अंतरतैं आहार करै है। सुवर्णवर्ण शरीर है ॥

आगैं उत्तरदिशाकेनिविषैं कहा अवस्था है? ऐसैं पूछे सूत्र कहे हैं-

॥ तथोत्तराः ३० ॥

याका अर्थ-- जैसे दक्षिणदिशाकेनिविषैं कहे तैसेही उत्तरदिशाके जानने। हैरण्यवतका तौ हैमवतककेनिकै तुल्य है। रम्यकके हरिवर्षकेनिकै तुल्य है। उत्तरकुरवरका देवकुरवरनिकै समान है। ऐसैं जानना ॥

आगैं विदेहक्षेत्रनिकेविषैं कहा स्थिति है? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं--

विदेहेषु सङ्ख्येयकालाः ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— पंचमेरुसंबंधी पंचविदेहक्षेत्रनिविषैं मनुष्यकी आयु संख्यातवर्षकी है। तहां काल सुषमदुःषमाका अंतिसारिखा सदा अवस्थित है। काय पांचसै धनुषका है । नित्य आहार करै है। उत्कृष्ट आयु एककोडि पूर्वका है। जघन्य आयु अंतर्मुहूर्तका है। तहां पूर्वके परिमाणकी गाथाका

अर्थ— सतरि लाख कोडी वर्ष वहुरि छपनहजार कोडि वर्ष एक पूर्व होय है ॥

आगैं, कह्या जो भरतक्षेत्रका विस्तार ताकूं अन्यप्रकारकरि कहै हैं—

॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— जंबूद्वीपका विस्तार लाख योजनका है। ताकै एकसो निवै भाग करिये तिनिमैं एक भाग मात्र विस्तार भरतक्षेत्रका है। सो पूर्वैं कह्या पांचसै छवीस योजन छह कला परिमाण हो है ॥

आगैं, कह्या था, जो, जंबूद्वीपकूं वेढिकरि वेदी तिष्ठै है, तातैं परै लवणसमुद्र दोय लाख योजन विस्ताररूप वलयाकार तिष्ठै है, तातैं परै धातकीखंड द्वीप च्यारि लाख योजन वलय-विस्ताररूप है। तहां क्षेत्र आदिककी संख्याकी विधिका ज्ञानकै अर्थि सूत्र कह्या है—

॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— इहां भरतादिक्षेत्रनिका फेरि कहनां विवक्षित है। तहां पूछै है, जो, द्विशब्दपरि सुप्रत्यय कैसैं कीया? ताका उत्तर जो, इहां क्रियाका अध्याहार करनां है। ताकै उदाहरणकूं

कहिये, जो, यह महल तिसतैं दूणां मापिये । इहां मापनां क्रिया है । तैसैं इहां जंबूदीपविषैं एक एक भरतादिक क्षेत्र है तातैं दूणां दोय दोय गिणिये ऐसैं द्विशब्द परि सुप्रत्य है सो जनावै है । तहां धातकी खंड लवणसमुद्रकूं वेढै कडाकै आकार है । ताके दक्षिण उत्तर दिशाकूं दोय इष्वाकार पर्वत पडे हैं । ते लवणोदसमुद्र अरु कालोदसमुद्रकी वेदीकूं जाय लगे हैं । इनितैं धातकीखंडके दोय भाग भये हैं । एक पूर्व दिशाका भाग, एक पश्चिम दिशाका भाग । तहां दोऊ भागनिविषैं बीचि बीचि पूर्वपश्चिमकूं दोय मेरु पर्वत हैं । तिनि दोऊनिके दोऊतरफ भरतादि क्षेत्र हैं । हिमवान् आदि कुलाचल हैं । ऐसैं दोय दोय भरत आदि क्षेत्र दोय दोय हैमवत आदि कुलाचल जानने । बहुरि जंबूद्वीपविषैं जो कुलाचल हिमवान् आदिका विस्तार है तिनितैं दूणां कुलाचलनिका विस्तार जाननां । बहुरि कुलाचल पहेके अरा होय तैसे तिष्ठे हैं, बहुरि अरानिकै बीचि छिद्र क्षेत्र होय है; तैसैं क्षेत्र अवस्थित हैं । बहुरि जंबूद्वीपविषैं जैसैं जंबूवृक्ष है तैसैं धातकीखंडविषैं धातकीवृक्ष है । परिवारवृक्षनिसहित है । तिस वृक्षके योगतैं धातकीखंड ऐसी संज्ञा है । बहुरि ताकै ऊपरि वेढ्या कालोद समुद्र है । सो जैसैं टाकीका छेद्या तीर्थ कहिये जलका निवास होय तैसैं है ।

आठ लाख योजनका वलय विस्तार धार्‍या है। वहुरि ताकै परिवेढिवां पुष्करद्वीप है। सोलह लाख योजनका वलय विस्ताररूप है ॥

आगैं, तिस पुष्करद्वीपकै पहले द्वीपसमुद्रनितैं दूणां विस्तारकी रचनाकीज्यौं धातकी खंडतैं दूणां क्षेत्र आदिका प्रसंग आवै है। ताके निषेधके अर्थि विशेष नियमकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ पुष्करार्द्धे च ॥ ३४ ॥

याका अर्थ—जंबूद्वीपके भरत हैमवत आदिकी अपेक्षाही पुष्करार्द्धविषैंभी दूणां क्षेत्र कुलाचल जाननां। दोय भरत दोय हिमवान् कुलाचल इत्यादि तेही तिनिके नाम हैं ॥ वहुरि धातकी खंडकीज्यौं इहांभी दोय इष्वाकार पर्वत जानने। वहुरि कुलाचलनिका विस्तार धातकीखंडके कुलाचलतैं दूणां जाननां। यह व्याख्यानतैं जानी जाय है। वहुरि जहां जम्बूद्वीपविषैं जम्बूवृक्ष है तहां पुष्कर द्वीपविषैं पुष्करवृक्ष परिवारसहित जाननां। तिसहीकै नामतैं द्वीपका नाम प्रसिद्ध है। इहां पुष्करार्द्ध कह्या सो मानुषोत्तर नाम पर्वत या द्वीपकै मध्य है, तिसकरि विभाग भया। तातैं ता पर्वतकै उरै आधा द्वीप है। तातैं पुष्करार्द्ध ऐसा नाम जाननां ॥

आगैं, पूछै है कि, जंबूद्वीपकै हिमवत् आदिकी संख्या दोय वार आवृत्तिकरि पुष्करार्द्धमैं

कही ताका कहां प्रयोजन है? समस्तही पुष्करद्वीपविषैं क्यों न कही? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— पुष्करद्वीपके बीचिही बीचि वलयवृत्तिरूप मानुषोत्तर नाम पर्वत है। तातैं पहलैं पहलैंही मनुष्य हैं। तातैं बाह्य नाहीं। तातैं बाहरिके पुष्करद्वीपमैं क्षेत्रनिका विभाग नाही है। तिस पर्वततैं परै ऋद्धिधारी तथा विद्याधरभी मनुष्य नाही गमन करै हैं। बहुरि जलचर जीव तथा विकलत्रय त्रसभी नही जाय हैं। तहां उपजैभी नाही हैं। उपपाद अर समुद्घाततैं तौ प्रदेश बाहरि जाय हैं। विना उपपादसमुद्घात नाही जाय है। तातैं याकी सार्थिक संज्ञा है। ऐसैं जंबूद्वीप आदि अढाई द्वीप तथा लवणोद कालोद ए दोय समुद्रनिविषैंही मनुष्य जाननां॥

आगैं कहे हैं, ते मनुष्य दोय प्रकार हैं, ताका सूत्र—

॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— गुणनिकरि अथवा गुणवान् पुरुषनिकरि सेईये ते आर्य कहिये। ते दोयप्रकार हैं। ऋद्धिप्राप्त अनृद्धिप्राप्त। तहां अनृद्धिप्राप्त आर्य पंचप्रकारके हैं। क्षेत्र आर्य, जाति आर्य, कर्म आर्य, चारित्र आर्य, दर्शन आर्य ऐसे। बहुरि ऋद्धिप्राप्त आर्य सात प्रकारके हैं। बुध्दिऋद्धि, विक्रियाऋध्दि,

तपऋध्दि, बलऋध्दि, औषधऋध्दि, रसऋध्दि, अक्षीणऋध्दि ऐसे। तहां अनृध्दिप्राप्तमैं काशी कोशलादि आर्यदेशनिविषैं उपजै ते क्षेत्र आर्य हैं। बहुरि इक्ष्वाकु जाति भोजकुलादिविषैं उपजे ते जातिआर्य हैं॥ बहुरि कर्मआर्य तीन प्रकार हैं। तहां सावद्यकर्म आर्य, अल्पसावद्यकर्म आर्य, असावद्यकर्म आर्य। तहां सावद्यकर्म आर्य छह प्रकार हैं॥ तहां असि धनुष्यआदि शस्त्रके प्रयोगकेविषैं प्रवीण होय, ते असिकर्म आर्य हैं। बहुरि द्रव्य आदिका आयव्यय लिखनेविषैं प्रवीण होय ते मषिकर्म आर्य हैं। बहुरि हल कुलि दांतला आदि खेतीके उपकरणके विधान जानै ते कृषिकर्म आर्य हैं। बहुरि चित्राम गणित आदि बहतरि कला जानै ते विद्याकर्म आर्य हैं। बहुरि धोबी नाई लूहार कुह्मार सुनार आदि शिल्पकर्म आर्य हैं। बहुरि चंदनादि सुगंध, घृतादि रस, शाल्यादि धान्य, कार्पासादि वस्त्र, मोती आदि जवाहर अनेकप्रकार द्रव्यका संग्रह करनेवाले अनेक प्रकार वाणिज्यकर्म आर्य हैं। बहुरि अल्पसावद्यकर्म आर्य देशविरत श्रावक है। बहुरि असावद्यकर्म आर्य सकलविरत मुनि है॥ बहुरि चारित्र आर्य दोय प्रकार हैं। तहां चारित्रमोहके उपशमतैं तथा क्षयतैं बाह्यके उपदेशविनाही अपनी शुध्दतातैं चारित्रपरिणामकूं प्राप्त भये ते अभिगतचारित्त आर्य हैं। बहुरि चारित्रमोहके क्षयोपशम होतैं बाह्यके उपदेशतैं चारित्रपरिणाम

जिनीकै होय ते अनभिगतचारित्र आर्य हैं ॥

बहुरि दर्शनआर्य दश प्रकार हैं । ते सम्यग्ग्रहणके कारणकी अपेक्षातैं जानने । तहां जे सर्वज्ञ अर्हत्प्रणीत आगमकी आज्ञामात्र कारणतैं श्रध्दावान् होय, ते आज्ञासम्यक्त्ववान् कहिये । बहुरि निर्ग्रंथमोक्षमार्गके दर्शन श्रवणमात्रतैं श्रध्दावान् होय, ते मार्गश्रध्दावान् हैं । बहुरि तीर्थंकर आदिके पुराण आदिके उपदेशके निमित्ततैं श्रध्दावान् होय, ते उपदेशरुचिमान आर्य हैं । बहुरि मुनिनिके आचार श्रुतके श्रवणमात्रतैं श्रध्दावान् होय, ते सूत्रसम्यक्त्ववान् हैं । बहुरि बीजपदरूप जे सूक्ष्म अर्थ ताके निमित्ततैं श्रध्दावान् होय, ते बीजरुचिमान् हैं । बहुरि जीवादिपदार्थका संक्षेप उपदेशतैं श्रध्दावान् होय, ते संक्षेपरुचि हैं । बहुरि अंगपूर्वमें जैसें कहै तैसैं विस्ताररूप प्रमाणनयादिकतैं निरूपण कीये जे तत्त्वार्थ, तिनिके श्रवणतैं श्रध्दावान् होय, ते विस्ताररुचि हैं । बहुरि वचनके विस्तारविनां सुन्या अर्थके ग्रहणतैं श्रध्दावान् होय, ते अर्थदर्शनवान् हैं । बहुरि द्वादशांगके जाननेतैं श्रध्दावान् होय, ते अवगाढरुचि हैं । बहुरि परमावधि केवलज्ञानदर्शनतैं जीवादि पदार्थनिकूं जाने जो "आतमा उज्जल श्रद्धानरूप भया" तहां परमावगाढरुचि कहिये ऐसे ये दश दर्शन आर्य हैं ॥

बहुरि ऋद्धिप्राप्त आर्य सात प्रकार कहे ते इहां आठ प्रकारभी कहे हैं। तहां बुद्धिऋद्धीके अठारह भेद हैं। तहां केवलज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तीन तौ पहलै कहै तेही जानने। बहुरि संवारे क्षेत्रविषें जैसै कालादिके सहायतैं बीज बोया अनेक फल दे तैसैं नोइंद्रिय श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतरायके क्षयोपशमके प्रकर्ष होतैं एकबीजके ग्रहणतैं अनेकपदार्थका ज्ञान होय सो बीजबुद्धि है। बहुरि जैसै कोठारीके धरे न्यारे न्यारे प्रचुर धान्य बीजतैं विनाश न भये कोठेहीमैं धरे है; तैसैं आपही जाणे जे अर्थके बीज प्रचुर न्यारे न्यारे बुद्धिमैं वणे रहे जिस काल चाहै जिस काल काढै ताकूं कोष्ठबुद्धि कहिये। बहुरि पदानुसारी तीन प्रकार अनुश्रोत, प्रतिश्रोत दोऊरूप। तहां एकपदका अर्थतैं सुनि आदिविषें तथा अंतविषैं तथा मध्यविषैं सर्वग्रंथका अवधारण करनां, सो पदानुसारी है। बहुरि चक्रवर्तीका कटक बारह योजन लंबा नव योजन विस्तारमैं पडै है। ताविषैं गज वाजी ऊंट मनुष्यादिकका अक्षर अनक्षररूप शब्द ते एककाल प्राप्त भये तिनिकूं तपके बलतैं पाया जो श्रोत्र इंद्रियका बल, तातैं समस्तका एककाल श्रवण होय ताकूं संभिन्न श्रोत्र कहिये। बहुरि तपके विशेषकरि प्रगट भया जो असाधारण रसना इंद्रिय श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतरायका क्षयोपशम अंगोपांगनामा नामकर्मका उदय जाकै ऐसा मुनिकै रसनाका विषय जो नव

योजन तातैं बाह्यतैं आया जो बहुयोजनतैं रसका स्वाद ताके जाननेकी सामर्थ्य सो रसनेंद्रिय ज्ञानलब्धि है। ऐसैंही स्पर्शन इंद्रिय तथा घ्राणइंद्रिय चक्षुइंद्रिय श्रोत्रेंद्रिय इनिके विषयक्षेत्रतैं बाह्यतैं आया जो गंध स्पर्श वर्ण शब्द ताके जाननेकी सामर्थ्य हो है। ते पांच ए भये ॥ बहुरि महारोहिणी आदि विद्या तीनवार आय कहै जो ह्यानैं अंगीकार करौ। कैसी है ते? अपने अपने रूपकी सामर्थ्य प्रगट करनेका कथनविषैं प्रवीण है। भावार्थ– ऐसैं कहै, जो, थे कहो सोही करां ऐसी विद्यादेवतानिकरि जिनिका चारित्र चलै नांही ऐसै दशपूर्वके धारकनिकै दशपूर्वित्व ऋद्धि हो है। बहुरि संपूर्णश्रुतकेवलीकै होय सो चतुर्दशपूर्वित्व है। बहुरि अंतरिक्ष भौम अंग स्वर व्यंजन लक्षण छिन्न स्वप्न ए आठ निमित्तज्ञान हैं। ते जिनिकै होय तिनिकूं अष्टांगमहा-निमित्त कहिये। तहां चंद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्र ज्योतिषीनिका उदय अस्त आदिकरि अतीत-अनागत फलका कहनां सो अंतरिक्ष है। बहुरि पृथिवीकी कठिणता छिद्रमयता सचिक्कणता रूक्षता आदि देशनितैं दिशाविषैं सूत आदिका स्थापनकरि हानिवृद्धि जय पराजय आदिका जाननां, तथा भूमिमैं स्थापे जे सुवर्णरजतादि तिनिका बतावना सो भौमनिमित्त ज्ञान है। बहुरि पुरुषके अंगोपांगके देखनेतैं तथा स्पर्शन आदिकतैं त्रिकालके सुख दुःख आदिका जाननां सो अंगनि

मित्तज्ञान है। बहुरि अक्षररूप तथा अनक्षररूप शुभ अशुभ शब्द सुननेतैं इष्ट अनिष्ट फल जाननां सो स्वरनिमित्तज्ञान है। बहुरि मस्तकविषैं मुखविषैं गलाविषैं तिल मुश आदि चिन्ह देखनेतैं तीन कालका हित अहित जाननां सो व्यंजननिमित्तज्ञान है। बहुरि श्रीवृक्ष स्वस्तिक भृंगार कलश आदि शरीरविषैं चिन्ह देखनेतैं तीन कालकै विषैं पुरुपके स्थान मान ऐश्वर्यादिका विशेप जाननां सो लक्षणनिमित्त ज्ञान है। बहुरि वस्त्र शस्त्र छत्र उपानत् कहिये पगांकी जोडी अर आसन शयन आदिविषैं देव मनुष्य राक्षस आदिके विभागकरि शस्त्रतैं कटै कांटातैं कटै मूसा आदि काटै तिनिका देखनेतैं तीन कालके लाभ अलाभ सुखदुःखका जाननां सो छिन्ननिमित्तज्ञान है। बहुरि वात पित्त श्लेष्मके दोपकरि रहित जो पुरुप ताकूं स्वप्न आवै सो पाछिली रातीके भागविषैं चंद्रमा सूर्यका तथा पृथ्वी समुद्रका मुखविषैं प्रवेश देखै तथा समस्त पृथ्वीमंडलका आच्छादन देखै ए तौ शुभस्वप्न अथवा घृततैलकरि अपना देह आर्द्रित देखै तथा गर्दभ ऊंटपरि आपकूं चढा देखै तथा दिशाका गमन देखै ये अशुभ स्वप्न इत्यादि स्वप्नके देखनेतैं आगामी जीवना मरनां सुख दुःख आदि जानै सो स्वप्ननिमित्तज्ञान है। ए आठ निमित्तज्ञान जाकै होय सो अष्टांगनिमित्तज्ञान ऋद्धि है। बहुरि द्वादशांग चौदह पूर्व तौ न पढ्या होय अरु प्रकृष्ट श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशमतैं ऐसी असाधारण

प्रज्ञा प्रगट भई होय जो चौदहपूर्वके पढनेवालेनें सूक्ष्म तत्त्वका विचार अवगाहनविषैं एक पद कह्या तिसतैं निःसंदेह निरूपण करै ताकै प्रज्ञाश्रवणत्वऋद्धि हो है। बहुरि परके उपदेशविनाही अपनी शक्तिके विशेपतैं ज्ञानसंयमके विधानविषैं प्रवृत्ति होना सो प्रत्येकबुद्धि ऋद्धि है। बहुरि इंद्रभी आय वाद करै तौ ताकूं निरुत्तर करै तथा वादीके दोष जाकूं प्रतिभासै ताकै वादित्वऋद्धि हो है। बहुरि दूजी क्रियाऋद्धि है ताके दोय भेद चारणऋद्धि आकाशगामिनी। तहां चारणऋध्दि अनेक प्रकार है। तहां जलके निवासविषैं जलकायके जीवनकूं न विराधते भूमिकीज्यों पग धरते गमन करै ते जलचारण हैं। बहुरि भूमितैं च्यारि अंगुल ऊंचे आकाशविषैं जंघा उठाय शीघ्र सैकडा कोश गमन करै ते जंघाचारण हैं। ऐसैही तंतुपरि गमन करै पुष्पपरि गमन करै सूधे गमन करै अग्निकी शिखापरि गमन करै इत्यादि गमन करै तिनिके जीवनिको बाधा न होय ते चारण ऋध्दिके भेद हैं। बहुरि पद्मासनकरि तथा कायोत्सर्ग आसनकरि पगके निक्षेपविना आकाशविषैं निराधार गमन करजाय तहां आकाशगामिनी ऋध्दि है॥ बहुरि तीसरी विक्रिया ऋध्दि सो अनेक प्रकार है। तहां अणुमात्र शरीरकरि ले सो अणिमा है। तहां कमलके तंतूमात्र छिद्रविषैं प्रवेशकरि तहां बैठि चक्रवर्तीकी विभूति रचै ऐसी सामर्थ्य है। बहुरि मेरुपर्वततैंभी बडा शरीर रचै सो महिमा है। बहुरि

भूमिमैं बैठे अंगुलीकरि मेरूका शिखर सूर्य आदिकूं स्पर्शै सो प्राप्ति है । बहुरि भूमिविषैं तौ जलकीज्यौं अरु जलविषैं भूमिकीज्यौं उन्मज्जन निमज्जन करै सो प्राकाम्य है । बहुरि तीन लोकका प्रभुत्वपणा रचै सो ईशित्व है । सर्वजीवनिकौं वशी करणेकी सामर्थ्य सो वशित्व है । बहुरि पर्वतकै बीचि आकाशकीज्यौं गमनागमन करै सो अप्रतिघात है । अदृष्ट होय जाय काहूंको दिखै नांही सो अंतर्धान है । बहुरि एककालमैं अनेकरूप करनकी शक्ति सो कामरूपित्व है । इनिकूं आदि देकरि अनेक विक्रियाऋद्धि है । बहुरि चौथी तपोऽतिशयऋद्धि है । सो सातप्रकार है । तहां उपवास वेला तेला चौला पचौला तथा पक्ष मास आदि अनशन तपका प्रारंभ करि मरणपर्यंत करै ऐसी सामर्थ्य होय सो उग्रतप है । बहुरि महोपवास करतैंभी काय वचन मनका बल वधताही रहै शरीरमैं दुर्गंध आदि न आवै सासोच्छास सुगंधही आवै शरीरकी दीप्ति घटै नांही सो दीप्ततप है । बहुरि आहार करै सो तातै कडाहमैं पडा जैसै जल शीघ्र सूकि जाय तैसै सूकै तातैं मलरुधिरादिरूप परिणमैं नांही सो तप्ततप है ॥ बहुरि सिंहनिक्रीडित आदि महोपवासका आचरणविषैं तत्पर सो महातप है। बहुरि वात पित्त श्लेष्म सान्निपाततैं उपज्या जो ज्वर कास श्वास अक्षिसूल कोट प्रमेह आदि अनेक प्रकार रोग तिनिकरि संतापरूप

भया है देह जिनिका तोभी अनशन कायक्लेशादि तपतैं छूटै नांही भयानक मसाण पर्वतके शिखर गुफा दरी कंदरा शून्यग्राम आदिविषें दुष्ट यक्ष राक्षस पिशाच वेतालरूप विकार होतेंभी तथा कठोर जे स्यालनिके रुदन निरंतर सिंह व्याघ्र आदि तथा दुष्ट हाथीनिके भयानक शब्द सुननेतेंभी तथा चौरादिका जहां विचरणा ऐसे भयानक प्रदेशनिविषैं तिष्ठै सो घोरतप है। बहुरि तेही मुनि तपका योगके वधावनेकैविषैं तत्पर ते घोर पराक्रम हैं। बहुरि बहुतकालतैं ब्रह्मचर्यके धारक अतिशयरूप चारित्रमोहनीय कर्मका क्षयोपशमतैं नष्ट भये हैं खोटे विकाररूप स्वप्न जिनिकै ते घोर ब्रह्मचर्यवान् हैं। ऐसैं सात तपोऋद्धि है॥ बहुरि पांचवा बलऋद्धि तीन प्रकार है। तहां मनःश्रुतज्ञानावरण वीर्यांतराय कर्मका क्षयोपशमका प्रकर्ष होतैं अंतर्मूहूर्तमें समस्त श्रुतका अर्थ चिंतवनेकी सामर्थ्य जिनिकै होय ते मनोबली हैं। बहुरि मनोजिव्हा श्रुतज्ञानावरण वीर्यांतरायका क्षयोपशम अतिशयरूप होतैं अंतर्मूहूर्तमें सकलश्रुतके उच्चारणविषैं समर्थ होय निरंतर उच्चस्वरतैं उच्चारण करतेंभी खेदरहित कंठस्वर भंग न होय ते वचनबली हैं। बहुरि वीर्यांतरायका क्षयोपशमतैं असाधारण कायका बल प्रगट होतैं मासिक चातुर्मासिक वार्षिक प्रतिमायोग धारतैंभी खेदरहित होय ते कायबली हैं। बहुरि छठी औषधऋद्धि सो आठ प्रकार है। तहां असाध्यभी रोग होय तौ

तिनिके स्पर्शन आदिकरि नष्ट होय जाय तहां जिनके पादका स्पर्शनांही औषध तथा थूकही औषध तथा पसेव सहत रज सो जल्ल कहिये सोही औषधी तथा कान दांत नासिका नेत्रका मलही औषधी तथा विद्मल तथा मूत्रही औषधी तथा अंग उपांग नख दंत केश आदिक स्पर्शी पवन आदि सर्वही औषधी, तथा तीव्र जहरका मिल्याभी आहार जिनिकै मुखमें गये विषरहित होय ते आस्याविष हैं, तथा जिनिके देखनेमात्रकरिही तीव्र जहर दूरि हो जाय सो दृष्टयविष है ऐसें आठ औषधी ऋद्धि हैं। बहुरि सातमी रसऋद्धि है। सो छह प्रकार है। तहां महातपस्वी मुनि जो कदाचित् क्रोध उपजै काहूकूं कहै तूं मरि तौ तिनिके वचनतैं तत्क्षण मरै ते आस्यविष हैं। बहुरि कदाचित् क्रोधकरि क्रूरदृष्टीकरि देखै तौ पैला मरि जाय सो दृष्टिविष है। बहुरि विरसभी भोजन जिनके हस्तविषें पड्या क्षीररसरूप हो जाय तथा जिनिका वचन दुर्बलकूं क्षीरकीज्यों तृप्ति करै सो क्षीरस्रावी है। बहुरि जिनिके हस्तविषैं पड्या आहार नीरसभी होय सो मिष्टरसवीर्यपरिणामरूप होय जाय तथा जिनिका वचन सुननेवालेनिके मिष्टरसके गुणज्यों पुष्ट करै सो मधुस्रावी है। बहुरि जिनिके हस्तविषें पड्या अन्न रूक्षभी होय सो घृतरसका वीर्यके पाककूं प्राप्त होय तथा जिनिका वचन घृतकीज्यों प्राणीनिकूं तृप्ति करै सो सर्पिःश्रावी है। बहुरि जिनिके हस्तविषें पड्या

भोजन अमृत हो जाय तथा जिनिका वचन प्राणीनिकूं अमृतकीज्यों उपकार करै सो अमृत-
श्रावी है। ऐसें रसऋद्धि छह प्रकार है॥ बहुरि आठमी क्षेत्रऋद्धि दोय प्रकार है। तहां लाभांत-
रायके क्षयोपशमका अतिशयवान् मुनि तिनिकूं जिस भोजनमैंसूं भोजन दे तिस भाजनमैं चक्रव-
र्तिको कटक भोजन करै तो वै दिनि वीतै नही सो अक्षीणमहानस है। बहुरि मुनि जहां वसै तहां
देव मनुष्य तिर्यंच सर्वही जो आय वसै तौ परस्पर बाधा होय नांही सकडाई न होय सो अक्षीण
महालय है। ऐसें ए ऋद्धि जिनिकै प्राप्त होय ते ऋद्धिप्राप्त आर्य हैं॥

बहुरि म्लेच्छ दोय प्रकार हैं अंतर्द्वीपज कर्मभूमिज। तहां अंतर्द्वीपज तौ लवणसमुद्रकी
आठ दिशा विदिशाविषें तथा आठही तिनिके अंतरालनिविषें तथा हिमवान् शिखरी कुला-
चल तथा दोऊ विजयार्द्धके पूर्वपश्चिम दोऊ दिशानिके अंतविषैं आठ हैं। ऐसैं चौईस
अंतर्द्वीप हैं तहां वसै हैं। तहां दिशानिके द्वीप तौ जंबूद्वीपकी वेदीतैं पांचसैं योजन परै
समुद्रमें हैं तिनका सौ सौ योजनका विस्तार है। बहुरि विदिशानिकै द्वीप वेदीनितै पांचसैं
योजन परै हैं। तिनिका विस्तार पचावन पचावन योजनका है। बहुरि दिशा विदिशानिके
अंतरालके द्वीप वेदीतैं पांचसैं पचास योजन परै हैं। तिनिका विस्तार पचास पचास योज-

नका है । वहुरि पर्वतनिके अंतके द्वीप वेदीतैं छहसै योजन परै है । तिनिका विस्तार पचीस पचीस योजनका है । तहां मनुष्य कैसे हैं? पूर्वदिशाके द्वीपके वासी तौ एकजांघवाले हैं । पश्चिमके पूछवाले हैं । उत्तरदिशाके गुंगे हैं । दक्षिणदिशाके सींगवाले हैं । वहुरि च्यारि विदिशानिके क्रमतैं सुस्साकेसे कांन, सांकलीकेसे कांन, कांननिको ओढि ले ऐसे वडे कांन, लांवेकांन ऐसे हैं । वहुरि अंतरालनिके क्रमतैं घोडामुख, सिंहमुख, भैसामुख, सूकरमुख, वघेरामुख, उल्लूकमुख, काकमुख, वांदरमुख ऐसे हैं । वहुरि शिखरी कुलाचलके दोऊ अंतनिके मेघमुख वीजलीमुख हैं । वहुरि हिमवान् कुलाचलके दोऊ अंतके द्वीपनिके मच्छमुख कालमुख हैं । वहुरि उत्तर विजयार्द्धके दोऊ अंतनिके हास्तिमुख आदर्शमुख हैं । वहुरि दक्षिणविजयार्द्धके दोऊ अंतनिके गोमुख मेपमुख हैं । वहुरि एकजांघवाले तौ मांटीका तौ आहार करै हैं । गुफानिविपैं वसै हैं । वहुरि अवशेप सारेही पुष्पफलनिका तौ आहार करै हैं । अरु वृक्षनिविपैं वसै हैं । इनि सर्वहीकी एकपल्यकी आयु है । वहुरि ए चोईसही द्वीप जलके तलतैं एक एक योजन ऊंचे हैं । ऐसैही कालोदसमुद्रविपैं जाननै । ऐसे ए अंतरद्वीपके म्लेच्छ कहे । वहुरि कर्मभूमिनिके म्लेच्छ शक यवन शवर पुलिंद इनिकूं आदि दे अनेकजाति हैं ॥

आगें पूछे है, कर्मभूमि कहा है? ऐसें पूछे सूत्र कहे हैं—

॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— भरतक्षेत्र पांच ऐरावनक्षेत्र पांच विदेह पांच मेरु संबंधी पांच ऐसें पंदरें कर्मभूमि हैं। तहां विदेहके कहनेंतें देवकुरु उत्तरकुरुभी तिस क्षेत्रमें हैं। ताका प्रसंगके निषेधके अर्थि तिनि विनां ऐसें कह्या है। जातें वे दोऊ उत्तमभोगभूमि हैं। हैमवत जघन्यभोगभूमि है। हरिक्षेत्र मध्यभोगभूमि है। रम्यक मध्यभोगभूमि है। हैरण्यवत जघन्यभोगभूमि है। बहुरि अंतर्द्वीपकूंभी भोगभूमिही कहिये है। इहां पूछे है, कर्मभूमिपणा काहेतें कह्या है? ताका समाधान, कर्मभूमि है सो शुभ अशुभ कर्मके आधार क्षेत्र है। तहां फेरी पूछे है कर्मका आश्रय तौ तीनूंही लोकका क्षेत्र है। ताका समाधान, जो, याहीतें तहां अतिशयकरि कर्मका आश्रय जानीये है। तहां सातवे नरक जाय, ताका कारण अशुभ कर्म इनि भरतादिक्षेत्रनिविषैंही उपजाईये है। तथा सर्वार्थसिद्धि आदिका गमनका कारण शुभकर्मभी इनिही क्षेत्रनिविषैं उपजाईये है। बहुरि खेती आदि छह प्रकारके कर्मभी इनिही क्षेत्रनिविषैं आरंभ है। तातैं इनिकूं कर्मभूमि कहिये है। अन्य जे भोगभूमि तिनिविषैं दशप्रकारके कल्पवृक्षनिकरि कल्पित भोगका अनुभवन है। तातैं

तिनिकूं भोगभूमि कहिये है ॥

आगें, कही जो भूमि, तिनिविषें मनुष्यनिकी स्थितिके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— मनुष्यनिकी उत्कृष्टस्थिति तौ तीन पल्यकी है। बहुरि जघन्यस्थिति अंतर्मुहूर्तकी है। मध्यके अनेक भेद हैं। मुहूर्त नाम दोय घडीका है। ताके मध्य होय सो अंतर्मुहूर्त है। इहां कोई पूछै, जो, पल्य कहा? तहां पल्यका जाननेकै अर्थि प्रसंग पाय प्रमाणका विधानरूप गणती लिखिये है। तहां प्रमाण दोय प्रकार है। एक लौकिक, दूसरा अलौकिक। तहां लौकिक छह प्रकार है। मान, उन्मान, अवमान, गणमान, प्रतिमान, तत्प्रतिमान। तहां पायी माणी इत्यादिक मान जाननां। ताखडीका तोल उन्मान जाननां। चल्लू इत्यादिकका परिमाण अवमान जाननां। एक दोय आदि गणमान जाननां। चिरम तोला मासा आदि प्रतिमान जानना। घोडाका मोल इत्यादिक तत्प्रतिमान जाननां। बहुरि अलौकिक मानके च्यारि भेद हैं द्रव्य क्षेत्र काल भाव। तहां द्रव्यमानविषें जघन्य एक परमाणु उत्कृष्ट सर्वपदार्थनिका परिमाण। क्षेत्रमानविषें जघन्य एकप्रदेश, उत्कृष्ट सर्व आकाश। कालमानविषें जघन्य एकसमय उत्कृष्ट तीन

कालका समयसमूह। भावमानविषैं जघन्य सूक्ष्मनिगोदिया लब्धि अपर्याप्तका लब्ध्यक्षरज्ञानका अविभागप्रतिच्छेद, उत्कृष्ट केवलज्ञान। बहुरि द्रव्यमानका दोय भेद एक संख्यामान एक उपमामान। तहां संख्यामानके तीन भेद संख्यात असंख्यात अनंत। तहां संख्यात जघन्य मध्य उत्कृष्टकरि तीन प्रकार है। बहुरि असंख्यात है सो परीतासंख्यात युक्तासंख्यात असंख्यातासंख्यात इनि तीनूंहीके जघन्य मध्य उत्कृष्टकरि नव भेद हैं। बहुरि अनंत है सो परीतानंत युक्तानंत अनंतानंत इनि तीनूंके जघन्य मध्य उत्कृष्टकरि नव भेद हैं। ऐसैं संख्यामानके इकईस भेद भये। तिनिविषैं जघन्यसंख्यात दोय संख्यामात्र है। बहुरि तीनकूं आदि देकरि एक घाटि उत्कृष्ट संख्यातपर्यंत मध्यमसंख्या है। बहुरि एक घाटि जघन्य परीतासंख्यात प्रमाण उत्कृष्टसंख्यात जाननां। सो जघन्य परीतासंख्यातके जाननेकै अर्थि उपाय कहै हैं। अनवस्था शलाका प्रतिशलाका महाशलाका नामधारक च्यारि कुंड करने। तिनिका जुदा जुदा प्रमाण जंबूद्वीप प्रमाण चौडा एक हजार योजनका ऊंडा जाननां। तिनिमैं अनवस्थाकुंडकूं गोलसरसूंकरि तिघाऊ भरणा। तामैं छियालीस आंका परिमाण सरसूं मावै, तब अन्य एक सरसूं शलाकाकुंडमैं नाखि कोई मनुष्य बुद्धिकरि तथा देव हस्तादिकरि जंबूद्वीपादिकमैं एक सरसूं द्वीपमैं एक समुद्रमैं गेरता जाय तब वे सरसूं जहां पूर्ण

होय तिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाण चौडा अर ऊंडा हजार योजनहीका अनवस्थाकुंड करी सरसूंसो भरै। अरु एक सरसूं अन्य ल्याय शलाकाकुंडमैं गेरै। अनवस्थाकी सरसूं तहांतै आगिले द्वीप तथा समुद्रमैं एक एक गेरता जाय तब तेऊ सरसूं जिस द्वीप तथा समुद्रमैं बीतैं, तहां तीसरा अनवस्थकुंड तिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाणकरि सरसूंसो भरै। अर एक सरसूं अन्य शलाकाकुंडमें गेरै। ऐसेही अनवस्थाकी सरसूं एकएक द्वीप तथा समुद्रमैं गेरता जाय, ऐसे अनवस्था तौ वधता जाय अर एकएक सरसूं शलाकाकुंडमैं गेरता जाय तब एक शलाकाकुंड भरि जाय। ऐसैं करतैं छियालीस आंकप्रमाण अनवस्थकुंड वणै तब एक शलाकाकुंड भऱ्या। तब एक सरसूं प्रतिशलाकाकुंडमैं गेरै। बहुरि उस शलाकाकुंडकूं रीता करिये अर आगैं आगैं अनवस्थाकूं पूर्वोक्तरीतिकरि वधे एकएक सरसूं शलाका कुंडमैं गेरते गये तब दूसरा शलाकाकुंड भऱ्या। तब फेरि एक सरसूं प्रतिशलाकाकुंडमैं गेरै। बहुरि तिस शलाकाकुंडकूं रीता करि तिसही विधानकरि, तिसरा शलाकाकुंड भऱ्या। ऐसैं करतैं करतैं छियालीस अंकनिप्रमाण शलाकाकुंड भरि चुकै। तब एक प्रतिशलाकाकुंड भरै। तब एक सरसूं महाशलाकाकुंडविषैं गेरै। बहुरि ऐसै द्वीपसमुद्रनिमैं सरसूं गेरता जाय अनवस्थकुंड वधते जाय शलाकाकुंड भरि भरि रीते करते जाय, प्रतिशलाकाकुंडमैं

कालका समयसमूह । भावमानविषै जघन्य सूक्ष्मनिगोदिया लब्धि अपर्याप्तका लब्ध्यक्षरज्ञानका अविभागप्रतिच्छेद, उत्कृष्ट केवलज्ञान । बहुरि द्रव्यमानका दोय भेद एक संख्यामान एक उपमामान । तहां संख्यामानके तीन भेद संख्यात असंख्यात अनंत । तहां संख्यात जघन्य मध्य उत्कृष्टकरि तीन प्रकार है । बहुरि असंख्यात है सो परीतासंख्यात युक्तासंख्यात असंख्यातासंख्यात इनि तीनूंहीके जघन्य मध्य उत्कृष्टकरि नव भेद हैं । बहुरि अनंत है सो परीतानंत युक्तानंत अनंतानंत इनि तीनूंके जघन्य मध्य उत्कृष्टकरि नव भेद हैं । ऐसैं संख्यामानके इकईस भेद भये । तिनिविषैं जघन्यसंख्यात दोय संख्यामात्र है । बहुरि तीनकूं आदि देकरि एक घाटि उत्कृष्ट संख्यातपर्यंत मध्यमसंख्या है । बहुरि एक घाटि जघन्य परीतासंख्यात प्रमाण उत्कृष्टसंख्यात जाननां । सो जघन्य परीतासंख्यातके जाननेकै अर्थि उपाय कहे हैं । अनवस्था शलाका प्रतिशलाका महाशलाका नामधारक च्यारि कुंड करने । तिनिका जुदा जुदा प्रमाण जंबूद्वीप प्रमाण चौडा एक हजार योजनका ऊंडा जाननां । तिनिमैं अनवस्थाकुंडकूं गोलसरसूंकरि तिघाऊ भरणा । तामैं छियालीस आंका परिमाण सरसूं मावै, तब अन्य एक सरसूं शलाकाकुंडमैं नाखि कोई मनुष्य बुद्धिकरि तथा देव हस्तादिक ' जंबूद्वीपादिकमैं एक सरसूं द्वीपमैं एक समुद्रमैं गेरता जाय तब वे सरसूं जहां पूर्ण

होय तिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाण चौडा अर ऊंडा हजार योजनहीका अनवस्थाकुंड करी सरसूंसो भरै। अरु एक सरसूं अन्य ल्याय शलाकाकुंडमैं गेरै। अनवस्थाकी सरसूं तहांतैं अगिले द्वीप तथा समुद्रमैं एक एक गेरता जाय तब तेऊ सरसूं जिस द्वीप तथा समुद्रमैं बीतैं, तहां तीसरा अनवस्थकुंड तिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाणकरि सरसूंसो भरै। अर एक सरसूं अन्य शलाका-कुंडमैं गेरै। ऐसेही अनवस्थाकी सरसूं एकएक द्वीप तथा समुद्रमैं गेरता जाय, ऐसै अनवस्था तौ वधता जाय अर एकएक सरसूं शलाकाकुंडमैं गेरता जाय तब एक शलाकाकुंड भरि जाय। ऐसैं करतैं छियालीस आंकप्रमाण अनवस्थकुंड बणै तब एक शलाकाकुंड भऱ्या। तब एक सरसूं प्रति-शलाकाकुंडमैं गेरै। वहुरि उस शलाकाकुंडकूं रीता करिये अर आगैं आगैं अनवस्थाकूं पूर्वोक्तरी-तिकरि वधै एकएक सरसूं शलाका कुंडमैं गेरते गये तब दूसरा शलाकाकुंड भऱ्या। तब फेरि एक सरसूं प्रतिशलाकाकुंडमैं गेरै। वहुरि तिस शलाकाकुंडकूं रीता करि तिसही विधानकरि तिसरा शलाकाकुंड भऱ्या। ऐसै करतैं करतैं छियालीस अंकनिप्रमाण शलाकाकुंड भरि चुकै। तब एक प्रतिशलाकाकुंड भरै। तब एक सरसूं महाशलाकाकुंडविषैं गेरै। वहुरि ऐसै द्वीपसमुद्रनिमैं सरसूं गेरता जाय अनवस्थकुंड वधते जाय शलाकाकुंड भरि भरि रीते करते जाय, प्रतिशलाकाकुंडमैं

एक एक सरसूं गेरता जाय तब प्रतिशलाकाकुंड भरते जाय। तब इसही विधानकरि एक एक सरसूं महाशलाकाकुंडमैं गेरतैं गेरतैं छियालीस आंकाप्रमाण प्रतिशलाकाकुंड भरे। तब एक एक महाशलाकाकुंड भरि जाय। तहां अनवस्थकुंड केते भये? छियालीस अंकनिका घनकरि एते ते अनवस्थकुंड भये। तिनिमैं जो अंतका अनवस्थकुंड जिस द्वीप तथा समुद्रकी सूचीप्रमाण भया तामैं जेते सरसूं माये तेता परिणाम जघन्यपरीतासंख्यातका जाननां। बहुरि जघन्यपरीत असंख्यातकै ऊपरि एकएक वधता मध्यपरीतासंख्यातके भेद जाननां। बहुरि एक घाटि जघन्य युक्तासंख्यात प्रमाण उत्कृष्ट परीतासंख्यात जाननां। अब जघन्ययुक्तासंख्यातका परिमाण कहिये है। जघन्य परीतासंख्यातका विरलन करिये। बहुरि एकएक ऊपरि एक एक परीतासंख्यात मांडि परस्पर गुणिये। पहलांसूं दूसराकरि गुणिये जो परिमाण आवै ताकूं तीसरासूं गुणिये जो परिमाण आवै ताकूं चौथासूं गुणिये ऐसैं गुणतैं अंतविषैं राशी होय सो जघन्ययुक्तासंख्यात है। एते आवलीके समय हैं। बहुरि याके ऊपरि एक एक वधता एक घाटि उत्कृष्टयुक्तासंख्यात पर्यंत मध्ययुक्तासंख्यातके भेद हैं। बहुरि एक घाटि जघन्य असंख्यातासंख्यातपरिमाण उत्कृष्ट युक्तासंख्यात है। अब जघन्य असंख्यातासंख्यात कहिये है। जघन्य युक्तासंख्यातकूं जघन्ययुक्तासंख्यातकरि एकवार

गुणिये जो परिमाण आवै सो जघन्य असंख्यातासंख्यात है। याकै ऊपरि एक एक वधता एक घाटि उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यातपर्यंत मध्य असंख्यातासंख्यातके भेद हैं। एक घाटि परीतानंतप्रमाण उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात है। अब जघन्यपरीतानंत कहिये है। जघन्य असंख्यातासंख्यात परिमाण तीन राशि करनै एकशलाका एक विरलन एक देय। तहां विरलनराशिकूं एकएक जुदा जुदा वखेरनां। एक एककै ऊपरि एक एक देयराशि धरनां। वहुरि तिनिकूं परस्पर गुणिये। ऐसैं करि शलाका राशिमैंसूं एक घटावना। वहुरि जो परिमाण आया ताकै परिमाण दोय राशि करनां। तहां एकराशिका विरलनकरि एक एकके परि देयराशीका स्थापना करि परस्पर गुणिये। ऐसें करि उस शलाकाराशिमैंसूं एक ओर घटाय देना। बहुरि जो परिमाण आया तितनै परिमाण दोय राशी करनां। एकका विरलनकरि देयराशीकूं एकएक परि देय परस्पर गुणतैं जो परिमाण आया तिस परिमाणन देयराशीकरि परस्पर गुणनां। अरु शलाकाराशीमैंसूं एकएक घटाता जाना तब वह शलाकाराशी सर्व पूर्ण होय जाय। तब तहां जो कछू परिमाण हुवा सो यह असंख्यातासंख्यातका मध्यभेद है। सो तितने परिमाण तीन राशी फेरि करनां। शलाका विरलन देय। तहां विरलनराशी-कों एक एक वखेरी एक एक परि देयराशि देनां। परस्पर गुणिये तब शलाकाराशीमैंस्यौं एक

काढि लेनां । बहुरि जो परिमाण आया ताका विरलन करि एक एक परि एक एक राशी देय परस्पर गुणिये तब शलाकाराशीमैंसौं एक और काढिलेनां। ऐसैं करतैं करतैं दूसरी वार कीया शलाकाराशी पूर्ण होय । तब जो परिमाण आया सोभी मध्य असंख्यातासंख्यातका भेद है । बहुरि इस परिमाण शलाका आदि तीन राशि स्थापने तहां विरलन राशीकूं वखेर एक एककै स्थान देय, राशि देय परस्पर गुणिये । तब तीसरा शलाका राशीमैंस्यौं एक काढि लेनां । बहुरि जो परिमाण आया तिस परिमाण दोय राशीकरि विरलनकूं वखेरि देयकूं देय परस्पर गुणिये । तब शलाकामैंसूं एक और काढि लेनां । ऐसैं करतैं करतैं तीसरी शलाकाभी पूर्ण होय । तब शलाकात्रय निष्ठापन हूवा कहिये । आगैभी जहां शलाकात्रय निष्ठापन कहे तहां ऐसैंही करनां । अब ऐसैं करतैं जो मध्य असंख्याता-संख्यातका भेदरूप राशि भया ताविषैं छह राशि मिलावना । धर्मद्रव्य अधर्म लोकाकाश एकजीव इनि च्यारोंके प्रत्येक लोकप्रमाण प्रदेश बहुरि लोकके प्रदेशनितैं असंख्यात लोकगुणां अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवनका परिमाण बहुरि तातैंभी असंख्यातलोकगुणां सप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पति जीवनिका परिमाण ए छह राशि पूर्वोक्तपरिमाणविषैं मिलाय शलाका विरलन देय राशि करनी । तिनिका पूर्वोक्त प्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करनां ऐसै करतें जो महाराशि मध्य असंख्यातासंख्यातका

भेदरूप भया ताविषैं च्यारि राशि मिलावणें। वीस कोडाकोडि सागरप्रमाण कल्पकालके समय बहुरि असंख्यातलोकप्रमाण स्थितिबंधकूं कारणभूत कषायनिके स्थान बहुरि तिनितैं असंख्यातलोकगुणें अनुभागबंधकूं कारण कषायनिके स्थान बहुरि इनितैंभी असंख्यातलोकगुणे मनवचनकाययोगनिकै अविभागप्रतिच्छेद ऐसैं च्यारि राशिपूर्वक परिमाणविषैं मिलावनें, जो परिमाण होय तिस परिमाण शलाका विरलन देय। ए तीन राशि करनी। तिनिका पूर्वोक्त प्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करनां। ऐसैं करतैं जो परिमाण होय सो जघन्य परीतानंत है। बहुरि याकै ऊपरि एक एक वधता एक घाटि उत्कृष्ट परीतानंतपर्यंत मध्यपरीतानंतके भेद जानने। बहुरि एक घाटि जघन्य युक्तानंत परिमाण उत्कृष्टपरीतानंत जाननां। अब जघन्ययुक्तानंत कहिये हैं। जघन्य परीतानंतका विरलनकरि एक एक स्थानविषैं एक एक जघन्य परीतानंत थापि परस्पर गुणे जो परिमाण होय सो जघन्य युक्तानंत जाननां। सो यहु अभव्यराशीसमान है। बहुरि याकै ऊपरि एक एक वधतां एक घाटि उत्कृष्ट युक्तानंतपर्यंत मध्ययुक्तानंतके भेद जानने। बहुरि एक घाटि जघन्य अनंतानंत परिमाण उत्कृष्ट युक्तानंत जानना। अब जघन्य अनंतानंत कहिये हैं। जघन्य युक्तानंतकूं जघन्य युक्तानंतकरि एकवार गुणे जो परिमाण होय सो जघन्य अनंतानंत है। बहुरि याकै ऊपरि एक एक वधता एक

एक घाटि केवलज्ञानके अविभागप्रतिच्छेदन परिमाण उत्कृष्ट अनंतानंतपर्यंत मध्य अनंतानंत जाननां। बहुरि उत्कृष्ट अनंतानंत कहिये हैं। जघन्य अनंतानंत परिमाण शलाका विरलन देय ए तीन राशिकरि अनुक्रमतैं पूर्वोक्तप्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करै। यो करतैं मध्यम अनंतानंत-रूप परिमाण होय। ताविषैं छह राशि मिलावै जीवराशीकै अनंतवै भाग तौ सिद्धराशि। बहुरि तातैं अनंतगुणां पृथिवी अप तेज वायु प्रत्येक वनस्पति त्रसराशिरहित संसारी जीवराशि मात्र निगोदराशि। बहुरि प्रत्येक वनस्पतिसहित निगोदराशिप्रमाण वनस्पतिराशि। बहुरि जीवराशितैं अनंतगुणां पुद्गलराशि। बहुरि यातैं अनंतानंतगुणां व्यवहारकालका समयनिका राशि। बहुरि यातैं अनंतानंतगुणां अलोकाकाशके प्रदेशनिका राशि। ऐसैं छह राशि मिलाये जो परिमाण होय तिह प्रमाण शलाका विरलन देय तीन राशिकरि अनुक्रमतैं पूर्वोक्तप्रकार शलाकात्रय निष्ठापन कियै जो मध्य अनंतानंतका भेदरूप परिमाण आवै ताकेविषैं धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्यके अगुरुलघुके अविभागप्रति-च्छेदनका परिमाण अनंतानंत है सो जोडिये। यो करितैं जो महापरिमाण होय तिस परिमाण शलाका विरलन देय तीन राशिकरि अनुक्रमतैं पूर्वोक्तप्रकार शलाकात्रय निष्ठापन करनां। जो कोई मध्य अनंतानंतका भेदरूप महापरिमाण होय तिस परिमाणकूं केवलज्ञानके अविभागप्रतिच्छेदनिका

समूहरूप परिमाणविषैं घटाइये। पीछे ज्योंका त्यों मिलाइयै तब केवलज्ञानका अविभागप्रतिच्छेदनिका प्रमाणस्वरूप उत्कृष्ट अनंतानंत होइ। इहां केवलज्ञानके परिमाणमैंसौं काढि पीछे मिलावनेका प्रयोजन यहु है जो केवलज्ञानका परिमाण पूर्वोक्त गणनादिकरि जान्यां न जाय तातैं ऐसैं जनाया है। ऐसैं संख्यामानके इकईस भेद कहे। बहुरि याके विशेष कहनेकूं सर्व समविषम आदिके चौदह धारा हैं तिनिका वर्णन त्रिलोकसार ग्रंथतैं जाननां।

बहुरि उपमाप्रमाण आठ प्रकार है। पल्य सागर सूच्यंगुल प्रतरांगुल घनांगुल जगच्छ्रेणी जगत्प्रतर जगद्घन। तहां प्रथम तौ योजनका प्रमाणकी उत्पत्ति कहिये है। तहां आदि मध्य अंतकरि रहित ऐसा दूसरा जाका विभाग न होय ऐसा अविभागी पुद्गलका परमाणू है सो इंद्रियकरि ग्रह्या न जाय। जामैं एक रस, एक वर्ण, एक गंध, दोय स्पर्श ए पांच गुण हैं। ऐसैं अनंतानंत परमाणूका समूहकूं उत्संज्ञासंज्ञ कहिये। ऐसे उत्संज्ञासंज्ञ आठ मिलै तब एक संज्ञासंज्ञ कहिये। ऐसे आठ संज्ञासंज्ञ मिले तब एक तुटिरेणु कहिये। आठ तुटिरेणुका एक त्रसरेणु कहिये। आठ त्रसरेणुका एक रथरेणु कहिये। आठ रथरेणुका एक उत्तमभोगभूमीके मनुष्यका वालका अग्रभाग है। आठ उत्तमभोगभूमीके मनुष्यका वालके अग्रभाग मिलै तब एक मध्य

भोगभूमीके मनुष्यके वालका अग्रभाग कहिये । आठ ते मिलै तब एक जघन्यभोगभूमीका मनुष्यका वालका अग्रभाग है । ते आठ मिलै तब कर्मभूमिके मनुष्यका वालका अग्रभाग होय । ते आठ मिलिये तब एक लीष कहिये । आठ लीष मिलै तब एक यूका कहिये । आठ यूका मिलै तब एक यवमध्य होय । आठ यवमध्यका एक उत्सेधांगुल कहिये । इस अंगुलकरि नारकी तिर्यंच मनुष्य देवनिका देह तथा अकृत्रिम जिनप्रतिमाका देहं मापिए है । बहुरि पांचसै उत्सेधांगुलका एक प्रमाण—अंगुल हो है । सो यहु प्रमाण—अंगुल अवसर्पिणी कालका पहला चक्रवर्तिका हो है । तिस समय तिस अंगुलकरि गांव नगरादिकका प्रमाण हो है । अन्यकालमैं मनुष्यनिका अपनां अपनां अंगुलकां प्रमाण होय तिसतैं ग्राम नगरादिकका प्रमाण जाननां । बहुरि जो प्रमाणांगुल है ताहीकरि द्वीप समुद्र तथा तिनिकी वेदी पर्वत विमान नरकके प्रस्तार आदि अकृत्रिम वस्तुका विस्तार आयाम आदि मापिये है । तहां छह अंगुलका एक पाद कहिये । वारह अंगुलका एक वितस्ति कहिये । दोय वितस्तिका हाथ कहिये । दोय हाथका एक किष्कु कहिये । दोय किष्कुका एक धनुष्य कहिये । दोय हजार धनुष्यका एक कोश कहिये । च्यारि कोशका एक योजन कहिये । ऐसैं जाननां । आगै पल्यका प्रमाण कहिये है । तहां पल्य तीनप्रकार है ।

व्यवहार उद्धार अद्धा। तहां पल्य नाम खाडेका है। तहां आदिका व्यवहारपल्य तौ उत्तर दोय पल्यकी उत्पत्ति जाननेके अर्थि है। इसतैं कछु अन्य वस्तुका प्रमाण न करिये। बहुरि दूसरा उद्धारपल्यतै द्वीप समुद्र गिणिये है। बहुरि तीसरा अद्धापल्यतैं आयुकर्मादिकी स्थिति गिणिये है। तहां प्रमाणांगुलप्रमाणकरि एक योजनका चोडा लांबा ऊंडा तीन खाडा कीजिये। जामैं एकतैं ले सात दिनताईंका भया मींडा उत्तमभोगभूमिका ताका वालके अग्रभाग कतरणीतैं छेदिये। ऐसे खंड करिये ताका फेरि कतरणीतैं दूसरा खंड न होय। ऐसे रोमखंडनितैं व्यवहारपल्यनामा खाडा खूंदि खूंदि गाढा परिपूर्ण भरिये। तामैं पैतालीस अंकपरिमाण रोम माये। तिनि रोमनिकूं सौ वर्षमैं एकएक रोम काढिये। तब जेता कालमैं खाडा रीता होय तेता काल व्यवहारपल्यका है। बहुरि तिनि रोमनिके एकएकके असंख्यातकोडिवर्षके जेते समय होय तेते तेते खंड करिये। एकएक समयमैं एकएक रोम काढिये। जेते कालमैं निकासि चुकै तेता काल एक उध्दारपल्यका है। ऐसै दस कोडाकोडि उद्धारपल्य होय तब एक उद्धारसागरोपम कहिये। ऐसे अढाई सागरके जेते समय तेते द्वीप समुद्र हैं। बहुरि उद्धारपल्यके रोमछेद हैं तिनिके एक एक रोमछेदके सौ वर्षके जेते समय होय तेते तेते खंड करिये। तिनिकूं एक एक समयमैं काढिये। यामै जेता काल लागै

तेता काल एक अद्धापल्यका है। त्रिलोकसारमैं ऐसा कह्या है, उद्धारपल्यके रोमके एक एकके असंख्यातवर्षके समयमात्र खंड करने। ऐसे दस कोडाकोडी अद्धापल्यनिका एक अद्धासागर कहिये। बहुरि दशकोडाकोडी अद्धासागरका एक अवसर्पिणी काल कहिये। तेताही उत्सर्पिणीकाल कहिये। इस अध्दापल्यनिकरि नारक तिर्यच देव मनुष्यनिका कर्मकी स्थिति तथा भवकी स्थिति तथा कायकी स्थिति जानिये। बहुरि अद्धापल्यका जेते अर्द्धछेद होय तिनिकूं एक एक वखेरि एक एकपरि अद्धापल्य स्थापि, परस्पर गुणिये। तहां जो राशि निपजे ताकूं आकाशके प्रदेशनिकी पंक्तिरूप करिये सो सूच्यंगुल है। बहुरि सूच्यंगुलकूं सूच्यंगुलकरि गुणिये तब प्रतरांगुल कहिये। बहुरि प्रतरांगुलकूं सूच्यंगुलमूं गुणिये तब घनांगुल होय। बहुरि असंख्यात वर्षका जेता समय होय तेता खंड अद्धापल्यका करिये। तिनिमैंसूं एक खंड लेय ताकूं वखेरि एक एक स्थापि तिनि ऊपरि एक एक घनांगुल मांडिये। तिनिकूं परस्पर गुणिये तब जो राशि निपजै ताकूं जगच्छ्रेणी कहिये। भावार्थ—सात राजूका एकप्रदेश पंक्तिरूप डोराकूं जगत्श्रेणी कहिये है। बहुरि जगत् श्रेणीकूं जगत्श्रेणिकरि गुणें जगत्प्रतर होय है। बहुरि जगत्प्रतरकूं जगत्श्रेणीकरि गुणें जघद्घन हो है याकूं लोक कहिये, सात राजू लांबा सात राजू चौडा सात राजू ऊंचा क्षेत्रका प्रदेशका नाम लोक

है। बहुरि क्षेत्रमान दोय प्रकार है अवगाहक्षेत्र विभागक्षेत्र। तहां अवगाहक्षेत्र तौ एक दोय तीन च्यारि संख्यात असंख्यात पुद्गलके परमाणुके स्कंधनिकरि अवगाहने योग्य जो एकतैं ले असंख्यात आकाशके प्रदेश हैं सो अनेकप्रकार हैं। बहुरि विभागक्षेत्र अनेकप्रकार है असंख्यात· श्रेणीरूप तथा घनांगुलक्षेत्ररूप। ताके असंख्यातवां भाग एक तथा ताके बहुभाग इत्यादि तथा वितस्ति हाथ धनुष इत्यादि॥ बहुरि कालमान सर्वजघन्यकाल तौ एकसमयकूं कहिये। सो एक पुद्गलका परमाणु एक आकाशका प्रदेशमें तिष्ठता मंदगति दूसरे आकाशके प्रदेशमें आवै तेता कालकूं समय कहिये, सो कालका निर्विभाग एक अंश है। बहुरि असंख्यातसमयनिकी एक आवली कहिये। बहुरि संख्यात आवलीका एक उच्छ्वास है, तेताही निश्वास कहिये। ते दोऊ निरुपद्रव निरोगी पुरुषका एक प्राण कहिये, ऐसैं सात प्राणका एक स्तोक कहिये। ऐसा सात स्तोकका एक लव कहिये, सतहत्तरि लवका एक मुहूर्त कहिये। तीस मुहूर्तका एक रातिदिन कहिये। पंदरा दिनका एक पक्ष है। दोय पक्षका एक मास है। दोय मासका एक ऋतु है। तीनि ऋतुका एक अयन है। दोय अनयका एक संवत्सर है। चौराशी लाख वर्षका एक पूर्वांग है। चौरासी लाख पूर्वांगका एक पूर्व है। ऐसीही तरह वधता पूर्वांग, पूर्व, नयुतांग, नयुत, कुमुदांग,

कुमुद, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, कमलांग, कमल, त्रुट्यंग, त्रुट्य, अटटांग, अटट, अममांग, अमम, हूहूंग, हूहू, लतांग, लता, महालता इत्यादि संज्ञा जाननी। काल है सो वर्षनिकी गणनाकरि तो संख्याती जानिये। संख्याततैं परै असंख्यात है पल्योपम सागरोपम इत्यादि। यातैं परै अनंतकाल है। अतीत अनागत है सो सर्वज्ञके प्रत्यक्ष है। बहुरि भावमान पांचप्रकार ज्ञान सो पहलैं कहे सो जानने। इहां पल्यके कथनकी उक्तं च गाथा है ताका अर्थ– व्यवहार उद्धार अध्दा ऐसें तीनि पल्य हैं सो जानने। तहां व्यवहार तौ संख्याकी उत्पत्तिमात्र जाननेकूं है। बहुरि उध्दारतैं द्वीप समुद्र गणिये। बहुरि अध्दातैं कर्मनिकी स्थिति वर्णन करी है॥

आगैं कहै हैं, जो, ए उत्कृष्ट जघन्य स्थिति मनुष्यनिकी कही, तैसैही तिर्यचनिकी है ताका सूत्र–

॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— तिर्यंचनिकी योनि तिर्यंचगतिनामा नामकर्मके उदयकरि जन्म होय सो है, तिस योनिविषैं उपजे होय ते तिर्यंचजीव हैं। तिनकी आयुकी स्थिति उत्कृष्ट तौ तीनि पल्यकी है। जघन्य अंतर्मुहूर्तकी है। मध्य नानाभेद है॥

इहां विशेष जो, तिर्यंच तीनि प्रकार हैं। एकेंद्रिय विकलत्रय पंचेन्द्रिय। तहां एकेन्द्रियनिविषैं

शुद्धपृथिवीकायिक जीवनिकी उत्कृष्ट आयु तौ बाराहजार वर्षकी है। बहुरि कगेर पृथिवीकायिककी बाईस हजार वर्षकी है। वनस्पतिकायिककी दशहजार वर्षकी है। अप्कायिककी सातहजार वर्षकी है। वायुकायिककी तीनि हजार वर्षकी है। तेजकायिककी तीनि दिनरातिकी है। बहुरि विकलत्रयमें दोय इन्द्रियनिकी बारा बरसकी है। तीनि इन्द्रियनिकी गुणचास दिनकी है। चोइंद्रियनिकी छ महीनाकी है। पंच इन्द्रियनिविषैं मत्स्यादि जलचरनिकी तौ कोडिपूर्वकी है। बहुरि परिसर्प जे गोह नवल्या आदि तिनकी नवपूर्वांगकी है। बहुरि उरगनिकी बियालीस हजार वर्षकी है। बहुरि पक्षीनिकी बहत्तरि हजार वर्षकी है। बहुरि चौपदकी तीनि पल्यकी है। ऐसैं तौ उत्कृष्ट है। बहुरि जघन्य इन सर्वहीकी अंतर्मुहूर्तकी है। इहां कोई पूछै, भवस्थिति कायस्थिति कही; तिनका अर्थ कहा? ताका समाधान— एकभवकी स्थितिकूं तौ भवस्थिति कहिये। बहुरि एककायमें अनेक भव धारै ताकूं कायस्थिति कहिये। जैसें पृथिवी अप् तेज वायुकायिक जीवनिकै कायस्थिति असंख्यातलोकप्रमाण है, तिनहीमें उपजवो करै तो एता कालताईं उपजवो करै। बहुरि वनस्पतिकायका अंतकाल है सो असंख्यातपुद्गलपरिवर्तनमात्र है। बहुरि विकलत्रयका असंख्यातहजार वर्ष है। पंचेन्द्रियनिकी तिर्यंचमनुष्यनिकी पृथक्त्वकोटिपूर्व अधिक तीनि पल्य है। बहुरि जघन्य

कायस्थिति इन सर्वनिकी अंतर्मुहूर्तमात्र है। बहुरि देवनारकीनिकी भवस्थिति है सोही कायस्थिति है। देवसूं देव होय नाही, नारकीसूं नारकी होय नाही ॥

इहां कोई पूछे, जो, जीवतत्त्वका निरूपणका प्रकरणविषैं द्वीपसमुद्रनिका निरूपणका कहा प्रयोजन? ताका समाधान– जो, इन द्वीपसमुद्रनिकै आधार मनुष्यलोक है। तहां क्षेत्रविपाककी कर्मप्रकृतिके विशेषके उदयतैं अढाई द्वीपहीके विषैं मनुष्य उपजै हैं। तिनके निरूपणके अर्थि द्वीपसमुद्रनिका निरूपणभी प्रयोजनवान् है। जो इनका निरूपण न करिये तौ मनुष्य तिर्यंच जीव इनके आधार हैं सो जीवतत्त्वका विशेष निरूपण कैसैं बनैं? बहुरि विशेषनिरूपणविना जीवतत्त्वका श्रध्दान कैसैं होय? बहुरि श्रध्दानविना सम्यक्चारित्र कैसैं होय? ऐसैं होतैं त्रयात्मक मोक्षमार्गकी कथनी कैसैं बनैं? तातैं स्याद्वादीनिकैं सर्वनिरूपण युक्त है ॥

बहुरि इहां ईश्वरवादी कहै है, जो, ऐसा अधोलोक मध्यलोकका निरूपण कीया सो ऐसी रचना तो कोई बुद्धिमानकी करी हो है। तातैं इस रचनाका कर्ता ईश्वर है। तहां प्रथम तौ शरीरसहित ईश्वर मानै है ताकूं कहिये, जो, जगत् तौ शरीरवाले ईश्वरनें कीया। बहुरि ईश्वरकै शरीर कौन कीया? जो अन्यशरीरके संबंधतैं शरीर भया कहै, तौ अनवस्थादूषण आवै है। बहुरि जो

अदृष्टगुण कहिये पूर्वकर्मके संबंधतैं भया कहै, तौ ईश्वरकै कर्मका कीया पराधीनपणा ठहरै। बहुरि कहै जो पृथिवी आदिरूप ईश्वरकी मूर्ति है, तिनकी उत्पत्तिविषै ईश्वरही कारण है। ताकूं कहिये, जो, ऐसैं तौ सर्वही आत्मा अपनी अपनी मूर्तितैं अपने अपने शरीरकी उत्पत्तिके कारण ठहरै तौ कहा दोप? तहां ईश्वर पृथिवीआदिरूप मूर्ति बणाई तहां अन्यमूर्तिके संबंधतैं बनाई कहिये, तहां भी अनवस्थादूपण आवै है। बहुरि अनादि मूर्तिका संबंध कहै तौ लोककी रचनाही अनादि क्यों न कहिये? बुद्धिवानका कर्तव्य कहनेकी कल्पना क्यों करिये?

बहुरि केई निर्देह ईश्वरवादी हैं, ते कहैं, जो, ईश्वर जगतकी रचनाकूं निमित्तकारण है सोभी कल्पनाही है। जातैं जे मुक्तआत्माकूं देहरहित माने हैं, सो जगतका निमित्तकारण नाहीं। तैसैं ईश्वरभी देहरहित निमित्तकारण नाहीं। बहुरि कहै मुक्तात्मा तौ ज्ञानरहित है। अरु ईश्वरकै नित्य ज्ञान है, तातैं कर्तापणा बणै है। ताकूं कहिये, जो, नित्यज्ञानके कर्तापणा बणै नाहीं। अनेक नित्यानित्य व्यवस्थारूप जगतकूं करैगा ताका ज्ञानभी नित्यानित्यरूपही ठहरैगा। बहुरि कोई क्षेत्रमें कोई कालमें कार्य उपजै है कोईमें नाहीं उपजै है। अरु ईश्वर सर्वक्षेत्रकालमें व्यापकही है, सो कार्य नाहीं उपजै, तहां रोकनेवाला कौन है? बहुरि कहै ईश्वरकी इच्छा होय जैसैं होय है। तहां

पूछिये ईश्वरके इच्छा काहेतैं भई? तहां कहै प्राणीनिके अनुसारी इच्छा होय है। तौ ऐसैं होतैं सर्व प्राणीनिकै कर्मनिके निमित्ततैं कार्य होना क्यौं न मानिये? ईश्वरकी कल्पना कौंन अर्थि करिये? इत्यादियुक्तितैं जगतका ईश्वर कर्ता सिद्ध नाहीं होय है। याकी चर्चा श्लोकवार्तिकतैं विशेषकरि जाननी। तातैं स्याद्वादकरि अनादिनिधन नित्यानित्यात्मक स्वयंसिद्ध अकृत्रिम जगत् षड्द्रव्यात्मक लोक है। सो सर्वज्ञके आगमकरि प्रमाणसिद्ध जाननां। अन्यवादी अनेक कल्पना करै हैं, सो प्रमाणभूत नाहीं ऐसैं निश्चय है॥ ऐसैं तृतीयाध्यायका कथन है॥

॥ छप्पय ॥

सातनरककी भूमि भूमिमें बिल बहुतेरे। पापजीव परिणाम दुष्टलेश्या दुर केरे॥
आयुकायदुःख भूरि भजै दुःकृतफल पूरे। कहे सकल भगवान पापहरनेकूं दूरे॥
पुनि द्वीप उदधि गिरि खेत सर नदी मान नरभेद थिति। तिरिजंच आयु ये विधि
कथन भाषे तीजे संधि इति॥ १॥

ऐसैं तत्त्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा मोक्षशास्त्र ताविषैं तीसरा अध्याय पूर्ण भया॥

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

अथ चतुर्थ अध्यायका प्रारंभ है.

दोहा—— वंदन करि जिनराजकूं, आगमश्रवण सु पाय.॥
सुरवर्णन घरनूं सुनूं, ज्यौं सरदा दिढ थाय ॥ १ ॥

आगैं टीकाकार सूचना करै हैं, जो, " भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणां " इत्यादि सूत्रनिविषैं वारवार देव शब्द कह्या तहां ऐसा न जानिये जो देव कौन है, केई प्रकारके हैं, तिनके निर्णयके अर्थि आचार्य सूत्र कहै हैं—

॥ देवाश्चतुर्णिकायाः ॥ १॥

याका अर्थ—— देव हैं ते च्यारि हैं निकाय कहिये समूह जिनके ऐसे हैं। देवगति नाम कर्मका उदय अंतरंगकारण होतैं वाह्यनिमित्तके विशेषनिकरि द्वीप समुद्र आदिविषैं जैसैं इच्छा होय तैसैंही क्रीडा करै ते देव कहिये। इहां कोई कहै है कि, सूत्रविषैं विभक्तिका वहुवचन है सो एक-

वचनही चाहिये, समानजातिके कहनेतैं बहुकी प्रतिपत्ति होय है। ताका समाधान- जो, इन च्यारिही निकायमैं अंतर्भेद इन्द्र सामानिक आदि तथा आयु आदिका भेदतैं बहुत हैं, तिनके जाननेके अर्थ बहुवचन है। तहां देवगतिनामकर्मके उदयकी सामर्थ्यतैं भेदरूप समूह होइ, ताकूं निकाय कहिये हैं। ऐसें च्यारि निकाय इन देवनिके हैं। ते कौन? भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क वैमानिक ऐसैं ॥

आगें तिनके लेश्याका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥

याका अर्थ— आदितैं लै तीनि निकाय जे भवनवासी व्यन्तर ज्योतिष्क तिनके पीतान्त कहिये कृष्ण नील कापोत पीत ऐसें चारि लेश्या हैं। यहां आदित ऐसा कहते तो अन्तमध्यके मति जानूं। बहुरि दोय तथा एकके निषेधके अर्थ त्रिशब्द है। बहुरि लेश्या छह हैं तिनमैंसूं चारिका ग्रहण है। यातैं पीतान्त ऐसा वचन है। पीत है अन्त जिनके ऐसा कहैतैं चारि लेश्याका ग्रहण भया। तब ऐसा अर्थ भया, जो, भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क इनि तीनि निकायनिके जे असुरदेव तिनके कृष्ण नील कापोत पीत ए च्यारि लेश्या हैं ॥

आगें तिन निकायनिके अन्तरभेदके प्रतिपादनके अर्थ सूत्र कहै हैं—

॥ दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥ ३ ॥

याका अर्थ— देवनिके निकायनकें दश आदि संख्याशब्दनिकरि यथासंख्य संबंध करना। ऐसें करतें भवनवासीनिके दश भेद हैं। व्यंतरनिके आठ भेद हैं। ज्योतिषीनिकें पांच भेद हैं। वैमानिकानिकें बारह भेद हैं। तहां बारह भेद कल्पवासीनिकेही हैं। अगले ग्रैवेयकादिके भेद नांही हैं। इहां पूछै हैं, जो, इनकूं कल्प ऐसी संज्ञा कैसें है? ताका समाधान जो, इनमें इन्द्र आदि दशप्रकार कल्पिये हैं, तातें कल्पसंज्ञा है। फेरि पूछै है, जो, यह कल्पना तो भवनवासीआदिविर्षेभी है। ताका उत्तर जो, रूढिके वशतें वैमानिकनिविर्षेही कल्पशब्द वर्तै है। तातें जे कल्पनिविर्षे उपजै ते कल्पोपपन्न कहिये ॥

आगें इनका विशेष जाननेके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशपारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्य-
किल्विषिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— अन्यदेवनितें असाधारण जे अणिमादिकऋद्धिसहित गुण तिनकरि इन्दन्ति

कहिये परम ऐश्वर्यकरि वर्तें ते इन्द्र हैं । बहुरि आज्ञा ऐश्वर्यकरि रहित स्थान आयु वीर्य परिवार भोग उपभोग आदिकरि इन्द्रसमान होंय ते सामानिक हैं । ते इन्द्रके पिता गुरु उपाध्यायकी-ज्यों बडे होंय तैसैं होय हैं। बहुरि मंत्री पुरोहितकी जगह होंय ते त्रायस्त्रिंश कहिये, तेतीस देव हैं, ते त्रायस्त्रिंश कहिये। बहुरि इन्द्रके वयस्य कहिये मित्र पीठमर्द कहिये, सभाविषैं पछाडी दावि बैठे ते पारिषद कहिये। बहुरि इन्द्रके सुभट शस्त्रधारी रक्षकज्यों होय ते आत्मरक्षक हैं। बहुरि जे कोटपाल हाकिम फौजदारतुल्य होय ते लोकपाल हैं। पयादा आदि सातप्रकारकी सेनाके देव ते अनीक कहिये। बहुरि जैसैं नगरमें व्योपारी आदि वसैं, तैसें वसनेवाले प्रकीर्णक कहिये। बहुरि दाससमान वाहनादिकार्यविषैं प्रवर्तें ते आभियोग्य हैं। बहुरि नगरके अंतमें वसैं चाण्डाल-समान ते किल्बिषिक हैं। किल्बिष नाम मलिनता पापका है। सो इनके ऐसाही कर्मका उदय है, जो, देवगतिमें नीच होय हैं। इहां एकश ऐसैं कहनेसैं एकएक निकायके ए भेद हैं ॥

आगे ए दश भेद चारयौंही निकायके सामान्यपणैं प्रसंग आवै ताके अपवादके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— व्यंतर तथा ज्योतिषी देवनिविषैं त्रायस्त्रिंश बहुरि लोकपाल ए दोय भेद

नाहीं हैं। दशभेदनिके आठही भेद हैं॥ आगैं, तिन निकायनिविषैं इन्द्र कैसे हैं तिनिका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— पहले दोय निकाय भवनवासी व्यंतर इनविषैं दोय दोय इन्द्र हैं। पूर्वयोः कहिये पहले दोय निकाय भवनवासी व्यंतर तिनविषैं दोयदोय इन्द्र हैं। इहां प्रश्न, जो, दूसरेकै पूर्वपणा कैसें? ताका उत्तर— जो, समीपतैं पूर्वपणां उपचारतैं कहा है। बहुरि द्वीन्द्राः ऐसे शब्दमें दोयदोय ऐसा अर्थ कैसा भया? ताका उत्तर— जो, इहां अंतर्नीत वीप्सा अर्थ है। तातैं दोयदोय इन्द्र होय ताकूं द्वीन्द्रा ऐसा कहिये। जैसैं सातसात पान होय ताकूं सप्तपर्ण कहिये तथा आठआठ पद होय ताकूं अष्टापद कहिये तैसैं इहांभी जाननां। सोही कहिये हैं॥

भवनवासीनिविषैं असुरकुमारनिके चमर वैरोचन ए दोय इन्द्र हैं। नागकुमारनिकै धरण भूतानंद ए दोय इन्द्र हैं। विद्युतकुमारनिकैं हरिसिंह हरिकान्त ये दोय इन्द्र हैं। सुपर्ण कुमारनिके वेणुदेव वेणुताली ए दोय इन्द्र हैं। अग्निकुमारनिकैं अग्निशिख अग्निमाणव ए दोय इन्द्र हैं। वातकुमारनिकैं वैलंब प्रभंजन ए दोय इन्द्र हैं। स्तनितकुमारनिकै सुघोष महाघोष ए दोय इन्द्र हैं। उदधिकुमारनिकैं

जलकान्त जलप्रभ ए दोय इन्द्र हैं। द्वीपकुमारनिकैं पूर्ण वशिष्ट ए दोय इन्द्र हैं। दिक्कुमारनिकैं अमितगति अतिवाहन ए दोय इन्द्र हैं। ऐसैं इनकें वीस इन्द्र हैं। बहुरि व्यंतरदेवनिविषैं किंनरनिकैं किन्नर किंपुरुष ए दोय इन्द्र हैं। किंपुरुषनिकें सत्पुरुष महापुरुष ए दोय इन्द्र हैं। महोरगनिकें अतिकाय महाकाय ए दोय इन्द्र हैं। गंधर्वनिके गीतरति गीतयश ए दोय इन्द्र हैं। यक्षनिकैं पूर्णभद्र माणिभद्र ए दोय इन्द्र हैं। राक्षसनिकें भीम महाभीम ए दोय इन्द्र हैं। पिशाचनिकें काल महाकाल ए दोय इन्द्र हैं। भूतनिकें प्रतिरूप अप्रतिरूप ए दोय इन्द्र हैं ॥

आगैं इन देवनिकें सुख कैसा है ऐसैं पूछे तिनके सुख जाननेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥ ७ ॥

याकां अर्थ— प्रवीचार कहिये कामसेवन सो भवनवासीनितैं लेइ ऐशानस्वर्गपर्यंतके देवनिकैं कायकरि कामसेवन है। इनके संक्लेशकर्मका उदय है। तातैं मनुष्यकीज्यों स्त्रीका विषयसुख भोगवैं हैं। इहां " आ ऐशानात् " इस शब्दविषैं आङ् उपसर्ग अभिविधि अर्थमें है, तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, भवनवासीनितैं लगाय ऐशानपर्यंतकें कायकारि मैथुन है। बहुरि इहां संधि न करी सो संदेह निवारणके अर्थि न करी है। संधि करिये तब ऐशान ऐसाही सिद्ध होय, तब

संदेह रहै, जो, इहां उपसर्ग है कि नाहीं? तातैं संदेह मेंटनेके अर्थि उपसर्ग जुदा राखा है ॥

आगैं ऐशानताईं मर्यादा कही तातैं आगिले स्वर्गनिविषैं सुखका विभाग जान्यां नाहीं, ताके प्रतिपादनके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥ ८ ॥

याका अर्थ— शेष कहिये कहे तिनतैं अवशेष रहे देव तिनकै स्पर्श रूप मन इनविषैं मैथुन है। तहां कहे तिनतैं अवशेष जे कल्पवासी तिनकै आगमतैं अविरोधरूप संबंध करना। पहले सूत्रमें प्रवीचारका ग्रहण तौ थाही, यहां फेरि प्रवीचारका ग्रहण याहीके अर्थि है। सो आगमसूं अविरोध स्पर्शादिमैथुन लेना। तहां सनत्कुमार माहेन्द्रस्वर्गके देव देवांगनाके स्पर्शमात्रहीकरि परमप्रीति पावै हैं। तैसैंही देवांगनाभी परमसुख पावै हैं। बहुरि ब्रह्म ब्रम्होत्तर लांतव कापिष्ट स्वर्गके देव देवांगनाके शृंगार आकार विलास चतुर मनोज्ञ वेष रूपके देखनेहीकरि परमसुखकूं पावैं हैं। बहुरि शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रारविषैं देव देवांगनाके मधुर संगीत गावना कोमल हँसना ललित बोलना आभूषणनिके शब्दका सुननामात्रहीतैं परमप्रीतिकूं पावैं हैं।

वहुरि आनत प्राणत आरण अच्युत स्वर्गके देव अपनी देवांगनाका मनकेविषैं संकल्पमात्रहीतैं परमसुखकूं पावै हैं ॥

आगें पूछे हैं, अगिले अहमिन्द्र देवनिकैं सुख कौनप्रकार है? ऐसैं पूछैं ताके निश्चयके अर्थि सूत्र कहैं हैं--

॥ परेऽप्रवीचाराः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— यहां परशब्दका ग्रहण अवशेष रहे जे अहमिन्द्र तिनके ग्रहणके अर्थि है। अप्रवीचारशब्द परमसुख जनावनेके अर्थि है। प्रवीचार तौ मैथुनकी वेदनाका इलाज है। तिसके अभावतें तिन अहमिन्द्रनिकैं सहजही परमसुख है ॥

आगें, आदिनिकायके देव दशप्रकारके भेदरूप कहे तिनकी सामान्यविशेष संज्ञाके नियमके अर्थि सूत्र कहैं हैं--

॥ भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपादिक्कुमाराः ॥ १० ॥

याका अर्थ— भवननिविषैं वसैं ते भवनवासी कहिये, यह तौ तिनकी सामान्यसंज्ञा है। वहुरि असुरकुमार नागकुमार विद्युत्कुमार सुपर्णकुमार अग्निकुमार वातकुमार स्तनितकुमार उदधिकुमार

द्वीपकुमार दिक्कुमार ए दशजातिनिकी दश विशेषसंज्ञा हैं। सो नामकर्मके उदयके विशेषकरि इनके नामकी प्रवृत्ति है। बहुरि अवस्थित एकरूप अवस्था तथा स्वभाव सर्वही देवनिकैं समान हैं। तथापि ये भवनवासी देव वेष आभूषण आयुध यान वाहन क्रीडन आदिकरि कुमारकीज्यों सोहैं हैं प्रवर्तें हैं, तातैं इनकूं कुमार कहिये हैं। तातैं दशही जातिकैं कुमारशब्द जोडना। यहां पूछे हैं, तिनकैं भवन कहां हैं? सो कहिये हैं। रत्नप्रभापृथिवीके पंकभागविषैं तौ असुरकुमारनिके भवन हैं। बहुरि पहला खरभागविषैं ऊपर नीचैं हजार हजार योजन छोडकरि नवजातिके भवनवासीनिके आवास हैं। इहां कोई अन्यवादी कहै, जो, ये देव उत्तमदेवनितैं शस्त्रादिकरि युद्ध करै हैं, तातैं इनका नाम असुर है। ताकूं कहिये, जो, ऐसा कहना तौ तिनका अवर्णवाद करना है। ते उत्तमदेव जे सौधर्मादिकके कल्पवासी हैं, ते महाप्रभावसहित हैं, तिनउपरि हीन देवनिका बल चलै नाहीं। मनकरिभी तिनितैं प्रतिकूल न होय, तथा कल्पवासी उत्तम परिणामनितैं उपजैं सो तिनकैं वैरका कारणभी नाहीं। भगवानकी पूजा तथा स्वर्गनिके भोगनिहीविषैं तिनकूं आनन्द वर्ते है। तिनकैं असुरनसहित युद्ध कहना मिथ्यात्वके निमित्ततैं अवर्णवाद है॥

आगैं द्वितीय निकायकी सामान्यविशेषसंज्ञाका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥ ११ ॥

याका अर्थ— विविध देशान्तरनिविषे जिनिके वाम ते व्यंतर हैं, ऐसी इनकी सार्थिक सामान्यसंज्ञा है। बहुरि तिनके भेदनिकी विशेषसंज्ञा किंनर किंपुरुष महोरग गंधर्व यक्ष राक्षस भूत पिशाच ऐसी है। यहु विशेषसंज्ञा नामकर्मके विशेषके उदयतैं भई है। बहुरि इनका आवास कहां है सो कहिये है। इस रत्नप्रभापृथिवीके पहले खरभागविषैं अर जंबूद्वीपतैं असंख्यात द्वीपसमुद्र परें जाय सातप्रकारके व्यंतरनिके आवास हैं। बहुरि राक्षसजातिके निकायके दूसरे पंकबहुल भागविषैं हैं। यहां अन्यवादी केई कहै है। किंनर किंपुरुष मनुष्यनकूं खाय हैं। तथा पिशाच मांसका आहार करैं हैं। राक्षस मांस आहारी हैं। सो यह कहना अयुक्त है। मिथ्याज्ञानतैं तिनका अवर्णवाद करैं हैं। जातैं ये देव पवित्र वैक्रियकदेहके धारक हैं। सो अपवित्र मनुष्यनिका शरीरकूं कैसैं इच्छैं? तथा मांस कैसैं भक्षैं?

इहां कहैं, जो, लोकविषैं व्यंतर आवै तब कहै हैं मांस दारू ल्यावो, सो यह कहना ऐसा है, प्रथम तो लोकमें अज्ञानी जीव वात आदि रोगविषैं व्यंतरकी कल्पना करैं हैं, वातविकारतैं यथा तथा वचन कहैं अवस्था करै ताकूं व्यंतर ठहराय लें। बहुरि कदाचित् कोई व्यंतरभी चेष्टा

आय करै दारू आदि अशुचिका नामभी लेय तौ तिनकी क्रीडामात्र चेष्टा है । ते मानसीक आहारी हैं । तातैं तिनकैं कुछ भक्षण नाहीं । तिनकैं मांस दारू आदि अपवित्रका भक्षण कहना तिनका अवर्णवाद है । यातैं मिथ्यात्वका आश्रवका अनुभाग तीव्र आवै है । बहुरि तिनकैं आवास तो खरभागविषैं कहे हैं । बहुरि पृथिवीउपरिभी तिनके द्वीप समुद्र पर्वत देश ग्राम नगर गृहनिके आंगण गली जलके निवास उद्यान देवमंदिर आदिविषैं असंख्यात हैं ॥

आगें तीसरा निकायकी सामान्य विशेष संज्ञाके नेम कहनेके अर्थि सूत्र कहैं हैं ॥

॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥ १२ ॥

याका अर्थ— इन पांचूहीकी ज्योतिष्क ऐसी सामान्यसंज्ञा ज्योतिःस्वभावतैं है, सो सार्थिक है । बहुरि सूर्य चंद्रमा ग्रह नक्षत्र प्रकीर्णक तारका ऐसी पांच विशेषसंज्ञा हैं । सो यहु नामकर्मके उदयके विशेषतैं भई है । बहुरि सूर्याचंद्रमसौ ऐसी इन दोयकैं न्यारी विभक्ति करी सो इनका प्रधानपणां जनावनेके अर्थि है । इनके प्रधानपणा इनके प्रभाव आदिकरि कीया है । बहुरि इनके आवास कहां हैं, सो कहिये है । इस मध्यलोककी समानभूमिके भागतैं सातसैं नवै योजन उपरि जाय तारानिके विमान विचरै हैं । ते सर्व ज्योतिषीनिके नीचें जानना । इनतैं दश योजन

उपरि जाय सूर्यनिके विमान विचरें हैं। तातैं अशी योजन उपरि जाय चन्द्रमानिके विमान हैं। तातैं तीनि योजन ऊपर जाय नक्षत्रनिके विमान हैं। तातैं तीनि योजन ऊपर जाय बुधनिके विमान हैं। तातैं तीनि योजन ऊपर जाय शुक्रनिके विमान हैं। तातैं तीनि योजन ऊपरि जाय बृहस्पतिके विमान हैं। तातैं चारि योजन ऊपर जाय मंगलके विमान हैं। तातैं चारि योजन ऊपर जाय शनैश्चरके विमान हैं। यहु ज्योतिष्कमंडलका आकाशमें तलैं ऊपरि एकसौ दश योजनमांहीं जानना। बहुरि तिर्यग्विस्तार असंख्यात द्वीपसमुद्रनिप्रमाण घनोदधिवातवलयपर्यंत जानना। इहां उक्तं च गाथा है ताका अर्थ— सातसै नवै, दश, अशी, च्यारि, त्रिक, दोय, चतुष्क ऐसैं एते योजन अनुक्रमतैं। तारा। ७९०। सूर्य। १०। चंद्रमा। ८०। नक्षत्र। ३। बुध। ३। शुक्र। ३। बृहस्पति। ३। मंगल। ४। शनैश्चर। ४। इनका विचरना जानना॥

आगैं ज्योतिषीनिका गमनका विशेष जाननेंके अर्थ सूत्र कहैं हैं—

॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥

याका अर्थ— मेरुप्रदक्षिणा ऐसा वचन है, सो गमनका विशेष जाननेकूं है। अन्यप्रकार गति मति जानूं। बहुरि नित्यगतयः ऐसा वचन है, सो निरंतर गमन जनावनेके अर्थि है।

वहुरि नृलोकका ग्रहण है, सो अढाई द्वीप दोय समुद्रमें नित्यगमन है। अन्य द्वीपसमुद्रनिमें गमन नाहीं। इहां कोई तर्क करै है, ज्योतिषी देवनिका विमाननिकैं गमनका कारण नाहीं। तातैं गमन नाहीं। ताकूं कहिये, यह कहना अयुक्त है। जातैं तिनके गमनविषैं लीन ऐसैं आभियोग्यजातिके देव तिनका कीया गतिपरिणाम है। इन देवनिकैं ऐसाही कर्मका विचित्र उदय है, जो गतिप्रधानरूप कर्मका उदय दे है। वहुरि मेरुतैं ग्यारहसैं इकईस योजन छोड ऊपरैं गमन करैं हैं। सो प्रदक्षिणारूप गमन करैं हैं। इन ज्योतिषीनिका अन्यमती कहै है, जो, भूगोल अल्पसा क्षेत्र है। ताके ऊपरि नीचैं होय गमन है। तथा कोई ऐसैं कहै है, जो, ए ज्योतिषी तो थिर हैं। अरु भूगोल भ्रमे है। तातैं लोककूं उदय अस्त दीखै है। वहुरि कहैं हैं, जो, हमारे कहनेतैं ग्रहण आदि मिलै है। सो यह सर्व कहना प्रमाणबाधित है। जैनशास्त्रमें इनका गमनादिकका प्ररूपण निर्बाध है। उदयअस्तका विधान सर्वतैं मिलै है। याका विधिनिषेधकी चर्चा श्लोकवार्तिकमें है। तथा गमनादिकका निर्णय त्रैलोक्यसार आदि ग्रंथनिमें है, तहांतैं जानना॥

आगें इन ज्योतिषीनिके संबंधकरि व्यवहारकालका जानना है तिसके अर्थि सूत्र कहे हैं–

॥ तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥

याका अर्थ— इन ज्योतिषी देवनिकरि कीया कालका विभाग है। इहां तत्का ग्रहण गतिसहित ज्योतिष्क देवनिके कहनेके अर्थि है। सो यहु व्यवहार काल केवल गतिहीकरि तथा केवल ज्योतिषीनिकरि नाहीं जाना जाय है। गतिसहित ज्योतिषीनिकरि जाना जाय है। तातैं गमन तो इनका काहूकूं दीखै नाहीं। बहुरि गमन न होय तो ये थिरही रहैं। तातैं दोऊ संबंध लेना। तहां काल है सो दोयप्रकार है। व्यवहारकाल निश्चयकाल। तिनमें व्यवहारकालका विभाग इन ज्योतिषीनिकरि कीया हूवा जानिये है। सो समय आवली आदि क्रियाविशेषकरि जाना हुवा व्यवहारकाल है। सो नाही जाननेमें आवै ऐसा जो निश्चयकाल ताके जाननेकूं कारण है सो निश्चयकालका लक्षण आगैं कहसी, सो जानना ॥

आगैं मनुष्यलोकतैं बाहिर ज्योतिष्क अवस्थित हैं। ऐसा कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— बहिः कहिये मनुष्यलोकतैं बाहिर ते ज्योतिष्क अवस्थित कहिये गमनरहित हैं। इहां कोई कहै है, पहले सूत्रमैं कह्या है जो, मनुष्यलोकतैं ज्योतिष्कदेवनिके नित्य गमन है। सो ऐसा कहनेहीतैं यह जाना जाय है, जो, यातैं बाहिरकेकें गमन नाहीं। फेरि यह सूत्र कहना

निष्प्रयोजन है। ताका समाधान, जो, इस सूत्रतैं मनुष्यलोकतैं बाहिर अस्तित्वभी जाना जाय है। अवस्थानभी जान्या जाय है, यातैं दोऊ प्रयोजनकी सिद्धिके अर्थि यह सूत्र है अथवा अन्यप्रकार-करि गमनका अभाव हैके अर्थि तथा कदाकाल गमनका अभावके अर्थिभी यहू सूत्र जनना॥

आगैं चौथे निकायकी सामान्यसंज्ञा कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ वैमानिकाः ॥ १६ ॥

याका अर्थ— वैमानिक ऐसा तौ अधिकारकै अर्थि ग्रहण है। याके आगें कहसी तिनकूं वैमानिक जानियें ऐसा अधिकार है। बहुरि पुण्यवाननिकूं विशेपकरि मानें ते विमान हैं। तिनमें जे उपजे ते वैमानिक हैं। बहुरि ते विमान तीनि प्रकार हैं। इन्द्रक श्रेणीवद्ध पुष्पप्रकीर्णक। तहां इंद्रकविमान तौ इन्द्रकीज्यों बीच तिष्ठैं हैं। तिनकी च्यारयौं दिशामें आकाशप्रदेशकी श्रेणीकीज्यों तिष्ठैं हैं ते श्रेणीवद्ध हैं। बहुरि विदिशानिविषै विखरे फूलनिकीज्यों तिष्ठैं हैं, तातैं ते पुष्पप्रकीर्णक हैं॥

आगैं तिन वैमानिकदेवनिका भेदके ज्ञानके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥ १७ ॥

याका अर्थ—— ते वैमानिक दोय प्रकार हैं। तहां कल्प जे स्वर्ग तिनकेविषै उपजें ते तौ

कल्पोपपन्न हैं। बहुरि ग्रैवेयक आदिविषें उपजें ते कल्पातीत कहिये ॥

आगें तिनका अवस्थानविशेष जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं--

॥ उपर्युपरि ॥ १८ ॥

याका अर्थ-- यहु सूत्र तिन वैमानिकदेवनिका तिर्यगवस्थानके निषेधके अर्थि है। ते ज्योतिषीनिकीज्यों तिर्यक् अवस्थित नाहीं हैं। बहुरि व्यंतरनिकीज्यों विषम जहांतहां अवस्थित नाहीं हैं। ते कल्प उपरि उपरि हैं ॥

आगें पूछैं हैं, जो, ऐसैं हैं ए उपरि हैं, तौ केते कल्पविमानविषें देव हैं? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं-

॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारे-ष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥

याका अर्थ— इन सौधर्मादिक शब्दनिका कल्प नाम कैसें भया सो कहैं हैं। व्याकरण विषें अण् ऐसा प्रत्यय है, सो च्यारि अर्थमें होय है। ताकरि कल्प नाम होय। तथा स्वभावहीतें-ऐसा नाम है। बहुरि इन्द्रकामी नाम यहही, सोभी स्वभावतें तथा कल्पके साहचर्यतें होय हैं।

सो कैसें? पहले स्वर्गविर्षें सुधर्मा नाम सभा है सो यहु सभा जामैं होय ताकां नाम सौधर्मकल्प कहियें। इहां अस्ति अर्थमें अण् प्रत्यय जानना। बहुरि इस कल्पके साहचर्यतें इन्द्रकाभी नाम सौधर्म जानना। बहुरि ईशान ऐसा नाम इन्द्रका स्वभावहीतें है। सो ईशान इन्द्रनिका निवास सो ऐशानकल्प है। इहां निवास अर्थविषें अण् प्रत्यय जानना। ताके साहचर्यतें इन्द्रकाभी नाम ऐशान है। बहुरि सनत्कुमार इन्द्रका नाम स्वभावहीतें है। ताका निवास जो कल्प ताका नाम सानत्कुमार है। इहांभी निवास अर्थविषें अण् प्रत्यय है। ताके साहचर्यतें सानत्कुमार नाम इन्द्रका होय है। बहुरि महेन्द्र ऐसा नाम इन्द्रका स्वभावहीतें है। ताका निवास जो कल्प ताका नाम माहेन्द्र है। यहांभी निवास अर्थविषें अण् प्रत्यय है। ताके साहचर्यतेंभी इन्द्रका नाम माहेन्द्र है। ऐसैंही ब्रह्म ब्रम्होत्तर आदि कल्पका तथा इन्द्रका नाम जानना। बहुरि उपरि उपरि दोयदोयका संबंध आगमकी अपेक्षातें जानना। तहां पैला तो सौधर्म ऐशान ए दोय कल्प हैं। इनके उपरि सानत्कुमार माहेन्द्र ए दोय हैं। इनके उपरि ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर ए दोय हैं। इनके उपरि लांतव कापिष्ट ए दोय हैं। इनके उपरि शुक्र महाशुक्र ए दोय हैं। इनके उपरि शतार सहस्रार ए दोय हैं। इनके उपरि आनत प्राणत ए दोय हैं। इनके उपरि आरण अच्युत ए दोय हैं। इहां कल्पका

युगलका उपरि उपरि दोयदोय कहना अंतके दोय युगलनिकें जुदी विभक्ती करी, समास न किया,
ाना जाय है। बहुरि नीचले च्यारि कल्पविषें बहुरि उपरिके च्यारि कल्पविषें तौ च्यारि
इन्द्र जानने। बहुरि बीचके आठ कल्पनिविषें च्यारिही इन्द्र जानने। सो ऐसें हैं- सौधर्म
न सानत्कुमार माहेन्द्र इन च्यारिविषें च्यारि इन्द्र। ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर इन दोयमें एक ब्रह्म नाम
एक लांतव नाम इन्द्र। शुक्र महाशुक्र इन दोयमें एक शुक्र
एक शतार नाम इन्द्र। आनत प्राणत आरण अच्युत इन
ानिके बारह इन्द्र हैं॥
त्त्वार्थवार्तिकविषें इन्द्र चौदहभी लिखे हैं। तहां बारह स्वर्गमें
सें। अब इहां उपरि उपरि कह्या, सो कहातें गिनिये
न तौ पृथ्वीमें अरु निन्यानवै हजार योजन ऊंचो
खरात्र मोटाई बहुरि तिर्यक् फैलवा तिर्यग्लोक है।
की चूलिका चालीस योजनकी ऊंची है। ताके उपरि बालका
स्वर्गका ऋजु नामा इन्द्रकविमान है। अन्य सर्व याका वर्णन लोकानियो-

गग्रंथतें जानना। बहुरि नवसु ग्रैवेयकेषु ऐसा वचन है, तहां नवशब्दकैं जुदी विभक्ति करनेका यहु प्रयोजन है। जो ग्रैवेयकतें जुदा नव विमान अनुदिश नाम धारक हैं ऐसा जनाया है। तातें अनुदिशका ग्रहण करना। इनके सौधर्मकल्पतें लगाय अनुत्तरपर्यन्त उपरि उपरि तिरेसठि पटल हैं। तहां प्रथमयुगलमें तो इकतीस पटल हैं। द्वितीय युगलमें सात पटल हैं। तीसरे युगलमें च्यारि पटल हैं। चौथे युगलमें दोय पटल हैं। पांचवां युगलका एकही पटल है। छठा युगलका एक पटल है। सातमा आठमा युगलके छह पटल हैं। ऐसें बावन पटल तौ स्वर्गनिके हैं। बहुरि नवग्रैवेयकके नव पटल हैं। बहुरि एक अनुदिशका, एक पंचअनुत्तरका ऐसै तिरेसठि पटल जानने ॥

आगें इन वैमानिकदेवनिकें परस्पर विशेष है, ताके जनावनेकें अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥ २० ॥

याका अर्थ— वैमानिक देव हैं ते स्थिति प्रभाव सुख द्युति लेश्याकी विशुद्धि इन्द्रियनिका विषय अवधिका विषय इनकरि उपरिउपरि स्वर्गस्वर्गप्रति तथा पटलपटलप्रति अधिकअधिक हैं। तहां अपनी आयुके उदयतें तिस भवविषैं शरीरसहित तिष्ठना, सो स्थिति कहिये, बहुरि परके उपकार तथा अपकार करनेकी शक्तिकूं प्रभाव कहिये; बहुरि इंद्रियविषयका भोगवना, सो सुख

कहिये; वहुरि शरीर तथा वस्त्रआभरणाकी दीप्ति, सो द्युति कहिये; वहुरि कषायकरि योगनिकी प्रवृत्तिरूप लेश्या ताकी विशुद्धि कहिये उज्वलता; वहुरि इन्द्रियनिकरि विषयनिका जानना; वहुरि अवधिकरि द्रव्य क्षेत्र काल भावरूप विषयका जानना इनकरि अधिक अधिक हैं ॥

ं स्थितिआदिकरि जैसें अधिक हैं, तैसें गतिआदिकरि हीन हैं ऐसें कहै हैं—

॥ गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥ २१ ॥

— ए वैमानिक देव हैं ते गति शरीर परिग्रह अभिमान इनकरि उपरिउपरि हीन तहां क्षेत्रसे अन्य क्षेत्र जाना सो गति कहिये। शरीर तिनके वैक्रियक कह्या ायके उदयतैं विषयनिविषैं संगति करना सो परिग्रह कहिये। वहुरि मानकषा- । जो अहंकार गर्व सो अभिमान कहिये। इनकरि उपरि उपरि हीन हैं। जातैं क्रीडा रतिका अभिलाष तीव्र नाहीं। अपने योग्य क्षेत्रविषैंही तृप्ति है। तातैं तो । करै है। वहुरि शरीर सौधर्म ऐशानके देवनिका तौ सात हस्तका है। वहुरि सनत्कुमार का छह हाथका है। ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर लांतव कापिष्टविषैं पांच हाथका है। शुक्र महाशुक्र शतार सहस्रारविषैं च्यारि हाथका है। आनत प्राणतविषैं साढा तीनि हाथका है। वहुरि आरण

अच्युतविषैं तीनि हाथका है। अधोग्रैवेयकविषैं अढाई हाथका है। मध्यग्रैवेयकविषैं दोय हाथका है। उपरिग्रैवेयकविषैं बहुरि अनुदिशविषैं डेढ हाथ है। बहुरि अनुत्तरविषैं एक हाथ है। बहुरि परिग्रह विमान देवांगना आदि परिवार इत्यादिका उपरि उपरि घटता घटता है। बहुरि उपरि उपरि कषाय थोरे हैं। तातैं अभिमान घटता घटता है। इहांतैं स्वर्गनिमैं उपजैं हैं, तिनके कषायनिकी मंदता बढती बढती होय, ते उपरि उपरि उपजे हैं। तातैं सोही संस्कार वहां है। तातैं उपरि उपरि कषाय थोरे थोरे हैं ॥

आगैं, तीनि निकायनिकें तो लेश्या पहली कही थी। अब वैमानिकनिकें लेश्याकी विधिप्रतिपत्ति अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥

याका अर्थ— दोय युगलनिमें पीतलेश्या, तीनि युगलनिमें पद्मलेश्या, बहुरि बाकी तीनि युगल तथा अहमिन्द्रनिके शुक्ललेश्या है। यहां पहले पीत पद्म शुक्लका द्वंद्वसमास करि पीछे ए लेश्या जिनकें होय ते पीत पद्म शुक्ललेश्यावाले देव हैं, ऐसैं बहुव्रीहिसमास है। इहां प्रश्न, जो, इहां समासविषैं पीत पद्म शुक्ल इनकें ह्रस्व अकार कैसैं भया? शब्द तो पीता पद्मा शुक्ला ऐसा

चाहिये। तहां कहिये है, जो व्याकरणविषैं उत्तरपदतें ह्रस्व होनाभी कह्या है। जैसैं द्रुती ऐसा शब्दका तपरकणविषैं है। तहां मध्याविलंबिताका उपसंख्यान है, ऐसें इहांभी जानना। अथवा पीत पद्म शुक्ल ऐसे शब्द वर्णसहित वस्तुके वाचकभी हैं, ते पुरुषलिंगी हैं। तिनकी उपमाभी इन लेश्यानिकूं है। तातैं उपमितिसमासविषैं ह्रस्व हैही ॥

ऐसैं कोनकें कैसी लेश्या है, सो कहिये है– सौधर्म ऐशानके देवनिकै तौ पीतलेश्या है, ताके मध्यम अंश है। सानत्कुमार माहेन्द्रकें देवनिकै पीतलेश्या है, तथा तहां पद्मभी है। ब्रह्मलोक ब्रह्मोत्तर लांतव कापिष्ट शुक्र महाशुक्र इन तीनि युगलनिविषैं पद्मलेश्या मध्यम अंश है। शतार सहस्रारविषैं पद्मलेश्या तथा शुक्ललेश्या है। आनतआदि अनुत्तरपर्यंत तेरह स्थाननिविषैं शुक्ललेश्या है। तहांभी अनुदिश अनुत्तरविषैं परमशुक्ललेश्या जाननी। इहां प्रश्न, जो, सानत्कुमार माहेन्द्रविषैं पीत पद्म दोऊ कही। तथा शतार सहस्रारविषैं पद्म शुक्ल दोऊ कही। सो सूत्रविषैं तो एक एकही कही है, दोऊ कैसैं कहो हो? ताका समाधान– जो, इहां साहचर्यतैं मुख्य है, ताकूं सूत्रमें कही है। ताकी साथी गौणकाभी ग्रहण करना। जैसैं लौकिकमें राजादिक छत्रधारी गमन करै, तिनकी साथि अन्यभी जाय है। तहां कोई पूछै कौन जाय है? तहां कहै छत्रधारी जाय है। तहां जे

विनाछत्रवाले साथी हैं, तेभी जानि लेने । तैसैं इहां मुख्यके कहेही गौणका ग्रहण कीया है। तहां यहु अर्थ सूत्रतैं ऐसैं जानना, जो, दोय युगलमें पीतलेश्या कही तहां दूसरे युगलमें पद्मलेश्या है, तथापि गौण है, तातैं ताकी विवक्षा न करी। बहुरि तीनि युगलमें पद्मलेश्या कही। शुक्र महाशुक्रमें शुक्ललेश्या है, तथापि गौण है। तातैं ताकी विवक्षा न करी। बहुरि बाकी शतार आदि सर्वविषैं शुक्ललेश्या कही। तहां शतारसहस्रारविषै पद्मलेश्या है, तथापि गौण है। तातैं ताकी विवक्षा न करी, तातैं दोष नाहीं ॥

इहां कोई पूछे, विनाअवसर लेश्याका सूत्र कैसें है? ताका समाधान- जो, सूत्रके लघु करणेंके अर्थि है। और ठौर कहैतैं ऐसा क्रम न कह्या जाता, तातैं इहां कह्या है, लेश्या हैं ते निर्देश वर्ण परिणाम संक्रम कर्म लक्षण गति स्वामित्व साधन संख्या क्षेत्र स्पर्शन काल अंतर भाव अल्पबहुत्व ए सोलह अनुयोगनिकरि साधिये है। तिनका कथन तत्त्वार्थवार्तिक तथा गोमटसारतैं जानना। तहां पूछे है कि, कल्पोपपन्ना ऐसैं पूर्वैं कहा है, तहां ऐसा न जानना, जो, कल्प कौन हैं? ऐसैं पूछे सूत्र कहैं हैं—

॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— नवग्रैवेयककैं पहली पहली कल्प कहिये। यहां यह न जान्या, जो, कहांतें लगाय कल्प हैं। ताके जाननेकूं सौधर्मादिक शब्दका पूर्वसूत्रतें अनुवर्तन करना। तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, सौधर्मतें लगाय ग्रैवेयकतें पहली अच्युतस्वर्गताईं कल्पसंज्ञा है। याहीतें ऐसा सिद्ध भया जो ग्रैवेयकतें लगाय अनुत्तरताईं अवशेष रहे ते कल्पातीत हैं॥

आगें, ऐसें पूछे है कि, लौकान्तिक देवभी वैमानिक हैं, ते कहां जानिये? बहुरि कल्पवासीनिमें कैसें? ऐसें पूछें सूत्र कहें हैं—

॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥ २४ ॥

याका अर्थ— ब्रह्मलोक कहिये पांचवा स्वर्ग ताविषें है आलय कहिये निवास जिनका ते लौकान्तिक हैं। जामैं आयकरि रहिये ताकूं आलय कहिये ऐसा आवासका नाम भया। सो जिनका निवास ब्रह्मलोक जो पंचम स्वर्ग तामैं हैं ते लौकान्तिक हैं। इहां प्रश्न, जो, ऐसें तौ पांचमा स्वर्गके सर्वही देवता रहें हैं, ते सर्वही लौकान्तिक ठहरे। ताका उत्तर– जो, ऐसा नाही। इनका नाम सार्थिक है। ब्रह्मलोककूं तौ लोक कहिये, ताका जो अंत छेहडा ताविषैं उपजैं ते लौकान्तिक कहिये। तथा जन्म जरा मरणकरि व्याप्त ऐसा जो लोक कहिये संसार ताका अंत कहिये छेहडा

ताकूं लोकान्त कहिये, ताविषें जो होय ते लौकांतिक कहिये, ऐसें इनका नाम है। तातें पांचवां स्वर्गकें अन्य देवनितें ये जुदे हैं, इनका विमान ब्रह्मलोकस्वर्गके अन्तमें है। तथा ए सर्वही एक मनुष्यके भव लेय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं॥

आगें सामान्यकरि कहे जे लौकान्तिक देव तिनका भेद दिखावनेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥ २५ ॥

याका अर्थ— ए आठ प्रकारके लौकांतिक देव हैं। चशब्दतें इनके विमान अन्तरालविषैं दोयदोय प्रकारके और हैं। ते देव कहा हैं सो कहै हैं। अरुण नामा समुद्रतें उपजा मूलविषें संख्यातयोजनका विस्तार जाका ऐसा अंधकारका स्कंध समुद्रका वलयकीज्यों वलयाकार तीव्र है। अंधकाररूप परिणमन जाका ऐसा सो ऊर्द्ध अनुक्रमतें वधता चलता संख्यातयोजनका मोटा होता पंचमस्वर्गका पहला पटलका अरिष्ट नामा विमानके नीचैं प्राप्त होय कूकडाकी कुटीकीज्यों मिल गया है। ऐसें अंधकारतें उपरि आठ अंधकारकी पंक्ति उठी हैं। सो अरिष्टविमानकें समान निकट चारो दिशामें दोयदोय ऐसें आठ तिर्यग् चाली सो लोकके अंतताईं गई। तिन अंधकारकी पंक्तिनिके अंतरालनिविषें स्वारस्वत आदि लौकान्तिकनिके विमान हैं, तहां वसैं हैं, सो कहिये हैं॥

पूर्वउत्तरके कौणविषैं सारस्वतनिका विमान है। देवनिकी संख्या सातसै है। बहुरि पूर्वदिशाविषैं आदित्यनिका विमान है। देवनिकी संख्या सातसै है। बहुरि पूर्व दक्षिणके कौंणमें वह्निदेवनिका विमान है। देवनिकी संख्या सात हजार सात है। बहुरि दक्षिणदिशाविषैं अरुणका विमान है। देवनिकी संख्या सात हजार सात है। बहुरि दक्षिणपश्चिमका कौंणमें गर्दतोयानिका विमान है। देव नव हजार नव हैं। बहुरि पश्चिमदिशाविषैं तुपितनिका विमान है। देव नव हजार नव हैं। बहुरि उत्तर पश्चिमके कौणमें अव्यावाधनिका विमान है। देव ग्यारह हजार ग्यारह हैं। बहुरि उत्तरदिशाविषैं अरिष्टनिका विमान है। देव ग्यारह हजार ग्यारह हैं। बहुरि चशब्दकरि समुच्चय किये इनके अंतरालमें दोयदोय देवनिके समूह और हैं सो कहिये हैं। सारस्वत आदित्यके अंतरालमें अग्न्याभ सूर्याभ ये हैं। तिनके देव अग्न्याभके सात हजार सात हैं, सूर्याभके नव हजार नव हैं। बहुरि आदित्य वह्निके अंतरालमें चंद्राभ सत्याभ हैं। तामें चन्द्राभके देव ग्यारह हजार ग्यारह हैं, सत्याभके तेरह हजार तेरह हैं। बहुरि वह्नि अरुणके अंतरालमें श्रेयस्कर क्षेमंकर हैं। तहां श्रेयस्करके देव पंद्रह हजार पंद्रह हैं, क्षेमंकरके सत्रह हजार सत्रह हैं। बहुरि अरुण गर्दतोयके अंतरालमें वृषभेष्ट कामचर हैं। तहां वृषभेष्टके उगणीस हजार उगणीस

हैं, बहुरि कामचर इकईस हजार इकईस हैं। बहुरि गर्दतोय तुपितके अंतरालमें निर्माणरज दिगंतरक्षित हैं। तहां निर्माणरजके देव तेईस हजार तेईस हैं, दिगंतरक्षित पच्चीस हजार पच्चीस हैं। बहुरि तुपित अव्याबाधके अंतरालमें आत्मरक्षित सर्वरक्षित हैं। तहां आत्मरक्षित सत्ताईस हजार सत्ताईस हैं, सर्वरक्षित उनतीस हजार उनतीस हैं। बहुरि अव्याबाध अरिष्टके अंतरालमें मरुत वसु हैं। तहां मरुतके देव इकतीस हजार इकतीस हैं, वसुके देव तेतीस हजार तेतीस हैं। बहुरि अरिष्ट सारस्वतके अंतरालमें अश्व विश्व हैं। तहां अश्वदेव पैंतीस हजार पैंतीस हैं, विश्व सैंतीस हजार सैंतीस हैं। ए सर्व चालीस लौकांतिक देव भेले किये चारि लाख सात हजार आठसै छह हैं। सर्वही स्वाधीन हैं। इनमें हीनाधिक कोऊ नहीं। बहुरि विपयनिका रागनितैं रहित हैं। तातैं इनकूं देवर्पिभी कहिये। याहीतैं अन्यदेवनिकें ये पूज्य हैं। चौदह पूर्वके धारी हैं। तीर्थंकरनिके तपकल्याणविपैं प्रतिबोधनेंविपैं तत्पर हैं। निरंतर ज्ञानभावनाविपैं जिनका मन रहै है, संसारतैं सदाही विरक्त हैं, बारह अनुप्रेक्षाविपैं जिनका चित्त प्रवर्तें है ऐसा नामकर्मकी प्रकृतिविशेपके उदयतैं उपजे हैं॥

आगें पूछै हैं, जो, लौकान्तिक देव कहे ते एकभव ले निर्वाण पावें हैं, तो ऐसा औरभी देवनिके निर्वाण पावनेका कालविभाग है? ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— विजयादिक च्यारि विमानवाले तथा अनुदिशवाले देव दोय भव मनुष्यका लेय मोक्ष जाय हैं। यहां आदिशब्द प्रकारार्थमें है। तातैं विजय वैजयंत जयंत अपराजित अनुदिश विमान तिष्ठे हैं तिनका ग्रहण है, जातैं इनविषैं सम्यग्दृष्टीविना उपजै नाहीं ऐसा प्रकारार्थ जानना। इहां कोई कहै है, ऐसैं तो सर्वार्थसिद्धिकाभी ग्रहण होय है। ताकूं कहिये नाही होय है। जातैं सर्वार्थसिद्धिके देव परम उत्कृष्ट हैं। तातैं इनकी संज्ञाही सार्थिक हैं। एक भव ले मोक्ष पावें हैं। बहुरि इस सूत्रमें चरमतपणां मनुष्यभवकी अपेक्षा है, जे दोय भव मनुष्यके ले ते द्विचरम कहिये। तातैं ऐसा अर्थ है, जो, विजयादिकतैं चयकरि मनुष्य होंय बहुरि संयम आराधि फेरि विजयादिकविषैं उपजै, तहांतैं चयकरि मनुष्य होय मोक्ष जाय हैं ऐसैं द्विचरमदेहपणा है। ऐसैं ग्यारह सूत्रनिकरि वैमानिक देवनिका निरूपण किया ॥

आगैं पूछै है, जीवके औदयिक भावनिविषैं तिर्यग्योनि औदयिकी कही बहुरि स्थितिके निरूपणतैं तिर्यंचनिकी स्थिति कही; तहांतैं ऐसा न जाना गया, जो, तिर्यंच कौन हैं? ऐसा पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥ २७ ॥

याका अर्थ— औपपादिक देव नारकी और मनुष्य इनसिवाय बाकी रहे ते तिर्यग्योनि कहिये तिर्यंच हैं। औपपादिक तौ देवनारकी पूर्वं कहेही थे। बहुरि मनुष्य प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः इस सूत्रविषैं कहे, इनतैं अन्य संसारी जीव बाकी रहे ते तिर्यंच जानने। बहुरि इन तिर्यंचनिका देवादिककीज्यों क्षेत्रविभाग कह्या चाहिये, परंतु ये तिर्यंचजीव सर्वलोकव्यापी हैं। तातैं इनका क्षेत्रविभाग न कह्या। इहां प्रश्न— तिर्यंचनिकूं यहां कहे, इनका प्रकरण दूसरे अध्यायमें था, तहां क्यों न कहा? ताका उत्तर, जो, तिर्यंच सर्वलोकव्यापी हैं, तातैं इनके प्रकरणमें कहते तौ तिर्यंचनिके भेद बहुत, ते सर्व कहने होते, तब सूत्रका गौरव होता वधि जाता। तातैं देव नारकी मनुष्य आधारसहित कह चुके। पीछें अवशेष रहे ते सर्व तिर्यंच सर्वलोकव्यापी हैं। यातैं सूत्रका गौरव न भया। तहां तिर्यंच दोय प्रकार सूक्ष्मबादर भेदकरि हैं। तहां सूक्ष्म तौ एकेन्द्रिय हैं, ते सर्वलोकव्यापी हैं। बहुरि बादर एकेन्द्रिय विकलत्रय पंचेन्द्रिय हैं, ते सर्वत्र नाहीं, कहूं कहूं हैं ॥

आगैं, नारकी मनुष्य तिर्यंचनिकी तौ स्थिति कही, बहुरि देवनिकी न कही, सो कही चाहिये। तहां आदिविषैं भवनवासी कहे, तिनकी स्थिति कहनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिताः ॥ २८ ॥

याका अर्थ— असुर आदिकैं सागरोपम आदिकरि यथाक्रम संबंध करना, या स्थिति उत्कृष्ट है, जघन्य आगे कहसी। तहां असुरकुमारनिकी स्थिति कहिये आयु सो एकसागरकी है। बहुरि नागकुमारनिकी आयु तीनि पल्यकी है। अवशेष देव रहे तिनके सुपर्णकुमार द्वीपकुमार अर बाकी रहे ते ऐसैं तीनि स्थानकविषे आधा आधा पल्य घाटि जानना। तहां सुपर्णकुमारकेकी तौ अढाई पल्यकी, द्वीपकुमारकेकी दोय पल्यकी, बाकी रहे छह कुमार तिनकी डेढ पल्यकी है ॥

आगें, इनके आगें व्यंतरज्योतिष्कनिकी स्थिति अनुक्रममें आई ताहि उलंघ्य वैमानिक देवनिकी स्थिति कहिये हैं। जातैं आगें लघुकरणकरि तिन व्यंतरज्योतिषीनिकी स्थिति कही जायगी। अब वैमानिकविषैं आदिका दोय स्वर्गविषैं स्थिति कहै हैं–

॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमेऽधिके ॥ २९ ॥

याका अर्थ— सौधर्म ऐशान स्वर्गविषैं दोय सागर क्यों (कुछ) अधिक स्थिति है। इहां सूत्रमें सागरोपमे ऐसा द्विवचन है, तातैं दोय सागर लेने। बहुरि अधिक ऐसा शब्द अधिकारस्वरूप है सो सहस्रारस्वर्गताईं लीजियेगा। तातैं आगैं सूत्रमें तु शब्द है। तातैं ऐसा जाना जाय

है। तातैं इहां ऐसा अर्थ भया, मो, सौधर्म ऐशान इन दोय स्वर्गके देवनिकी आयु दोय सागर कुछ अधिक है ॥ आगै, आगिले स्वर्गनिविषैं स्थितीके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥ ३० ॥

याका अर्थ— सानत्कुमार माहेन्द्र इन दोय स्वर्गनिविषैं सात सागर अधिक सहित है ॥ आगें ब्रह्मलोकादिकतें लगाय अच्युत स्वर्गपर्यंत स्थितीके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपंचदशभिरधिकानि तु ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— यहां पहले सूत्रमें सातसागर कहे हैं। तिनमें इस सूत्रमें कहे जे तीनि आदि ते अधिक करने जोडने। बहुरि पूर्वसूत्रके अधिक शब्दकी अनुवृत्ति है। सो इस सूत्रमें तु शब्दकरि इहां च्यारि युगलनिताईं तौ अधिक लेना, और अंतके दोय युगलमें न लेना, ऐसा अर्थ तु शब्दकरि भया। तातैं इहां ऐसा अर्थ है, ब्रम्हलोक ब्रह्मोत्तरविषैं तौ सातमें तीनि मिले तब दश सागरकी स्थिति अधिक सहित भई। लांतव कापिष्ठविषैं सातमें सात मिले तब चौदह सागर अधिक सहित हैं। शुक्र महाशुक्रविषैं सातमें नव मिले तब सोलह सागर साधिक हैं। शतार सहस्रारविषैं सातमें ग्यारह मिले तब अठारह सागर साधिक है। आनत प्राणतविषैं सातमें वीस मिले तब वीस

सागर अधिकरहित है। आरण अच्युतविषैं सातमें पंद्रह मिले तब बाईस सागर अधिकरहित है ॥

आगैं इनके उपरि स्थिति जाननेकूं सूत्र कहैं हैं–

॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिध्दौ च ॥३२॥

याका अर्थ— इहां अधिकका ग्रहणकी अनुवृत्ति करि एकएक वधावना। ग्रैवेयककैं नवशब्दका ग्रहण एकएक करि बढता जुदा जनावै है। नवशब्द न होय तौ ग्रैवेयकविषैं एकही वधावना ठहरै। बहुरि विजयादिकैं आदिशब्द है सो प्रकारार्थ है। सो विजयादिकीज्योंही अनुदिश है, ताका ग्रहण करना। बहुरि सर्वार्थसिद्धिका जुदा ग्रहण जघन्यस्थितिका अभाव जनावनेके अर्थि है। तातैं ऐसा अर्थ भया, नीचिले ग्रैवेयकत्रिकमें पहले ग्रैवेयकमें तौ तेईस सागरकी स्थिति है। दूसरेमें चौवीस सागरकी है। तीसरेमें पचीस सागरकी है। बहुरि मध्यग्रैवेयकत्रिकमें पहलेमें छवीस सागर है। दूसरेमें सत्ताईस सागर है। तीसरेमें अठाईस सागर है। उपरले ग्रैवेयकत्रिकमें उनतीस सागर है। दूसरेमें तीस सागर है। तीसरेमें इकतीस सागर है। अनुदिशविमानविषैं वत्तीस सागर है। विजयादिक विमाननिविषैं तेतीस सागर उत्कृष्ट है। सर्वार्थसिद्धिविषैं तेतीस सागर उत्कृष्टही है। इहां जघन्य नाहीं ॥

आगें जिन देवनिकी उत्कृष्ट स्थिति कही तिनकैं जघन्यस्थिति कहनेकों सूत्र कहैं हैं-

॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— अपरा कहिये जघन्यस्थिति सौधर्म ऐशानके देवनिकी कुछ अधिक एक पल्यकी है। यह सूत्रतैं कैसें जानिये? अगिले सूत्रमें 'परतः परतः' ऐसा कहा है तातैं इहां सौधर्म ऐशान जाना जाय है। आगें याके उपरि जघन्यस्थिति कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥ ३४ ॥

याका अर्थ— इहां परतः परतः ऐसा तौ सप्तमी विभक्तिका अर्थ है। वहुरि वारवार कहने तातैं दोयवार कह्या है। वहुरि पूर्वशब्दके अधिक ग्रहणकी अनुवृत्ति है तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, सौधर्म ऐशानविषैं उत्कृष्ट स्थिति साधिक दोय सागरकी कही। सो यातैं परे सानत्कुमार माहेन्द्रविषैं जघन्यस्थिति साधिक दोय सागरकी है। वहुरि सानत्कुमार माहेन्द्रविषैं उत्कृष्ट स्थिति साधिक सात सागरकी है। सोही ब्रह्म ब्रह्मोत्तरविषें जघन्यस्थिति है। ऐसेंही विजयादिकपर्यंत जाननी। अनन्तरशब्द है सो पहली पहली लगतीकूं जनावै है। आगें नारकीनिकी उत्कृष्टस्थिति तौ यह पहली कही थी, वहुरि जघन्य पहली न कही, वहुरि इहां ताका प्रकरणभी नाहीं, तौभी

पहले सूत्रतैं क्रममें थोरे अक्षरनिमें कही जाय है, तातैं इहां ताकूं कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— इहां चशब्द है सो इसतैं पहले सूत्र कह्या ताका समुच्चयके अर्थि है। तातैं अर्थ होय है, जो, रत्नप्रभाविषैं नारकीनिकी उत्कृष्टस्थिति एकसागरकी कही है, सो शर्कराप्रभाविषैं जघन्यस्थिति है। बहुरि शर्कराप्रभाविषैं उत्कृष्टस्थिति तीनि सागरकी कही है, सो वालुकाप्रभाविषैं जघन्यस्थिति है। ऐसेंही महातमःप्रभा सातवी पृथ्वीताईं जानना ॥ आगें दूसरी आदि पृथिवीविषैं जघन्यस्थिति कही, तौ पहली पृथिवीविषैं जघन्यस्थिति कहा है? ऐसैं पूछे ताके दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— इहां अपरा शब्दकी अनुवृत्ति है। तातैं जघन्य जाननी। सो पहली पृथिवी रत्नप्रभाविषैं नारकीनिकी जघन्यस्थिति दशहजारवर्षकी है ॥

आगें भवनवासी देवनिकी जघन्यस्थिति कही सो सूत्र कहै हैं ॥

॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— इहां च शब्द पहले सूत्रमें कही स्थितिका समुच्चय करे है। तातैं ऐसा अर्थ है जो भवनवासी देवनिकीभी जघन्यास्थिति दशहजार वर्षकीही हे ऐसैं जाननी ॥

आगें व्यंतरदेवनिकी जघन्यस्थिति कहा है? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ व्यन्तराणां च ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— यहांभी च शब्दकरि पूर्वसूत्रमें कही स्थितिका समुच्चय करै है। तातैं व्यंतरदेवनिकीभी जघन्यस्थिति दशहजार वर्षकी जाननी ॥

आगें व्यंतरदेवनिकी उत्कृष्टस्थिति कहा है? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं-

॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— व्यंतरदेवनिकी उत्कृष्टस्थिति एक पल्य कछू अधिक है ॥

आगें ज्योतिषी देवनिकी उत्कृष्टस्थिति कहनेयोग्य है ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं-

॥ ज्योतिष्काणां च ॥ ४० ॥

याका अर्थ— इहां च शब्द है सो पहले सूत्रमें स्थिति कही ताका समुच्चय करै है। तातैं ज्योतिषी देवनिकी आयु साधिक एक पल्यकी है ॥

आगैं ज्योतिषीनिकी जघन्यास्थिति कहा है? ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं-

॥ तदष्टभागोऽपरा ॥ ४१ ॥

याका अर्थ—तिस पल्यके आठवे भाग ज्योतिषी देवनिकी जघन्य स्थिति है। इहां अधिक कही विशेष लिखिये हैं। उत्कृष्टस्थितिकामें अधिक कही सो उत्कृष्टस्थितिमें केती अधिक है सो कहिये हैं। तहां चन्द्रमाकी तो एक लाख वर्ष अधिक है। सूर्यकी एक हजार वर्ष अधिक है। शुक्रकी एकसौ वर्ष अधिक है। बृहस्पतिकी एक पल्यकी है, अधिक नाही। अन्य ग्रहनिकी आध पल्यकी उत्कृष्ट आयु है। नक्षत्रनिकी आध पल्यकी उत्कृष्ट आयु है। तारानिकी पल्यका चौथा भाग आयु है। बहुरि जघन्य चन्द्रमा सूर्य आदिकी तौ पल्यका चौथा भाग है। बहुरि तारानिकी अर नक्षत्रनिकी पल्यका आठवा भाग है॥ बहुरि कोई पूछे है, लौकान्तिक कहे तिनकी स्थिति न कही सो तौ केती है? तहां कहिये है-

॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४२

याका अर्थ— जो लौकान्तिक देवनिकी सर्वहीकी आठ सागरकी स्थिति है। ते सर्वही बराबर है, सर्वके शुक्ललेश्या है, पांच हाथका सर्वका शरीर है। इहां कोई तर्क करै है, जो, प्राणीकी

स्थिति कर्मकी विचित्रतासूं हीनाधिक कहिये है, तौ जैसें घट आदि वस्तुनिकी स्थिति कर्मकी अपेक्षा विना है, तैसैंही क्यों न कहो? ताका समाधान– जो, घट आदि वस्तु तौ पुद्गलद्रव्य हैं, इनकें कर्मका बंध उदय नाहीं, तिनकीभी स्थिति प्राणीनिके कर्मके उदयके अनुसारी है। जो ऐसें न मानिये तौ समानकारणतैं उपज्या समानकालमें उपज्या समानक्षेत्रमें उपज्या समान जिनका आकार ऐसे घटनिकी समान स्थिति चाहिये, सो है नाहीं, तातैं जे घटादिकके भोजनेवाले प्राणी तिनके कर्मके उदयके अनुसार तिनकीभी स्थिति है। निमित्तनैमित्तकभावरूप वस्तुस्वभाव है ॥

ऐसें जीवपदार्थका स्वरूपविषें संसारी जीवनिका स्वरूप कह्या ॥ सो प्रथम अध्यायमें प्रमाण नय निक्षेप अनुयोगनिका स्वरूप कहिकरि द्वितीय अध्यायमें पंचभावरूप आदि जीवपदार्थस्वरूप कह्या। तीसरे चौथे अध्यायमें इन जीवनिका आधार आदि विशेषका निरूपण किया। जातैं जीवपदार्थ है सो एकही अनेकस्वरूप है, तातैं द्रव्यपर्यायनिकरि याविषैं सर्व अवस्था निर्बाध संभवै है। कोई अन्यवादी जीवकूं एकरूपही कहै है, तथा कोई अनेकरूपही कहै, तौ ऐसा जीवपदार्थका स्वरूप प्रमाणबाधित है। अब एकही जीव नानास्वरूप कैसें है सो कहैं हैं। जो

भावरूप पदार्थ है, सो अनेकरूप है। जातैं भाव है सो अभावतैं विलक्षण है। अभाव तौ सदा एकरूप है। यातैं भाव अनेकरूपही होय, ऐसा न मानिये तौ भावअभावमें विशेष न ठहरै। सो ऐसा भाव छह प्रकारका है। जन्म। अस्तित्व। निवृत्ति। वृद्धि। अपक्षय। विनाश। तहां बाह्याभ्यंतर कारणके वशतैं वस्तु उपजै सो जन्म है। जैसैं सुवर्ण कडापनाकरि उपज्या। तथा मनुष्यगतिनामकर्मका उदयकरि जीव मनुष्य भया बहुरि अपने निमित्तके वशतैं वस्तुका अवस्थान रहै सो अस्तित्व है। सो ऐसा अस्तित्व है सो शब्दकै तथा ज्ञानके गोचर है। ऐसैं मनुष्यआदि आयुकर्मके उदयकरि जीव मनुष्यआदि पर्यायविषैं अस्तित्वरूप रहै। बहुरि सतकैं अवस्थान्तरकी प्राप्तिकूं निवृत्ति कहिये याकूं परिणामभी कहिये। बहुरि पहले स्वभावतैं अनुक्रमतैं वधै ताकूं वृद्धि कहिये। बहुरि पहले स्वभावतैं अनुक्रमतैं घटै ताकूं अपक्षय कहिये। बहुरि पर्यायसामान्यका अभाव होय ताकूं विनाश कहिये। ऐसैं भाव है सोही अनेकरूप क्षणक्षणमें होय है। सो सर्वथा अभावको ऐसैं मानियें तौ सिद्धि होय नाहीं। बहुरि सर्वथा सतकूं नित्यही मानियें तौ प्रत्यक्ष जन्मआदि होय हैं, तिनका विरोध आवै। इत्यादि युक्तिमें सर्वथाएकान्तपक्ष सर्वही बाधित है

ऐसेंही अनेकवचन तथा अनेक ज्ञानका विषयपणातैंभी भावरूप जीव नामा पदार्थ एकही

अनेकरूप है, वचनकरि अनेकरूप कहिये है ज्ञानकरि अनेकरूप जानिये है, बहुरि अनेकशक्ति करि सहित है। जातैं द्रव्य क्षेत्र काल भावके निमित्ततैं अनेक अवस्थारूप होय है, सो बहु शक्तिरूप है तो होय हैं। ऐसैंभी एकअनेकरूप है। बहुरि अन्यवस्तुके संबंधतैंभी अनेकरूप है। जैसैं कर्मके संबंधतैं जीवस्थान गुणस्थान मार्गणास्थानरूप होय है, तैसैं अन्यकी अपेक्षाकरि व्यक्त भये भाव तिनका घटनावधनाकरि अनेकरूप है। तथा अतीत अनागत वर्तमान कालके संबंधतैं अनेकप्रकार हैं। तथा उत्पादव्ययपणाकरि अनेकरूप हैं॥

बहुरि अन्वयव्यतिरेकपणाकरि अनेकप्रकार है। तहां अन्वय तौ गुणके आश्रय कहिये, व्यतिरेक पर्यायके आश्रय कहिये। ऐसैं एक अनेकस्वरूप जीव नामा पदार्थ है सो शब्दकरि जाकूं कहिये तहां सकलादेश विकलादेशकरि दोय प्रकारकरि कह्या जाय है। तहां सकलादेश तौ प्रमाण कहिये, विकलादेश नय कहिये। तहां काल आदि आठ भाव पूर्वैं प्रथम अध्यायमें कहे हैं, तिनिकरि अभेदवृत्ति अभेदउपचार तथा भेदवृत्ति भेदोपचारकरि द्रव्यार्थिकके पर्यायार्थिकके प्रधानगौणपणाकरि कहिये है। ताके सात भंग अस्तिनास्ति आदि कहे ते पहले अध्यायमें उदाहरण सहित कहे हैं, तहांतैं जानने॥

इहां कोई वादी तर्क करै है, जो, वस्तु एकभी कहिये अनेकभी कहिये। ऐसैं तौ विरोध नामा दूषण आवै है। ताका समाधान, जो, विरोध तीनिप्रकार है। वध्यघातकस्वभावरूप महानवस्थानरूप प्रतिबंध्यप्रतिबंधकस्वरूप। तहां न्यौलाकै सर्पके, जलकै अग्निकै तौ वध्यघातकस्वभावरूप विरोध है। सो तौ एककाल विद्यमान होय अरु तिनका संयोग होय तब होय। सो जो बलवान होय सो दूसरे निर्बलकूं बांधे। सो इहां अस्तिनास्ति एक वस्तुविषैं समानबल है। सो वध्यघातकविरोध समानबलके नाही संभवै। बहुरि सहानवस्थानलक्षण विरोध आम्रके फलकै हरितभाव पीतभावके है। दोऊ वर्ण साथि होय नाही। सो यहू विरोधभी अस्तित्वनास्तित्व एकवस्तुमें एकही काल है। तातें संभवै नाही। जो भिन्नकाल होय तो जिस काल जीववस्तुविषैं अस्तित्व होय तिसकाल नास्तित्व न होय तौ सर्व वस्तु जीवस्वरूप एक ठहरै। बहुरि नास्तिकै काल अस्तित्व न मानिये तो बंध मोक्ष आदिका व्यवहार न ठरहै। तातैं सहानवस्थानलक्षण विरोधभी नाही संभवै। बहुरि प्रतिबंध्यप्रतिबंधकरूप विरोध फलकै अरु वींटके है। जेतैं संयोग है जेतैं फल भाखा होय सोभी पडै नाही। जातैं वींट फलका प्रतिबंधक है, फलकूं पडनैं दे नाही। सो ऐसा विरोधभी अस्तित्व नास्तित्वके नाही है। अस्तित्व तौ नास्तित्वके प्रयोजनकूं रोकै नाही। नास्तित्व अस्ति-

त्वके प्रयोजनकूं रोके नाहीं। इन दोऊनिका प्रयोजन जुदाजुदा है। तातैं इनके वचनमात्र विरोध है सो विरोधकूं नाहीं साधै है, ऐसैं जानना ॥

ऐसैं चौथे अध्यायविषें च्यारि निकायरूप देवनिका स्थानके भेद, सुखादिक, जघन्य उत्कृष्ट स्थिति, लेश्यादिक निरूपण किये ॥

छप्पय ॥ देव च्यारि परकार भेदयुत भाषे स्वामी। तिनके वीस निवास अधो मध्य ऊरध नामी ॥ तिन दुति सुख पर अपर आयु परभाव अवाधि फुनि। लेश्या भाव विच्यारि आदि नीकै आगम सुनि ॥ अध्याय तुरिय इम उच्चर्यो जानि जिनेश्वर सेवकूं। सरधो भलैं ताजि मिथ्यात्वकुटेवकूं ॥ १ ॥

ऐसैं तत्त्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं
चतुर्थ अध्याय पूर्ण भया ॥

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

॥ आगै पंचम अध्यायका प्रारंभ है ॥

॥ दोहा ॥ सकल द्रव्य पर्यायकूं जानि तजे रुषराग ॥
अद्भुत अतिसैं जिन धरे नमूं ताहि वडभाग ॥ १ ॥

ऐसें मंगल करि पंचम अध्यायकी वचनिका लिखिये है। तहां सर्वार्थसिद्धि नाम संस्कृतटीकाका कर्ता कहै है। जो, सम्यग्दर्शनके विषयभावकरि कहे जे जीवआदि पदार्थ, तिनविषैं जीवपदार्थका तो व्याख्यान किया। अब आगैं अजीव नामा पदार्थ विचारविषैं प्राप्त हूवा, ताका नाम तथा भेद कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥

याका अर्थ— धर्म अधर्म आकाश पुद्गल ए अजीवकाय हैं। इहां कायशब्द है सो शरीरका अर्थमें है। तौऊ उपचारतैं इहां अध्यारोपण किया है। जैसें शरीर पुद्गलद्रव्यके प्रचय कहिये समूहरूप है, तैसें धर्म आदि द्रव्यभी प्रदेशनिके प्रचयरूप हैं। तातैं इनकूंभी कायकीज्यौं काय

ऐसा नाम कह्या है। बहुरि ए अजीव जीवरहित हैं, तातें अजीवकाय कहिये। इहां विशेषणविशेष्यका संबंध है। तातैं कर्मधारय समास है। इहां कोई पूछै है, जो, नीला कमल इत्यादिविषें विशेषणविशेष्यका योग होतैं व्यभिचार है। नीलवस्तु औरभी हो है, तातैं व्यभिचारके प्रसंगतैं कर्मधारय समास हो है। इहां अजीवकायविषें कहा व्यभिचार है? ताकूं कहिये है, अजीवशब्द है सो कायरहित जो कालद्रव्य ताविषैंभी वर्तै है। बहुरि कायसहित जीवभी है, तातैं इहां यहु समास बणै है। बहुरि पूछै है, कायशब्द कौंन अर्थि है? ताकूं कहिये, प्रदेशबहुत्व जनावनेके अर्थि है। धर्मादिक द्रव्यके प्रदेश बहुत हैं ॥

बहुरि कोई पूछै है, आगैं सूत्र कहैंगे तामें कह्या है, जो, धर्म अधर्म एकजीव इनकैं असंख्यातप्रदेश हैं, तिस सूत्रतैं प्रदेशबहुत्व जनाये हैं, इस सूत्रमें काहेकौं कहे? ताकूं कहिये, यह तौ सत्य है। परंतु तहां तो प्रदेशनिकी संख्याका नियम जनाया है, जो, इनके प्रदेश असंख्यातही हैं, संख्यात तथा अनंत नाही हैं। अर इहां बहुत्वसामान्य जनावनेकूं कायशब्द है। पहलें बहुत्व कहे, ताकी संख्या तहां जनाई है। अथवा कालद्रव्यके प्रदेशप्रचयका अभाव जनावनेकूं इहां कायशब्द है। कालद्रव्य आगैं कहसी सो बहुप्रदेशी नाही है। जैसैं पुद्गलपरमाणु एकदेशमात्र

है, दूसरा आदि प्रदेश जाकै नाहीं है, तातैं ताकूं अप्रदेशी कहिये है, तैसैं कालका परमाणुभी एकप्रदेशमात्र है, तातैं ताकूं अप्रदेशी कहिये है ॥

बहुरि तिन धर्मआदि द्रव्यनिकी अजीव ऐसी सामान्यसंज्ञा है, सो यह संज्ञा जीवलक्षण-करि रहितपणातैं प्रवर्ते है। बहुरि धर्म अधर्म आकाश पुद्गल ऐसी विशेषसंज्ञा है सो इनमें जैसा विशेषणगुण है ताका संकेत अनादितैं सर्वज्ञपुरुषकृत है तिस संकेततैं प्रवर्ती है, वहू संज्ञा सार्थिक है। समस्त जातैं गमन करते जे जीवपुद्गल तिनकूं काल गमनसहकारी है। ऐसें लक्षणकूं धारणेतैं धर्म ऐसी संज्ञा है। बहुरि इसतैं विपरीत जो जीवपुद्गलकूं स्थानसहकारी एककाल है, तातैं धर्मके लक्षण नाही धारणेतैं अधर्म है। बहुरि समस्तद्रव्य जामें एककालविषैं अवकाश पावैं तथा आप अवकाशरूप है, तातैं आकाश ऐसी संज्ञा है। बहुरि तीनि कालविषैं पूरै तथा गलै ते पुद्गल हैं। ऐसैं सार्थिकभी नाम बणे है। बहुरि अन्यवादी सांख्य कहै हैं, अजीव एक प्रधानही है। ताकूं प्रकृतिहू कहै है। सो यहू प्रमाणबाधित है। तातैं अजीव भिन्नलक्षणस्वरूप जुदेजुदे बहुत बणै हैं। एकहीकी सिद्धि नाहीं। बहुरि जे पुरुष अद्वैत मानैं हैं, ते अजीवतत्त्वही न कहैं हैं। तिनका मत तौ प्रत्यक्षविरुद्धही है। अजीवपदार्थ पुद्गलादि नाना प्रत्यक्षसिद्ध है। बहुरि तिनकूं अनित्य

देखि अवस्तु बतावै तौ जीवभी अनित्यही दीखै। सोभी अवस्तु ठहऱ्या तब सर्वका लोप भया ॥

इहां अदृष्टकी कल्पनाकरि एक ब्रह्म बतावै तौ जीवपदार्थविना ताकूं देखैगा कौंन? देखनेवाला जो अवस्तु है, तौ अवस्तुका देख्या सत्य कैसैं? बहुरि ताकूं आगमके कहेमात्रही मानैं, तौ आगमभी अवस्तु, आगमका माननेवालाभी अवस्तु। तब अदृष्टकल्पनाही भई। इत्यादि युक्तितैं पुरुषका द्वैतकी सिद्धि नाही है। बहुरि पृथ्वी अप तेज वायु मन दिशा काल आकाश ऐसैं अजीव पदार्थके भेद नैयायिक वैशेषिक मानैं हैं। तेभी प्रमाणबाधित हैं। जातैं पृथ्वी अप तेज वायु मन ए तौ पुद्गलद्रव्यही हैं। जुदी जाति नाही। भेदसंघातकरि स्कंधरूप मिलै खुलै है। बहुरि दिशा है सो आकाशहीका भेद है जुदा द्रव्य नाही। आकाशके प्रदेशनिकी पंक्तिविषैं सूर्यके उदयादिके वशतैं पूर्व आदि दिशा कहिये है। बहुरि बौद्धमती एकरूप स्कंधमात्र अजीव मानें हैं। सो स्कंध तौ पुद्गलद्रव्यमयीही है। बहुरि इहां धर्मादिक जुदे द्रव्य कहे, तिनका समर्थन आगैं होयगा ॥

आगैं पूछै है कि, सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य इत्यादिसूत्रविषैं द्रव्य कहे, ते कौन हैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥

याका अर्थ— धर्म अधर्म आकाश पुद्गल ए अजीवकाय कहे, तिनकौं द्रव्यभी कहिये। यातें द्रव्य हैं। तहां जे अपना जैसा स्वरूप है, ताकरि पर्यायनिकूं द्रवंति कहिये प्राप्त होय तथा ते पर्याय जिनकूं प्राप्त होय ते द्रव्य हैं। इहां अन्यवादी कहै है, जो, द्रव्यपणाका योग कहिये संबंध है। जैसें दण्ड अरु पुरुष दोऊ न्यारे सिद्ध हैं, तब तिनका संयोग होय तब दण्डी पुरुष कहावै; तैसें द्रव्यत्व अरु द्रव्य न्यारेन्यारे दीखते नाहीं तातें द्रव्यत्वके योगतें द्रव्य सिद्ध होय। जो, न्यारे-न्यारे सिद्ध भयेविनाभी संबंध कहिये तौ आकाशफूल असिद्ध है ताकैं अर आकाशकैंभी संबंध ठहरे। तथा स्वभावकरि तौ पुरुष मस्तगसहित हैही, ताकूं दूजे मस्तकका संबंध ठहरे। ऐसेंही द्रव्य तौ द्रव्यत्वरूप हैंही कै दूजा द्रव्यत्वका संबंध ठहरे अथवा आकाशके फूलकैं अरु कल्पितपुरुषके मस्तककैंभी योग होय, सो होय नाहीं॥

अथवा द्रव्य अरु द्रव्यत्व न्यारे न्यारेही मानिये तौ द्रव्य तौ न्यारा ठहराही। ताकैं द्रव्यत्वका योग है, तातें द्रव्य है, ऐसी कल्पना निष्प्रयोजन है। बहुरि कोई कहै, गुणनिका सद्भाव कहिये समुदाय है सो द्रव्य है सो ऐसेंभी जो गुणनिके अरु समुदायके कथंचित् भेद मानिये तौ द्रव्यका

जुदा नाम न ठहरै। गुणनिका समुदायही कहिये तौ द्रव्य कहां? बहुरि भेद मानिये तौ पूर्वोक्त दोष आवै समुदाय तौ जुदा ठहरयाही। गुणनिका समुदाय काहेकूं कहिये? बहुरि वादी कहै, जो तुमभी कहो हौ, जो गुणनिकूं प्राप्त होय तथा जो गुण जाकूं प्राप्त होय, सो द्रव्य है। सो ऐसें कहेभी तुम गुणनिके समुदायमें दोष बताया सोही तुमारै आवेगा। ताकूं कहिये हमारै दोष नाहीं आवेगा। जातैं हम कथंचित् भेद कथंचित् अभेद मानै हैं। तातैं द्रव्यका व्यपदेश कहिये नामकी सिद्धि होय है। तहां गुण अरु द्रव्य जुदे नाहीं दीखै है, तातैं अभेद है ॥

बहुरि संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजन आदिके भेदकरि भेद है। बहुरि द्रव्यशब्दकैं बहुवचन है सो धर्मआदि द्रव्य बहुत हैं, तातैं समान आधारका योग है। इहां कोई कहै, तुम संख्याकी अनुवृत्ति ले बहुवचन कह्या है, तौ लिंगकी अनुवृत्ति चाहिये, धर्मादिककैं पहलै सूत्रमें पुरुपलिंगका बहुवचन है, इहां नपुंसकलिंग कैसें? ताकूं कहिये, इहां द्रव्यशब्द है सो नपुंसकलिंगही है। सो अपने लिंगकूं न छोडे है, तातैं नपुंसकलिंगही युक्त है। ऐसें धर्मादिक द्रव्य हैं। इहां कोई कहै है, द्रव्य गुण पर्याय ए तीनि कहे ते जुदे जुदे हैं। सो ऐसें नाहीं। इनकै प्रदेशभेद तौ नाहीं हैं। अर संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजनादिककरि भेदभी कहिये हैं ॥

आगें कहे हे कि, धर्मादिकके लगताही द्रव्याणि ऐसा सूत्र कह्या तातैं ए च्यारिही द्रव्य हैं, ऐसा प्रसंग होतें अन्यभी द्रव्य हैं, ऐसा सूत्र कहै हैं—

॥ जीवाश्च ॥ ३ ॥

याका अर्थ— जीव हैं ते द्रव्य हैं। तहां जीवशब्दका अर्थ तौ पहले कह आये सो जानना। वहुरि बहुवचन है सो कहे जे जीवके भेद ताकूं जाननेकूं है। वहुरि चशब्द है सो द्रव्यसंज्ञाकूं ग्रहण करावे है। तातैं ऐसा अर्थ होय है, जो, जीव हैं तेभी द्रव्य हैं, ऐसैं ए आगें कहैंगे जो कालद्रव्य ताकरि सहित छह द्रव्य हैं। वहुरि द्रव्यका लक्षणभी 'गुणपर्यायवत् द्रव्य' ऐसा कहेंगे तिस लक्षणके संबंधतैं धर्म अधर्म आकाश जीव पुद्गल काल इन छहहुनिकूं द्रव्य नाम कहिये हैं। वहुरि इनकी गणतीतैं कछू अर्थ नाहीं। वहुरि गणती है सोभी नियमके अर्थि है, द्रव्य छहही हैं। अन्यवादीनिकरि कल्पे जे पृथ्वी आदिक नव द्रव्य तिनका निषेध है। जातैं पृथ्वी अप तेज वायु मन ते तौ रूप रस गंध स्पर्शवान् हैं, तातैं पुद्गलद्रव्यविषैं गर्भित हैं॥

इहां कहै, वायुमनकैं रूपादिका योग नाही दीखै है। ताकूं कहिये, वायु तौ स्पर्शवान है सो रूपादिकतैं अविनाभावी है। जहां स्पर्श है तहां रूपादिक होयही होय, यह नियम है। जैसैं

घट आदि है तैसें है। इहां कहै, नेत्रनिकरि तौ वायुरूप दीखै नाही। ताकूं कहिये, ऐसें तौ परमाणुभी नेत्रनिकरि नाही दीखै, ताकैंभी स्पर्शादिकका अभाव ठहरे है। ऐसैंही जलभी स्पर्शवान् है, तातैं पृथिवीकीज्यौं गंधवान् अवश्य हैं। तथा अग्निभी स्पर्शवान् है, तातैं रसगंधवान् है। बहुरि मन है सो दोयप्रकार है द्रव्यमन भावमन। तहां भावमन तौ ज्ञान है। सो जीवका गुण है, सो आतमद्रव्यविषैं गर्भित भया। बहुरि द्रव्यमन है सो रूपादिकके योगतैं पुद्गलद्रव्यका विकार है, तातैं यह ज्ञानोपयोगकूं निमित्त है, तातैं नेत्रइन्द्रियकीज्यौं रूपआदिसहितही कहिये॥

इहां तर्क, जो, शब्द मूर्तिक है, सो ज्ञानकूं कारण है, तैसें मनभी रूपादिरहित अमूर्तिकज्ञानकूं कारण है, तातैं मूर्तिकसाधनविषैं हेतुकै व्यभिचार भया। ताका समाधान, जो, ऐसैं नाही है। शब्दभी पुद्गल जघन्यही है, तातैं मूर्तिकही है। बहुरि अन्यवादी तर्क करै है, जो, एकपरमाणुनिका रूपादिसहित कार्य देखिये है, तातैं रूपादिमान् कहिये है, तैसैं वायुमनका रूपादिसहित कार्य दीखै नाही। ताका समाधान, जो, वायुमनकैंभी रूपादिकार्यकी प्राप्ति वर्णें है। जातैं परमाणुमात्र सर्वहीकै रूपादिकार्यसहितपणा है। ऐसा तौ नाही। जो कोई पृथिवीतैं उपजे जातिविशेषकूं लिये परमाणु हैं ते न्यारेही हैं। सर्वही परमाणुनिकी पलटनी दीखै है। पृथिवीतैं जल होय है,

जलतें पृथिवी होय है, अग्नितें पृथिवी होय है, पृथिवीकाष्ठादिकतें अग्नि होय है, ऐसें परस्पर जातिका संकर देखिये है। तातें वायुमनके न्यारेही परमाणु नाही, सर्व पुद्गलद्रव्यके विकार हैं॥

बहुरि दिशाका आकाशविषें अन्तर्भाव है। सूर्यके उदयादिककी अपेक्षातें आकाशप्रदेशनिविषें पूर्वादिकका व्यवहार है। इहां बौद्धमती कहै है, जो, चैतन्य क्षणिक है, ताका संतान कल्पित है, ताकूं जीव कहिये है। बहुरि चार्वाकमती कहै है, पृथिवी आदिके समुदायतें चैतन्य उपजै है, ताकूं जीव कहिये है, इत्यादि कल्पना करै हैं। तिनका निराकरण जीवद्रव्य कहनेतें भया। जातें द्रव्य है सो गुणपर्यायसहित है। तहां सततें अन्वयरूप गुण है, व्यतिरेकरूप पर्याय है, दोऊसहित द्रव्य है, ऐसें जानना॥

आगें द्रव्य कहे तिनका विशेष जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥

याका अर्थ— कहे जे द्रव्य ते नित्य हैं, अवस्थित हैं, अरूपी हैं। इहां नित्य तौ ध्रुवकूं कहिये। जातें नि ऐसा धातुका ध्रुव अर्थविषें नित्यशब्द निपजाया है। ए धर्मादिक द्रव्य हैं ते गतिहेतुत्व आदि विशेषलक्षणतें तथा अस्तित्व आदि सामान्यलक्षणतें द्रव्यार्थिकनयके आदेशकरि

कोईही कालविषैं व्यय कहिये नाशस्वरूप न होय हैं, तातैं नित्य हैं। नित्यका लक्षण आगैं सूत्रमें तद्भावाव्ययं नित्यं ऐसैं कहसी। बहुरि ये द्रव्य एते हैं ऐसी संख्याकूं नाहीं छोडे हैं, तातैं अवस्थित कहे धर्मादिक छह द्रव्य हैं ऐसी संख्याकूं नाहीं उलंघे हैं। इहांभी सामान्यविशेषलक्षणरूप द्रव्यार्थिकनय लगावणी। बहुरि जिनकैं रूप विद्यमान नाहीं, ते अरूपी कहिये। इहां रूपका निषेधतैं ताके सहचारी जे रस गंध स्पर्श तिनका निषेध जानना तातैं ए द्रव्य अरूपी कहिये अमूर्तिक हैं॥

इहां प्रश्न– जो, नित्य अरु अवस्थित इन शब्दनिका अर्थका विशेष न जान्या। तहां कहिये है– जो, द्रव्यविषैं अनेक धर्म हैं सो द्रव्यपणाकरि सदा विद्यमान हैं, तातैं यह तौ नित्यशब्दका अर्थ है। बहुरि द्रव्यविषैं विशेषलक्षण है, ताकूं कबहू छोडे नाही। चेतनतैं अचेतन होय नाही, अमूर्तिकतैं मूर्तिक होय नाही, तातैं द्रव्यनिका संख्याकी व्यवस्था है, यह व्यवस्थितका अर्थ है। इस सूत्रतैं जे अन्यमती वस्तुकूं एकान्तकरि क्षणिकही माने है तथा सत्तामात्र एकही वस्तु माने हैं, तिनका निराकरण भया। बहुरि कोई अन्यमती कहै हैं, जो, द्रव्य सर्वगत होय सो अमूर्तिक कहिये, ताका निराकरण है। जातैं मूर्तिकका लक्षण रूपादिक जामैं पाइये सो है। सो ऐसा मूर्तिकपणा जामें न होय सो अमूर्तिक है, ऐसा जानना ॥

आगें नित्यावस्थितान्यरूपाणि यह सूत्र सामान्यकरि कह्या, तामैं पुद्गलकैभी अरूपीपणाकी प्राप्ति आवै है, ताका निषेधके अर्थि विशेषसूत्र कहै हैं—

॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— पुद्गल हैं ते रूपी हैं। रूपशब्दके अनेक अर्थ हैं। तथापि इहां रूपादिका आकाररूप मूर्तिका अर्थ है। सो रूप जाकै होय सो रूपी कहिये, ऐसैं अर्थतैं मूर्तिमान् रूपी भया। अथवा रूप गुणकूं कहिये, सो जामैं रूपगुण होय सो रूपी कहिये, ऐसें रूपतैं अविनाभावी रस गंध स्पर्शभी गर्भित भये। बहुरि पुद्गल ऐसा बहुवचन है, सो, पुद्गलके भेद बहुत हैं, स्कंध परमाणु इत्यादि आगें कहैंगे; ताके जनावनेकूं है। जो सांख्यमती प्रकृतिकूं अरूपी एक मानै है तैसैं मानिये तौ समस्तलोकमें मूर्तिककार्य देखिये है, तिनका विरोध आवै ॥

आगें पूछै है कि, धर्मादिक द्रव्य हैं, ते पुद्गलकीज्यों भिन्न अनेक हैं कि नाहीं? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं

॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥

याका अर्थ— धर्म अधर्म आकाश ए एकएक द्रव्य हैं। इहां आङ् उपसर्ग है सो अभिविधि अर्थमैं है। तातैं सूत्रमें धर्म अधर्म आकाश कहे हैं, सो आकाशतांई तीनूं द्रव्य ग्रहण करने। बहुरि

एकशब्द है सो द्रव्यका विशेषण है, तातैं एकद्रव्य है ऐसा कहिये। इहां तर्क, जो, ऐसा है तौ द्रव्यशब्दकै बहुवचन अयुक्त है। ताका समाधान, जो, धर्म अधर्म आकाश ए तीनि हैं ताकी अपेक्षा बहुवचन है। एकशब्दकै अनेक अर्थकी प्रतीति उपजावनेकी सामर्थ्य है। इहां फेरि तर्क करै हैं, जो, एकएक ऐसा शब्द क्यों न कह्या? तातैं सूत्रमें अक्षर थोरे आवते अर द्रव्यका ग्रहण अनर्थक होता। ताका समाधान, इहां द्रव्यकी अपेक्षा एकत्व कहना हैं, तातै द्रव्यका ग्रहण है। क्षेत्रभावकी अपेक्षा असंख्यात अनंत भेद हैं, तातैं जीवपुद्गलकीज्यों इन तीनूं द्रव्यानिकैं बहुपणा नाही है। ऐसा अर्थ सूत्रकरि प्रसिद्ध होय है। आगैं अधिकाररूप कीये जे धर्म अधर्म आकाश ए तीनूं द्रव्य, तिनका विशेष जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥

याका अर्थ— ए तीनूं द्रव्य क्रियासूं रहित है। बाह्याभ्यंतर इन दोऊ निमित्तके वशतैं द्रव्यके क्षेत्रतैं अन्यक्षेत्रमें गमन करनेका कारण उपज्या जो अवस्थाविशेषरूप पर्याय, सो क्रिया है। इहां दोऊ निमित्त कहे। तहां अभ्यंतर तौ क्रियापरिणाम शक्तिकरि युक्त होय है, बाह्य परद्रव्यकी प्रेरणा तथा भिडना आदि होय ते दोऊ निमित्त हैं। सो निमित्त कहनेतैं द्रव्यका स्वभावका निषेध है।

जो क्रियास्वभावही होय तौ निरंतर क्रियाही ठहरै। तातैं स्वभाव न कहना। बहुरि क्रियाकूं द्रव्यहीकी अवस्था कही। तातैं ऐसा जानना, जो, क्रिया गुणतैं जुदी नाही। बहुरि देशान्तरकी प्राप्तिकूं कारण कही सो यातैं गुणरूप न जाननी, तिस परिस्पंदरूप क्रियातैं रहित होय ते निष्क्रिय कहिये

इहां तर्क, जो, धर्मादिक द्रव्य क्रियारहित हैं, इनकै उत्पाद न चाहिये, जातैं परिस्पंदरूप क्रियापूर्वकही घटादिककै उत्पाद देखिये है, बहुरि उत्पाद न होय, तब नाशभी न होय, तब सर्व द्रव्यनिकै उत्पाद, व्यय ध्रौव्य इन तीनूं रूपनिकी कल्पना न ठहरै। ताका समाधान, जो, ऐसैं नाहीं है। उत्पादादिक क्रियानिमित्त भये तिनासिवाय अन्यप्रकारभी होय है। तहां उत्पाद दोयप्रकार है स्वनिमित्त परनिमित्त। तहां अगुरुलघुगुणके परिणमनतैं उत्पाद होय, सो तौ स्वनिमित्त कहिये। कैसैं हैं अगुरुलघुगुण? परिणामकरि अनंत हैं। बहुरि षट्स्थानपतित हानिवृद्धिकरि सहित हैं। बहुरि आगमप्रमाणकरि मानैं हैं। बहुरि ऐसैंही व्यय हो है। बहुरि परनिमित्त उत्पादव्यय है। सो गऊ घोडा आदिनकूं गतिस्थितिअवगाहकूं ए द्रव्य निमित्त हैं। अर क्षणविषैं तिन गति आदिका भेद हैं। तातैं तिनके हेतुकैंभी भिन्नपणा मानिये। ऐसा परनिमित्त उत्पाद व्यय मानिये हैं॥

बहुरि इहां तर्क, जो, धर्म आदि द्रव्य क्रियारहित हैं, तो जीवपुद्गलकूं गति आदिके कारण

नाहीं वणैगे। जल आदि क्रियावान् हैं। तेही मत्स्य आदिकूं गति आदिके निमित्त देखिये हैं। ताका समाधान, जो, यहु दोप इहां नाहीं है। ए धर्म आदि द्रव्य जीवपुद्गलकूं गति आदिके निमित्त हैं, ते बलाधान निमित्त हैं। जैसैं नेत्र पुरुषके रूप देखनेविषैं निमित्त हैं। जो पुरुषका चित्त अन्यपदार्थोंमें लगि रह्या होय, तौ रूपकूं न देखैं। जब पुरुषका चित्त तिस रूप देखनेकी तरफ आवै तब नेत्रभी निमित्त होय हैं। तैसैं इहांभी है। जब जीवपुद्गल गमन करै तब धर्मद्रव्य निमित्त है। जब बैठै तब अधर्मद्रव्य निमित्त है। जब अवगाहै तब आकाश निमित्त है। प्रेरकनिमित्त नाहीं है। बहुरि सूत्रमें चशब्द है, सो पहले सूत्रमें कहे तिन तीनिही द्रव्यके संबंधके अर्थि है। जीवपुद्गल क्रियावान् हैं॥

इहां कोई अन्यमती कहै है, जो, आत्मा सर्वगत है, यातैं क्रियारहित है। क्रियाके कारण जे संयोग प्रयत्न गुण तिनका समवायतैं परविषैं क्रियाका कारण है। ताकूं कहिये, जो, द्रव्य परके क्रियाका कारण होय, सो आपभी क्रियावानही होय है। जैसैं पवन आप चलै है, सोही परकूं चलावै है। तैसैं आत्माभी क्रियाकी शक्तियुक्त है। जब वीर्यांतराय ज्ञानावरण कर्मका क्षय क्षयोपशम अंगोपांग विहायोगति नामकर्मका उदययुक्त होय, तब शक्ति प्रगट होय गमनक्रियारूप प्रवर्तै

है। ऐसैंही आत्माके हस्तादि चलावनेकी क्रियाकूं निमित्त संयोग प्रयत्नयुक्त होय है। निःक्रिय आत्माकें संयोग प्रयत्न ए दोय गुणके संबंधहीतैं हस्तादिकरि चलावनां बणै नाही। इहां दृष्टान्त, जैसैं दोऊ आंधे मिलै तब देखना बणै नाही, तैसें आत्माकी निःक्रियताके गुणभी निःक्रिय दोऊ निःक्रिय मिलै परविषैं क्रिया कैसैं करावै?

इहां पूछै, जो, धर्मादिक द्रव्य क्रियारहित हैं, जे जीवपुद्गलकौं क्रियाके कारण कैसैं कहौ हो? ताका समाधान, जो, धर्मादिक प्रेरकनिमित्त नाही कहैं है बलाधाननिमित्त मानै है। बहुरि आत्माकूं सर्वगत कह्या, सो सर्वथा सर्वगतभी नाही है। संकोचविस्तारशक्तिकरि असर्वगतभी है। ऐसें इत्यादि युक्तिकरि आत्मा कथंचित् क्रियावान् है। बहुरि पुद्गल क्रियावान् प्रसिद्धही है। धर्म अधर्म आकाश ए क्रियारहित हैं। बहुरि आगें कहियेगा कालद्रव्य सोभी क्रियारहित है॥

आगें, अजीवकाया ऐसैं सूत्रविषैं पहले कह्या तहां कायशब्दकरि प्रदेशनिका अस्तित्वमात्र तौ जान्यां। परंतु प्रदेश एते हैं ऐसा न जान्या। सो प्रदेशनिकी संख्याके निश्चय करनेकूं सूत्र कहे हैं-

॥ असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥ ८ ॥

याका अर्थ— धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य एकजीवद्रव्य इनकैं प्रत्येक असंख्यात प्रदेश हैं। असं

ख्यात गणनामानके तीनि भेद हैं , जघन्य मध्यम उत्कृष्ट । तिनमें इहां मध्यका असंख्यात लेना । बहुरि जितने आकाशक्षेत्रकूं अविभागी पुद्गलपरमाणु रोकै, तितने आकाशकूं एक प्रदेश कहिये । तहां धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य एकजीवद्रव्य ए तीनि द्रव्य बराबरी असंख्यातप्रदेशी हैं। तहां धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य ए दोऊ तौ क्रियारहित सर्वलोकाकाशमें व्यापि तिष्ठै हैं। बहुरि जीव है सो तिनकी बराबरी है। तौऊ संकोचविस्तारस्वभाव है। सो कर्मकरि रच्या शरीर छोटा तथा बडा पावै, तिसप्रमाण होय तिष्ठै है। बहुरि जब केवलसमुद्घातकरि लोकपूरण होय है, तब मेरुकै नीचैं चित्रापृथिवीका वज्रमयी पटलके मध्य जीवका मध्यका आठ प्रदेश निश्चल तिष्ठै है। बहुरि अन्य प्रदेश ऊर्द्ध अध तिर्यक् समस्तलोकमें व्यापै है ॥

आगें पूछे है, आकाशके केते प्रदेश हैं? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ आकाशस्यानन्ताः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— आकाशद्रव्यके अनंत प्रदेश हैं। जाका अन्त न होय ताकूं अनंत कहिये। ऐसैं गणनामानकरि आकाशके अनंत प्रदेश हैं। इहां प्रश्न, जो, अनंतके प्रमाणकूं सर्वज्ञ जानै है, कि नाहीं? जो जान्या है, तौ अनंत कैसैं कहिये? बहुरि न जान्या है, तौ सर्वज्ञ कैसैं कहिये?

ताका समाधान, जो, सर्वज्ञका ज्ञान क्षायिक है सातिशय है, तातैं ताकूं जानकरि अनंत कह्या है। जाके ज्ञानमें तौ सान्तही है, परंतु गणना करि अनंत है। अथवा अनंत ऐसा गणनाकूं सर्वमतके माने हैं। कोई कहै लोक धातु अनंत है। कोई कहै हैं, दिशा काल आत्मा आकाश अनंत हैं। केई कहै है, प्रकृति पुरुषके अनंतपणा है। तातैं ऐसा न कहिये, जो, अनंतपणा जाकूं न जानिये सो है। अरु जाकूं जानिये ताकूं अंतसहित कहिये ॥

इहां अन्यमती कहै, जो, आकाश सर्वगत है, तातैं निरंश है। ताकूं कहिये, यह अयुक्त है। तातैं ऐसा नियम नाही, जो सर्वगत होय सोही निरंश होय, परमाणु असर्वगत है सोभी निरंश होहै। बहुरि जैसैं वस्त्र वडा होय ताकूं गज आदिकरि मापिये तब एकही वस्त्र बहुत गजका कहिये, तब अंशसहितभी भया अरु निरंशभी भया। बहुरि तिसही वस्त्रविषै अनेक जुदीजुदी जायगा जुदीजुदी वस्तु देखिये तब जुदाजुदा अंश प्रगट देखिये है; तैसैं आकाशभी सर्वगत है, तौऊ परमाणुद्रव्यकरि मापिये तब अनंत अंश होय तिनकूं अनंतप्रदेश कहिये। तब अनेक घट मंदिर ग्राम नगरादि जामें वसैं हैं तहां घटका आकाश ग्रामका आकाश नगरका आकाश ऐसा देखिये है। तातैं एकही आकाश द्रव्यनयकरि एक है निरंश है, पर्यायनयकरि अंशसहित है ॥

इहां कहै, जो, ए तौ कल्पना है, कल्पित अंश है। ताकूं कहिये, जो, सर्वथा कल्पितही कहिये तौ अनंतवस्तुका संबंधी जुदाजुदा न होय, जहां घटका आकाश कहिये तहां सर्व वस्तुका आकाश तेताही ठहरै। सो यह बडा दोष आवै। बहुरि एक क्षेत्रमें गऊ आदि तिष्ठै पीछैं अन्यक्षेत्रमें जाय तब ऐसा कहिये है, जो, गऊ इहींतैं अन्यक्षेत्रमें गया, सो यह न बणै। जो आकाश सर्वथा एक निरंशही होय तौ, अन्यक्षेत्र कैसें कहिये? कल्पनामात्रमें ऐसी अर्थक्रिया होय नाहीं कल्पित अग्नितैं पाक आदि होय नाहीं ऐसा जानना॥

आगें कहै हैं, अमूर्तिक द्रव्यनिका प्रदेशनिका परिमाण कह्या, अब मूर्तिकद्रव्यका प्रदेशनिका परिमाण जान्या चाहिये, ताके जनानेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥

याका अर्थ— पुद्गलद्रव्य हैं तिनकें प्रदेश संख्यातभी हैं, असंख्यातभी हैं, चकारतैं अनंतभी हैं। इहां चशब्दतैं पहले सूत्रमें अनंतशब्द है सो लेणां। तहां केई पुद्गलद्रव्य तौ दोयआदि अणुके स्कंध हैं, ते तौ संख्यातप्रदेशी हैं। केई पुद्गल असंख्यातप्रदेशी स्कंध हैं। केई स्कंध अनंतप्रदेशी हैं। अनंतानंतके स्कंध अनंतसामान्य कहनेमें गर्भित हैं। जातैं अंनतके तीनि भेदकरि कहे हैं। परीत

अनंत, युक्त अनंत, अनंतानंत ऐसें। इहां प्रश्न, जो, लोक तौ असंख्यातप्रदेशी है, सो अनंतप्रदेशका स्कंध तामें कैसें रहै? ताका समाधान, जो, यह दोष इहां नाहीं। सूक्ष्मपरिणमन परमाणुनिका तथा अवगाहनशक्तिका योगतें एकएक आकाशप्रदेशविषैं अनंतानंत परमाणु तिष्ठै हैं। आकाशके प्रदेशनिविषैं ऐसी अवगाहनशक्ति है। तथा परमाणुनिमें ऐसीही सूक्ष्मपरिणाम शक्ति है। तातैं यामैं विरोध नाहीं। अल्प आधारविषैं बहुतका अवस्थान देखिये है। जैसैं एक चंपाकी कलीविषैं तिष्ठते सुगंधपरमाणु सूक्ष्मपरिणामतें संकुचे तिष्ठै हैं। बहुरि ते सुगंधपरमाणु फैलें तब सर्व दिशामें व्यापक होय, तैसैं इहांभी जानना। सूक्ष्मपरिणामतें एक प्रदेशमें तिष्ठें परमाणु बादर परिणामें तब बहुतप्रदेशमें तिष्ठैं॥

आगें, पहले सूत्रमें ऐसा कह्या, जो, पुद्गलनिके बहुप्रदेश हैं। तहां सामान्यपुद्गल कहनेमें परमाणुकोभी बहुप्रदेशका प्रसंग आवै है। ताके निषेधके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ नाणोः ॥ ११ ॥

याका अर्थ— परमाणुके बहु प्रदेश नाहीं हैं। इहां अणुकें प्रदेश नाहीं हैं। ऐसें वाक्यशेष लेना। इहां पूछैं, जो, परमाणुकें प्रदेशमात्र काहेतें नाहीं। ताका उत्तर, जो, परमाणु एकप्रदेशमात्र

है। जैसें आकाशके एकप्रदेशकें भेदको अभाव है, तातें अप्रदेशपणां कहिये; तैसें परमाणुके प्रदेशमात्रपणातें प्रदेशके भेदका अभाव जानना। जातें परमाणुतें अन्य छोटा परमाणु नाहीं। यातें छोटा और होय तो वह प्रदेशका भेद करै। इहां कोई कहै, परमाणु अप्रदेश कहिये है, तातें याकै एकप्रदेशभी नाहीं। ताकूं कहिये, एकप्रदेशभी न होय तौ द्रव्यभी न ठहरै। तातैं द्रव्य मानियें तो एकप्रदेशभी मानना योग्य है। विनाप्रदेश अवस्तु होय है। इहांताईं अजीव तथा जीव ये पंच अस्तिकाय कहे तिनके प्रधानपणाकरि द्रव्यत्व नित्यत्व अवस्थितत्व अरूपत्व एकद्रव्यत्व निःक्रियत्व स्वभाव कहे। गौणभावकरि पर्यायत्व अनित्यत्व अनवस्थितत्व सरूपत्व अनेकद्रव्यत्व स्वभावभी है। ते विनाकहेभी गम्यमान जानने। ऐसैं द्रव्यार्थिक पर्य्यायार्थिक नयकरि सिद्ध होय है॥

आगें कहे जे धर्मादिकद्रव्य, तिनकी प्रदेशनिका परिमाण तौ कह्या। अब तिनका आधार जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥

याका अर्थ— ए कहे जे धर्म आदि द्रव्य तिनका लोकाकाशविषैं अवगाह है बाहिर नाहीं है। इहां कोई पूछे है, जो, धर्म आदि द्रव्यनिका लोकाकाश आधार है, तो आकाशका कहा

आधार है? ताका उत्तर, जो, आकाश आपहीकै आधार है याका अन्य आधार नाहीं। फेरि पूछै है, जो, आकाश आपहीकै आधार है तौ धर्मादिकभी आपहीकै आधार क्यों न कहौ? जो धर्मादिकके अन्य आधार है तौ आकाशकैभी अन्य आधार कल्पा चाहिये। तब अनवस्थादोष आवैगा। ताकूं कहिये है, यह दोष नाहीं। जातैं आकाश सर्वतैं वडा है, यातैं अधिक परिमाण और नाहीं, जाकै आधार आकाश कहिये। सर्वतरफ आकाश अनंत है। तातैं धर्मादिकका आधार आकाश कहिये है। सो यह व्यवहारनयकरि जानना। बहुरि एवंभूतनयकी अपेक्षा सर्वही द्रव्य अपनेअपने आधार कहिये। जैसैं कोई काहूकूं पूछै, तू कहां बैठा है? तब वह कहै, मैं मेरा आत्माविषैं बैठा हौं, ऐसा एवंभूतनयका वचन है। तातैं धर्म आदि द्रव्य लोकआकाशतैं बाहिर नाहीं है। एतावन्मात्र इहां आधारआधेयभाव कहनेका फल है॥

इहां कोई तर्क करै है, जो, पहली पीछैं होय तिनकै आधार आधेय भाव देखिये है। जैसैं कूंडाविषैं ठोर है। सो ऐसैं आकाश पहली होय पीछैं तामैं धर्मआदिक द्रव्य धरे होय तब आधाराधेयभाव कहिये। सो ऐसैं है नाहीं। तातैं व्यवहारनयकरिभी आधारआधेयभाव कहना युक्त नाहीं। ताका समाधान, यह दोष नाहीं। एककाल होय तिनकैंभी आधाराधेयभाव देखिये है। जैसैं घट-

विषें रूपआदिक हैं, शरीरविषें हस्त आदि हैं, ऐसैं लोकविषें कहिये है। बहुरि पूछे है, लोक कहा? जामें धर्म आदिका अवगाह कहिये। तहां कहिये, धर्म आदि द्रव्य जामैं देखिए सो लोक है। ऐसें लोकशब्दके अधिकरणसाधन सन प्रत्यय है। ऐसैं आकाशके दोय भेद भये हैं, लोकाकाश अलोकाकाश। सो लोक जामैं है सो तौ लोकाकाश है यातैं बाहिर अलोकाकाश। सो सर्वतरफ अनंत है। ऐसैं लोकालोकका विभाग धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकायके सद्भावअभावतैं जानना। जो धर्मास्तिकाय न होय तौ पुद्गलजीवनिका गमनका नियमका कारणका अभावतैं लोकालोकका विभाग न होय। तथा अधर्मास्तिकाय न होय तौ स्थितिका आश्रयका निमित्तका अभावतैं स्थितिका अभाव होय तबभी लोकालोकविभागका अभाव होय। तातैं तिन दोऊके सद्भावतैंही लोक-अलोकका विभागसिद्धि होय है ॥

आगें, लोकाकाशविषें जिनका अवगाह है, तिनकै अवस्थानविषें विशेष है, ताके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥

याका अर्थ— धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य इन दोऊनिका अवगाह समस्तलोकाकाशमें है। इहां

कृत्स्न ऐसा वचन है सो सर्वलोकविषैं व्यासिके दिखावनेकूं है जैसैं घरकेविषैं घट तिष्ठै, तैसैं ए धर्म अधर्म द्रव्य लोकमें नाहीं तिष्ठै हैं । जैसैं तिलनिविषैं तेल तिष्ठै तैसैं व्यापक हैं। बहुरि इनकै अवगाहनकी सामर्थ्यके योगतैं परस्पर प्रदेशका प्रवेशतैं व्याघात नाहीं है। जातैं ये अमूर्तिक हैं। मूर्तिकभी एकपात्रविषैं जल भस्म धूलि घालिये तिनकैं परस्पर व्याघात नाहीं हो है, तौ अमूर्तिककै कैसैं होय? बहुरि अनादितैं संबंध है, तातैं अविरोध है ॥

आगैं, मूर्तिक जे पुद्गलद्रव्य तिनकै एकप्रदेशतैं लगाय संख्यात असंख्यात अनंत प्रदेशताईंके स्कंध हैं, तिनका अवगाहका विशेष जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥

याका अर्थ— पुद्गलद्रव्यका अवगाह आकाशके लोकके एक प्रदेशतैं लगाय असंख्यात प्रदेशताईं एक दोय आदि भाज्यरूप प्रदेशनिविषैं है ॥ इहां एकप्रदेशादिषु इसका समास अवयवकरि कीया है, तातैं समुदाय जानना । तहां एकप्रदेशभी लेणा। सोही कहिये है। एक आकाशके प्रदेशविषैं एक परमाणुकाभी अवगाह है। बहुरि दोय आदि संख्यात असंख्यात अनंतके स्कंध सूक्ष्म परणाये तिनकाभी है । बहुरि दोय परमाणु खुली तथा बंधीका दोय प्रदेशमें अवगाह है।

वहुरि तीनि आदि संख्यात असंख्यात अनंतके स्कंधनिकाभी है। वहुरि तीनि प्रदेशनिविषैं तीनि परमाणु खुली तथा वंधीका अवगाह है। वहुरि च्यारि आदि संख्यात असंख्यात अनंतके स्कंधनिकाभी है। ऐसैं च्यारि आदि संख्यात लोकाकाशके प्रदेश हैं, तहांताईं भाज्यरूप पुद्गलनिका अवगाह जानना ॥

इहां प्रश्न, जो, अमूर्तिक द्रव्यनिका तौ एकक्षेत्रविषैं अवगाह अविरोधरूप होय वहुरि मूर्तिकद्रव्यकैं कैसैं अविरोधरूप होय? ताका समाधान, इन मूर्तिकद्रव्यनिकैंभी अवगाहनशक्ति है। तथा सूक्ष्मपरिणमन ऐसा होय है, तातैं विरोध नाहीं। जैसैं एक घरमें अनेक दीपगनिका प्रकाश समावै तैसैं जानना तथा आगमप्रमाणकरि जानना। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— यह लोकाकाश है, सो सूक्ष्म वादर जे अनंतानंत अनेकप्रकारके पुद्गलद्रव्य, तिनकरि सर्वप्रदेशनिविषैं जैसैं गाढ खूंदि खूंदि भरै तैसैं संचयरूप भरै है। ऐसाही द्रव्यस्वभाव है सो स्वभावविषैं तर्क नाहीं ॥ वहुरि इहां कुपासपिंडका दृष्टांत है ॥

आगैं जीवनिका कैसैं अवगाह है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ असंख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥

याका अर्थ— लोकका असंख्यातवां भाग आदिविषैं जीवनिका अवगाह है। इहां लोकशब्दकी तौ अनुवृत्ति है। तिस लोकका असंख्यातभाग कीजे, तामें एकभागकूं असंख्यातवां भाग कहिये। तिसकूं आदि लेकर लोकपर्यंत जानना। सोही कहिये हैं, एक असंख्यातवां भागविषैं एकजीव तिष्ठै ऐसैं दोय भाग, तीनि भाग, चारि भाग इत्यादि असंख्यात भागविषैं सर्वलोकपर्यंत एकजीवका अवगाह जानना। संख्यातके संख्यात भेद हैं। तातैं असंख्यातवां भागकेभी प्रदेश असंख्यातही जाननें। बहुरि नानाजीवनिका सर्वलोकही है। इहां प्रश्न, जो, एक असंख्यातवां भागमें एक जीव तिष्ठै तौ द्रव्यप्रमाणकरि जीवराशि अनंतानंत हैं, ते शरीरसहित कैसैं लोकविषैं तिष्ठै? ताका समाधान, जो, सूक्ष्मबादरके भेदतैं जीवनिका अवस्थान जानना॥ तहां बादर तौ परस्पर सप्रतीघातशरीर हैं, जिनका शरीर परस्पर रुकै है। बहुरि सूक्ष्म हैं ते शरीरसहित हैं तौभी सूक्ष्मभावतैं एकनिगोदजीवकरि अवगाहनैंयोग्य जो क्षेत्र ताविषैं साधारणशरीरसहित अनंतानंतजीव वसैं हैं, ते परस्परभी अरु बादरजीवनितैंभी व्याघातरूप न होय हैं, तातैं अवगाहविषैं विरोध नाहीं

आगैं प्रश्न, जो, एकजीव लोकाकाशके प्रदेशनिकै तुल्य असंख्यातप्रदेशी है। सो सर्वलोकमें व्याप्ति चाहिये, लोकाकाशके असंख्यातवां भाग आदिविषैं अवगाह कैसैं कह्या? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ प्रदेशसंहारविसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥ १६ ॥

याका अर्थ— जीवके प्रदेश लोकवरावरि हैं। तथापि संकोचविस्तारकरि दीपकीज्यों जैसा आधार होय तेते क्षेत्रमें तिष्ठै। आत्मा अमूर्तिक है, तौभी कर्मके अनादिबंध एकतारूप है। तातें कथंचित् मूर्तिकभी कहिये है। वहुरि कार्मणशरीरकरि सहित हैं। ताके वशतैं वडे छोटे शरीरमें वसे है। ताके वशतैं प्रदेशनिका संकोचविस्तारस्वभाव है, सो तिस शरीरप्रमाण होतें संतें लोकके असंख्यातवां भाग आदिविषैं वृत्ति वर्णे है। जैसें दीपक चौडें धरे तब तौ प्रकाश अमर्याद फैले। वहुरि करवा पतोली घर आदिविषैं धरै तब आवरणके वशतैं तेतेही परिमाण प्रकाश होय। इहां संकोचनेंका सूके चर्मकाभी दृष्टान्त है। फैलनेका जलविषैं तेलका दृष्टान्त है। इहां प्रश्न, जो, ऐसें संकुचे विस्तारे है तो अनित्य ठहरे? ताका उत्तर, जो, पर्यायनयकरि अनित्य मानियेही है॥

वहुरि प्रश्न, जो, संकुचैतें प्रदेश घट जाते होंयगे। विस्तरितें प्रदेश वढि जाते होंयगे। ताका समाधान, जो, आत्मा अमूर्तिकस्वभाव है, ताकूं छोडे नाहीं है, प्रदेश संख्यातलोकप्रमाण हैं, सोही रहे हैं, स्याद्वादनयकरि सर्व अविरुद्ध सधे है। इहां कोई आशंका करै, जो, संकुचे विस्तरे हैं, तो परमाणुवरावरभी कोई कालमें होता होयगा। सो ऐसा नाहीं है। शरीरप्रमाणही होय

है। सूक्ष्मनिगोदजीवकी अवगाहना जघन्य अंगुलकें असंख्यातवै भाग है। ताके असंख्यातप्रदेश हैं। तिस प्रमाणतें घाटि होय नाहीं है। जातैं संकुचना विस्तरना कर्महीके निमित्ततैं है। आगें कोई कहै, जो, धर्मादिक द्रव्य परस्पर प्रदेशनिकरि मिल रहे हैं, तातैं तिनकै आपसमें पटलकरि एकता होती होयगी। ताकूं कहिये, जो, एकता न होय है। परस्पर मिलि रहे हैं। तौऊ अपने अपने स्वभावकूं नाहीं छोडै हैं। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ– ए छह द्रव्य परस्पर प्रवेश करता आपसमें अवकाश देते हैं, परस्पर मिलते संतेभी अपने अपने स्वभावकूं नाहीं छोडै हैं॥

इहां पूछै है, जो, ऐसैं है; इनकै स्वभावभेद है तौ इनका जुदा जुदा स्वभावभेद कहो। ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ गतिस्थित्युपग्रहो धर्माधर्मयोरुपकारः ॥ १७ ॥

याका अर्थ— गति कहिये गमन स्थिति कहिये तिष्ठना ये दो उपकार जीव पुद्गल इन दोऊ द्रव्यनिकूं धर्मद्रव्य तथा अधर्मद्रव्यका है। तहां द्रव्यके एक क्षेत्रसैं अन्यक्षेत्रमें गमन करना सो तौ गति है। बहुरि गमनकरि थंभि जाना सो स्थिति है। ए दोऊ उपकार धर्म अधर्मद्रव्यके हैं। धर्मद्रव्यका तौ गति उपग्रह है। अधर्मद्रव्यका स्थिति उपग्रह है। इहां कोई पूछै है, जो,

ऐसैं है तो उपकारशब्दकैं द्विवचन चाहिये है। ताकूं कहिये यह दोष नाहीं है। सामान्यकरि कह्या है, तातैं पाई संख्याकूं शब्द छोडै नाहीं, तातैं एकवचनही है। जैसैं साधुपुरुषका तप करना शास्त्र पढना कार्य है, इहां दोऊ कार्यकूं सामान्यकरि एक कहिये; तैसैं इहांभी जानना। इहां ऐसा अर्थ भया, गमन करते जे जीव पुद्गल द्रव्य तिनकूं गमनका उपकारविषैं साधारण आश्रय धर्मद्रव्य है, जैसैं मत्स्यकूं गमनविषैं जल है तैसैं। बहुरि तैसैंही तिष्ठता जो जीव पुद्गल द्रव्य तिनकूं स्थिति उपकारविषैं अधर्मद्रव्य साधारण आश्रय है, जैसैं घोडा आदिकूं तिष्ठतैं पृथिवी है तैसैं॥

इहां कोई तर्क करै– जो, उपकार शब्द तौ कह्याही, सूत्रमैं उपग्रहवचन निष्प्रयोजन है॥ ताका समाधान, जो, इहां धर्मद्रव्यका उपकार गतिसहकारी अधर्मद्रव्यका स्थितिसहकारी ऐसा यथासंख्य है, सो उपग्रहवचन न कहिये तौ जीवनिकूं धर्मद्रव्य गतिसहकारी पुद्गलनिकूं अधर्मद्रव्य स्थितिसहकारी है। ऐसैं इहांभी यथासंख्यकी प्राप्ति आवै। तातैं ताके निषेधके अर्थि उपग्रहवचन है। तहां उपकार तौ सामान्यवचन भया। ताका विशेष उपग्रहशब्द भया। तब ऐसैंभी जानिये, जो, धर्म अधर्मकैं गति स्थिति करावनेका उपकार तौ नाहीं है, अर उपग्रहमात्र है। इहां उपग्रह अरु उपकार ए दोऊ शब्द कर्मसाधन हैं। तहां उपकार तौ सामान्यवचन है अर उपग्रह विशेषवचन है।

तहां फेरि तर्क, जो, गति स्थिति उपकार धर्म अधर्म द्रव्यका कह्या, सो आकाश सर्वगत है, सो याहीका क्यों न कह्या? ताकूं कहिये, यह अयुक्त है। आकाशका सर्वद्रव्यनिकूं अवगाह देना उपकार है। जो एक आकाशहीके दोय उपकार कल्पिये तौ लोकअलोकका विभागका अभाव होय ॥

बहुरि कहै, जो, भूमि, जल आदि पदार्थही गतिस्थिति आदि उपकारविषें समर्थ हैं। धर्म अधर्म द्रव्यनितैं कहा प्रयोजन है? तहां कहिये हैं, भूमि जल आदिक तौ कोई कोई द्रव्यकूं एकएक प्रयोजनविषें अनुक्रमतें समर्थ हैं। बहुरि धर्म अधर्म द्रव्य हैं ते सर्व जीवपुद्गलकूं एककाल गति स्थिति साधारण आश्रय हैं। बहुरि एक कार्यकूं अनेक कारण साधै हैं, तहां दोष नाहीं। बहुरि तर्क, जो, धर्म अधर्म द्रव्य दोऊ समानबल हैं सो धर्मद्रव्य तौ गति करावै तिसही काल अधर्मद्रव्य गतिस्थिति करावै, तब विरोध भया, दोऊ एककाल होय नाहीं। ताका समाधान, जो, ए प्रेरकनिमित्त नाहीं, बलाधाननिमित्त हैं। जीवपुद्गल गमन स्थिति करै तौ निमित्त होय, न करै तौ नाहीं होय ॥

बहुरि तर्क, जो, धर्म अधर्म द्रव्यकी उपलब्धि नाहीं, कोऊके देखनेमें आये नाहीं, तातैं ए नाहीं हो हैं। ताका समाधान, जो, ऐसैं नाहीं। ए परोक्ष हैं, सो सर्वही मतमें प्रत्यक्ष तथा

परोक्ष पदार्थ मानिये है। प्रत्यक्ष न देखनेतैं इनका अभाव मानिये, तौ अन्यमतमें जे परोक्ष वस्तु मानिये हैं, तिनकाभी अभाव ठहरैगा। बहुरि हमारे स्याद्वादीनिके मतमें सर्वज्ञ इनकूं प्रत्यक्षभी देखें हैं, ऐसैं कह्या है, तातैं ए प्रत्यक्षभी हैं, तिनके उपदेशतैं परोक्ष ज्ञानभी माने हैं। तातैं ये हेतु हमप्रति असिद्ध हैं ॥

आगें पूछे हैं, जो, धर्म अधर्म द्रव्य अतीन्द्रिय हैं, तिनका उपकारके संबंधकरि अस्तित्व निश्चय कीजिये तैसैंही ताके लगताही कह्या जो आकाशद्रव्य सोही अतीन्द्रिय है। ताके जानने विषैं कहा उपकार है? ऐसैं पूछैं उत्तरसूत्र कहैं है—

॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥

याका अर्थ — आकाशद्रव्यका सर्वद्रव्यनिकूं अवगाह देना उपकार है। इहां उपकारशब्दकी अनुवृत्ति लेणी। जीवपुद्गल आदि जे द्रव्य अवगाह करनेवाले हैं, तिनकूं अवकाश देना आकाशका उपकार है। इहां तर्क, जो, जीवपुद्गल क्रियावान् हैं, ते अवगाह करनेवाले हैं, तिनकूं अवकाश देना युक्त है। बहुरि धर्मास्तिकाय आदिक तौ निष्क्रिय हैं, बहुरि नित्यसंबंधरूप हैं, तिनकौं कैसें अवगाह दे है? ताका समाधान, जो, इहां उपचारतें अवकाश देना प्रसिद्ध है, तैसें आकाश-

कूं सर्वगत कहिये है, आकाश तौ नित्य निष्क्रिय है, कहूं जाय नाहीं तौऊ सर्वगत उपचारतैं कहिये है तैसैं इहांभी जानना। इहां तर्क, जो, आकाशका अवकाश देना स्वभाव है। तौ वज्र आदिकरि पाषाण आदिका तथा भींत आदिकरि गऊ आदिका व्याघात कहिये रुकना नाहीं चाहिये। बहुरि व्याघात देखियेही है। तातैं आकाशकै अवकाश देना नाहीं ठहस्या। ताका समाधान, जो, यह दोष इहां नाहीं है। वज्रलोष्टादिक स्थूल हैं तिनकैं परस्पर व्याघात है। यातैं आकाशका अवकाश देना नाहीं बांध्या जाय है। तहां अवगाह करनेवालेहीकै व्याघात है, तेही परस्पर अवगाहन करै है, तातैं यह आकाशका दोष नाहीं। बहुरि जे सूक्ष्मपुद्गल हैं ते भी परस्पर अवकाशदान करै हैं॥

बहुरि इहां प्रश्न, जो, ऐसैं है सूक्ष्म पुद्गलभी परस्पर अवकाश दे हैं, तौ अवकाश देना आकाशका असाधारणलक्षण न ठहस्या। ताका समाधान, जो, ऐसैं नाहीं है। सर्वपदार्थनिकूं साधारण युगपत् अवकाश देना आकाशका असाधारण लक्षण है, यातैं दोष नाहीं। बहुरि कहैं हैं, जो, लोकाकाशविषैं अवगाह करनेवाले नाहीं, तातैं तहां अवकाशदानभी नाहीं। ताका समाधान, जो, द्रव्यका स्वभाव है, ताका त्याग द्रव्य करै नाहीं। इहां क्रियावान् जीवपुद्गल तौ आकाशकूं

अवगाहै हैं, तिनकी अपेक्षा तौ अवकाशदान मुख्य है। बहुरि धर्म आदिक नित्यसंबंधरूप निष्क्रिय द्रव्य हैं, तिनकी अपेक्षा गौण हैं॥

बहुरि कोई वादी तौ आकाशकूं अनावरणमात्र अवस्तु कहै है, भीति आदि आवरण दूरि भये अवकाश अनावरण भया सो शून्य है, किछु वस्तु नाहीं। सो यह कहना अयुक्त है। आवरण दूरि भये अवशेषभी परोक्ष वस्तु होय है। बहुरि कोई आकाशका शब्द गुण कहै है। सो यहभी अयुक्त है। शब्द इन्द्रियगोचर है, सो मूर्तिक पुद्गलद्रव्यका पर्याय है, आकाश अमूर्तिक है, सो अमूर्तिकका गुण मूर्तिक होय नाहीं। बहुरि कोई अवगाहकूं प्रधानका परिणाम कहै है। सो यहू अयुक्त है। जातें प्रधानका विकार घट आदिकैं अनित्यपणा असर्वगतपणा अमूर्तिकपणा है, तैसैं आकाशकैं नाहीं, तातैं प्रधानका धर्म नाहीं। इत्यादि युक्तितैं पूर्वोक्त अवगाहधर्मस्वरूप आकाश कह्या, सोही प्रमाणसिद्ध है॥

आगें, आकाशका तौ उपकार कह्या; अब ताके लगतेही कहे जे पुद्गलद्रव्य तिनका कहा उपकार है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ शरीरवाङ्मनःप्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥

याका अर्थ— शरीर वचन मन प्राण कहिये उच्छास अपान कहिये निःश्वास ये पुद्गलद्रव्यके जीवकूं उपकार हैं। इहां तर्क, जो, पुद्गलका उपकारका प्रश्न कीया था, तुम पुद्गलका लक्षण कह्या, शरीर आदि तौ पुद्गलमयी हैं सो यह सूत्र कहना अयुक्त है। ताका समाधान, जो, यह अयुक्त नाहीं है। पुद्गलका लक्षण तौ आगें कहैंगे। यह तौ जीवनिकै पुद्गलनिका उपकारही कहनेकै अर्थि सूत्र है। इहां उपकारहीका प्रकरण है। तहां शरीर तौ औदारिक आदि कर्मकी प्रकृतिरूप कहे ते तौ सूक्ष्म हैं, तातैं इन्द्रियगोचर प्रत्यक्ष नाहीं हैं। बहुरि तिनके उदयकरि भये ऐसैं नोकर्मसंचयरूप ते केई इन्द्रियगोचर प्रत्यक्ष हैं। केई इन्द्रियगोचरप्रत्यक्ष नाहीं। तिनके कारण कर्मप्रकृतिरूप शरीर है। सोभी इहां गिण लेनें। सो ये शरीर पुद्गलमयी हैंही। ऐसैं जीवनिकैं ए होय हैं। तातैं पुद्गलके उपकार कहिये। इहां उपकारशब्दका अर्थ भला करणाही न लेना। किछु कार्यकूं निमित्त होय ताकूं उपकार कहिये है॥

इहां कोई पूछै, कार्मणशरीर तौ आकाररहित है, सो पुद्गलमयी नाहीं। आकारवान् होय ताकूं पुद्गलमयी कहना युक्त है। ताकूं कहिये, यह युक्त नाहीं है। कार्मणभी पुद्गलमयीही है। तातैं ताका उदय है सो मूर्तिवानकें निमित्ततें पचिकरि उदय प्रवर्तै है। जैसैं तंदुल हैं, ते जल आदिके

संबंधकरि पचै हैं, ते दोऊ पुद्गलमयी हैं। तैसैंही कार्मणभी गुड कंटक मूर्तिकद्रव्यकरि पकै है। गुड चोर झडी आदिका दारू वणै, ताकूं पीवै तब चित्त विभ्रमरूप होय। तहां ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय कर्मका उदय आया जानियें। तथा गुड खाये सुख भया, तहां सातावेदनीयका उदय आया कहिये। कांटा लागै तब दुःख होय, तब असताका उदय आया कहिये। इत्यादि बाह्य मूर्तिकद्रव्यके संबंधतैं पचिकरि उदय आवै है, तातैं कार्मण पुद्गलमयी है॥

बहुरि वचन दोयप्रकार है। द्रव्यवचन भाववचन। तहां वीर्यान्तराय मतिश्रुतिज्ञानावरण कर्मके क्षयोपशम होतैं अंगोपांग नामा नामकर्मके उदयतें आत्माकै बोलनेकी सामर्थ्य होय, सो तो भाववचन है। सो पुद्गलकर्मके निमित्ततैं भया तातैं पुद्गलका कहिये। बहुरि तिस बोलनेकी सामर्थ्यसहित आत्माकरि कंठ तालुवा जीभ आदि स्थाननिकरि प्रेरे जे पुद्गल, ते वचनरूप परिणये ते पुद्गलही हैं। ते श्रोत्र इन्द्रियके विषय हैं, औरइन्द्रियके ग्रहणयोग्य नाहीं हैं। जैसैं घ्राण इंद्रियका विषय गंधद्रव्य है। तिस घ्राणकैं रसादिक ग्रहणयोग्य नाहीं हैं तैसें। बहुरि कोई अन्यमती कहै है, वचन मूर्तिक हैं। सो अयुक्त हैं। इह वचन मूर्तिक जे इंन्द्रिय ताके तो ग्रहणमें आवै है। बहुरि मूर्तिककरि रुकि जाय है। बहुरि मूर्तिककरि बिगडि जाय है। बहुरि मूर्तिकके धकेतैं तिर-

स्कार होय है। अन्यदिशातैं अन्यदिशाकूं चल्या जाय है। तातैं अमूर्तिक नाहीं–मूर्तिकही है। बहुरि मन दोयप्रकार है। द्रव्यमन भावमन। तहां ज्ञानावरण वीर्यांतराय क्षयोपशमतैं पाया जो गुणदोषविचारस्मरणकी शक्तिरूप लब्धि तथा उपयोग सो तौ भावमन है, सो तौ पुद्गलकर्मके क्षयोपशमतैं भया, तातैं पुद्गलका कहिये। बहुरि तिस भावमनकरि सहित आत्माकैं अंगोपांगनामकर्मके उदयतैं तिनि गुणदोषविचारस्मरणके उपकारी जे मनपणाकरि परिणये पुद्गल ते पुद्गलामयी हैंही॥

इहां कोई अन्यमती कहै है, जो, मन तौ न्यारा द्रव्य है, रूपादिपरिणामरहित है, अणुमात्र है, ताकूं पुद्गलमयी कहना अयुक्त है। ताकूं कहिये ए कहना युक्त है। ताकूं पूछिये, तैं मन न्यारा द्रव्य कह्या सो इन्द्रियकरि तथा आत्माकरि संबंधरूप है, कि असंबंधरूप है? जो असंबंधरूप है, तौ आत्माका उपकारी कैसैं होय? तथा इन्द्रियनिका मंत्रीपणां कैसैं करै? बहुरि संबंध है तौ यह अणुमात्र बताया सो आत्माके तथा इन्द्रियके एकप्रदेशमें रहता, अन्यप्रदेशनिविषैं उपकार नाहीं करै। बहुरि कहै, जो, आत्माके अदृष्टगुणके वशतैं याका आलातचक्रकीज्यों सर्वप्रदेशनिमैं परिभ्रमण है। ताकूं कहिये, जो, आत्माका अदृष्टगुण तौ आत्माकीज्यों अमूर्तिककी है, क्रियारहित है। सो ऐसा होतैं अन्यवस्तुविषैं क्रिया करावनेकी सामर्थ्यरहित है। जो आप क्रियावान्

स्पर्शवान् पवन है सो अन्य वनस्पति आदिकौं चलावनेका कारण देखिये है। अदृष्टगुण है सो पवनकीज्यों नाहीं। तातैं अन्यविषैं क्रियाका कारण नाहीं ॥

बहुरि वीर्यान्तराय ज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशम अंगोपांग नामा नामकर्मका उदयकी है अपेक्षा जाकैं ऐसा जो आत्मा ताकरि ऊंचा लिया जो कोठतैं पवन सो उच्छ्वास, ताकूं तौ प्राण कहिये। बहुरि तिसही आत्माकरि बाहिरका पवन अंतर किया सो निश्वास है, ताकूं अपान कहिये। ते दोऊही आत्माके उपकारी हैं, जीवितव्यके कारण हैं, तेभी पुद्गलमयी हैं। ऐसैं मन प्राण अपान ए मूर्तिक हैं। जातैं इनका मूर्तिकद्रव्यकरि प्रतिघात आदि देखिये है। तहां भयके कारण जे अशनिपात आदि शब्द तिनकरि मनका प्रतिघात देखिये ये है। बहुरि मदिरापान आदिकरि चित्तभ्रम होनेतैं अभिभव कहिये तिरस्कार कहूंका कहूं चला जाना देखिये है। बहुरि हस्ततैं मुख दाबनेतैं प्राण अपान कहिये उच्छ्वास निश्वासका प्रतीघात कहिये रुकना देखिये है। बहुरि श्लेष्मकफकरि अभिभव तिरस्कार देखिये है। जो ए अमूर्तिक होय तौ मूर्तिककरि नाही रुकै। बहुरि प्राण अपान आदि क्रिया हैं, तिनतैं आत्माका अस्तित्व जान्या जाय है। जैसैं कलकी पूतलीकी कलह लावनावाला पुरुष परोक्ष छिप्या कल फेरै, तब पूतली चेष्टा करै। तब जानिये

याकी कल फेरनेवाला कोई पुरुष परोक्ष है। ऐसैं शरीरकी श्वासोश्वास आदि चेष्टा आत्माका अस्तित्व जनावे है ॥

आगें जैसें ए शरीर वचन प्राणापान गमन बोलना विचारना उछ्वास लेना इन उपकारनविषें हैं; तैसें अन्यभी कोई उपकार है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥ २० ॥

याका अर्थ— सुख दुःख जीवना मरना एभी उपकार पुद्गलके जीवनिकूं हैं। साता असाता वेदनीयकर्मका उदय अंतरंगकारण होतैं अर बाह्य द्रव्य क्षेत्र काल भावके परिपाकके निमित्ततें उपज्या जो आत्माकैं प्रीतिरूप तथा क्लेशरूप परिणाम सो सुखदुःख है। बहुरि भवधारणकूं कारण जो आयुनामा कर्म ताके उदयतें भवविषें स्थितिरूप रहता जो जीव ताके पूर्वं कहे जे उछ्वासनिश्वासरूप क्रियाविशेष ताका विच्छेद न होना सो जीवित कहिये। बहुरि तिस जीवितव्यका विच्छेद होना सो मरण कहिये। ए च्यारि जीवनिके पुद्गलके किये उपकार हैं। जातैं ए मूर्तिकद्रव्यके निकट होतैं होय हैं। तातैं पुद्गलहीके कहिये ॥

इहां कोई कहै, उपकारका तौ अधिकार चल्या आवै है। इस सूत्रमें उपग्रहवचन निष्प्रयो-

जन है। ताकूं कहिये, निष्प्रयोजन नाहीं है। इहां पुद्गलकूं पुद्गलका उपकारभी दिखावना है, ताके अर्थि उपग्रहवचन है। जैसें कासी भस्मतें मांजे तब उज्वल होय है, तथा जलमें कतक कहिये निर्मली नांखे तब निर्मल होय, तातें लोहपरि जल क्षेपे तब शीतल होय इत्यादि पुद्गलकूं पुद्गल उपकार जानना। अथवा इस द्रव्यकर्मकूं द्रव्यकर्मका उपकार है, अर सुख आदि जीवकेभी परिणाम हैं ऐसाभी सूचै है। बहुरि इहां सूत्रमें चशब्द है सो जैसें शरीरादिक पुद्गलके जीवकूं उपकार हें तैसें नेत्र आदि इन्द्रियभी उपकार है, तिनका समुच्चयके अर्थि है। जो आत्माकूं एकांतकरि नित्यही कहे हैं तथा अनित्यही कहे हैं तिनके मतमें सुखादि आत्माकै नाहीं बणें हैं, स्वाद्वादीकरि सिद्ध होय है ॥

आगें ,पुद्गलका उपकार जीवनिकूं दिखाया, अजीवनिके जीवभी परस्पर उपकार करे हैं ताके दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— जीवनिकैभी परस्पर उपकार है। इहां परस्पर ऐसा शब्द है, सो कर्मव्यतिहार तथा क्रियाव्यतिहारमें वर्तें है। व्यतिहार कहिये वाका वह करै वाकूं वह करै, सो आपसमें जीवनिकै उपग्रह कहिये उपकार वर्तें है। सो कहा सोही कहिये है। स्वामीकै अर चाकरकै परस्पर उपकार

है। स्वामी तौ चाकरकूं धन आदि देनेकरि उपकार करै है। चाकर स्वामीके हितकी वार्ता कहिकरि अहितका निषेधकरि उपकार करै है। बहुरि आचार्यकै अरु शिष्यकै परस्पर उपकार है। आचार्य तौ शिष्यकूं दोऊ लोकके फलका उपदेशकौं दिखावनेकरि तथा तिस उपदेशकथित क्रियाका आचरण करावनेकरि उपकार करै हैं। बहुरि शिष्य आचार्यकौ अनुकूलप्रवृत्ति उपकार करै है॥

इहां कोई कहै है, उपकारका तौ अधिकार तौ चल्याही आवै है। सूत्रमें उपग्रहवचनं कौनअर्थि है? ताका समाधान, पहलैं कहे जे सुख आदिक च्यारि तिनके दिखावनेकूं उपग्रहवचन फेरि कह्या है। सुख आदिभी परस्पर जीवनिकै उपकार हैं। इहां परस्पर जीवनिके उपकार देखनेतैं ऐसाभी अनुमानप्रमाणकरि सिद्ध होय है, जो, जीव नानाही है एकही आत्मा नाहीं॥

आगैं, जो सत्तारूप वस्तु है सो उपकारसहित है, तहा कालद्रव्यभी सत्तास्वरूप है, तातैं ताका कहा उपकार है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥

याका अर्थ— वर्तना परिणाम क्रिया परत्वापरत्व ए कालके उपकार हैं। इहां वृति धातुकैं णिच् प्रत्यय प्रयोजनके हेतु कर्ताविषैं आवै है। ताके कर्मविषैं तथा भावविषैं युट् प्रत्ययतैं स्त्रीलिं-

गविषैं वर्तना ऐसा शब्द हो है। तहां धर्म आदिक द्रव्य हैं, ते अपने पर्यायनिकी उत्पत्तिरूप वर्तैं हैं, सो आपहीकरि वर्तैं हैं। सो तिस वर्तनाकूं बाह्यनिमित्त चाहिये। जातैं बाह्य उपकार निमित्तविना वर्तना होय नाहीं। तहां तिस वर्तनेका समय है सो कालका चिह्न है। तातैं तिस द्रव्यनिकै प्रवर्त्तावनेहारा कालद्रव्य है। तातैं तिस समयस्वरूप वर्तनाकूं कालका वर्तना कहिये। याकरि कालका निश्चय कीजिये है। इहां णिच् प्रत्ययका यह अर्थ जो वर्तावै सो काल है। इहां वर्तैं तौ सर्वद्रव्यनिके पर्याय हैं ताका हेतु कर्त्ता काल है॥

इहां कोई कहै है, जो, ऐसा है तौ कालकै क्रियावान्पणा आया। जैसैं शिष्य पढै है उपध्याय पढावै है तब दोऊ क्रिया हो है। ताकूं कहिये, इहां दोष नाहीं है। निमित्तमात्रके विषैंभी हेतु कर्त्ताका व्यपदेश है। जैसैं शीतकालमें अग्नितैं तपते शिष्य पढै है। तहां ऐसैंभी कहिये है, जो, कारी वाकी अग्नि पढावै है। तैसैं इहां कालकै हेतु कर्त्तापणा है। बहुरि पूछै है, ऐसा कालका समयका निश्चय कैसैं कीजिये? तहां कहिये है, समय आदि क्रियाविशेष तथा समय आदिकरि कीजिये जे पाक आदि कार्य तिनकूं समय तथा पाक इत्यादिक नाम प्रसिद्ध हैं। तिनकूं समयकाल तथा भातका पाककाल ऐसा आरोपण कीजिये है। भात अनुक्रमतैं पच्या है ताका

है। स्वामी तौ चाकरकूं धन आदि देनेकरि उपकार करै है। चाकर स्वामीकै हितकी वार्ता कहिकरि अहितका निषेधकरि उपकार करै है। बहुरि आचार्यकै अरु शिष्यकै परस्पर उपकार है। आचार्य तौ शिष्यकूं दोऊ लोकके फलका उपदेशकौं दिखावनेकरि तथा तिस उपदेशकथित क्रियाका आचरण करावनेकरि उपकार करै हैं। बहुरि शिष्य आचार्यकौ अनुकूलप्रवृत्ति उपकार करै है॥

इहां कोई कहै है, उपकारका तौ अधिकार तौ चल्याही आवै है। सूत्रमें उपग्रहवचनं कौंनअर्थि है? ताका समाधान, पहलैं कहे जे सुख आदिक च्यारि तिनके दिखावनेकूं उपग्रहवचन फेरि कह्या है। सुख आदिभी परस्पर जीवनिकै उपकार हैं। इहां परस्पर जीवनिकै उपकार देखनेतैं ऐसाभी अनुमानप्रमाणकरि सिद्ध होय है, जो, जीव नानाही है एकही आत्मा नाही ॥

आगैं, जो सत्तारूप वस्तु है सो उपकारसहित है, तहा कालद्रव्यभी सत्तास्वरूप है, तातैं ताका कहा उपकार है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥

याका अर्थ— वर्तना परिणाम क्रिया परत्वापरत्व ए कालके उपकार हैं। इहां वृति धातुकैं णिच् प्रत्यय प्रयोजनके हेतु कर्ताविषैं आवै है। ताके कर्मविषैं तथा भावविषैं युट् प्रत्ययतैं स्त्रीलिं-

गविषैं वर्तना ऐसा शब्द हो है। तहां धर्म आदिक द्रव्य हैं, ते अपने पर्यायनिकी उत्पत्तिरूप वर्तै हैं, सो आपहीकरि वर्तै हैं। सो तिस वर्तनाकूं बाह्यनिमित्त चाहिये। जातैं बाह्य उपकार निमित्तविना वर्तना होय नाहीं। तहां तिस वर्तनेका समय है सो कालका चिह्न है। तातैं तिस द्रव्यनिकैं प्रवर्त्तावनेहारा कालद्रव्य है। तातैं तिस समयस्वरूप वर्तनाकूं कालका वर्तना कहिये। याकरि कालका निश्चय कीजिये है। इहां णिच् प्रत्ययका यह अर्थ जो वर्तावै सो काल है। इहां वर्त्तै तौ सर्वद्रव्यनिके पर्याय हैं ताका हेतु कर्त्ता काल है॥

इहां कोई कहै है, जो, ऐसा है तौ कालकै क्रियावान्पणा आया। जैसैं शिष्य पढै है उपध्याय पढावै है तब दोऊ क्रिया हो है। ताकूं कहिये, इहां दोष नाहीं है। निमित्तमात्रके विषैंभी हेतु कर्त्ताका व्यपदेश है। जैसैं शीतकालमें अग्नितैं तपते शिष्य पढै है। तहां ऐसैंभी कहिये है, जो, कारी बाकी अग्नि पढावै है। तैसैं इहां कालकै हेतु कर्त्तापणा है। बहुरि पूछै है, ऐसा कालका समयका निश्चय कैसैं कीजिये? तहां कहिये है, समय आदि क्रियाविशेष तथा समय आदिककरि कीजिये जे पाक आदि कार्य तिनकूं समय तथा पाक इत्यादिक नाम प्रसिद्ध हैं। तिनकूं समयकाल तथा भातका पाककाल ऐसा आरोपण कीजिये है। भात अनुक्रमतैं पच्या है ताका

पचनेका क्रम कालका सूक्ष्म अंशका अनुमानतैं निश्चय भया है। ताकूं काल ऐसा नाम कहिये है। सो यह व्यवहारकाल है। ताका नामकूं निमित्त जो निश्चयकाल ताका अस्तित्व जनावै है। जातैं गौण होय सो मुख्यविना होय नाहीं ॥

इहां भावार्थ ऐसा, जो, धर्म आदि द्रव्यनिके पर्याय समयसमय पलटैं हैं। सो इस पलटनिकूं समय है सोही निमित्तमात्र है। तिस समयहीकूं कालकी वर्तना कहिये है। यह वर्तनाही कालाणुद्रव्यका अस्तित्व जनावै है। बहुरि इस वर्तनाकूं जेतीवार लागी ताका नाम काल कहिये। सो यह व्यवहारकालसंज्ञा है, सो तिस निश्चयकालकी अपेक्षाहीतैं कहिये है। ऐसैं यह वर्तना द्रव्यनिकूं कालका उपकार है। बहुरि द्रव्यका पर्यायकूं परिणाम कहिये। कैसा है पर्याय? पहली अवस्थाकूं छोडि दूसरी अवस्थारूप भया है। बहुरि क्षेत्रसूं क्षेत्रांतरविषैं चलनरूप नाहीं है। तहां जीवकै तौ क्रोधआदि परिणाम हैं। बहुरि पुद्गलकें वर्णआदि परिणाम हैं। धर्म अधर्म आकाशकें अगुरुलघुगुणकी हानिवृद्धिरूप होना परिणाम है। बहुरि क्रिया क्षेत्रतैं अन्य क्षेत्रविषैं चलनेरूप है। सो दोयप्रकार है, प्रायोगिकी वैस्रसिकी। तहां प्रायोगिकी तौ अन्यके प्रयोगतैं होय है। जैसैं बलध आदिक प्रयोगतैं गाडा आदि चालै। बहुरि वैस्रसिकी विनानिमित्त होय है। जैसैं

मेघ आदिकें वादल स्वयमेव चालैं। बहुरि परत्व अपरत्व दोयप्रकार है, क्षेत्रकृत कालकृत। सो इहां कालका उपकारका प्रकरण है। तातैं कालकृत लेणें। बहुतकाल लगै ताकूं तौ परत्व कहिये। अल्पकालका होय ताकूं अपरत्व कहिये। ऐसें ए वर्तना आदि कालके उपकार हैं, सो कालके अस्तित्वकूंभी जनावै हैं ॥

इहां तर्क जो, वर्त्तनाहीके भेद परिणाम आदि हैं। तातैं एक वर्तनाही कहना था। तिनका जुदा ग्रहण अनर्थक है। ताका समाधान, जो, अनर्थक नाहीं है। इहां काल दोयप्रकारके सूचनेके अर्थि विस्तार कह्या है। काल दोयप्रकार है, निश्चयकाल व्यवहारकाल। तहां निश्चयकाल तौ वर्त्तनालक्षण है। व्यवहारकाल परिणामादिलक्षण है। यह व्यवहारकाल अन्यपदार्थकरिही तौ जान्या जाय है। सूर्यादिकके उदयअस्ततें दिन आदिक जानिये है। बहुरि अन्यके जनावनेकूं कारण है। यातें निश्चयकाल जान्या जाय है। ऐसा क्रियाविशेषकूं काल ऐसा नाम व्यवहारकाल कहिये है। सो तीन प्रकारका है, भूत वर्तमान अनागत ऐसें। तहां परमार्थ काल जो निश्चयकाल एकएक आकाशके प्रदेशविषें तिष्ठते कालाणु तिनकूं काल कहना, सो तौ मुख्य है। अर भूत आदि नाम कहिये सो गौण है। व्यवहारकालविषें भूत आदि नाम है सो मुख्य है। अर काल

कहना गौण है। जातैं यह क्रियावान् जो अन्यद्रव्य ताकी अपेक्षातैं काल नाम पाया है तथा निश्चयकालकरि कीया है। तातैं काल नाम है, ऐसैं जानना ॥

इहां परिणामकी चर्चा वार्तिकमें विशेष है, तहांतैं जाननी। तहां कही है, जो, द्रव्यके निजस्वभावकूं न छोडीकरि पर्याय पलटना सो परिणाम है। सो दोयप्रकार है, एक नैमित्तिक एक स्वाभाविक। तहां जीवके तौ औपशमिक आदि पांच भावरूप हैं। पुद्गलके घटादि अनेकरूप हैं। धर्मद्रव्यादिककें अगुरुलघुगुणके हानिवृद्धिपर्यायरूप है। इहां अन्यमती कहै हैं, जो, परिणाम तौ निर्बाध संभवै नाहीं। जातैं सत्रूप कहिये तौ विद्यमानकें पलटना नाहीं। असत् कहिये तौ अभावही आया। ताकूं कहिये, स्याद्वादपक्षसूं परिणामकी सिद्धि है। द्रव्यअपेक्षा सत् है। पर्यायापेक्षा असत् है। जैसैं मृत्तिका द्रव्य है, पिंड घट आदि पर्याय हैं। तहां पिंडका घट भया तामें द्रव्यापेक्षया पिंडमें माटी है, पर्यायापेक्षया पिंडही कहिये। बहुरि पिंडतैं घट भया तब द्रव्यापेक्षया घटमें माटीका पिंड कहिये, पर्यायापेक्षया घटही है, पिंड नाहीं हैं इत्यादि दृष्टांत प्रसिद्ध हैं।

बहुरि पूछै, जो, द्रव्यतैं परिणाम अन्य हैं कि अनन्य हैं? जो अन्य हैं, तौ द्रव्यमें नाहीं। अनन्य है तौ द्रव्यही हैं, परिणाम नाहीं। इहांभी पूर्वोक्तही उत्तर है। बहुरि कहै, द्रव्यविषैं परि-

णाम तिष्ठै है, कि नाही? जो तिष्ठै है, तौ एक परिणाम एककालमें है सोही है, तामैं दूजा परिणाम नाहीं। बहुरि नाहीं तिष्ठै है, तौ अभाव आया। तहांभी सोही उत्तर, जो, द्रव्य है सो त्रिकालस्वरूप है, सो क्रमतें होतें जे परिणाम तिनमैं एककाल एकही परिणाम है, सो पर्याय कहिये। जब द्रव्यदृष्टिकरि देखिये तब सर्वपरिणामानिकी शक्ति लिये द्रव्य कहिये, तिनकी शक्ति क्रमतैंही होय है। सो शक्तिअपेक्षा सर्वपरिणाम द्रव्यमें तिष्ठै हैं, व्यक्तिअपेक्षा एककाल एक है, तामैं दूजी नाहीं है। ऐसैं द्रव्यमैं तिष्ठैभी है, नाहींभी तिष्ठै हैं। ऐसैं स्याद्वाद जानना। इत्यादि अनेक विधिनिषेधकरि चरचा है। तहां स्याद्वादही निर्बाधसिद्ध होय, सर्वथा एकान्तपक्ष निर्बाध नाहीं ॥

आगें पूछै है, धर्म अधर्म आकाश पुद्गल जीव काल इनका उपकार कहे। बहुरि लक्षणभी कह्या। बहुरि पुद्गलनिका सामान्यलक्षण तौ कह्या। अर विशेपलक्षण न कह्या। सो कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— पुद्गल हैं ते स्पर्श रस गंध वर्ण इन च्यारि गुणनिकरि सहित हैं। तहां जाकं स्पर्शिये अथवा जो स्पर्शना सो स्पर्श है, सो आठप्रकार है। कोमल कठिन भाऱ्या हलका

शीत उष्ण चीकणा रूखा ऐसैं। बहुरि जाकूं स्वाद लीजिये अथवा जो स्वादमात्र सो रस है। सो पंचप्रकार है। तीखा खाटा कडा मीठा कसायला ऐसैं। बहुरि जाकूं सूंघिये अथवा सूंघना सो गंध है। सो दोयप्रकार है। सुगंध दुर्गंध ऐसैं। बहुरि जाकूं वर्णरूप देखिये अथवा वर्णरूप होना सो वर्ण है। सो पांचप्रकार है। काला, नीला, पीला, धोला, लाल ऐसैं। एते ए मूलभेद हैं इनके उत्तरभेद न्यारेन्यारेके कीजिये। तब स्थानकनिकी अपेक्षा तौ संख्यात असंख्यात हैं। बहुरि अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा अनंतभी हैं। ए जिनकैं होंय ते पुद्गल हैं। इहां नित्ययोगविषैं वत्प्रत्यय है। जैसैं वड हैं ते दूधसहित हैं, ताकूं 'क्षीरिणो न्यग्रोधा' ऐसा कहिये। ऐसैं प्रत्यक्षका अर्थ है॥

इहां तक, जो, पूर्व सूत्रमें 'रूपिणः पुद्गलाः' ऐसा कह्या है। तातैं रूपतैं अविनाभावी जो रसादिक तिनका ग्रहण तिसही सूत्रतैं होय है, यह सूत्र अनर्थक है। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है। तहां तौ 'नित्यावस्थितान्यरूपाणि' [illegible] धर्मादिक अरूपी कहे तहां [illegible] करनेंकूं [illegible] सूत्र [illegible]। बहुरि इहां यह सूत्र तिन पुद्गलनि[illegible] परिणाम [illegible] जाननेंकूं है। इहां अन्यमती कहै है [illegible] पृथ्वी आदिके परमाणु जातिभेदरूप हैं। तहां ज[illegible] तौ गंधगुण नाहीं है। अग्निकेविषैं गंध रस [illegible] दोऊ नाहीं हैं।

पवनके विषैं रस गंध रूप ए तीनि गुण नाहीं हैं ऐसा कहै हैं, तिनका निषेध इस सूत्रमें भया। जातैं पृथ्वी जल अग्नि पवन ए च्यार्योंही पुद्गलद्रव्यके विकार हैं, पुद्गल हैं ते स्पर्श आदि च्यार्योंही गुणनिसहित हैं। पृथ्वीआदिविषैं च्यार्यों गुण अनुमान आगमप्रमाणकरि सिद्ध होय हैं। बहुरि पृथ्वीतैं जल होना, जलतैं पृथ्वी होना, पाषाण काष्ठतैं अग्नि होना, अग्नितैं पृथ्वी होना इत्यादि जातिसंकर देखिये है। तातैं अन्यमतीका कहना प्रमाणसिद्ध नाहीं हैं ॥

आगैं तिस पुद्गलहीके विकारके विशेषके जनानेकूं सूत्र कहे हैं—

॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायाऽऽतपोद्योतवन्तश्च ॥ २४ ॥

याका अर्थ— शब्द बंध सौक्ष्म्य स्थौल्य संस्थान भेद तम छाया आतप उद्योत इनसहित हैं तेभी पुद्गल हैं। तहां शब्द दोयप्रकार हैं, भाषास्वरूप अभाषास्वरूप। तहां भाषास्वरूप दोयप्रकार है, अक्षरसहित अक्षररहित। तहां अक्षरसहित तौ संस्कृत देशभाषारूप आर्य म्लेच्छके व्यवहारकूं कारण शास्त्रका प्रगटकरणहारा है। बहुरि अक्षररहित द्वीन्द्रिय आदि जीवनिकैं पाईये है। सो सूक्ष्मज्ञानके स्वरूप कहनेकूं कारण है। सो यह भाषास्वरूप तौ सर्वही प्रायोगिक है, पुरुषके प्रयत्नतैं होय है। बहुरि अभाषास्वरूप शब्द है सो दोयप्रकार है, प्रायोगिक वैस्रसिक। तहां वैस्रसिक

तौ बलाहक कहिये मेघका गर्जना आदिक है। बहुरि प्रायोगिक च्यारि प्रकार है। तत वितत घन सुपिर ऐसें। तहां चर्मके तवनेतैं ढोल नगारे ढफ आदिकरि उपजै सो तौ तत कहिये। बहुरि तांति तारकरि वीण सुघोप सहतार तमूरे आदिकरि उपजै सो वितत है। बहुरि ताल घंटाका हलावना आदिकरि होय सो घन है। बहुरि वंशुरी शंख आदितैं उपजै सो सुपिर है॥

बहुरि बंध दोयप्रकार है, वैस्रसिक प्रायोगिक। तहां पुरुषके प्रयत्नकी अपेक्षातैं रहित होय, सो वैस्रसिक है। सो रूक्ष सचिकण गुणके निमित्ततैं बीजिली उल्का आदि अरु इन्द्रधनुष आदि होय है। बहुरि पुरुषके प्रयत्नतैं होय सो प्रायोगिक है। सो अजीवसंबंधी तौ लाखकै अर काष्ठकै बंधान होय, सो है। बहुरि कर्मनोकर्मका बंधान होय है, सो जीव अजीव दोयसंबंधी है॥

बहुरि सूक्ष्म दोयप्रकार है, अन्त्य आपेक्षिक। तहां परमाणु तौ अन्त्यसूक्ष्म है। बहुरि बीलफलतैं सूक्ष्म आंवला तिनतैं सूक्ष्म बोर इत्यादि आपेक्षिक सूक्ष्म है॥

बहुरि स्थौल्यभी दोयप्रकार है, अन्त्य आपेक्षिक। तहां जगद्व्यापी महास्कंध तौ अंत्य स्थौल्य है। बहुरि बोरतैं बडा आंवला, आवलातैं बडा बीलफल, बीलतैं बडा तालफल. इत्यादि आपेक्षिक स्थौल्य है॥

संस्थान कहिये आकार, सो दोयप्रकार है इत्थंलक्षण अनित्थंलक्षण। तहां गोल तिकूंणा चौकूंणा लंबा इत्यादि तौ इत्थंलक्षण है, ऐसा है ऐसैं कह्या जाय है। बहुरि अनित्थंलक्षण है, सो अनेकप्रकार है। सो वादलनिके आकार आदि है। सो कैसें हैं, ऐसैं कहे जाते नाही॥

बहुरि भेद छहप्रकार है, उत्कर चूर्ण खंड चूर्णिका प्रतर अणुचटन ऐसैं। तहां काष्ठआदिकूं करोतआदिकरि विदारिये सो उत्कर है। बहुरि जो गोहूं आदिका चून होय सो चूर्ण है। बहुरि घट आदिका कपाल आदि होय सो खंड है। बहुरि उडद मूग आदिकी दाल आदि होय सो चूर्णिका है। बहुरि मोडल आदिके पत्र उतारिये सो प्रतर है। बहुरि लोहका पिंड अग्नितैं तपाय घणकी चोट दे तब फुलिंगा उछलै ताकूं अणुचटन कहिये। ऐसैं छह भये॥

बहुरि तम है सो प्रकाशका विरोधी दृष्टिका प्रतिबंधका कारण है, ताकूं अंधेरा कहिये है॥

बहुरि छाया प्रकाशका आवरणका कारण है। सो दोयप्रकार है। तहां काचविषैं मुखका वर्णादिरूप परिणवना इत्यादिक सो तद्वर्ण परिणत कहिये। बहुरि दूजी प्रतिबिंबस्वरूपही है॥

बहुरि आतप सूर्यका निमित्ततैं उष्णप्रकाश होय सो कहिये॥

बहुरि उद्योत चंद्रकांतमणिका उजाला तथा आगाका चमकणा इत्यादिक है। एते शब्द

आदि पुद्गलके विकार हैं। ए जिनकैं होय ते सर्व पुद्गल हैं ॥

बहुरि सूत्रमें चशब्द है तातैं प्रेरणा अभिघात आदिभी जाकैं होय तेभी लेणा। ते आगममें प्रसिद्ध हैं, तिनका समुच्चय करे हैं। इहां केई अन्यमती शब्दकूं आकाशका गुण कहै हैं। केई अमूर्तिक द्रव्य कहे हैं। केई स्फोटस्वरूप कहे हैं। सो यह कहना प्रमाणसिद्ध नाहीं। शब्द है सो श्रोत्रइन्द्रियका विषय है। आकाश अमूर्तिक है तातैं ताका गुण नाहीं। तथा अमूर्तिक द्रव्यभी नाहीं। बहुरि स्फोटरूप कहै सो अर्थका प्रगट करनेवाला स्फोट तौ वक्ताका ज्ञान है। अर शब्द श्रवणमें आवै है, सो है, अन्य कछू न्यारा स्फोट प्रमाणसिद्ध नाहीं। तातैं पुद्गलद्रव्यका पर्याय कहनाही प्रमाणसिद्ध है। याकी चरचा वार्तिकमें विशेषकरि है, तहांतै जाननी ॥

आगैं कहे जे पुद्गलद्रव्य तिनके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥ २५ ॥

याका अर्थ— पुद्गलद्रव्यके अणु स्कंध ऐसैं दोय भेद हैं। तहां एकप्रदेशमात्र है अर स्पर्श-आदि पर्यायनिकी उपजावनेकी सामर्थ्ययुक्त है, ऐसैं अण्यन्ते कहिये कहनेमें आवैं ते अणु हैं। सूक्ष्मपणातैं आपही तौ जिनकै आदि है आपही अंत है आपही मध्य है। इहां उक्तंच गाथा है,

ताका अर्थ; जाके आपही आदि है आपही मध्य है आपही अंत्य है इन्द्रियगोचर नाहीं है, जाका दूसरा विभाग नाहीं होय है ऐसा परमाणु द्रव्य जानूं ॥ बहुरि स्थूलपणाकरि जाकैं ग्रहणनिक्षेपणरूप व्यापारका स्कंधन होय ताकी स्कंध ऐसी संज्ञा उपजै है, इहां दोय अणुआदिके स्कंधके ग्रहणनिक्षेपणाके व्यापारकी योग्यता नाहीं है तौभी रूढिके वशतैं स्कंधसंज्ञा जाननी। रूढिविषै क्रिया कहूं एक हुई सती उपलक्षणपणाकरि आश्रय कीजिये है। बहुरि पुद्गलनिके अनंत भेद हैं। तोऊ अणु स्कंध इन दोऊमें जाति अपेक्षा गर्भित है, तिसही अर्थि सूत्रमें दोऊकै बहुवचन है। बहुरि दोय भेदका कहना पूर्वै दोय सूत्र कहे तिनकाभी संबंध जनावै है। अणु हैं ते तौ स्पर्श रस गंध वर्णवान् हैं। बहुरि स्कंध हैं ते स्पर्श रस गंध वर्णवानभी हैं अर शब्द बंध सौक्ष्म्य स्थूल संस्थान भेद तम छाया आतप उद्योतवान्भी हैं। बहुरि परमाणु अतीन्द्रिय हैं। तिनका अस्तित्व शरीर इन्द्रिय पृथ्वी आदि स्कंधनामा कार्यनितैं जानिये है। जातैं कार्यतैं कारणका अनुमान होय है। ए स्कंध हैं ते परमाणुनिके कार्य हैं ॥

बहुरि अनंतपरमाणु बंधानरूप होय सो स्कंध है ताका आधा स्कंधदेश कहिये। ताकाभी आधा स्कंधप्रदेश कहिये। तिनकेही भेद पृथिवी अप तेज वायु आदिक हैं ॥

आगें पूछै है, इन पुद्गलनिकैं अणुस्कंधलक्षण परिणाम है, सो अनादिका है, कि आदिमान् है? ताका उत्तर, जो, उत्पत्तिअपेक्षा आदि मानै है। फेरि पूछै है, सो जो आदि मानै है, तौ कौन निमित्ततैं उपजै है? सो कहो। तहां प्रथमही स्कंधनिकी उत्पत्तिका कारण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥ २६ ॥

याका अर्थ— पुद्गलनिके स्कंध हैं ते भेदतैं तथा संघाततैं उपजै हैं। तहां बाह्य अभ्यंतर निमित्तके वशतैं स्कंध विदारे जाय सो भेद है। बहुरि न्यारे न्यारे होय तिनका एकपणां होना सो संघात है। इहां दोऊके बहुवचन है सो तीसरेके ग्रहणके अर्थि है। भेदतैं संघाततैं भेदसंघाततैं ऐसैं तीनि हेतुतैं स्कंध उपजै हैं। सोही कहिये है। दोय परमाणुके संघाततैं दोय प्रदेशका स्कंध उपजै है। दोय प्रदेशका स्कंध अर एक परमाणु मिलै तीनि प्रदेशका स्कंध उपजै। तथा तीनि परमाणु मिलैभी तीनि प्रदेशका स्कंध उपजै है। बहुरि दोय स्कंध दोय दोय परमाणुके मिलै। तथा एक तीनि परमाणुका स्कंध अर एक परमाणु मिलै। तथा च्यारि परमाणु खुली मिलै तब च्यारि परमाणुका स्कंध निपजै। ऐसेही संख्यात असंख्यात अनंत अंनंतानंतके संघाततैं तिन

परमाणुनिके स्कंधनिकी उत्पत्ति है। बहुरि तैसैं स्कंधनिके भेद होतैं दोय प्रदेशके स्कंधतांई स्कंध उपजै है। बहुरि ऐसैही कोई स्कंधका तौ भेद हुवा अरु अन्य स्कंधतैं तिसही काल संघात हुवा, ऐसैं भेदसंघाततैं स्कंध उपजै हैं। ऐसैं स्कंधनिकी उत्पत्ति कही ॥

आगें परमाणुनिकी उत्पत्तिका कारण दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ भेदादणुः ॥ २७ ॥

याका अर्थ— परमाणु है सो भेदहीतैं उपजै है, संघाततैं नाहीं उपजै है। इहां अणु भेदहीतैं उपजै है, ऐसी सिद्धी तौ पहले सूत्रकी सामर्थ्यहीतैं होय है। फेरि यह सूत्र है सो अणुभेदहीतैं होय है, संघाततैं नाहीं होय है, ऐसा नियमके अर्थि है। जातैं व्याकरणविषैं परिभाषासूत्र ऐसैं है, सो सिद्ध भये पीछैं फेरि जाकी विधि करिये सो नियमके अर्थि है, ऐसैं जानना ॥

आगें पूछै है, जो संघाततैंही स्कंधनिकी उत्पत्ति सिद्ध भई बहुरि भेदसंघातग्रहणका कहा प्रयोजन है? ऐसैं पूछैं ताका प्रयोजन दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ भेदसङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥

याका अर्थ— नेत्रगोचर जो स्कंध होय है सो भेदसंघात दोऊतैं होय है। स्कंध है सो अनं-

तानंतपरमाणुनिकरि उपजै है। तौऊ कोई इन्द्रियगोचर होय है। कोई इन्द्रियगोचर नाहीं होय है। तहां जो इन्द्रियगोचर नाहीं है, सोही कैसें इन्द्रियगोचर होय है? तहां कहिये, जो, भेद संघात इन दोऊनितैं चाक्षुष होय है भेदतैं न होय है। इहां चाक्षुष कहनेतैं इन्द्रियनिकरि ग्रहणमैं आवने योग्य होय सो लेणा। सो उत्पत्ति कैसे है? सो कहिये है। जो सूक्ष्मपरिणाम स्कंध है, ताका भेद होतैं तौ सूक्ष्मपणाकूं छोडै नाहीं। तातैं सूक्ष्म इन्द्रियनितैं अगोचरही रहै। बहुरि कोई सूक्ष्म परिणया स्कंध होय ताका भेद होतैं अन्य जो स्कंध होय तातैं संघातरूप होय मिलै। तब सूक्ष्म-परिणामकूं छोडि स्थूलपणाकी उत्पत्तितैं चाक्षुष होय है॥

आगैं पूछे है, धर्म आदिक द्रव्यनिके विशेषलक्षण तौ कहे। तथापि सामान्य द्रव्यका लक्षण न कह्या, सो कह्या चाहिये। ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सत् द्रव्यलक्षणम् ॥ २९ ॥

याका अर्थ— द्रव्यका लक्षण सत् है। जो सत् है सोही द्रव्य है ऐसा जानना। यह सामान्यअपेक्षाकरि द्रव्यका लक्षण है। जातैं सर्वद्रव्य सतमयी हैं॥ आगैं पूछे है, जो, ऐसे है सत् द्रव्यका लक्षण है तौ सत् कहा है? सोही कहो। ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ ३० ॥

याका अर्थ— उत्पाद व्यय ध्रौव्य तीनूंकरि युक्त है सो सत् है। तहां चेतन तथा अचेतन द्रव्यकै अपनी जातिकूं नाहीं छोडनेके निमित्तके वशतैं एकभावतैं अन्यभावकी प्राप्ति होना सो उत्पाद है। जैसैं मांटीके पिंडकै घटपर्याय होनां। तैसैंही पहले भावका अभाव होना सो व्यय है। जैसैं घटकी उत्पत्ति होतैं पिंडके आकारका नाश होना। बहुरि ध्रुवका भाव तथा कर्म होय ताकूं ध्रौव्य कहिये। जैसैं मांटीका पिंड तथा घट आदि अवस्थाविषैं मांटी है सो अन्वय कहिये। सो पिंडमें था सोही घटमें है तैसैं। ऐसैं उत्पाद व्यय ध्रौव्य इन तीनूंहीकरि युक्त होय सो सत् है ॥

इहां तर्क, जो, युक्तशब्द तौ जहां भेद है तहां देखिये है। जैसैं दंडकरि युक्त देवदत्त कहिये कोई पुरुष होय ताकूं दंडयुक्त कहिये है। जो ऐसैं तीनि भाव जुदेजुदेनिकरि युक्त है तौ द्रव्यका अभाव आवै है। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है। जातैं अभेदविषैंभी कथंचित् भेदनयकी अपेक्षाकरि युक्तशब्द देखिये है। जैसैं सारयुक्त स्तंभ है। इहां स्तंभतैं सार जुदा नाहीं, तौ युक्तशब्द देखिये है। तैसैं उत्पाद व्यय ध्रौव्य इन तीनूंका अविनाभावतैं सत्का लक्षण बणै है। अथवा युक्तशब्दका समाहितभी अर्थ होय है। युक्त कहिये समाहित तदात्मक तत्स्वरूप ऐसाभी

अर्थ है। तातैं उत्पाद व्यय ध्रौव्यस्वरूप सत् है, ऐसा अर्थ निर्दोष है। तातैं इहां ऐसा सिद्ध होय है, जो, उत्पाद आदि तीनि तौ द्रव्यके लक्षण हैं। अरु द्रव्य लक्ष्य है। तहां पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षाकरि तौ तीनूही द्रव्यतैं तथा परस्पर अन्यअन्य पदार्थ हैं। बहुरि द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षाकरि जुदे नाहीं दीखै हैं। तातैं द्रव्यतैं तथा परस्पर एकही पदार्थ है। ऐसैं भेदाभेदनयकी अपेक्षाकरि लक्ष्यलक्षणभावकी सिद्धि हो है॥

इहां कोई कहै है, जो, ध्रौव्य तौ द्रव्यका लक्षण अर उत्पाद व्यय पर्यायका लक्षण ऐसैं कहना था, यामैं विरोध न आवता, त्रयात्मक द्रव्यहीका लक्षण कहनेमें विरोध है। ताका समाधान जो, ऐसैं कहना अयुक्त है। जातैं सत्ता तौ एक है सोही द्रव्य है। ताके अनंत पर्याय हैं। द्रव्यपर्यायकी न्यारी न्यारी दोय सत्ता नाहीं है। बहुरि एकान्तकरि ध्रौव्यहीकूं सत् कहिये तौ उत्पादव्ययरूप प्रत्यक्ष व्यवहारकै असत्पणां आवै। तब सर्व व्यवहारका लोप होय। तथा उत्पादव्ययरूपरूपही एकान्तकरि सत् कहिये तौ पूर्वापरका जोडरूप नित्यभावविनाभी सर्वव्यवहारका लोप होय। तातैं त्रयात्मक सतही प्रमाणसिद्ध है, ऐसाही वस्तुस्वभाव है, सो कहनेमें आवै है॥

आगै पूछै है कि 'नित्यावस्थितान्यरूपाणि' इस सूत्रमें नित्य कह्या, सो नित्यका स्वरूप न

जान्या, सो कहो? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— तद्भाव कहिये जो पहले समय होय सोही दूसरे काल होय सो तद्भाव है, सोही नित्य कहिये। जो पूर्वं था सोही यहू अब वर्तमानमें है ऐसा जोडरूप ज्ञान सो प्रत्यभिज्ञान कहिये। तिसका कारण जो वस्तुमें भाव सो तद्भाव कहिये। यहू प्रत्यभिज्ञान है। सो विनाहेतु अकस्मात् न होय है। वस्तुमें तद्भाव है ताकूं जाने है, तातें यहू सिद्ध होय है, जो, जिस स्वरूपकरि पहलें वस्तु देख्या तिसही स्वरूपकरि वर्तमानविषैंभी देखिये है। जो पहलें था, ताका अभावही भया मानिये। बहुरि नवाही उपज्या मानिये तौ स्मरणका अभाव होय, तब जो स्मरणके आधीन लोकव्यवहार सो विरोध्या जाय है। तातैं ऐसा निश्चय है, जो, तद्भावकरि अव्ययरूप है सो नित्य है। सो यहू कथंचित् जानना। सर्वथा नित्य कहतें कूटस्थके पर्याय पलटनेका अभाव ठहरै है। तब संसारं तथा तिसकी निवृत्तिके कारणका विधानका विरोध आवै। इहां तर्क, जो, सोही वस्तु नित्य सोही अनित्य ऐसैं कहनेमें तौ विरोध है। ताका समाधान करै है, जो, यह विरुद्ध नाहीं है। जातें ऐसा कहिये है, ताका सूत्र कहैं हैं—

॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— अर्पित कहिये जो मुख्य करिये सो, तथा अनर्पित कहिये जो गौण करिये सो, इन दोऊ नयकरि अनेकधर्मस्वरूप वस्तुका कहना सिद्ध होय है। तहां अनेक धर्मस्वरूप जो वस्तु ताकूं प्रयोजनके वशतैं जिस कोई एकधर्मकी विवक्षाकरि पाया है प्रधानपणा जानैं सो अर्पित कहिये ताकूं उपनीत अभ्युपगत ऐसाभी कहिये। भावार्थ– जिस धर्मकूं वक्ता प्रयोजनके वशतैं प्रधानकरि कहै सो अर्पित है, यातैं विपरीत जाकी विवक्षा न करै सो अनर्पित है। जातैं जाका प्रयोजन नाहीं ' बहुरि ऐसा नाहीं, जो, वस्तुमें धर्म नाहीं। ताकूं गौणकरि विवक्षातैं करै है। जातैं विवक्षा तथा अविवक्षा दोऊही सत्की होय है। तातैं सत्‌रूप होय ताकूं प्रयोजनके वशतैं अविवक्षा करिये सो गौण है। तातैं दोऊमें वस्तुकी सिद्धि है। यामें विरोध नाहीं है। इहां उदाहरण, जैसैं पुरुषके पिता पुत्र भ्राता भाणिजो इत्यादि संबंध हैं ते जनकपणां आदिकी अपेक्षातैं विरोधरूप नाहीं। जातैं अर्पणका भेदतैं पुत्रकी अपेक्षा तौ पिता कहिये। बहुरि तिसही पुरुषकूं पिताकी अपेक्षा पुत्र कहिये भाईकी अपेक्षा भाई कहिये मामांकी अपेक्षा भाणिजो कहिये इत्यादि। तैसैंही वस्तुकी सामान्यअर्पणातैं नित्य कहिये। विषेशअर्पणातैं अनित्य कहिये। यामें विरोध नाहीं। बहुरि

ते सामान्यविशेष हैं। ते कथंचित् भेदअभेदकरि व्यवहारके कारण होय हैं॥

इहां सत् असत् एकानेक नित्यानित्य भेदाभेद इत्यादि अनेक धर्मात्मक वस्तुके कहनेमें अन्यमती विरोध आदि दूपण वतावें हैं। तहां सत् असत् दोऊ एकवस्तुविषैं कहिये तौ दोऊ प्रतिपक्षी हैं, तिनकै विरोध आवैही। तथा दोऊनिका एक आधार कैसैं होय? तातैं वैयाधिकरण्य दूपण आवै है। दोऊकै एक आधारका अभाव है। वहुरि परस्पराश्रय कहिये सत् असत्कै आश्रय कहिये, तौ पहले असत् होय तौ आश्रय वणै। सो असत्कूं सत्कै आश्रय कहतैं पहली सत् नाहीं है। ऐसैं दोऊका अभावरूप परस्पर आश्रय नामा दूपण है। वहुरि सत् काहेकरि है? तहां कहिये असत्करि है। तहां पूछिये है, असत् काहेकरि है तहां कहैं? अन्य सत्करि। फेरि पूछिये है, अन्य सत् काहेकरि है? त.ां कहै, अन्य असतकरि। ऐसैं कहूं ठहरना नाहीं। तातैं अनवस्थादूपण है। वहुरि सत्में असन् मिलै असत्में सत् मिलै, तन व्यातिकरदूपण है। वहुरि सत्तैं असत् होय जाय, असत्तैं सत होय जाय, तहां संकरदूपण है। वहुरि सत्की प्रतिपत्ति होय तहां असत्की प्रतिपत्ति नाहीं। असत्की प्रतिपत्ति है, तहां सत्की प्रतिपत्ति नाहीं। ऐसैं अप्रातिपत्तिदूपण है। वहुरि सत् होतैं असत्का अभाव, असत् होतैं सत्का अभाव, ऐसैं अभाव नामा दूपण है। ऐसैंही ए आठ दूपण

सर्व विरुद्धपक्षमें आवें हैं। तातें विरोधरूप अनेकधर्मस्वरूपकी सिद्धि नाहीं ॥

ऐसें दूषण बतावे। ताकूं कहिये, जो, ये दूषण जे सर्वथा एकान्तपक्षकरि ऐसें अनेकधर्म वस्तु कहैं, तिनकै आवे हैं। बहुरि अनेकधर्मविरुद्धरूप एकवस्तुमें संभवे हैं, तिनकूं द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नयकी अर्पणका विधानकरि प्रयोजनके वशतें मुख्यगौणकरि कहिये। तामें दूषण नाहीं। स्याद्वाद बडा बलवान् है, जो, ऐसैंभी विरोधरूपकूं अविरोधरूपकरि कहै है। सर्वथा एकांतकी यह सामर्थ्य नहीं, जो, वस्तुकूं साधे। जैसा कहैगा, तैसैंही दूषण आवेगा। तातैं स्याद्वादका शरणा ले वस्तुका यथार्थज्ञानकरि श्रद्धानकरि हेयोपादेय जानि हेयतें छूटि उपादेयरूप होय वीतराग होना योग्य है, यह श्रीगुरुनिका उपदेश है ॥

आगें पूछें है कि, सत्कै अनेकनयका व्यवहारका आधीनपणा है। तातें स्कंधनिकै भेदसंघाततें उत्पत्ति बणै है। परन्तु यह संदेह रह्या, जो, दोय परमाणुका आदिका संघात होय है। सो संयोगमात्रतेंही होय है, कि कोई और विशेष है? ऐसें पूछे कहै है, जो, संयोग होतें एकत्वपणारूप बंधानतें संघातकी निष्पत्ति होय है। फेरि पूछै है, जो, ऐसें है तौ पुद्गल जातिकूं छोडै नाहीं, अरु संयोग होयही, तब केई परमाणुनिकै तौ बंध होय, बहुरि अन्य केईकै न होय, सो याका

कारण कहा? ताका समाधान; जो, तिन परमाणुनिकैं पुद्गलस्वरूपकरि अविशेष है, तौऊ अनंतपर्यायनिकैं परस्परविलक्षणपरिणामकरि सामर्थ्य होय है, तातैं बंध होय है, ऐसैं प्रतीतिमैं आवै है। याका सूत्र कहै हैं—

॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— स्निग्ध कहिये सचिक्कण रूक्ष कहिये लूखा इन दोऊपणातैं पुद्गलपरमाणुनिकैं परस्पर बंध होय है। तहां बाह्य अभ्यंतर कारणके वशतैं सचिकणपर्यायका प्रगट होना सो स्निग्ध है। तैसैंही रूक्ष है। ऐसैं स्निग्धरूक्षपणा है। जो सचिकणगुणपर्याय होय सो तौ स्निग्धपणा है। तिसतैं विपरीतपरिणाम होय सो रूक्षपणा है। दोऊनिकूं हेतुकरि कह्या है। ऐसैं बंध होय है। सो जहां दोय परमाणु रूक्ष तथा सचिक्कण परस्पर मिलैं तब बंध होतैं दोय अणुका स्कंध होय है। ऐसैंही संख्यात असंख्यात अनंत परमाणुनिका स्कंध उपजै है। तहां परमाणुनिमें रूक्ष सचिकण गुण कैसें हैं? सो कहिये है– एकगुण स्निग्ध दोयगुण स्निग्ध तीनिगुण स्निग्ध च्यारि गुण स्निग्ध संख्यातगुण स्निग्ध असंख्यातगुण स्निग्ध अनंतगुण स्निग्ध ऐसैं अनंतभेदरूप हैं। ऐसैंही रूक्षगुणभी जानना। ऐसैं रूक्ष सचिकणगुण परमाणु हैं। जैसैं जल छेलीका दूध गऊका

ंभैंसीका दूध ऊटडीका दूध तथा घृतविषें स्निग्धगुण घाटि वाधि [illegible] [illegible] [illegible]
धूली कणिका कहिये वालु रेत शर्करा कहिये कांकरी जिनी इत्यादिनिविषें रूक्षगुण [illegible]
है; तैसेंही परमाणुनिविषें स्निग्धरूक्षगुणकी घाटि वाधि प्रवृत्ति है ऐसा अनुमान है। [illegible]
दोय गुण कहनेतें गुणनिके अविभागपरिच्छेद जानने ॥

त जाकूं ऐसा बंध है, सो अविशेषकरि होता होयगा, [illegible]
, तिनका निषेधकूं सूत्र कहे हैं—

गुणानाम् ॥ ३४ ॥

] हैं, तिनकैं बंध नाहीं हो है। जघन्य कहिये घाटिसूं
[illegible]रिच्छेद होय सो जघन्यगुण कहिये। सो जघन्यगुणके
ुण स्निग्ध होय तिस परमाणुकै एकगुण स्निग्धपरमाणुकरि
ख्यात असंख्यात अनंतगुण स्निग्धकरि बंध नाहीं होय है।
कगुण रूक्षपरमाणुकरि तथा दोय आदि संख्यात असंख्यात अनंतगुण
हो है। ऐसेंही एकगुण रूक्षकैभी बंधका अभाव जानना। इहां कोई

पूछे, जो, जघन्यगुण परमाणु केई लोकमें होय हैं, ऐसा निश्चय काहेतैं होय? ताका समाधान, जो, केई स्कंधनिमें सचिक्कणपणां घटता है, कोईमें बधता है, तथा केईमें रूक्षगुण घटता है, केईमें बधता है। ऐसें घटतें घटतें कोई परमाणु जघन्यगुणभी हैं, ऐसा अनुमानप्रमाणतैं निश्चय होय है ॥

आगें ए दोऊ जघन्यगुण स्निग्धरूक्षपरमाणुनिकूं वर्जिकरि अन्य स्निग्धरूक्षपरमाणुनिकै परस्पर बंध होय है। ऐसा अविशेष प्रसंग होतैं, तहांभी जिनके बंध नाहीं होय है, तिनका निषेधका सूत्र कहै हैं—

॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— गुणसाम्य कहिये जिनकै अविभागपरिच्छेदरूप गुण बराबरि होय ऐसे परमाणुनिकै अर सदृश कहिये स्निग्धही स्निग्ध तथा रूक्षही रूक्ष होय तिनकैभी बंध नाहीं होय है। इहां सदृशशब्दका अर्थ तौ समानजातिके परमाणु है। बहुरि साम्यका अर्थ बराबरि अविभागपरिच्छेद है। तहां ऐसा अर्थ होय है, दोयगुण स्निग्धपरमाणुनिकै दोयगुण स्निग्धपरिमाणुनिकरि बंध नाही है। तीनि गुणस्निग्धकै तीनि गुण स्निग्धकरि बंध नाही है। बहुरि दोय गुण स्निग्धपरमाणुनिकै दोय गुण रूक्षपरमाणुनिकनिकरि बंध नाहीं है। दोय गुण रूक्षपरमाणुनिकै

दोय गुण रूक्षपरमाणुनिकरि बंध नाहीं है। बहुरि तीनि गुण रूक्षपरमाणुनिकें तीनि गुण रूक्षपरमाणुनिकरि बंध नाहीं है। इत्यादि समानगुण होय तथा सदृशभी होय तिनकें बंध नाही होय है। इहां सदृशका ग्रहण है, सो गुणकी विषमता होता बंध होय है ऐसें जनावनेके अर्थ है॥

आगें ऐसें कहनेतें विषमगुण परमाणुनिकै तुल्यजातीयकै तथा अतुल्यजातीयकै नियमरहित बंधका प्रसंग होतै जिनकै नियम है तिनके जनावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— दोय अधिक गुणके परमाणुनिकैही बंध होय है। दोय गुण जामें अधिक होय सो द्व्यधिकगुण कहिये। सो कौन दोय गुण? परमाणुतैं दोयगुण अधिक परमाणु जामें च्यारि गुण है सो है। बहुरि इहां आदिशब्दकरि तीनिगुण परमाणुतैं जामें पांचगुण होय सो दोय अधिक गुण है। इत्यादिक दोयगुण अधिक समानजातीय तथा असमानजातीय परमाणुनिकै बंध होय हैं; अन्यकै नाही होय है। सोही कहिये है, दोयगुण सचिक्कणका जामें होय ऐसै परमाणुका एकगुण स्निग्धकरि तथा दोयगुण स्निग्धकरि तथा तीनिगुण स्निग्धकरि बंध नाहीं है। जामें च्यारि गुण स्निग्धका होय ताकरि बंध होय है। बहुरि तिसही दोय गुण

स्निग्धके पांचगुण स्निग्धकरि तथा छहगुण स्निग्धकरि तथा सात आठ आदि संख्यात असंख्यात अनंतगुण स्निग्धकरिभी बंध नाहीं होय है। ऐसैं तीनिगुण स्निग्धकै पांचगुण स्निग्धकरि बंध होय है। तिससिवाय एक दोय तीनि च्यारि तथा छेह सात आदि अनंतपर्यंत गुणसहित परमाणुनिकरि बंध नाहीं है। बहुरि च्यारिगुण स्निग्धपरमाणुकैं छहगुण स्निग्धपरमाणुकरि बंध होय है। बाकी पहले तथा अगिले गुणसहित परमाणुनिकरि बंध नाहीं है। ऐसैंही दोयगुण अधिक सर्वकै विषैं जोडना। बहुरि तैसैंही एक दोय तीनिगुण रूक्षपरमाणुनिकरि दोयगुण रूक्षपरमाणुकै बंध नाहीं है। च्यारिगुणरूक्षपरमाणुकै बंध होय है। तिसकै पांचगुणरूक्षादिकरि बंध नाहीं है। ऐसैंही तीनिगुण रूक्षादिकैभी दोयगुण अधिककरि बंध जानना। ऐसैंही भिन्नजाति जे रूक्षके स्निग्धगुण ताकरि दोयगुण अधिककरि बंध जानना॥

इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— स्निग्धकै स्निग्धकरि दोयगुण अधिककरि बंध होय है। तथा रूक्षकै रूक्षकरि दोयगुण अधिककरि बंध होय है। जघन्यगुण वर्जिकरि समगुण होऊ तथा विषमगुण होऊ दोयगुण अधिकहीकरि बंध है अन्यकरि नाहीं है। बहुरि सूत्रमें तु शब्द है सो पहले दोय सूत्रके निषेधके अर्थि है। तिस निषेधका व्यावर्तनके अर्थ है। तथा बंधकी विधिकूं जनावै

है। बहुरि इहां कोई अन्यमती तर्क करै, जो, परमाणु तौ सदा बंधरूपही है। परमाणु बुद्धिकरि कल्पना कीजिये है। तैसें एकपरमाणुके विषैं अविभागपरिच्छेद कल्पिये है। तैसें बंधनरूप स्कंध है ताके विषैं परमाणु कल्पिये है। तुमनें काहू परमाणुके बंध बताया काहूके निषेध बताया सो यह युक्त नाहीं। ताका समाधान, जातैं आगममें पुद्गलके छह भेद कहे हैं। पृथवी जल छाया च्यारि इन्द्रियनिके विषय रसादिक कार्मणस्कंध परमाणु ऐसें। इनमें परमाणु कह्या है, सो सत्यार्थ प्रत्यक्षज्ञानी देखिकरि कह्या है। तातैं कल्पित नाहीं है। तातैं केई परमाणुके बंध न होय है तिनके निषेधभी है। ऐसा न कहना जो स्कंधही बंधानरूप सदा है, परमाणु नाहीं ॥

आगें अधिकगुणकरि बंध होय है, तुल्यगुणनिकरि न होय है, ऐसा कौन अर्थि कह्या? ऐसें पूछें सूत्र कहे हैं—

॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥ ३८ ॥

याका अर्थ—बंध होतैं अधिक गुण दोय हैं। ते हीनगुणकूं अपने पारिणामस्वरूप करै हैं। इहां अधिक शब्दके गुणशब्दकी पूर्वसूत्रतैं अनुवृत्ति करणी। ऐसें अधिकगुण ऐसें कहना। या भांति दोयगुण आदि स्निग्ध रूक्ष परमाणुकें चतुर्गुण आदि स्निग्ध रूक्ष परमाणुनिस्वरूप पारिणा-

मिरूपणां होय है। जैसें आला गुडमें मधुर रस बहुत होय तब तामें रेत आय पडै तिनकूं अपने मधुररसरूप करै तिसकूं पारिणामिक कहिये, तैसें अन्यभी अधिकगुण होय सो अल्पगुणकूं अपने परिणामस्वरूप करै है। तातें पहली अवस्थाके अभावपूर्वक तीसरी अवस्था प्रगट होय है। अधिक-गुण न रह्या हीनगुणभी न भया। ऐसें तीसरी अवस्था भई। ऐसें अधिकगुणकै अर हीनगुणकै एकस्वरूपपणां होय है। जो ऐसें न मानिये तौ शुक्ल कृष्ण तंतूनिका एक रस्सा करै तिनके तार-निकै संयोग होतेंभी एकरूपपरिणाम नाहीं भया, धौला काला तार जुदे जुदे दीखवो करै; तैसें ठहरै। सो ऐसें है नाहीं। अधिकगुण हीनगुणका ऐसा एक परिणाम होय, जो, जुदाजुदा न दीखै ऐसा जानना। ऐसें कह्या जो पारिणामिकपणाकरि बंध तिसके होतें ज्ञानावरणादिक कर्मकी तीस कोडाकोडी सागर आदिकी स्थिति संभवै है॥

आगें "उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्" ऐसा द्रव्यका लक्षण कह्या। अब अन्यप्रकारकरि द्रव्यका लक्षण कहै हैं—

॥ गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— गुण अर पर्याय इनकरि सहित द्रव्य है। इहां गुणपर्याय जाकें होय सो द्रव्य

है, ऐसा प्रत्ययका अर्थ है। इहां मतुप्प्रत्ययकी उत्पत्तिके विषैं प्रश्नका समाधान पूर्वे किया, सोही है। कथंचित् भेदाभेद होतैं मतुप्प्रत्यय बणै है। बहुरि इहां पूछै है, गुण कहा तथा पर्याय कहा? ताका उत्तर, अन्वयी तौ गुण है व्यतिरेकी पर्याय है। तहां क्रमवर्ती पर्यायनिमें जोडरूप एक चल्या जाय सो तौ गुण है। बहुरि न्यारेन्यारे स्वभावरूप पर्याय हैं। इन गुणपर्यायनिकरि युक्त होय सो द्रव्य है। इहां उक्तं च गाथा है ताका अर्थ– गुण ऐसा तो द्रव्यका विधान है बहुरि गुणका एक समुदाय सो द्रव्य है बहुरि द्रव्यके विकार कहिये क्रमपरिणाम ते पर्याय हैं ऐसा कह्या है। बहुरि तिनकरि अन्यून कहिये सहित द्रव्य है सो कैसा है? अयुतप्रसिद्ध है संयोगरूप नाहीं, तादात्मक स्वरूप है बहुरि नित्य है अपने विशेषलक्षणकूं कबहूं नाहीं छोडै है ॥

इहां ऐसा कह्या, जो, द्रव्य है सो अन्यद्रव्यतैं जाकरि विशेषरूप होय जुदा दीखे तिस भावकूं गुण कहिये। तिस गुणहीकरि द्रव्यकी विधि है, जो, ऐसा गुण न होय तो द्रव्यनिका संकर कहिये पलटना ठहरै। जैसैं जीव है सो पुद्गलादिक द्रव्यनितैं ज्ञानआदि गुणनिकरि न्यारा दीखै है। बहुरि पुद्गल आदि द्रव्य हैं, ते जीवद्रव्यतैं रूप आदि गुणनिकरि न्यारे दीखै हैं। जो ऐसा विशेषगुण न होय तो आपसमैं पलटना तथा एकता ठहरै। तातैं सामान्य अपेक्षाकरि अन्वयी

तौ ज्ञान आदि जीवके गुण हैं। वहुरि पुद्गल आदिके रूप आदि गुण हैं। वहुरि तिनका विकारतैं विशेषरूपकरि भेदरूप भये ते पर्याय हैं। जैसैं घटका ज्ञान पटका ज्ञान क्रोध मान इत्यादि जीवके पर्याय। वहुरि वर्ण गंध तीव्र मंद इत्यादि पुद्गलके पर्याय। वहुरि तिनतैं कथंचित् अन्यपणाकूं प्राप्त होता समुदाय है, सो द्रव्यनाम पावै है। जो समुदाय तिन गुणपर्यायनितैं सर्वथा अनर्थांतरभूत होय जुदा पदार्थ न गिनिये, तौ सर्वहीका अभाव होय, सोही कहिये है ॥

जो परस्पर भिन्नभिन्नलक्षणस्वरूप गुणपर्याय तिनका समुदाय होतैं एक अनर्थान्तरभावतैं समुदाय जुदा पदार्थ न मानिये तौ सर्वका अभाव होय। जातैं ते गुणपर्याय परस्पर न्यारेन्यारे पदार्थ हैं। सो जो प्रत्यक्षरूप गुण हैं, तातैं जुदे पदार्थ रस आदिक हैं, सो जो समुदाय तिस रूपसूं जुदा न ठहरै, रूपमात्र समुदाय ठहरै, तव रस आदिक रूपतैं न्यारे हैं। तिनतैं समुदायभी न्यारा भया। तव एकरूपमात्र रहनेतैं समुदाय न ठहरै। समुदाय तौ वहुतनिका होय, रूप तौ एकही है। समुदाय काहेकूं कहना? ऐसैं समुदायका अभाव आया। याहीतैं समुदायी सर्वही समुदायतैं जुदे नाहीं, तिनकाभी अभाव आया। ऐसैं समुदायसमुदायी दोऊका अभाव होतैं सर्वका अभाव आया। ऐसैं रस आदिकेविषैंभी जोडना। तातैं समुदायकूं जो चाहै है सो गुणपर्यायनिके समुदाय-

रूप जो द्रव्य ताकूं कथंचित् संज्ञा संख्या लक्षण प्रयोजनादिकी अपेक्षा न्यारा पदार्थ मानना योग्य है ॥

इहां प्रश्न, जो, द्रव्यका लक्षण सत् ऐसा पहलैं तौ कह्याही था, यह दूसरा लक्षण कहनेका कहा प्रयोजन है? ताका उत्तर, पहलैं सत् लक्षण कह्या, सो तो शुद्धद्रव्यका लक्षण है, सो एक है, सो सामान्य है, अभेद है, याकूं महान् द्रव्यभी कहिये, जातैं सर्व वस्तु है सो सत्ताकूं उल्लंघि नाहीं वर्तैं हैं। सर्वद्रव्य सर्वपर्यायसत्ताके विशेषण हैं। जाकूं ज्ञानगोचर तथा वचनगोचर कहिये सो सर्व सत्तामयी है। बहुरि द्रव्य अनेक हैं, तिनका भिन्नव्यवहार करनेकूं यह गुणपर्याय-सहितपणा दूजा लक्षण कह्या है। सो यह लक्षण न कहिये तौ द्रव्यनिके गुणपर्याय न्यारेन्यारे हैं, ते द्रव्य न ठहरै, तब सर्वथा सतही द्रव्य ठहरै। चेतन अचेतन आदि द्रव्यनिका लोप होय, तब संसार मोक्ष आदि व्यवहारकाभी लोप होय, तातैं दूजा लक्षण युक्त है। तिसही लक्षणतैं अशुद्ध-द्रव्यकी सिद्धि है। जातैं सत् द्रव्य दूसरे विशेषणसहित भया, तब दूसरेके मिलापतैं अशुद्धता भई। जैसें सत् था सो चेतनतासहित तथा अचेतनतासहित कह्या, तब सत्कै अशुद्धता आई ऐसा अशुद्धद्रव्यभी कहिये, इत्यादि स्याद्वादकरि सिद्ध होय है, सो वार्तिकतैं जानना ॥

बहुरि अन्यमती द्रव्यलक्षण अन्यथा कल्पैं हैं। केई तौ क्रियावानपणा द्रव्यका लक्षण कहै हैं।

सो आकाशविषैं क्रिया नाहीं, तिनकैं द्रव्यपणा न ठहरै। वहुरि केई समवायिकारणपणा लक्षण कहै हैं सोभी गुणकर्मकेविषैं पाईये है। तब ते गुणकर्मभी द्रव्य न ठहरें। वहुरि कोई गुणवानपणा होतैं क्रियावानपणा समवायिकारणपणा लक्षण कहै है। सो यह तौ गुणवानपणा कहनेतैंही आय गया। क्रियावान्‌पणा कहना आदि निःप्रयोजन है। वहुरि अनेकान्तका आश्रय ले विक्षातैं कछु कहै तौ निर्दोषही है। स्याद्वादका आश्रय लिये विवाद नाहीं है। वहुरि द्रव्यविषैं क्रमवर्ती अनेक धर्म हैं, तथा तिन सर्व क्रमवर्तीधर्मनिकी साथि वर्तते अनेक धर्म हैं, तथा कालभेद न करिये तब सर्वकालमें एकही द्रव्य सहवर्ती क्रमवर्ती धर्मनिस्वरूप एककाल है। ऐसैं इस लक्षण करनेतैं सदानेकान्त क्रमानेकांत क्रमाक्रमानेकांत भली भांति सिद्ध होय है॥

आगें कहे जे पांच द्रव्य तिनके लक्षणानिर्देश करनेतैं पांचही द्रव्यका निश्चयका प्रसंग आवै है, तातैं छठा द्रव्य न कह्या, ताके सूचनेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ कालश्च ॥ ४० ॥

याका अर्थ— काल है सोभी द्रव्य है। इहां द्रव्य है ऐसा वाक्यशेष है। इस कालविषैंभी द्रव्यका लक्षण है। यातैं द्रव्य है। द्रव्यका लक्षण दोयप्रकार कह्या है। सद्द्रव्यलक्षणं उत्पादव्ययध्रौ-

व्ययुक्तं सत् ऐसा तथा गुणपर्ययवद्द्रव्यं ऐसा दोऊही लक्षण कालके विद्यमान है। तहां प्रथम तौ ध्रौव्यपणा कालकैं है। जातैं स्वभावहीतैं व्यवस्थिति है। सो ध्रौव्यपणा स्वकारणकृत है, काहू यका किया नांही। बहुरि व्यय उत्पाद ये दोऊ अगुरुलघुगुणकी हानिवृद्धिकी अपेक्षातैं स्वभा- वकृत बहुरि परद्रव्यके परिणामनिकी अपेक्षा परकृतभी हैं। बहुरि गुण साधारण तथा ऊही कालके हैं। तहां असाधारणता सर्वद्रव्यानिपरि वर्तनाहेतुपणा है। अर साधारण मूर्तिकपणा सूक्ष्मपणा अगुरुलघुपणा इत्यादिक है। बहुरि पर्याय उत्पाद व्ययरूप होय तातैं दोयप्रकारके लक्षणसहितपणातैं आकाशआदिकीज्यौं कालकै द्रव्यपणां प्रसिद्ध अस्तित्वका चिह्न धर्मआदि द्रव्यकीज्यौं पूर्वै कह्याही था, जो, वर्तनालक्षण काल है॥

इहां प्रश्न, जो, इहां कालद्रव्य कह्या अर धर्मआदि द्रव्य कहे थे, तहांही न कह्या, सो कहां प्रयोजन? अजीवकायाधर्माधर्माकाशकालपुद्गला ऐसैं क्यौं न कह्या? ताका समाधान, जो, तहां कहते तो कालकै कायपणा ठहरता, सो याकै कायपणा नाहीं है। जातैं कालके मुख्यपणैं तथा उपचारकरिभी प्रदेशनिका प्रचयकी कल्पना नाहीं है। धर्मादिककैं तौ पूर्वै मुख्यप्रदेशनिका प्रचय कह्याही है असंख्येयाः प्रदेशा इत्यादि सूत्रमें। बहुरि पुद्गलपरमाणु एकप्रदेशमात्र हैं तौऊ

पूर्वउत्तरभावप्रज्ञापननयकी अपेक्षाकरि उपचारकल्पनाकरि प्रदेशप्रचय कह्या ॥

भावार्थ— परमाणु संघाततैं स्कंधरूप होय हैं, तातैं प्रदेशप्रचय होय है। बहुरि कालकैं दोऊही रीति प्रदेशप्रचयकी कल्पना नाहीं। तातैं याकै अकायपणांही है। बहुरि जो कालकूं धर्मादिकके पाठमें कहते तौ तहां निष्क्रियाणि इस सूत्रविषैं धर्मआदि आकाशपर्यंत क्रियारहित कहे थे, तातैं अन्य जे जीवपुद्गल तिनकै क्रियासहितपणांकी प्राप्ति आई थी, सो कालकैभी सक्रियपणां ठहरता। बहुरि जो आकाशतैं पहलै काल कहते तौ ' आ आकाशादेकद्रव्याणि ' इस सूत्रतैं आकाशकैं एकद्रव्यपणा ठहरता। तातैं न्याराही इहां कालका उपदेश किया है ॥

इहां पूछै है, जो, कालकूं अनेकद्रव्य कहिये है, तहां कहा प्रमाण है? ताका उत्तर, जो, आगमप्रमाणकरि कहिये है। लोकाकाशके जेते प्रदेश हैं तेते कालके अणु क्रियारहित एकएक आकाशके प्रदेशविषैं एकएक न्यारेन्यारे लोकमें व्यापिकरि तिष्ठै हैं। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— लोकाकाशके प्रदेश एकएकके विषैं जे एकएक रत्ननिकीज्यों प्रगटाणें तिष्ठै हैं ते कालाणु जानने। रूपआदि गुणनिकरि रहित अमूर्तिक वर्तनालक्षण जो मुख्यकाल है, ताका यह आगमप्रमाण कह्या ॥

आगें, परिणामादिकरि जान्या जाय ऐसा व्यवहारकालके जाननेकूं प्रमाण कहा है? ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ सोऽनन्तसमयः ॥ ४० ॥

याका अर्थ— काल है सो अनंत हैं समय जाके ऐसा है। इहां वर्तमानकाल एक समयमात्र है। तौऊ अतीत अनागत कालके समय अंतरहित हैं। तातैं अनंत कहिये है। अथवा मुख्यकालकाही प्रमाण जाननेकूं यह सूत्र है। जो, कालाणु एक है तौऊ अनंतपर्यायनिकूं वर्तनाका कारण है। तातैं ताकेविषै अनंतपणाका उपचार कीजिये है। बहुरि समय है सो उत्कृष्टपणें कालका अंश है। तिसका समूहविशेषकूं आवली इत्यादि जाननी ॥

आगें, गुणपर्ययवद् द्रव्य है ऐसा कह्या, तहां गुण कहा? ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥ ४१ ॥

याका अर्थ— जिनका द्रव्य आश्रय है बहुरि जे आप अन्यगुणनिकरि रहित हैं, ते गुण हैं। इहां निर्गुण ऐसा गुणनिका विशेषण है, सो कौन अर्थि है सो कहिये है। दोय आदि परमाणुनिका स्कंधभी द्रव्यकै आश्रय है। जातैं परमाणुनितैं भया है सो द्रव्याश्रया गुणा एताही

कहिये तौ तिन स्कंधनिकै गुणपणां ठहरता। तातैं निर्गुण कहनेतैं तिनकै गुणका निषेध भया ते स्कंधभी गुणसहित हैं, तातैं द्रव्यही हैं, गुण नाहीं हैं। बहुरि द्रव्याश्रया इस विशेषणतैं पर्यायनिकै गुणपणाका निषेध होय है। जातैं गुण हैं ते तौ द्रव्यतैं नित्यसंबंधरूप हैं। पर्याय हैं ते क्रमतैं होय। सो कदाचित् होय विनशि जाय हैं। तातैं जे नित्यही द्रव्यकूं आश्रयकरि प्रवर्तैं ते गुण हैं। ऐसैं पर्याय हैं ते गुण नाहीं हैं। तहां जीवके गुण अस्तित्व आदिक तौ साधारण। बहुरि ज्ञानादिक असाधारण। पुद्गलके अचेतनत्व आदि साधारण। रूप आदिक असाधारण। बहुरि पर्याय जीवके घटका ज्ञान आदिक हैं। पुद्गलके घटकपाल आदिक हैं॥

आगैं पूछे है, वारवार परिणामशब्द कह्या ताका कहा अर्थ है? ऐसैं पूछैं उत्तरका सूत्र कहै हैं—

॥ तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

याका अर्थ— द्रव्य जिस स्वरूप परिणमै, ताकूं जिनका भाव कहिये, ऐसा तद्भाव है, सो परिणाम है। इहां इस सूत्र कहनेका अन्यप्रयोजन कहै हैं। गुण हैं ते द्रव्यतैं जुदे पदार्थ हैं, ऐसा अन्य कोईका मत है। सो स्याद्वादीनिकूं अन्यमती कहै हैं। तुमारै यह मान्य है कि नाहीं? ताकूं आचार्य कहै हैं, जो, तुम मानूं जैसैं तो जुदा पदार्थ नाहीं मानैं हैं, कथंचित् संज्ञासंख्यादि

भेदकी अपेक्षाकरि द्रव्यतैं गुण भेदरूपभी मानैं हैं, तथापि तिसतैं प्रदेशनिकी अपेक्षाकरि अभेद है। जातैं तिस द्रव्यहीके परिणाम हैं। तातैं जुदे नाहीं। ऐसैं कहते पूछैं हैं, जो, तुम परिणाम कह्या सो कहा ताका निश्चयके अर्थि यह सूत्र कह्या है, जो, धर्म आदि द्रव्य कहे ते जिसस्वरूपकरि परणमे ताकूं तद्भाव कहिये। तद्भावकूं तत्वभी कहिये, सोही तद्भाव परिणाम है। सो ऐसा परिणाम दोयप्रकार है, अनादिपरिणाम आदिमान् परिणाम। तहां अनादि तौ धर्मादिककै गतिहेतुत्वपणा आदिक हैं, सो सामान्यअपेक्षाकरि है। बहुरि विशेषअपेक्षा सोही परिणाम आदिमान् है। जातैं पर्याय हैं ते उपजै हैं, विनशै हैं। तिनकूं आदिसहित कहिये। तिनमें च्यारि द्रव्यनिका परिणाम तो आगमगम्य है। बहुरि जीवपुद्गलका परिणाम कथंचित् प्रत्यक्षगम्यभी है॥

इहां कोई कहै, गुणपर्याय दोय कहे अर नय द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक ए दोय कहे। तहां तीसरा गुणार्थिकनय क्यों न कह्या? ताका समाधान, जो, संक्षेपतैं नय दोयही कहे हैं। तहां ऐसी विवक्षा है, जो, पर्याय दोयप्रकार है। एक सहभावी एक क्रमवर्ती। तातैं पर्याय कहनेमें गुणभी जान लेना। बहुरि नयनिका विस्तार करिये तब द्रव्य शुद्धअशुद्धकरि दोयप्रकार हैं। तैसें पर्यायकै दोय भेदकरि सहभावी क्रमवर्ती ऐसै। नयनिकै तीनिकी संख्याभी विरोधरूप नाहीं है।

एक द्रव्यार्थिक दोय भेदरूप पर्यायार्थिक, तथा द्रव्यार्थिक दोय पर्यायार्थिक एक, ऐसें दोय भंग तीनिके हैं। बहुरि दोयदोय गिनियें तब च्यारिभी नय होय हैं। बहुरि द्रव्यार्थिकके नैगम संग्रह व्यवहार ए तीनि भेद, पर्यायार्थिकके अर्थ व्यंजन पर्यायकरि दोय भेद ऐसै पांचभी हैं। बहुरि द्रव्यके शुद्ध अशुद्ध दोय भेद, पर्यायार्थिकके ऋजुसूत्र शब्द समभिरूढ एवंभूत च्यारि भेद ऐसैं छहभी नय होय हैं। बहुरि नैगम आदि सात कही हैं। ऐसेही अष्ट आदिकी संख्याभी होती जाय है। जातैं शब्द अपेक्षा नय संख्यात कही है। ऐसै गुणपर्यायका कथंचित् भेदरूप कथन है, सो अयुक्त नाहीं है। गुणपर्ययवद्द्रव्य है ऐसा लक्षण द्रव्यका निर्दोष है ॥

ऐसें इस पांचवां अध्यायमें पंचास्तिकाय छह द्रव्यका तथा तिनके भेदसहित गुणपर्यायनिका निरूपण कीया, ताका व्याख्यान सर्वार्थसिद्धि नाम संस्कृतटीकातैं देखि देशकी भाषामय वचनिका करी है। ताकूं वाचि सुनिकरि भव्यजीव तिनका यथार्थस्वरूप जानि श्रद्धा करो, चारित्रकी शुद्धता करो। ऐसें स्वर्गमोक्षका मार्ग सुगम होय है। बहुरि याका विशेष व्याख्यान तत्वार्थवार्तिक तथा श्लोकवार्तिकविषें है। तहां स्वमतका स्थापन परमतका निराकरणरूप बहुत व्याख्यान है। तहांतें जानना ॥

भेदकी अपेक्षाकरि द्रव्यतैं गुण भेदरूपभी मानैं हैं, तथापि तिसतैं प्रदेशनिकी अपेक्षाकरि अभेद है। जातैं तिस द्रव्यहीके परिणाम हैं। तातैं जुदे नाहीं। ऐसैं कहते पूछै हैं, जो, तुम परिणाम कह्या सो कह्या ताका निश्चयके अर्थि यह सूत्र कह्या है, जो, धर्म आदि द्रव्य कहे ते जिसस्वरूपकरि परणमे ताकूं तद्भाव कहिये। तद्भावकूं तत्वभी कहिये, सोही तद्भाव परिणाम है। सो ऐसा परिणाम दोयप्रकार है, अनादिपरिणाम आदिमान् परिणाम। तहां अनादि तौ धर्मादिककै गतिहेतुत्वपणा आदिक हैं, सो सामान्यअपेक्षाकरि है। बहुरि विशेषअपेक्षा सोही परिणाम आदिमान् है। जातैं पर्याय हैं ते उपजै हैं, विनशैं हैं। तिनकूं आदिसहित कहिये। तिनमें च्यारि द्रव्यनिका परिणाम तो आगमगम्य है। बहुरि जीवपुद्गलका परिणाम कथंचित् प्रत्यक्षगम्यभी है॥

इहां कोई कहै, गुणपर्याय दोय कहे अर नय द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक ए दोय कहे। तहां तीसरा गुणार्थिकनय क्यों न कह्या? ताका समाधान, जो, संक्षेपतैं नय दोयही कहे हैं। तहां ऐसी विवक्षा है, जो, पर्याय दोयप्रकार है। एक सहभावी एक क्रमवर्ती। तातैं पर्याय कहनेमैं गुणभी जान लेना। बहुरि नयनिका विस्तार करिये तब द्रव्य शुद्धअशुद्धकरि दोयप्रकार हैं। तैसैं पर्यायके दोय भेदकरि सहभावी क्रमवर्ती ऐसै। नयनिकै तीनिकी संख्याभी विरोधरूप नाहीं है।

एक द्रव्यार्थिक दोय भेदरूप पर्यायार्थिक, तथा द्रव्यार्थिक दोय पर्यायार्थिक एक, ऐसैं दोय भंग तीनिके हैं। बहुरि दोयदोय गिनियें तब च्यारिभी नय होय हैं। बहुरि द्रव्यार्थिकके नैगम संग्रह व्यवहार ए तीनि भेद, पर्यायार्थिकके अर्थ व्यंजन पर्यायकरि दोय भेद ऐसैं पांचभी हैं। बहुरि द्रव्यके शुद्ध अशुद्ध दोय भेद, पर्यायार्थिकके ऋजुसूत्र शब्द समभिरूढ एवंभूत च्यारि भेद ऐसैं छहभी नय होय हैं। बहुरि नैगम आदि सात कही हैं। ऐसैंही अष्ट आदिकी संख्याभी होती जाय है। जातैं शब्द अपेक्षा नय संख्यात कही है। ऐसैं गुणपर्यायका कथंचित् भेदरूप कथन है, सो अयुक्त नाहीं है। गुणपर्ययवद्द्रव्य है ऐसा लक्षण द्रव्यका निर्दोष है ॥

ऐसैं इस पांचवां अध्यायमैं पंचास्तिकाय छह द्रव्यका तथा तिनके भेदसहित गुणपर्यायनिका निरूपण कीया, ताका व्याख्यान सर्वार्थसिद्धि नाम संस्कृतटीकातैं देखि देशकी भाषामय वचनिका करी है। ताकूं वांचि सुनिकरि भव्यजीव तिनका यथार्थस्वरूप जानि श्रद्धा करो, चारित्रकी शुद्धता करो। ऐसैं स्वर्गमोक्षका मार्ग सुगम होय है। बहुरि याका विशेष व्याख्यान तत्वार्थवार्तिक तथा श्लोकवार्तिकविषैं है। तहां स्वमतका स्थापन परमतका निराकरणरूप बहुत व्याख्यान है। तैं जानना ॥

॥ छप्पय ॥

अस्तिकाय हैं पंच कालयुत कथन दरव पद,
तिनके गुण परजाय भेद लक्षण वहु परगट ॥
परमत स्वमत विभाग हेतु भाषे श्रुतधरमुनि,
वार्तिक वृत्ति वखान विविधि कीनूं शिष्यनि सुनि ॥
लखि लेश देशभाषामयी करी वचनिका सुनि धुनी,
जानूं सरधा सांची करौ धरि चारित शिव ल्यो गुनी ॥ १ ॥

ऐसैं तत्वार्थनिका है अधिगम जाकरि ऐसा जो मोक्षशास्त्र, ताविषैं
पांचवां अध्याय समाप्त भया ॥ ५ ॥

॥ नमः सिद्धेभ्यः ॥

॥ आगें छठे अध्यायका प्रारंभ है ॥

दोहा— मोह राग रुष भाव ये, निश्चय आश्रय तीनि ॥
हति ध्यानी ज्ञानी भये, नमूं तिनहि गुणलीन ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलाचरणके अर्थि नमस्कार करि सर्वार्थसिद्धि नाम टीकाके अनुसार कहिये है। तहां पंचम अध्यायमें अजीवपदार्थका व्याख्यान किया। अब ताके अनंतर आस्रवपदार्थका व्याख्यान किया चाहिये। तातैं तिस आस्रवपदार्थकी प्रसिद्धिके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

॥ कायवाङ्मनःकर्म योगः ॥ १ ॥

याका अर्थ— काय वचन मन इनका कर्म सो योग है। तहां काय आदि शब्दनिका अर्थ तौ पहलें कह्या था, सोही जानना। बहुरि कर्मशब्दका अर्थ इहां क्रिया है। जातें कर्म अरु क्रियामें इहां भेद नाहीं है। ऐसैं काय वचन मनकी क्रिया है सो योग है। तहां ऐसा जानना, जो,

आत्माके प्रदेशनिका चलना सो योग है । सो निमित्तके भेदतैं तीनिप्रकार भेद कीजिये है, काययोग, वचनयोग, मनोयोग । तहां आत्माके वीर्यांतरायकर्मका क्षयोपशम होतैं औदारिक आदि सात काय तिनकी वर्गणामें एक कायवर्गणाका अवलंबनकी अपेक्षातैं भया जो आत्मप्रदेशनिका चलना, सो काययोग है । बहुरि शरीर नामा नामकर्मके उदयकरि कीया जो वचनवर्गणा ताका अवलंबनके होतैं, बहुरि वीर्यांतरायकर्म तथा श्रुत अक्षर आदि ज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशमकरि कीया जो अभ्यंतर वचनकी लब्धि कहिये बोलनेकी शक्ति ताकी संनिधि होतैं, वचनपरिणामके सन्मुख भया जो आत्मा ताके प्रदेशनिका चलना, सो वचनयोग है । बहुरि अभ्यंतर तौ नोइन्द्रियावरण नामा ज्ञानावरणकर्म अर अंतरायकर्मके क्षयोपशमरूप लब्धि ताका निकट होतैं, अर बाह्य मनोवर्गणाका आलंबन होतैं मनःपरिणामके सन्मुख जो आत्मा ताकें प्रदेशनिका चलना, सो मनोयोग है ॥

आगें पूछें हैं, जो, कर्म पुण्यपापभेदकरि दोयप्रकार है, तिसका आस्रवका कारण योग है सो अविशेषकरिही है, कि कुछ विशेष है? ऐसें पूछे सूत्र कहे हैं—

॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥

इहां भावार्थ ऐसा, जो, मनवचनकायके निमित्ततैं आत्माके प्रदेशनिका चलना, सो योग है। बहुरि इहां वीर्यांतराय ज्ञानावरणका क्षयोपशमजनित लब्धिरूप शक्ति कही, सो इनका क्षय होतेंभी कायवचनमनकी वर्गणाके निमित्ततैं सयोगकेवली आत्माके प्रदेशनिका चलना है, तातें तहांभी योग जानना ॥

आगें शिष्य कहै है, जो, तीनिप्रकार योग कहे ते हम जाने, परंतु प्रकरण आस्रवका है, सो अब कहो, आस्रवका लक्षण कहा है? ऐसें पूछें कहै हैं, जो, यह योगशब्दकरि कहिये सो संसारी जीवकें आस्रव है ऐसा सूत्र कहै हैं—

॥ स आस्रवः ॥ २ ॥

याका अर्थ— कह्या जो योग सो आस्रव है। जैसें सरोवरके जल आवनेका द्वार होय सो जलके आवनेकूं कारण है, ताकूं आस्रव ऐसा कहिये, तैसें इहांभी योगद्वारकरि आत्माकै कर्म आवै है, तातें योगही आस्रव है। ऐसा नामके योग्य है। इहां ऐसाभी दृष्टान्त जानना— जैसें आला वस्त्र चौगिरदतैं आई रजकूं ग्रहण करै है तथा लोहका पिंड अग्निकरि तपाये जलकूं खैंचै है, तैसें कषायनिकरि सहित जीव योगद्वारकरि आये कर्मकूं सर्व अपने प्रदेशनिकरि ग्रहण करै है ॥

आत्माके प्रदेशनिका चलना सो योग है । सो निमित्तके भेदतैं तीनिप्रकार भेद कीजिये हैं, काययोग, वचनयोग, मनोयोग । तहां आत्माके वीर्यांतरायकर्मका क्षयोपशम होतैं औदारिक आदि सात काय तिनकी वर्गणामें एक कायवर्गणाका अवलंबनकी अपेक्षातैं भया जो आत्मप्रदेश-निका चलना, सो काययोग है । बहुरि शरीर नामा नामकर्मके उदयकरि कीया जो वचनवर्गणा ताका अवलंबनके होतैं, बहुरि वीर्यांतरायकर्म तथा श्रुत अक्षर आदि ज्ञानावरणकर्मका क्षयोपशमकरि कीया जो अभ्यंतर वचनकी लब्धि कहिये बोलनेकी शक्ति ताकी संनिधि होतैं, वचनपरिणामके सन्मुख भया जो आत्मा ताके प्रदेशनिका चलना, सो वचनयोग है । बहुरि अभ्यंतर तौ नोइन्द्रियावरण नामा ज्ञानावरणकर्म अर अंतरायकर्मके क्षयोपशमरूप लब्धि ताका निकट होतैं, अर बाह्य मनोवर्गणाका आलंबन होतैं मन-परिणामके सन्मुख जो आत्मा ताकें प्रदेशनिका चलना, सो मनोयोग है ॥

आगें पूछै हैं, जो, कर्म पुण्यपापभेदकरि दोयप्रकार है, तिसका आस्रवका कारण योग है सो अविशेषकरिही है, कि कछु विशेष है? ऐसें पूछे सूत्र कहे हैं—

॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥

याका अर्थ— शुभयोग तौ पुण्यका आश्रव करै है। अशुभ योग पापका आश्रव करै है। तहां शुभयोग कहा? अशुभयोग कहा? सो कहिये हैं। प्राणनिका घात अदत्तका ग्रहण मैथुन-सेवन इत्यादिक तौ अशुभका योग है। झूठ बोलना कठोरवचन कहना ऐसैं असत्यवचन आदि अशुभ वचनयोग है। परका घातका चिंतवन करना, ईर्षा राखनी, अदेखसाभाव करना इत्यादि अशुभमनोयोग है। यातैं उलटा शुभयोग है। तहां अहिंसा अस्तेय ब्रह्मचर्यादिक शुभकाययोग है। सत्यवचन हितमित भाषण आदि शुभवचनयोग है। अरहंतआदिविषैं भक्ति स्तवविषैं रुचि शास्त्रआदिविषैं विनय आदि प्रवृत्ति ए शुभमनोयोग हैं॥

इहां प्रश्न, जो, योगकें शुभ अशुभ परिणाम कैसैं? ताका उत्तर, जो, शुभपरिणामकरि निपज्या योग सो तौ शुभ है। बहुरि जो अशुभपरिणामकरि निपज्या सो अशुभयोग है। बहुरि शुभअशुभकर्मके कारणपणातैं शुभअशुभयोग नाहीं हैं। जो ऐसा होय तौ शुभयोगही न ठहरै। जातैं शुभयोगतैं ज्ञानावरणादि घातियाकर्म पापरूप हैं, तिनकाभी आश्रव होय है। तातैं पापका कारण शुभयोग नाहीं ठहरै। तहां जो कर्म आत्माकूं पवित्र करै, अथवा याकरि आत्मा पवित्र होय ऐसैं पुण्य कहिये। सो सातावेदनीय आदिक हैं। बहुरि आत्मानैं शुभतैं पाति कहिये राखै

शुभरूप न होनें दे सो पाप है। सो असातावेदनीय आदिक हैं॥

आगैं पूछै है, जो, यहू आश्रव सर्व संसारी जीवनिकै समानफलका कारण है, कि किछु विशेष है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥

याका अर्थ — कषायसहित जीवकै तो सांपरायिक आश्रव होय है। बहुरि कषायरहित जीवकै, ईर्यापथ आश्रव होय है। इहां स्वामीके भेदनैं आश्रवविषैं भेद है। तहां स्वामी दोय हैं, सकषायी जीव अकषायी जीव। तहां कषाय जे क्रोधादिक ते कषायसारिखे हैं। जैसैं फिटकडी लोध आदि कषायले द्रव्य होय हैं, ते वस्त्रके रंग लगनेकूं कारण हैं; तैसैं ए क्रोधादिकभी आत्माके कर्म लेपके कारण हैं। तातैं इनकूंभी कषाय कहिये हैं। ऐसैं कषायनिकरि सहित होय ताकूं सकषायी कहिये। बहुरि कषायरहित होय सो अकषायी है। बहुरि संपराय नाम संसारका है, सो जाका संसार प्रयोजन है ऐसा जो कर्म ताकूं सांपरायिक कर्म कहिये। बहुरि ईर्याभाव योगनिकी गतिका है तिसहीकरि कर्म आवै, ताकूं ईर्यापथकर्म कहिये। इनका यथासंख्य संबंध करना। तहां सकषायी मिथ्यादृष्टीकूं आदि देकरि जीव हैं, तिनकै तो सांपराय-

याका अर्थ— शुभयोग तौ पुण्यका आश्रव करै है। अशुभ योग पापका आश्रव करै है। तहां शुभयोग कहा? अशुभयोग कहा? सो कहिये हैं। प्राणनिका घात अदत्तका ग्रहण मैथुन-सेवन इत्यादिक तौ अशुभका योग है। झूठ बोलना कठोरवचन कहना ऐसैं असत्यवचन आदि अशुभ वचनयोग है। परका घातका चिंतवन करना, ईर्षा राखनी, अदेखसाभाव करना इत्यादि अशुभमनोयोग है। यातैं उलटा शुभयोग है। तहां अहिंसा अस्तेय ब्रह्मचर्यादिक शुभकाययोग है। सत्यवचन हितमित भाषण आदि शुभवचनयोग है। अरहंतआदिविषैं भक्ति स्तवविषैं रुचि शास्त्रआदिविषैं विनय आदि प्रवृत्ति ए शुभमनोयोग हैं॥

इहां प्रश्न, जो, योगकैं शुभ अशुभ परिणाम कैसैं? ताका उत्तर, जो, शुभपरिणामकरि निपज्या योग सो तौ शुभ है। बहुरि जो अशुभपरिणामकरि निपज्या सो अशुभयोग है। बहुरि शुभअशुभकर्मके कारणपणातैं शुभअशुभयोग नाहीं हैं। जो ऐसा होय तौ शुभयोगही न ठहरै। जातैं शुभयोगतैं ज्ञानावरणादि घातियाकर्म पापरूप हैं, तिनकाभी आश्रव होय है। तातैं पापका कारण शुभयोग नाहीं ठहरै। तहां जो कर्म आत्माकूं पवित्र करै, अथवा याकरि आत्मा पवित्र होय ऐसैं पुण्य कहिये। सो सातावेदनीय आदिक हैं। बहुरि आत्मानैं शुभतैं पाति कहिये राखै

शुभरूप न होनें दे सो पाप है। सो असातावेदनीय आदिक हैं ॥

आगें पूछे है, जो, यहू आश्रव सर्व संसारी जीवनिकै समानफलका कारण है, कि किछु विशेष है? ऐसें पूछें सूत्र कहे हैं—

॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥

याका अर्थ — कषायसहित जीवकै तौ सांपरायिक आश्रव होय है। बहुरि कषायरहित जीवकै, ईर्यापथ आश्रव होय है। इहां स्वामीके भेदतैं आश्रवविषैं भेद है। तहां स्वामी दोय हैं, सकषयी जीव अकषायी जीव। तहां कषाय जे क्रोधादिक ते कषायसारिखे हैं। जैसैं फिटकडी लोध आदि कषायले द्रव्य होय हैं, ते वस्त्रके रंग लगनेकूं कारण हैं; तैसें ए क्रोधादिकभी आत्माके कर्म लेपके कारण हैं। तातैं इनकूंभी कषाय कहिये हैं। ऐसें कषायनिकरि सहित होय ताकूं सकषायी कहिये। बहुरि कषायरहित होय सो अकषायी है। बहुरि संपराय नाम संसारका है, सो जाका संसार प्रयोजन है ऐसा जो कर्म ताकूं सांपरायिक कर्म कहिये। बहुरि ईर्याभाव योगनिकी गतिका है तिसहीकरि कर्म आवै, ताकूं ईर्यापथकर्म कहिये। इनका यथासंख्य संबंध करना। तहां सकषायी मिथ्यादृष्टीकूं आदि देकरि जीव हैं, तिनकै तो सांपराय-

याका अर्थ— शुभयोग तौ पुण्यका आश्रव करै है। अशुभ योग पापका आश्रव करै है। तहां शुभयोग कहा? अशुभयोग कहा? सो कहिये हैं। प्राणनिका घात अदत्तका ग्रहण मैथुन-सेवन इत्यादिक तौ अशुभका योग है। झूठ बोलना कठोरवचन कहना ऐसैं असत्यवचन आदि अशुभ वचनयोग है। परका घातका चिंतवन करना, ईर्षा राखनी, अदेखसाभाव करना इत्यादि अशुभमनोयोग है। यातैं उलटा शुभयोग है। तहां अहिंसा अस्तेय ब्रह्मचर्यादिक शुभकाययोग है। सत्यवचन हितमित भाषण आदि शुभवचनयोग है। अरहंतआदिविषैं भक्ति स्तवविषैं रुचि शास्त्रआदिविषैं विनय आदि प्रवृत्ति ए शुभमनोयोग हैं॥

इहां प्रश्न, जो, योगकैं शुभ अशुभ परिणाम कैसैं? ताका उत्तर, जो, शुभपरिणामकरि निपज्या योग सो तौ शुभ है। बहुरि जो अशुभपरिणामकरि निपज्या सो अशुभयोग है। बहुरि शुभअशुभकर्मके कारणपणातैं शुभअशुभयोग नाहीं हैं। जो ऐसा होय तौ शुभयोगही न ठहरै। जातैं शुभयोगतैं ज्ञानावरणादि घातियाकर्म पापरूप हैं, तिनकाभी आश्रव होय है। तातैं पापका कारण शुभयोग नाहीं ठहरै। तहां जो कर्म आत्माकूं पवित्र करै, अथवा याकरि आत्मा पवित्र होय ऐसैं पुण्य कहिये। सो सातावेदनीय आदिक हैं। बहुरि आत्मानैं शुभतैं पाति कहिये राखै

शुभरूप न होनें दे सो पाप है। सो असातावेदनीय आदिक हैं ॥

आगैं पूछै है, जो, यहू आश्रव सर्व संसारी जीवनिकै समानफलका कारण है, कि किछु विशेष है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥

याका अर्थ — कषायसहित जीवकै तौ सांपरायिक आश्रव होय है। बहुरि कषायरहित जीवकै, ईर्यापथ आश्रव होय है। इहां स्वामीके भेदतैं आश्रवविषैं भेद है। तहां स्वामी दोय हैं, सकषयी जीव अकषायी जीव। तहां कषाय जे क्रोधादिक ते कषायसारिखे हैं। जैसैं फिटकडी लोध आदि कषायले द्रव्य होय हैं, ते वस्त्रके रंग लगनेकूं कारण हैं; तैसैं ए क्रोधादिक्भी आत्माके कर्म लेपके कारण हैं। तातैं इनकूंभी कषाय कहिये हैं। ऐसैं कषायनिकरि सहित होय ताकूं सकषायी कहिये। बहुरि कषायरहित होय सो अकषायी है। बहुरि संपराय नाम संसारका है, सो जाका संसार प्रयोजन है ऐसा जो कर्म ताकूं सांपरायिक कर्म कहिये। बहुरि ईर्याभाव योगनिकी गतिका है तिसहीकरि कर्म आवै, ताकूं ईर्यापथकर्म कहिये। इनका यथासंख्य संबंध करना। तहां सकषायी मिथ्यादृष्टीकूं आदि देकरि जीव हैं, तिनकै तौ सांपराय-

कर्मका आश्रव होय है। बहुरि कषायरहित जीव हैं, जो, उपशांतकषायकूं आदि देकरि तिनकैं ईर्यापथकर्मका आश्रव होय है॥ इहां भावार्थ ऐसा, जो, सकषायी जीवकें तौ कर्मकी स्थिति अनुभाग पडै है। बहुरि अकषायी जीवकें स्थिति अनुभाग नाहीं। एकसमय मात्र आश्रव होय, तिसही समय झडि जाय है॥

आगैं आदिमें कह्या जो सांपरायिक आश्रव ताके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पंचचतुःपंचपंचविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— पहलें कह्या जो सांपरायिक आश्रव ताके भेद— इंद्रिय पांच, कषाय च्यारि, अव्रत पांच, क्रिया पचीस ए गुणतालीस भेद हैं। इहां इन्द्रिय आदिनिकैं पंच आदिकी संख्याकरि यथासंख्य जानना। इंद्रिय पांच, कषाय च्यारि, अव्रत पांच, क्रिया पचीस ऐसैं। तहां पंच इन्द्रिय तौ पहले कही थी सोही। बहुरि कषाय क्रोध आदिक। बहुरि पांच अव्रत हिंसा आदिक आगें कहसी। बहुरि क्रिया पचीस कहिये हैं। तहां जो चैत्य गुरु प्रवचननिकी पूजा करना इत्यादिक जो सम्यक्त्वकी वधावनेहारी क्रिया होय सो सम्यक्त्वक्रिया है ॥१॥ अन्य देवताका स्तवनआदिरूप मिथ्यात्वकी कारण प्रवृत्ति सो मिथ्यात्वक्रिया है ॥ २ ॥ कायआदिकरि गमनागमन आदिका

प्रवर्तन, सो प्रयोगक्रिया है ॥ ३ ॥ संयमी पुरुषकैं असंयमकैं सन्मुखपणा, सो समादानक्रिया है ॥ ४ ॥ ईर्यापथगमन करना, सो ईर्यापथक्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं पांच ए क्रिया भई ॥

बहुरि क्रोधके वशतैं परकूं दोष लगावनेकी प्रवृत्ति दुष्टस्वभावता, सो प्रादोषिकी क्रिया है ॥ १ ॥ दुष्टपनाके कार्य चोरी आदिका उद्यम करना, सो कायिकी क्रिया ॥ २ ॥ हिंसाके उपकरण शस्त्रादिकका ग्रहण, सो अधिकरणिकी क्रिया है ॥ ३ ॥ जातैं आपकूं परकूं दुःख उपजै ऐसा प्रवर्त्तन, सो पारितापिकी क्रिया है ॥ ४ ॥ आयु इन्द्रिय बल उच्छ्वास निःश्वास जे प्राण तिनका वियोग करना, सो प्राणातिपातिनी क्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं ए पांच क्रिया ॥

बहुरि प्रमादी पुरुषकैं रागभावका आर्द्रितपणातैं रमणीकरूप देखनेका अभिप्राय सो दर्शनक्रिया है ॥ १ ॥ प्रमादके वशतैं स्पर्शनयोग्य वस्तुकविषैं रागपरिणामतैं प्रवृत्ति, सो स्पर्शनक्रिया है ॥ २ ॥ विषयके अपूर्व नवे नवे कारण आधार उपजावना, सो प्रत्ययिकी क्रिया है ॥ ३ ॥ जहां स्त्री पुरुष पशु बेठते प्रवर्तते होय तिस क्षेत्रमें मलमूत्र क्षेपणा, सो समतानुपातक्रिया है ॥ ४ ॥ विनाझाड्या विनामर्दली पृथिवीउपरि काय आदिका निक्षेपण करना, सो अनाभोगक्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं ए पांच क्रिया ॥

बहुरि परके करने योग्य क्रिया आप करै सो स्वहस्तक्रिया ॥ १ ॥ पापका जाकरि आदान-ग्रहण होय इत्यादिक प्रवृत्तिका विशेषका भला जानना, सो निसर्गक्रिया है ॥ २ ॥ परका आचरया जो सावद्य कहिये पापसहितकार्य आदिकका प्रगट करना, सो विदारणक्रिया ॥ ३ ॥ जैसैं अर्हंतकी आज्ञा है, तैसैं आवश्यक आदिकी प्रवृत्ति चारित्रमोहके उदयतैं आपतैं करी न जाय ताका अन्यथा प्ररूपण करै, सो आज्ञाव्यापादिकी क्रिया है ॥ ४ ॥ साठ्य कहिये कपट तथा आलस्यकरि शास्त्रोक्तविधान करनेकेविषैं अनादर करना, सो अनाकांक्षाक्रिया है ॥५॥ ऐसैं ए पांच क्रिया भई ॥

बहुरि छेदन भेदन विगाडना आदि क्रियाविषैं तत्परपणा तथा अन्यपुरुष आरंभ करै तहां आपकैं हर्ष होय, सो प्रारंभक्रिया है ॥ १ ॥ परिग्रहकी रक्षाके अर्थि प्रवर्त्तना, सो पारिग्राहिकी क्रिया है ॥ २ ॥ ज्ञानदर्शन आदिविषैं कपटरूप प्रवर्तना ठगनेके उपाय, सो मायाक्रिया है ॥ ३ ॥ अन्य मिथ्यादृष्टिपुरुष मिथ्यात्वके कार्यविषैं प्रवर्तैं है, ताकूं प्रशंसाकरि गाढा करै जैसैं तू भलै करै है इत्यादिक कहना, सो मिथ्यादर्शनक्रिया है ॥ ४ ॥ संयमके घातककर्मके उदयके वशतैं अत्यागरूप प्रवर्तना, सो अप्रत्याख्यानक्रिया है ॥ ५ ॥ ऐसैं ए पांचक्रिया भई ए सर्व मिलि पचीस क्रिया भई ॥ एक इन्द्रियकूं आदि देकरि हैं, ते कार्यकारणके भेदतैं भेदरूप भये संते सांपरायिककर्मके आश्रवके द्वार हो हैं ॥

इहां इन्द्रिय कषाय अव्रत तौ कारण हैं। बहुरि क्रिया हैं ते तिनके निमित्त होय हैं, तातैं कार्य हैं। ऐसैं भेदरूप जाननै। इहां कोई कहै, इन्द्रिय कषाय अव्रत ए क्रियास्वरूपही हैं, तातैं क्रियाके ग्रहणतैं ग्रहण भयेही, जुदे काहेकूं कहे? ताकूं कहिये, जो, ऐसैं नाहीं। जातैं एकान्त नाहीं है। जो इन्द्रियादिक क्रियास्वभावही हैं। प्रथम तौ नाम स्थापना द्रव्यरूप इन्द्रियादिक हैं ते क्रियास्वभाव नाहीं हैं, अर आश्रवकूं कारण हैंही, सो न्यारे कहे चाहिये। बहुरि ऐसाभी नही, जो, ए इन्द्रियादिक द्रव्याश्रवही हैं। भावाश्रवकर्मका ग्रहण है, सो पचीसक्रियातैं होय है। जातैं योगतैं भया जो कर्मका ग्रहण ताकूं द्रव्याश्रव मानिये है। तातैं ऐसा है, जो इन्द्रियकषायाव्रत हैं ते कारणरूप भावाश्रव हैं अर कार्यरूप पचीस क्रिया हैं। सो कारण कार्य दोऊही कहे चाहिये। इन कारणनिविना क्रिया होय नाहीं। अर कारण विद्यमान रहे तेतैं क्रिया प्रवर्तैंही। ए पचीस क्रिया कही ते संक्षेपरूप कहीं हैं। इनका विस्तार क्रियाके स्थानक असंख्यातलोकमात्र हैं तिनका विशेष अगिले सूत्रमें ज्ञान अज्ञान तीव्र मंद भाव आदिकरि कहसी ॥

बहुरि कोई कहै, इन्द्रियतैंही सर्व आश्रव हैं। इनहीतैं लोक कषायादिकविषैं प्रवर्तैं है, तातैं कषायादिकका ग्रहण न चाहिये। ताकूं कहिये, ऐसा नाही है। जातैं इन्द्रियनिकी रागसहित-

प्रवृत्तिके कारण प्रमत्तगुणस्थानताईंही है, कषायतैं आश्रव अप्रमत्तादिकविषैंभी हैं। जो इन्द्रियही कहिये कषाय नहीं कहिये तौ अप्रमत्तादिकविषैं आश्रव न ठहरै। बहुरि एकेन्द्रियादि असंज्ञीपंचेन्द्रिय जीवनिपर्यंत यथासंभव इन्द्रियमनका अभाव होतैंभी क्रोधादिनिमित्ततैं आश्रव होय है सो न ठहरै। बहुरि कोई कहै कषायहीतैं आश्रव है, तातैं इन्द्रियादिक काहेकूं कहना? ताकूं कहिये, सत्तारूप कषायकर्मका सद्भाव उपशांतकषायविषैंभी है। ताके सांपराय आश्रवका प्रसंग आवै तथा योगनिमित्तक आश्रव तहांभी है, ताका अप्रसंग आवै है। तातैं कषायमात्रही कहना युक्त नाहीं। बहुरि कोई कहै अव्रतही कहना, यामें इन्द्रियादि सर्व आगये। ताकूं कहिये, अव्रत तौ भावमात्र है, ताकी प्रवृत्ति इन्द्रियादिकरूप है, सो कहेविना कैसैं जानिये? तातैं इन्द्रिय कषाय अव्रत क्रिया च्यारयौंही कहना युक्त है॥

आगें इहां कोई कहै है, जो, मन वचन काय योग हैं ते सर्व आत्माके कार्य हैं, तातैं सर्व संसारीजीवनिके समान हैं। तातैं बंधका फल भोगनेमें विशेष नाहीं है। ऐसा कहतैं कहे हैं जो, यह ऐसैं नाहीं हैं। जातैं योग सर्वही जीवनिकैं पाइये हैं। तौऊ तिन जीवनिके परिणाम अनंतभेद लिये हैं, सो ऐसा है सो कहिये हैं। ताका सूत्र—

॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— तीव्रभाव मंदभाव ज्ञातभाव अज्ञातभाव अधिकरण वीर्य इनके विशेषतैं तिस आश्रवका विशेष है। तहां बाह्य अभ्यंतरके कारणके वशतैं उदयरूप भया जो उत्कट परिणाम सो तीव्र है। यातैं विपरीति जो उत्कट नाहीं, सो मंद है। यहू प्राणी मैं मारूं ऐसैं जानि मारनेकी प्रवृत्ति करै, सो ज्ञात ऐसा कहिये। मदतैं तथा प्रमादतैं विनाजाणिकरि प्रवृत्ति होय, सो अज्ञात है। जाविषैं कार्य अधिककरि कीजिये, सो अधिकरण है, याकूं आधारभी कहिये तथा द्रव्य कहिये। द्रव्यकी तिन शक्तिका विशेष, सो वीर्य है। भावशब्द प्रत्येक दीजिये। तब तीव्रभाव मंदभाव इत्यादि जानना। इनके विशेषतैं तिस आश्रवका विशेष है। जातैं कारणके भेदतैं कार्यविषैंभी भेद होय है ऐसैं जानना ॥

इहां भावार्थ ऐसा, जो, क्रोध आदिके अतिवंधनेतैं तीव्रभाव होय है, तिन कषायनिके मंदउदयतैं मंदभाव हो है। बहुरि या प्राणीकूं मैं मारूं ऐसा परिणामभी न होय अर प्राणी माख्या जाय ताहि जाणैं जो यह माख्या गया तथा आप जाणिकरि मारै सो ज्ञातभाव है। बहुरि मदिरादिकके निमित्ततैं इन्द्रियनिका असावधान होना, सो मद तथा असावधानीतैं प्रवर्तना प्रमाद

है। इनके वशतैं विनाजाणैं प्रवृत्ति करना, सो अज्ञातभाव है। पुरुषका प्रयोजन जाकै आधार होय सो वस्तु द्रव्य अधिकरण है। द्रव्यकी शक्ति सो वीर्य है। बहुरि कषायनिके स्थानक असंख्यातलोकप्रमाण है। तातैं जीवनिके भाव बहुत हैं। तातैं तिनका अभावमें विशेष जनना। बहुरि अनुभागके भेदतैं आश्रवनिविषैंभी भेदसिद्धि हो है। इसहीतैं जीवनिकै शरीरादिकका अनंतपणा सिद्ध है। ऐसा भावार्थ जाननां ॥

आगैं पूछै है, जो, अधिकरण कह्या ताका स्वरूप जान्या नाहीं, सो कहौ। ऐसैं पूछैं तिस अधिकरणके भेदके प्रतिपादनके द्वारकरि ताका स्वरूपका निर्णयके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— आश्रवका अधिकरण जीवद्रव्य अजीवद्रव्य ऐसैं दोयभेद लिये है। तहां जीव अजीवका लक्षण पहलें कह्या तेही हैं। इहां अधिकरणविशेष जनावनेकूं फेरि नाम कहे हैं। सो अधिकरण हिंसाआदिका उपकरणपणा है। इहां कोई कहै, जीव अजीव मूलपदार्थ दोयही हैं। तातैं सूत्रमें द्विवचन चाहिये। ताकूं कहिये, ऐसैं नाहीं है। इहां अधिकरणसामान्य नाहीं है। जीव अजीवके पर्याय अधिकरण हैं। तातैं जिसतिस पर्यायसहित द्रव्य बहुतप्रकार हैं। तातैं बहु-

वचन है। सो यह अधिकरण आश्रवका है ऐसा संबंध अर्थके वशतैं सूत्रमें कारण ॥

आगें जीवाधिकरणके भेद जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः॥८॥

याका अर्थ— आदिका जीवाधिकरण है, सो संरंभ समारंभ आरंभ ए तीनि बहुरि मन वचन काय योग तीनि, कृत कारित अनुमोदना ए तीनि, क्रोध मान माया लोभ कषाय च्यारि ए एकएकप्रति देना ऐसा परस्पर गुणे एकसौ आठ भेदरूप है। तहां प्रमादी जीवकै हिंसाआदिके विषैं प्रयत्न कहिये उद्यमरूपपरिणाम सो संरंभ है। बहुरि हिंसाके कारणका अभ्यास करना सामग्री मिलावणा सो समारंभ है। प्रक्रम कहिये आरंभ करणा सो आरंभ है। ऐसैं ए तीनि भये। बहुरि योग पूर्वैं कहेही। मन वचन काय भेद लिये तीनि। बहुरि कृत कहिये आप स्वाधीन होय करै सो, कारित कहिये परकनै करावै सो, अनुमत कहिये पैला करै, ताहूं आप मन वचन कायकरि भला जानै ऐसैं तीनि। बहुरि क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि कषाय इनका लक्षण पूर्वैं कह्या सोही ऐसैं। विशेषशब्द इन सर्वनिकैं संबंध करणा। संरंभविशेष समारंभविशेष इत्यादि। जाकरि अर्थकूं अन्यअर्थ लेकरि जुदा कीजिये सो विशेषशब्दका अर्थ है। ऐसैं आदिका जीवाधिकरण है, सो एते

विशेषनिकरि भेदरूप कीजिये है। बहुरि त्रिआदि च्यारि शब्द हैं ते सुचप्रत्ययान्त हैं, ते यथानुक्रम संबंधकरि लेने। संरंभादि तीनि, योग तीनि, कृत आदि तीनि, कषाय च्यारि इन गणतीकी रीति सुच्प्रत्ययकरि जाणिये है। बहुरि एकशः शब्दकरि वीप्स्या कही है। एकएकप्रति तीनि आदि भेद प्राप्त करने, सोही कहिये हैं। क्रोधकृत कायसंरंभ, मानकृत कायसंरंभ, मायाकृत कायसंरंभ, लोभकृत कायसंरंभ, क्रोधकारित कायसंरंभ, मानकारित कायसंरंभ, मायाकारित कायसंरंभ, लोभकारित कायसंरंभ, क्रोधानुमत कायसंरंभ, मानानुमत कायसंरंभ, मायानुमत कायसंरंभ, लोभानुमत कायसंरंभ। ऐसैं बारह कायसंरंभ भये। ऐसैं वचनयोग मनोयोगविषैं बारहबारह प्रकार संरंभ होय। ते भेले किये छत्तीस होय। तैसैंही छत्तीस समारंभ होय। तथा तैसैंही आरंभ होय। सर्व जोडि जीवाधिकरण एकसो आठ होय हैं। बहुरि सूत्रमें चशब्द है सो अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण संज्वलन जे कषायके भेद च्यारि तिनकरि च्यारिसैं बत्तीस भेद होय हैं। ऐसैं असंख्यातभेदके समुच्चयके अर्थि हैं ॥

आगें दूसरा अजीवाधिकरणके भेद जाननेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥ ९ ॥

याका अर्थ— निर्वर्तना निक्षेप संयोग निसर्ग ये च्यारि। तहां निर्वर्तनाके भेद दोय, निक्षेपके च्यारि भेद, संयोगके दोय भेद, निसर्गके तीनि भेद। ए अजीवाधिकरण हैं, ते संरंभादिकतैं परं कहिये अन्य हैं। तहां जो निपजाईये सो निर्वर्तना है। बहुरि जो निक्षेपणा करिये धरिये सो निक्षेप है। बहुरि जो संयोजन करिये मिलाईये सो संयोग है। बहुरि जो निसर्जन करिये प्रवर्ताईए सो निसर्ग है। इनका दोय आदि संख्यातैं अनुक्रमतैं संबंध करिये। निर्वर्तनाके दोय भेद, निक्षेपके च्यारि भेद, संयोगके दोय भेद, निसर्गके तीनि भेद; ए अजीवाधिकरणके भेद हैं। इहां सूत्रमें परवचन है, ताका अन्य ऐसा अर्थ लेणा। ए संरंभादिक जीवाधिकरण कहे तिनतैं अन्य हैं। जो ऐसा न लीजिये तौ निर्वर्तना आदि जीवहीके परिणाम हैं। तातैं जीवाधिकरणही ठहरै। तहां निर्वर्तना अधिकरण दोय प्रकार है। मूलगुणनिर्वर्तना उत्तरगुण निर्वर्तना। तहां मूल पांचप्रकार, शरीर वचन मन उच्छ्वास निश्वास ऐसैं इनका निपजावना। बहुरि उत्तर काष्ठ पुस्त चित्रकर्म इत्यादि इनका निपजावना ॥

बहुरि निक्षेप च्यारिप्रकार। तहां अप्रत्यवेक्षितनिक्षेपाधिकरण कहिये विना देख्या वस्तु निक्षेपणा स्थापना। दुःप्रमृष्टनिक्षेपाधिकरण कहिये पृथ्वीआदिक बुरीतरह बुहारे मर्दन किये वस्तु धरना। सहसानिक्षेपाधिकरण कहिये शीघ्र वस्तु धरना पटकि देणां। अनाभोगनिक्षेपाधिकरण कहिये वस्तु

जहां धरी चाहिये तहां न धरणां जैसैं तैसैं हरेक जायगा धरणां । बहुरि संयोग दोय प्रकार। तहां भुक्तपानसंयोगाधिकरण कहिये भोजनपानका मिलावणां। उपकरणसंयोगाधिकरण कहिये जिन वस्तुनितैं कार्य किया चाहिये तिन उपकरणनिका संयोग करणां मिलावनां । बहुरि निसर्ग तीनिप्रकार। तहां कायनिसर्गाधिकरण कहिये कायका प्रवर्तन करना । वाग्निसर्गाधिकरण कहिये वचनका प्रवर्तन करना । मनोनिसर्गाधिकरण कहिये मनका प्रवर्तन करना । इहां भावार्थ ऐसा जानना, जो जीव अजीव द्रव्य हैं तिनकैं आश्रय आधारकरि कर्मका आश्रव होय है, तिनके भावनिके ए विशेष हैं। ऐसैं सामान्यकरि तौ आश्रवके भेद कहे ॥

अब कर्मनिके विशेषकरि आश्रवके भेद कहनेकूं वक्तव्य होतें आदिके ज्ञानावरण दर्शनावरण कर्म तिनके आश्रवके भेद जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥ १० ॥

याका अर्थ— तिस ज्ञानदर्शनके विषें प्रदोष निन्हव मात्सर्य अंतराय आसादन उपघात इनका करना, सो इन दोऊनिकै आवरणकर्मनिका आश्रव करै है। तहां मोक्षका कारण जो तत्वज्ञान ताका कोई पुरुष कथन प्रशंसा करता होय ताकूं कोई सराहै नाहीं तथा ताकूं सुणिकरि आप

मौंन राखै अंतरंगविषैं वासूं अदेखसाभावकरि तथा ज्ञानकूं दोष लगावनेके अभिप्रायकरि वाका साधक न रहै, ताके ऐसे परिणामकूं प्रदोष कहिये। बहुरि आपकूं जिसका ज्ञान होय अर कोई कारणकरि कहै जो नाही है, तथा मैं जानूं नाही। जैसैं काहूनें पूछ्या जो हिंसातैं कहा होय? तहां आप जानैं है जो हिंसातैं पाप है, तहां कोई हिंसक पुरुष बैठ्या होय ताके भयतैं तथा आपकूं हिंसा करनी होय तथा आपकें अन्य किछु कार्यका आरंभ होय इत्यादिक कारणानितैं कहै, जो, मैं तौ जानूं नाही, तथा कहै है, हिंसामें पाप नाही इत्यादिकरि अपने ज्ञानकूं छिपावै, ताकूं निन्हव कहिये। बहुरि आप शास्त्रादिका ज्ञान भलेप्रकार पढ्या होय पैलेकूं शिखावनेंयोग्य होय तौऊ कोई कारणतैं शिखावै नाही। ऐसैं विचारै, जो पैलेकूं होय जायगा तौ मेरी बरोबरी करैगा इत्यादि परिणामकूं मात्सर्य कहिये ॥

बहुरि ज्ञानका विच्छेद करै विघ्न पाडै ताकूं अंतराय कहिये। बहुरि परके तथा आपका प्रगट करनेयोग्य ज्ञान होय ताकूं वचनकरि तथा कायकरि बर्जै प्रगट करै नाही तथा परकूं कहै ज्ञानकूं प्रकाशै मति, इत्यादि कहै सो आसादना कहिये। बहुरि सराहनेयोग्य साचा ज्ञान होय ताकूं दूषण लगावै सो उपघात कहिये। इहां कोई कहै, दूषण लगावणा उपघात कह्या सो तौ आसादनाही

भई। ताकूं कहिये, जो छते ज्ञानकूं सद्धिज्ञानका विनय करना तथा प्रदान कहिये शिखावनें आदि तथा ज्ञानके गुणानुवाद करना इत्यादि न करै सो तौ आसादना है। बहुरि साचे ज्ञानकूं कहै यहु ज्ञान झूठा है तथा ज्ञानही नाही ऐसें कहना तथा ज्ञानके नाशका आभिप्राय सो उपघात है। ऐसा भेद जानना। बहुरि सूत्रमें तत्शब्द है ताकरि ज्ञानदर्शन लेना ॥

इहां पूछे, जो, इहां ज्ञानदर्शनका प्रकरण नाही, विनाकहे कैसें लेने? ताकूं कहिये, इहां प्रश्नकी अपेक्षा है। शिष्यका प्रश्न जो ज्ञानदर्शनावरणकर्मका आश्रव कहा? ऐसें प्रश्नतें ज्ञानदर्शन लेने। ऐसें कहनेतें ज्ञानदर्शनविषैं तथा तिनके कारण जे गुरु पुस्तक आदि तिनविषैं प्रदोषादिक करै ते लगाय लेने। जातें गुरु आदि ज्ञानके कारण हैं, तेभी जानने। ऐसें ए प्रदोषादिक ज्ञानदर्शनावरणकर्मके आश्रवके कारण हैं। यहां ऐसा जाननां, जो, एककारणकरि अनेक कार्य होय हैं, सो प्रदोषादिक ज्ञानकेविषैं होय। तैसैंही दर्शनविषैं होय ऐसें समाने हैं। तौऊ दोऊ कर्मका आश्रवरूप कार्य न्यारा न्यारा करै हैं। अथवा विषयके भेदतें आश्रवकाभी भेद है। तातें ज्ञानसंबंधी प्रदोषादिक ज्ञानावरणकर्मका आश्रव करै है। दर्शनसंबंधी दर्शनावरणका आश्रव करै है ॥

इहां एता और जाननां, जो, आचार्योपाध्यायतैं तौ प्रतिकूल रहना, अकाल अध्ययन

करना, श्रद्धान न करना, अभ्यासविषैं आलस्य करना, अनादरतैं शास्त्रका अर्थकूं सुनना, तीर्थ कहिये मोक्षमार्ग ताका उपरोध कहिये रोकना—चलनैं न देना, बहुश्रुत होय गर्व करना, झूठा उपदेश करना, बहुश्रुतकी अवज्ञा करनी, परमतकी पक्ष करनेविषैं पंडितपणा करना, अपने मतकी पक्ष छोडणी, असंबद्धप्रलाप कहिये वृथा बकवाद करना, उत्सूत्रभाषण, ज्ञानाभ्यास करै सो कुछ लौकिकप्रयोजन सधै तैसैं करै, शास्त्रको बेचै, प्राणीनिका घात करै इत्यादिक ज्ञानावरणकर्मके आश्रवकूं कारण हैं। बहुरि तैसैंही दर्शनविषैं मात्सर्य कहिये पैलै देखैं ताकूं दिखावै नहीं, तथा देखताके देखनेविषैं अंतराय करै, बहुरि पैलाके नेत्र उपाडै, तथा परके इन्द्रियनिविषैं प्रतिकूलता कहिये बिगाड्या चाहैं, अपनी दृष्टि सुंदर होय बहुरि दीखता होय ताका गर्व, तथा नेत्रनिकूं आयत लंबे करनें फाडिकरि देखना, तथा दिनविषैं सोवना, तथा आलस्यरूप रहना, तथा नास्तिकपक्षका ग्रहण करना, सम्यग्दृष्टीकूं दूषण लगावना, कुतीर्थकी प्रशंसा करनी, प्राणीनिका घात करना, यतीश्वरनिकूं देखि ग्लानि करनी इत्यादि दर्शनावरणकर्मके आश्रवकूं कारण हैं ॥

आगैं, जैसैं ज्ञानदर्शनावरणकर्मका आश्रवका विशेष कह्या, तैसैंही वेदनीयकर्मका कहै हैं, ताका सूत्र—

॥ दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥

याका अर्थ— दुःख शोक ताप आक्रंदन वध परिदेवन एते आपकै तथा परकै तथा दोऊकै करै करावै ते असातावेदनीयकर्मके आश्रवकूं कारण हैं। तहां पीडारूप परिणाम सो तौ दुःख है। अपना उपकारी इष्टवस्तुका संबंधका विच्छेद होतैं खेदसहित निराशपरिणाम होय, सो शोक है। कोई निंद्यकार्य करनेतैं अपना अपवाद होय तब मन मैला होय तिसका पश्चात्ताप बहुत करना, सो ताप है। कोई निमित्ततैं परिताप भया तातैं विलापकरि अश्रुपातसहित प्रगट पुकारकरि रोवना, सो आक्रंदन है। आयु इन्द्रिय बल प्राणनिका वियोग करना, सो वध है। संक्लेशपरिणामकरि ऐसा रोवना, जामें अपने तथा परके उपकार करावनेकी तथा करनेकी वांछा होय जाके सुणें पैलाकैं अनुकंपा करुणा उपजै, सो परिदेवन है॥

इहां कोई कहै, जो, शोक आदि तौ दुःखकेही विशेष हैं; तातैं एक दुःखही ग्रहण करना। ताकूं कहिये, यह तौ सत्य है, दुःखमें सारेही आय जाय हैं तथापि केई विशेष कहनेकरि दुःखकी जातिका जनावना होय है। जैसैं गऊ ऐसा कहतैं ताके विशेष न जानिये ताके जनावनेकूं खाडी मूंडी काली धौली इत्यादिक कहिये हैं; तैसैं दुःखसंबंधी आश्रवके असंख्यातलोकप्रमाण भेद हैं,

तातैं दुःखही कहते विशेष न जानिये तब केईक विशेष कहनेकरि तिनका भेदका ज्ञान होय है। तातैं विशेष कहे हैं। ते एते दुःखआदिक क्रोधादिक परिणामनितैं आपविषैंभी होय हैं। तथा परकैभी कीजिये है तथा आपके करि पैलाकैंभी करै ऐसैं दोऊविषैंभी होय हैं ते सर्वही असातावेदनीयकर्मके आश्रवके कारण हैं॥

इहां तर्क, जो, दुःखआदिक आपकै तथा परकै तथा दोऊकै कीये पाकें असातावेदनीयके आश्रवके कारण हैं, तौ केशनिका लोंच करना, अनशन तप करना, आतापनादि योग करना ए दुःखके कारण हैं ते आप करै परके करावै सो कौंन अर्थि है? ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है। जो अंतरंग क्रोधआदिकपरिणामके आवेशपूर्वक दुःखआदिक हैं, ते असातावेदनीयके आश्रवकूं निमित्त हैं ऐसा विशेषकरि कह्या है। जैसैं कोई वैद्य परमकरुणाचित्तकरि निःशल्य हुवा यत्नतैं संयमीपुरुषके गूमडाकै चीरा दे है, सो वाकै दुःखका कारण है, तौऊ तिस वैद्यके बाह्य दुःखके निमित्तमात्रतैं पापबंध न होय है; तैसैंही संसारसंबंधी महादुःखतैं विरक्त जो मुनि तिस दुःखको अभाव करनेके उपायविषैं मन लगाया है, शास्त्रोक्तविधानकरि अनशनादिकविषैं प्रवर्तै है तथा अन्यकूं 'पवर्त्तावै है, ताकै संक्लेशपरिणामके अभावतैं बाह्य दुःखनिमित्तपरता होतैंभी

पापबंध नाहीं होय है ॥ इहां उक्तं च दोय श्लोक हैं, तिनका अर्थ कहै हैं— जैसें रोगीका इलाज करतैं वाकै सुख होऊ तथा दुःख होऊ ते सुखदुःख तिस इलाजके कारण नाहीं देखिये है, रोग गमावनेका तौ इलाज सामान्य है; तैसें संसारतैं छूटनेकूं मोक्षका साधनकेविषैं सुख होऊ तथा दुःख होऊ ते दोऊही मोक्षसाधनविषैं कारण नाहीं हैं ॥

भावार्थ— जैसें वैद्यका अभिप्राय रोगीकूं नीरोग करनेका है, तैसें संसारदुःख मेटि मोक्ष प्राप्त होनेका अभिप्रायवालेकै सुखदुःख होना प्रधान नाहीं। तातैं तिनके दुःखके कारण होतैंभी असाताका कारण नाहीं है। इहां दुःखके समानजातीय भाव अन्यभी उपलक्षणतैं जानने। ते कौन सो कहिये हैं। अशुभप्रयोगकरि परकूं पापविषैं प्रेरणा, परपरिवाद कहिये परका अपवाद करना, पैशुन्य कहिये परतैं अदेखसाभावकरि खोटी कहना, चुगली खाणी, परकी करुणा न करनी, परकैं परिताप कहिये तीव्रपीडा उपजावनी, अंग उपांगका छेदन करना, मर्मकी ज्यायगां भेदन विदारण करना, परकूं ताडन करना, परकैं त्रास उपजावना, परका तिरस्कार करना, परकूं भुलसना दडावना, परका अंग छोलना, काटना, श्वासनिरोध करना, बांधना, रोकना, मसलना, परकूं वसमैं राखना, स्वच्छंद रहनें न देना, परकूं वाहना, वोझु आदि दे चलावना, परकूं

शरीरकूं घसना, रगडना, परकी निंदा करणी, अपनी प्रशंसा करनी, संक्लेश उपजावना, बहु आरंभ करना, बहुपरिग्रह चाहना, परका प्राण हरणा, क्रूरस्वभाव राखणा, पापकर्मकी आजीविका करनी, अनर्थदंड—विनाप्रयोजन पाप करना, आहारादिमें विष मिलावना, पांसी वागुरा जाल पींजरा मंत्र आदि जीवनिके घातका उपाय करना, शस्त्रानिका अभ्यास करना, पापमिश्रभाव राखना, पापी जीवनिसूं मिलता राखनी, तथा तिनकी चाकरी करनी, तिनतैं संभाषण देने लेनेका व्यवहार करना, ए सर्वही असातावेदनीयके आश्रवकूं कारण हैं ॥

आगैं, असातावेदनीयका आश्रवके कारण तौ कहे, बहुरि सातावेदनीयका आश्रवका कारण कहा है ऐसैं पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥

याका अर्थ— भूत कहिये प्राणी अर व्रतवान् इनविषैं तौ अनुकंपा, बहुरि दान देना, सरागसंयम आदिक इनका योग कहिये समाधि भलेप्रकार चित्तका समाधानकरि इनमें लगावणा चिंतवना, बहुरि क्षमा शौच बहुरि इतिशब्दतैं अरहंतपूजादिक ए सर्व सातावेदनीयके आश्रवके कारण हैं। तहां कर्मके उदयके वशतैं गतिगतिविषैं वर्तता जो भूत कहिये प्राणिमात्र लेणे।

वहुरि अहिंसादिक व्रत जिनकैं होय ते व्रती कहिये, ते घरके त्यागी तौ मुनि वहुरि घरहीमें अणुव्रत पालैं ते श्रावक। वहुरि जो परके उपकारविषें आर्द्रितचित्त पैलाकी पीडाकूं अपनेविषें भई जैसैं माननेवाले पुरुषकें करुणाभाव होय, सो अनुकंपा कहिये। जो प्राणिमात्रविषें तथा व्रतीनिविषें अनुकंपा होय सो भूतव्रत्यनुकंपा कहिये। वहुरि परके उपकारकी वुद्धिकरि अपना धनादिक देना सो दान है। वहुरि संसारके कारण जे द्रव्यभावकर्म तिनके अभाव करनेविषैं उद्यमी अर जिनके चित्तमें संसारके कारणकी निवृत्ति करनेका राग ते सराग कहिये, वहुरि प्राणी तथा इन्द्रियनिविषैं अशुभप्रवृत्तिका त्याग सो संयम कहिये, सो पूर्वोक्तसरागीनिका संयम सो सरागसंयम कहिये। अथवा रागसहित संयम सो सरागसंयम है॥

इहां आदिशव्दकरि संयमासंयम अकामनिर्जरा वालतप लेणे। वहुरि योग कहिये समाधि सम्यक् चित्त लगावणा। भावार्थ— प्राणिमात्र तथा व्रतीनिविषें तौ करुणाभाव वहुरि दान वहुरि सरागसंयमादिक इनकेविषैं तौ चित्त राखणा। वहुरि क्रोधादिपरिणामका अभाव सो क्षान्ति कहिये क्षमा है। वहुरि लोभके प्रकार जीवनेका लोभ, नीरोग रहनेका लोभ, इन्द्रिय वणी रहनेका लोभ, उपकरणवस्तुका लोभ ए हैं, तथा अपना द्रव्य न देना, परका द्रव्य लेणां, चोरिभी लेणा, पैलाकी

धरी वस्तुकूं छिपावना इत्यादि अनेकप्रकार हैं, तिनका न करना सो शौच है ॥ बहुरि इतिशब्द इहां प्रकारअर्थमें है, ताकरि अरहंतकी पूजा करवाविषैं तत्परपणा तथा बाल वृद्ध तपस्वी मुनिनिका वैयावृत्य करना इत्यादिक लेणा। इहां प्रश्न, जो, भूतके कहनेतैं प्राणिमात्र तौ आयही गये, फेरि व्रतीका ग्रहण काहेकूं किया? ताका समाधान, जो, व्रतीकेविषैं अनुकंपाका प्रधानपणां जनावनेके अर्थि फेरि व्रतीका ग्रहण है। प्राणीनिकेविषैं तौ सामान्यपणें होयही परंतु व्रतीनिकेविषैं विशेषकरि होय। जैसें बडे आदमीकै हरेकसूं प्रीति होय है, परंतु अपना जिनतैं प्रयोजन सधता होय ऐसें कुटंब आदिक तिनतैं विशेषकरि होय; तैसें इहांभी जानना। ऐसें एते सातावेदनीयके आश्रवके कारण जानने। ऐसें ए परिणाम सर्वथा एकान्तवादी आत्माकूं नित्यही मानें तथा अनित्यही मानें हैं तिनके मतमें सिद्ध नाहीं होय हैं। जातैं सर्वथा नित्यकै तौ परिणाम पलटैही नाहीं। बहुरि सर्वथा अनित्यकैं पूर्वापरका जोड नाहीं। तातैं कैसें बनें?

आगें तिस वेदनीयकैं अनंतर कह्या जो मोहनीयकर्म ताके आश्रवके भेद कहनेयोग्य हैं। तातैं ताका भेद जो दर्शनमोह, ताके आश्रवके भेद कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ केवलिश्रुतसंघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३ ॥

याका अर्थ— केवली श्रुत संघ धर्म देव इनका अवर्णवाद कहिये अणछते दोष कहने, ताकरि दर्शनमोहकर्मका आश्रव होय है। तहां इंद्रियनितैं जानना बहुरि अनुक्रमतैं जानना बहुरि किछु आडो आवै तब न जानैं सो व्यवधान ताकूं अंतरभी कहिये। इनतैं उलंघि जाके विनाइन्द्रिय एककाल सर्व जाननेवाला ज्ञान होय सो केवली, ऐसैं अरहंतभगवान् तिनकूं कहै कवलाहार करै है विनाआहार करै जीवै कैसें? तथा केवल आदि तथा तूंवी आदि राखै है, तथा कालभेदकरि ज्ञान वर्तै है इत्यादिक वचन कहै सो केवलीनिका अवर्णवाद है। बहुरि तिन केवलीनिका भाष्या बुद्धिका अतिशय ऋद्धिकरि युक्त जे गणधर तिनकरि ग्रंथरचनारूप कीया सो श्रुत शास्त्र ताविषें कहै मांसभक्षण मदिरापान करना कामातुर होय तौ मैथुनभी सेवना रात्रिभोजनभी करै इनमें पाप नाही ऐसैं शास्त्रमें कह्या है ऐसैं कहना शास्त्र श्रुतका अवर्णवाद है। बहुरि संघविषैं कहै मुनि ते शूद्र हैं स्नान करैंही नाहीं मललिप्त जिनका अंग है ए दिगम्बर अपवित्र हैं निर्लज्ज हैं, इहांही दुःख भोगवैं हैं, परलोकविषैं कैसैं सुखी होंयगे इत्यादिक वचन कहना, संघका अवर्णवाद है ॥

इहां संघ कहतां रत्नत्रयकरि सहित च्यारिप्रकारके मुनिकूं संघ कह्या है। तहां मुनि कहिये अवधिमनःपर्ययज्ञानी, ऋषि कहिये ऋद्धि जिनकूं फुरी होय, यति कहिये इन्द्रियके जीतनहारे,

अनगार कहिये सामान्य साधु ऐसैं च्यारि भेद हैं। इहां कोई पूछे, एकही मुनिकूं संघ कैसैं कहिये? अनेक व्रतआदि गुणनिका समूह जामें है तातैं एककैभी संघपणा बणै है। बहुरि अहिंसाका लक्षण बहुरि केवली श्रुतकेवलीके आगमकरि कह्या है ऐसा धर्म है, ताकूं कहै जिनका धर्म है सो गुणरहित है याके सेवनहारे असुर होयगे इत्यादिक कहना, सो धर्मविषैं अवर्णवाद है। बहुरि देव च्यारिप्रकारके पहलैं कहे तेही, तिनकूं कहै देवता मांसआहारी हैं, मदिरा पीवैं हैं, ऐसें कहिकरि तिनकी स्थापना करि जीव मारि तिनकूं चढावै मदिरा चढावै इत्यादिक कहैं करै सो देवनिका अवर्णवाद है। ऐसैं गुणवान् महंतपुरुषनिविषैं तथा तिनका प्रवृत्तिविषैं विनाहोते दोष आरोपणा करै, सो अवर्णवाद है। सो यातैं मिथ्याश्रद्धानलक्षण जो दर्शनमोहकर्म ताका आश्रव होय है ॥

आगें, मोहनीयकर्मका दूसरा भेद जो चारित्रमोह, ताके आश्रवके भेदकूं सूत्र कहै हैं—

॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥ १४ ॥

याका अर्थ— कषायनिके तीव्रउदयतैं तीव्रपरिणाम होय तातैं चारित्रमोहनीयकर्मका आश्रव होय है। तहां आपकै अर परकै कषाय उपजावना बहुरि तपस्वीजनकूं तथा ताके व्रतकूं दूषण लगावना बहुरि जामें संक्लेशपरिणाम बहुत होय ऐसा भेष तथा व्रत धारणा इत्यादि तीव्रकषायनिके

अनेक कार्य हैं, सो करनें, ताकरि कषायवेदनीयका आश्रव होय है ॥

बहुरि नोकषायवेदनीयके कहे हैं। तहां सत्यधर्मकी हास्य करना, दीनजननिके मुखपरि हास्य करना, बहुतप्रलाप, निरर्थक हसना, हास्यहीका स्वभाव राखना ताकरि हास्यवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि अनेक प्रकार क्रीडा करनेविषैं तत्परपणां, व्रतशीलनिविषैं अरुचिपरिणाम रतिवेदनीयका आश्रव है। बहुरि परकैं अरति उपजावना, परकी रतिका विनाश करना, पापीपणाका स्वभाव राखणा, पापीजनका संसर्ग करना इत्यादिकतैं अरतिवेदनीयके आश्रव होय हैं बहुरि आपकै शोक उपजावना परकै शोक होय तामैं हर्ष मानना इत्यादिकतैं शोकवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि अपने परिणाम भयरूप राखेन परकै भय उपजावनां इत्यादिकतैं भयवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि भले आचारक्रियाविषैं जुगुप्सा राखणी, ताकी निंदा करणी, परका अपवाद करनेहीका स्वभाव राखना इत्यादिकतैं जुगुप्सावेदनीयका आश्रव होय है।

बहुरि झूठ बोलनेहीका स्वभाव राखना, परकूं ठगनेविषैं तत्पर रहना, परके छिद्र दूषण हेरनेविषैं अपेक्षा राखणी, अतिवधतैं राग, काम कुतूहलादिकके परिणाम राखने इत्यादिकतैं स्त्रीवेदवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरी थोरे क्रोध आदि कषायनिकरि लिप्त होना, अपनी स्त्रीहीविषैं

संतोष राखना इत्यादिकतैं पुरुषवेदवेदनीयका आश्रव होय है। बहुरि प्रचुरकषायपरिणाम गुह्येंद्रिय लिंग आदिकका काटना, परस्त्रीविषैं आसक्ततातैं वशीभूतपणा इत्यादिकतैं नपुंसकवेदवेदनीयका आश्रव होय है ॥

आगैं, मोहनीयकर्मका आश्रवभेद कहे, अर ताके अनंतर कह्या जो आयुकर्म, ताके आश्रवके कारण कहने हैं। तामैं आदिका नारकीजीवनिका आयुआश्रवका कारण कहनेकूं सूत्र कहै हैं। कैसा है यह आयु? नियमरूप है उदयकाल जाका, इनका आयु छिदै नाहीं है ॥

॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— बहुतआरंभपणा तथा बहुतपरिग्रहपणां नारकीके आयुके आश्रवकौं कारण है। तहां प्राणीनिकूं पीडाका कारण व्यापार प्रवर्त्तन करना, सो तौ आरंभ है। बहुरि मेरा यह है ऐसा ममत्वभाव है लक्षण जाका, सो परिग्रह है। बहुरि ए जाके बहुत होय सो बहुआरंभपरिग्रह कहिये। सो कहा? हिंसा आदि पंच पापनिविषैं क्रूरकर्म करना निरंतर प्रवर्त्तना, परधन हरणां, विषयनिकी अतिलोलुपता करणी, कृष्णलेश्याकरि तज्या जो रौद्रध्यान तिससहित मरणा इत्यादिक हैं लक्षण जाका, सो नारकआयुका आश्रव है। याका विशेष— मिथ्यात्वसहित आचार, उत्कृष्टमानकषाय,

शिलाभेदसदृश क्रोध, तीव्रलोभविषैं अनुरागपणां, अनुकंपारहित परिणाम, परकै परिताप उपजावनेहीके भाव, वधबंधनका अभिप्राय, प्राणी भूत जीव सत्त्व इनका निरंतर घातहीके परिणाम, ऐसाही असत्यवचन, कुशील, चोरीका अभिप्राय, दृढ वैर, परके उपकारतैं विमुख परिणाम, बहुरि देवगुरुशास्त्रका भेदकरि बुद्धिकल्पित मत चलावना इत्यादि जानना ॥

आगें, नारकआयुका आश्रव तौ कह्या अब तिर्यंचयोनिका आश्रव कहना, ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥ १६ ॥

याका अर्थ— माया कहिये कुटिलपरिणाम सो तिर्यंचयोनिका आश्रव है। तहां चारित्रमोहकर्मका विशेषका उदयतैं प्रगट हूवा आत्माका कुटिलभाव सो माया है याहूं निकृतिभी कहिये, सो यह तिर्यंचयोनिका आश्रव जानना। याका विस्तार— मिथ्यात्वसहित धर्मका उपदेश देना, शीलरहितपणां, परकूं ठगनेके विषैं प्रीतिरूप परिणाम, नीलकापोतलेश्या, आर्तध्यानकरि मरना इत्यादिक जानना ॥

आगें, तिर्यंचयोनिका आयुका आश्रव कह्या अब मनुष्यआयुका आश्रवका कारण कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥

याका अर्थ— अल्पारंभपणा अल्पपरिग्रहपणा है सो मनुष्यके आयुका आश्रवका कारण है। तहां जो नारकका आयुका आश्रव कह्या था, तातैं विपरीति कहिये उलटा मानुषआयुका आश्रव है। ऐसा तौ संक्षेपकरि जानना। बहुरि याका विस्तार ऐसा— विनययुक्तस्वभाव होय, प्रकृतिहीकरि भद्रपरिणाम होय, मनवचनकायकी सरलतासूं व्यवहार करै, थोरे कषाय होय, मरणकालविषै संक्लेशपरिणाम नाहीं होय इत्यादिक जानना॥ भावार्थ ऐसा, जो, पापपुण्यरूप मिश्रमध्यके परिणामनितैं मनुष्यआयुका आश्रव होय है॥

आगैं प्रश्न, जो, मनुष्यआयुका आश्रव एतावन्मात्रही है, कि किछु औरभी है? ऐसैं पूछें उत्तरका सूत्र कहैं हैं—

॥ स्वभावमार्दवं च ॥ १८ ॥

याका अर्थ— स्वभावहीकरि कोमलभाव होय सोभी मनुष्यआयुका आश्रव है। इहां मृदुका भाव सो तौ मार्दव है, सो अन्यकारणकी अपेक्षारहित स्वभावहीकरि मार्दव होय, सो तौ मार्दव कहिये। यहभी मनुष्यआयुका आश्रव है। इहां पहले सूत्रतैं न्यारा सूत्र कीया, ताका

यह प्रयोजन है, जो, आगें देवआयुका आश्रव कहैंगे, सो स्वभावमार्दव देवायुकाभी आश्रव है ऐसा जणाया ॥

आगें पूछै है कि ए दोयही मनुष्यायुके आश्रव हैं कि औरभी हैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहैं हैं—

॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥ १९ ॥

याका अर्थ— शील कहिये उत्तरगुण, व्रत कहिये मूलगुण, तिनकरि रहितपणा है; सो सर्व आयु कहिये च्यारयौंही आयुका आश्रव होय है। इहा सूत्रमें चशब्द है सो पहले अल्पारंभपरिग्रहपणा कह्या ताका मनुष्यके आयुका समुच्चयके अर्थि है। तातैं अल्पारंभपरिग्रहपणाभी अरु निःशीलव्रतपणाभी मनुष्यआयुके आश्रव हैं, ऐसैं जानना। शील अर व्रत इनका व्याख्यान आगैं होसी। इनतैं रहित सो निःशीलव्रतपणां बहुरि सर्वेषां कहतां सर्वही आयुका यह आश्रव जानना। इहां पूछै, जो, देवायुका आश्रवहीभी शीलव्रतरहितपणातैं होय है कहा? तहां आचार्य कहै हैं, सत्य है, होय है, परंतु भोगभूमिकी अपेक्षा जानना, तहांका जीव अव्रती है अर देवायुही बांधै है॥

आगें, चौथा आयु जो देवआयु ताका आश्रव कहा है ऐसैं पूछै सूत्र कहैं हैं—

॥ सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥ २० ॥

याका अर्थ— रागसहित संयम संयमासंयम अकामनिर्जरा बालतप ए देवआयुके आस्रवके कारण हैं। तहां सरागसंयम संयमासंयम इनका व्याख्यान तौ पहलै कीया थाही। बहुरि काहूकूं बंदीखानैं रोकै तथा बंधनसे बांधै तहां भूक तृषाका भुगतना बहुरि स्त्रीका संगम नाहीं तातैं ब्रह्मचर्यभी सहजही तथा भूमिपर सोवना शरीरविषैं मलका धारण तथा परके कीये पीडा दुःख सहना सो अकाम निर्जरा है। विनालिये दुःख आये तिनकूं सहैहै, सो पापकर्मनिकी निर्जरा होय है। बहुरि मिथ्यात्वकरि सहित विनाउपाय कायक्लेश जामें पाईये ऐसैं कपटकी बहुलताकरि व्रत धारना जामें होय, सो बालतप कहिये। ते ए देवआयुके आश्रवके कारण जानने ॥

इहां विस्तार, जो, जिनतैं अपना भला जानैं ऐसैं मित्रनिका तौ संबंध करै, आयतन कहिये कल्याण होनेके ठिकाणें देव शास्त्र गुरु तिनकी सेवा करै, भले धर्मका आश्रय करै, धर्मका गुरुपणां महान्पणां दिखावै, निर्दोष प्रोषधउपवास करै, जीवअजीवपदार्थनिके विनाजाणें बालतप करै, तथा अज्ञानरूप संयम पालै ऐसैं केई क्लेशभावनिके विशेषतैं भवनवासी व्यंतर आदि सहस्रारस्वर्गपर्यंतविषैं उपजै हैं। बहुरि अकामनिर्जरावाले सूत्रमें कहे हैं तिनके विनालिये दुःख आवै तामें संक्लेशपरिणाम न करै ऐसा बहुरि धर्मबुद्धितैं पर्वततैं पडै वृक्ष चढि पडै अनशन करै अग्निजलमें

प्रवेश करै विष खाय ऐसैं मरण करै चित्तमें करुणा राखै जलकी रेखासमान क्रोध तिनकैं होय ऐसैं व्यंतरादिविषैं उपजै हैं ॥

आगें पूछैं, कहा देव आयुका आश्रव एतावन्मात्रही है? आचार्य कहै हैं, नाहीं, औरभी है ऐसैं सूत्र कहै हैं—

॥ सम्यक्त्वं च ॥ २१ ॥

याका अर्थ— सम्यक्त्वभी देवआयुका आश्रवकूं कारण है। इहां देवका विशेष न कह्या, तौऊ कल्पवासीहीका ग्रहण करना। जातैं न्यारा सूत्र ऐसैं जनावनेकूंही कीया है। इहां प्रश्न, जो, पहलै सूत्रमें सरागसंयम संयमासंयम कहे तिनकैं भवनत्रिककी आयूकाभी आस्रवकी प्राप्ति आवै है। जातैं इहां सम्यक्त्वका सूत्र न्यारा कह्याही है। ताका समाधान, जो, यह दोष नाही है। जातैं सम्यक्त्वका अभाव जाकै होय ताकै सरागसंयम संयमासंयम ए नामही न पावैं हैं, ते दोऊभी इस सूत्रमें गर्भित कर लेंणे। इहां कोई पूछै, सम्यक्त्वतैं कल्पवासी देवहीका आयु बंधै ऐसा नियम कह्या तहां तीव्रसम्यग्दृष्टीनिका तौ समझैं। बहुरि जे अव्रती सम्यग्दृष्टि हैं तिनकै मिथ्यादृष्टीकेसे बहुआरंभादिक कार्य देखिये हैं, ताकै कैसैं नियम संभवै? तथा राजा श्रेणिक क्षायिक

सम्यक्त्वी अपघाततैं मरण कीया, तातैं नरक गया ऐसैं पुराणमें लिखै है सो कैसैं समझें? ताका उत्तर, जो, इहां मनुष्यतिर्यंचकी अपेक्षाकरि नियम है। देव नारकीनिकैं सम्यक्त्व होतेंभी मनुष्यआयुका बंध हो है। सम्यग्दृष्टि देव नारकी मनुष्यही उपजै हैं। बहुरि मनुष्य तिर्यंचकैं देवायु बंधै है। तिनकैं मिथ्यात्वके अभावतैं जीवतत्वविषैं अजीवतत्वकी श्रद्धाका अभाव भया है। त्रसस्थावर जीवनिकूं सर्वज्ञके आगम अनुसार श्रद्धान कीया है॥

बहुरि अनंतानुबंधी कषाय मिथ्यात्वकी लार लगी है। सो तिसके विशेष क्रोध मान माया लोभका अभाव भया है। तातैं तिस अनंतानुबंधिसंबंधी हिंसाका अभाव है। सर्व जीवनितैं अंतरंगविषैं करुणाभाव है। सर्वकूं आप समान जानै है। कदाचित् अप्रत्याख्यानावरणका तीव्र उदयतैं आरंभादिकविषैं प्रवर्तें है। तहां अपने तीव्र अपराध जानै है। तीव्र उदयतैं कार्यका अभाव न कीया जाय है। तहांभी न्याय अन्याय लौकिकसंबंधी आचार विचार बहुत करै है। अपनी जाणिमें अन्यायविषैं नाही प्रवर्तें है। शुद्धवृत्ति न्यायनें लिये आरंभादिक करै है। तामैं हिंसा होय है ताकूं ऐसा जानै है, जो, यामें दोष नाही; हमारी पदवी है ऐसैं स्वच्छंद निःशंक परिणमन करै है। ऐसैं होतें अंतरंगके कषाय निपट हलके हैं। तातैं कल्पवासी देवहीका आयु बंधै है॥

बहुरि श्रेणिक राजा पूर्वें मोटा अपराधतैं सप्तम नरकका आयु बंधा था, सो आयुबंध भये पीछें पलटै नाहीं, तातैं सम्यक्त्व भयें पीछें ताके माहात्म्यतैं वऱ्हायुका अपकर्षण करि स्थिति घटाई प्रथमपृथ्वीके पहले पाथडे चौरासी हजार वर्षकी आयु तै उपज्या सो आयुबंधके निमित्ततैं अंतसमय अप्रत्याख्यानावरणका ऐसा तीव्रस्थानक उदय आया, जो, अपघातकरि मरण भया, तातैं तहां उपज्या। सो पूर्वें मिथ्यात्वमें आयु न बंधै ताकै तौ मनुष्यतिर्यंचकै कल्पवासी देवहीकी आयुका आश्रव होय है ऐसा अर्थ जानना ॥

आगैं, आयुकर्मकै अनंतर रह्या जो नामकर्म, ताका आश्रवकी विधि कहनी, तहां अशुभनामकर्मके आश्रव जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ योगवक्रताविसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥ २२ ॥

याका अर्थ— मनवचनकायके योगनिकी वक्रता कहिये कुटिलता बहुरि विसंवाद कहिये अन्यकूं अन्यथा प्रवर्तावना ए दोऊ अशुभनामके आश्रवके कारण हैं। तहां योग तीनिप्रकार तौ पहले कह्या सोही हैं, तिनकी वक्रता कहिये कुटिलता मनमें कछू और विचारणा, पीछें परकूं ठगनेके अर्थि वचनतैं कछू और कहना, बहुरि कायतैं कछू और क्रिया करणी, जाकरि पैला ठिगाय

जाय ऐसें भुलावा देणां सो कुटिलता है। बहुरि विसंवाद कहिये अन्यकूं अन्यथा प्रवर्तावना। इहां कोई कहै, योगनिकी वक्रता सोही अन्यथा प्रवर्तन है इनमें अर्थभेद दीखै नाहीं। ताकूं कहिये, जो, यह तो सत्य है, परंतु अर्थभेदभी है। आपकी अपेक्षा तौ योगवक्रता है। विसंवाद परकी अपेक्षा है। पैला कोई अपना कल्याण करनहारी जो भली स्वर्गमोक्षके उपायकी क्रिया ताविषै प्रवर्तता होय, ताकूं भुलाय आप तिसकी क्रियाकूं मन वचन कायतैं अन्यथा कहै, ताका विसंवाद करै, निंदा करै; ऐसें कहै, जो 'यह क्रिया मति करै बुरी है हम कहैं जैसी करि' ऐसें ठगनेके अर्थि करै सो विसंवादन है। ए दोऊ अशुभनामकर्मके आश्रवके कारण जानने ॥

इहां सूत्रमें चशब्द है ताकरि मिथ्यादर्शन, अदेखसाभाव, चुगली खाणी, चलायमानचित्तपणां, हीनाधिक मान तासडी तोला करना, परकी निंदा करणी, आपकी प्रशंसा करनी इत्यादिक समुच्चय करना। इहां विशेष और लेणे। खोटे सुवर्ण मणि आदि बनाय तिससारिखे बनाय ठगना, झूठी साखि भरना, परके अंग उपांग बिगाडने, वर्ण रस गंध स्पर्शका अन्यथा प्रवर्तन करना, यंत्र पींजरे बणावनें, अन्यद्रव्यका अन्य द्रव्यविषै संबंधकरि कपटकी प्रचुरता करणी, झूठ बोलना, चोरी करना, बणा आरंभ करना, परिग्रहकी चाह तीव्र राखनी, परके ठगनेकूं उज्वल वेप करना,

मद करना, कठोरवचन बोलनें, बुरा प्रलाप वकना, परकूं वश करनेकूं अपना सौभाग्य दिखावना, परकूं कुतूहल उपजावना, सुन्दर अलंकार पहरने, चैत्यमंदिरके उपकरणपूजाकी सामग्री चोरना, परकूं वृथा विलमाय राखना, परका उपहास करना, ईंटनिके पजावा पकावने, दौं लगावना आदि अग्निका प्रयोग करना, प्रतिमा तथा ताका आयतन कहिये मंदिर तथा वनकी वस्तिका बाग आदिका विनाश करना, तीव्र क्रोध मान माया लोभविषैं प्रवर्तना, पापकर्मकी आजीविका करनी इत्यादि जानने ॥

आगें शुभनाकर्मका कहा आश्रव है ऐसें पूछें सूत्र कहे हैं—

॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥ २३ ॥

याका अर्थ— अशुभनामकर्मका आश्रव कह्या तातैं विपरीत कहिये उलटा शुभनामकर्मका आश्रव है। तहां काय वचन मनका सरलपणा बहुरि अविसंवादन ए तद्विपरीत हैं। बहुरि पहलैं चशब्दकरि समुच्चय किये थे तिनके विपरीत लेणे। धर्मात्मा पुरुषनिका दर्शन करना, तिनका आदर सत्कारकरि अपने हितू मानने, संसारतैं भय करना, प्रमादका वर्जन करना इत्यादिक ए शुभनामकर्मके आश्रवके कारण जानने। इहांभी पूर्वैं विशेष कहे तिनतैं उलटे जान लेंणे ॥

आगें, शुभनामकर्मका आश्रव कहा एतावन्मात्रही है, कि कोई औरभी विशेष है? ऐसें पूछें इहां कहै कि, जो, यह तीर्थंकरनामपणां नामा नामकर्म है, सो अनंत अनुपम प्रभावकूं लिये है, बहुरि अचिंत्यविभूतिविशेषका कारण है, तीनि लोकविषैं विजय करणहारा है, सर्व त्रैलोक्यके इन्द्रादिकरि पूज्य है, ताका आश्रवकी विधि विशेषरूप है। तहां फेरि पूछें है, जो, ऐसा है तो कहो ताके आश्रवके कारण केते हैं? ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावनाप्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥

याका अर्थ— ए सोलह भावना हैं ते तीर्थंकरनामा नामकर्मके आश्रव हैं। तहां जिनभगवान् अरहंतपरमेष्ठीका उपदेश्या कह्या जो निर्ग्रन्थलक्षण मोक्षमार्ग ताविषें रुचि प्रतीति श्रद्धा सो दर्शन कहिये, ताकी विशुद्धि कहिये पहलें कही निरतिचारपणा सो जानना। याके आठ अंग हैं निःशंकितत्व, निःकांक्षितत्व, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टिता, उपबृंहण, स्थितीकरण, वात्सल्य, प्रभावना ऐसें। तहां इहलोक परलोक व्याधिवेदना मरण अरक्षण अगुप्ति अकस्मात् ए सात भय

हैं, तिनके निमित्ततें श्रद्धातें छूटै नाहीं, तथा अरहंतका उपदेश्या प्रवचन ताविषें 'यह सत्य है कि असत्य है' ऐसा संदेहका न करना, सो निःशंकितत्व है ॥ १ ॥ इहलोक परलोकसंबंधी विषयभोगकी वांछा न करै, तथा अन्यमतमें किछू लौकिकचमत्कार देखि तिस मतकी वांछा न करै, कोऊ कारण आइ बणै तौऊ वांछाकरि श्रद्धानकूं न छोडै, सो निःकांक्षितत्व है ॥ २ ॥ शरीर आदिकूं अशुचि जानि यह शुचि है ऐसा मिथ्यासंकल्पका अभाव तथा अरहंतके प्रवचनविषें फलाणां कष्ट घोर कह्या है जो 'यह न होय तौ और तो सर्व युक्त है' ऐसी अशुभभावनाका अभाव सो निर्विचिकित्सा है ॥ ३ ॥ अनेकप्रकारके कुनयके पक्षपातरूप मत ते तत्वसारिखे समान दीसै अर यथार्थ नाहीं, तिनविषें परीक्षारूप नेत्रनिकरि परीक्षा करि युक्तका अभाव देखि मूढतातें रहित होना, सो अमूढदृष्टिता है ॥ ४ ॥

उत्तमक्षमाआदि धर्मनिकी भावना करि आत्माके धर्मकी वृद्धि करणी, सो उपबृंहण है तथा याका नाम उपगूहनभी है। तहां साधर्मी जनकूं कर्मके उदयतें कोई अवगुण लग्या होय ताकूं उपदेशकरि छुडावना तथा जामें धर्ममार्गकी अवज्ञा न होय तैसें छिपावना सो उपगूहन है ॥ ५ ॥ कषाय आदि कर्मके उदयकरि धर्मतें छूटनेके कारण बणै तहां आपकूं तथा साधर्मीजनकूं धर्मतें

दृढ करि थिरता करणी सो स्थितीकरण है ॥ ६ ॥ धर्मविषैं तथा धर्मात्माविषैं प्रीति दृढ होय परमवत्सलभाव होय सो वात्सल्य है ॥ ७ ॥ दर्शन ज्ञान चारित्र तेई भये तीनि रत्न तिनकरि आत्माकूं अलंकाररूप शोभायमान करि उद्योत करना तथा महान् दान जिनपूजा प्रतिष्ठा विद्या मंत्र अतिशय चमत्कार करि मार्गका उद्योत करना जातैं लोक ऐसा जानै 'यह धर्म सत्यार्थ है' ऐसैं करना, सो प्रभावना है ॥ ८ ॥ ऐसैं सम्यग्दर्शनके अतीचार सोधि अष्टांगभूषित करना, सो दर्शनविशुद्धि है ॥ १ ॥

सम्यग्ज्ञानादिक जे मोक्षके साधन तथा तिनके साधन जे गुरु शास्त्र आदि तिनविषैं अपने योग्य प्रवृत्ति करि सत्कार आदर करना अथवा कषायकी निवृत्ति, सो विनयसंपन्नता है ॥ २ ॥ अहिंसादिक व्रत तथा तिनके रक्षक क्रोधवर्जनादिक शील तिनकूं उत्तरगुणभी कहिये तिनविषैं यथापदवी मनवचनकायकरि दोष न लगावना, सो शीलव्रतेष्वनतिचार है ॥ ३ ॥ मति आदि ज्ञानके भेद प्रत्यक्षपरोक्षप्रमाणरूप अज्ञानका अभाव जिनका फल तथा हेयका त्याग उपादेयका ग्रहण तथा उपेक्षा कहिये वीतरागता जिनका फल ऐसैं ज्ञानकी भावनाविषैं निरंतर उपयोग राखणा, सो अभीक्ष्णज्ञानोपयोग है ॥ ४ ॥ संसारविषैं शरीरसम्बन्धी मनसंबंधी अनेकभेद लिये अतिकष्ट

लीये दुःख है, बहुरि प्यारेका वियोग अनिष्टसंयोग चाहीवस्तुका अलाभ इत्यादिसहित है ऐसें संसारतें भय करना, सो संवेग है ॥ ५ ॥ पैलेकूं प्रीतिका कारण वस्तुका देना, सो त्याग है। तहां पात्रके निमित्त आहार देना, सो तिस दिनविषें वाकै प्रीतिका कारण है। अभयदान देना सो तिस भवविषें प्रीतिका कारण है। बहुरि सम्यग्ज्ञान है सो अनेकलाख भवनिके दुःख मेटनेका कारण है। यातें ए तीनिप्रकारके त्याग हैं सो करै ॥ ६ ॥

अपना वीर्य शक्तिकूं छिपायकरि मार्गतैं अविरोधी कायक्लेश करै, सो तप है। तहां ऐसा विचारै, जो, यह शरीर है सो दुःखका कारण अनित्य है, अशुचि है, याका स्वइच्छा भोगनिकरि पोषना युक्त नाहीं, बहुरि अशुचिभी है, तौऊ गुणरूप रत्ननिका संचय करनेका उपकारी है, तातैं विषयसुखनिका संगम छोडि याकूं अपने कार्यविषें लगावना यथाशक्ति मार्गतैं अविरोधी कायक्लेश करना, सो तप है। अनेक व्रतशीलकरि सहित जो मुनि ताकै कारणतैं विघ्न आया ताका दूरि करना, जातैं यामें बहुत उपकार है 'जैसें काहूकै अनेक वस्तुनिकरि भस्या भंडारविषें अग्नि लागी होय ताका बुझावना तैसें' यह साधुसमाधि है ॥ ७ ॥ गुणवान् जे साधुजन तिनकैं कोई कारणकरि दुःख आय पडै ताका निर्दोषविधानकरि दूरि करना, सो वैयावृत्य है ॥ ९ ॥

केवलज्ञान श्रुतज्ञान है दिव्यनयन जिनकै ऐसे अरहंत अर आचार्य तथा परके हितकार्यविषैं प्रवर्तते स्वपरमतके शास्त्रनिका विस्तारसहित निश्चय करनेवाले ऐसे बहुश्रुत उपाध्याय तथा मोक्षरूप महलके चढनेकी पैडी सारिखी सुन्दर रचनारूप बहुरि श्रुतरूपी देवताकी सेवाविना जाका चढना दुर्लभ है ऐसा जो प्रवचन इन च्यारिनिविषैं मन वचन कायनिकी भावनिकी विशुद्धतासहित अनुराग, सो इनकी भक्ति है। ऐसे ये च्यारि भावना भई ॥ १३ ॥

छह आवश्यकनिका यथाकाल प्रवर्तन करना, तहां चित्तकूं एकाग्रकरि ज्ञानहीविषैं लगावणा ऐसें सर्वसावद्ययोगकी निवृत्ति करना, सो सामयिक है। तीर्थंकरनिके पवित्रगुणानिका कीर्तन करना, सो चतुर्विंशतिस्तव है। दोय आसन, च्यारि शिरोनति, बारह आवर्त, मन वचन कायकी शुद्धताकरि करना सो वंदना है। अतीतकालके लगे दोपनिकूं यादिकरि तिनतैं निवर्तन करना, सो प्रतिक्रमण है। आगामी काल दोपनका निषेध करना त्याग करना, सो प्रत्याख्यान है। कालकी मर्याद करि शरीरविषैं ममत्व छोडना, सो कायोत्सर्ग है। इन छह आवश्यकनिकी क्रिया कालकी काल करणी, हानि न करणी, उद्धतपणाकरि भूलणी नाहीं, सो आवश्यकापरिहाणि है ॥ १४ ॥ परमतरूप अज्ञाननिका प्रकाश तिरस्कार करणहारी जो ज्ञानरूप सूर्यकी प्रभा ताकरि

तथा महोपवासआदिस्वरूप जाकरि इन्द्रकाभी आसन कंपायमान होय ऐसा तपकरि तथा जिनका पूजन जाकरि भव्यजीवरूप कमलनिका वन प्रफुल्लित होय तैसी सूर्यकी प्रभासारिखी इत्यादिकरि मार्गकी प्रभावना करनी ॥ १५ ॥ गऊका वत्सविषैं स्नेह होय, ताकूं न दीखै तब चित्तविषैं तिसहीका स्मरण रहै, तैसैं साधर्मिविषैं अकृत्रिम स्नेह होय, सो प्रवचनवत्सलत्व है ॥ १६ ॥ ऐसैं ए सोलह भावना भलेप्रकार भाये हुते समस्तही तथा व्यस्त कहिये जुदे जुदेभी सम्यग्दर्शनकी शुद्धतासहित तीर्थंकरनामके आश्रव हैं ॥

आगैं नामकर्मका आश्रवका कथनकै अनंतर गोत्रकर्मके आश्रवके कारण कहने हैं, तहां नीचगोत्रका आश्रव कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥

याका अर्थ— परकी निन्दा करनी, अपनी प्रशंसा करनी, परके छते गुण निषेध करने, अपने अनछते गुण प्रगट करने इन भावनितैं नीचगोत्रका आश्रव होय है। तहां सांचे तथा झूठे दोषनिके कहनेविषैं इच्छा करणी सो तौ निंदा कहिये। तैसैही सांचे तथा झूठे गुणनिके कहनेविषैं इच्छा सो प्रशंसा कहिये। तिनका यथासंख्य संबंध करना परकी निंदा करनी, अपनी प्रशंसा

करनी। वहुरि वस्तु रोकनेवाला कारणके निकट होतैं प्रगट होना, सो उच्छादन कहिये। वहुरि रोकनेवाला कारणका अभाव होय, तब प्रगट होना उद्भावन है। इहांभी यथासंख्य सम्बन्ध करना परके सांचेभी गुण होय तौ तिनकूं प्रगट न करना, अपने झूठे गुणनिका प्रगट करना। ए सर्व नीचगोत्रके आश्रवके कारण हैं। इहां विशेष जो, जाकरि आत्मा नीचस्थान पावै; सो नीचगोत्र है तिसके आश्रव कहे। तिनका विस्तार ऐसा, जाति आदि आठ मदका करना, परकी निंदातैं हर्ष मानना, परका अपवाद करनेहीका स्वभाव राखनां, धर्मात्माकी निन्दा करनी, परका यश न सुहावना, गुरुनिका अपमान करना, तिनके दोष कहने, तिनतैं विनयादिकरूप न प्रवर्तना इत्यादि जानना॥

आगैं, उच्चगोत्रकर्मका आश्रवकी विधि कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ तद्विपर्य्ययौ नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥ २६ ॥

याका अर्थ— नीचगोत्रका आश्रव कह्या। तातैं विपर्यय उलटा तथा नीचा होय प्रवर्तना, उद्धत होय न प्रवर्तना ए उच्चगोत्रके आश्रव हैं। तहां तत्शब्दकरि तौ नीचगोत्रका आश्रव लेणा। जातैं इस सूत्रके पहलैं लगता सोही है। तिसतैं अन्यप्रकार है सो विपर्यय है। सो

तथा महोपवासआदिस्वरूप जाकरि इन्द्रकाभी आसन कंपायमान होय ऐसा तपकरि तथा जिनका पूजन जाकरि भव्यजीवरूप कमलनिका वन प्रफुलित होय तैसी सूर्यकी प्रभासारिखी इत्यादिकरि मार्गकी प्रभावना करनी ॥ १५ ॥ गऊका वत्सविषैं स्नेह होय, ताकूं न दीखै तब चित्तविषैं तिसहीका स्मरण रहै, तैसैं साधर्मिविषैं अकृत्रिम स्नेह होय, सो प्रवचनवत्सलत्व है ॥ १६ ॥ ऐसैं ए सोलह भावना भलेप्रकार भाये हुते समस्तही तथा व्यस्त कहिये जुदे जुदेभी सम्यग्दर्शनकी शुद्धतासहित तीर्थंकरनामके आश्रव हैं ॥

आगैं नामकर्मका आश्रवका कथनकै अनंतर गोत्रकर्मके आश्रवके कारण कहने हैं, तहां नीचगोत्रका आश्रव कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥

याका अर्थ— परकी निन्दा करनी, अपनी प्रशंसा करनी, परके छते गुण निषेध करने, अपने अनछते गुण प्रगट करने इन भावनितैं नीचगोत्रका आश्रव होय है। तहां सांचे तथा झूठे दोपनिके कहनेविषैं इच्छा करणी सो तौ निंदा कहिये। तैसैही सांचे तथा झूठे गुणनिके कहनेविषैं इच्छा सो प्रशंसा कहिये। तिनका यथासंख्य संबंध करना [illegible]

सो विघ्न है। ताका करना सो अंतरायकर्मके आश्रवकी विधि जाननी ॥

याका विस्तार— ज्ञानका निषेध करना, सत्कारका निषेध करना, दान लाभ भोगोपभोग वीर्य स्नान अनुलेपन सुगंध पुष्पमाला वस्त्र भूषण शयन आसन भोजन आदिका परकैं विघ्न करना, परकी संपदा देखि आश्चर्य करना, अपना द्रव्यका अतिलोभतैं दानादिक न करने, सामर्थ्य होय तिसमें प्रदान करना, परकूं झूठा दूषण लगावना, निर्माल्यद्रव्य लेना, निर्दोष उपकरणका त्याग करना, परका वीर्य लोपना, धर्मका विच्छेद करना, भला आचारविषैं तपस्वी जनका पूजाविषैं विघ्न करना, मुनिका तथा दीन अनाथका वस्तु पात्र वास्तिकाका प्रतिषेध करना, परकैं क्रियाका रोकना, बांधना, गुह्यअंगका छेदना, कान नाक ओष्ठ काटना, प्राणिनिका घात करना इत्यादिक जानना ॥

इहां कोई पूछै, आश्रवका विस्तार सूत्रमें विनाकह्या कैसैं कहौ हौ? ताका समाधान, जो, वेदनीयके सूत्रमें इतिशब्द कह्या है सो प्रकारार्थमें है, ताकी अनुवृत्ति ले सर्वकर्मके आश्रवमें विस्तार कह्या है। ऐसैं कह्या जो आश्रवका विधान तिसकरि उपजाया जो आठप्रकार ज्ञानावरणआदि कर्म तिनके निमित्ततैं आत्माकैं संसाररूप विकार ताकूं आत्मा निरंतर भोगवै है। जैसैं

कहां? अपनी तो निंदा, अर परकी प्रशंसा, अपना गुण प्रगट न कहना, परका गुण प्रगट कहना बहुरि गुणनिकरि उत्कृष्ट होय महान् होय तिनविषैं विनयकरि नम्रीभूत रहना, सो नीचैर्वृत्ति कहिये। बहुरि आपमें विज्ञानआदि अनेक गुण विद्यमान हैं, उत्कृष्टपणा है, तौऊ तिन गुणनिका मद न करे, अहंकाररहित होय, सो अनुत्सेक कहिये। ते ए उत्तर कहता दूसरा गोत्रकर्म उच्चगोत्र ताके आश्रव हैं। इहां विस्तारकाभी विपर्यय कहना। तहां जातिआदि आठ मद न करने, परकी निंदा न करनी, उद्धत न प्रवर्तना, परका उपहास अपवाद न करना, मानकषाय तीव्र न राखणा, पूज्यपुरुषकी पूजा विनय सत्कार वंदना करनी, बहुरि इस निकृष्टकालमें कोईमें भले गुण होय 'जैसे हरेकमें न पाईये' तिनतैंभी उद्धत न रहना, सोभी नीचैर्वृत्ति है। बहुरि अपना माहात्म्यका प्रकाशन आप न चाहै, तथा धर्मके कारणनिविषैं बडा आदर करै इत्यादि जानना ॥

आगें, गोत्रकर्मके अनंतर कह्या जो अंतरायकर्म, ताका आश्रव कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं

॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २८ ॥

याका अर्थ— दानआदिके विषैं विघ्न करना, सो अंतरायकर्मका आश्रव है। तहां दान आदि तौ पहले कहे तेही, दान लाभ भोगोपभोग वीर्य ए। तिनिका हनना घात करना विगाडना

सो विघ्न है। ताका करना सो अंतरायकर्मके आश्रवकी विधि जाननी ॥

याका विस्तार— ज्ञानका निषेध करना, सत्कारका निषेध करना, दान लाभ भोगोपभोग वीर्य स्नान अनुलेपन सुगंध पुष्पमाला वस्त्र भूषण शयन आसन भोजन आदिका परकैं विघ्न करना, परकी संपदा देखि आश्चर्य करना, अपना द्रव्यका अतिलोभतैं दानादिक न करने, सामर्थ्य होय तिसमें प्रदान करना, परकूं झूठा दूषण लगावना, निर्माल्यद्रव्य लेना, निर्दोष उपकरणका त्याग करना, परका वीर्य लोपना, धर्मका विच्छेद करना, भला आचारविषैं तपस्वी जनका पूजाविषैं विघ्न करना, मुनिका तथा दीन अनाथका वस्तु पात्र वास्तिकाका प्रतिषेध करना, परकैं क्रियाका रोकना, बांधना, गुह्यअंगका छेदना, कान नाक ओष्ठ काटना, प्राणिनिका घात करना इत्यादिक जानना ॥

इहां कोई पूछे, आश्रवका विस्तार सूत्रमें विनाकह्या कैसें कहो हो? ताका समाधान, जो, वेदनीयके सूत्रमें इतिशब्द कह्या है सो प्रकारार्थमें है, ताकी अनुवृत्ति ले सर्वकर्मके आश्रवमें विस्तार कह्या है। ऐसें कह्या जो आश्रवका विधान तिसकरि उपजाया जो आठप्रकार ज्ञानावरण-आदि कर्म तिनके निमित्ततें आत्माकैं संसाररूप विकार ताकूं आत्मा निरंतर भोगवै है। जैसें

मदिराका पीवनेवाला अपनीही रुचितैं मोहविभ्रमके करनहारी मदिराकूं पीयकरि ताके परिपाककै वशिकरि उपजे विकारकूं भोगवै है, तथा रोगी भोजन कुपथ्यकरि अनेक वात आदिविकारकूं भोगवै तैसें जानना ॥

इहां तर्क, जो तत् प्रदोषनिह्नव आदि ज्ञानावरण आदि सर्वकर्मनिके आश्रवके कारण जुदेजुदे कहे, ते नियमकरि न्यारेन्यारेही हैं, कि अविशेषकरि हैं? सर्वतैं सर्वकर्मका आश्रव होय है। तहां जो कहोगे नियमकरि कहते न्यारेन्यारेही ज्ञानावरण आदिका आश्रवका कारण हैं, तौ ऐसें तौ आगमतैं विरोध आवेगा, आगममें ऐसें कह्या, जो, आयुकर्मविना सातकर्म समयसमयप्रति निरंतर आश्रव होय बंधै हैं, तिसतैं विरोध आवैगा, अरु जो कहोगे अविशेषकरि सर्वका सर्वतैं होय है, तौ विशेषकारण कहना अयुक्त होयगा। ताका समाधान, जो, तत्प्रदोष आदिकरि ज्ञानावरण आदि सर्व कर्मप्रकृतिनिका प्रदेशबंधका तौ नियम नाहीं है, सर्वतैं सर्वका होय है, तौऊ अनुभागका विशेषका नियमका कारणपणाकरि तत्प्रदोषनिह्नवादिकभेदरूप कीजिये ॥

इहां विशेष जो, अन्यमती कोई कहै, आश्रवके नियम कहे, तिनका किछु हेतु तौ कह्या नाहीं, विनाहेतु पंडित कैसें मानैं? ताका समाधान, जो, शास्त्र तौ वस्तुका स्वभावकूं कहै है।

जैसें दीपक घटादिककूं दिखाय दे, तैसें वस्तुकूं कहै है तिस शास्त्रकी प्रमाणता है। जातें भगवान् अरहंत सर्वज्ञका ज्ञान युगपत् सर्वपदार्थनिका प्रकाशनेविषैं समर्थ प्रत्यक्ष प्रतिभासरूप है, तिसका भाष्या शास्त्र है सो यथार्थ उपदेश करनहारा है, तातें ताके वचन प्रमाणभूतही हैं। बहुरि वस्तुस्वभावके विषैं सर्वमतके वक्तानिकैं विसंवाद नाहीं है, जो विसंवाद होय तौ सर्वका कहना मिथ्या ठहरै तातें स्वभावविषैं तर्क नाहीं। बहुरि सामान्यपणें तौ आयुविना सातकर्मका आश्रव निरंतर होय है। तहां जैसा योगका विशेष होय तैसा तौ समयप्रबृद्ध हीनाधिक पुद्गलके परमाणुका पुंजका वटवारा होय जाय है। तामें कषायके अनुसार स्थिति अनुभाग पडे है। बहुरि अनुभाग तीव्र मंद बहुतप्रकार है, तिसके विशेष जनावनेकूं तत्प्रदोषनिह्नव आदिक न्यारेन्यारे ज्ञानावरण आदि कर्मके आश्रवके कारण कहे हैं। तिनतें यथायोग्य तीव्र अनुभाग बंध होय है। ऐसा विशेष जानना ॥

ऐसें छटा अध्यायमें ज्ञानावरण आदि आठ कर्मके आश्रवके कारण सामान्यविशेषकरि कहे। ताकूं जानिकरि भव्यजीवनिकूं आश्रवके भावनितें निवृत्ति होय शुद्धचैतन्यके अनुभवके विषें तत्पर होना योग्य है, यह श्रीजिनेन्द्रके मार्गविषैं निर्ग्रन्थगुरुनिका उपदेश है ॥

॥ नमः सिद्धेभ्यः ॥

॥ आगें सातमा अध्यायका प्रारम्भ है ॥



दोहा— आठ कर्म आश्रवविषें, पुण्यपापकौ भेद ॥
जानि जिनेश्वर भाषियो, नमूं देव निरखेद ॥ १ ॥

ऐसें मंगलाचरणके अर्थि भगवानकूं नमस्कार करि सातमा अध्यायकी वचनिका लिखिये है। तहां सर्वार्थसिद्धि नामा टीकाकारके वचन हैं, जो, आश्रवपदार्थका व्याख्यान कीया, ताके प्रारंभमें ऐसा कह्या था, जो, शुभयोग पुण्यकर्मका आश्रव है, सो यह तौ सामान्यकरि कह्या, ताका विशेष न जाण्यां, जो, शुभ कहा है? सो अब ताके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥ १ ॥

याका अर्थ— हिंसा अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रह ए पांच पाप हैं। तिनतैं विरति कहिये निवृत्ति होना सो व्रत है। तहां प्रमत्तयोगात् प्राणव्यपरोपणं हिंसा इत्यादि सूत्रनिकरि आगें

हिंसादिक कहैंगे, तिनतें विरमण करना, सो व्रत ऐसैं कहिये। तहां यऊ करना यऊ न करना ऐसा अभिप्रायकरि कीया जो नियम ताकूं व्रत कहिये। इहां तर्क, जो, हिंसादिक तौ परिणामके विशेष हैं, ते अध्रुव हैं, तिनकूं पंचमीविभक्तिकरि अपादान कहै, सो अपादान तौ ध्रुव होय है। अ... णां कैसैं बणे? ताका समाधान, जैनेन्द्रव्याकरणमें अपादानका लक्षण ऐसा ... पादानम्। याका अर्थ कहैं हैं, जो बुद्धिका नाश होतें ध्रुव रहै, सो अपादान ध्रुवपणांकी विवक्षा बणें है, ऐसा कह्या है। धर्माद्विरमति ऐसैं कहते जो यऊ मनुष्य ...ो विचारे है, धर्म है सो दुष्कर है याका करना कठिन है, बहुरि ...माल जान्या है ऐसैं बुद्धिकरि ग्रहणकरि ताकूं छोडे है, ऐसैं इहांभी ...मनुष्य है, सो विचारे है ये हिंसादिक परिणाम हैं ते पापके कारण हैं, तिनकूं इसही लोकविषें राजा दंड दे है, बहुरि परलोकविषें दुःखकूं ग्रहणकरि तिनतैं निवृत्ति होय है, तातैं बुद्धिके अपायकी अपेक्षाकरि ...बणे है। ए हिंसापदार्थ तौ ध्रुवही हैं। इनका ज्ञान बुद्धिमें रहैही है। त्यागग्रहण ...ी अपेक्षा है, यातैं अपादानपणां युक्त है ॥

इहां विरतिशब्द प्रत्येककै लगावणा, हिंसातैं विरति, अनृततैं विरति इत्यादि। तहां अहिंसाव्रत प्रधान है, तातैं आदिविषैं कह्या सत्य आदि व्रत हैं ते अहिंसाकी रक्षाके अर्थि हैं। जैसैं धान्यका खेतकी रक्षाके अर्थि वाडि कीजिये है तैसैं है। सर्वसावद्ययोगकी निवृत्ति है लक्षण जाका ऐसा सामायिक एकही व्रत है, सोही छेदोपस्थापनकी अपेक्षाकरि पांचप्रकारका है, सो इहां कहिये है। बहुरि तर्क, जो, व्रतकै आश्रवका कारणपणां कहना अयुक्त है। जातैं व्रतका संवरके कारणविषैं अंतर्भाव है, संवरके कारण आगे गुप्तिसमित्यादिक कहियेगा तहां दशप्रकारधर्मविषैं तथा संयमविषैं अन्तर्भाव कीया है। ताका समाधान कहै हैं, जो, यह दोष नाहीं है। संवर तौ निवृत्तिस्वरूप आगें कहसी। इहां आश्रवअधिकारमें प्रवृत्तिस्वरूप कही है, सो हिंसा अनृत अदत्तादान आदिका त्याग होतैं अहिंसा सत्यवचन दत्तादान आदि क्रियाकी प्रवृत्ति है, सो प्रतीतिसिद्ध है। बहुरि गुप्त्यादिकरूप जो संवर ताका परिवार व्रत है। व्रतनिविषैं प्रवृत्ति करनेवाला साधुकै संवर सुखतैं होय है। तातैं न्यारा वणाकरि उपदेश कीजिये है॥

बहुरि तर्क, जो, छठा अणुव्रत रात्रिभोजनका त्याग करना है, सोभी इहां गणनामें लेना चाहिये। आचार्य कहै हैं, इहां न चाहिये। जातैं याका अहिंसाव्रतकी भावनाविषैं अंतर्भाव है,

आगें अहिंसाव्रतकी भावना कहैंगे तहां आलोकितपानभोजनभावना कही है तामें गर्भित जानना । इहां विशेष कहिये है, जो, भावनाविषैं आलोकितपानभोजन करना कह्या, सो तहां दीपगका तथा चन्द्रमाका प्रकाशविषैं देखिकरि भोजन कीजिये तो कहा दोष? ऐसैं कोई कहै, सो यह युक्त नाहीं । दीपकआदिके प्रकाशविषैंभी रात्रिभोजन करनेमें अनेक आरंभके दोष आवै हैं । सो फेरि कहै, जो, पैला कोई दीपकआदिका प्रकाश करि दे तब आरंभका दोष नाहीं होय । ताकूं कहिये, जो, आचारसूत्रका ऐसा उपदेश है, जो, अपना ज्ञानसूर्य अपनी इंन्द्रिय-निकरि देखे मार्गविषैं तथा पहलें देश काल विचारि जूडा प्रमाण अगिली पिछली भूमि विहार-भ्रमणकरि साधु शुद्धभिक्षा ग्रहण करै है, सो ऐसी विधि रात्रिभोजन करनेमें बणै नाहीं ॥

फेरि कहैं, जो, दिनविषैं भोजन ले आवै ताकूं रात्रिमें खाय तौ कहा दोष? ताकूं कहिये, पूर्वोक्त दीपकआदि आरंभका दोष है । तथा ल्यायकरि भोजन खाना यह संयमका साधन नाहीं । बहुरि सर्व परिग्रहरहितमुनिकैं पाणिपात्र आहार है । सो ल्याय खाना बणैं नाहीं । पात्रका संग्रह करै तौ अनेकदोष उपजे हैं, तथा दीनआचरणका प्रसंग आवै है, निवृत्तिपरिणाम न होय है । फेरि कहै, पात्रमें ल्याये परीक्षाकरि भोजन संभवै है । तहां कहिये ऐसा नाहीं । जे मुनि जीवनिके

ठिकाने शास्त्रोक्त जानें हैं तिनकूं संयोगविभाग गुणदोषका ज्ञान है, तिनकै तत्कालही भोजन वणें हैं, ल्यायकरि खानेमें अनेक दोष दीखैं हैं। ताका विसर्जन करै तौ तामें अनेकदोष उपजे हैं। तातैं सूर्यके प्रकाशमें प्रगट देखि दिनमेंही भोजन करना युक्त है। जैसैं सूर्यके प्रकाशमें प्रगट भूमि देश दातार जन गमन आदि तथा अन्नपान डाखा स्पष्ट दीखै; तैसैं चंद्रमाआदिका प्रकाशतैं नाहीं दीखै ऐसा जानना ॥

आगैं तिस पांच व्रतनिके भेद जाननेकूं सूत्र कहे हैं—

॥ देशसर्वतोऽणुमहती ॥ २ ॥

याका अर्थ— ए पांचूही व्रत जब एकदेश होय तब तौ अणुव्रत कहिये। बहुरि सकल होय तब महाव्रत कहिये। इहां देश ऐसा तौ एकदेशकूं कहना। सर्व सकलकूं कहना। तिन देशतैं विरति होय सो देशव्रत अणुव्रत है, सकलव्रत महाव्रत है, ऐसे दोय भेद भये। विरतिशब्दकी अनुवृत्ति ऊपरले सूत्रतैं लेणी। ए दोऊ प्रकार व्रत न्यारे न्यारे भावनारूप किये संते श्रेष्ठ औषधकीज्यों दुःख दूरि करनेके कारण होय हैं ॥

आगैं पूछै, तिन व्रतनिकी भावना कौनअर्थि है? तथा कौंनप्रकार है सो कहौ ऐसैं पूछै सूत्र कहे हैं—

॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पंचपंच ॥ ३ ॥

याका अर्थ— इन व्रतनिके स्थिर करनेके अर्थ एकएक व्रतकी पांच पांच भावना हैं। इहां ऐसा जानना, जो, इनि भावना भायेतें व्रतीनिके उत्तरगुणका संभवना होय है ॥

आगें, जो ऐसें है भावनातें व्रत दृढ होय है, तौ आदिमें कह्या जो अहिंसाव्रत ताकी भावना कहा है? ऐसें पूछें सूत्र कहैं हैं—

॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पंच ॥ ४ ॥

याका अर्थ— वचनगुप्ति, मनोगुप्ति, ईर्यासमिति, आदाननिक्षेपणसमिति, आलोकितपानभोजन ए पांच अहिंसाव्रतकी भावना हैं। तहां गुप्तिसमितिका स्वरूप आगें कहसी। बहुरि आलोकितपानभोजन कहिये आहारपाणी लेना सो दिनविषें नीकै देखिकरि लेना। इनका वारवार चिंतवन करना, सो भावना है ॥

आगें, दूसरे व्रतकी कहा भावना है, ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचीभाषणं च पंच ॥ ५ ॥

याका अर्थ— क्रोधका प्रत्याख्यान, लोभका प्रत्याख्यान, भयवानपणांका प्रत्याख्यान,

हास्यका प्रत्याख्यान, अनुवीचीभाषणं कहिये निष्पाप सूत्रके अनुसार वचन बोलना ऐसैं ए पांच भावना सत्यव्रतकी जाननीं । इहां भावार्थ ऐसा, जो, क्रोधादिकके निमित्ततैं असत्य बोलिये है, तिसका वारवार चिंतवन राखणा, तब असत्यकी प्रवृत्ति न होय, सत्यव्रत दृढ रहै ॥

आगें तीसरे व्रतकी कहा भावना है, ऐसें पूछें सूत्र कहे हैं —

॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माविसंवादाः पंच ॥ ६ ॥

याका अर्थ— शून्यागार कहिये गिरिकी गुफा वृक्षका कोटर इत्यादिविषैं वसना, परका छोड्या ठिकाना होय सो विमोचितावास है तहां वसना, वहुरि परका उपरोध कहिये वर्जना सो न करना भावार्थ– जिस ठिकाणें आय बैठे तहां कोई और आवै ताकूं वर्जै नाहीं तथा आपकूं कोई मनैं करै तहां बैठे नाहीं, वहुरि आचारशास्त्रके मार्गकरि भिक्षाकी शुद्धता करि आहार ले, वहुरि यऊ वस्तिका तथा श्रावकआदि हमारे हैं यह तुमारे हैं ऐसा आपसमें साधर्मीनुसूं विसंवाद न करै ऐसैं ए पांच भावना तीसरा अदत्तादानविरमणव्रतकी हैं ॥ इहा भावार्थ ऐसा, जो, वस्तिका भोजनआदि वस्तुनिकै अर्थि कोईसूं परस्पर झगडो उपजै तहां अदत्तादानका प्रसंग आवे है । तातें इन भावनातें व्रत दृढ रहै है ॥

आगें, ब्रह्मचर्यकी भावना कहनेयोग्य है सो कहौ ऐसें पूछैं सूत्र कहै हैं--

॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्वशरीर-
संस्कारत्यागाः पंच ॥ ७ ॥

याका अर्थ-- इहां त्यागशब्द प्रत्येककै लगाय लेणां । तहां स्त्रीनिकी रागसहित कथा सुननेका त्याग, स्त्रीनिका सुन्दर मनोहर अंगका रागसहित देखनेका त्याग, वृष्य कहिये पुष्टरस कहिये रसीला झरता सर्वत आदिका त्याग, पहले भोग किये थे तिनका बारबार यादि करनेका त्याग, अपने शरीरका संस्कार कहिये सवारना स्नान सुगंध लेपन इत्यादि करनेका त्याग ऐसैं ए चौथे व्रतकी पांच भावना हैं। इनकूं बारबार भाये ब्रह्मचर्यव्रत थिरता पावै है ॥

आगें पांचमा व्रतकी कहा भावना है, ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं--

॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पंच ॥ ८ ॥

याका अर्थ— स्पर्शन रसन घ्राण चक्षु श्रोत्र ए पांच इन्द्रिय तिनके विषय जे स्पर्श रस गंध वर्ण शब्द इनका संबंध होतैं रागद्वेषका न करना ए पांच भावना आकिंचन्य नामा पांचवां

व्रतकी जाननीं ॥ भावार्थ ऐसा, जो, परिग्रह हैं ते इन्द्रियनिके विषयके सेवनेके तथा कषाय पोषनेके अर्थि हैं, तातैं विषयकषायका गुणदोष विचारिकरि भावना राखै, परिग्रहत्यागव्रत दृढ रहै है ॥

आगें किछु और कहै हैं, कि, जैसें इन व्रतनिकी दृढताके अर्थि व्रतनिका स्वरूप जाननेवाला ज्ञानीनिकरि भावनाका उपदेश कीया है, तैसेंही तिन व्रतनिके विरोधी जे पांच पाप तिनविषैंभी भावना राखणी। तिनके दोषनिका वारवार चिंतवन राखणां। तातैं दृढ व्रत रहै है। ताका सूत्र कहै हैं—

॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥ ९ ॥

याका अर्थ— हिंसादिक पांचपापनिविषें इस लोकविषैं तौ अपाय कहिये नाश तथा भय होय है। बहुरि परलोकविषें पापतैं दुर्गति होय है। ऐसा देखना वारवार विचारणा। तहां अभ्युदय कहिये स्वर्गादिककी संपदा पावना निःश्रेयस कहिये कल्याणरूप मोक्ष तिनके अर्थि जो क्रिया ताका नाश करनेवाला जो प्रयोग आरंभ, सो तौ अपाय कहिये। अथवा सात भयकूंभी अपाय कहिये। अवद्य कहिये गर्ह्य निंद्य पाप इन दोऊनिकूं देखनें विचारनें। कहां देखने? इस लोकविषें तथा परलोकविषें। बहुरि कौनविषें देखने? इन पांच पापनिविषें। सो कैसें सो कहिये

है। प्रथम तो हिंसाविषैं देखो, जो, हिंसक जीव होय सो निरंतर सर्वका वैरी शत्रु है। ताकूं सर्व पीड्या चाहैं मास्या चाहैं। इस लोकविषैं अनेक वध बंधन क्लेशादिक पावैं हैं। परलोकविषैं अशुभगति पावै है। बहुरि सर्वकरि निंदनीक होय है। तातैं हिंसाका त्याग करना कल्याणकारी है, ऐसी भावना राखणी ॥

तैसैंही असत्यवचनका बोलनेवाला सर्वके अश्रद्धेय होय जाका वचन कोई श्रद्धान न करै सांच न मानें। बहुरि इसही लोकमें जीव काटना आदि दुःखकूं पावै है। ताके झूठवचनकरि दुःखी होय ते वैरकरि अनेक कष्ट दे, सो सहने होय। बहुरि परलोकविषैं दुर्गति पावै है। बहुरि निंदनीक होय है। तातैं अनृतवचनतैं विरमण करना कल्याणकारी है, ऐसी भावना राखणी ॥ तैसैंही परद्रव्यका हरणहारा चोर है सो सर्वकै पीडा देनेयोग्य होय है जाका कोई रक्षक न होय। इसही लोकमें घात होना, वध, बंधन, हाथ पग कान नांक उपरले होठका छेदन, भेदन, सर्व धनादिका लूटि लेना इत्यादिक दुःख पावै है। बहुरि परलोकविषैं अशुभगति पावै है। बहुरि निंदनीक होय है। यातैं चोरी करनेका त्याग करना कल्याणकारी है, ऐसी भावना राखणी॥

तैसैंही अब्रह्मचारी मदविभ्रमकरि उद्भ्रांत है चित्त जाका सो कपटकी हथणीके अर्थि

भ्रमतैं खाडामें पड्या जो हस्ती तिसकीज्यों परवश हूवा वध बंधन अतिक्लेश आदिकूं भोगवै है। मोहका पीड्या कार्य अकार्यकूं न गिणता अपना कल्याणरूप कार्य किछुभी नाहीं आचरण करे है। बहुरि परकी स्त्रीके आलिंगन सेवनविषैं करी है रति जानें सो इसलोकविषैं वैरके निमित्ततैं लिंगछेदन वध बंधन धनहरण आदि कष्टनिकूं पावै है। बहुरि परलोकविषैं दुर्गति पावै है। बहुरि निंदनीक होय है, यातैं अब्रह्मचर्यपापतैं छूटना अपना हित है, ऐसी भावना राखणी ॥ तैसैंही परिग्रहवान् पुरुष है सो जे परिग्रहके अर्थि चोर आदि हैं तिनके पीडा देनेयोग्य होय है। धनवानकूं चोर मारि जाय है। जैसैं कोई पंछी मांसकी डलीकूं चूंचमें ले चलै, तब मांसके अर्थि अन्यपक्षी ताकूं चूंचनितैं मारै, दुःख दे; तैसैं धनके लोभी धनवानकूं दुःख दे ॥

बहुरि धनके परिग्रहके उपार्जन करना रक्षा करनाविषैं बडा कष्ट है, तथा नष्ट होय जाय, जाता रहै तब बडा दुःख उपजै इत्यादि अनेक दोषनिकूं प्राप्त होय है। बहुरि यातैं तृप्तिभी नाहीं होय है। जैसें अग्नि इंधनतैं तृप्त होय, तौ तृष्णावान् धनतैं तृप्त होय। बहुरि लोभका पीड्या कार्य अकार्यकूं गिनैं नाहीं। बहुरि याकें पापतैं परलोकविषैं अशुभगति पावै है। बहुरि सर्व

लोक कहैं 'बडा लोभी है' ऐसें निंदनीक होय है। तातैं परिग्रहका त्याग कल्याणकारी है ऐसी भावना राखणी ॥ ऐसें हिंसादिक पंचपापनिविषैं ऐसी भावना करणी ॥

आगें, इन हिंसादिकनिविषैं अन्यभावना राखणी, ताके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥

याका अर्थ— हिंसा आदि पंच पाप हैं, ते दुःखरूपही हैं, ऐसी भावना राखणी। इहां पूछै हैं, हिंसादिक दुःख कैसें हैं? ताका समाधान, जातैं ए हिंसादिक हैं ते दुःखके कारण हैं। जैसें अन्न है सो प्राणनिकी रक्षा करै है, तातैं कारण है। तहां कहिये, अन्न है सोही प्राण है, ऐसें कारणकूं कार्य कहना। तैसें हिंसादिक दुःखके कारण हैं, तिनकूं दुःखही है ऐसें कहना। इहां कारणविषैं कार्यका उपचार है। बहुरि कारणका कारण होय ताकूंभी कार्यही कहिये है। जैसें अन्न तौ प्राणका कारण अरु धन है सो अन्नपानका कारण है। तहां धन है सोही प्राण है, ऐसें कहते कारणके कारणविषैं कार्यका उपचार होय है; तैसें हिंसादिक कहे ते असातावेदनीय आदि अशुभकर्मके कारण हैं। बहुरि असातावेदनीयआदि कर्म दुःखके कारण हैं। ऐसें दुःखके कारणविषैं तथा दुःखके कारणके कारणविषैं दुःखका उपचार जानना। सो ए हिंसादिक पाप दुःखही हैं, ऐसी भावना राखणी ॥

बहुरि जैसें आपके दुःखके कारण हैं; तैसेंही परकेविषेंभी जानना। बहुरि इहां तर्क, जो, ते सर्वही दुःख कहे सो नाहीं हैं। जातें विषयनिके सेवनेविषें सुख देखिये है। ताका समाधान, जो, विषय सेवनेविषें सुख माने है, सो सुख नाहीं है। विषयनिकी इच्छा नामा वेदना पीडा उपजे है, ताका इलाज प्राणी करै है। जैसें खाजिका दुःख होय ताकूं खुजावै, तब सुख माने है, परमार्थतें खुजावनेविषें सुख नाहीं, सुखका स्वरूप तौ आकुलतारहित है, सो विषय सेवनेमें तौ आकुलताही है, निराकुलपणा तौ होय नाही॥

इहां विशेष जो, जैसें आपकै भावै तैसें परकैभी भावै, सो कैसें? जैसें वध बंधन पीडन मोकूं बुरे लागे हैं, दुःख उपजावैं; तैसें परकैभी दुःख उपजावै हैं। तथा जैसें मोकूं कोई झूठ कहै कडी कहै कठोर कहै सो बुरी लागै है, दुःख उपजावै है; तैसें परकूं मैं कहूं तौ ताकूं बुरी लागै है, दुःख उपजावै है। तथा जैसें मेरा धनादिक जाय तब मेरे बडा कष्ट दुःख उपजै है, तैसेंही अन्यजीवकै उपजै है। तथा मेरी स्त्रीका कोई अपमान करै तब मेरै जैसें दुःख पीडा उपजै; तैसें अन्यजीवकैभी दुःख उपजै है। तथा मेरै धनकी अप्राप्तिविषें वांछा तथा याकै नाशविषें शोक होय है, तैसें परकैभी कष्ट होय है। ऐसें हिंसादिक परकैभी दुःखके कारण जानना॥

लोक कहैं 'वडा लोभी है' ऐसें निंदनीक होय है। तातैं परिग्रहका त्याग कल्याणकारी है ऐसी भावना राखणी ॥ ऐसें हिंसादिक पंचपापनिविषैं ऐसी भावना करणी ॥

आगें, इन हिंसादिकनिविषैं अन्यभावना राखणी, ताके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥

याका अर्थ— हिंसा आदि पंच पाप हैं, ते दुःखरूपही हैं, ऐसी भावना राखणी। इहां पूछै है, हिंसादिक दुःख कैसें हैं? ताका समाधान, जातैं ए हिंसादिक हैं ते दुःखके कारण हैं। जैसें अन्न है सो प्राणनिकी रक्षा करै है, तातैं कारण है। तहां कहिये, अन्न है सोही प्राण है, ऐसें कारणकूं कार्य कहना। तैसें हिंसादिक दुःखके कारण हैं, तिनकूं दुःखही है ऐसें कहना। इहां कारणविषैं कार्यका उपचार है। बहुरि कारणका कारण होय ताकूंभी कार्यही कहिये है। जैसें अन्न तौ प्राणका कारण अरु धन है सो अन्नपानका कारण है। तहां धन है सोही प्राण है, ऐसें कहते कारणके कारणविषैं कार्यका उपचार होय है; तैसें हिंसादिक कहे ते असातावेदनीय आदि अशुभकर्मके कारण हैं। बहुरि असातावेदनीयआदि कर्म दुःखके कारण हैं। ऐसें दुःखके कारणविषैं तथा दुःखके कारणके कारणविषैं दुःखका उपचार जानना। सो ए हिंसादिक पाप दुःखही हैं, ऐसी भावना राखणी ॥

बहुरि जैसें आपके दुःखके कारण हैं; तैसेंही परकेविषैंभी जानना। बहुरि इहां तर्क, जो, ते सर्वही दुःख कहे सो नाहीं हैं। जातैं विषयनिके सेवनेविषैं सुख देखिये है। ताका समाधान, जो, विषय सेवनेविषैं सुख माने है, सो सुख नाहीं है। विषयनिकी इच्छा नामा वेदना पीडा उपजे है, ताका इलाज प्राणी करै है। जैसें खाजिका दुःख होय ताकूं खुजावै, तब सुख मानै है, परमार्थतें खुजावनेविषैं सुख नाहीं, सुखका स्वरूप तौ आकुलतारहित है, सो विषय सेवनेमें तौ आकुलताही है, निराकुलपणा तौ होय नाही॥

इहां विशेष जो, जैसें आपके भावै तैसें परकैभी भावै, सो कैसें? जैसें वध बंधन पीडन मोकूं बुरे लागे हैं, दुःख उपजावैं; तैसें परकैभी दुःख उपजावै हैं। तथा जैसें मोकूं कोई झूठ कहै कडी कहै कठोर कहै सो बुरी लागै है, दुःख उपजावै है; तैसें परकूं मैं कहूं तौ ताकूं बुरी लागै है, दुःख उपजावै है। तथा जैसें मेरा धनादिक जाय तब मेरे बडा कष्ट दुःख उपजै है, तैसेंही अन्यजीवकै उपजै है। तथा मेरी स्त्रीका कोई अपमान करै तब मेरै जैसें दुःख पीडा उपजै; तैसें अन्यजीवकैभी दुःख उपजै है। तथा मेरै धनकी अप्राप्तिविषैं वांछा तथा याके नाशविषैं शोक होय है, तैसें परकैभी कष्ट होय है। ऐसें हिंसादिक परकैभी दुःखके कारण जानना॥

आगें फेरिभी भावनाके अर्थि आगें सूत्र कहै हैं—

॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनयेषु ॥ ११ ॥

याका अर्थ— प्राणीनिविषें तौ मैत्री, अर गुणाधिकविषें प्रमोद, तथा दुःखी पीडितविषें करुणा, तथा प्रतिकूलविषें मध्यस्थपरिणाम ऐसें ये च्यारिनिविषें च्यारि भावना राखणी। तथा परके दुःख न होनेका आभिलाप, सो तौ मैत्री कहिये। वहुरि वचनकरि तथा प्रसन्नताकरि प्रगट होय ऐसा अंतरंगविषें भक्तिका अनुराग, सो प्रमोद कहिये। वहुरि दीनकेविषें उपकार करनेका भाव, सो कारुण्य कहिये। वहुरि रागद्वेषकरि पक्षपात होय है ताका अभाव, सो माध्यस्थ कहिये। वहुरि पापकर्मके उदयके वशतें अनेकयोनिविषें कष्ट भोगवै ते सत्व कहिये, तिनकूं जीव कहिये। वहुरि सम्यग्ज्ञानआदि गुणनिकरि वडे होय ते गुणाधिक कहिये। असातावेदनीयके उदयतें जिनकें क्लेश उपजै, ते क्लिश्यमान हैं। वहुरि तत्वार्थके सुननेकरि ग्रहण करनेकरि अभ्यासकरि जिननें गुण न पाये ते अविनेय कहिये। इन सत्वादिक च्यारिनिविषें यथासंख्य मैत्री आदि च्यारयौं भावना भावणी। सर्वजीवनितें मेरी क्षमा है। ते सर्व मेरैपरि क्षमा करौ। मेरी सर्वतें प्रीति है-वैर काहूतें नाहीं है। ऐसें सर्वप्राणी जीवनिविषें तौ मैत्रभावना भावणी। सम्यग्ज्ञानचारित्रादिककेविषें वंदना

स्तुति वैयावृत्य आदिकरि गुणाधिकविषैं प्रमोदभावना भावनी। मोहकर्मके मारे कुज्ञानसहित, विषयअग्निकरि दग्ध, हिताहितमैं समझै नाही, अनेकदुःखनिकरि पीडे, दीन, कृपण, अनाथ, बालक, वृध्द, क्लिश्यमानविषैं करुणा भावनी। मिथ्यात्वकरि खोटे हठग्राही अविनेयनिविषैं मध्यस्थ-भावना करणी। ऐसें भावना भावनेवालेके अहिंसादिकव्रत हैं ते पूर्ण होय हैं॥

आगें फेरिभी भावना कहनेके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥

याका अर्थ— जगत् कहिये संसार अर देह इनका स्वभावकी भावना करनी, संवेगवैराग्यके अर्थि। तहां प्रथमही जगत्का स्वभाव, जो, यह लोक है सो अनादिनिधन वेत्रासन झल्लरी मृदंग-सारिखा आकाररूप है। ताविषैं जीव अनादिसंसारविषैं अनंतकाल नानायोनिविषैं निरंतर दुःख भोगवता संता भ्रमण करै है। तहां निश्चित किछुभी नाहीं है। जीवित है सो जलके बुदेबुदे-सारिखा है, तुरत विलाय जाय है। भोगसंपदा है ते वीजली वादलके विकारसारिखे चंचल हैं। इत्यादि ऐसें जगतका स्वभाव चिंतवन करनेतें संसारतें संवेग होय है, भय लागे है। बहुरि कायका स्वभाव अनित्य है, दुःखका कारण है, साररहित है, अपवित्र है, इत्यादि ऐसें चिंतवनेतें विषय-

निविषें राग न होनेतैं वैराग्य उपजै है। यातैं जगत् अर कायका स्वभावकी भावना करनी ॥

आगें पूछै, जो, हिंसादिकतैं विरति सो व्रत है। तहां हम न जानी, ते हिंसादिक क्रिया कहां हैं? तहां आचार्य कहै हैं, ते युगपत तौ कहे जाय नाहीं। तातैं तिनका स्वरूप कहना अनुक्रमतैं है। तहां जो आदिविषैं कही हिंसा, ताका लक्षणसूत्र कहै हैं—

॥ प्रमत्तयोगात् प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥ १३ ॥

याका अर्थ— प्रमत्तयोगतैं प्राणनिका वियोग करना, सो हिंसा है। तहां कषायसहितपणा सो तौ प्रमाद है। तिस प्रमादसहित आत्माका परिणाम सो प्रमत्त है। प्रमत्तका योग सो प्रमत्तयोग कहिये। बहुरि इन्द्रियनिकूं आदि देकरि दश प्राण हैं, तिनका यथासंभव वियोग करना, सो व्यपरोपण है। ऐसैं प्रमत्तयोगतैं प्राणव्यपरोपण है, सोही हिंसा है। सो यऊ हिंसा प्राणीनिकै दुःखका कारण है, तातैं याकूं अधर्मका कारण कहिये। इहां प्रमत्तयोग ऐसा विशेषणतैं ऐसा जानना, जो, केवल प्राणनिके वियोग कारणमात्रपणाही अधर्मके अर्थि नाहीं है॥ इहां उक्तं च अर्द्ध श्लोक है, ताका अर्थ– प्राणनितैं प्राणीनिकूं न्यारा करै है अर हिंसाकरि युक्त न होय है॥ तथा दूसरा उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ– कोई मुनि ईर्यासमितिकरि गमन करतैं पग उठावै था,

ताके पगतलै कर्मका प्रेरया जीव आय पऱ्या मरि गया, तौ तिस कारणकरि तिस मुनिकै सूक्ष्मभी किंचिन्मात्रभी बंध नाहीं है, ऐसैं सिद्धांतमें कह्या है। बहुरि अध्यात्मप्रमाणतैं ऐसा कह्या है, जो, मूर्छा है सोही परिग्रह है, अन्य नांही ॥

इहां कोई तर्क करै है, जो, प्राणनिका वियोग कियेविनाभी प्रमत्तयोगमात्रहीतैं हिंसा मानिये है। जैसें सिद्धान्तकी उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ– जो अयत्नाचार प्रवर्तै है, ताकी प्रवृत्तिमें जीव मरौ अथवा न मरौ ताकै हिंसा निश्चयतैं होय है। अर जो यत्नसहित प्रवर्तै है–समितिसहित है, ताका हिंसामात्रहीकरि बंध नाहीं है। तहां आचार्य कहै हैं, यह दोष नाहीं है। जातैं जो अयत्नाचार प्रवर्तै है, ताकै केवल प्रमत्तयोगही नाहीं है, तहां भावप्राणनिका व्यपरोपणभी है। तैसैंही कह्या है उक्तं च श्लोक, ताका अर्थ– प्रमादवान् आत्मा है, सो पहलैं तौ अपने आत्माकूं आपकरि आप हणै है, पीछै अन्य प्राणीनिका घात होऊ तथा मति होऊ। तातैं प्रमादवान्‌के प्राणव्यपरोपणभी अवश्य जानना ॥

इहां विशेष जो, वार्तिकमें ऐसा अर्थ है, इन्द्रियनिका प्रचारका विशेष अपनी सावधानीविना होय सो प्रमत्त कहिये अथवा प्रमत्तकीज्यौं होय सो प्रमत्त है। इहां उपमाका वाचक इवशब्दका

वचन होय, सो अप्रशस्त है। जिस वचनका वस्तु विषय विद्यमान होऊ अथवा
ऊ, जहां हिंसा होय, सो सर्व अनृत कहिये है। सो पहलें ऐसा कह्या था, जो,
की रक्षाके अर्थ हैं। तातैं इहां जो हिंसाका कहनेवाला होय सो
श्रय करना। सो सर्वथा निषेधकाही अर्थ लीजिये तौ शून्यका प्रसंग
नाहीं। वहुरि सर्वथा विपरीत अर्थ लीजिये तौ वस्तुका स्वरूप अन्यथा
होइ। कोई सत्यवचन ऐसा है, जाकरि प्राणीनिकूं पीडा होय है, सो
अप्रशस्त अर्थमें दोऊ आय गये। झूठ कहनाभी अनृत है। वहुरि सांच
जातैं प्राणीनिकूं पीडा होय हिंसा होय सोभी अनृत है। ऐसा भावार्थ जानना ॥
पूछैं अनृतके अनंतर कह्या जो स्तेय, ताका कहा लक्षण है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥ १५ ॥

याका अर्थ— अदत्त कहिये विनादिया वस्तु धनादिक, ताका आदान कहिये लेना, सो स्तेय है। इहां आदान नाम ग्रहणका है, जो अदत्त कहिये विनादियेका ग्रहण, सो अदत्तादान है। इहां तर्क, जो, ऐसैं है तो कर्मके वर्गणा तथा नोकर्मके वर्गणा हैं ते काऊने दिये नाहीं,

तिनका ग्रहण अदत्तादान ठहस्या। ताका समाधान, जो, यह दोष इहां नाहीं। जातैं इहां अदत्त-शब्द कह्या है। ताका ऐसा अर्थ आवै है, जो, जिसविषें देनेलेनेका व्यवहार होय ऐसै धनादि वस्तुतैंही अदत्त जानना, कर्मनोकर्मके ग्रहणविषैं देनेलेनेका व्यवहार नाहीं, ते सूक्ष्म हैं अदृष्ट हैं। बहुरि कहै, जो, ऐसैंभी यह प्रसंग आवै है, जो मुनि आहार लेनेकूं जाय हैं, तब गली रस्ताके दरवाजे आदि होय हैं, तिनमें प्रवेश करै है, सो विनादीये हैं, तिसमें स्तेयका दोष आया। ताकूं कहिये, जो, यह दोषभी नाहीं, जातैं गली रस्ताके दरवाजे आदि लोकनिनें सामान्यपणे देय राखे हैं। कोई आवौ कोई जावौ, तहां वर्जन नाहीं। याहीतैं मुनि हैं सो जहां द्वारके कपाट आदि जुडे होय तहां वर्जना होय तहां प्रवेश न करै हैं। अथवा प्रमत्तयोगकी अनुवृत्ति है। तातैं गली आदिमें प्रवेश करते मुनिकें प्रमत्तयोग नाहीं है। तातैं यह अर्थ है, जहां संक्लेशपरिणामकरि प्रवृत्ति होय तहां स्तेय कहिये। बाह्यवस्तुका ग्रहण होऊ तथा मति होऊ प्रमत्तयोगके होतैं स्तेय वणी रह्या है॥

आगें, चौथा अब्रह्मका लक्षण कहा है ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ मैथुनमब्रह्म ॥ १६ ॥

...र्थ— मैथुन कहिये कामसेवन सो अब्रह्म है। तहां स्त्रीपुरुष चारित्रमोहके उदयकूं ...रि सहित होय तब तिनकै परस्पर स्पर्शनकी इच्छा होय, सो मैथुन है, तिसका ...ा नाम मैथुन है। जातैं लोकविषैं तथा शास्त्रविषैं तैसैंही प्रसिद्ध हैं। लोकविषैं ...ो सर्व जानैं हैं, जो, स्त्रीपुरुषकै रागपरिणामतैं चेष्टा होय सो मैथुन है। बहुरि ...डे वलधके मैथुनकी इच्छाविषैं इत्यादिक पाठ हैं, तहां मैथुनका ग्रहण कीजिये ...हुरि इहां प्रमत्तयोगकी अनुवृत्ति है, ताकरिभी स्त्रीपुरुषका युगलसंबंधी रतिसुखके अर्थि ...इ, सोही मैथुन ग्रहण कीजिये है। सर्वही कार्यमें मैथुन नाहीं। बहुरि जाके पालते संते ...हसादिक गुण वृद्धिकूं प्राप्त होय सो ब्रह्म है, जो ब्रह्म नाहीं सो अब्रह्म है। सो ऐसा अब्रह्म मैथुन है। इस मैथुनतैं हिंसादिक दोष हैं ते पुष्ट होय हैं। जातैं मैथुन सेवनेविषैं जो पुरुष तत्पर है सो थावर त्रस प्राणीनिकूं हणै है, झूंठ वचन बोलै है, चोरी करै है, चेतन अचेतन परिग्रहका ग्रहण करै है, ऐसैं जानना। इहां ऐसे कहनेतैं स्त्रीपुरुष रागपरिणामविना अन्य कोई कार्य करै, सो मैथुन नाहीं। तथा दोय पुरुष कोई कामसेवनविना अन्य कार्य करै सो मैथुन नाहीं, ऐसा सिद्ध होय है। तथा कामसेवनके परिणामतैं एकही पुरुष जो हस्तादिकतैं चेष्टा करै सोभी मैथुन

है। जातैं तहां दूसरा रागपरिणामके विषैं संकल्प है। जैसैं काहूंकौं भूत लागै तैसैं इहां दूसरा काम है· तातैं मैथुनशब्दकी सिद्धि है॥

आगें, पांचवां जो परिग्रह ताका कहा लक्षण है ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ मूर्छा परिग्रहः ॥ १७ ॥

याका अर्थ— मूर्छा कहिये परविषैं ममत्वपरिणाम सो परिग्रह है। तहां बाह्य जे गऊ भैंसि मणि मोती आदि चेतन अचेतन वस्तु अर अभ्यंतर जे राग आदिक ऐसे जे परिग्रह तिनकी रक्षा करना उपार्जन करना संस्कार करना ऐसा जो व्यापार, सो मूर्छा है। इहां प्रश्न, जो, लोकविषैं वायु आदि रोगके प्रकोपतैं अचेतन होय जाय ताकूं मूर्छा कहै हैं, सो प्रसिद्ध है, सो तिस अर्थकूं ग्रहण काहेतैं न कीजिये? ताका उत्तर, जो, यह तौ सत्य है, लोकमें तिसहीकूं मूर्छा कहै है। परंतु यह मूर्छि धातु है सो मोहसामान्य अर्थविषैं वर्तै है, सो सामान्यकी प्रेरणा विशेष अर्थविषैं है। ऐसैं होतैं विशेषका अर्थ इहां ग्रहण है। जातैं इहां परिग्रहका प्रकरण है। इहां फेरि पूछै है, जो ऐसैं कहैभी बाह्य वस्तुकै परिग्रहपणा नाहीं ठहरैगा। जातैं तुमनें अभ्यंतर जो मूर्छा है ताहीका ग्रहण कीया है। ताका समाधान, जो, सत्य है। प्रधानपणातैं हमने अभ्यंतरकाही ग्रहण कीया

है। बाह्यपरिग्रह न होतेंभी मेरा यऊ है ऐसैं परविषैं संकल्प करनेवाला पुरुष है, सो परिग्रहसहितही है। अथवा बाह्य परिग्रह नाहींभी कहिये है बहुरि परिग्रह हैभी ऐसाभी कहिये, जातैं मूर्छाका आलंबन कारण है। तथा मूर्छा है कारण जाकूं ऐसा है ॥

बहुरि इहां तर्क, जो, मेरा यऊ है ऐसा संकल्प है सोभी परिग्रहवाची है, तौ सम्यग्ज्ञानादिकविषैंभी यह मेरा है ऐसा संकल्प है, सोभी परिग्रह ठहऱ्या। रागादिपरिणाम अभ्यंतरपरिग्रहकी ज्यों यहभी है। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं। जातैं इहां प्रमत्तयोगकी अनुवृत्ति है, तातैं ज्ञानदर्शनचारित्रवान् पुरुष है सो मोहके अभावतैं अप्रमत्त है, तातैं ताकै मूर्छा नाहीं है, ऐसा याकै निष्परिग्रहपणा सिद्ध है ॥ इहां ऐसाभी विशेष जानना, जो, ज्ञानादि आत्माके स्वभाव हैं, त्यागनेयोग्य नाहीं। तातैं तिनतैं परिग्रहसहितपणा न होय है अर रागादिक हैं ते आत्माके स्वभाव नाहीं। कर्मके उदयके आधीन होय है, तातैं त्यागनेयोग्य हैं। तातैं तिनविषैं मेरा यऊ है ऐसा संकल्प है सो परिग्रह हैही, यह कहना युक्त है। इन रागादिकनितैं सर्व दोष उपजे हैं। ए सर्व दोषनिके मूल हैं। मेरा यऊ है ऐसैं संकल्पतैंही परिग्रहकी रक्षा करनी उपार्जन करना इत्यादिक उपजै हैं। तिनविषैं अवश्य हिंसा होय है। इनके निमित्त झूठ बोलै है, चोरी करै

हैं, मैथुनकर्मविषैं यत्न करैं हैं। तिन पापनिके अभावतैं नरकआदिके दुःख अनेकप्रकार प्रवर्तें हैं ॥

आगें, ऐसैं उक्त अनुक्रमकरि हिंसादिविषैं दोष देखनेवाला पुरुषकै अहिंसादिकविषैं गुणका निश्चय भया, तब अहिंसादिकविषैं बडा यत्न करने लगा, ताकै अहिंसादि व्रत होय हैं, सो पुरुष कैसा है ऐसैं सूत्र कहै हैं—

॥ निःशल्यो व्रती ॥ १८ ॥

याका अर्थ— मिथ्या माया निदान ए तीनि शल्य जाकै न होय सो व्रती है। जो शृणाति कहिये घातै चुभै सो शल्य कहिये। सो अर्थतैं शरीरकेविषैं प्रवेश करै घसी जाय ऐसा शस्त्रविशेषकूं शल्य कहिये। तिससारिखा चुभै मनविषैं बाधा करै सोभी शल्यही कहिये। जातैं कर्मके उदयतैं भया जो मानसिक विकार सो प्राणीनिकूं शरीरसंबंधी तथा मनसंबंधी बाधा करै सोभी शल्य है, ऐसा उपचारकरि नाम जानना। सो शल्य तीनिप्रकार है, मायाशल्य निदानशल्य मिथ्यादर्शनशल्य। तहां माया तौ निकृतिकूं कहिये, याकूं ठिगनेके परिणामभी कहिये। बहुरि विषयभोगनिकी वांछाकूं निदान कहिये। बहुरि अतत्त्वश्रद्धानकूं मिथ्यादर्शन कहिये। इन तीनूंनितैं रहित होय निःशल्य है सो व्रती है ऐसा कहिये है ॥

इहां तर्क करै है, शल्यका अभावतैं तौ निःशल्य कहिये। बहुरि व्रतके धारणतैं व्रती कहिये। इहां व्रतीका विशेषण निःशल्य कीया सो व्रतकै अर निःशल्यपणाकै विरोध है, तातैं विशेषण बणै नाहीं। निःशल्यकूं व्रती कहना बणै नाहीं। जैसैं दंडके संबंधतैं तौ दंडी कहिये। छत्रके संबंधतैं छत्री कहिये। दंडीके संबंधतैं छत्री कहना तौ बणै नाहीं। ताका समाधान, इहां दोऊ विशेषणतैं व्रती कहना इष्ट कीया है। केवल हिंसादिकके छोडनेहीमात्र व्रतके संबंधतैं शल्यसहितकूं व्रती कह्या नाहीं, जाकै शल्यका अभाव होय तब व्रतके संबंधतैं गृहादिकमें वसने न वसनेकी अपेक्षा अगार अनगारके भेदकरि व्रती कहनेकी विवक्षा है। जैसैं जाकै बहुत दूध घृत होय ताकूं गऊवाला कहिये बहुरि जाके दूध घृत नाहीं होय अरु गऊ विद्यमान होय तो गऊवाला कहना निष्फल है। तैसैं जो शल्यसहित होय ताकै व्रत होतैंभी व्रती कहना सत्यार्थ नाहीं। जो निःशल्य है सोही व्रती है। तथा इहां ऐसाभी उदाहरण है, जो, प्रधान होय ताका विशेषण अप्रधानभी होय है। जैसैं कोई काटनेवाला पुरुष तौ काटनेकी क्रियाविषैं प्रधान हेही, परंतु ताके विशेषण कीजिये जो तीक्ष्ण फरसीकरि काटै है तहां तीक्ष्णगुण विशेषणसहित फरसी अप्रधान है। सो काटनेवाला पुरुषका विशेषण होय है; तैसैं निःशल्यपणागुणकरि विशेषणस्वरूप जो व्रत ते तिस व्रतसहित पुरुष प्रधान

है, ताका विशेषण होय है ऐसैं जानना ॥

आगें ऐसैं व्रतीके भेद जाननेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ अगार्य्यनगारश्च ॥ १९ ॥

याका अर्थ— एक अगारी कहिये गृहस्थ दूजा अनगार कहिये मुनि ऐसैं व्रतीके दोय भेद हैं। तहां वसनेके अर्थि पुरुष जाकौं अंगीकार करै सो अगार कहिये ताकूं वेश्म मंदिर घरभी कहिये, सो जाकै होय सो अगारी कहिये। बहुरि जाकै अगार न होय सो अनगार कहिये। ऐसैं दोयप्रकारके व्रती हैं। एक अगारी दूसरा अनगार। इहां तर्क, जो, ऐसैं तौ विपर्ययकीभी प्राप्ति आवै है। शून्यागार देवमंदिर आदिकेविषैं आवास करते जे मुनि तिनकै अगारीपणा आया। बहुरि जो विषयतृष्णातैं निवृत्त नाहीं भया है, ऐसा गृहस्थ सो कोई कारणतैं वनमें ज्याय वस्या ताकै अनगारपणा आया। तहां आचार्य कहै हैं, यह दोष इहां नाहीं आवै है। इहां भाव अगारकी विवक्षा है। चारित्रमोहके उदयतैं अगार जो घर ताके संबंधप्रति जो अनिवृत्ति परिणाम है सो भावअगार है। सो ऐसा जाकै भावअगार होय सो वनमें वसता होय तौऊ अगारीही कहिये। अर घरमें वसै ते अगारीही हैं। बहुरि भावअगारका जाकै अभाव है सो अनगार कहिये है ॥

बहुरि तर्क, जो, अगारी जो ग्रहस्थ ताकै व्रतीपणाकी प्राप्ति नाही बणै है। जातैं याकै परिपूर्ण व्रत नाहीं। व्रती ऐसा नाम तौ पूर्ण व्रत होय तब बनैं। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है। नैगम आदि नयकी अपेक्षाकरि अगारी ग्रहस्थकैभी व्रतीपणां बणैं है। जैसैं कोऊ एक साल ऊवरामें वसता होय ताकूं नगरमें वसनेवालाभी कहिये। तैसैं ताकै सकलव्रत नांही है, एकदेशव्रत है तौऊ ताकूं व्रती कहिये। नैगम संग्रह व्यवहार ए तीनूं नय हैं, तिनकी अपेक्षा जाननी। तहां नैगम तौ आगामी सकलव्रती होयगा। ताकी अपेक्षा संकल्पमात्रविषय करै है। बहुरि संग्रह सामान्यव्रतीका ग्रहण करै है। तहां एकदेशभी आय गया। बहुरि व्यवहार व्रतीका भेद करै है। तातैं एकदेशव्रतीका भेद हैही, एकदेशविषैं सर्वदेशका उपचारतैंभी बणैं है, ऐसा जानना॥

आगैं पूछै है कि, हिंसादिक पांच पाप हैं, तिनमें कोई पुरुष एकपापतैं निवृत्त हूवा होय सो गृहस्थ व्रती है कि नाहीं? आचार्य कहै हैं नाहीं है। फेरि पूछै है, जो, कैसे हैं? तहां कहैं हैं, पांचूही पापकी विरति वैकल्येन कहिये एकदेशपणैं करै, सो इहां विवक्षित है। ताका सूत्र—

॥ अणुव्रतोऽगारी ॥ २० ॥

याका अर्थ— पांच पापका त्याग अणुव्रत कहिये एकदेश त्याग जाकै होय सो अगारी

कहिये गृहस्थव्रती है। तहां अणुव्रतशब्द है सो अल्पवचन है, जाकै अणुव्रत होय सो ऐसा अगारी कहिये है। इहां पूछे है, या अगारी गृहस्थकै व्रतनिका अणुपणा कैसैं है? ताकूं कहै है, याकै सर्वसावद्य कहिये सर्वही पाप तिनकी निवृत्ति कहिये अभाव ताका असंभव है-होय सकै नाहीं। फेरि पूछे, जो, यऊ कौंनसे पापतैं निवृत्त है? तहां कहिये है, त्रसप्राणीनिका व्यपरोपण कहिये मारणा तातैं निवृत्त है। तातैं तो याकै आद्यका अहिंसा नामा अणुव्रत है। बहुरि जिस असत्य वचनतैं घरका विनाश होय, तथा ग्रामका विनाश होय, ऐसा आप जाणैं तिस असत्यवचनतैं निवृत्त होय स्नेहमोहके वशतैं ऐसा वचन न बोलै ऐसैं गृहस्थकै दूसरा अणुव्रत होय है। बहुरि अन्यकूं पीडाका कारण ऐसै अदत्तादानादिकका न लेना, ताका राजादिकके भयतैं अवश्य त्याग होयही, तिसविषैं लेनेकी इच्छाभी न होय, ऐसै परिणाम न होय, जो, भय न होय तौ लेवो विचारै, ऐसा होय तो ताविषैं आदरही न होय, सो तीसरे अणुव्रतधारी श्रावक है। बहुरि उपात्त कहिये परकी व्याही अर अनुपात्त कहिये परकी व्याही नाहीं ऐसी जो परस्त्री तिसके संगमतैं नाहीं है रति कहिये राग जाकें ऐसा गृहस्थ, सो तौ चौथा अणुव्रतधारी है। बहुरि धन धान्य क्षेत्र आदि परिग्रहका अपनी इच्छाके वशतैं परिमाण करै, जेती इच्छा होय तेता राखै ऐसा जो

गृहस्थ सो पांचमां अणुव्रतधारी है ॥

इहां कोई पूछे, जो, गृहस्थव्रतीकूं त्रसके घातका त्यागी कह्या सो याकै व्यापारआदि गृहस्थके आरंभ अनेक हैं, तिनमें त्रसकी हिंसा अवश्य होय है। तामें त्याग कैसैं पलै? बहुरि याकै शास्त्रमें ग्यारह प्रतिमारूप भेद कहे हैं, तिनमें समझै नाहीं, सो कैसे है? ताका समाधान, जो श्रावकके ग्यारह प्रतिमारूप भेद कहे हैं, तिनमें प्रथमप्रतिमाविषैंही स्थूलत्यागरूप पांच अणुव्रतका ग्रहण है। याका लक्षण ऐसा कह्या है, जो, आठ तौ मूलगुण पालै, सात व्यसन छोडै, सम्यग्दर्शनके अतीचार मल दोष टालै ऐसैं कहै ते पांच अणुव्रत स्थूलपणैं आवै है। जातैं कोई शास्त्रमें तौ आठ मूलगुण कहे हैं। तामें पांच अणुव्रत कहे मद्य मांस सहतका त्याग कह्या ऐसैं आठ कहे। कोई शास्त्रमें पांच उदंबर फलका त्याग, तीनि मकारका त्याग ऐसैं आठ कहे। कोई शास्त्रमें अन्यप्रकारभी कह्या है, यह तौ विवक्षाका भेद है ॥

तहां ऐसा समझना, जो, स्थूलपणैं पांच पापहीका त्याग है। पंच उदंबर फलमैं तौ त्रसभक्षणका त्याग भया, शिकारके त्यागमें त्रस मारनेका त्याग भया, चोरी तथा परस्त्री व्यसनत्यागमें दोऊ व्रत भये, द्यूतकर्मआदि अतितृष्णाके त्यागतैं असत्यका त्याग तथा परिग्रहकी अतिचाह मिटी,

मांस मद्य सहतके त्यागतैं त्रसकूं मारिकरि भक्षण करनेका त्याग भया । ऐसैं पहली प्रतिमामें पंच अणुव्रतकी प्रवृत्ति संभवै है । अर इनके अतीचार दूरि करि सकै नाहीं । तातैं व्रतप्रतिमा नाम न पावै । सम्यग्दर्शनके मल दोष अतीचार दूर होय सकै हैं, दर्शनप्रतिमा नाम कहावै है । मनवचनकाय कृतकारितअनुमोदनाकरि अतीचाररहित प्रतिज्ञा पलै, तब प्रतिमा नाम पावै है, प्रतिमा नाम मूर्तिकाभी है, सो व्रतकी सांगोपांग मूर्ति बणैं तब प्रतिमा कहिये, सो इस दर्शनप्रतिमाका धारक पंचपरमेष्ठीका भक्त है, अन्यकी उपासना नाहीं, संसारदेहभोगतैं विरक्त है । जो प्रतिज्ञा याकै है, सो ऐसी है, जो, संसारके कार्य बिगडै तौ बिगडौ, देह बिगडै तौ बिगडौ, भोग बिगडै तौ बिगडौ, प्रतिज्ञा तौ भंग न करनी । ऐसैं दृढपरिणामहीतैं प्रतिज्ञा नाम पावै है ।

बहुरि त्रसके घातकीभी ऐसी तौ प्रतिज्ञा होय है, जो, त्रसप्राणीकूं मनवचनकायकरि मारूं नाहीं, परकूं उपदेशकरि मरवाऊं नाहीं, अन्य मारै तौ ताकूं भला जाणूं नाहीं, देवताके अर्थि गुरुके अर्थि मंत्रसाधनके अर्थि रोगके इलाजके अर्थि त्रसप्राणीकूं घातूं नाहीं अर व्यापारआदिकार्यनिविषें यत्न तौ करै, परंतु तहां गृहस्थके आरंभके अनेक कार्य हैं, कहांताईं बचावै ? तौऊ याके अभिप्रायमें मारनेहीके परिणाम नाहीं, तातैं पाप अल्प है । बहुरि व्रतप्रतिमामें व्रतनिके अती-

होय है। वहुरि दिशाके परिमाणविषैंभी कालकी मर्यादकी सापेक्षातैं मर्याद करै, जो, इस महीनामें तथा पक्षमें तथा इस दिनमें अपने घरमेंही रहना है, तथा इस नगरमेंही रहूंगा, तथा फलाणा वाडा तथा वाजार हाटतांईकी मर्याद है इत्यादि प्रतिज्ञा करै सो देशविरतिव्रत है। इहांभी जेता देशकी मर्याद करी तातैं वाहिर हिंसादिके अभावतैं महाव्रतपणाका उपचार है॥

वहुरि जिसतैं किछु अपना परका उपकार नाहीं अर अपने परके नाश भय पापका कारण ऐसा जो कार्य सो अनर्थदंड है, तिसतैं रहित होना, सो अनर्थदंडाविरतिव्रत है। सो यहू पंचप्रकार है, अपध्यान पापोपदेश प्रमादाचरित हिंसाप्रदान अशुभश्रुति ऐसैं। तहां परके जय, पराजय, वध, वंधन, अंगछेदन, सर्वधनका हरण इत्यादि कैसैं होय ऐसैं मनकरि चिंतवना; सो तौ अपध्यान है। वहुरि क्लेशरूप तिर्यग्वणिज प्राणिवधका तथा हिंसाका आरंभ आदिक पापसंयुक्त वचन कहना, सो पापोपदेश है। वहुरि प्रयोजनविना भूमिका कूटना, जलका सींचना, वृक्षका छेदना आदि अवद्य कहिये पाप, ताका कार्य सो प्रमादाचरित है। वहुरि विष, लोहके कांटा, शस्त्र, अग्नि, जेवडा, कोरडा, चावका, दंड आदि हिंसाके उपकरणका देना, सो हिंसाप्रदान है। वहुरि हिंसा तथा रागादिककी वधावनहारी खोटी कथा तिनका सुनना सीखना प्रवर्तन

चारकी सोधना है, आरंभपरिग्रह अल्प होय है। पंचपापतैं बहु भयवान् है। परंतु प्रत्याख्यानावरणके तीव्रस्थानक उदय होतैं सकलव्रत न वणै हैं, इत्यादि भावार्थ जानना ॥

आगें पूछै है कि, गृहस्थ अणुव्रतीका एतावन्मात्रही विशेष है, कि किछू औरभी है? सो ताके विशेषका सूत्र कहै हैं—

दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोग-
परिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥

याका अर्थ— गृहस्थ अणुव्रती है, सो, दिग्विरति देशविरति अनर्थदंडविरति ए तीनि तौ गुणव्रत हैं, बहुरि सामायिक प्रोषधोपवास उपभोगपरिभोगपरिमाण अतिथिसंविभाग ए च्यारि शिक्षाव्रत इन सातव्रतनिकरि सहित होय है। इनकूं सात शीलभी कहिये। इहां विरतिशब्द तौ प्रत्येक लेनेतैं तीनि व्रत भये हैं। च्यारि सामायिक आदि व्रतही हैं, सोही कहिये है। दिक् कहिये पूर्व आदि दिशा, तिनविषैं प्रसिद्धचिह्न पर्वत नदी ग्राम नगरादिक, तिन पर्यंत मर्याद करि नियम करै सो तौ दिग्विरतिव्रत है। यातैं बाहिर त्रसथावर सर्वही प्राणीनिका घातके अभावतैं याकै महाव्रतपणाका उपचार है। तिस बाहर लाभ होतैंभी परिणाम चलै नाहीं। तातैं लोभकषायका निरास

होय है। वहुरि दिशाके परिमाणविषैंभी कालकी मर्यादकी सापेक्षातैं मर्याद करै, जो, इस महीनामें तथा पक्षमें तथा इस दिनमें अपने घरमेंही रहना है, तथा इस नगरमेंही रहूंगा, तथा फलाणा वाडा तथा वाजार हाटतांईकी मर्याद है इत्यादि प्रतिज्ञा करै सो देशविरतिव्रत है। इहांभी जेता देशकी मर्याद करी तातैं वाहिर हिंसादिके अभावतैं महाव्रतपणाका उपचार है॥

वहुरि जिसतैं किछु अपना परका उपकार नाहीं अर अपने परके नाश भय पापका कारण ऐसा जो कार्य सो अनर्थदंड है, तिसतैं रहित होना, सो अनर्थदंडविरतिव्रत है। सो यहू पंचप्रकार है, अपध्यान पापोपदेश प्रमादाचरित हिंसाप्रदान अशुभश्रुति ऐसैं। तहां परके जय, पराजय, वध, वंधन, अंगछेदन, सर्वधनका हरण इत्यादि कैसैं होय ऐसैं मनकरि चिंतवना; सो तौ अपध्यान है। वहुरि क्लेशरूप तिर्यग्वाणिज प्राणिवधका तथा हिंसाका आरंभ आदिक पापसंयुक्त वचन कहना, सो पापोपदेश है। वहुरि प्रयोजनविना भूमिका कूटना, जलका सींचना, वृक्षका छेदना आदि अवद्य कहिये पाप, ताका कार्य सो प्रमादाचरित है। वहुरि विष, लोहके कांटा, शस्त्र, अग्नि, जेवडा, कोरडा, चावका, दंड आदि हिंसाके उपकरणका देना, सो हिंसाप्रदान है। वहुरि हिंसा तथा रागादिककी वधावनहारी खोटी कथा तिनका सुनना सीखना प्रवर्तन

करना, सो अशुभश्रुत है ॥

बहुरि सामायिक कहे हैं। तहां सामायिकशब्दका अर्थ कहै हैं। सम् ऐसा उपसर्ग है, सो एकताके अर्थमें है। जैसें संगतं घृतं कहिये काहू वस्तुमें घृत मिलें एक होय ताकूं संगतं घृतं कहिये। तथा तेल मिल्या होय एक होय गया होय तहां संगतं तैलं ऐसा कहिये। तैसें एकही भूत जानिये। बहुरि ऐसें एकत्वपणाकरि अयनं कहिये गमन होय सो समय कहिये। बहुरि समयही होय, सो सामायिक कहिये। तथा समय जाका प्रयोजन होय सो सामायिक कहिये। भावार्थ ऐसा, जो स्वरूपविषैं तथा शुभक्रियाविषैं एकता करि लीन होना, सो सामायिक है। तहां एते क्षेत्रविषैं एते कालविषैं मै इस अपने स्वरूपविषैं तथा शुभक्रियाहीविषैं लीन हूं ऐसें मर्यादकरि सामायिकविषैं तिष्ठै है, ताकै तेते देशकालसंबंधी महाव्रतका उपचार है। तातैं सूक्ष्मस्थूलप्रकार-करि याकै हिंसादिकका अभाव है ॥

इहां कोई कहै, ऐसैं तौ सकलसंयमका प्रसंग आवै है। ताकूं कहिये, याकै सकलसंयमका घातक प्रत्याख्यानावरण कषायका उदयका सद्भाव है, तातैं सकलसंयम नाहीं। बहुरि कहै, जो, ऐसैं कहै। महाव्रतका अभाव आवै है, तुम महाव्रत कैसैं कहौ हौ? ताकूं कहिये, जो, उपचारकरि

कहै हैं। जैसैं कोई पुरुषका राजमें प्रवेश होय, सो कोई राजका प्रच्छन्न ठिकाणां होय तहां ताका गमन नाहींभी है, तौऊ ताकूं कहिये इस पुरुषका राजमें सर्व जायगा प्रवेश है सर्वगत है; तैसैं इहांभी व्रतका अंगीकार है, सकलव्रत नाहीं तौऊ एकदेशविषैं सर्वदेशका उपचारकरि व्रती कहिये है। बहुरि प्रोषधशब्द है सो पर्वका वाचकभी है, प्रोषध अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्वकूं कहिये। बहुरि पांचूही इन्द्रिय अपने विषयतैं छूटि जामें आय वसै सो उपवास कहिये। जहां च्यारिप्रकार आहारका त्याग होय सो उपवास है, ऐसा अर्थ जानना। जो प्रोषधविषैं उपवास होय सो प्रोषधोपवास कहिये। तहां अपने शरीरका संस्कारके कारण स्नान सुगंध पुष्पमाला गहणा आभरण आदिकरि रहित होय पवित्र क्षेत्र अवकाशविषैं तथा साधुमुनि जहां वसैं तैसे क्षेत्रविषैं तथा चैत्यालयविषैं तथा अपने रहनेकी जायगामें न्यारा प्रोषधोपवास करनेका स्थानक होय तहां धर्मकथाका सुनन चिंतवना तिसविषैं मन लगाय वैठा रहै आरंभादिक किछू करै नाहीं, सो प्रोषधोपवास है ॥

बहुरि उपभोग कहिये भोजन पाणी सुगंध माला आदिक एकवार भोगनेमें आवैं बहुरि परिभोग कहिये वस्त्र आभूषण सेज आसन गृह यान वाहन आदिक वारवार भोगनेमें आवैं इन

दोऊनिका परिमाण, सो उपभोगपरिभोगपरिमाण कहिये। इहां भोगसंख्या पांचप्रकार है। त्रसघात प्रमाद वहुवध अनिष्ट अनुपसेव्य ऐसैं। तहां त्रसघाततैं निवृत्त है चित्त जाका तिस पुरुषकरि मांस अरु सहत तौ सदाही त्याग करने। वहुरि मद्य है सो मन मोहै है तातैं प्रमाद छोडनेके अर्थि छोडना। वहुरि केवडा केतकी सहीजणा अगथ्याके फूल आदि तथा जमीकंद आदो मूला आदि वहुजीवनिका उपजनेका ठिकाण जिनकूं अनंतकाय कहिये ते सर्वही त्याग करने। जातैं इनमें घात तौ वहुतजीवनिका है अर फल अल्प है-किंचित् स्वादमात्र फल है। वहुरि यान वाहन आभरण आदिकविषैं मेरे ऐता इष्ट है, इससिवाय अनिष्ट है ताका त्याग है, ऐसैं इह अनिष्टत्याग कहिये। वहुरि कालके नियमकरि यावज्जीव यथाशक्ति इष्टवस्तुविषैंभी सेवनेयोग्य नाहीं तिनका त्याग करना, सो अनुपसेव्यत्याग कहिये॥

वहुरि जो संयमकूं पालता संता अतति कहिये विहार करै सो अतिथि कहिये अथवा जाकै तिथि नाहीं होय सो अतिथि कहिये, जो पडिवा दोयज आदि तिथिरूप कालके नियमविना आहारकूं आवै सो अतिथि है, ऐसा अर्थ है। ऐसैं अतिथिके अर्थि संविभाग कहिये अपने भोजनवस्तुविषैं विभाग देना, सो च्यारिप्रकार है। भिक्षा उपकरण औषध वसतिका। तहां मोक्षके

अर्थि उद्यमी संयमीविषैं तत्पर प्रवीण शुद्धआचारी जो अतिथि ताकै अर्थि शुद्धमनकरि निर्दोष भिक्षा भोजन आहार देना। बहुरि धर्मके उपकरण सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रके वधावनेवाले देणें। बहुरि औषधभी योग्य देणी। बहुरि परमधर्मकी श्रद्धाकरि वसतिकाभी बनावणी। बहुरि सूत्रमें चशब्द है सो आगें कहसी जो गृहस्थधर्म ताके समुच्चयके अर्थि है ॥

इहां ऐसाभी विशेष जानना, जो, ग्यारह प्रतिमाके अनुक्रममें दूजी व्रतप्रतिमा है तामें पंचअणुव्रतके अतीचार तौ सोधैही हैं। बहुरि ए सप्तशील कहे तिनका आचरण यथाशक्ति है तिनमें अतीचारभी लागै हैं। बहुरि तीजी प्रतिमा सामायिक नाम है, तहां सामायिक अतीचाररहित पलै है। बहुरि चौथी प्रतिमा प्रोपधोपवास नामा है, तहां प्रोपधोपवास अतीचाररहित पलै है। बहुरि पांचमी प्रतिमा सचित्तत्याग नाम है, तहां उपभोगपरिमाण नामा शील है ताके अतीचार सोधै है। तहां सचित्तका भक्षणका तौ त्यागही करै है, बहुरि अन्यकार्यभी सचित्तसूं यत्नपूर्वक करै है। इहां सतरह नियमकी प्रवृत्ति अवश्य होय है। बहुरि छठी प्रतिमा रात्रिभोजनका त्याग दिवा स्त्रीसेवनका त्याग है, सो यहभी उपभोगपरिभोगके परिमाणके अतीचार सोधनेहीका विशेष है। तहांताई जघन्यश्रावक कहिये ॥

बहुरि सातमी प्रतिमा ब्रह्मचर्य है। सो इहां स्वस्त्रीकाभी त्याग नववाडसहित शुद्ध अतीचार-रहित होय है। बहुरि आठमी प्रतिमा आरंभत्याग है। तहां वणिज आदि आरंभका कछू कुटुंब सामिल रहनेमें दोप अतीचार उपजै तथा ताकाभी अतीचाररहित शुद्ध त्याग होय है। बहुरि नवमी प्रतिमा परिग्रहत्याग है। तहां पहले कछु अल्पपरिग्रह रुपया पईसासंबंधी ममत्व था तिस-काभी इहां त्याग है अतीचार न लगावै है। इहांताई मध्यमश्रावक है। बहुरि दशमी प्रतिमा अनुमतित्याग है, सो नवमीमें कुटुंब सामिल भोजनादिक करै था, तामें भला माननेका दोप उपजै था, इस दशमी प्रतिमामें ताकाभी त्याग है, घरका तथा अन्य कोई बुलावै ताकै भोजन करै, घरतें उदासीनवृत्ति रहै, कदाचित् घर बैठे कदाचित् मठ मंडप चैत्यालय आदिविषैं बैठि निर्ममत्व रहै। बहुरि ग्यारमी प्रतिमामें घरका त्याग करि मुनिकीज्यों मंडपमें रहै है, याका नाम उद्दिष्टत्यागप्रतिमा है। तहां अपने निमित्त कीया भोजनादिकूंभी नाहीं अंगीकार करै है, यह उत्तमश्रावक है, एक कोपीनमात्र वस्त्र राखै है। बहुरि याका दूसरा भेद क्षुलक है, ताका स्वरूप श्रावकाचारतें जानना। बहुरि सारीही प्रतिमानिका स्वरूपका भावार्थ इहां संक्षेप लिख्या है। सो विशेपकथन श्रावकाचारग्रंथनितें जानना॥ आगें चशब्दकरि समुच्चय कीयाकूं कहै हैं—

॥ मारणान्तिकीं सल्लेखनां योषिता ॥ २२ ॥

याका अर्थ— मरणके अंतसंबधी जो सल्लेखना ताहि सेवनेवालाभी यह श्रावक होय है। तहां अपने परिपाककूं प्राप्त भया जो आयुकर्म ताका बहुरि इन्द्रियप्राण तथा बलप्राण इनका कारणके वशतैं क्षय होना, सो मरण कहिये। ताका जो तिस भवसंबंधी अंत ताकूं मरणांत कहिये, सो मरणांत है प्रयोजन जाका सो मारणांतिकी कहिये। बहुरि भलेप्रकार बाह्य तौ कायका तथा अभ्यंतर कषायका लेखना कहिये अनुक्रमतैं तिनके कारणनिके घटावनेकरि कृश करना सो सल्लेखना कहिये। ऐसी मरणके अंतसंबंधी सल्लेखना ताहि जोषिता कहिये सेवनेवाला गृहस्थ श्रावक होय है। इहां कोई कहै है, जो, जोषिताशब्द कह्या सो सेविता ऐसा स्पष्ट प्रगट अर्थरूप शब्द क्यों न कह्या? ताकूं कहिये, जो इहां सेविता न कहना, जातैं जोषिता कहनेमें अर्थका विशेष वणै है। केवल सेवनाही न ग्रहण कीया है। इहां प्रीतिकाभी अर्थ है। प्रीतिविना जोरीनैं सल्लेखना न करनी। सल्लेखना प्रीति होतैं आपही करै है। तातैं जोषिताशब्दमें प्रीति अरु सेवना दोऊ अर्थ हैं। बहुरि कोई तर्क करै है, जो, यह हम मान्या, परंतु यामें आत्मघातकी प्राप्ति आवै है। जातैं अपने अपने अभिप्रायपूर्वक आयुआदि प्राणनिकी निवृत्ति करै है। आचार्य कहै हैं, यह इहां दोष

नाहीं। जातैं इहां प्रमत्तयोग नाहीं है प्रमत्तयोगतैं प्राणव्यपरोपणा करै सो हिंसा कही है सो याकै हिंसा नाहीं। जातैं रागादिदोषका याकै अभाव है। जो राग दोष मोहके वश होय, सो विषशस्त्रादि उपकरणनिकरि आपकूं घातै, ताकै आत्मघात होय है। तैसैं सल्लेखनामें नाहीं है। जातैं इहां आत्मघातका दोष नाहीं है। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ- रागादिकनिकी उत्पत्ति न होना, सो अहिंसकपणां सिद्धान्तमें कह्या है। वहुरि तिन रागादिकनिकी उत्पत्ति, सो हिंसा है, ऐसैं जिनभगवाननैं कह्या है॥

वहुरि विशेष, जो, प्राणीकै मरण अनिष्ट है, तहां जैसैं कोई व्यापारी अनेकप्रकार व्यापारकी वस्तु संचय करी होय घरमें धरी होय ताकै घरका विनाश होना इष्ट नाहीं है, तहां कोई कारण ताके विनाशका कारण आय प्राप्त भया होय ताकूं यथाशक्ति दूरि करै, वहुरि कारण दूरि न होय सकै तौ जैसैं अपनी व्यापारकी वस्तु घरमें धरी थी तिनका विनाश न होय तैसैं यत्न करै; ऐसैंही गृहस्थ श्रावकभी व्रतशीलरूप व्यापारकी वस्तुका संचयविषैं प्रवर्तै है, तिसका आश्रय यह जीवित है ताका नाश तौ न चाहै है, वहुरि तिसके नाशका कारण आय प्राप्त होय तव ता कारणकूं जैसैं अपना गुण विरोध्या न जाय तैसैं दूरि करै, वहुरि जो नाशका कारण दूरि

न होय सकै नाइलाज होय तब जैसें अपना गुणका विनाश न होय तैसें यत्न करै, यामें कैसें आत्मघात भया कहिये? तहां पूछै है, कि, सलेखना मरणके अंतविषै कही, सो मरणका ज्ञान कैसें होय? तथा विनाजाणे कैसें करिये? तहां कहिये है, जरा रोग इन्द्रियनिकी हानि दीखे जो अवश्य जाणे अब यह शरीर रहेगा नाहीं, तब प्रासुक आहारपाणीकरि तथा उपवासादि तपकरि अनुक्रमतें शरीरका बल क्षीण होता जाय तहां मरणपर्यंत द्वादशभावनाका चिंतवनतें काल गमावै, शास्त्रोक्त विधानकरि समाधि मरण करै ॥

आगें जो " निःशल्यो व्रती " ऐसा पूर्वै कह्या था, तहां तीसरा शल्य मिथ्यादर्शन कह्या था, तातें यह जान्या, जो व्रती होय है सो सम्यग्दृष्टि होय है, मिथ्यादृष्टि व्रतनिकी क्रियारूप प्रवर्ते तौऊ व्रती नाहीं। तहां पूछै, सो सम्यग्दर्शन अतीचारसहित सापवाद होय है कि अतीचाररहित निरपवाद होय है? ऐसें पूछें सूत्र कहे हैं, जो, कदाचित् मोहनीयकर्मका विशेष जो सम्यक्त्वप्रकृति तातें ए अपवाद कहिये अतीचार होय हैं, याका सूत्र—

॥ शङ्काकाङ्क्षाविचिकित्साऽन्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— शंका कांक्षा विचिकित्सा अन्यदृष्टिप्रशंसा अन्यदृष्टिसंस्तव ए पांच अतीचार

सम्यग्दृष्टीके हैं। तहां निःशंकितपणाकूं आदि देकर आठ सम्यक्त्वके अंग पूर्वैं दर्शनविशुद्धिके कथनविषैं कहे थे, तिनके प्रतिपक्षी दोष जानने। इहां पूछै है, प्रशंसा अर संस्तवमें कहा विशेष है? ताका उत्तर, जो, मनकरि मिथ्यादृष्टीके ज्ञानचारित्रगुणका प्रगट करनेका विचार ताकौं भला जानना, सो तौ प्रशंसा है। बहुरि मिथ्यादृष्टीविषैं छते तथा अणछते गुणका प्रगट करनेका वचन कहना सो संस्तव है। इह इनि दोऊनिमें भेद है। बहुरि पूछै है, सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे थे ताके तेतेही प्रतिपक्षी अतीचार चाहिये, पांचही कैसे कहे? तहां कहै हैं, जो, यह दोष नाहीं। आगें व्रतशीलनिविषैं पांचपांचही संख्याकरि अतीचार कहैंगे, तातैं प्रशंसासंस्तवविषैं अन्य अतीचारनिकूं गर्भितकरि पांचही कहे हैं। इहां ऐसाभी विशेष जानना, जो, सम्यग्दृष्टि मुनि तथा श्रावक दोऊही होय हैं, सो ए अतीचार दोऊनिकै संभवै हैं ॥

आगें, सम्यग्दृष्टीके अतीचार तौ कहे, बहुरि पूछै है कि ऐसे अतीचार व्रतशीलनिविषैंभी होय हैं कहा? ऐसैं पूछैं आचार्य कहै हैं, हा, होय हैं। ऐसैं कहिकरि तिन अतीचारनिकी संख्या कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ व्रतशीलेषु पंचपंच यथाक्रमम् ॥ २४ ॥

याका अर्थ— पांच व्रत अर सात शील एक सलेखना इनविषैं पांचपांच अतीचार अनुक्रमतैं जानने। इहां व्रतशीलका द्वंद्वसमास करना। इहां तर्क कहै हैं, शीलका ग्रहण अनर्थक है। व्रतग्रहणहीतैं शीलका ग्रहण होय है। जातैं शीलभी व्रतही है। आचार्य कहैं हैं, अनर्थक नाहीं है। इहां विशेष जनावनेके अर्थि शीलका ग्रहण है। ए शील हैं ते व्रतनिकी रक्षाके अर्थि हैं ऐसा जान्या जाय है। यातैं दिग्विरत्यादिक इहां शीलके ग्रहणकरि जानने। बहुरि अगारीके अधिकारतैं ऐसा जानना, जो, ए पांचपांच अतीचार कहियेगा ते अगारी गृहस्थ श्रावकके व्रतशीलनिविषैं हैं सोही कहे हैं। तहां प्रथमही आदिका अहिंसा नामा अणुव्रतका सूत्र कहै हैं—

॥ बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— बंध वध छेद अतिभार लादणा अन्नपानका रोकना ए पांच अतीचार अहिंसाअणुव्रतके हैं। तहां प्राणीनिका मनोवांछित गमन करनेकूं रोकना बांधना सो तौ बंध कहिये। बहुरि लाठी चाबक वेतकरि घात करना चोट देना सो वध कहिये यामें प्राणव्यपरोपण न लेना। जातैं यह पहली हिंसाहीमें कह्या है। बहुरि कांन नाक आदिक अंगउपांगका छेदना, सो छेद कहिये। बहुरि न्याय बोझतैं अधिका लादि चलावना, सो अतिभारारोपण कहिये।

वहुरि गऊ आदिकूं क्षुधा तृषा आदि बाधारूप क्रियाका करना, खाना पीना न देना, सो अन्नपाननिरोध है। ए पांच अहिंसा अणुव्रतके अतीचार हैं ॥

आगें दूजे अणुव्रतके अतीचार कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्याकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— मिथ्या उपदेश रहोभ्याख्यान कूटलेखक्रिया न्यासापहार साकारमंत्रभेद ए पांच अतीचार सत्यअणुव्रतके हैं। तहां स्वर्गमोक्षके कारण जे क्रियाविशेष, तिनविषैं अन्यप्राणीनिकूं अन्यथा प्रवर्तावना सो मिथ्योपदेश है। वहुरि स्त्रीपुरुषनें एकांतविषैं किया जो क्रियाविशेष ताका प्रगट करना, सो रहोभ्याख्यान है। वहुरि अन्यपुरुषनें कह्या नाहीं अर परका प्रयोगके वशतैं परकूं ठगनेके अर्थि झूठा लिखना जो इसनें ऐसा कह्या है तथा ऐसा कीया है ऐसैं अपनी इच्छातैं बणावना, सो कूटलेखक्रिया है। वहुरि काऊनें रूपा सोना आदि द्रव्य धरा होय सो ताकी संख्या धरनेवालाकूं यादि न रही विस्मृत होय गया पीछैं मांगी तब अल्प संख्या कहि मांगी तब राखनेवालेनें कही एतीही है तुमारी ल्यो ऐसा ताके अल्पसंख्याका वचन कहना जेती पैलैं सोंपी तेती न बतावना, सो न्यासापहार है। वहुरि प्रयोजनकरि प्रकरणकरि अंगकी चेष्टाकरि

भवरा भ्रकुटिका विक्षेपकरि इत्यादि चेष्टाकरि परका अभिप्राय जाणिकरि चुगली करनेकूं इर्षादिकतैं ताका प्रगट करना, सो साकारमंत्रभेद है। ऐसें ए पांच सत्य अणुव्रतके अतीचार हैं ॥

आगें अचौर्यव्रतके अतीचार कहे हैं—

॥ स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः२७

याका अर्थ— स्तेनप्रयोग तदाहृतादान विरुद्धराज्यातिक्रम हीनाधिकमानोन्मान प्रतिरूपकव्यवहार ए पांच अचौर्यअणुव्रतके अतीचार हैं। तहां कोई चोरी करता होय ताकूं आप प्रेरै तथा परकूं कहिकरि प्रेरणा करावै अथवा पैला प्रेरै ताकी सराहना करै ताकूं भला मानै सो स्तेनप्रयोग है। इहां स्तेन नाम चोरका है, ताकूं प्रेरै बहुरि चोरकूं आपु प्रेरयाभी नाहीं सराभी नाहीं परंतु चोरका ल्याया द्रव्यका ग्रहण करै, सो तदाहृतादान है। बहुरि योग्यन्यायकूं उलंघि अन्यप्रकार लेना देना सो तौ अतिक्रम कहिये, सो यऊ राज्यसूं विरुद्ध होय सो विरुद्धराज्यातिक्रम है। तहां बडा मोलकी वस्तु अल्प मोलमें लेणेका यतन विचारवौ करै, सो विरुद्ध राज्यातिक्रम जानना। बहुरि पाई माणि इत्यादिक तौ मान कहिये, इनकूं प्रस्थ आदि कहिये। बहुरि ताखडीके तोला आदि उन्मान कहिये। सो इनकरि घटनेकरि तौ परकूं देना अर बधतेंकरि परका

लेना इत्यादि कूडा प्रयोग करना, सो हीनाधिकमानोन्मान है। बहुरि खोटे सोना रूपा वणाय ठिगनेके अर्थि व्यवहार करे परकूं खोटी वस्तुकूं क्रियाकरि आच्छी दिखाय दे ऐसैं कूड करै, सो प्रतिरूपकव्यवहार है। ऐसैं ए पांच अदत्तादानविरति अणुव्रतके अतीचार हैं॥

आगें ब्रह्मचर्य अणुव्रतके अतीचार कहै हैं—

॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥

याका अर्थ— परविवाह करणा परिगृहीतइत्वरिकागमन अपरिगृहीतइत्वरिकागमन अनंगक्रीडा कामतीव्राभिनिवेश ए पांच ब्रह्मचर्य अणुव्रतके अतीचार हैं। तहां कन्याका देना परिणावना सो विवाह है, सो परका विवाह करणा, सो परविवाहकरण कहिये। बहुरि जो परपुरुषनिप्रति गमन करै सो इत्वरी कहिये इस शब्दकै निंदा अर्थविषैं कप्रत्ययतैं इत्वरिका ऐसा नाम भया। सो एकपुरुषही जाका भरतार होय सो परिगृहीता कहिये, तिसप्रति गमन करिये सो परिगृहीतइत्वरिकागमन कहिये। बहुरि जो वेश्यापणाकरि पुंश्चली होय अनेक जाके भरतार होय सो अपरिगृहीता इत्वरिका कहिये, तिसप्रति गमन करै सो अपरिगृहीताइत्वरिकागमन कहिये। बहुरि अंग कहिये प्रजननलिंग तथा योनि इन विना अन्यरीति क्रीडा, सो अनंगक्रीडा कहिये। बहुरि

कामका वधता परिणाम सो कामतीव्राभिनिवेश कहिये जामें कामसेवनेका निरंतर अभिप्राय प्रवर्तै ते ए पांच स्वदारसंतोष नामा व्रतके अतीचार कहे हैं ॥

आगें पांचवा अणुव्रतके अतीचार कहे हैं ॥

॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणातिक्रमाः ॥ २९ ॥

याका अर्थ— क्षेत्र वास्तु, हिरण्य सुवर्ण, धन धान्य, दासी दास, कुप्य इनका प्रमाणतैं उलंघना, सो पंचम अणुव्रतके अतीचार हैं। तहां क्षेत्र तौ नांज उपजनेका आधार ताकूं खेत कहिये, वास्तु अगार घरकूं कहिये, हिरण्य रूपा आदिका व्यवहार, सुवर्ण सोना, धन गऊ आदि, धान्य तण्डुल, दासी दास चाकर स्त्री पुरुष, कुप्य कपास रेसम चंदन आदि। तहां क्षेत्र वास्तु, हिरण्य सुवर्ण, धन धान्य, दासी दास, ऐसैं च्यारि तौ दोयदोयका युगल लेना। बहुरि एक कुप्य ऐसें ए पांच भये। तिनका परिमाण कीया होय जो मेरै एताही परिग्रह है अन्यका त्याग है फेरि तिसकूं अतिलोभके वशतें उलंघै वधाय ले, सो ए पांच अतीचार परिग्रहपरिमाणव्रतके हैं॥

ऐसें पांच अणुव्रतके अतीचार तौ कहे, आगें शीलनिके अतीचार कहे हैं। तहां प्रथमही दिग्विरति नामा शीलके कहे हैं, ताका सूत्र—

लेना इत्यादि कूडा प्रयोग करना, सो हीनाधिकमानोन्मान है। बहुरि खोटे सोना रूपा वणाय ठिगनेके अर्थि व्यवहार करै परकूं खोटी वस्तुकूं क्रियाकरि आच्छी दिखाय दे ऐसैं कूड करै, सो प्रतिरूपकव्यवहार हे। ऐसैं ए पांच अदत्तादानविरति अणुव्रतके अतीचार हैं॥

आगें ब्रह्मचर्य अणुव्रतके अतीचार कहै हैं—

॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥

याका अर्थ-- परविवाह करणा परिगृहीतइत्वरिकागमन अपरिगृहीतइत्वरिकागमन अनंगक्रीडा कामतीव्राभिनिवेश ए पांच ब्रह्मचर्य अणुव्रतके अतीचार हैं। तहां कन्याका देना परिणावना सो विवाह है, सो परका विवाह करणा, सो परविवाहकरण कहिये। बहुरि जो परपुरुषनिप्रति गमन करै सो इत्वरी कहिये इस शब्दकै निंदा अर्थविषैं कप्रत्ययतैं इत्वरिका ऐसा नाम भया। सो एकपुरुषही जाका भरतार होय सो परिगृहीता कहिये, तिसप्रति गमन करिये सो परिगृहीत इत्वरिकागमन कहिये। बहुरि जो वेश्यापणाकरि पुंश्चली होय अनेक जाके भरतार होय सो अपरिगृहीता इत्वरिका कहिये, तिसप्रति गमन करै सो अपरिगृहीताइत्वरिकागमन कहिये। बहुरि अंग कहिये प्रजननलिंग तथा योनि इन विना अन्यरीति क्रीडा, सो अनंगक्रीडा कहिये। बहुरि

कामका वधता परिणाम सो कामतीव्राभिनिवेश कहिये जामें कामसेवनेका निरंतर अभिप्राय प्रवर्तै ते ए पांच स्वदारसंतोष नामा व्रतके अतीचार कहे हैं ॥

आगें पांचवा अणुव्रतके अतीचार कहे हैं ॥

॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणातिक्रमाः ॥ २९ ॥

याका अर्थ— क्षेत्र वास्तु, हिरण्य सुवर्ण, धन धान्य, दासी दास, कुप्य इनका प्रमाणतैं उलंघना, सो पंचम अणुव्रतके अतीचार हैं। तहां क्षेत्र तौ नांज उपजनेका आधार ताकूं खेत कहिये, वास्तु अगार घरकूं कहिये, हिरण्य रूपा आदिका व्यवहार, सुवर्ण सोना, धन गऊ आदि, धान्य तण्डुल, दासी दास चाकर स्त्री पुरुष, कुप्य कपास रेसम चंदन आदि। तहां क्षेत्र वास्तु, हिरण्य सुवर्ण, धन धान्य, दासी दास, ऐसैं च्यारि तौ दोयदोयका युगल लेना। बहुरि एक कुप्य ऐसैं ए पांच भये। तिनका परिमाण कीया होय जो मेरे एताही परिग्रह है अन्यका त्याग है फेरि तिसकूं अतिलोभके वशतैं उलंघे वधाय ले, सो ए पांच अतीचार परिग्रहपरिमाणव्रतके हैं ॥

ऐसें पांच अणुव्रतके अतीचार तौ कहे, आगें शीलनिके अतीचार कहे हैं। तहां प्रथमही दिग्विरति नामा शीलके कहे हैं, ताका सूत्र—

॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यातिक्रमक्षेत्रवृध्दिस्मृत्यन्तराधानानि ॥ ३० ॥

याका अर्थ— उर्ध्व अधः तिर्यक् इन तीनिनिकी मर्यादाका व्यतिक्रम करणा अर क्षेत्रकूं वधाय लेना मर्यादाकरि होय ताकूं भूलि अन्य धारण करणी ए पांच अतीचार दिग्विरतिके हैं। तहां जो दिशाकी मर्याद करी थी तातैं उल्लंघि जाना सो अतिक्रम कहिये। सो संक्षेपतैं तीनि· प्रकार है ऊर्ध्व अतिक्रम अधः अतिक्रम तिर्यक् अतिक्रम ऐसैं। तहां पर्वतादि चढनेमें मर्याद- सिवाय चढै सो ऊर्ध्वातिक्रम है। बहुरि कूपआदिविषैं मर्यादसिवाय उतरणा सो अधः अतिक्रम है। बहुरि बिल गुफा आदिका प्रवेशविषैं तिर्यक् अतिक्रम है। बहुरि दिशाकी मर्याद करी थी तामैं लोभका वशतैं अधिकका अभिप्रायकरि वधावना, सो क्षेत्रवृद्धि है। सो यह अतिक्रम प्रमादतैं तथा मोहतैं तथा परिग्रहके निमित्ततैं होय है। बहुरि मर्याद करी होय ताकूं भूलि जाणा यादि न राखणा सो स्मृत्यंतराधान है। ऐसे ए दिग्विरतिके अतीचार पांच हैं॥

आगें देशविरति व्रतके अतीचार कहे हैं, ताका सूत्र कहे हैं—

॥ आनयनप्रेष्यप्रयोगशह्वरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥ ३१ ॥

याका अर्थ—आनयन प्रेष्यप्रयोग शब्दानुपात रूपानुपात पुद्गलक्षेप ऐसैं ए पांच अतीचार

देशविरतके हैं। तहां जिस देशकी मर्याद करि बैठ्या होय तहातैं प्रयोजनके वशतैं अन्यकूं कहिकरि किछू वस्तु अन्यक्षेत्रतैं मंगावणा, सो आनयन है। बहुरि अन्यकूं कहना, जो, तुम ऐसैं करो, सो प्रेष्यप्रयोग है। बहुरि आप मर्याद करि जिस क्षेत्रविषैं बैठे, तहां बैठाही बाहिरके फिरनेवाले पुरुषनिकूं खासी खंधार आदि शब्दकी समस्याकरि प्रयोजन समझाय देना, सो शब्दानुपात है। बहुरि तैसैंही अपना शरीररूप दिखाय समझाय देना, सो रूपानुपात है। बहुरि तैसैंही किछु कंकर आदि बगाय समझाय देंना, सो पुद्गलक्षेप है। ऐसैं ए देशविरमणके अतीचार हैं ॥

आगें अनर्थदंडविरतिके अतीचार कहै हैं—

॥ कन्दर्पकौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥ ३२ ॥

याका अर्थ — कंदर्प कौत्कुच्य मौखर्य असमीक्ष्याधिकरण उपभोगपरिभोगअनर्थक्य ए पांच अतीचार अनर्थदण्डविरतिके हैं। तहां रागके तीव्रउदयतैं जामें हास्य मिली होय ऐसा नीच हीन मनुष्यके कहनेका गाली आदि भंडवचन पैलेकूं कहना, सो कंदर्प है। बहुरि हास्यके गालीसहित वचनभी कहै अर कायकै चेष्टातैं निंदायोग्य क्रियाभी करै जाकूं लौकिकमें खवाखसी आदि कहै हैं, सो कौत्कुच्य है। बहुरि धीठपणा लिये बहुत प्रलापरूप बकवाद करना, सो मौखर्य है।

बहुरि विनाविचारे विनाप्रयोजन अधिकी क्रिया करना, फिरना, डोलना, कूदना इत्यादि सो असमीक्ष्याधिकरण है। इहां मन वचन काय तीनीकी क्रिया विनाप्रयोजन न करै सो जाननी। बहुरि खानेपीनेकी सामग्री तथा वस्त्र आभूषण आदि निःप्रयोजन बहुत भेले करने, सो उपभोगपरिभोगानर्थक्य है। ऐसैं ए पांच अतीचार अनर्थदंडविरतिके हैं॥

आगें सामायिकके अतीचार कहे हैं--

॥ योगदुष्प्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— योग जे मन वचन कायके कर्म, तिनका बुरा चिंतवन प्रवर्तन करना, तीनि तौ ए अर सामायिकके विषैं अनादर, क्रियापाठ आदिका भूलना ए पांच अतीचार सामायिकके हैं। तहां योगका स्वरूप तौ पहलैं कह्या सोही। ताका दुष्प्रणिधान कहिये खोटी प्रवृत्ति करना, सो ए तीनिप्रकार, वचनका दुष्प्रणिधान कायका दुष्प्रणिधान मनका दुष्प्रणिधान। इहां भावार्थ ऐसा, जो, सामायिक करै तब सामायिकमें तौ मनवचनकायकी प्रवृत्ति न रहै अर अन्यकार्यमें प्रवृत्ति करै, सो अतिचार है। बहुरि अनादर कहिये सामायिकविषैं उत्साह नाहीं, जैसैंतैसैं काल पूरा करै, सो है। बहुरि स्मृत्यनुपस्थान कहिये पाठक्रिया यादि न रहै भूलि जाय,

सो है। ऐसैं सामायिकके अतीचार हैं ॥ आगें प्रोषधोपवासके अतीचार कहै हैं—

॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥

याका अर्थ— अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित कहिये विना नीका देख्या तथा विना नीका झाड्या पृथ्वीपरि क्षेपना उठावना सांथरा करना तीनि तौ ए अरु प्रोपधविषैं उत्माह नाहीं निरादरसूं करना तथा क्रियामें भूली जाणा ए पांच प्रोपधोपवासके अतिचार हैं। जहां प्रोपधउपवासकी प्रतिज्ञा लेकरी जहां बैठना तिस भूमिविषैं जीव है कि नाहीं हैं ऐसैं नेत्रनिकरि देखना, सो प्रत्यवेक्षणा कहिये। वहुरि कोमल पीछी आदि उपकरणकरि झाडना सो प्रमार्जन है। तिन दोऊनिका अभावतैं उत्सर्ग कहिये भूमिविषैं मलमूत्र क्षेपणा। आदान कहिये अरहंत आचार्यकी पूजाका उपकरण तथा गंधमाल धूपादि सामग्री तथा अपने धारणके वस्त्रआदिकका उठावना लेना, सो। संस्तरोपक्रमण कहिये भूमिपरि विछावणा आदिकरि सांथरा करणा ऐसैं तीनि तौ ए भए। वहुरि क्षुधाकरि पीडित होनेतैं जो उपवासमें आवश्यक आदि क्रिया करनी तिनविषैं उत्साह नाही—निरादरतैं कालपूरण करना, सो अनादर है। वहुरि क्रिया यादि न राखणी भूलि जाना, सो स्मृत्यनुपस्थान है। ऐसैं ए पांच अतीचार प्रोपधोपवासके हैं ॥

आगें उपभोगपरिभोगपरिमाणके अतीचार कहै हैं—

॥ सचित्तसम्बन्धसम्मिश्राभिषवदुष्पकाहाराः ॥ ३५ ॥

याका अर्थ-- सचित्तवस्तु, सचित्तकरि मिल्या वस्तु, सचित्तके संबंधरूप वस्तु, द्रव्यरूप-वस्तु, विना नीका पकी वस्तु इनका आहार करना ए पांच उपभोगपरिभोगपरिमाणके अतीचार हैं। तहां जीवकरि सहित होय सो सचित्त है। तिस सचित्तकरि भिड्या होय सो सचित्तसंबंध है। सचित्तसूं मिल्या होय सो सम्मिश्र है। इनविषैं प्रवृत्ति प्रमादतैं तथा अतिभूखतैं तथा तीव्ररागतैं होय। बहुरि द्रव्यरूप रस तथा वृष्य कहिये पुष्टिकरि वस्तु सो अभिषव है। बहुरि भलेप्रकार पक्या नाहीं ऐसी वस्तु। इन पांच वस्तूनिका आहार करना ए पांच अतीचार उपभोगपरिभोग-परिमाणके हैं॥ आगें अतिथिसंविभागके अतीचार कहै हैं--

॥ सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥ ३६ ॥

याका अर्थ-- सचित्तविषैं धरणा, सचित्ततैं ढाकना, परका नाम करना, मात्सर्य करना, काल उलंघना ए पांच अतीचार अतिथिसंविभागके हैं। तहां सचित्त कहिये जीवसहित कमलका पत्र पातलि आदिक तिनविषैं निक्षेप कहिये मुनिनिकूं देनेका आहारआदिका धरना। बहुरि

अपिधान कहिये तिस सचित्तहीतैं ढाकना। बहुरि अन्यदातारका देय कहिये आहार आदि देनेयोग्य वस्तु सो लेकरि अपना नाम करना तथा परकूं आप सोपि परका नाम करना आप नाम न करना, सो परव्यपदेश है। बहुरि दान देना तामें आदर नाहीं निरादरतैं देना तथा अन्य देनेवाला यथाविधि देय ताकूं गुणकूं सराहना नाहीं अदेखसाभाव करना, सो मात्सर्य है। बहुरि अकालविषैं भोजन देना कालकूं उलंघना, सो कालातिक्रम है। ऐसैं ए पांच अतीचार अतिथिसंविभागशीलके हैं। ऐसैं सात शीलके अतीचार कहे ॥

आगें सल्लेखनाके अतीचार कहै हैं—

॥ जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— जीवनेकी वांछा, मरनेकी वांछा, मित्रनतैं अनुराग, सुखका अनुबंध, निदान करना ए पांच अतीचार सल्लेखनाके हैं। तहां आशंसा नाम वांछाका है, सो जीवना मरण इनकी वांछा करनी, बहुरि पहले मित्रनिसहित धूली आदितैं क्रीडा करी थी ताका यादि करना वारवार स्मरण करना, सो मित्रानुराग है। बहुरि पूर्वे सुख भोगे थे तिनसूं प्रीतिविशेषके निमित्ततैं वारवार यादि करना तथा वर्तमानमें सुखही चाहना, सो सुखानुबंध है। बहुरि भोगकी वांछा करि नियम बांधना,

जो 'ऐसा भोग मिले' सो निदान है। ऐसैं ए पांच सल्लेखनाके अतीचार हैं। इहां ऐसा भावार्थ, जो, ए पांच कहे सो कोई जानैंगा पांच पांचही हैं, सो ऐसैं न समझना। जहां पांच कहे तहां बहुवचन है। सो इनमें इनके समान अनेक गर्भित हैं। तहां यथासंभव जानने। इनके जाननेकूं तथा व्रतनिकूं श्रीगुरुनिका सरणा निर्दोष करै है। इहां व्रतशीलनिके अतीचार कहनेमें ऐसाभी आशय सूचै है, जो, तीर्थंकरनामकर्मकी प्रकृतिके आश्रवके कारण कहे, तिनमें शीलव्रतेष्वनतीचार ऐसी भावना कही है। तातैं तिनके अतीचार जनाये हैं ॥

आगें पूछै है, जो, तुमने तीर्थंकरनामप्रकृतीके कारण आश्रवके निर्देशविषैं कह्या जो "शक्तितस्त्यागतपसी" ऐसैं तथा शीलविधानविषैं अतिथिसंविभाग कह्या है, तामें त्याग दानका लक्षण है, मनमें न जाण्या, सो अब कहो, ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— अपना परका उपकारके अर्थि अपना वित्तका सो दान है। तहां अपना परका जो उपकार सो अनुग्रह कहिये। तहां अपना उपकार तौ पुण्यका संचय होना है बहुरि परका उपकार सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी वृद्धि होना है। बहुरि स्व ऐसा धनका नाम है। सो ऐसैं

अनुग्रहके अर्थि स्वका अतिसर्ग कहिये त्याग करना, सो दान है ॥

आगें पूछै है, जो, ए दान है ताका फल एकही अविशिष्ट कहिये विशेषरहित है कि किछू विशेषफलस्वरूप है? ऐसें पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— विधिका विशेष, द्रव्यका विशेष, दातारका विशेष, पात्रका विशेष इनका विशेषतैं फलका विशेष है। तहां दान देनेकी विधि ताका तौ आदरतैं देना अनादरतैं देना ऐसा विशेष है। तहां मुनिकूं देनेमें तौ नवप्रकार भक्ति कही है। तहां प्रतिग्रह कहिये पडघावना, ऊंचा आसन देना, पादप्रक्षालन करना, पूजन करना, प्रणाम करना, मन वचन काय शुद्ध करनें, भोजन देनेकी शुद्धता करनी ऐसैं विधिका विशेष है। तपस्वाध्यायकी वृद्धिका करनेवाला आहार देना यह द्रव्यका विशेष है। वहुरि दातारका सात गुण कहे हैं। तहां परका तौ दानका नाम न करना यामें निरादर आवै है, वहुरि क्रोधकरि न देना क्षमातैं देना, वहुरि कपटतैं न देना, वहुरि अन्य देनेवालेतैं ईर्षा करि ताके अवगुण न काढने याकूं अनसूया कहिये, वहुरि देनेका तथा दीयेका पीछैं विषाद पिछताव न करना, वहुरि दीयेका वडा हर्ष मानना, वहुरि दीयेका गर्व न करना ऐसैं दातारके

गुणका विशेष है ॥ बहुरि मोक्षके कारण जे सम्यग्दर्शनादिक गुण जामें पाईये ऐसा पात्रका विशेष है । ऐसें विशेषतें तिस दानके फलविषैंभी विशेष है । जैसें, जैसी धरती होय तामें जैसा बीज तथा बोवनेवालेकी क्रियाका विशेष होय तैसाही धान्य आदि फल निपजैं, तैसें जानना ॥

इहां ऐसाभी भावार्थ जानना, जो, अन्यमती कोई अपना परका मांसादिक देनाभी दान कहै हैं, सो मांस आदि अपना परका उपकारका कारण नाहीं, तथा लेनेवाला योग्य पात्र नाहीं, तातैं ताके देनेका फल खोटाही है । बहुरि पात्र कुपात्र अपात्रके जघन्य मध्यम उत्कृष्टके भेदतें तथा तैसैंही विधि द्रव्य दाताके भेदतें फलकाभी अनेकप्रकारपणा है, सो अन्यग्रंथनितें जानना । सो यह स्याद्वादीनिका मतमें सिद्धि है, सर्वथाएकान्तवादीनिके नित्य निःक्रियादि पक्ष हैं, तथा क्षणिकपक्ष है, तिनकें परिणामपरिणामीके अभावतें किछु निर्बाधसिद्धि होती नाहीं । बहुरि भावनिकी विशुद्धता संक्लेशता फलमें प्रधान है केवल बाह्यके निमित्तकी प्रधानता नाहीं । जातें ऐसें कह्या है, जो, कोई वस्तु तौ विशुद्धतातें अपात्रनिकूं दीया हुवा भले फलकूं करे है । बहुरि कोई वस्तु पात्रनिकूंभी दीया हुवा संक्लेशपरिणामके वशतें भला फल नाहीं करे है । बहुरि कोई वस्तु पात्र तथा अपात्रनिकूं दीया हुवाभी तथा न दीया हुवाभी विशुद्धपरिणामके योगतें शुभही फल करे है । ऐसें

स्याद्वादमत वडा गहन है। सो श्रीगुरुही याका निर्वाह करैं हैं। हरैक जनका यामें कहनेका वल नाहीं चले है। जैसैं कूपका मींडक समुद्रका पार न पावै, तैसैं जनना ॥

ऐसैं सातवा अध्यायमें आश्रवपदार्थका भेद जो पुण्यका बंध करनेवाली अणुव्रत है, महाव्रत समितिक्रियारूप तथा तिनकी भावना, अतीचार टारना, दानका स्वरूप इत्यादिक कह्या, ताकूं सुनिकरि भव्यजीव मोक्षमार्गका कथंचित् सहकारी जानि सेवौ। तातैं अनुक्रमतैं शुद्धात्मस्वरूपका अनुभव करि मोक्ष पावो। ऐसा श्रीगुरुनिका उपदेश है ॥

॥ सवैया ॥

आश्रवपदार्थका भेद शुभव्रतिरूप पंच पापपरिहार समिति सुहावनी।
शीलके अनेक भेद यती घरवासी वेद अतीचार टारैं विधि धारैं महापावनी ॥
दान देय भाव ठानि पात्र मानि दुखी जानि पावैं फल तिस्यौं स्याद्वाद यों कहावनी।
सातमी सुसंधि कथा सुनूं मुनि कही यथा पुण्य लेस होय बंध काटि मोक्ष भावनी ॥ १ ॥

ऐसैं तत्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो यह मोक्षशास्त्र ताविषैं
सातवां अध्याय पूर्ण भया ॥

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

॥ आगैं आठवां अध्यायका प्रारंभ है ॥



दोहा— आठ करमके बंधकूं । काटि भये निकलंक ॥
नमूं सिद्ध परमातमा । मन वच काय निशंक ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलके अर्थि सिद्धनिकूं नमस्कार करि आठमां अध्यायकी वचनिका लिखिये है। तहां सर्वार्थसिद्धिटीकाकारके वचन हैं जो आश्रवपदार्थका तौ व्याख्यान कीया, ताकै अनंतर है नाम जाका ऐसा बंधपदार्थ है, सो अब व्याख्यान करनेयोग्य है, ताकूं व्याख्यान योग्य होतैं पहलै तौ बंधका कारणका स्थापन करिये है। जातैं बंध है सो कारणपूर्वक है, यातैं ताका सूत्र कहै हैं—

॥ मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥ १ ॥

याका अर्थ— मिथ्यादर्शन अविरति प्रमाद कषाय योग ए पांच बंधके कारण हैं। तहां

वचनयोग, पांच काययोग ऐसैं तेरह योगके भेद हैं। अर आहारक आहारकमिश्र काययोग ए प्रमत्तसंयमीकै होय हैं तातैं योग पंदरहभी हैं। बहुरि प्रमाद है सो अनेकविध है। तहां भावकायविनय ईर्यापथ भिक्षा प्रतिष्ठापन शयनासन वाक्य ए आठ तौ शुद्धि बहुरि दशलक्षणधर्म इनविषैं उत्साहरहित परिणाम होय तहां प्रमाद कहिये। ऐसैं ए पांच बंधके कारण समस्त कहिये सारे एकट्ठे तथा व्यस्त कहिये ते न्यारे न्यारे होय हैं। सोही कहिये है, मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवालेकै तौ पांचूही कारण बंधके हैं। बहुरि सासादन मिश्र असंयतसम्यग्दृष्टि इन तीनिकैं अविरत आदि च्यारि बंधके कारण हैं। बहुरि संयतासंयतकै अविरति है सो विरतिकरि मिश्रित है अर प्रमाद कषाय योग ऐसैं च्यारि हैं। बहुरि प्रमत्तसंयमीके प्रमाद कषाय योग ए तीनि हैं। अप्रमत्त आदि च्यारि गुणस्थानवालेनिके योग अर कषाय ए दोयही हैं। बहुरि उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवली इन तीनिके एक योगही है। बहुरि अयोगकेवली बंधरहित है ऐसैं जानना ॥

इहां विशेष लिखिये हैं। प्रथम तौ बंधके पहलैं ताके कारण कहे, तामैं तौ यह जनाया है, जो, विनाकारण बंध नाहीं होय है। तथा कूटस्थ सर्वथानित्यकैभी बंध नाहीं होय है। संतानकी अपेक्षा तो अनादिबंध है। अर पुरातन जड है नवीन बंध है ताकी अपेक्षा आदिसहित बंध

है। बहुरि मिथ्यात्व नैसर्गिक परोपदेशपूर्वक दोयप्रकार कह्या, सो तौ नैसर्गिक तौ एकेन्द्रियआदि सर्वही संसारी जीवनिकै अनादितैं प्रवर्तै है, याकूं अगृहीतभी कहिये। अर जो परके उपदेशतैं प्रवर्तै सो परोपदेशपूर्वक है, ताकूं गृहीतभी कहिये। ताके क्रियावादादिक च्यारि भेद तीनिसै तरेसठि भेद कहे। ते कैसें हैं सो कहिये है। तहां प्रथमही क्रियावादके एकसौ असी भेद हैं।
ल ईश्वर आत्मा नियति स्वभाव ऐसैं। बहुरि आपतैं परतैं नित्यपणाकरि
च्यारि एक एकपरि लगाय अर जीव अजीव आश्रव संवर निर्जरा बंध
प ऐसैं नवपदार्थ तिनपरि न्यारे न्यारे लगाईये सो ऐसैं इनकूं परस्पर गुणतैं पांचकूं
चकरि गुणे एकसौ असी भये, याका उदाहरण जीवपदार्थ आपही-
, जीवपदार्थ परहीतैं कालकरि अस्तित्व कीजिये है, जीवपदार्थ
त्व कीजिये है, जीवपदार्थ कालकरि अनित्यत्वकरि अस्तित्व कीजिये।
ावना, तब कालकरि नवपदार्थनिपरि छतीस भंग भये। ऐसैंही
इन च्यारिनिकरि छतीस छतीस होय, तब सारे एकसौ असी

अब इनका आशय लिखिये हैं। कालवादी तौ कहै है, जो, यह काल है सोही सर्वकूं उपजावै है, कालही सर्वका नाश करै है, कालही सर्वकूं सुवाणै है, निद्रा दे है, तथा जगावै है, यह काल काहूकरि जीत्या न जाय, सर्वके ऊपरि खडा है, ऐसैं तौ कालवादी कहै हैं। बहुरि ईश्वरवादी कहै है, जो, यह जीव अज्ञानी है, बहुरि अनीश्वर है, असमर्थ है, याके सुख दुःख स्वर्ग नरकका गमन आदि सर्व कार्य ईश्वर करै है, ऐसा ईश्वरवादीका आशय है॥ बहुरि आत्मवादी कहे है, जो, पुरुष एकही है, महात्मा है, देव है, सर्वव्यापी है, सर्व अंग जाके गूढ हैं, चेतनासहित है, निर्गुण है, परम उत्कृष्ट है। भावार्थ, यह सर्व सृष्टिकी रचना है, सो पुरुषमयी है, दूसरा कोई नाहीं ऐसा आत्मवादका अर्थ है॥ बहुरि नियतवादी कहै है, जो, जिसकाल जाकरि जैसें जाके नियमकरि होय है, सो तिसकाल तिसकरि तिसप्रकार ताकैही होय है, ऐसा नियम है ऐसा नियतवादका अर्थ है॥ बहुरि स्वभाववादी कहै है, देखो, कंटकके तीखापणा कौंन करै है? अरु पशु पंखी आदि जीवनिके अनेकप्रकारपणा कौंन करै है? तातैं जानिये है कि स्वभावही ऐसैं करै है, ऐसैं स्वभाववादका अर्थ है॥ ऐसैं क्रियावादके भेद कहे॥

अब अक्रियावादके मूलभेद दोय नास्तिक स्वतः परतः ऐसैं। दोऊकूं पुण्यपापविना सात-

पदार्थनिपरि लगाईये, तब चौदह भये। बहुरि काल ईश्वर नियति आत्मा स्वभाव इन पांचनिपरि लगाईये तब सत्तरि भंग होय हैं। बहुरि काल अरु नियतिकरि सात पदार्थ फेरि नास्तित्वपरि लगावणा ऐसैं चौदह होय हैं। सब मिलि चौरासी अक्रियावादके भंग होय हैं। याका उदाहरण, जीवपदार्थ कालकरि आपहीतैं नास्तिकस्वरूप कीजिये है। जीव नाम पदार्थ कालकरि परतैं

अजीव आदिपरि लगावणा तब चौदह होय। बहुरि ईश्वरआदि

य। सब मिलि सत्तरि हैं। बहुरि ऐसैंही चौदहका उदाहरण

रि नास्तित्वपणा लगाया जो जीवकालतैं नास्तित्व कीजिये है।

सैं सातपदार्थके चौदह होय। इहां विशेष यह भया,

॥। ऐसैं अक्रियावादके चौरासी भंग जानने ॥

कहे हैं। तहां नवपदार्थनिपरि अस्तिनास्ति आदि वचनके

होय। याका उदाहरण, जीवपदार्थ अस्तिस्वरूप है, यह

। जीव नास्तिस्वरूप है, यह कौंन जाने है? कोऊही जानें नाहीं।

पदार्थपरि लगाय लेणे। बहुरि नवपदार्थका भेद नाहीं करै, अर एक

शुद्धपदार्थ थापि अर अस्ति नास्ति अस्तिनास्ति अवक्तव्य ए च्यारि भंग लगावणे, तब च्यारि होय। यामें ऐसा कहना, जो, पदार्थ है कि नाहीं है, कि दोऊरूप है, कि अवक्तव्य है। ऐसें कौन जानें है? कोऊही जानें नाहीं। इहां भावार्थ ऐसा, जो, सर्वज्ञ कोऊ नाही सर्वज्ञविना कोन जाने? ऐसें अज्ञानकी पक्ष भई, तातैं सब मिलि अज्ञानवादके सतसठि भंग भये ॥

अब वैनयिकवादके बत्तीस भंग कहे हैं। विनय मन वचन काय ज्ञान इन च्यारिनिकरि होय है, सो देव राजा ज्ञाति यति वृद्ध बाल माता पिता इन आठनिका होय। तब एकएकप्रति च्यारि दिये तब बत्तीस भंग भये। इनका अर्थ देवमात्रका विनय कीये सर्वसिद्धि है इत्यादि सुगम है, सो जानना। ऐसें ए तीनिसै तरेसठि वाद स्वच्छंद प्रवर्तनेवाले निकले हैं। पाखंडी मिथ्यादृष्टीनिके व्याकुल करनहारे हैं। अज्ञानी लोकनिके चित्तकूं हरे हैं, रंजायमान करे हैं। ज्ञानी यथार्थ जाने है, ऐसें अन्यभी वाद हैं। तहां पौरुषवादी कहे है, जो, आलस्यवान् उत्साहरहित होय सो किछुभी फल न पावै। जैसें बालक मातास्तनकूं खेचिकरि दूध पीवै तौ मिलै नातर न मिलै, तातैं पौरुषहीतैं कार्यसिद्धि है, विनापौरुष किछुभी नाहीं। बहुरि देववादी कहै हैं, हम तो केवल देवकूंही उत्तम माने हैं, पौरुष अनर्थक है, ताकूं धिकार है। प्रत्यक्ष देखो,

पदार्थनिपरि लगाईये, तब चौदह भये। बहुरि काल ईश्वर नियति आत्मा स्वभाव इन पांचनिपरि लगाईये तब सत्तरि भंग होय हैं। बहुरि काल अरु नियतिकरि सात पदार्थ फेरि नास्तित्वपरि लगावणा ऐसें चौदह होय हैं। सब मिलि चौरासी अक्रियावादके भंग होय हैं। याका उदाहरण, जीवपदार्थ कालकरि आपहीतैं नास्तिकस्वरूप कीजिये है। जीव नाम पदार्थ कालकरि परतैं नास्तिकस्वरूप कीजिये है। ऐसैंही अजीव आदिपरि लगावणा तब चौदह होय। बहुरि ईश्वरआदि च्यारिपरि लगायें चौदह चौदह होय। सब मिलि सत्तरि हैं। बहुरि ऐसैंही चौदहका उदाहरण काल अरु नियति इन दोयहीपरि नास्तित्वपणा लगाया जो जीवकालतैं नास्तित्व कीजिये है। जीव नियतितैं है नास्तित्व कीजिये है, ऐसैं सातपदार्थके चौदह होय। इहां विशेष यह भया, जो, स्वतः परतः न कह्या नास्तित्वही कह्या। ऐसैं अक्रियावादके चौरासी भंग जानने ॥

अब अज्ञानवादके सतसठि भंग कहे हैं। तहां नवपदार्थनिपरि अस्तिनास्ति आदि वचनके सात भंग हैं ते लगावणे, तब तरेसठि होय। याका उदाहरण, जीवपदार्थ अस्तिस्वरूप है, यह कौंन जानैं है? कोऊही न जानैं। जीव नास्तिस्वरूप है, यह कौंन जाने है? कोऊही जानैं नाहीं। ऐसैं सातौंही भंग नवपदार्थपरि लगाय लेणे। बहुरि नवपदार्थका भेद नाहीं करै, अर एक

शुद्धपदार्थ थापि अर अस्ति नास्ति अस्तिनास्ति अवक्तव्य ए च्यारि भंग लगावणे, तब च्यारि होय। यामें ऐसा कहना, जो, पदार्थ है कि नाहीं है, कि दोऊरूप है, कि अवक्तव्य है। ऐसैं कौन जानें है? कोऊही जानें नाहीं। इहां भावार्थ ऐसा, जो, सर्वज्ञ कोऊ नाही सर्वज्ञविना कोन जाने? ऐसैं अज्ञानकी पक्ष भई, तातैं सब मिलि अज्ञानवादके सतसठि भंग भये ॥

अब वैनयिकवादके बत्तीस भंग कहे हैं। विनय मन वचन काय ज्ञान इन च्यारिनिकरि होय है, सो देव राजा ज्ञाति यति वृद्ध बाल माता पिता इन आठनिका होय। तब एकएकप्रति च्यारि दिये तब बत्तीस भंग भये। इनका अर्थ देवमात्रका विनय कीये सर्वसिद्धि है इत्यादि सुगम है, सो जानना। ऐसैं ए तीनिसै तरेसठि वाद स्वच्छंद प्रवर्तनेवाले निकले हैं। पाखंडी मिथ्यादृष्टीनिके व्याकुल करनहारे हैं। अज्ञानी लोकनिके चित्तकूं हरे हैं, रंजायमान करे हैं। ज्ञानी यथार्थ जाने है, ऐसैं अन्यभी वाद हैं। तहां पौरुषवादी कहै है, जो, आलस्यवान् उत्साह-रहित होय सो किछुभी फल न पावै। जैसैं बालक मातास्तनकूं खैचिकरि दूध पीवै तो मिले नातर न मिले, तातैं पौरुषहीतैं कार्यसिद्धि है, विनापौरुष किछुभी नाहीं। बहुरि दैववादी कहै हैं, हम तौ केवल दैवकूंही उत्तम माने हैं, पौरुष अनर्थक है, ताकूं धिक्कार है। प्रत्यक्ष देखो,

कर्णराजा एता वडा पुरुष था, सोभी युद्धमें हण्या गया, ऐसैं दैववाद है ॥

बहुरि संयोगवादी कहै हैं, जो, वस्तुनिका संयोग मिलेही कार्यसिद्धि है। देखौ, एक पह्यासूं रथ चलता नाहीं, तहां अंधा पंगुला जुदेजुदे तौ वनमें भटकै अर दोऊका संयोग भया तब नगरमें आय गये, ऐसैं संयोगवाद है। बहुरि लोकरूढिवादी कहै हैं, जो, लोकविषै रूढिही एकवार चालि गई पीछैं ताकूं देवभी मिलिकरि निवारण कीया चाहैं तौ निवारी न जाय। देखो, द्रौपदीनें अर्जुनके गलेमें वरमाला डारी थी, तब लोक परस्पर कहने लगे, जो, माला पांडवनिके गलेमें डारी, सो कहनावति अबताई चली जाय है। कोऊ मेटि सकै नाहीं। ऐसैं सर्वथाएकांतपक्षके संक्षेप कहे। बहुत कहांताईं कहिये? जेते वचनके मार्ग हैं तेतेही नयनिके वाद हैं बहुरि जेते नयनिके वाद हैं, तेते अन्यमत हैं, ते सर्व मिथ्या हैं। जातैं सर्वथाएकान्तपक्षकरि कहे हुए हैं, तातैं सर्व परमत हैं। बहुरि तेही नयके वचन सर्वही सम्यक् हैं, सत्य हैं, जैनमतके हैं, जातैं कथंचित्प्रकारकरि कहे हुए होय हैं ॥

बहुरि स्वामिसमंतभद्राचार्य आप्तकी परीक्षाके अर्थि देवागमस्तोत्र रच्या है, तामैं सत्यार्थ आप्तका तौ स्थापन असत्यार्थका निराकरणके निमित्त दस पक्ष स्थापी हैं। तहां १ अस्ति नास्ति,

२ एक अनेक, ३ नित्य अनित्य, ४ भेद अभेद, ५ अपेक्ष अनपेक्ष, ६ दैव पौरुष, ७ अंतरंग वहिरंग, ८ हेतु अहेतु, ९ अज्ञानतें वंध स्तोकज्ञानतें मोक्ष, १० परके दुःख करै अर आपकैं सुख करै तौ पाप अर परकें सुख करै आपकें दुःख करै पुण्य। ऐसैं दस पक्षविषैं सप्तभंग लगाये सत्तरि भंग भये। तिनका सर्वथाएकांतविषैं दूषण दिखाये हैं। जानैं ए कहे सो तौ आप्ताभास है अर अनेकांत साधे हैं ते दूषणरहित हैं, ते सर्वज्ञवीतरागके भाषे हैं। तातैं अनेकान्तका कहनेवाला सत्यार्थ आप्त है, ऐसैं सम्यक् अर मिथ्याका निर्णय कीया है। सो देवागमस्तोत्रकी टीका अष्टसहस्रीतैं जानना॥

बहुरि तीनिसै तरेसठि कुवादके अचार्य इस कालमें भये हैं, तिनके केतेकनिके नाम राजवार्तिक तथा गोमटसारतें जानने। तिनमें केई अज्ञानवादी चरचा करै हैं, जो, वेदमें क्रिया आचरण यज्ञादि कह्या है, तिस विधानसूं क्रिया करनेवाले अज्ञानी कैसें? ताकूं कहिये, जो, प्राणीनिके वध करनेमें धर्मसाधनका तिनका अभिप्राय हैं, तातैं ते अज्ञानी हैं। इहां वह कहै, जो, अपौरुषेय वेद है तामें कर्ताका दोष नाहीं आवै, तातैं प्रमाण है, तातें तिस आगमप्रमाणतैं प्राणीनिका वध करना धर्म है। ताकूं कहिये, जो, जामें प्राणीनिका वध करना धर्म कह्या, सो आगमही नाहीं, सर्वप्राणीनिका हित कहै सो आगम है। वेदमें कहूं तौ हिंसाका निषेध

कीया है, कहूं हिंसा करना धर्म कह्या है, तातैं विरुद्धवचन प्रमाणभूत नाहीं। बहुरि अरहंतभाषित आगममें हिंसाका निषेधही है, तातैं प्राणीनिका वध धर्मका कारण नाहीं। फेरि वह कहै, जो, अरहंतका आगम कैसैं प्रमाण करौ हौ? ताकूं कहिये, जो, अरहंत सर्वज्ञ वीतराग है, ताके वचन सत्यार्थ हैं, अतिशयरूप ज्ञानकी खानि हैं, यामें अनेक चमत्काररूप स्वरूप लिखे हैं, तातैं प्रमाण हैं॥

फेरि कहै हैं, जो, अन्यके आगममेंभी चमत्काररूप है लिखे हैं। ताकूं कहिये, जो, चमत्कारस्वरूप लिख्या होगा, सो अरहंतके आगममेंसूंही लेकरि लिख्या होगा। फेरि कहै, जो, यह तौ तुमारी श्रद्धामात्रतैं कहौ हौ। ताकूं कहिये, जो, यह न्याय है, जहां बहुतवस्तुनिका बहुतप्रकारकरि वर्णन होय ऐसा पूर्ण वर्णन अन्य जायगा नाहीं होय तब जाणिये, जो, जहां पूर्णरूप लिख्या होय सो तौ आदि है मूल है अर जहां थोरा लिख्या होय तहां जानिये पूर्णमेंसूं लेकरि अपना नाम चलाया है। फेरि कहै, जो, अन्यके आगममें अरहंतके आगमतैं लेकरि लिखी है तौ तेभी प्रमाणभूत क्यों न मानिये? ताकूं कहिये, जो, लिखे हैं ते साररहित हैं। जातैं आगममें सर्वही वस्तुनिका स्वरूप लिख्या था तिनमेंसूं पांच वस्तु साररहित लेकरि लिख्या तो ते निरर्थक हैं॥

बहुरि प्राणिवधकूं धर्म लिख्या ताकूं धर्म मानिये तौ जे जीवहिंसक हैं तिनकै सर्वके धर्मसाधन ठहरे है। फेरि कहै, जो, यज्ञसिवाय अन्य जायगा प्राणिवध करै तौ आपहीके अर्थि है। ताकूं कहिये, प्राणिनिका वध तौ दोयजायगा बरोबरि है, दोऊही जायगा प्राणिनिकूं दुःख होय है, यामें विशेष कहा? फेरि कहै, मंत्रविधानतैं पशुहोम कीये पाप नाहीं होय है। ताकूं कहिये, जो, मंत्रकी सामर्थ्य तौ तब जानिये जो केवल मंत्रहीतैं पशूकूं बुलायकरि होमें। होममें तौ जेवडा बांधिकरि पटकिये है ऐसैं मारणेमें मंत्रकी सामर्थ्य कहा रही? तातैं यह तौ प्रत्यक्षतैं विरुद्ध है, जो, मंत्रसामर्थ्यतैं होमें पाप न होय। बहुरि जैसैं शस्त्रादिकरि पशूनिकूं मारै पाप होय है, तैसैं मंत्रतैंभी मारै पापही होयगा हिंसाका दोष तौ न मिटैगा। जातैं पशुकूं बांधि होममें पटकतैं अशुभपरिणामही होय है। अशुभपरिणामहीतैं पाप है॥

बहुरि वाकूं पूछिये, जो, मंत्रपूर्वक होम करै है, सो इस क्रियाका करनेवाला कर्ता कौन है? जो, पुरुषकूं बतावै तौ पुरुष नित्य कहेगा तौ ताके करनेके परिणाम काहेतैं होते? परिणाम तौ अनित्यकै होय हैं। बहुरि अनित्य कहैगा तौ स्मरणआदिका अभावतैं क्रिया तथा क्रियाका करनेवाला फल लेनेवाला न ठहरेगा। बहुरि पुरुषकूं एकही मानैंगा तौ कर्ता कर्म आदिका भेद

किछुभी न संभवैगा। प्रत्यक्ष विरोध आवैगा। इत्यादि विचार कीये जिननें हिंसाकरि धर्म ठहराया है तिनके वचनसौं रागी द्वेषी विषयी प्राणीनिके कहे भासै हैं, तातैं प्रमाणभूत नाहीं। ऐसैं मिथ्यादर्शनके अनेक भेद हैं। तिनकूं नीकै समझि मिथ्यात्वकी निवृत्ति होय ऐसा उपाय करना। यथार्थ जिनागमकूं जानि अन्यमतका प्रसंग छोडना अरु अनादितें पर्यायबुद्धि जो नैसर्गिकमिथ्यात्व ताकूं छोडि अपना स्वरूपकूं यथार्थ जानि बंधसूं निवृत्ति होना, तिसहीका अभ्यास जैसैं बणै तैसैं करणा यह श्रीगुरुनिका प्रधान उपदेश है॥

आगें, बंधके कारण तौ कहे अब बंध कहनेयोग्य है सो कहै हैं—

॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥ २ ॥

याका अर्थ— यह जीव है सो कषायसहितपणातैं कर्मके योग्य जे पुद्गल तिनकूं ग्रहण करै है, सो बंध है। तहां कषायकरि सहित वर्तै ताकूं सकषाय कहिये, ताका भाव सो सकषायत्व कहिये। ऐसा कषायपणाकूं पंचमीविभक्तीकरि हेतुकारण कह्या सो यह हेतु कहनेका कहा प्रयोजन सो कहै हैं। जैसैं उदरविषैं अग्निका आशय है ताके अनुसार आहारकूं ग्रहण करै है तैसैं तीव्र मंद मध्यम जैसा कषायका आशय होय ताके अनुसार स्थिति अनुभागरूप होय कर्म ग्रहण होय बंधै है,

ऐसैं जणावनेकूं कह्या है। इहां प्रश्न, जो, आत्मा तौ अमूर्तिक है, याकै हस्त नाही, सो कर्मका ग्रहण कैसैं करै है? ऐसैं पूछैं सूत्रमें जीव ऐसा शब्द कह्या है, जो प्राणनिके धारणतैं जीवै, सो जीव कहिये। सो आयु नाम प्राणका संबंध है तैतैं जीव है। जो आयुकर्मका संबंध न होय तौ जीवै नाहीं, ऐसा इस जीवनेकूंही हस्तसहितकी उपमा है। ऐसा जीव कर्मकूं ग्रहण करै है। वहुरि कर्मयोग्यान् ऐसा कहनेमें लघुनिर्देश होता अक्षर घाटि आवता, सो यहां कर्मणो योग्यान् ऐसा क्यों कह्या? ताका प्रयोजन कहै हैं, जो, इहां न्यारा विभक्तिका उच्चार कीया है, सो अन्यवाक्य जनावनेके अर्थि है। सो न्यारा वाक्य कहा? सो कहै हैं, कर्मतैं जीव कषायसहित होय है, ऐसैं एक वाक्य तौ यह भया। इहां कर्मशब्दके पंचमीविभक्तिकरि हेतुअर्थ कीया, जातैं कर्मरहित जीवकै कषायका लेशभी नाहीं है। ऐसा कहनेतैं यहू प्रयोजन आया, जो, जीवकर्मका अनादिसंबंध है। तिसकरि ऐसा तर्कका निराकरण भया, जो, अमूर्तिक जीव मूर्तिक कर्मतैं कैसैं बंधै? जो ऐसैं न होय बंध नवीनही मानिये, तौ पहलैं जीव सर्वथा शुद्ध ठहरै तौ सिद्धनिकीज्यों बंधका अभाव ठहरै है॥

वहुरि दूसरा वाक्य ऐसा, जो, जीव कर्मके योग्य पुद्गलनिकूं ग्रहण करै है। तहां अर्थके

वशतैं विभक्ति पलटि लीजिये, इस न्यायतैं कर्मशब्दके षष्ठीविभक्तीकरि संबंधका अर्थ कीया है। बहुरि पुद्गल कहनेतैं यह जानिये, जो, कर्म है सो पुद्गलपरमाणुका स्कंध है। सो पुद्गलस्वरूपही है। यामें पुद्गलकै अरु कर्मकै तादात्म्य जनाया है। जातैं केई वैशेषिकमती आदि कहै हैं, जो, कर्म आत्माहीका अदृष्ट नामा एक गुण है, ताका निराकरण भया। जातैं जो केवल आत्माहीका गुण होय तौ संसारका कारण होय नाहीं। बहुरि आदितैं ऐसी क्रिया कही सो हेतुकैं अर हेतुमानके भावके प्रगट करनेकूं कही है। हेतु तौ मिथ्यादर्शन आदि पहलें कहे ते अर हेतुमान् पुद्गलकर्मका बंध है। ताका कर्त्ता जीव है। यातैं ऐसा अर्थ सिद्ध होय है, जो, मिथ्यादर्शन आदिका आवेशतैं आला सचिक्कण भया जो आत्मा ताकै सर्वतरफकरि योगनिके विशेषतैं सूक्ष्म अर एकक्षेत्र अवगाहकरि तिष्ठते जे अनंतानंत पुद्गलके परमाणु तिनका विभागरहित मिलि जाना सो बंध है, ऐसा कहिये है ॥

जैसैं भाजनके विशेष जे हांडी आदिक तिनविषैं क्षेपे जे अनेक रस बीज फूल फल तिनका मदिरारूप परिणाम होय है, तैसैं आत्माविषैं सामिल तिष्ठते जे पुद्गल ते योगनिकरि खैंचि हूये योग कषायके वशतैं कर्मभावरूप परिणामकूं प्राप्त होय हैं, ऐसा जानना। बहुरि सूत्रमें स ऐसा

वचन अन्यकी निवृत्तिके अर्थि है, यहही एक वंध है, अन्य नाहीं है। ऐसैं कहनेकरि गुणकै अरु गुणीकैंभी वंध है सो वंध इहां न जानना। वहुरि वंधशब्द है सो कर्मसाधन है, तथा करणसाधन कर्तृसाधन भावसाधनभी जानना। तहां पहले वंधकी अपेक्षातैं आत्मा वंधकरि नवा वंध करै है। तातैं वंधकूं कारणभी कहिये, वहुरि जो आत्मा बांध्या सो वंध ऐसा कर्मभी कहिये, वहुरि आत्मा वंधरूप आपही परिणमे है तातैं कर्ताभी वंधकूं कहिये, वहुरि वंधनरूप क्रिया सोही भाव ऐसैं क्रियारूपभी वंधकूं कहिये। ऐसैं प्रत्ययका अर्थविवक्षातैं सिद्धि होय है। वहुरि ऐसा जानना, जो, आत्माकै कार्मणशरीररूप कोठा है। तामें कर्मरूप नाज भरया रहै है। सो पुराना तौ भोगमें आता जाय है अर नवा धरता जाय है। याका संतान टूटे, तव मोक्ष होय है॥

आगें पूछे है, जो, यह वंध कहा एकरूपही है कि याकैं कोई प्रकार है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥

याका अर्थ— प्रकृति स्थिति अनुभव प्रदेश ए च्यारि तिस वंधकी विधि है। तहां प्रकृति तौ स्वभावकूं कहिये। जैसैं नीमवृक्षकी प्रकृति कडुपणा है, गुडकी प्रकृति मीठापणा है, तैसैं ज्ञानावरणकर्मकी प्रकृति पदार्थकूं न जानना है। दर्शनावरणकी प्रकृति पदार्थका न देखना है।

वेदनीयकी प्रकृति सुखदुःखका संवेदन है। दर्शनमोहकी प्रकृति तत्वार्थका अश्रद्धान है। चारित्र-मोहकी प्रकृति असंयमभाव है। आयुकी प्रकृति भवका धारणा है। नामकी प्रकृति नारकआदि नामका कारण है। गोत्रकी प्रकृति ऊंचा नीचा स्थानका नाम पावना है। अंतरायकी प्रकृति दान आदिका विघ्न करणा है। सो ऐसा है लक्षण जाका ऐसा कार्यकूं प्रकर्षकरि करै। जातैं ऐसा कार्य प्रगट होय सो प्रकृति है॥

बहुरि तिस प्रकृतिस्वभावतैं छूटै नाहीं तेतैं स्थिति कहिये। जैसैं छेली गऊ भैंसि आदिके दूधका मीठापणा स्वभावतैं जेते न छूटना सो स्थिति है। तैसैंही ज्ञानावरण आदिका जो अर्थका न जानना आदि स्वभावतैं न छूटना सो स्थिति है। बहुरि तिन कर्मनिका रसका तीव्र मंद विशेष सो अनुभव है। जैसैं छेली गऊ भैंसि आदिका दूधका तीव्र मंद आदि भावकरि रस-स्वादका विशेष है तैसैंही कर्मपुद्गलनिका अपनेविषैं प्राप्त भया जो सामर्थ्यका विशेष, सो अनुभव है॥

बहुरि परमाणुनिका गणनिरूप अवधारणा जो एते है सो प्रदेश है, जो पुद्गलपरमाणुके स्कंध कर्मभावकूं परिणये तिनका गणनारूप परिमाण यामें करिये है। बहुरि विधिशब्द है सो प्रकारवाची है। ते ए प्रकृति आदि तिस बंधके प्रकार हैं। तहां योगतैं तौ प्रकृति प्रदेश बंध होय

हैं। कषायनिमित्ततैं स्थिति अनुभव बंध होय हैं। तिन योगकषायनिके हीनाधिक होनेतैं तिस बंधकाभी विचित्रपणा होय है। इहां उक्तं च गाथा है, ताका अर्थ— आत्मा जोगतैं प्रकृति प्रदेश बंध करै है, अरु स्थिति अनुभाग कषायतैं करै है। बहुरि योग कषायरूप न परिणमे तथा तेऊ छिन्न होय जाय नष्ट होय जाय तब बंध स्थितिके कारण आत्माके नाहीं हैं॥

आगैं आदिका जो प्रकृतिबंध ताका भेद दिखावनेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आद्यो ज्ञानदर्शनावणवेदनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय मोहनीय आयु नाम गोत्र अंतराय ए आठ कर्मकी मूलप्रकृति हैं। तहां आद्य कहिये प्रकृतिबंध सो ज्ञानावरण आदि आठ भेदरूप जानना। तहां जो आवरण करै तथा जाकरि आवरण होय सो आवरण कहिये। सो न्यारान्यारा जोडिये ज्ञानावरण दर्शनावरण ऐसैं। बहुरि जो वेदना करावै अथवा जाकरि वेदना होय, सो वेदनीय है। बहुरि जो मूढ करै भुलावै अथवा जाकरि मूढ हूजे भूलिजे सो मोहनीय है। बहुरि जाकरि नारक-आदि भव प्राप्त करिये अथवा जो भवनैं प्राप्त करै, सो आयु है। बहुरि जो आत्माका नाम करै तथा जाकरि नाम कीजिये, सो नाम है। बहुरि जाकरि ऊंचा नीचा कहिये, सो गोत्र है। बहुरि

॥ पञ्चनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपञ्चभेदा यथाक्रमम् ॥ ५ ॥

याका अर्थ— मूलप्रकृति आठ कहीं, तिनके भेद पांच नव दोय अठाईस च्यारि बयालीस दोय पांच ए यथाक्रमतैं जानने। इहां तर्क, जो, सूत्रमें द्वितीयका ग्रहण करना था, जातैं उत्तर प्रकृतिबंध दूसरा है। आचार्य कहै हैं, जो, पारिशेष्यन्यायतैं दूसराका ग्रहण सिद्ध होय है। दोय भेदमें एकका नाम कहे, तब दूसरा विना नाम कहेही जानिये ऐसैं। तातैं सूत्रमें द्वितीयका ग्रहण न करना। आदिका मूलप्रकृतिबंध आठभेदरूप कह्या, तातैं अवशेष बाकी उत्तरप्रकृतिबंधकीही विधि है ऐसैं जानि लेना। बहुरि सूत्रमें भेदशब्द है सो पांच आदिकी संख्यातैं जोडना। तहां पांचभेद ज्ञानावरणके, नव भेद दर्शनावरणके, दोय भेद वेदनीयके, अठाई भेद मोहनीयके, च्यारि भेद आयुके, बयालीस भेद नामके, दोय भेद गोत्रके, पांच भेद अंतरायके ऐसैं जानना ॥

आगें पूछे है, जो, ज्ञानावरणके पांच भेद कहे, ते कौंन हैं सो कहो, ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानाम् ॥ ६ ॥

याका अर्थ— मति श्रुति अवधि मनःपर्यय केवल ए पांच ज्ञान हैं, तिनका आवरण करै सो पांच भेद ज्ञानावरणके हैं। तहां मत्यादिज्ञान तौ पूर्वैं कहे ते लेणे, तिनका आवरणतैं आवर-

णका भेद होय है, ऐसैं ज्ञानावरणकर्मकी पांच उत्तरप्रकृति जाननी। इहां तर्क करै हैं, जो, अभव्यजीवके मनःपर्ययज्ञान केवलज्ञानकी शक्ति है कि नाहीं है? जो शक्ति है तौ ताकै अभव्यपणाका अभाव है। बहुरि जो शक्ति नाहीं है तौ तिसके दोऊ ज्ञानका आवरणरूप प्रकृति कहना व्यर्थ है। ताका समाधान, जो, इहां आदेशके वचन कहनेतैं यह दोष नाहीं है। तहां द्रव्यार्थिकनयके आदेशतैं तौ अभव्यकै मनःपर्यय केवलज्ञानकी शक्तिका संभव है। बहुरि पर्यायार्थिकनयके आदेशकरि तिस शक्तिका अभाव कहिये। बहुरि पूछै है, जो ऐसैं कहै तौ भव्यका अभव्यका भेद कहना न बणैगा जातैं दोऊकै तिनकी शक्तिका सद्भाव कह्या। तहां कहिये, जो शक्तिके सद्भावकी अपेक्षा तौ भव्य अभव्यका भेद नाहीं है व्यक्ति होनेके सद्भाव असद्भावकी अपेक्षा भेद है। जाकै सम्यग्दर्शन आदिकी व्यक्ति होयगी सो भव्य कहिये अर जाकै तिनकी व्यक्ति न होयगी सो अभव्य कहिये। जैसैं सुवर्णपाषाणमें अंधपाषाण कहिये है, जामैं सुवर्ण नीसरैगा सो तौ खरी सुवर्णपाषाण कहिये। जामैं नाही नीसरैगा सो अंधपाषाण कहिये ऐसैं जानना ॥

इहां कोई कहै है, जो, मत्यादिज्ञानके आवरण कह्या सो ए ज्ञान सद्रूप है कि असद्रूप है? जो सद्रूप है तौ जो विद्यमान है ताकै आवरण काहेका? अर जो असद्रूप है तौ विद्यमानही नाहीं,

ताके आवरण कौनके कहिये? ऐसें दोऊही पक्षमें आवरण बनें नाहीं। ताका समाधान, जो, इहांभी आदेशवचन जानना। द्रव्यार्थिकनयके आदेशतैं तौ सत्के आवरण कहिये। जैसें सद्रूप आकाशके मेघपटलका आवरण देखिये है, तैसें जानना। बहुरि पर्यायार्थिकनयके आदेशकरि असत्के आवरण कहिये। जातैं उत्पत्तिका रोकनेवाला होय ताकूंभी आवरणशब्दकरि कहिये है। जो एकान्तकरि सत्के तथा असत्के आवरण कहिये तौ ज्ञानके क्षायोपशमिकपणां बणै नाहीं। बहुरि ज्ञान किछु न्यारे पदार्थ है नाहीं। आत्माके गुणपर्यायस्वरूप है। सो जब आवरण होय तब तिस पर्यायकी व्यक्ति न होय सकै है। बहुरि जब आवरणका अभाव होय तब ज्ञानकी व्यक्ति प्रगट होय है। जैसें प्रत्याख्यानसंयमभाव न्यारा पदार्थ नाहीं आत्माविषैंही शक्तिरूप है। जेतैं प्रत्याख्यानावरणकर्मका सद्भाव होय तेतैं तौ प्रत्याख्यान प्रगट न होय अर जब याका आवरणका अभाव होय तब आत्माकें प्रत्याख्यानपर्यायकी व्यक्ति होय है; तैसें इहांभी जानना। ऐसें यह ज्ञानावरणकर्म है। याके उदयतैं आत्माकें जाननेकी सामर्थ्य हीन होय तब स्मरण नाहीं होय, धर्मश्रवण नाहीं होय, अज्ञानके वशतैं अनेक दुःखनिकूं भोगवै है ॥

आगें पूछे है कि, ज्ञानावरणकी उत्तरप्रकृतिका भेद तौ कह्या, अब दर्शनावरणकर्मकी

प्रकृतिका उत्तरभेद कहनेयोग्य है ऐसैं पूछैं सूत्र कहैं हैं—

॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्धयश्च ॥ ७ ॥

याका अर्थ— चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल ए च्यारि तौ दर्शन; तिनका आवरणरूप च्यारि, प्रकृति बहुरि निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगद्धि ए पाच निद्रा ऐसैं दर्शनावरणकर्मकी नव उत्तरप्रकृति हैं। तहां चक्षु अचक्षु अवधि केवल इनका आवरणकी अपेक्षाकरि भेद कहना, चक्षुर्दर्शनावरण अचक्षुर्दर्शनावरण अवधिदर्शनावरण केवलदर्शनावरण ऐसैं। बहुरि मद खेद ग्लानि इनके दूरि करनेकै अर्थि सोवना निद्रा है। बहुरि तिस निद्राका उपरिउपरि फेरिफेरि आवना सो निद्रानिद्रा है। बहुरि जो आत्माकूं सूतैंही क्रियारूप चलायमान करै शोक खेद आदि-करि उपजै बैठेकैंभी नेत्र शरीर विक्रिया होय, सो प्रचला है। बहुरि सोही फेरिफेरि प्रवर्तै सो प्रचलाप्रचला है। बहुरि जाकरि सोवतैंभी पराक्रम सामर्थ्य बहुत प्रगट होय सूताही उठि किछू कार्य करै फेरि सोवै यह न जानैं 'मैं किछु किया था' सो स्त्यानगृद्धि है। इहां स्त्यायति धातुका अनेक अर्थ हैं, तिनमैंसूं सोवनेका अर्थ ग्रहण कीया है। बहुरि गृद्धिधातुकाभी दीप्ति अर्थ ग्रहण है, तातैं सोवतेभी जो आत्मा पराक्रमरूप दिपै ऐसा अर्थ भया। जाके उदयतैं आत्मा बहुत रौद्रकर्म करै सो

स्त्यानगृद्धि है। इन निद्रादिकरि दर्शनावरणकर्म समानाधिकरणकरि संबंध करना, इनका आधार दर्शनावरणही है। तातें निद्रा दर्शनावरण, निद्रानिद्रादर्शनावरण इत्यादि कहना ॥

पूछे, जो, निद्रा तो पापप्रकृति है अर सोवनेतें प्राणीनिकें सुख दीखे है, सो कैसें है?

, जो, निद्रा आवे है सो तो पापहीका उदय है। जातें दर्शन ज्ञान वीर्य आत्माका

। घात होय है। बहुरि सोवनेतें खेद ग्लानि मिटेभी है, सो याके लगता सातावेदनीयका

। उदय मंद पडे है ताकूं यह निद्रा सहकारी मात्र होय है। तातें यह

मार्थतें किछु सुख है नाहीं। बहुरि दर्शनावरणके उदयमें चक्षु अचक्षु

दि इन्द्रियनिकरि अवलोकन नाहीं होय है। एकेन्द्रिय विकलत्रय होय

। बहुरि जाके नेत्र होय तौ विगडि जाय बहुरि अवधिकेवलदर्शना

दर्शन प्रगट न होय। बहुरि निद्राके उदयतें अंधकार अवस्था है। निद्रा

महा अंधारा है। प्रचलाके उदयतें बैठाही घूमे, नेत्र चले, गात्र चले, देखताही

प्रचलाके उदयतें. अत्यंत घूमे, ऊंघे, कोई शरीरमें शलाका आदि चुभावै तौऊ

। स्त्यानगृद्धिका स्वरूप पहला कह्याही था ॥

आगें, तीसरी प्रकृति जो वेदनीय ताकी उत्तरप्रकृतिके भेद कहनेकूं सूत्र कहे हैं —

॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥

याका अर्थ— वेदनीयकी साता असाता ए दोय प्रकृति हैं। तहां जाके उदयतैं देवादिगतिनिविषैं शरीरसंबंधी तथा मनसंबंधी सुखकी प्राप्ति होय सो सातावेदनीय है। सत् कहिये प्रशस्त सराहनेयोग्य जहां वेदनेयोग्य होय सो सद्वेद्य कहिये। बहुरि जाका फल नारक आदि गतिविषैं अनेकप्रकार दुःख होय, सो असातावेदनीय है। असत् कहिये अप्रशस्त वेदनेयोग्य होय सो असद्वेद्य है ॥

आगें चौथा मोहनीयकर्मकी उत्तरप्रकृतिके भेदके कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुंनपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय अकषायवेदनीय कषायवेदनीय ए च्यारि तिनकी संख्या तीनि दोय नव सोलह इनका यथासंख्य संबंध करि लेणा। तहां दर्शनमोहनीयके

स्त्यानगृद्धि है। इन निद्रादिकरि दर्शनावरणकर्म समानाधिकरणकरि संबंध करना, इनका आधार दर्शनावरणही है। तातैं निद्रा दर्शनावरण, निद्रानिद्रादर्शनावरण इत्यादि कहना ॥

इहां कोई पूछे, जो, निद्रा तौ पापप्रकृति है अर सोवनेतैं प्राणीनिकैं सुख दीखे है, सो कैसैं है? ताका समाधान, जो, निद्रा आवै है सो तौ पापहीका उदय है। जातैं दर्शन ज्ञान वीर्य आत्माका स्वभाव है ताका घात होय है। बहुरि सोवनेतैं खेद ग्लानि मिटैभी है, सो याके लगता सातावेदनीयका उदय है। तथा असाताका उदय मंद पडै है ताकूं यह निद्रा सहकारी मात्र होय है। तातैं यह प्राणी सुखभी मानै है। परमार्थतैं किछु सुख है नाहीं। बहुरि दर्शनावरणके उदयमें चक्षु अचक्षुके उदयतैं तौ चक्षु आदि इन्द्रियनिकरि अवलोकन नाहीं होय है। एकेन्द्रिय विकलत्रय होय तब तौ इन्द्रियही घाटि होय। बहुरि जाकै नेत्र होय तौ बिगडि जाय बहुरि अवधिकेवलदर्शनावरणके उदयतैं ते दोऊ दर्शन प्रगट न होय। बहुरि निद्राके उदयतैं अंधकार अवस्था है। निद्रानिद्राके उदयतैं महा अंधारा है। प्रचलाके उदयतैं बैठाही घूमै, नेत्र चलै, गात्र चलै, देखताही न देखै। प्रचलाप्रचलाके उदयतैं अत्यंत घूमै, ऊंघै, कोई शरीरमें शलाका आदि चुभावै तौऊ चेत न होय। स्त्यानगृद्धिका स्वरूप पहला कह्याही था ॥

आगें, तीसरी प्रकृति जो वेदनीय ताकी उत्तरप्रकृतिके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं —

॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥

याका अर्थ— वेदनीयकी साता असाता ए दोय प्रकृति हैं। तहां जाके उदयतैं देवादिगतिनिविषैं शरीरसंबंधी तथा मनसंबंधी सुखकी प्राप्ति होय सो सातावेदनीय है। सत् कहिये प्रशस्त सराहनेयोग्य जहां वेदनेयोग्य होय सो सद्वेद्य कहिये। बहुरि जाका फल नारक आदि गतिविषैं अनेकप्रकार दुःख होय, सो असातावेदनीय है। असत् कहिये अप्रशस्त वेदनेयोग्य होय सो असद्वेद्य है॥

आगें चौथा मोहनीयकर्मकी उत्तरप्रकृतिके भेदके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुंनपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय अकषायवेदनीय कषायवेदनीय ए च्यारि तिनकी संख्या तीनि दोय नव सोलह इनका यथासंख्य संबंध करि लेणा । तहां दर्शनमोहनीयके

तीनि भेद, सम्यक्त्व मिथ्यात्व मिश्र ऐसैं। सो बंधअपेक्षा तौ एक मिथ्यात्वही है। अर सत्ताकी अपेक्षा तीनिप्रकार होय तिष्ठे है। तहां जाके उदयतैं सर्वज्ञका भाष्या जो स्वर्गमोक्षका मार्ग, तातैं पराङ्मुख होय तत्वार्थका श्रद्धानविषें उत्साहरहित होय हितअहितका भेद जाननेकूं असमर्थ होय ऐसा मिथ्यादृष्टि होय ताका ऐसा भाव सो मिथ्यात्व कहिये। बहुरि तिसही मिथ्यात्वका भेदकूं सम्यक्त्व संज्ञा है। जातें जो शुभपरिणामकरि विशुद्धताके बलतैं जाका विपाकरस हीन होय गया होय उदासीनकीज्यों अवस्थित हुवा संता आत्माके श्रद्धानकूं रोकि सकै नाहीं, तिसके उदयकूं वेदता संता पुरुष सम्यग्दृष्टिही कहिये, सो सम्यक्त्व नाम है ॥

बहुरि सोही मिथ्यात्व अपना रस आधाक शुद्ध भया आधाक मिथ्यात्व रह्या ऐसा होय ऐसैं अमलके कोऊ होय है तिनकूं जलतैं पखालतैं पखालतैं तिनकी मदशक्ति क्यों मिटी क्यों रही होय है तैसैं होय, सो मिश्र कहिये, याकूं सम्यङ्मिथ्यात्वभी कहिये। याके उदयतैं आत्माका श्रद्धान नामा परिणाम मिथ्यात्व सम्यक्त्व दोऊ मिल्या हुवा मिश्ररूप होय है। जैसैं मदके कोंद्रू धोयेतैं आधे शुद्ध भये तिनकूं कोई भात पचाय खाय ताके निमित्ततैं किछू अमल किछू चेतन ऐसा मिश्रपरिणाम होय है तैसैं जानना ॥

बहुरि चारित्रमोहनीयके दोय भेद अकषायवेदनीय कषायवेदनीय । तहां ईषत् किंचित् कषायकूं अकषाय कहिये, इहां अकार निषेधवाचक न लेणा ईषत् अर्थ लेणा । सो याके नव भेद हैं, हास्यादिके भेदतैं । तहां जाके उदयतैं हास्य प्रगट होय, सो हास्य कहिये । बहुरि जाके उदयतैं किछु वस्तुसूं आसक्त होना सो रति है । बहुरि रतितैं विपरीत किछु न सुहावै सो अरति है । बहुरि जाके उदयतैं इष्टका वियोगकरि परिणाम खेदरूप होय सोच करै रुदनादिक करै, सो शोक है । बहुरि जाके उदयतैं दुःखकारी पदार्थ देखि उद्वेग करना डरपना भागना सो भय है । बहुरि जाके उदयतैं अपना दोष तौ संकोचना परका दोष देखि परिणाम मलिन करना सो जुगुप्सा है । बहुरि जाके उदयतैं स्त्रीसंबंधी भाव पावै सो स्त्रीवेद है । जाके उदयतैं पुरुषसंबंधी भावनिकूं पावै, सो पुरुषवेद है । जाके उदयतैं नपुंसकसंबंधी भावनिकूं पावै, सो नपुंसकवेद है । बहुरि कषायवेदनीय सोलहप्रकार है । तहां अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि, प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि, संज्वलन क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि ऐसैं सोलह भई ॥

तहां अनंत नाम मिथ्यात्वका है, जातैं यह मिथ्यात्व अनंतसंसारका कारण है, तिस

मिथ्यात्वकी अनुसारणी याकै लारलगी यातैं अनुराग करावनहारी होय, सो अनंतानुबंधी है। याके उदयतैं सर्वथा एकांतरूप झूठा तत्वविषैं तौ राग प्रीति होय है। अनेकान्तरूप सांच तत्वार्थतैं द्वेष होय है। झूठाकूं साचा थापि ताकी पक्ष करै है, ताके विषैं सत्यार्थका अभिमान करै है, जो हमारा मानना सत्यार्थ है इत्यादि चेष्टा होय है। बहुरि जाके उदयतैं एकदेशत्यागरूप श्रावकके व्रत किंचिन्मात्रभी करि सकै है सो देश ईषत्प्रत्याख्यानकूं आवरण करै, सो अप्रत्याख्यानावरण है। बहुरि जाके उदयतैं सकल संयमकूं न पाय सकै, सो सकलप्रत्याख्यानकूं न आचरै, तातैं प्रत्याख्यानावरण है। बहुरि संयमकी लार एक होय तिष्ठै दैदीप्यमान रहै तथा तिसके होतें संयमभी दैदीप्यमान रह्या करै सो संज्वलन है॥

इहां वेदनीयके भावनिका विशेष ऐसा, जो, स्त्रीसूं रमनेआदि विकारभाव होय सो तौ पुरुषवेदके भाव हैं। बहुरि नपुंसकवेदविषैं स्त्रीपुरुष दोऊसूं रमनेरूप आदि विकारभाव होय हैं। बहुरि स्त्रीवेदके भावका विशेष सो लज्जाकरि नम्रीभूतपणा होय, अर जाके मनकी ग्लानि प्रगट न दीखै, कामका अभिप्राय रहै, नेत्रानिका विभ्रम होय, आलिंगनितैं सुख मानै, पुरुषसूं रमनेकी वांछा रहै इत्यादिक जानना। सो भावनिका विशेष ऐसा कदाचित् पुरुषकैभी होय तब स्त्रीवेदका

उदय कहिये । तथा नपुंसककैभी कदाचित् ऐसे भाव होय तब स्त्रीवेदहीका उदय कहिये । बहुरि स्त्रीकेभी कदाचित पुरुषनपुंसकके भावरूप वेदका उदय होय है अर शरीरके आकाररूप द्रव्य स्त्री पुरुष नपुंसक होय हैं । ते आकार नामकर्मके उदयतैं होय हैं ॥

बहुरि क्रोधादिपरिणामका विशेष, तहां अपना परका जातैं घात होय बहुरि उपकार जानैं नाहीं अहितही करनेवाला क्रूरपरिणाम होय ताकूं अमर्ष कहिये, सोही क्रोध है । इहां भावार्थ ऐसाभी, जो, परद्रव्य परणमें तामें ऐसे भाव होय, जो 'यह ऐसैं क्यों परिणामें' ऐसैं खुनसि होय सो क्रोध है । ताका तीव्र मंद अपेक्षा च्यारि अवस्था हैं । ताके च्यारि दृष्टांत— तीव्रतर तौ पाषाणकी रेखासारिखा होय, घणे कालमें मिटै । तीव्र पृथ्वीकी रेखासारिखी होय, सो थोरेही कालमें मिटि जाय । मंद धूलिरेखासारखी होय, सो अल्पकालहीमें मिटि जाय । मंदतर जलकी रेखासारखी होय, सो तत्कालही मिटि जाय । ऐसैं वासनातैं क्रोधका विशेष है ॥

बहुरि जातिआदि आठ मदके कारण हैं, तिनके अवलंबनतैं परतैं नमनेरूप परिणाम न होय सो मान है । याकेभी तीव्र मंद अपेक्षा च्यारि दृष्टान्त हैं । तीव्रतर तौ पाषाणके स्तंभसारिखा होय, जो खंड तौ होय परंतु नमना कठिन । बहुरि तीव्र अस्थिसारिखा होय, सो कोई कारणविशेषतैं

केतेक काल पीछें नमि जाय। बहुरि मंद काष्ठसारिखा होय, जो नमनेका कारण मिलै थोरेही कालमें नमि जाय। बहुरि मंदतर वेलिके तंतुसारिखे होय, तत्काल नमि जाय। ऐसैं मानका विशेष है ॥

बहुरि मायाका विशेष, जो परकूं ठगनेके अर्थि परतैं छिपाय मन वचन कायका कुटिलपणाका विचार, सो माया है। याकेभी तीव्रमंदके च्यारि दृष्टान्त हैं। तहां तीव्रतर बांसके विडाके जडसारिखी जाका परकूं ज्ञान होय सकै नाहीं अर पेला ठिगाय जाय सो बहुत कालताईं प्रवर्तैं कहि न मिटैं। बहुरि तीव्र मींढेके सींगसारिखी, जाकी वक्रता थोडी, थोडे कालमें मिटि जाय। बहुरि मंद गोमूत्रक-सारिखी, जाके दोय च्यारि मोडेरूप वक्रता, सो अल्पकालमें मिटि जाय। बहुरि मंदतर खुरपा तथा लिखनेकी कलमसारिखी, जाकी एकमोडारूप वक्रता, तरत मिटि जाय। ऐसैं मायाका विशेष है॥

बहुरि लोभका विशेष, तहां अपने उपकारका कारण जो द्रव्य आदिक वस्तु ताकी वांछा अभिप्रायमें रहै सो लोभ है, याकेभी तीव्र मंदके च्यारि दृष्टांत हैं। तहां तीव्रतर किरिमिची रंग सारिखा बहुतकालमेंभी जाका मिटना कठिन। बहुरि तीव्र काजलके रंगसारिखा, जो थोडेही कालमें मिटि जाय। बहुरि मंद कर्दम लग्या हूवा सारिखा, सो अल्पकालमें जाका रंग उतरि जाय। बहुरि मंदतर हलदके रंगसारिखा, तुरत उडि जाय। ऐसा लोभका विशेष है। ऐसैं दर्शनमोहकी तीनि

प्रकृति, च्यारि मोहनीयकी, पचीस कषायरूपप्रकृति ए अठाईस कहीं ॥

आगें आयुकर्मके उत्तरप्रकृतिके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि ॥ १० ॥

याका अर्थ— नारक तैर्यग्योन मानुष देव ए च्यारि प्रकृति आयुकर्मकी हैं। तहां नरकआदिविषैं भवके संबंधकरि आयुका नाम कीया है। जो नरकविषैं उपजनेकूं कारण कर्म, सो नारकआयु है। जो तिर्यंचयोनिविषैं उपजनेकूं कारण कर्म, सो तैर्यग्योन है। जो मनुष्यविषैं उपजनेकूं कारण कर्म, सो मानुष है। जो देवनिविषैं उपजनेकूं कारण कर्म, सो देव है। इहां भावार्थ ऐसा, जो, जिस पर्यायमें यह जीव उपजै, तिसविषैं जीवना मरना इस आयुके आधीन है। तिस पर्यायसंबंधी दुःख तथा सुख आयुपर्यंत भोगवै है ॥

आगें याके अनंतर कह्या जो नामकर्म ताकी उत्तरप्रकृतिके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणबन्धनसंघातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रससुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्तिसेतराणि तीर्थंकरत्वं च ॥ ११ ॥

याका अर्थ— ए गतिआदि वियालीस भेद नामप्रकृतिके हैं। जहां जाके उदयतैं आत्मा अन्यपर्यायकूं गमन करै, सो गति है। सो च्यारिप्रकार है। नरकगति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति ऐसें। वहुरि जिनविषैं अव्याभिचारी समानभावकरि एकतारूप भया जो अर्थका स्वरूप सो जाति है। सो पांचप्रकार है एकेन्द्रियजातिनाम, द्वीन्द्रियजातिनाम, त्रीन्द्रियजातिनाम, चतुरिन्द्रियजातिनाम, पंचेन्द्रियजातिनाम। वहुरि जाके उदयतैं आत्माके शरीर निपजै, सो शरीरनाम है। सो पांचप्रकार है औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण। वहुरि जाके उदयतैं अंग उपांग निपजै, सो अंगोपांगनाम है। सो तीनिप्रकार है औदारिक वैक्रियक आहारक ऐसें। वहुरि जाके उदयतैं नेत्रादिककी यथास्थान तथा यथाप्रमाण निष्पत्ति होय, सो निर्माणनाम है। ताके दोय भेद हैं स्थाननिर्माण प्रमाणनिर्माण। वहुरि शरीरनामकर्मके उदयके वशतैं पाये जे पुद्गलके स्कंध तिनका परस्पर प्रदेशनिका अनुप्रवेश होय वंधान होय, सो बंधननाम है। जो शरीरके नामतैंही जिनके नाम ऐसै पांचप्रकार हैं॥

वहुरि जाके उदयतैं औदारिकआदि शरीरनिके परमाणुनिके स्कंध परस्पर अनुप्रवेशतैं एकरूप होंय छिद्ररहित होय मिलै, सो संघातनाम है। सोभी शरीरनामधारक पांचप्रकार है।

बहुरि जाके उदयतैं औदारिकआदि शरीरनिके आकार निपजै, ते संस्थाननाम हैं। सो छहप्रकार है समचतुरस्रसंस्थान, न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान, स्वातिकसंस्थान, कुब्जकसंस्थान, वामनसंस्थान, हुंडकसंस्थान। तहां जो ऊपर नीचैं समान बराबरि विभागरूप शरीरके अवयवनिका स्थापन होय "जैसैं प्रवीण कारीगरका बनाया सर्व अवयव यथास्थान सुंदर होय तैसैं" समचतुरस्रसंस्थान है। बहुरि जो शरीरके अवयव उपरिले तौ बडे होंय नीचे छोटे होय वडवृक्षकीज्यों सो न्यग्रोधपरिमंडल है। बहुरि याके उलटा उपरितें छोटे होय नीचे चौडे होय सो स्वातिक है, जैसैं वंबी होय तैसा आकार होय। बहुरि जामें पीठि बड़ा होय सो कुब्जक है। बहुरि जामें सर्वही अंग छोटे होय सो वामन है। बहुरि जामें सर्वही अंग उपांग रुंड मुंड बुरे होय सो हुंडक है॥

बहुरि जाके उदयतैं आस्थि कहिये हाड तिनकी बंधनका विशेष होय सो संहनननाम है। सो छहप्रकारका है। तहां जामें हाड अरु संधिके बडे कीला वज्रमयी होंय अर वज्रमयी नसानिके वलयबंधनकरि बंधे होंय, सो वज्रवृषभनाराचसंहनन है। बहुरि जामें वज्रमयी हाड संधिके तथा बडे कीला होय सो वज्रमयी वलयबंधनकरि रहित होय सो वज्रनाराचसंहनन है। बहुरि जामें हाड तथा संधिनके कीला तौ होय परंतु वज्रमयी न होय अर वज्रमयी वलयबंधनभी न होय, सो

नाराचसंहनन है। बहुरि जामें हाडनकी संधिके कीला एकतरफ तौ होय दूसरीतरफ न होय, सो अर्धनाराचसंहनन है। बहुरि हाडनिकी संधि छोटी कीलनिकरि सहित होय, सो कीलकसंहनन है। बहुरि जामें हाडनिकी संधिमें अंतर होय चौगिरद बडी नस छोटी नस लिपटी होय मांसकरि भऱ्या होय, सो असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन है। ऐसैं छह भये ॥

बहुरि जाके उदयतैं स्पर्श निपजै, सो स्पर्शनाम है। सो आठप्रकार है, कर्कश मृदु गुरु लघु स्निग्ध रूक्ष शीत उष्ण ऐसैं। बहुरि जाके उदयतैं रस निपजै, सो रसनाम है। सो पांच प्रकार है, तिक्त कटुक कषाय आम्ल मधुर ऐसैं। बहुरि जाके उदयतैं गंध उपजै, सो गंधनाम है। सो दोयप्रकार है, सुरभि असुरभि। बहुरि जाके उदयतैं वर्ण निपजै, सो वर्णनाम है। ताके पांच भेद हैं, कृष्ण नील रक्त पीत शुक्ल ऐसैं। बहुरि जाके उदयतैं पहला शरीरका आकार बण्या रहै नवा शरीरकी वर्गणा ग्रहण न करै, जेतैं आनुपूर्व्यनाम है। याका उदय उत्कृष्ट तीनि समय विग्रहगतिमें रहै है। सो च्यारिप्रकार है, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य ॥

बहुरि जाके उदयतैं लोहके पिंडकीज्यों भाऱ्या होयकरि तलै गिरि पडै तथा आकके

फूफदाकेज्यों हलका होयकरि ऊपरकूं उडि जाय नाहीं, सो अगुरुलघुनाम है। यह कर्मकी प्रकृति है सो शरीरसंबंधी जाननी। जो अगुरुलघुनामा स्वाभाविक द्रव्यका गुण है, सो याकूं न जानना। वहुरि जाके उदयतैं अपना घात आपकरि होय, सो उपघातनाम है। वहुरि जाके उदयतैं अपना घात परकरि होय, सो परघातनाम है। वहुरि जाके उदयतैं आतपमय शरीर पावै, सो आतपनाम है। यह सूर्यके विमानविपैं पृथ्वीकायिक जीवनिकै वर्तै है। वहुरि जाके उदयतैं शरीर उद्योतरूप पावै सो उद्योतनाम है। सो यह चंद्रमाके विमानके पृथ्वीकायिकजीवनिकै तथा आग्या आदि जीवनिकैं उदय होय है। वहुरि जाके उदयतैं उच्छ्वास आवै, सो उच्छ्वासनाम है॥

वहुरि जाके उदयतैं आकाशविपैं गमनका विशेप होय, सो विहायोगतिनाम है। इहां विहाय ऐसा नाम आकाशका है, यह दोयप्रकार है, प्रशस्त अप्रशस्त, याकूं शुभचालि अशुभचालि कहिये। सो जीवकै कर्मके उदयतैं एक आत्माकरि भोगिये ऐसी बुरी भली चाल जाननी। जो क्रियावान् द्रव्यके स्वभावहीकरि गमन होय सो नाहीं लेना। वहुरि जाके उदयतैं एक आत्मा-करिही भोगिये ऐसा शरीर पावै, सो प्रत्येकनाम है। वहुरि जाके उदयतैं वहुतजीवनिका भोगनेका एकही शरीर होय, सो साधारण नाम है। वहुरि जाके उदयतैं द्वींद्रियादिविपैं जन्म होय, सो

त्रसनाम है। बहुरि जाके उद[illegible]तैं एकेन्द्रियविषैं उपजै, सो स्थावरनाम है। बहुरि जाके उदयतैं अन्यकूं प्यारी लागै, सो सुभगना[illegible]म है। बहुरि जाके उदयतैं रूप आदि सुंदरगुण होय, तौ अन्यकूं प्रीति न उपजै, सो दुर्भगनाम है[illegible]। बहुरि जाके उदयतैं स्वर मनोज्ञ होय, सो सुस्वरनाम है। [illegible]तैं विपरीति बुरा स्वर होय सो दु[illegible]स्वरनाम है ॥

[illegible] शरीर र[illegible] [illegible]णीक सुन्दर होय, सो शुभनाम है। यातैं विपरीति असुंदर [illegible] बहुरि जाके [illegible] [illegible]उदयतैं सूक्ष्मशरीर निपजै, सो सूक्ष्मनाम है। बहुरि जाके [illegible]ऐसा श[illegible] [illegible]रीर उपजै, सो बादरनाम है। बहुरि जाके उदयतैं आहार [illegible] [illegible]म है। सो पर्याप्ति छह प्रकार है आहार, शरीर, इंद्रिय, [illegible] जाके उदयतैं छह पर्याप्ति पूर्ण न करै ऐसा अपर्याप्तिनाम [illegible]पांग दृढ होय, सो स्थिरनाम है। यातैं विपरीति अस्थिरनाम [illegible] शरीर होय पैला सहारी न सकै, सो आदेयनाम है। प्रभारहित [illegible] नादेयनाम। बहुरि जाके उदयतैं पवित्रगुण लोकमें प्रगट होय, सो यशःकी- [illegible] बहुरि जाके उदयतै गुणभी प्रगट न होय सकै अवगुण प्रगट होय सो अयशः

कीर्तिनाम है। बहुरि जाके उदयतैं अचिंत्य विभूतिविशेषसहित अरहंतपणा पावै, सो तीर्थंकरनाम है॥

इहां कोई कहै, गणधर चक्रवर्तीआदिभी बडी विभूति पावैं हैं, तिनकी प्रकृति क्यों न कही? ताकूं कहिये, जो, उच्चगोत्रादिकके उदयतैं होय है। तातैं न्यारे न कहे अर तीर्थंकर होय हैं ते मोक्षमार्ग प्रवर्तावै है, यह फल चक्रवर्त्यादिककै नाहीं है। तहां चौदह तौ पिंडरूप प्रकृति हैं तिनके पैसठि भेद हैं। गति ४। जाति ५। शरीर ५। अंगोपांग ३। निर्माण २। बंधन ५। संघात ५। संस्थान ६। संहनन ६। स्पर्श ८। रस ५। गंध २। वर्ण ५। आनुपूर्व्य ४। विहायोगति २ ऐसैं ६५। बहुरि प्रत्येकशरीर आदि १० प्रतिपक्षीसहित कही ते बीस अर आठ अगुरुलघु आदिक ऐसै अठाईस अपिंडरूप हैं। ऐसैं सब मिलि तेरणवै प्रकृति जाननी। सूत्रमें इकतीसकें तौ न्यारी विभक्ति करी ते प्रतिपक्षी जाननी। दशके सेतर पद दे न्यारी विभक्ति करी, ते सप्रतिपक्षी जाननी। तीर्थंकरकैं न्यारी विभक्ति करी सो याकैं प्रधानपणा जनावनेके अर्थि है॥

आगें, नामकर्मकी प्रकृतिनिके भेद तौ कहे अब याके अनंतर कह्या जो गोत्रकर्म ताकी प्रकृतिका भेद कहिये हैं—

॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥ १२ ॥

याका अर्थ— उच्चगोत्र नीचगोत्र ए दोय गोत्रकर्मकी प्रकृति हैं। तहां गोत्र दोयप्रकार हैं उच्चगोत्र नीचगोत्र। तहां जाके उदयतैं लोकपूजितकुलविषैं जन्म होय, सो उच्चगोत्र है। बहुरि तिसतैं विपरीति निंद्यकुलमें जन्मका कारण होय, सो नीचगोत्र हैं॥

आगें आठमां अंतरायकर्मकी उत्तरप्रकृति कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥

याका अर्थ— दान लाभ भोग उपभोग वीर्य इन पांचनिका विघ्न करनेवाली अंतरायकी पांच प्रकृति हैं। तहां अंतराय करनेकी अपेक्षा भेद कहे हैं। दानका अंतराय लाभका अंतराय इत्यादि। जाके उदयतैं देनेकी इच्छा करै तौऊ दीया न जाय, सो दानान्तराय है। लेनेकी इच्छा होय सोऊ पावै नाहीं, सो लाभांतराय है। भोगनेकी इच्छा होय भोगने पावै नाहीं, सो भोगांतराय है। उपभोग करनेकी इच्छा होय उपभोग पावै नाहीं, सो उपभोगान्तराय है। कोई कार्यका उत्साह करै उत्साहकी सामर्थ्य न होय सो वीर्यांतराय है। ऐसे ये अन्तराय कर्मकी पांच प्रकृति जानना। ऐसैं प्रकृतिबंधके भेद तौ कहे। अब स्थितिबंधके भेद कहने हैं, सो स्थिति दोयप्रकार है, उत्कृष्ट जघन्य। तहां जिन प्रकृतिनिकी उत्कृष्टस्थिति समान है, ताका निर्देशके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आदितस्तिसणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥ १४ ॥

याका अर्थ— आदितैं कहे जे ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय ए तीनि बहुरि अंतराय इन च्यारि कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोडाकोडी सागरकी बंधै है। इहां आदितः ऐसा शब्द तौ मध्यके तथा अंतके न लेने इसवास्तैं कह्या है। अर अंतरायका ग्रहण न्यारा हैही। बहुरि सागरोपमका पहली स्वरूप कह्याही था। बहुरि कोडिकोडिकूं कोटीकोटी कहिये। बहुरि परा कहनेतैं उत्कृष्ट जानना। एहां ऐसा अर्थ भया, जो, ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इन च्यारिनिकी उत्कृष्टस्थिति तीस कोडाकोडी सागरकी है। सो यह मिथ्यादृष्टि संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवकै बंध होय है, अन्य जीवनिकै आगमतैं जानना। तहां एकेन्द्रिय पर्याप्तकें एकसागरके सात भाग कीजे तामें तीनि भाग, बहुरि द्वीन्द्रियपर्याप्तके पचीस सागरके सात भाग कीजे तामें तीनि भाग, त्रीन्द्रियपर्याप्तके पचास सागरके सात भाग कीजे तामें तीनि भाग, चतुरिन्द्रियके सौ सागरके सात भाग कीजै तामें तीनि भाग, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके एक हजार सागरके सात भाग कीजे तामें तीनि भाग, बहुरि अपर्याप्तकै संज्ञी पंचेन्द्रियकै तौ अंतःकोडाकोडी सागरकी जानना अर एकेन्द्रियादिककै पूर्वोक्त भाग पल्यकें असंख्यातवां भाग करि हीन जानने। बंधके प्रथम समयतैं

...रहै सो स्थितिबंध जानना ॥

...कर्मकी उत्कृष्टस्थितिके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥

अर्थ— मोहनीयकर्मकी स्थिति उत्कृष्ट सत्तरि कोडाकोडी सागरकी है। इहां कोडाकोडी सागर ... लेणी। यहभी स्थिति मिथ्यादृष्टि संज्ञी पर्याप्तकै बंधै है।

नाम गोत्रकी उत्कृष्टस्थिति जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥ १६ ॥

... उत्कृष्ट स्थिति वीस कोडाकोडी सागरकी है। ... है। यहभी उत्कृष्टस्थिति संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्तकै

... सूत्र कहै हैं—

॥ सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥

...की स्थिति उत्कृष्ट तेतीस सागरकी है। इहां उत्कृष्टकीही अनुवृत्ति है।

इहांभी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तकैही बंधै है, अन्यकै आगमतैं जाननी ॥

आगैं, उत्कृष्टस्थिति तौ कही, अब जघन्यस्थिति कहनी है, तहां पांचकर्मकी तौ जघन्य-स्थिति समान है, सो न्यारी कहसी, अर तीनि कर्मकी स्थितिमें विशेष है, सो पहली कहैं हैं। तहां दोय सूत्र हैं—

॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥

याका अर्थ— वेदनीयकर्मकी जघन्यस्थिति बारह मुहूर्तकी है। इहां अपरा ऐसा जघन्यका नाम लेणा ॥

॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥

याका अर्थ— नामकर्म गोत्रकर्म इन दोऊनिकी जघन्यस्थिति आठ मुहूर्तकी है। इहां अपरास्थिति अन्तर्मुहूर्त इन शब्दनिकी अनुवृत्ति है। आगैं, पांच कर्म न्यारे राखे थे, तिनकी जघन्यस्थिति कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥ २० ॥

याका अर्थ— शेष कहिये बाकीके पांच कर्म ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय मोहनीय

आयु इनकी जघन्यस्थिति अंतर्मुहूर्तकी है। तहां ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय इन तीनिकी तौ जघन्यस्थिति सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानवालेकैं बंधै है। बहुरि मोहनीयकर्मकी जघन्यस्थिति अनुवृत्ति बादरसांपराय कहिये नवमां गुणस्थानवालेकैं बंधै है। बहुरि आयुकर्मकी जघन्य संख्यातवर्षका नका आयु ऐसैं कर्मभूमि मनुष्य तिर्यंचनिकैं बंधै है ॥

आगें पूछै है, जो, दोऊ प्रकारकी स्थिति ज्ञानावरणआदि कर्मनिकी कही, अब इनका कहा लक्षण है सो कहो। ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ विपाकोऽनुभवः ॥ २१ ॥

अर्थ— कर्मप्रकृति पचकर उदय आवै ताका रस अनुभवमें आवै सो अनुभव इहां विपाकके दोय अर्थ हैं, एक तौ विशिष्ट पाक होय सो विपाक कहिये, दूजा नाना होय सो विपाक कहिये। तहां पूर्वैं कहे जे तीव्र मंद कषायरूप भावाश्रवके विशेष तिनतैं मनिके पाक रसमें विशेष होय, सो तौ विशिष्ट पाक है। बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भव भावके निमित्तके भेदतैं भया जो नानाप्रकारपणा जामें ऐसा जो कर्मका पचना, सो विपाक है। तहां इनमें शुभपरिणामनिके प्रकर्षतैं तौ शुभप्रकृतिका उत्कृष्ट अनुभव बंधै है। अर अशुभप्रकृतिनिका

हीन अनुभव बंधै है। बहुरि अशुभपरिणामनिके प्रकर्ष होनेतैं अशुभप्रकृतिनिका उत्कृष्ट अनुभव बंधै है। अर शुभप्रकृतिका हीन अनुभव बंधै है। सो ऐसैं कारणके वशतैं प्राप्त भया जो अनुभव सो दोयप्रकार प्रवर्तें है, स्वमुख करि बहुरि परमुखकरि। तहां मूलप्रकृतिके जे आठ कर्म तिनका तौ अनुभव स्वमुखहीकरि प्रवर्तें है। अपना अपना बंधके अनुसार उदय आवै है। अन्यकर्मका अन्यकर्मरूप होय उदय आवै नाहीं। बहुरि उत्तरप्रकृतिनिका जे तुल्यजातिकर्म होय तिनका परमुखकरिभी अनुभव होय है। तिनमें आयुकर्मके भेदनिकै तौ परमुखकरि उदय नाहीं, जो आयु बंधै ताहीका उदय होय। बहुरि दर्शनमोह अर चारित्रमोहके परस्पर उलटना नाही है। जो बांधै सोही उदय आवै। सोही कहिये है। नरकआयु तौ तिर्यंच आयु होय उदय आवै नाहीं। मनुष्यआयु नरक तिर्यंचरूप होय उदय आवै नाहीं ऐसैं। बहुरि दर्शनमोह तौ चारित्रमोहरूप होय उदय आवै नाहीं अर चारित्रमोह दर्शनमोहरूप होय उदय आवै नाहीं। आगें शिष्य कहै है, जो, पूर्वे संचय कीया जो नानाप्रकार कर्म, ताका विपाक सो अनुभव है, सो यह तौ हमनें अंगीकार कीया मान्या, परंतु यह न जानें है– यह अनुभव प्रसंख्यात कहिये जो प्रकृतिगणनामें आई तिसस्वरूपही है कि अप्रसंख्यात कहिये किछु औरभांति है? ऐसैं पूछें तैं आचार्य कहै हैं,

प्रसंख्यातही हैं, जो, प्रकृतिगणनामें आई तिसरूपही उदय आये भोगिये है। जातैं ऐसा है ऐसैं सूत्र कहै हैं—

॥ स यथानाम ॥ २२ ॥

याका अर्थ— जो प्रकृतिनाम है तैसाही ताका अनुभव है। तहां ज्ञानावरणका फल ज्ञानका अभाव है, शक्तिकी व्यक्ति न होना है। दर्शनावरणका फल दर्शनशक्तिकी व्यक्ति न होना है। ऐसैंही जैसा जाका नाम है तैसाही अर्थरूप अनुभव सर्वकर्मप्रकृतिनिका भेदनिसहित प्रतीतिमें ल्यावना ॥

आगें शिष्य कहै है, जो कर्मका विपाक सो अनुभव कह्या, तहां कर्म भोगे पीछैं आभूपण-कीज्यों लग्या रहै है, कि भोगे पीछै साररहित होय गिरि पड़ै है झडि जाय है? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥

याका अर्थ— तिस अनुभवपीछे निर्जराही है। भोगेपीछे झडि जाय है। आत्माकूं दुःख सुख देकरि अर पूर्वस्थितिके क्षयतैं फेरि अवस्थान रहै नाहीं। तातैं कर्मकी निवृत्तिही होय है। जैसें आहार खाय सो पचिकर झडिही जाय, तैसैं झडि जाय, याहीकूं निर्जरा कहिये। सो यह दोयप्रकार है, सविपाकतैं उपजी अविपाकतैं उपजी। तहां च्यारि हैं गति जामें बहुरि अनेक जातिके

विशेपनिकरि भऱ्या भ्रमणरूप ऐसा जो संसाररूप समुद्र ताविषैं घणे कालतैं भ्रमता जो यह प्राणी ताकै शुभअशुभ कर्म अनुक्रमकरि परिपाककूं प्राप्त होय स्थिति पूरी करि अनुभव कहिये भोगनेका जो उदयावलीरूप नाला ताकेविषैं प्राप्त होय अपना फलकूं देय झडै है, सो तौ सविपाकनिर्जरा है। बहुरि जो कर्म स्थिति पूरी करि अपना उदयकालकूं न प्राप्त भया अर तपश्चरण आदि उपचारि क्रियाके विशेपनिकी सामर्थ्यतैं विना उदय आयाहीकूं जोरीतैं उदीरणा करि उदयावलीमें लेकरि वेदना भोगना " जैसैं आम्र तथा फनसका फल पालमें देकरि शीघ्र पचावै तैसैं पचाय लेना " सो अविपाकनिर्जरा है। बहुरि सूत्रमें चशब्द है सो निर्जराका अन्यभी निमित्त है ऐसा जनावनेके अर्थ है। आगे कहेंगे जो तपसा निर्जरा ऐसासूत्र सो अनुभवतें निर्जरा होय है बहुरि तपतेंभी होय है ऐसा जनाया है ॥

इहां पूछे है, कि, इस अध्यायमें निर्जराका कथनका कहा प्रयोजन? संवरके पीछे निर्जरा कहा चाहिये। जातें संवरके पीछैं याका नाम है तैसेंही कहना। ताका समाधान, यह लघुकरणका प्रयोजन है, जो, संवरके पीछैं याकूं कहते तो तहांभी ' विपाकोऽनुभवः ' ऐसा फेरि कहना होता, तातें इहां कहनेमें फेरि नाही कहना होय सो इहां विशेप कहिये है। ते कर्मप्रकृति दोयप्रकार हैं,

तप्रकृति अघातप्रकृति। तहां ज्ञानावरण दर्शनावरण आई तिसरूपही मोहनीय अंतराय ए नौ घातिकर्म हैं।
र वेदनीय नाम आयु गोत्र ए अघातिकर्म हैं। वहुरि घातिकर्मकी प्रकृति दोयप्रकार है, सर्वघाति
देशघाति। इहां केवलज्ञानावरण निद्रा निद्रानिद्रा प्र यथानाम चला प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धि केवलदर्शनावरण
दर्शनमोह चारित्रमोहकी संज्वलननोकषायविना व स तैसाही वाराह कषाय ऐसैं वंधअपेक्षा वीस प्रकृति सर्वघाति
हैं। वहुरि ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरणकी तै दर्शनावरणनि अंतराय पांच संज्वलननोकषाय तेरा ऐसैं
पच्चीस देशघाति हैं। यहभी वंधअपेक्षा जाननी भव सर्वक। वहुरि अन्यविशेष है सो कहिये है, शरीर ५
वंधन ५ संघात ५ संस्थान ६ संहनन ६ अंगोपाक सोपांग ३ स्पर्श ८ रस ५ गंध २ वर्ण ५ प्रत्येक
साधारण २ स्थिरअस्थिर २ शुभअशुभ २ अगुरु हेत होय लघु १ उपघात १ परघात १ उद्योत १ निर्माण
१ ए वासठि प्रकृति तौ पुद्गलविपाककी कहिये निपुद्गलहीकूं रस दे हैं, शरीरसंबंधी जाननी। वहुरि
आनुपूर्व्य ४ क्षेत्रविपाककी कहिये जीवके प्रदेश र्जराहीनके आकाररूप विपाक इनकै हैं। वहुरि आयु
४ भवविपाककी कहिये इनका भवसाधारणमा भवस्थत्र फल है। अत्र शेषप्रकृति जीवविपाककी कहिये।
ते जीवके उपयोग आदि शक्तिकूं विपाय, दे हैं। ज्ञानावरण ५ दर्शनावरण ९ अंतराय ५
मोहनीय २८ ऐसैं घातिकर्मकी तौ ४७। वहुरि उरै वेदनीय २ गोत्रकर्मकी २ नामकी २७ तिनके नाम

गति ४, जाति ५, विहायोगति २, त्रसस्थावर २, सूक्ष्मबादर २, पर्याप्तअपर्याप्त २, सुस्वरदुस्वर २, सुभग दुर्भग २, आदेय अनादेय २, यशःकीर्ति अयशःकीर्ति २, स्वासोस्वास १, तीर्थंकर १, ऐसें सब मिलि ७८ जीवविपाककी प्रकृति हैं। ए सत्तकी अपेक्षा एकसौ अठतालीस प्रकृति जाननी ॥

आगें सो अनुभवबंध तौ कह्या, अब प्रदेशबंध कहनेयोग्य है, ताकूं वक्तव्य होतें एते प्रयोजन कहने। प्रदेशबंधका कारण तौ कहा है? कौनमे कालविषैं होय है? काहेतैं होय है? कहा स्वभाव है? किसविषैं होय है? केते परमाण परमाणु है? ऐसें अनुक्रमकरि प्रश्नके भेदकी अपेक्षा लेकरि तिसके उत्तरके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः
सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥

याका अर्थ— ज्ञानावरणआदि प्रकृतिनिकूं कारण तीनि कालसंबंधी जीवके भावनिविषैं योगके विशेषतैं सर्वही आत्माके प्रदेशनिविषैं सूक्ष्म एकक्षेत्रावगाहकरि तिष्ठै ऐसें अनन्तानंत पुद्गलके स्कंध बंधरूप होय, तिसकूं प्रदेशबंध कहिये। तहां नामके कारण होय ताकूं नामप्रत्यय कहिये। इहां नामशब्दकरि सर्व कर्मप्रकृतिनिका ग्रहण है। जातैं स यथानाम ऐसा अनुभवबंधका सूत्र है। तातैं

नाम कहनेतैं प्रकृति जाननी। ऐसे कहनेकरि तौ प्रदेशबंधकै कारणपणा कह्या। बहुरि सर्वतः कहिये सर्वभवनिविषैं इहां तस्प्रत्यय सप्तमीविभक्तिका अर्थमें है। जातैं व्याकरणका ऐसा सूत्र है, दृश्यतेऽन्यतोऽपि। इस वचनतैं सप्तमीविभक्तिमेंभी तस्प्रत्यय होहै, इस वचनतैं कालका ग्रहण कीया है। जातैं एकजीवकै अतीतकालमें अनंते भव वीते आगामी कालमें संख्यात तथा असंख्यात तथा अनंत भव होंयगे। बहुरि योगविशेषात् कहिये मनवचनकायके योगके विशेषतैं पुद्गल हैं ते कर्मभावकरि जीव ग्रहण करै हैं। ऐसैं कहनेकरि निमित्तविशेषका स्वरूप कह्या।

बहुरि सूक्ष्मादिशब्दके ग्रहणतैं कर्मके ग्रहणयोग्य जे पुद्गल तिनका स्वरूपका वर्णन है। ग्रहणके योग्य पुद्गल सूक्ष्म हैं स्थूल नाहीं। बहुरि एकक्षेत्रावगाहवचन है सो अन्यक्षेत्रका अभाव जनावनेके अर्थि है। आत्माके प्रदेशनिहीमें तिष्ठै हैं अन्य जायगा नाहीं। बहुरि स्थिता ऐसा कहनेतैं तिष्ठैंही हैं, चलते नाही हैं ऐसा जनाया है। बहुरि सर्वात्मप्रदेशेषु ऐसा वचन है, सो, तिन कर्मप्रदेशनिका आधार कह्या है, एकही प्रदेशादिविषैं कर्म नाहीं तिष्ठै हैं, ऊपर नीचे तिर्यग् सर्वही आत्माके प्रदेशनिविषैं व्यापिकरि तिष्ठै हैं। बहुरि अनंतानंतप्रदेशवचन है, सो, अन्यपरिमाणका अभाव जनावनेकूं है, संख्यात नाहीं हैं, असंख्यात नाहीं हैं, अनंत नाहीं हैं। जे

पुद्गलस्कंध कर्मरूप होय हैं एक समयविषैं समयप्रबद्ध होय हैं ते अभव्यराशितैं अनंतगुणे सिद्धराशिकै अनंतवैं भाग परिमाण हैं। बहुरि घनांगुलके असंख्यातवे भाग क्षेत्रविषैं अवगाह करे ऐसे हैं। बहुरि ते एक दोय तीनि च्यारि संख्यात असंख्यात समयकी स्थितिकूं लेकरि तिष्ठे हैं। पंच वर्ण, पंच रस, दोय गंध, च्यारि स्पर्श गुणरूप भावकूं लिये आवै हैं। आठ प्रकार कर्मकी प्रकृतिकै योग्य हैं, ते योगके वशतैं आत्मा आप ग्रहण करै है। ऐसैं प्रदेशबंधका स्वरूप संक्षेपतैं जानना ॥

आगैं बंध पदार्थके अनंतर पुण्य पापभी गिणने ऐसी प्रेरणा है, सो पुण्यपाप बंधपदार्थविषैं अंतर्भूत हैं, ऐसैं जानना। तहां ऐसा कह्या चाहिये, जो, पुण्यबंध तौ कहा है? अर पापबंध कहा है? तहां ऐसा पहले तौ पुण्यप्रकृतिकी संख्या कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥

याका अर्थ— सातावेदनीय शुभआयु शुभनाम शुभगोत्र हैं ए पुण्यप्रकृति हैं। तहां शुभ तौ प्रशस्तकूं कहिये, सराहनेयोग्य होय, सो शुभ है। सो शुभशब्द आयुआदि तीनि कर्मके न्यारा न्यारा कहना। तातैं शुभआयु शुभनाम शुभगोत्र ऐसा जानना। तहां शुभआयु तौ तीनि

नाम कहनेतें प्रकृति जाननी। ऐसे कहनेकरि तो प्रदेशबंधके कारणपणा कह्या। बहुरि सर्वतः कहिये सर्वभवनिविषें इहां तस्प्रत्यय सप्तमीविभक्तिका अर्थमें है। जातें व्याकरणका ऐसा सूत्र है, दृश्यतेऽन्यतोऽपि। इस वचनतें सप्तमीविभक्तिमेंभी तस्प्रत्यय होहै, इस वचनतें कालका ग्रहण कीया है। जातें एकजीवके अतीतकालमें अनंते भव वीते आगामी कालमें संख्यात तथा असंख्यात तथा अनंत भव हॊंयगे। बहुरि योगविशेषात् कहिये मनवचनकायके योगके विशेषतें पुद्गल हैं ते कर्मभावकरि जीव ग्रहण करै है। ऐसें कहनेकरि निमित्तविशेषका स्वरूप कह्या॥

बहुरि सूक्ष्मादिशब्दके ग्रहणतें कर्मके ग्रहणयोग्य जे पुद्गल तिनका स्वरूपका वर्णन है। ग्रहणके योग्य पुद्गल सूक्ष्म हैं स्थूल नाहीं। बहुरि एकक्षेत्रावगाहवचन है सो अन्यक्षेत्रका अभाव जनावनेके अर्थि है। आत्माके प्रदेशनिहीमें तिष्ठै हैं अन्य जायगा नाहीं। बहुरि स्थिता ऐसा कहनेतें तिष्ठैही हैं, चलते नाही हैं ऐसा जनाया है। बहुरि सर्वात्मप्रदेशेषु ऐसा वचन है, सो, तिन कर्मप्रदेशनिका आधार कह्या है, एकही प्रदेशादिविषें कर्म नाहीं तिष्ठै हैं, ऊपर नीचे तिर्यग् सर्वही आत्माके प्रदेशनिविषें व्यापिकरि तिष्ठै हैं। बहुरि अनंतानंतप्रदेशवचन है, सो, अन्यपरिमाणका अभाव जनावनेकूं है, संख्यात नाहीं हैं, असंख्यात नाहीं हैं, अनंत नाहीं हैं। जे

पुद्गलस्कंध कर्मरूप होय हैं एक समयविषैं समयप्रबद्ध होय हैं ते अभव्यराशितैं अनंतगुणे सिद्धराशिकै अनंतवैं भाग परिमाण हैं। बहुरि घनांगुलके असंख्यातवे भाग क्षेत्रविषैं अवगाह करै ऐसै हैं। बहुरि ते एक दोय तीनि च्यारि संख्यात असंख्यात समयकी स्थितिकूं लेकरि तिष्ठे हैं। पंच वर्ण, पंच रस, दोय गंध, च्यारि स्पर्श गुणरूप भावकूं लिये आवै हैं। आठ प्रकार कर्मकी प्रकृतिकै योग्य हैं, ते योगके वशतैं आत्मा आप ग्रहण करै है। ऐसैं प्रदेशबंधका स्वरूप संक्षेपतैं जानना ॥

आगें बंध पदार्थके अनंतर पुण्य पापभी गिणने ऐसी प्रेरणा है, सो पुण्यपाप बंधपदार्थविषैं अंतर्भूत हैं, ऐसैं जानना। तहां ऐसा कह्या चाहिये, जो, पुण्यबंध तौ कहा है? अर पापबंध कहा है? तहां ऐसा पहले तौ पुण्यप्रकृतिकी संख्या कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥

याका अर्थ— सातावेदनीय शुभआयु शुभनाम शुभगोत्र हैं ए पुण्यप्रकृति हैं। तहां शुभ तौ प्रशस्तकूं कहियें, सराहनेयोग्य होय, सो शुभ है। सो शुभशब्द आयुआदि तीनि कर्मके न्यारा न्यारा कहना। तातैं शुभआयु शुभनाम शुभगोत्र ऐसा जानना। तहां शुभआयु तौ तीनि

हैं । तिर्यंचआयु मनुष्यआयु देवआयु ऐसैं । तहां शुभनामप्रकृति तैंतीस हैं । मनुष्यगति, देवगति पंचेन्द्रियजाति, पांच शरीर, तीनि अंगोपांग, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराचसंहनन, प्रशस्तवर्ण रस गंध स्पर्श ए च्यारि, मनुष्यदेवगत्यानुपूर्व्य दोय, अगुरुलघु, परघात, उछ्वास आतप, उद्योत, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, सुभग, शुभ, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर ऐसैं बहुरि उच्चगोत्र सातावेनीय ऐसैं ब्यालीस प्रकृति पुण्यकर्मकी हैं ॥ आगे पापप्रकृतिनिके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अतोऽन्यत् पापम् ॥ २६ ॥

याका अर्थ— एकही जे पुण्यप्रकृति तिनतैं अवशेष रही ते पापप्रकृति हैं । इस पुण्यनामा कर्मप्रकृतिके समूहतैं अन्यकर्म हैं सो पाप ऐसा कहिये । ते कौंन कौंन? ज्ञानावरण पांच, दर्शनावरण नव, मोहनीयकी छबीस, अंतरायकी पांच, नरकगति, तीर्यंचगति, जाति च्यारि, संस्थान पांच, संहनन पांच, अप्रशस्त वर्ण गंध रस स्पर्श ए च्यारि, नरकगत्यानुपूर्व्य, तिर्यंचगत्यानुपूर्व्य, उपघात, अप्रशस्तविहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारणशरीर, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशःकीर्ति ऐसैं चौतीस नामकर्मकी प्रकृति बहुरि असातावेदनीय नरकआयु

नीचगोत्र ऐसें ब्यालीस प्रकृति पापकर्मकी हैं। ऐसैं पुण्यपापप्रकृति सर्व मिलि एकसौ चौंतीस भई, सो यह कथन बंधअपेक्षा जानना। बंधप्रकृति एकसौ वीस कही हैं। तहां दर्शनमोहकी तीनि प्रकृतिमें बंध एक मिथ्यात्वहीका है। पीछैं तीनि होय हैं, तातैं दोय तौ एक घटी। बहुरि बंधन संघात शरीरतैं अविनाभावी है, तातैं शरीरहीमें अंतर्भूत कीये, तातैं दश ए घटी। बहुरि वर्णादिक वीस हैं। तिनकूं संक्षेपकरि च्यारिही कहे, तातैं सोलह ए घटी। ऐसैं अठाईस घटनेतैं एकसो वीस रही। सो इहां वर्णआदि च्यारि पुण्यरूपभी हैं पापरूपभी हैं। तातैं दोयवार गिणतैं च्यारि वधी हैं। बहुरि इनहीको सत्ताकी अपेक्षा गिणिये तब वर्णादिक वीस दुहार गिणतैं एकसौ अठसाठि प्रकृति होय। तामें पुण्यप्रकृति तौ अठसाठि होय हैं। सो कैसैं हैं? वेदनीय १, आयु ३, गोत्र १, नामकी तिरेसठि तहां गति २, जाति १, शरीर ५, बंधन ५, संघात ५, संस्थान १, संहनन १, अंगोपांग ३, वर्णादिक २०, आनुपूर्व्य २, विहायोगति २, त्रस आदि १०, अगुरुलघु १, परघात१, उछ्वास १, आतप १, उद्योत १, निर्माण १, तीर्थंकर १ ऐसैं। बहुरि पापप्रकृति सौव। तहां घातिकर्मकी तौ ४७, वेदनीय १, आयु १, गोत्र १, नामकर्मकी ५० तहां गति २, जाति ४, संस्थान ५, संहनन ५, वर्णादिक २०, आनुपूर्व्य २, त्रसस्थावरआदि १०, उपघात १, प्रशस्तविहायोगति १ ऐसैं

जानना। ऐसैं बंधपदार्थ कह्या, सो यह अवधिमनःपर्ययकेवलज्ञानीनिकैं तौ प्रत्यक्षप्रमाणके गम्य है, ते प्रत्यक्ष जानैं हैं। बहुरि अन्यके तिनके उपदेश आगमप्रमाणकैं गम्य है। तातैं भव्यजीवनिकूं तिनका उपदेश्या आगमतैं जानि इस कर्मबंधका विध्वंसका उपाय करना योग्य है॥

॥ छप्पय ॥ बंध च्यारि परकार बांधि संसार भमैं जिय,
मिथ्या अविरत अरु प्रमादहू कषाय योग लिय।
दुःख अनेक परकार जनममरणादिक भुगतहि,
गिनत नांहि सविकार ज्ञान परभावसु जुगतहि।
जिनआगमके सरधानविन चारित सत्यारथ नहीं,
इम शुद्धातम अनुभवविगारि मुकति नाहि मुनि यों कही ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥ पुण्यपापमय है संसार। दोऊ करमबंध परकार ॥
ऐसैं पुण्य गहौ जिय सार। जो शिवमारगमें सहकार ॥ १ ॥

ऐसैं तत्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं
आठमां अध्याय पूर्ण भया ॥

॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

॥ आगें नवमा अध्यायका प्रारंभ है ॥



दोहा– आस्रव रोकि विधानतैं, गहि संवर सुखरूप ।
पूर्वबंधकी निर्जरा, करी नमूं जिनभूप ॥ १ ॥

ऐसैं मंगलके अर्थि जिनराजकूं नमस्कार करि नवमां अध्यायकी आदिविषैं सर्वार्थसिद्धि नाम टीकाकार कहै हैं, जो, बंधपदार्थ तौ कह्या, अब याके अनंतर है नाम जाका ऐसा जो संवर नाम पदार्थ, ताका निर्देश करनेका अवसर है, यातैं तिसकी आदिमैं यह सूत्र है—

॥ आस्रवनिरोधः संवरः ॥ १ ॥

याका अर्थ— आस्रवका निरोध, सो संवर है। तहां नवीनकर्मका ग्रहण करना, सो आस्रव है। सो तौ पहलें व्याख्यान कीया। ताका निरोध, सो संवर है। सो दोयप्रकार है,

भावसंवर द्रव्यसंवर ऐसैं। तहां संसारका कारण जो क्रिया, ताकी निवृत्ति कहिये न होना, सो भावसंवर है। बहुरि तिस क्रियाके रोकनेतें तिसके निमित्ततैं कर्मपुद्गलका ग्रहण होय तिसका विच्छेद भया ग्रहण होता रह गया सो द्रव्यसंवर है। सो विचारिये हैं। कौन गुणस्थानविषैं किस आश्रका संवर भया? सो कहिये हैं। मिथ्यादर्शनके उदयके वशीभूत जो आत्मा ताकूं मिथ्यादृष्टि कहिये। इस गुणस्थानविषैं मिथ्यादर्शनकूं प्रधानकरि जो कर्म आश्रव होय था, सो तिस मिथ्यादर्शनके निरोध कहिये अभावकरि सासादन आदि आगिले गुणस्थाननिविषैं तिनका संवर होय है। ते प्रकृति कौन सो कहिये हैं। मिथ्यात्व, नपुंसकवेद, नरकआयु, नरकगति, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय ए च्यारि जाति, हुंडकसंस्थान, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, नरकगत्यानुपूर्व्य, आतप, स्थावर, सूक्ष्म, साधारणशरीर, अपर्याप्त ए सोलह प्रकृतीका संवर भया। इनका आश्रव सासादनादिकविषैं नाहीं है ॥

बहुरि असंयम तीनि प्रकार है अनंतानुबंधीका उदयकृत, अप्रत्याख्यानावरणका उदयकृत, प्रत्याख्यानावरणका उदयकृत। सो इस असंयमके निमित्ततैं जिन प्रकृतिनिका आश्रव होय था, सो तिस असंयमके अभावतैं तिनका संवर होय है। सो कहिये हैं। निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला,

स्त्यानगृद्धि, अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ए च्यारि, स्त्रीवेद, तिर्यंचआयु, तिर्यंचगति, च्यारि मध्यके संस्थान, च्यारि मध्यके संहनन, तिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, नीचगोत्र ए पचीस प्रकृतिनिका तौ अनंतानुबंधीकषायके उदयकृत असंयमकूं प्रधानकरि आश्रव होय था, एकेन्द्रियकूं आदि दे सासादन सम्यग्दृष्टीपर्यंत सर्वही जीव इनका बंध करै थे, सो तिस अनंतानुबंधी असंयमका अभाव होतैं सासादनतैं अगिले गुणस्थाननिविषैं तिनका संवर भया ॥

बहुरि अप्रत्याख्यानावरणके उदयकरि भया जो असंयम ताके निमित्ततैं अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, मनुष्यआयु, मनुष्यगति, औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग, वज्रवृषभनाराचसंहनन, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य इन दशप्रकृतिनिका आश्रव एकेन्द्रियतैं लगाय असंयतसम्यग्दृष्टीताईं जीव बंध करै थे, सो तिस अप्रत्याख्यानावरणकृत संयमके अभावतैं तिसतैं उपरिके देशसंयत आदि गुणस्थानविषैं तिनका संवर होय है। बहुरि सम्यग्मिथ्यात्व तीसरा गुणस्थानविषैं आयुका बंध नाही होय है। बहुरि प्रत्याख्यानावरणकषायके उदयकरि भया जो असंयम ताके होतैं प्रत्याख्यानावरण गुणस्थानवाले जीवनिताईं बंध करनेवाले थे सो तिस

असंयमका अभाव भये तिनका संवर होय। अगिले प्रमत्तसंयतआदि गुणस्थाननिविषैं तिनका बंध नाहीं है। बहुरि प्रमादकरि सहित जीवकै असातावेदनीय अरति शोक अस्थिर अशुभ अयशःकीर्ति ए छह प्रमादके निमित्ततैं बंध होय थे, सो प्रमादका अभाव भये तिनका संवर होय है। अप्रमत्तआदि गुणस्थाननिमें तिनका बंध नाहीं होय है॥

बहुरि देवायुकाभी बंध प्रमत्तवाला करै है। अर अप्रमत्तभी ताके निकटवर्ती है, तातैं ताकैभी बंध हो है। आगें अपूर्वकरणआदिविषैं ताकाभी बंध नाहीं हो है। बहुरि जिस कर्मका आश्रव कषाय होतैंही होय है, तिनका प्रमादादिकके अभावहीतैं अभाव नाहीं होय है। जातैं जे कषाय प्रमादादिभावकरि रहित तीव्र मध्य जघन्य भावकरि अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपराय इन तीनि गुणस्थाननिमें तिष्ठै हैं तहां अपूर्वकरणके आदिविषैं संख्यातभागविषैं दोय प्रकृति निद्रानिद्रा प्रचला ए बंध है। ताके आगें संख्यातभागविषैं तीस प्रकृति बंधै हैं. तिनके नाम देवगति, पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियक आहारक तैजस कार्मण ए च्यारि शरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वैक्रियक आहारकशरीरांगोपांग, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उछ्वास प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय,

निर्माण, तीर्थंकर ए तीम। बहुरि तिसही अपूर्वकरणके अंतके समयविषें हास्य रति भय जुगुप्सा ए च्यारि प्रकृतिबंध हैं। सो ए तहां संबंधी तीव्रकषायके निमित्ततैं बंधै हैं। तातैं तिस तिस भावसंबंधी कषायके अभाव होतैं तिनका तिस भावतैं उपरि बंधका अभाव होय है। तहां संवर भया॥

बहुरि अनिवृत्तिबादरसांपरायके आदिसमयतैं लगाय संख्यातभागविषैं पुरुषवेद, क्रोध संज्वलन ए दोय बंध होय हैं। ताके उपरि बाकी रहे जे संख्यातभाग तिनविषैं मान माया ए दोय बंध है। बहुरि तिसहीके अंतके समयविषैं लोभ संज्वलन बंधै है ऐसे ए पांच प्रकृति मध्यमकषायके निमित्ततै बंध होय है। सो तिस कषायके अभाव होतै कहे तिस भागके उपरि तिनका संवर होय है। बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं सूक्ष्मलोभकषाय पाईये है, याकूं मंदभी कहिये, याके निमित्ततैं पांच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र, पंच अंतराय ए सोलह प्रकृतिका आश्रव होय है। सो तिस कषायका अभाव होतैं उपशांतकषायादिकाविषैं तिनका बंध नाहीं होय है। बहुरि केवल योगहीके निमित्ततैं सातावेदनीयका आश्रव उपशान्तकषाय क्षीणकषाय सयोगकेवलीकै होय है सो आगें योगके अभावतैं अयोगकेवलीकैं तिसकाभी बंध नाहीं हैं॥

इहां कोई पूछे है, गुणस्थाननिके क्रमकरि संवर कह्या, सो गुणस्थान कहा है? तहां कहिये,

जो, इनका स्वरूप विशेषताकरि गोमटसारग्रंथमें लिख्या है, तहांतैं जानूं। किछु संक्षेप प्रयोजन इनका लिखिये है। ए गुणस्थान जीवके सामान्यपरिणाम हैं, जातैं इनका नाम अर्थ जो गुण कहिये जीवके गुण तिनके स्थान कहिये ठिकाणे सो गुणस्थान हैं, यह तौ सामान्यसंज्ञा। बहुरि विशेषसंज्ञा मोहकर्मके उदयआदिके विशेषतैं तथा योगतैं भई है। तहां मिथ्यादृष्टि ऐसा तौ अनादिमिथ्यात्व नामा कर्म इस जीवकें पाईये है ताका उदयतैं तत्वार्थनिका अश्रद्धानरूप परिणाम होय है। सो दोयप्रकार है, एक तौ नैसर्गिक है, तातैं तौ अनादिहीतैं अपना परका तथा हितअहितका यथार्थ स्वरूप भूलि रह्या है। जो पर्याय आवै है, ताहीकूं अपना स्वरूप मानि हिताहितकूं नाही जानि प्रवर्तैं है। बहुरि दूजा परोपदेशतैं प्रवर्तैं है, तातैं जैसा उपदेशदाता मिलै हितअहितका तथा आत्माका स्वरूप जैसा बतावै ताहीकूं सत्यार्थ जानि मिथ्यात्वके उदयतैं तथा अनंतानुबंधी कषायके उदयतैं तिसका पक्ष दृढ करि प्रवर्तैं, जिनेश्वरकी आज्ञा जाननेवालाका उपदेशका श्रद्धानविना यथार्थमार्गतैं बाह्य प्रवर्तैं ऐसै दोयप्रकार परिणाम जाके होय सो मिथ्यादृष्टि जीव है। सो इसका दोय भेद हैं। जो अनादिहीतैं जानैं सम्यक्त्व पाया नाहीं सो तौ अनादिमिथ्यादृष्टि है॥ बहुरि सम्यक्त्व पाये फिरि मिथ्यात्वका उदयतैं मिथ्यादृष्टि होय सो सादिमिथ्यादृष्टि है। सो सम्यक्त्व

पावनेका विधान ऐसैं है, जो, जब काललब्धि आवै तब मिथ्यात्वकर्मका तौ अनुभाग मंदउदयरूप होय अर बाह्य सर्वज्ञ वीतराग जिनेश्वरका यथार्थमार्गका उपदेशका निमित्त मिलै वीतरागकी मुद्रा निर्ग्रंथगुरुका दर्शन तथा जिनेंद्रके कल्याणक आदिकी महिमाका दर्शन श्रवण प्रभावनाअंग अतिशयचमत्कारका देखना पूर्वभवका स्मरण होना इत्यादिक निमित्त मिलै तब यथार्थतत्वार्थविषैं रुचिरूप उत्साह ऐसा वधै, जो, आगे कदे हूवा नाहीं। ऐसैं उत्साहमैं तीनि करणका आरंभ होय है। तिनके नाम अधःकरण अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण ऐसैं। सो इनका आरंभ कैसैं जीवकै होय है सो कहिये है। शुभपरिणामनिके सन्मुख होय संज्ञीपंचेन्द्रिय पर्याप्तक होय साकार उपयोगसहित होय अंतर्मुहूर्तपर्यंत समयसमय अनंतगुणी विशुद्धताकरि वर्द्धमान होय एकयोगका आलंबनसहित होय अतिमंदकषायरूप परिणया होय तीनि वेदमैंसूं एकवेदके परिणाम संक्लेशरहित होय विशुद्धताका बलतैं कर्मकी स्थितिकूं घटावता संता अशुभप्रकृतिनिका अनुभागबंधकूं हीन करता संता शुभप्रकृतिनिका अनुभागबंधकूं वधावता संता होय ताके करणनिका प्रारंभ होय है। इन तीनूंही करणनिका काल अंतर्मुहूर्तका जुदाजुदा जानूं। इनका विशेषवर्णन गोमटसारतैं जानना ॥ तहां अनिवृत्तिकरणके अंतके समयकै लगताही अनादिमिथ्यादृष्टि तौ मिथ्यात्व अरु

अनंतानुबंधिचतुष्क इन पांच प्रकृतिनिका उपशमकरि प्रथमोपशमसम्यक्त्वकूं ग्रहण करै है। तहां सत्तामें तिष्ठता जो मिथ्यात्वका उदय ताका अनुभाग घटाय तीनि भाग करै है। केताएक द्रव्य तौ मिथ्यात्वरूपही रहै, अर केताएककूं सम्यङ्मिथ्यात्वरूप करै, केताएककूं सम्यक्त्वप्रकृतिरूप करै, पीछे तहां अंतर्मुहूर्तकाल भोगिकरि कै तौ सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय आवनेतैं क्षायोपशमिकसम्यक्त्वी होय कै सम्यग्मिथ्यात्वके उदय आवनेतैं सम्यङ्मिथ्यादृष्टि होय कै पहलैं अनंतानुबंधीका उदय आवनेतैं सासादनसम्यग्दृष्टि होय कै मिथ्यात्वका उदय आवनेतैं मिथ्यादृष्टि होय, ऐसैं अनादिमिथ्यादृष्टिकी व्यवस्था है॥

बहुरि सादिमिथ्यादृष्टि होय सोभी ऐसैंही तीनूं करणनिका प्रारंभ करि सम्यक्त्वकूं परसै है। विशेष इतना, जो, याकै दर्शनमोहकी तीनि प्रकृतिका सत्व होय है। सो सात प्रकृतिका उपशम करि सम्यक्त्व पावै है। ऐसैं जाकै अनंतानुबंधीका उदय मिथ्यात्वके पहलैं आवै सो सम्यक्त्वकी विराधनासहित भया। ए जघन्य एकसमय उत्कृष्ट छह आवलीपर्यंत बीचमें रहै, तेतैं सासादनगुणस्थान नाम पावै है। याकै अनंतर मिथ्यात्वका अवश्य उदय आवै है, तब मिथ्यादृष्टि होय है। बहुरि सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिका उदयतैं सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान होय है। याका नाम मिश्रभी

कहिये। याकाभी अंतर्मूहूर्तका काल है। तहां ताकूं भोगि कै तौ मिथ्यादृष्टि होय, कै फेरि सम्यक्त्वकूं प्राप्त होय है ॥

बहुरि अविरतसंयत चौथा गुणस्थान है। तहां औपशमिक तथा क्षायोपशमिक तथा क्षायिकसम्यक्त्व तौ पाईए अर चारित्रमोहकी प्रत्याख्यानावरणकषायके उदयतैं एकदेश संयमरूपभी परिणाम न होय सकै, तातैं अविरतसम्यग्दृष्टि ऐसा नाम है। बहुरि अप्रत्याख्यानावरणकषायके अभावतैं एकदेशविरति परिणाम होय, प्रत्याख्यानावरणके उदयतैं सकलविरति न होय, तातैं विरताविरत नाम पावै ऐसा पांचवां गुणस्थान होय, याका धारककूं श्रावक कहिये ॥ बहुरि प्रत्याख्यानावरणकषायका उदयकाभी अभाव होय अरु संज्वलननोकषायका तीव्रउदयतैं किंचित् प्रमादसहित सकलसंयम होय है, तातैं प्रमत्तसंयत ऐसा नामधारक छठा गुणस्थान होय है। बहुरि संज्वलननोकषायका हीन उदय होतैं प्रमादका अभाव होय तब अप्रमत्तसंयत सातमां गुणस्थान नाम पावै है ॥

बहुरि संज्वलननोकषायकाभी जहां अव्यक्त उदय होय जाय तब उपशमश्रेणी तथा क्षपकश्रेणी नाम पावै है। सो श्रेणीके प्रारंभविषैभी करणपरिणाम होय, जहां सातमां गुणस्थानवर्ती जब ध्यान करने लगे तब शुद्धोपयोगमें लीन होय, जब जिस जीवके श्रेणीका प्रारंभ

अनंतानुबंधिचतुष्क इन पांच प्रकृतिनिका उपशमकरि प्रथमोपशमसम्यक्त्वकूं ग्रहण करै है। तहां सत्तामें तिष्ठता जो मिथ्यात्वका उदय ताका अनुभाग घटाय तीनि भाग करै है। केताएक द्रव्य तौ मिथ्यात्वरूपही रहै, अर केताएककूं सम्यङ्मिथ्यात्वरूप करै, केताएककूं सम्यक्त्वप्रकृतिरूप करै, पीछे तहां अंतर्मुहूर्तकाल भोगिकरि कै तौ सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय आवनेतैं क्षायोपशमिकसम्यक्त्वी होय कै सम्यग्मिथ्यात्वके उदय आवनेतैं सम्यङ्मिथ्यादृष्टि होय कै पहलैं अनंतानुबंधीका उदय आवनेतैं सासादनसम्यग्दृष्टि होय कै मिथ्यात्वका उदय आवनेतैं मिथ्यादृष्टि होय, ऐसैं अनादिमिथ्यादृष्टिकी व्यवस्था है ॥

बहुरि सादिमिथ्यादृष्टि होय सोभी ऐसैंही तीनूं करणनिका प्रारंभ करि सम्यक्त्वकूं परसै है। विशेष इतना, जो, याकै दर्शनमोहकी तीनि प्रकृतिका सत्व होय है। सो सात प्रकृतिका उपशम करि सम्यक्त्व पावै है। ऐसैं जाकै अनंतानुबंधीका उदय मिथ्यात्वके पहलैं आवै सो सम्यक्त्वकी विराधनासहित भया। ए जघन्य एकसमय उत्कृष्ट छह आवलीपर्यंत बीचमें रहै, तेतैं सासादनगुणस्थान नाम पावै है। याकै अनंतर मिथ्यात्वका अवश्य उदय आवै है, तब मिथ्यादृष्टि होय है। बहुरि सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिका उदयतैं सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान होय है। याका नाम मिश्रभी

कहिये। याकाभी अंतर्मूहूर्तका काल है। तहां ताकूं भोगि कै तौ मिथ्यादृष्टि होय, कै फेरि सम्यक्त्वकूं प्राप्त होय है॥

बहुरि अविरतसंयत चौथा गुणस्थान है। तहां औपशमिक तथा क्षायोपशमिक तथा क्षायिक-सम्यक्त्व तौ पाईए अर चारित्रमोहकी प्रत्याख्यानावरणकषायके उदयतैं एकदेश संयमरूपभी परिणाम न होय सकै, तातैं अविरतसम्यग्दृष्टि ऐसा नाम है। बहुरि अप्रत्याख्यानावरणकषायके अभावतैं एकदेशविरति परिणाम होय, प्रत्याख्यानावरणके उदयतैं सकलविरति न होय, तातैं विरताविरत नाम पावै ऐसा पांचवां गुणस्थान होय, याका धारककूं श्रावक कहिये॥ बहुरि प्रत्याख्यानावरणकषायका उदयकाभी अभाव होय अरु संज्वलननोकषायका तीव्रउदयतैं किंचित् प्रमादसहित सकलसंयम होय है, तातैं प्रमत्तसंयत ऐसा नामधारक छठा गुणस्थान होय है। बहुरि संज्वलननोकषायका हीन उदय होतैं प्रमादका अभाव होय तब अप्रमत्तसंयत सातमां गुणस्थान नाम पावै है॥

बहुरि संज्वलननोकषायकाभी जहां अव्यक्त उदय होय जाय तब उपशमश्रेणी तथा क्षपकश्रेणी नाम पावै है। सो श्रेणीके प्रारंभविषैंभी करणपरिणाम होय, जहां सातमां गुणस्था-नवर्ती जब ध्यान करने लगे तब शुद्धोपयोगमें लीन होय, जब जिस जीवके श्रेणीका प्रारंभ

होय सो सातिशय अप्रमत्त होय, अधःकरणपरिणाममें तिष्ठै, समयसमय अनंतगुणी विशुद्धताकरि वर्द्धमान होय, बहुरि विशुद्धता वधतें वधतें अपूर्वकरणपरिणाम होय, तब आठमां गुणस्थान नाम पावै। बहुरि अनिवृत्तिकरणपरिणाम होय तब नवमां अनिवृत्तिबादरसांपराय गुणस्थान नाम पावै। बहुरि कषाय घटतें घटतें सूक्ष्मरूप होय जाय, तब सूक्ष्मसांपराय दशमा गुणस्थान नाम पावै। बहुरि समस्तकषायनिका उपशम होय जाय, तब उपशांतमोह ग्यारहमां गुणस्थान नाम पावै। इहां यथाख्यातसंयम होय है। बहुरि समस्त मोहकर्मका सत्तामेंसूं नाश होय जाय तब क्षीणमोह नाम पावै। ऐसें ये श्रेणीके गुणस्थान हैं। इनमें शुक्लध्यानकी प्रवृत्ति है॥

बारमांकी आदितांई तौ पहला पाया प्रवर्तै है। बहुरि बारहां गुणस्थानके अंत एकत्ववितर्कवीचार ध्यान होय है। ताके अनंतरही घातिकर्मका नाश करि केवलज्ञान उपजावै है। इन श्रेणीका गुणस्थाननिका काल अंतर्मुहूर्तका है। क्षपकश्रेणी चढनेवाला अंतर्मुहूर्तमें केवलज्ञान उपजावै है। उपशमश्रेणी चढनेवाला उलटा नीचा उतरि जाय है। बहुरि केवलज्ञान उपजै तब जेते योगनिकी प्रवृत्ति रहै जेतैं तौ सयोगकेवली नाम तैरहा गुणस्थान है। याका काल उत्कृष्ट आठ वर्ष घाटि कोटिपूर्वका है। बहुरि जब योगनिकी प्रवृत्ति मिटै तब अयोगकेवली चौदहमां गुणस्थान

नाम पावै है। याकी स्थिति पंच लघु अक्षरका उच्चारणमात्र काल है। एते कालमें अघातिकर्मकी सत्तामें प्रकृति रही थी, तिनका क्षयकरि सिद्धगतिकूं प्राप्त होय, लोकके शिखरविषैं जाय तिष्ठै हैं, ते सिद्ध कहावै हैं। अनंतकाल आत्मिक आनंदमें लीन रहै हैं। फेरि संसारमें जिनका आगमन नाहीं। ऐसें गुणस्थाननिकी प्रवृत्ति जाननी। विशेष जान्या चाहै सो गोमटसारग्रंथतैं जानूं॥

आगैं, यह संवर कह्या, ताका कारणके कहनेकू सूत्र कहै हैं—

॥ स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥ २ ॥

याका अर्थ— कह्या जो संवर, सो गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परीषहजय चारित्र इन छह भावनिकरि होय है। तहां संसारके कारण जे प्रवृत्तिभाव तिनतैं आत्माकूं गोपै राखै तिनकी प्रवृत्तिरूप न होने दे, सो गुप्ति है। बहुरि प्राणीनिकी पीडाके परिहारके अर्थि भलेप्रकार प्रवृत्ति करना, सो समिति है। बहुरि अपना इष्टस्थान जो सुखका स्थान तामैं धरै सो धर्म है। बहुरि शरीरआदिका स्वभावका बारबार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है। बहुरि क्षुधाआदिकी वेदना उपजै ताकूं कर्मकी निर्जराअर्थि सहै सो परिषह है, तिनका जीतना सो परिषहजय है। बहुरि चारित्रशब्दका अर्थ आदिसूत्रमें कह्या है। ऐसें ए गुप्तिआदिक है तिनके संवरणक्रियाका साधकतमपणातैं करणरूप

संवर है, ऐसा अधिकार कीया है। बहुरि स ऐसा शब्द है सो गुप्त्यादिक साक्षात् संबंध करनेके अर्थि है। तहां ऐसा नियम जनाया है, सो यह संवर गुप्तिआदिककरिही होय है, अन्य उपायकरि नाहीं होय है। ऐसैं कहनेकरि तीर्थनिविषैं स्नान करना, अतिथिका भेषमात्र दीक्षा लेना, देवताकूं आराधना, ताके अर्थि अपना मस्तक काटि चढावना इत्यादि प्रवृत्ति करै यह संवर नाहीं होय है, ऐसा जनाया है। जातैं राग द्वेष मोहकरि बांधे जे कर्म, तिनका अन्यप्रकार निवृत्ति होनेका अभावही है॥

आगें संवरका तथा निर्जराका कारणविशेषके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥

याका अर्थ— तपकरि निर्जरा होय है, बहुरि चकारतें संवरभी होय है, ऐसा जानना। तहां तप है सो धर्मके भेदनिमें गर्भित है, सोभी न्यारा कह्या है, सो संवर अर निर्जरा दोऊका कारण जनावनेके अर्थि कह्या है अथवा संवरप्रति प्रधानपणा जनावनेके अर्थि है। इहां तर्क, जो, तप तौ देवेन्द्रादिपदवीकी प्राप्तिका कारण मानिये है, यातैं अभ्युदयका अंग है, सो निर्जराका अंग कैसैं होय? ताका समाधान, जो, यहू दोष इहां नाहीं है। एक कारणकरि अनेक कार्य

होते देखिये हैं। जैसैं अग्नि एक है तौऊ यातैं वस्तूका पचना नामा कार्यभी होय है बहुरि वस्तूकूं भस्म करि देना नामा कार्यभी होय है। तैसैं तपतैं अभ्युदयभी होय है अर कर्मकाभी नाश होय है। यामें कहा विरोध है? इहां अन्यभी दृष्टान्त है, जैसैं किसाणकै खेती बोहनेकी क्रियाका फल धान्य उपजाना सो प्रधान है। अर पराल घास चारा उपजना गौण फल है। तैसैं मुनिनिके तप-क्रियाका फल कर्मका नाश होना तौ प्रधान है, अर देवेन्द्रादिकपद उपजावना गौण फल है। ऐसा जानना ॥ आगें संवरके कारणनिविषैं आदिमें कह्या जो गुप्ति ताका स्वरूपके जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं ॥

॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— काय वचन मनकी क्रियारूप जो योग तिनका सम्यक् प्रकार रोकना वशि करना, सो गुप्ति है। तहां योगका स्वरूप तौ पहलें कह्या सोही जानना। कायवाङ्मनःकर्म योगः इस सूत्रविषैं कह्या सो तिस योगकी स्वेच्छाप्रवृत्तिका मेटना, सो निग्रह कहिये। बहुरि सम्यक्पद है सो विषयसुखकी अभिलाषाके अर्थि योगनिकी प्रवृत्तिका निग्रह करै तौ गुप्ति नाहीं, ऐसैं जनावनेके अर्थि है। यातैं ऐसा अर्थ भया, जो, सम्यक् विशेषणकरि विशिष्ट अर जामें अधिक संक्लेश न

उपजे ऐसा जो कायआदियोगका निरोध ताके होतें जो योगनिकी स्वेच्छा प्रवृत्तितैं कर्मका आश्रव होय था ताका संवर होय है ऐसा प्रगट निश्चय करना। सो यऊ गुप्ति तीनिप्रकार है, कायगुप्ति, वचनगुप्ति, मनोगुप्ति ऐसैं। इहां विशेष, इहां सम्यक् विशेषणका तौ यह विशेष, जो, गुप्तिका सत्कार न चाहै, बहुरि लोकतैं पूजा न चाहै, यह महामुनि बडे ध्यानी हैं ऐसी लोकविषैं प्रसिद्धता न चाहै, तथा इसलोक परलोक संबंधी विषयअभिलाष न करै ॥

बहुरि कायवचनमनकी स्वेच्छाप्रवृत्तिका विशेष ऐसा, जो, कायकरि भूमिविषैं चलना होय तब विनादेख्या विनाप्रतिलेख्या चलै तब कर्मका आश्रव होय। बहुरि वस्तुका उठावणा धरणा होय सो बहुरि बैठना होय सोवना होय तिसके निमित्ततैं कर्मका आश्रव होय। बहुरि वचन जैसैं तैसैं बोलै, तथा मनविषैं रागद्वेष प्रवर्तै, विषयनिकी वांछा प्रवर्तै, ताके निमित्ततैं कर्म आश्रवै सो महामुनि गुप्तिरूप रहै तिनके ऐसे कर्मका आश्रव रुकै है, तातैं संवर होय है ॥

आगें जो मुनि गुप्तिरूप रहनेविषैं असमर्थ होय आहारविहार उपदेशादिक्रियाविषैं प्रवर्तै, तिनके निर्दोषप्रवृत्ति जैसैं होय ताके प्रगट करनेकूं सूत्र कहैं हैं—

॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥ ५ ॥

याका अर्थ— ईर्या भाषा एषणा आदाननिक्षेप उत्सर्ग ए पांच समिति हैं, ते संवरके कारण हैं। इहां सम्यक्पदकी अनुवृत्ति लेणी, यातैं सम्यक्ईर्या इत्यादि पांचनिकैं लगाय लेणी। तहां जान्या है जीवनिके स्थान योनि आदिक भेदकी विधि जानैं ऐसा जो मुनि ताके यत्नतैं चलना, यत्नतैं बोलना, यत्नतैं शुद्ध निर्दोष आहार लेणा, यत्नतैं उपकरणादि उठावना धरना, यत्नतैं मलमूत्रआदि क्षेपणा ऐसैं प्रवृत्तिरूप पांच समिति हैं, ते प्राणिनिकी पीडाका परिहारके अर्थि होय हैं। ऐसैं प्रवर्तैं अन्यप्राणीनिकूं बाधा नाहीं होय है। तथा सम्यक् प्रवर्तमानके असंयमपरिणामके निमित्ततैं कर्म आश्रवरूप होय थे तिसका अभाव होय है तब संवर होय है ॥

इहां विशेषविधि लिखिये है। तहां मुनि जीवस्थाननिके जाननहारे हैं। ते जीवस्थान संक्षेपकरि चौदह हैं। एकेन्द्रिय सूक्ष्मबादरकरि दोयप्रकार बेन्द्रिय, त्रींद्रिय, चौइन्द्रिय ए विकलत्रय कहिये। बहुरि पंचइंद्रिय संज्ञी असंज्ञी दोय भेद ऐसैं सात भये। ते पर्याप्त अपर्याप्त भेदकरि चौदह होय हैं। बहुरि अठ्याणवे कहे हैं। बहुरि च्यारिसे छह कहे हैं। बहुरि इनके उपजनेके ठिकाणेकूं योनि कहिये। तथा कुलनिके भेद अनेक हैं। तिनकूं जानि मुनि तिनकी रक्षानिमित्त समितिरूप प्रवर्तैं हैं। तहां गमन करैं तब सूर्यके उदयका प्रकाशविषैं नेत्रनितैं जूडा प्रमाण भूमिकूं नीकैं

निहारि जिस मार्ग मनुष्यादि पहले गये होंय, भूमि मर्दली गयी होय, तिस मार्गविषैं मंदमंद पगनिकूं धरते गमनसिवाय अन्यविषैं मन न चलावते शरीरके अंगनिकूं संकोचरूप राखते गमन करैं हैं, तिनकें ईर्यासमिति होय है ॥

बहुरि वचन कहै सो हित मित असंदिग्ध कहै। तहां जामें मोक्षपद पावनेका प्रधानफल होय, सो तौ हित कहिये। बहुरि अनर्थक बहुतप्रलाप जामें नाहीं होय, सो मित कहिये। बहुरि जाके अक्षर स्पष्ट होय तथा व्यक्त होय सो असंदिग्ध कहिये। याका विस्तार मिथ्यावचन, ईर्षासहित वचन, परकूं अप्रिय वचन, परका मर्म भेदनेका वचन, जामें सार थोडा होय ऐसा वचन, संदेहरूप वचन, जातैं परके भ्रम उपजै ऐसा वचन, कषायसहित वचन, परका परिहास सहित वचन, अयुक्त वचन, असभ्यवचन, गाली आदिक तथा कठोरवचन, अधर्मका वचन, देशकालयोग्य नाहीं ऐसा वचन, अतिस्तुतिवचन इत्यादि वचनके दोष हैं; तिनतैं रहित मुनि वचन बोलै हैं, ताकै भाषासमिति होय है ॥

बहुरि आहारके उद्गम आदि दोष तिनका वर्जना सो एषणासमिति है। सो गुणरूप रत्ननिका ले चलनवाली जो शरीररूप गाडी ताहि समाधिरूप नगर पहुंचावना है। तातैं

घृतादिका वांगकीज्यों आहार दे है। वहुरि उदरअग्निरूप दाहका रोग ताके वुझावनेकूं औषधीकीज्यों वुरी भलीका स्वाद न लेते देशकालसामर्थ्यकूं जाणि पवित्र आहार ले हैं। तामें उद्गम उत्पादन एषणा प्रमाण अंगार धूम आदि भेदसहित छियालीस दोष टलैं नवकोटि शुद्ध आहार करैं। छियालीस दोष वतीस अंतराय चौदह मल आदिका वर्णन आचार वृत्तिग्रंथके पिंडशुद्धिअधिकारमें है, तहांतैं जानना। ऐसा ऐषणासमितिका विशेष है। वहुरि आदाननिक्षेपण उत्सर्ग समिति पूर्वं कहीही है ॥

इहां कोई कहै, यह समिति तौ वचनकायकी गुप्ति है। ताकूं कहिये, ऐसा नाहीं। गुप्तिविषैं तौ कालकी मर्यादा करि सर्वक्रियाकी निवृत्ति करै है। वहुरि समितिविषैं कल्याणरूप कार्यनिविषैं प्रवृत्ति होय है। वहुरि इहां कोई कहै, मुनि पात्रविना हस्तविषैं ले आहार करै हैं तहां आहार गिरै पडै तामें जीवहिंसा दीखै है, तहां एषणासमितिका अभावतै संवरकाभी अभाव आवै है। ताका समाधान, जो, पात्र राखै तौ परिग्रहका दोष आवै है। तिसकी रक्षा करनी पडै है। अर कपाल आदि लिये फिरै तौ यामें दीनता आवै है। भाजन गृहस्थतैं मांगै तौ मिलै न मिलै। वहुरि ताके प्रक्षालनके आदिके विधानमें वडा आरंभ है। वहुरि

आपके पात्रमें भोजन लेय अन्य जायगा जाय खानेमें आशा लार लगी रहै है। बहुरि गृहस्थ अवस्थामें सुन्दर पात्रमें भोजन करै थे, अब जैसेंतैसेंमें खाय तब बडी दीनता आवै, तातैं अपने हस्तरूप पात्रविषैंही आहार करना, यामें किछूभी दोष नाहीं उपजै है, स्वाधीन है, बाधारहित है। निराबाध देशविषैं खडा रहकरि भोजनकूं परखिकरि निश्चल होय भोजन करते किंचिन्मात्रही दोष लागै नाहीं है, ऐसैं जानना ॥

आगें तीसरा संवरका कारण जो धर्म, ताके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसँयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥ ६ ॥

याका अर्थ— उत्तमक्षमा, उत्तममार्दव, उत्तमआर्जव, उत्तमसत्य, उत्तमशौच, उत्तमसंयम, उत्तमतप, उत्तमत्याग, उत्तमआकिंचन्य, उत्तमब्रह्मचर्य ए दश धर्मके भेद हैं, तिनतैं संवर होय है, इहां शिष्य पूछै है, जो ये धर्म कौनअर्थि कहे हैं? ऐसैं पूछैं ताका प्रयोजन कहै हैं— पहलैं तौ गुप्ति कही सो तो सर्वप्रवृत्तिके रोकनेकूं कही। पीछैं तिस गुप्तिविषैं असमर्थ होय तब प्रवृत्ति करी चाहिये। तातैं भलेप्रकार यत्नतैं प्रवर्तनेके अर्थि समिति कही। बहुरि यह दशप्रकारका धर्मका कथन है, सो, जे मुनि समितिविषैं प्रवर्तें तिनकूं प्रमादके परिहारके अर्थि कहा है, ऐसैं जानना।

तहां शरीरकी स्थितिका कारण जो आहार ताके अर्थि परघर जाता जो मुनि तिनकूं दुष्टजन देखिकरि दुष्ट वचन कहै, उपहास करै, अवज्ञा करै, ताडन करै, शरीरके घातआदि करै ऐसैं क्रोध उपजनेके कारण निकट होतैंभी चित्तमें क्रोधरूप कलुषता न उपजै, सो क्षमा है। बहुरि उत्तम-जाति कुल रूप विज्ञान ऐश्वर्य शास्त्रादिकका ज्ञान लाभ वीर्य एते गुण आपमें पाईये हैं, तिनका मद न होना, पैलैं कोई अपमान किया होय तहां अभिमान न करना, सो मार्दव है। बहुरि काय वचन मनके योगानिकी सरलता मायाचारसूं रहित सो आर्जव है। बहुरि लोभतैं आत्माका परिणाम मलिन रहै है ताका अभाव उत्कृष्टपणैं होय, सो पवित्रता है, सोही शौच है ॥

इहां कोई कहै, लोभकी उत्कृष्ट निवृत्ति तौ गुप्तिविषैंभी है, तामें शौच आय गया, जुदा क्यों कह्या? ताका समाधान, जो, गुप्तिविषैं तौ मनका चलनेका निषेध है। बहुरि तिस गुप्तिविषैं असमर्थ होय ताकै परके वस्तु लेनेका अभिप्रायका निषेध धर्मविषैं जानना। बहुरि कहै, जो, आकिंचन्यधर्मविषैं आय जायगा शौच मति कहौ। ताकूं कहिये, आकिंचन्यविषैं ममत्वका अभाव प्रधानकरि कह्या है। अपने शरीरविषैंभी संस्कार आदिका निषेध है। बहुरि शौचविषैं च्यारि-प्रकारके लोभकी निवृत्ति कही है। तहां लोभ च्यारिप्रकार कहा? सो कहिये है, जीवनेका लोभ

नीरोग रहनेका लोभ, इन्द्रिय वणी रहनेका लोभ, उपभोगवस्तुका लोभ ऐसैं। सो यहभी अपना अर परका ऐसैं च्यारिनिपरि दोयदोय प्रकार जानि लेना। ऐसैं लोभका अभाव शौचमें जानना। बहुरि दिगंबर यति अर तिनके भक्त श्रावक आदि तिनविषैं समीचीन वचन बोलना सो सत्य है॥

इहां कोई कहै, यह तौ भाषासमितिही है। ताकूं कहिये, समितिविषैं तौ सर्वही लोकतैं बोलनेका कार्य होय। तब हित मित वचन कहै। जो औरप्रकार वचन बोलै तौ राग अनर्थदंड आदि दोष उपजै। बहुरि सत्यधर्मविषैं मुनिश्रावकनिहीतैं शास्त्रज्ञान सीखने आदिका कार्यनिमित्त बहुतभी परस्पर आलाप होय है। तामें दशप्रकार सत्य कहा है ताकी प्रवृत्ति होय है ऐसा भेद है। तिनके नाम जनपद, सम्मित, स्थापना, नाम, रूप, प्रतीत्य, व्यवहार, संभावना, द्रव्य, भाव ऐसैं हैं। इनका स्वरूप उदाहरणसहित गोमटसारतैं योगमार्गणामें जानना है। बहुरि समितिविषैं प्रवर्तते जे मुनि तिनकै समितिकी रक्षाके अर्थि प्राणीनिकी रक्षा अर इन्द्रियनिकी रागसहित विषयनिका परिहार, सो संयम है। ताका दोय भेद, अपहृतसंयम उपेक्षासंयम। तहां अपहृतसंयम उत्कृष्ट मध्यम जघन्य भेदकरि तीनिप्रकार। तहां प्रासुक वसतिका आहार आदिमात्र है बाह्यसाधन जिनकै बहुरि स्वाधीन है ज्ञानचारित्रकी प्रवृत्ति जिनकै तिनकै गमन आसन शयनादि क्रियाविषैं जीव आय

शस होय तौ तातैं आप अन्यक्षेत्रमें टलि जाय तिन जीवनिकूं पीडा न दे, ताकैं उत्कृष्ट अपहृत संयम है। बहुरि कोमल मयूरपिच्छिका आदि उपकरणतैं तिस जीवकूं टालै सरकाय दे, ताकैं मध्यम अपहृतसंयम है। बहुरि अन्य उपकरणतैं टालै ताकूं बाधा न होय तैसैं करै सो जघन्य अपहृतसंयम है। बहुरि देशक्षेत्रकालका विधानका ज्ञाता परके उपरोध कहिये वशतैं छोड्या है काय जानैं बहुरि गुप्तिरूप निरोधै है मन वचन काय जानैं ऐसा मुनिकै रागद्वेषका न उपजना, सो उपेक्षासंयम है। भावार्थ ऐसा, जो कोई दुष्ट उपसर्ग आदि करै प्राणभी ले तौ ध्यानकरि तिष्ठै तहां किंचिन्मात्रभी रागद्वेष न उपजावै ताकै उपेक्षासंयम है ॥

इहां अपहृतसंयम पालनेके अर्थि आठप्रकार शुद्धिका उपदेश है। तहां भावशुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्यापथशुद्धि, भिक्षाशुद्धि, प्रतिष्ठापनशुद्धि, शयनासनशुद्धि, वाक्यशुद्धि ऐसैं। तहां कर्मका क्षयोपशमतैं तौ उपजी बहुरि मोक्षमार्गकी रुचिकरि भई है प्रसन्नता जामें, बहुरि रागादिकके उपद्रवतैं रहित होय, सो भावशुद्धि है। याके होतैं आचार प्रकाशरूप सोहता होय है। जैसैं सवारि उज्वल करी भीतिविषै चित्राम करै, सो सोभायमान होय; तैसैं सोहै है। बहुरि जो निरावरण रहै, आभरणादिकका सवारनेंकरि रहित होय, जैसैं जन्मतैं बालक होय तैसैं मलकरि

सहित होय जामें, कछू विकार न होय, यत्नरूप है प्रवृत्ति जाकी, मूर्तिमान् शांतिरूप सुखकूं दिखावती ऐसी कायकी शुद्धि है। याके होतैं आपकें तथा आपकरि परकें भय नाहीं उपजै है॥

वहुरि अरहंत आदि जे परमगुरु तिनविषैं तौ जहां यथायोग्य पूजा प्रवर्तै, वहुरि ज्ञानआदिके विषैं यथाविधान भक्तिसहित होय, गुरुनिकैं अनुकूल जामें प्रवृत्ति सदा रहे, प्रश्न स्वाध्याय वाचना कथा विज्ञान आदिकी प्रवृत्तिके विषैं कारणरूप होय, देश काल भावका जाननेविषैं जहां प्रवीणता होय, आचार्यनिके अनुसार जहां प्रवर्तना होय सो विनयशुद्धि है। यऊ पुरुषका भूषण है, यातैं पुरुष सोहै है, वहुरि संसारसमुद्रके तरवेविषैं यह नावतुल्य है। वहुरि जो नानाप्रकारके जीवनिके स्थान योनि आश्रय इनका ज्ञानकरि उपज्या जो यत्न ताकरि परिहरी है जीवनिकी पीडा जामें, वहुरि अपना ज्ञानसूर्यके प्रकाश नेत्रादिककरि देख्या जो क्षेत्र ताविषैं जामें गमन होय, वहुरि अतिशीघ्र, तथा अतिमंद, तथा शरीरकूं भ्रमाय करि, तथा विस्मयकरि, तथा क्रीडारूप, तथा विकारसहित, तथा दशादिशाका अवलोकनआदि दोषनिकरि रहित है गमन जामें ऐसी ईर्यापथशुद्धि है। याकें होतैं संयम प्रतिष्ठा पावै है। जैसैं न्यायमार्ग चलतैं संपदा प्रतिष्ठा पावै, तैसैं ॥

बहुरि परीक्ष्या है विचाऱ्या है उभयप्रचार कहिये मलमूत्रकी बाधा जामें, बहुरि मांज्या है धोया है अगिला पिछिला अंगका प्रदेश जामें, बहुरि आचारसूत्रमें कह्या तैसें देशकालकी प्रवृत्तिका ज्ञान ताकरि है प्रवीणता जामें, बहुरि लाभ अलाभ मान अपमानविषैं समान है मनकी वृत्ति जामें, बहुरि लोकनिंद्य कुलका वर्जना ताविषैं तत्पर है, बहुरि चन्द्रमाकी गतिकीज्यों हीनाधिक गृहविषैं प्रवेशका है अविशेष जामें, बहुरि दीनअनाथननिके अर्थि दानशाला जहां होय बहुरि विवाह तथा यज्ञ जहां होय ऐसे घरनिविषैं प्रवेशका है वर्जना जामें, दीनवृत्तिकरि रहित है, बहुरि प्रासुक आहारका है हेरना जामें, बहुरि आगमकथित निर्दोष आहारकरि पाया है प्राणयात्रामात्र फल जामें ऐसी भिक्षाशुद्धि है। चारित्ररूप संपदा है सो यातें संबंधरूप है। बहुरि गुणनिकी संपदाकीज्यों साधुनिकी सेवाका कारण है। सो यऊ भिक्षा पांचप्रकार नामकरि प्रसिद्ध है, गोचरी अक्षम्रक्षण उदराग्निप्रशमन भ्रमराहार गर्तपूरण। तहां लाभ अलाभ तथा सुरसविरस आहारविषैं समान संतोष जामें होय तातैं तो भिक्षा नाम है ॥

बहुरि जैसें गऊ घास चरै, तहां घास गेरनेवाला स्त्री पुरुष क्रीडासहित सुंदर आभूषण आदि धारें गेरे तौ गऊ ताके अंगका सुंदरपणाकूं नाहीं निरखै, तिस घासहीके खानेविषैं दृष्टि रहै, अथवा

अनेकदेशमें घासका तृण होय तिनकूं जैसें मुखमें आवै तैसें चरनेहीकी दृष्टि रहै, देनेवालेकी संपदाकी तरफ न देखे; तैसेंही मुनिभी आहार देनेवालाका रूपआदिकी तरफ न देखैं तथा सूखा आला रूक्ष सचिक्कण आहारकी तरफ न देखै, जैसा पावै तैसा खाय, ताका गोचरी ऐसा नाम है। तथा गवेषणाभी याहीका नाम है ॥ बहुरि जैसें रतनके भारकरि भऱ्या गाडा होय ताकूं जैसेंतैसें घृतकरि अक्ष कहिये धुरी ताकूं वांगिकरि अपने वांछितदेशांतरकूं व्योपारी ले जाय है, तैसें मुनिभी शरीररूप गाड्या भरि गुणरूप रत्ननिकरि भऱ्या है, ताकूं निर्दोष आहार देय कायरूप अक्षको लेयकरि अपने वांछित जो समाधिरूप नगर तहां पहुंचावै है, याका अक्षमृक्षण नाम है ॥ बहुरि जैसें भंडारमें अग्नि लागै ताकूं भंडारका धणी जैसें तैसें जलतें बुझाय अपना धन राखै, तैसें मुनिभी शरीरकूं उदराग्नि बुझाय अपना गुणरत्न राखै है, याका उदराग्निप्रशमन नाम है ॥ बहुरि दातारकूं बाधाविना प्रवीण मुनि भ्रमरकीज्यों जैसें भ्रमर पुष्पकूं बाधा न करै तैसें आहार ले सो भ्रमराहार नाम है ॥ बहुरि जैसें खाडाकूं जैसें तैसें कजोडकरि भरिये है तैसें मुनिभी उदररूप खाडाकूं सुस्वाद दुःस्वाद आहारकरि पूरण करै है, ताका गर्तपूरण नाम है ॥

बहुरि नख रोम कफ थूक मल मूत्रका क्षेपण तथा देह छोडना इनकूं करतें जाण्या है देश

जानैं ऐसा जो मुनि सो जीवनिकूं देखिकरि क्षेपण करै सो प्रतिष्ठापनशुद्धि है ॥ बहुरि स्त्री क्षुद्रजन चोर वधिक कहिये शिकारी तथा शाकुनिक कहिये पक्षीनिके मारनेवाले इत्यादिक पापी जन जहां वसते होंय तथा शृंगारके विकारसहित भूषणनिकरि उज्वल वेशसहित वेश्यादिक जहां क्रीडा करै आवै जाय तथा गीत वादित्र नृत्य करै ऐसैं स्थानकनिविषें मुनि शयन आसन करैं नाहीं, अकृत्रिम-गिरिकी गुफा वृक्षनिके कोटर तथा कृत्रिम सूंना घर जाकूं लोकानि छोडि दिया होय ऐसे स्थानक जे आपके उपदेशतैं बणे नाहीं आरंभरहित तहां सोवै बैठै, सो शयनासनशुद्धि है ॥ बहुरि पृथ्वी आरंभआदिकी जामें प्रेरणा नाहीं और कठोर निर्लज्ज आदि परकूं जातैं पीडा होय ऐसा नाहीं अर व्रत शील आदिका उपदेश आदिकी जामें प्रधानता होय अर हितरूप मर्यादसहित मीठा मान आदरकरि सहित संयमीनिके योग्य ऐसा वचन प्रवर्तै, सो वाक्यशुद्धि है। याके आश्रय सर्वसंपदा है ॥ ऐसैं संयमधर्म कह्या ॥

बहुरि कर्मके क्षयके अर्थि जो तप ले सो तप है। सो बारहप्रकार है सो आगें कहेंगे। बहुरि संयमीनिके योग्य ज्ञानआदिक देना सो त्याग है। बहुरि शरीरआदि परिग्रह विद्यमान रहे हैं तिनविषैंभी मेरा यऊ है ऐसा ममत्वभावका अभिप्राय नाहीं होय, सो आकिंचन्य है। नाहीं

है किंचन कहिये किछूभी जामें ताकूं अकिंचन कहिये, तिसका भाव अथवा कर्म होय सो आकिंचन्य ऐसा याका अर्थ है। बहुरि पूर्वे स्त्रीनिके भोग किये थे तिनकूं यादि न करना, स्त्रीनिकी कथाका श्रवण न करना, स्त्रीनिकी संगति जहां होय तहां शयन आसन न करना, ऐसैं ब्रह्मचर्य परिपूर्ण ठहरै है। अथवा अपनी इच्छातैं स्वच्छन्दप्रवृत्ति निवारणें गुरुके निकट रहना, सो ब्रह्मचर्य है। जातैं ब्रह्म कहिये गुरु तिनिविषैं चरण कहिये तिनके अनुसार प्रवर्तना ऐसाभी ब्रह्मचर्यका अर्थ होय है॥ ऐसैं दशप्रकार धर्म हैं॥

इन भेदनिमें कोई गुप्तिसमितिविषैं गर्भित हैं तौऊ फेरि कहनेतैं पुनरुक्तपणा नाहीं होहै। जातैं इनकैं संवर धारनेकी सामर्थ्य है। तातैं धर्म ऐसी संज्ञा सार्थिक है। अथवा गुप्त्यादिकी रक्षाके अर्थि ऐर्यापथिक, रात्रिक, दैवसिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, उत्तमस्थान, अकाल ऐसैं सातप्रकार अतिक्रमणका उपदेश है। तैसैंही उत्तमक्षमादिक दशप्रकार धर्मभी न्यारा उपदेश है। तातैं पुनरुक्त नाहीं है। बहुरि इनकै उत्तमविशेषण है सो या लोकसंबंधी दृष्टप्रयोजनके निषेधकै अर्थि है। बहुरि इन धर्मनिके गुणकी बहुरि इनके प्रतिपक्षी जे क्रोधआदि दोष तिनकी भावनातैं ए धर्म संवरके कारण होय हैं। सोही कहिये है। तहां व्रतकी अर शीलकी रक्षा या

लोक परलोकमें दुःखका न होना सर्व जीवविषैं सन्मान सत्कार आदरका होना इत्यादिक क्षमातैं गुण होय हैं। बहुरि धर्म अर्थ काम मोक्ष इनका नाश होना बहुरि प्राणनिका नाश होना ए क्रोधतैं दोष होय हैं

तहां कोई अन्यपुरुष आपके क्रोध उपजनेका कारण मिलाया तहां ऐसा चिंतवन करना, जो, आपविषैं दोष होय तिनका पैला निषेध करै। तब आप ऐसा विचारै, जो, मोविषैं ए दोष हैं, यह कहा झूठ कहै है? ऐसा विचारि क्षमा करनी। बहुरि आपविषैं दोष न होय तौ ऐसा विचारै, जो, ए कहे हैं ते दोष मोविषैं नाहीं, पैला विनासमझा अज्ञानतैं कहै है, अज्ञानीतैं कहा क्रोध? ऐसैं विचारि क्षमा करनी। बहुरि अज्ञानीका बालककासा स्वभाव विचारना। कोई अज्ञानी परोक्ष आपकूं दुर्वचन कहै तब विचारणा, जो, यह परोक्ष कहै है, अज्ञानी तौ प्रत्यक्षभी कहै है, सो मोकूं प्रत्यक्ष न कह्या एही भला भई। बहुरि प्रत्यक्षभी कहै तौ ऐसी विचारणी, जो, अज्ञानी तौ मेरा ताडनभी करै यह दुर्वचनही कहै है, सोही भला है। बहुरि ताडै तौ ऐसा विचारणा, जो, अज्ञानी तौ प्राणघातभी करै है, यह ताडैही है, प्राणघात न कीया, सो भला भई। बहुरि प्राणघातभी करै तौ ऐसा विचारै, जो, अज्ञानी तौ धर्मविध्वंसभी

करै, यह प्राणघात करै है, धर्मविध्वंस न कीया, यह भलाई भई। बहुरि विचारै, जो, यह मेराही अपराध है, जो, पूर्वे कर्म बांधे थे तिनका यह दुर्वचनादिक सुनना फल है, पैला तौ निमित्तमात्र है, ऐसा चिंतवन करना ॥

बहुरि जो मार्दवधर्मकरि युक्त होय तापरि गुरु अनुग्रह करै, साधु भला मानैं, तब सम्यग्ज्ञान आदिका पात्र होय तातैं स्वर्गमोक्षफलकी प्राप्ति होय यह मार्दवके गुण हैं। अर मानकरि मैला मन होय तामें व्रत शीलआदि गुण न तिष्ठै। साधुपुरुष ताकूं छोडि दे। यह मान सर्व आपदाका मूल है। यह मानकषायके दोष है। बहुरि मायाचाररहित सरल हृदय जाका होय ताविषैं तिष्ठै मायाचारवालेका गुण आश्रय न करै निंद्यगति पावै। ऐसे आर्जवके गुण हैं, मायाके दोष है॥ बहुरि शौचधर्मयुक्त पुरुषका सर्वही सन्मान करै। सर्व विश्वास करै। सर्वगुण जामें तिष्ठै। लोभीक हृदयविषैं गुण अवकाश न पावै। परलोकमें तथा इसलोकमें बडी आपदा पावै। ऐसे शौचके गुण लोभके दोष हैं॥ बहुरि सत्यवचन कहनेवालेविषैं सर्व गुण तिष्ठै सर्व संपदा तिष्ठै झूठ बोलै ताकी बंधुजनभी अवज्ञा करै। मित्रभी ताकूं छोडि दें। जीभ छेदन सर्वस्वहरण आदि आपदा पावै। ए सत्यके गुण असत्यके दोष हैं॥

बहुरि संयम आत्माका हित है। जाके संयम होय, सो लोककरि पूज्य होय परलोककी कहा कहणी? असंयमी प्राणीनिके घात विषयनिके रागकरि अशुभकर्म बांधे। ऐसें संयमके गुण असंयमके दोष हैं ॥ बहुरि तप है सो सर्वप्रयोजनकी सिद्धि करनहारा है। तपहीतें ऋद्धि उपजै है। तपस्वीनिके रहनेके क्षेत्रभी तीर्थ होय हैं। जाके तप नाहीं सो तृणतैंभी छोटा है। जाकूं सर्व-गुण छोडि दे है। तपविना संसारतैंभी नाही छूटै है। ऐसैं तपके गुण तपरहितविषें दोष हैं ॥ परिग्रहका त्याग दान है। सो पुरुषका हित है। परिग्रहका त्यागवाला सदा निर्वेद रहै है। मन जाका उज्वल रहै है। पुण्यका निधान है। परिग्रहकी आशा है सो बलवान् है, सर्वदोष उपजनेकी खानि है, जातैं तृप्ति नाहीं होय है। जैसैं समुद्र जलतैं तृप्त नाही होय, तैसैं तृप्त नाहीं। इस आशारूपी खाडाकूं कौन भरि सकै? जामें सर्व वस्तु क्षेपिये तौऊ रीतीही रहै। ऐसैं त्यागके गुण तृष्णाके दोष हैं ॥ बहुरि जाके शरीर आदिकें विषैं ममत्व नाहीं होय सो परमसुखकूं पावै है। जाकै ममत्व होय सो सदा शरीरसंबंधी दुःखकूं भोगवै है। ऐसै आकिंचन्यके गुण ममत्वके दोष हैं ॥ बहुरि ब्रह्मचर्य पालै ताकै हिंसादिदोष न लागै हैं। सर्व गुणसंपदा जामें वसै है। बहुरि जो स्त्रीअभिलाषी है ताहि सर्व आपदा आय लागें हैं। ऐसे ब्रह्मचर्यके गुण हैं अब्रह्मके दोष हैं ॥

ऐसैं उत्तमक्षमादिकके गुण अर तिनके प्रतिपक्षी क्रोधादिकके दोषका चिंतवन कीये क्रोध आदिका अभाव होतैं तिनके निमित्ततैं कर्मका आश्रव होय था, ताकी निवृत्ति होतैं बडा संवर होय है। यह धर्म अविरतसम्यग्दृष्टि आदिकैं जैसैं क्रोधादिककी निवृत्ति होय, तैसैं यथासंभव होय है। अर मुनिनिके प्रधानपणे हैं ॥ अगैं शिष्य कहै है, जो क्रोधआदिका न उपजना क्षमादिकका आलंबनतैं होय है ऐसा कह्या, सो यह आत्मा क्षमादिककूं कैसैं अवलंबन करै? जातैं क्रोधादिक न उपजै। ऐसैं पूछैं, कहै है, जो, जैसैं लोहका पिंड तपाया हूवा अग्नितैं तन्मय होय है, तैसैं क्षमादिकतैं तन्मय होय जाय, तब क्रोधआदि न उपजै। यामैं जो आत्महितका वांछक है सो बारह अनुप्रेक्षाका बारबार चिंतवन करै ॥

॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्म-
स्वाख्यातत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥

याका अर्थ— अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्मस्वाख्यातत्व इन बारहनिका वारंवार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है। तहां उपात्त कहिये लगे हुए अर अनुपात्त कहिये बाह्य जे द्रव्य तिनके संयोगतैं वियोग होना, सो-

अनित्यपणा है। तहां आत्मा रागादिरूप परिणामकरि कर्मनोकर्मभावकरि ग्रहे जे पुद्गलद्रव्य, ते तौ उपात्त कहिये। अर जे परमाणुआदि बाह्यद्रव्य हैं, ते अनुपात्त हैं। तिन सर्वनिकै द्रव्यस्वरूप तौ नित्यपणा है। बहुरि पर्यायस्वरूपकरि संयोगवियोगरूप है। तातैं अनित्यपणा है। तातैं यह शरीर इंद्रियनिके विषयरूप उपभोग परिभोग द्रव्य हैं ते समुदायरूप भये जलके बुदबुदेकीज्यौं अनवस्थितस्वभाव हैं। गर्भकूं आदि लेकरि जे अवस्थाके विशेष तिनविषैं सदा संयोग वियोग जिनमें पाईये हैं। इनविषैं अज्ञानी जीव मोहके उदयके वशतैं नित्यपणा माने है। संसारविषैं किछुभी ध्रुव नाहीं है। आत्माका ज्ञानदर्शनरूप उपयोगस्वभाव है, सोही ध्रुव है। ऐसैं चिंतवन करना, सो अनित्यानुप्रेक्षा है। याप्रकार याके चिंतवन करनेवाले भव्यजीवकै शरीरादिकविषैं प्रीतिका अभावतैं जैसैं भोगकरि छोड़े भोजन गंधमाला आदिक तिनकीज्यौं वियोगकालविषैंभी शोकआदि न उपजै है॥

या संसारविषैं जन्म जरा मरण व्याधि मृत्यु आदि कष्ट आपदासहित भ्रमता जो यह जीव ताके कोईभी शरण नाहीं है। जैसैं मृगका बच्चाकूं एकान्त उद्यानविषैं भूंखा मांसका इच्छक बलवान् वघेराने पकड्या ताकूं किछूभी शरण नाहीं; तैसैं। बहुरि यह शरीर है ताकूं नीकैं पोषिये

है तौऊ भोजन करतेताईं सहाई है, कष्ट आये किछुभी सहाई नाहीं है। बहुरि बहुत यत्नकरि संचय कीये जे धन तेभी भवांतरमें लार न जाय हैं। बहुरि जिनतैं सुख दुःख वांटिकरि भोगिये ऐसे मित्र हैं तेभी मरणकालविषैं रक्षा नाहीं करै हैं। बहुरि रोगकरि व्याप्त होय तब कुटुंबके भले होय तेभी प्रतिपाल नाहीं करि सकै हैं। जो भलेप्रकार धर्मका आचरण कीया होय तौ यह धर्म अविनाशी है सो संसारके कष्टरूपी समुद्रविषैं तरणेका उपाय है। यह प्राणी कालकरि ग्रहण कीया होय तब इंद्रआदिकभी शरण न होय हैं। तातैं कष्टविषैं धर्मही शरण है, यहही धन है। कैसा है? अविनाशी है। और किछुभी शरण नाही है। ऐसैं चिंतवन करना सो अशरणानुप्रेक्षा है। याकूं ऐसैं चिंतवनेमें सदा अशरण हूं ऐसैं संसारतैं विरक्त होनेतैं संसारसंबंधी वस्तुनिविषैं ममत्वका अभाव होय है। भगवान् अरहंत सर्वज्ञप्रणीत मार्गविषैंही यत्न होय है॥

कर्मके उदयके वशतैं आत्माकै भवांतरकी प्राप्ति सो संसार है। सो पहलै पांच परिवर्तनरूप व्याख्यान कीयाही था। तिसविषैं अनेक योनि कुलकोटि लाखनिके बहुत संकट पाईये हैं। ऐसैं संसारविषैं भ्रमण करता तौ यहू जीव कर्मरूप यंत्रका प्रेरया पिता होयकरि भाई होय है, तथा पुत्र होय है, तथा पिता होय है, माता होयकरि बहिन होय है, तथा स्त्री होय है, तथा पुत्री होय

जाय है, तथा स्वामी होय करि चाकर होय जाय है, दास होयकरि स्वामी होय जाय है। जैसैं नट अनेक स्वांग धरि नाचै है, तैसैं अनेक पर्याय धरि भ्रमै है। बहुरि बहुत कहा कहै? आपही आपके पुत्र होय जाय है। इत्यादिक संसारका स्वभाव चिंतवन करना, सो संसारानुप्रेक्षा है। ऐसैं याकूं चिंतवन करते पुरुषके संसारके दुःखके भयतैं उद्वेग होयकरि वैराग्यभाव होय है। तब संसारके नाश करनेकूं यत्न करै है। ऐसैं संसारानुप्रेक्षा है॥ इस संसारभावनामें ऐसा विशेष जाननां, आत्माकी च्यारि अवस्था हैं; संसार, असंसार, नोसंसार, तात्रितयव्यपेत ऐसैं। तहां च्यारिगतिविषैं अनेकयोनिमें भ्रमण करना, सो तौ संसार कहिये। बहुरि च्यारि गतितैं रहित होय फेरि न आवना मुक्त होना, सो असंसार है। तहां शिवपदविषैं परमआनंद अमृतरूपविषैं लीन है। बहुरि सयोगकेवली नोसंसार कहिये, जातैं चतुर्गतिभ्रमणका तौ अभाव भया अर मुक्त भये नाहीं, प्रदेशनिका चलना पाईये है, तातैं ईषत्संसार है, ताकूं नोसंसार कहिये। बहुरि अयोगकेवली चऊदमां गुणस्थानवालेकैं तत्रितयव्यपेत है। जातैं चतुर्गतिका भ्रमण नाहीं अर मुक्त भये नाहीं, तातैं असंसारभी नाहीं अर प्रदेशनिका चलना नाहीं, तातैं नोसंसारभी नाहीं, तातैं तीनहू अवस्थातैं जुदाही अवस्था है, ताकूं तत्रितयव्यपेत ऐसा नाम कह्या। सो यह संसार अभव्यकी

अपेक्षा तथा भव्यसामान्यकी अपेक्षा तौ अनादिनिधन है। बहुरि भव्यविशेषकी अपेक्षाकरि सादि सनिधन है। बहुरि नोसंसार है सो सादि निधन है। बहुरि असंसार सादि अनिधन है। बहुरि तात्रितयव्यपेत अयोगकेवली अंतर्मुहूर्तकाल है॥

बहुरि पंचपरावर्तनरूप संसारका व्याख्यान तौ पहलै कीयाही है, ताका संक्षेप ऐसा है, जो, द्रव्यनिमित्त संसार तौ च्यारिप्रकार है, कर्म नोकर्म वस्तु विषय, इनके आश्रयतैं च्यारि भेद होय हैं। बहुरि क्षेत्रनिमित्तके दोय प्रकार हैं, स्वक्षेत्र परक्षेत्र। तहां आत्मा लोकाकाशतुल्य असंख्यातप्रदेशी है, सो कर्मके वशतैं संकोचविस्ताररूप हीनाधिक अवगाहनारूप परिणमै, सो स्वक्षेत्रसंसार है। बहुरि जन्मयोनिके भेदकरि लोकमें उपजै लोककूं स्पर्शै सो परक्षेत्रसंसार है। बहुरि काल निश्चयव्यवहारकरि दोयप्रकार है। तहां निश्चयकालकरि वर्ताया जो क्रियारूप तथा उत्पादव्ययध्रौव्यरूप परिणाम, सो तौ निश्चयकाल निमित्तसंसार है। बहुरि अतीत अनागत वर्तमानरूप भ्रमण, सो व्यवहारकाल निमित्तसंसार है॥

बहुरि भवनिमित्तके बत्तीस भेद हैं। तहां पृथ्वी अप् तेज वायु कायकके भव सूक्ष्म बादर पर्याप्त अपर्याप्तककरि सोलह हैं। प्रत्येकवनस्पति पर्याप्त अपर्याप्तककरि दोय हैं। साधारण-

वनस्पति सूक्ष्म बादर पर्याप्त अपर्याप्तकरि च्यारि हैं। बहुरि बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चतुरिन्द्रिय पर्याप्त अपर्याप्तकरि छह। बहुरि पंचेन्द्रिय संज्ञी असंज्ञी पर्याप्त अपर्याप्तककरि च्यारि ऐसैं बत्तीस भये। बहुरि भावनिमित्तक संसार दोयप्रकार है, स्वभाव परभाव। तहां मिथ्यादर्शनादिक अपने भाव सो स्वभाव है। बहुरि ज्ञानावरणआदि कर्मका रस, सो परभाव है। ऐसा संक्षेप जानना ॥

जन्म जरा मरणकी आवृत्तिके महादुःखके भोगनेकूं मैं एकही हौं, मेरे कोई मेरा नाहीं, तथा मेरे कोई पर नाहीं, मैं एकही जन्मूं हौं, एकही मरूं हौं, मेरे कोई स्वजन नाहीं, तथा मेरे कोई परिजन नाहीं, जो मेरा व्याधि जरा मरण आदिकूं मेटै। बंधु मित्र हैं ते मेरे मरणपीछे मसाणताईं जाय हैं। आगें जाय नाहीं। मेरे धर्महीं सहाय है, सो सदा अविनाशी है। ऐसैं चिंतवन करना सो एकत्वानुप्रेक्षा है॥ ऐसैं याकूं भावनेवाला पुरुषकै स्वजनके विषैं तौ राग नाहीं उपजै है। परजनके विषैं द्वेष नाहीं उपजै है। तब निःसंगताकूं प्राप्त भया मोक्षहीके अर्थि यत्न करै है॥

शरीरआदिका अन्यपणाका चिंतवन, सो अन्यत्वानुप्रेक्षा है। सोही कहिये हैं। बंधक अपेक्षा शरीर आत्माकैं एकपणां है। तौऊ उपलक्षणके भेदतैं भेद है। तातैं मैं शरीतैं अन्य हौं।

शरीर अन्य है। बहुरि शरीर तौ इन्द्रियगोचर है, मूर्तिक कहै। मैं अतीन्द्रिय हौं, अमूर्तिक हौं। बहुरि शरीर तौ अज्ञानी जड़ है। मैं ज्ञानरूप चेतन हौं। बहुरि शरीर तौ अनित्य है। मैं नित्य हौं। बहुरि शरीर तौ आदि अंतसहित है। मैं अनादि अनंत हौं। मेरे शरीर तौ या संसारमें भ्रमते लाख निवीते अतीत भये। मैं अनादितैं था सोही हौं। शरीरनितैं न्याराही हौं। ऐसैं शरीरतैंही मेरै अन्यपणा है, तौ बाह्यपरिग्रहनिकी कहा कथा? ऐसैं चिंतवन करते या आत्माके मनविषैं समाधान होय है। शरीरआदिविषैं वांछा नाहीं उपजै है। तातैं यथार्थज्ञानभावनापूर्वक वैराग्य वधते संतैं अंतरहित जो मोक्षका सुख, ताकी प्राप्ति होय है। ऐसैं अन्यत्वानुप्रेक्षा है ॥

बहुरि यह शरीर है सो अत्यंत अशुचि दुर्गंध शुक्रशोणितकी योनि है, अशुचिहीकरि वध्या है, विष्ठाका स्थानकीज्यौं अपवित्र है, उपरितैं चाममात्रकरि आच्छादित है—ढक्या है, अतिदुर्गंध रसकरि झुरते जे नीझर तिनका बिल है, याके आश्रय अन्यवस्तु होय ताकूंभी अंगारेकीज्यौं शीघ्रही तत्काल आपसारिखा अपवित्र करै है, स्नानसुगंधका लेपन धूपका वास सुगंधमाला आदिकरिभी याका अशुचिपणा दूरि न होय है। बहुरि याकूं सम्यग्दर्शनआदिकरि भाइये तौ जीवकै अत्यंत शुद्धता प्रगट करै है। ऐसैं याका यथार्थस्वरूपका विचारना सो अशुचित्वानुप्रेक्षा है।

याकूं ऐसैं विचारता पुरुषकै शरीरतैं वैराग्य उपजै है। तब वैरागी हूवा संता संसारसमुद्र तिरिवेकूं चित्त समाधानरूप करै है ॥ याका विस्तार ऐसा, जो, अशुचिपणा दोय प्रकार है, लौकिक अलौकिक। तहां आत्मा कर्ममलकलंककूं धोयकरि अपने शुद्धस्वरूपविषैं तिष्ठै सो तौ अलौकिकशुचिपणा है। याके साधन सम्यग्दर्शनआदिक हैं। अथवा ए जिनमें पाइये ऐसे महामुनि हैं। अर तिन मुनिनिकरि आश्रित जे निर्वाणक्षेत्र आदिक तीर्थ हैं ते ए शुद्धि आत्माकी प्राप्तिके उपाय हैं। तातैं तिनकीभी नामशुद्धि कहिये। बहुरि लौकिक शुचिपणा लोक आठप्रकार मानैं हैं। काल अग्नि पवन भस्म मृत्तिका गोमय जल ज्ञान। जातैं इनके निमित्ततैं ग्लानि मिटै है। सो ए आठहि प्रकार या शरीरकूं पवित्र शुचि करनेकूं समर्थ नाहीं। जातैं यह शरीर अत्यंत अशुचि है, याकी उत्पत्ति जहां होय सोभी अशुचि, यह उपज्या सोभी अशुचि। देखो! कवलाहार मुखमें लेतेही श्लेष्मका ठिकाणा पायकरि तौ तत्काल श्लेष्मतैं मिलि द्रवै है। तापीछैं पित्तके ठिकाणैं जाय पचै तब अशुचिही होय है। पीछैं पचिकरि वातके ठिकाणैं जाय वातकरि भेदरूप कीया हूवा खलरसभाव परिणवै है। इन सर्वनिका भाजन भिष्ठाका ठिकाणाकीज्यों है। खलभाव तौ मलमूत्रआदि विकाररूप होय है। अर रसभाव रुधिर मांस मेद मज्जा शुक्ररूप होय है। याका पवित्र करनेका उपाय किछूभी नाहीं है॥

आश्रव संवर निर्जरा पहलें कहेही थे। ते इहांभी कहे हैं। सो इनतें उपजै गुण तिनके दोष चिंतवनके अर्थि कहे हैं। सोही कहिये है। ए आश्रव हैं ते इसलोक अर परलोकविषैं नाश अर दुर्गतिके कारण हैं। महानदीके प्रवाहकी वेगकीज्यों महातीखण हैं। ते इन्द्रिय कषाय अव्रत आदिक हैं। तहां प्रथम तौ इन्द्रिय स्पर्शन आदिक हैं। ते जीवानिकूं कष्टरूप समुद्रमें पटकै हैं। देखो! स्पर्शन इन्द्रियके वशीभूत भया वनका हस्ती बहुत बलवान है, तौऊ मदकरि आंधा कपटकी हथिणीसूं सांचीके भ्रमतें खंधकमें आय पडै! तब मनुष्यके वशि होय बंधन वहन अंकुशका घात आदि तीव्रदुःखकूं सहै है। अपने यूथमें स्वच्छंद विहारकूं अपने वनवासकूं सदा यादि करता खेदकूं प्राप्त होय है॥ बहुरि जिह्वा इन्द्रियके वशीभूत हूवा कामला मूये हस्तीके शरीरके उपरि तिष्ठै था, सो नदीके प्रवाहमें हस्ती चल्या तब काकभी चल्या समुद्रमें जाय पड्या! तहां उडिकरि निकलनेकूं समर्थ न भया, तहांही कष्टकरि मूवा! तैसैंही मांसके रसके लोभी जालमें पडि मरै है॥ बहुरि घ्राणइन्द्रियके वशीभूत सर्प औषधिकी सुगंधतैं कष्टके स्थानक जाय पडै है। तथा भौरा कमलमें दबि मरै है॥ बहुरि नेत्रइन्द्रियनिके वशीभूत हूवा पतंग जीव दीपगकी लोय उपरि पडि मरै है। बहुरि श्रोत्रइन्द्रियके वशीभूत हूवा हरिण वधिकके गानकी ध्वनि सुनिकरि खाना

पीवना विचारना भूलि जाय व्याधपास आवै, तब पकडै, कष्टके समुद्रमें डारि प्राण ले। तैसें अन्यभी प्राणी इन इन्द्रियनिके वशीभूत भये या लोकमें अनेक दुःख अर परलोकमें दुर्गति पावै हैं॥

बहुरि तैसेही कषाय आदिभी इस लोकविषैं वध बंधन महान् क्लेश उपजावै है। परलोकविषैं अनेक दुःखनिकरि प्रज्वलित जे नानागति तिनविषैं भ्रमण करावै है। ऐसें आश्रवके दोष चिंतवन करना, सो आश्रवानुप्रेक्षा है। ऐसें चिंतवतै पुरुषके क्षमादिकविषैं कल्याणरूपपणाकी बुद्धि दूरि न होय है॥ जे आश्रवके दोष कहे ते काछिवाकीज्यों संवररूप कीया है आत्मा जानें ताकै नाहीं होय हैं। जैसें समुद्रविषैं नावका दोष मूदते संतैं वांछित देशकूं निरुपद्रवतैं पहुंचै अर जो छिद्र न मूंदिये तौ नाव जलतैं भरि जाय तब नावमें तिष्ठते पुरुषनिका विनाश होय, तैसें कर्मका आवनेका द्वारका संवर करते संतैं कल्याणरूप जो मोक्ष ताका प्रतिबंधक जो कर्म सो नाहीं आवै है। ऐसें संवरके गुणनिका चिंतवना, सो संवरानुप्रेक्षा है। ऐसें याके चिंतवन करनेवालेकै संवरविषैं नित्य उद्यम प्रवर्तै है। तातैं मोक्षपदकी प्राप्ति होय है॥

निर्जरा वेदनाका विपाक है ऐसें कह्या था, सो दोयप्रकार है, अबुद्धिपूर्वा कुशलमूला। तहां नरकआदिके विषैं जो कर्मका फलका विपाकतैं निरंतर स्वयमेव उपजै है, सो तौ अबुद्धि-

पूर्वक है। सो तौ अकुशलमूला कहिये। जातैं याकरि किछु कल्याण नाहीं। बहुरि परीषहके जीततैं होय, सो कुशलमूला कहिये। याकौ दोय रीति हैं, एक तौ आगामी शुभकर्मका बंध करै है, बहुरि दूजी केवल निर्जराही है, आगामी बंध नाहीं करै है। इहां ऐसा जानना, जो, किछु रागके आशयतैं होय तहां तौ शुभकर्म बंधे है अर जहां रागका आशय न होय केवल शुद्धोपयोगही होय तथा बंधका अभाव है। जहांजहां रागका आशय हीन तथा अधिक होय तहां तैसा जानना। ऐसा निर्जराके गुणदोषका चिंतवना, सो निर्जरानुप्रेक्षा है। ऐसैं याके चिंतवनयुक्त पुरुषकै कर्मकी निर्जरा करनेके अर्थि प्रवृत्ति होय है ॥

लोकके संस्थान आदिकी विधि पहलैं कही थी, सर्वतरफ अनंत जो आकाश ताकैं बहुमध्यदेशवीचिही बीचि तिष्ठता जो लोक ताका संस्थान आदि स्वभावका चिंतवन करना, सो लोकानुप्रेक्षा है। ऐसैं याकूं चिंतवनेतैं पुरुषनिकै यथार्थ लोकके जाननेतैं ज्ञान संशयादिकरहित उज्वल होय है॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र आदि जो अपना स्वभाव ताकी लब्धि ताकी अप्राप्ति सो बोधिदुर्लभानुप्रेक्षा है। तहां एकनिगोदियाके शरीरविषैं जीव सिद्धराशितैं अनंतगुणे हैं। तिन शरीरनितैं सर्वलोक अंतरहित भरया है। यह सर्वज्ञके आगमकरि प्रमाण है। यातैं बेइन्द्रियआदि जीव

निपट थाडे हैं। तातैं त्रसपर्याय जैसैं वालूरेतके समुद्रविषैं हीरेकी कणी सूक्ष्म गिरि पडै ताका फेरि पावना दुर्लभ होय तैसैं दुर्लभ है। तहांभी विकलत्रय वहुत हैं। पंचेन्द्रिय थोरे हैं। सो पंचेन्द्रियका पावना ऐसा दुर्लभ है जैसैं गुणनिविषैं कृतज्ञता कहिये कीये उपकारका न भूलना सो दुर्लभ होय तैसैं है। तहांभी तिर्यंच पशु मृग पक्षी सरीसृप आदि वहुत हैं, मनुष्य अल्प हैं। सो मनुष्यपर्यायका पावना ऐसा दुर्लभ है, जैसैं चौडे पडी रत्नकी राशिका पावना दुर्लभ होय तैसैं है। तिस मनुष्यपर्यायकूं गये फेरि ताका पावना ऐसा दुर्लभ है; जैसैं कोई वृक्ष वलि गया ताकी भस्मी होय गई तिनके पुद्गलपरमाणु फेरि तिसही वृक्षपणाके भावकूं प्राप्त होय ए अतिदुर्लभ जानूं ॥

वहुरि जो फेरि मनुष्यपणाभी पावै तौ भला देश जामें हिताहितका विचारसहित प्राणी वसते होय ऐसा पावना दुर्लभ है। जातैं पशुसमान मनुष्यनिका देश वहुत है, भला देश थोरा है। वहुरि वहांभी भला कुल पावना दुर्लभ है। जातैं पापकर्मकरि सहित कुल वहुत हैं। भले कुल थोरे हैं। वहुरि तहांभी वडी आयु पावना दुर्लभ हैं। तहांभी इन्द्रिय भले पावना दुर्लभ है। तहांभी वल पराक्रम पावना दुर्लभ है। तहांभी भला रूप शरीर नीरोग पावना दुर्लभ है। वहुरि जो ए सर्वही पावै अरु धर्मका लाभ न होय तौ सर्व पावना निरर्थक है। जैसैं मुख

सुंदर पावै अर नेत्रकरि अंध होय सो मुखकी सुंदरता वृथा है। बहुरि ऐसा दुर्लभ धर्मभी पायकरि जो विषयसुखनिविषैं आसक्त होना होय, सो जैसैं भस्मके अर्थ चंदनकूं वालि दीजिये तैसैं निष्फल गमावना है। बहुरि जो विषयतैं विरक्त होय तिस पुरुषकै तपकी भावना धर्मकी प्रभावना सुखतैं मरणा करनेरूप समाधि सो होना दुर्लभ है। बहुरि तिसकूंभी होते जो स्वभावकी प्राप्तिरूप बोधि ताका लाभ होय तौ फलवान् है। ऐसैं चिंतवना सो बोधिदुर्लभानुप्रेक्षा है। ऐसैं याके चिंतवन करते पुरुषकै बोधिकूं पायकरि कदाचित्भी प्रमाद नाहीं होय है॥

जिनेन्द्रका उपदेश्या आदि अहिंसालक्षण है, सत्यकूं अधिकारकरि प्रवर्तै हैं, विनय जाका मूल है, क्षमाका जामें बल है, ब्रह्मचर्य जाकरि रक्षा है, उपशम कहिये कषायका अभाव जामें प्रधान है, नियति कहिये नियम त्याग निवृत्ति जाका स्वरूप है, निर्ग्रंथपणाका जामें आलंबन है ऐसा जिनभगवान्करि धर्मस्वाख्यातत्व भलेप्रकार व्याख्यान कीया है। याके अलाभतैं यह जीव अनादितैं संसारविषैं भ्रमण करै है। पापकर्मके उदयतैं उपज्यौ जो दुःख ताहि भोगता संता भ्रमै है। बहुरि या धर्मके पाये अनेकप्रकार इन्द्रादिकपदकी प्राप्तिपूर्वक मोक्षकी प्राप्ति नियमकरि होय है। ऐसा चिंतवन करना सो धर्मस्वाख्यातत्वानुप्रेक्षा है। ऐसैं याकूं चिंतवते पुरुषकै धर्मविषैं

अनुरागतें सदा उद्यम होय है। याका व्याख्यान ऐसाभी है। जो जीवके धर्म गुणस्थान जीवस्थान मार्गणास्थान चौदह चौदह कहे हैं, सो धर्मस्वाख्यातत्व कहिये भलेप्रकार आख्यातपणा है। तिनका चिंतवन करे। सो गुणस्थानके नाम तौ पहलें कहेही थे। बहुरि जीवसमास चौदहभी पूर्वें कहे थे। बहुरि मार्गणास्थान गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व, संज्ञी, आहारक ए चौदह हैं, तेभी पूर्वें कहे थे। तिनिपरि गुणस्थान जीवस्थान आगममें कहे हैं, तैसें लगावणे। तिनका स्वरूप चिंतवन करते जीवके धर्मनिकी प्रवृत्ति नीकैं जाणी जाय है। तातें यथार्थज्ञान होय है। निश्चयव्यवहाररूप धर्मका स्वरूप जानिये है ऐसें जानना। ऐसें अनित्यत्व आदि अनुप्रेक्षाके निकट उत्तमक्षमादिधर्मके धारणतें महान् संवर होय है। बहुरि धर्मके अरु परिषहनिके मध्य अनुप्रेक्षा करनेतें ऐसा जनाया है, जो, यह अनुप्रेक्षाचिंतवन करनेवाला पुरुष धर्मनिकूं तौ पाले है रक्षा करै है अर परीषहनिकूं जीतनेका उत्साह करै है ॥

आगें पूछे हैं, ते परीषह कौन हैं बहुरि तिनकूं कौनअर्थि सहिए है? ऐसें पूछें सूत्र कहे हैं—

॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥

याका अर्थ— मार्ग कहिये संवर तातें न छूटनेके अर्थि तथा कर्मकी निर्जराके अर्थि परि-

पह सहने। इहां संवरका प्रकरण है, तातैं तिसका विशेषण मार्ग कीया हैं। मार्ग संवर है, तातैं च्युत न होनेके अर्थि बहुरि कर्मनिर्जराके अर्थि परीपह सहने कहे हैं। कष्ट आये मार्गतैं चिगै नाहीं, ताकी परीपह सहना साधन है। क्षुधा तृष्णा आदि वडे वडे कष्ट सहै तव भगवानका भाष्या मार्गतैं न छूटते संतैं तैसैं ते तिस मार्गतैं प्रवर्तते कर्मका आवनेका द्वार जो आश्रव ताका संवर करते संते आप उद्यमकरि पचाया जो कर्मका फल ताकूं भोगवते संते अनुक्रमतैं निर्जरै है कर्म जिनके ते महामुनि मोक्षकूं प्राप्त होय हैं॥ आगें परीषहनिमित्त संज्ञासूत्र कहै हैं—

॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्य्यानिषद्याशय्याक्रोशवध-
याचनालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ९ ॥

याका अर्थ—क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशक, नाग्न्य, अरति, स्त्री, चर्या, निपद्या, शय्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कारपुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, अदर्शन ए वाईस परीपह हैं। ए क्षुधाआदिक हैं ते वेदना पीडाका विशेष हैं ते वाईस हैं इनका सहना मोक्षके अर्थिनकूं करना। सो कैसैं सोही कहै हैं। ऐसैं महामुनिकैं क्षुधाका जीतना कहिये। कैसे हैं? प्रथम तौ भिक्षावृत्तिकरि परके घर आहार ले हैं, तातैं तौ भिक्षु ऐसा नाम है जिनका। बहुरि निर्दोष

आहार हेरै हैं, दोषसहित जैसैंतैसैं नाहीं ले है। बहुरि निर्दोषआहारका अलाभ होय तथा अंतरायादिकके कारणतैं थोरा मिलै तौ नाहीं मिटै है क्षुधाकी वेदना जिनकी। बहुरि अकाल अर अयोग्यक्षेत्रविषैं आहार लेनेकी वांछा जिनकै नाहीं है। ऐसा नाही, जो, क्षुधा उपजै तिसही काल आहारकूं दौडै तथा अयोग्यक्षेत्रमेंभी ले ले ऐसैं नाहीं करै है। बहुरि आवश्यकक्रियाकूं किंचिन्मात्रभी घटावै नाहीं। क्षुधाके निमित्ततैं चित्त न लागै तब सामायिकआदि क्रिया जैसैंतैसैं करै ऐसैं नाही है। बहुरि स्वाध्याय अर ध्यानकी भावनाविषैं तत्पर रहै हैं। बहुरि बहुतवार आप चलाय करै। तथा प्रायश्चित्तआदिके निमित्ततैं करै ऐसैं अनशन अवमोदर्य नीरसाहार तप तिनिकरि युक्त है। बहुरि इन तपनिके निमित्ततैं क्षुधा तृषाकी ऐसी दाह उपजै है, जैसैं ताते भांडमें पड्या जो जलका बिंदु सो तत्काल सूकि जाय तैसैं आहार पाणी ले सो तत्काल सूकि जाय है। बहुरि उठी है क्षुधावेदना जिनकै तौऊ भिक्षाका अलाभ होय तौ ताकूं लाभतैंभी अधिक मानैं है, जो, हमारे यहभी अनशनतप भया सो बडा आनंद भया ऐसैं माने है। क्षुधाका चिंतवन नाहीं है। धन्य है वे मुनि, जिनकैं ऐसे उज्वलपरिणाम हैं। ऐसे मुनिकै क्षुधा जीतना सत्यार्थ है ॥ १ ॥

बहुरि ऐसे मुनिराजकै तृषाका परीषह जीतना होय है, जो जलविषैं स्नान अवगाहन छिड-

करनेके त्यागी हैं। बहुरि पक्षीकीज्यों अनियत है बैठना बसना जिनकै। बहुरि पवनकरि वनके बसनेकरि रुक्ष सचिक्कण प्रकृतिविरुद्ध आहारके निमित्तकरि ग्रीष्मके आतापकरि पित्तज्वर अनशन-आदि तपकरि इनकारणनिकरि उपजी जो शरीर इन्द्रियनिविषैं दाह पीडा तौऊ जल पीवनेकी इच्छा-प्रति नाहीं आदऱ्या है, ताका प्रतीकार इलाज ज्यां। तृषारूपी अग्निकी ज्वालाकूं धैर्यरूपी नवा घडाविषैं भऱ्या जो शीतल सुगंध समाधिरूपी जल ताकरि शमन करै है बुझावै है। ऐसैं मुनिराज-निकैं तृषाका सहना सराहिये है ॥ २ ॥

शीतके कारण निकट होतें तिसका इलाजकी वांछारहित संयम पालना, सो शीतसहन है। कैसे हैं मुनि? छोड्या है वस्त्रआदि वोढना पहरना ज्यां। बहुरि पंखीकीज्यों नाहीं निश्चय कीया है वसनेका घर ज्यां। वृक्षके मूल तथा चौडे मार्गमें शिलातल आदिविषैं पालाका पडना शीतल पवनका चलना आदि होतें तिसका इलाजकी प्राप्ति नाहीं चाहै हैं। पहलैं गृहस्थपनेमें शीतके उपचारके कारण भोगे थे तिनकूं यादि नाहीं करै हैं। ज्ञानभावनारूपी जो गर्भागार कहिये वीचका शाल परोवरादिक ताविषैं वसते तिष्ठै हैं। तिनके शीतवेदनाका सहना सराहिये ॥ ३ ॥

दाहके इलाजकी वांछारहित चारित्र पालना उष्णसहन है। कैसे हैं मुनि? नाहीं है पवन

जहां, बहुरि नाहीं है जल जहां, बहुरि सूर्यके किरणनिकरि पडे हैं पान जिनके ऐसें छायारहित भये हैं वृक्ष जहां, ऐसी जो वनी ताके मध्य अपनी इच्छाकरि जहांतहां तिष्ठै हैं। बहुरि अनशन आदि तप तेही भये शरीरके अभ्यंतरकारण तिनकरि उपज्या है दाह जिनकै, बहुरि दावानलकी कठोर ताती पवन ताकरि उपज्या है तलमें तथा तालुवामें शोष जिनकै, तिसका इलाजके कारण पहलैं घणेही भोगे थे तिनकूं यादि नाहीं करते प्राणीनिकी पीडाके परिहारविषैं लगाया है चित्त जिनूनें, तिनकै चारित्र है लक्षण जाका ऐसा उष्णका सहना कहिये है ॥ ४ ॥

दंशमशकादिककी बाधातैं तिनका इलाज करना, संयमतैं परिणाम चिगै नाहीं, सो दंशमशकसहन है। इहां दंशमशकका ग्रहण उपलक्षणस्वरूप है। जैसें काहूनें कह्या कागतैं घृतकी रक्षा करे। तहां तिस घृतके बिगाडनेवालेनितै सर्वहीतैं रक्षा करावै है, ऐसा जानना। एक काकाहीका अर्थ न समझना। तैसैं इहां दंशमशकके ग्रहणतैं माखी कोकिल सूवा वाल्ह कीडी पीपल्या उटकण जूं कीडी कीडा वीछू आदिभी ग्रहण करने। इनकी करी बाधा ताकूं सहै हैं। तिनकी बाधाकरि मन वचन कायविषैं विकार न ल्यावै हैं। मोक्षकी प्राप्तिका जो संकल्प तिसमात्रही है शरीरनपरि आवरण जिनकै ऐसे मुनि तिस दंशमशककी वेदना सहै हैं। तिनकै दंशमशककी परीषहसहन

कहिये ॥ याका ऐसा विशेष, जो, दंशमशक आदि जीव बाधा करै, ताके विद्या मंत्र औषधि होय हैं, सो मुनिनिके तिसकी वांछा नाहीं हो है। जो मरण होय तौभी स्वरूपहीमें लीन होय हैं। इहां दृष्टांत ऐसा, जो, जैसें बलवान हस्ती शत्रुकी सेनाका संहारप्रति उद्यमी होय तब मदकरि अंधा हूवा संता शत्रुके प्रेरे जे अनेकशस्त्र तिनके घातकरिभी उलटा न मुडै निर्विघ्न जीतिकाही ग्रहण करै। तैसें कर्मकी सेनाकूं जीतनेकूं उद्यमी भये मुनि ते ऐसें परीषहतें उलटे न मुडै हैं। स्वरूप-साधनतें परिणाम न चिगै हैं ॥ ५ ॥

जातरूप धरनेकूं नाग्न्य कहिये। ऐसा कलंकरहित नग्नपणा धारै हैं, जो अन्यकरि धार्‍या न जाय। बहुरि नग्न रहा कोईही न चाहै है। कैसा है नग्नपणा? काहूपै किछु याचन परिग्रहकी रक्षा जीवनिकी हिंसा आदि दोषनिकरि रहित है। बहुरि निर्ग्रंथपणातें मोक्षकी प्राप्तिका अद्वैतसाधन है। यामें किछु बाधा नाहीं है। ऐसें नग्नपणाकूं धारते मुनिनिकै स्त्रीनिरूपकूं देखिकरि मनविषै किछुभी विकार नाहीं उपजै है। जातें ताकूं अत्यंत अशुचि दुर्गंध निंद्यरूप विचारै है। एते दिन ब्रह्मचर्यकी भावना करें हैं। तामें किंचितभी दूषण न लगावै हैं। अखंड ब्रह्मचर्य पालै हैं। ऐसें अचेलव्रत-धारणकूं नाग्न्यपरीषहका सहन कहिये ॥

याका विशेष ऐसा, जो, अन्यमती केई मनके विकार मेटनेकूं असमर्थ हैं। तिस विकारपूर्वक बाह्यके विकार छिपावनेकूं कोपीन वस्त्र आदिकरि गुह्यप्रदेश ढाके हैं, तिनके कर्मका संवर न होय है ॥ ६ ॥

संयमी मुनि इन्द्रियनिके विषयके संबंधविषैं उत्साहरहित हैं। गीत नृत्य वादित्र आदिरहित जे शून्य ठिकाणे गुफा देवमंदिर वृक्षनिके कोटर शिलाआदिविषैं स्वाध्यायध्यानकी भावनाविषैंही मन लगावे हैं। बहुरि देखे सुने भोगये जे रतिके कारण तिनका यादि करणा तिनकी कथा सुनना ऐसैं कामके बाण तिनकरि नाहीं भेदकूं प्राप्त भया है हृदय जिनका, प्राणीनिविषैं सदा दयासहित वर्तें हैं, ऐसे मुनिकैं अरतिपरीषहका जीतना कहिये। क्षुधाआदिकी बाधा, संयमकी रक्षा, इन्द्रियनिका प्रबलपणा, व्रतका पालनेका भारिकरि गौरवपणा, सर्वकाल प्रमादरहित रहना, देशकी भाषासिवाय अन्यदेशकी भाषाका न जानना, विषम प्रतिकूल चंचलप्राणी जामें पाईये ऐसा दुर्गम भयानक मार्गविषैं विहार करना इत्यादि अरति उपजनेके कारण हैं। सो तिनकेविषैं धैर्यके बलतैं अरति जिनकै नाहीं उपजै है, विषयकूं विषके मिले आहारतुल्य जाणैं हैं, तिनकै अरतिपरीषहका जीतना है। एक संयमहीमें जिनकै रति है। इहां कोई कहै, जो, ए सर्वही परिषह अरतिके कारण हैं, तातैं अरतिका न्यारा ग्रहण अनर्थक है। ताका समाधान, जो, क्षुधाआदिकी वेदना विनाभी

मोहके उदयतें चित्त व्याकुल होय है, संयमके विषैं अरति उपजि आवै है, तातैं जुदा गिणिये ॥७॥

सुन्दरस्त्रीका रूपके दर्शन स्पर्शन आदिका अभाव स्त्रीपरीषहका जीतना है। तहां एकांत बाग उद्यान आदिविषैं धन यौवन मद विभ्रम मदिरापानकरि प्रमत्त जे स्त्री आय बाधा करै तौऊ काछिवेकीज्यों संवररूप संकोच्या है इन्द्रियमनका विकार जिननें, बहुरि ललित मंदहास्य कोमल मीठे कामचेष्टाके वचन विलाससहित देखना हसना मंदकरि मंथर गमन करना तेही भये कामके बाण तिनका व्यापारकूं विफल करनेवाला है चारित्र जिनकै ऐसे मुनिकै स्त्रीबाधाका सहना जानना । इहां विशेष जो, अन्यमतीनिकरि कल्पे जे ब्रह्मा आदि देवता ते तिलोत्तमा अप्सरा आदिका रूप देखनेकरि विकारी भये स्त्रीपरीषहरूप पंकतैं आपकूं काढिवेकूं असमर्थ भये अरु ए महामुनि आर्तरौद्रध्यानका फल संसारसमुद्रके कष्टमें गिरनेवाला निश्चयकरि अपने स्वरूपके ध्यान करते ऐसी परीषहतें न चिगे ते धन्य हैं ॥ ८ ॥

गमन करनेविषैं दोष न लगावै सो चर्यापरीषह है। कैसे हैं मुनि? घणे कालतें धस्या है अभ्यासरूप कीया है गुरुनिके कुलविषैं ब्रह्मचर्य जिनि, बहुरि जान्या है बंध मोक्ष पदार्थनिका यथार्थस्वरूप जिनि, बहुरि संयमके आयतन जे तीर्थंकर वडे मुनि तथा तिनकरि पवित्र भये ऐसे

निर्वाणक्षेत्र आदि देश तिनकी भक्तिके अर्थि कीया है देशांतरगमन जिनि, वहुरि गुरुनिके आज्ञाकारी हैं, वहुरि पवनज्यों काहूंसौं संग न करै हैं–निर्लेप हैं, वहुरि वहुतवार कीया जो अनशन अवमोदर्य वृत्तिपरिसंख्यान रसपरित्याग आदि तप ताकी बाधा ताकरि क्षीण भया है काय जिनका, वहुरि देशकालके प्रमाण मार्गविषैं गमन ऐसैं करैं हैं, जातैं संयम विराध्या न जाय, वहुरि त्यागे हैं पगनिके जोड़ी आदि आवरण जिनके, कठोर कांकरेकी भूमि तथा कंटक आदिकरि वीधे गये जे पाद तिनका भया है खेद जिनकैं, तौऊ पूर्व गृहस्थपणोमें पालकी घोडे रथ आदि चढते थे तिनकूं यादि नाहीं करै हैं, वहुरि कालकी काल आवश्यकक्रियाकी हानिकूं न करैं हैं ऐसे मुनिके चर्यापरीषहका सहन कहिये ॥ इहां विशेष जो, अनेकदेशनिविषैं गमन करै हैं तिन देशनिकी भाषा तथा क्रिया व्यवहारकूं जानते संते छोटे गाममें तौ एकरात्रि वसैं हैं, बडे नगरमें पंचरात्रि वसैं हैं, इह उत्कृष्ट वसना जानूं ॥ ९ ॥

आप संकल्पमें कीया जो आसन तिसतैं चलै नाहीं, सो निषद्यापरीषहका जीतना है। तहां स्मशान सूनां ठिकाणा पर्वतकी गुफा वृक्षनिके तलें वेलिनका मंडप इत्यादिक जिनमें पूर्वैं अभ्यास न कीया कदे बैठे नाहीं ऐसे स्थानक तिष्ठै हैं। वहुरि सूर्यका प्रकाश तथा अपनी इंद्रियका

ज्ञान ताकरि परीक्षारूप कीया प्रदेश क्षेत्र ताविषैं करी है नियमकी क्रिया ज्यां, कालका नियमकरि आसन मांडि बैठे हैं। तहां सिंह वघेरा आदिका भयानक शब्द सुननेकरि नाहीं कीया है भय ज्यां, देव मनुष्य पशु अचेतनपदार्थनिकरि कीया जो चारिप्रकार उपसर्ग तिनकरि नाहीं तज्या है मोक्षमार्गका साधन ज्यां, वीरासन उत्कुटिकासन इत्यादि जे कठिन आसन तिनकरि अविचालित है काय जिनका, ऐसैं आसनकी बाधाका सहना, सो निषद्यापरिषह है ॥ याका विशेष जो, आसनका नियम करि बैठे तब उपसर्ग आवे तौ तिसका मेटनेका उपाय विद्या मंत्र आप जाने हैं-मेटनेकूं समर्थ है, तौऊ ताका उपाय न करे हैं। बहुरि पूर्वे कोमल गद्दीआदि विछाय बैठे थे ताकूं यादि न करे हैं। प्राणीनिकी रक्षाका अभिप्राय है तथा अपने स्वरूपके ध्यानमें लगि रहे हैं। तातैं परीषहकी वेदना नाहीं है ॥ १० ॥

आगमकथित शयनतैं न चिगै सो शयनपरिषहका सहन है। तहां वे मुनि ध्यानका गमनका खेदकरि मुहूर्तमात्र निद्रा ले हैं। सो कठोर नीची ऊंची बहुत कांकरी ठीकरिनिकरि भरी भूमिविषैं तथा सकडी जहां शरीर स्वच्छंद पसरै नाहीं ऐसी भूमिविषैं तथा जहां अतिशीतता अतिउष्णता होय ऐसी भूमिप्रदेशविषैं सोहै हैं। एकपार्श्व कीये तथा सूधे सोवै। सोवै सो

प्राणीकूं बाधा होनेकी शंकाकरि जैसेंके तैसें सूते रहै। अंगकूं चलाचल न करै कलोट न ले। जैसें काठ पड्या होय तैसें पडे रहै। तथा जैसें मृतक पड्या होय तैसें निश्चल रहै। ज्ञानभावनाविषैं लगाया है चित्त ज्यां, व्यंतरआदिके उपसर्ग होतैंभी नहीं चलाया है शरीर ज्यां, जेतैं काल नियम कीया तेतैं काल जेती बाधा आवै तेती सहै हैं, सो शय्यापरिषहका सहन है ॥

याका विशेष जो, भयानक प्रदेशविषैं शयन करै, तहां ऐसा विचार न उपजै, जो, यह प्रदेश नाहर वघेरा चीता आदि दुष्टप्राणीनिका निवास है, इहांतैं शीघ्र निकलना भला है, रात्रि बहुत बडी है, कदि पूरी होयगी ऐसें विषाद न करै हैं। सुखकी प्राप्ति नाहीं वांछे है। पहलें कोमलशय्यापरि सोवते थे ताकूं यादि न करै हैं ॥ ११ ॥

अनिष्ट दुर्वचन सहना, सो आक्रोशपरीषह है। मिथ्यादृष्टीनिके क्रोधके भरे कठोर बाधाके करनहारे निंदा अपमानके झूठे वचन सुनैं हैं, "जो ऐसें दुर्वचन हैं तिनकूं सुनतेही क्रोधरूप अग्निकी ज्वाला वधि जाय है ऐसें हैं" तौऊ तिन वचननिकूं झूठे मानै हैं। तत्काल ताका इलाज करनेकूं समर्थ हैं, जो आप क्रूरदृष्टीकरिभी ताकूं देखैं तौ पैला भस्म होय जाय तौऊ अपना पापकर्मके उदयहीकूं विचारै तिनकूं सुनिकरि तपश्चरणकी भावनाहीकेविषैं तत्पर हैं, कषायका अंश-

मात्रकूंभी अपने हृदयविषैं अवकाश न दे हैं। ऐसैं आक्रोशपरीषहका जीतना होय है ॥ १२ ॥

मारनेवालातैं क्रोध न करना, सो वधपरिषहका सहन है। तहां तीखण छुरी मूशल मुद्गर आदि शस्त्रनिके घातकरि ताडना पीडना आदितैं वध्या है शरीर जिनका, बहुरि घात करनेवालेविषैं किंचिन्मात्रभी विकारपरिणाम नाहीं करै है, विचारै हैं "जो यह मेरे पूर्वकर्मका फल है ए देनेवाला गरीब रंक कहा करै? यह शरीर जलके बुदबुदेकीज्यों विनाशिकस्वभाव है, कष्टका कारण है, ताकूं ए बाधा करै है, मेरे सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्रकूं तौ कोई घात सकै नाहीं" ऐसा विचार करते रहै हैं। कुहाडी बसोलाकी घात अर चंदनका लेपन दोऊनिकूं समान दीखै हैं। तिनके वधपरीषहका सहना मानिये हैं। वे महामुनि ग्राम उद्यान वनी नगरनिविषैं रात्रिदिन एकाकी नग्न रहै हैं। तहां चोर राक्षस म्लेंछ भील वधिक पूर्वजन्मके वैरी परमती भेषी इत्यादि क्रोधके वशि भये घात आदि करै हैं। तौऊ तिनके क्षमाही करै हैं। तिनके वधपरीषहसहना सत्यार्थ है ॥१३॥

प्राणके नाश होतैंभी आहारआदिविषैं दीनवचनकरि याचना नाही करै, सो याचनापरिषहका सहना है॥ तहां बाह्य आभ्यंतरतपका आचरणविषैं तौ तत्पर रहैं, बहुरि तपकी भावनाकरि साररहित भया है देह जिनका, तीव्र सूर्यके तापकरि जैसें वृक्ष सूकि जाय छायातैं रहित होय जाय

तैसें जिनका शरीर कांतिरहित भया है, चामडी हाड नसा जाल मात्र तनु भया है, मांस सूकि गया है, बहुत कहा कहे? प्राणनिका नाशभी होय तौ आहार वसतिका औषधि आदि दीन-वचन मुखका विलखावना अंगकी संज्ञा आदिकरि याचते नाहीं हैं, बहुरि भिक्षाके कालविषैंभी लव आहार लेनेकूं जाय तब बीजलीके चमत्कारकीज्यौं तथा रत्नका व्यापारी रत्न दिखाय दे तैसें दर्शन दे फिरि जाय हैं ताहूकूं दीनता माने, अदीनता तौ ऐसैं माने है जैसैं कोई नमस्कार करे ताकूं अपना हाथ पसारी आशीष दे सो अदीनता है, ऐसे मुनिके याचनापरिषहका सहना, निश्चय कीजिये। अवार कालविषैं दीन अनाथ पाखंडी भेखी बहुत भये हैं। कैसे हैं? नाहीं जान्या है आत्माका तथा मोक्षमार्गका स्वरूप जानैं, याचनाकरि उदरपूरण करै हैं, अर कहे हैं हम सुमार्गमें प्रवर्तें हैं। सो यह कालदोष है ॥ १४ ॥

भोजनका अलाभविषैं लाभकीज्यौं संतुष्ट रहै, सो अलाभपरीषहका जीतना है। तहां कैसे हैं मुनि? पवनकीज्यौं अनेकदेशनिमें विचरनहारे हैं। बहुरि अंगीकार कीया है एककालविषैं भोजन ज्यां। बहुरि मौनी हैं मुखतें कछू कहैं नाहीं गूंगेसमान विचरे हैं। बहुरि आहारकूं नगरमें जाय तब शरीरके दर्शनमात्र दिखाय फिरि आवैं हैं। बहुरि हस्तपुटमात्रही है पात्र जिनके,

अन्य किछू पात्र राखै नाहीं हैं। बहुरि बहुत दिनमें तथा बहुत घरनिमें आहारकूं न पायकरि संक्लेशरहित है चित्त जिनका। बहुरि दातारका विशेषकी परीक्षाविषैं जिनके उत्साह नाहीं है "जो, फलाणाके भोजन अवश्य मिलैगा तहां चलिये" ऐसा विचार नाहीं करै हैं। बहुरि आहारका अलाभ होय तब ऐसा मानैं हैं हमारे तप भया बडा आनंद भया ऐसैं संतुष्ट हैं। एकग्राममें अलाभ होय तौ दूसरे ग्राम जाय नाहीं लेवै हैं। ऐसे मुनिराजके अलाभपरीषहका जीतना निश्चय कीजिये ॥ १५ ॥

नाना व्याधि रोग आवै तिनका इलाज न करै, सो रोगपरीषहसहन है। तहां कैसे हैं मुनि? शरीरविषैं निःस्पृह हैं। ऐसा विचारे हैं, जो, यह शरीर सर्व अशुचि वस्तुका तौ स्थानक है, अनित्य है, राख्या रहै नाहीं, तातैं याका कछू संस्कार संवारना आदि नाहीं करै हैं, बहुरि अपने सम्यग्दर्शनआदि गुणरूप रत्न यामें संचय हैं तिनकूं वधावने हैं, तिनकी रक्षा करनी है, तिनका यामें धारण होय है, ऐसैं याकूं तिन क्रियाका कारण जाणि याकी स्थितिका विधान जो आहार आदि देना, सो करै हैं। जैसें व्यापारी गाडेकूं अक्षम्रक्षण कहिये वांग करि चलावै तथा गूमडा होय ताके किछु लेप न करै है, तैसैं या आहार लेनेकरि अपना बहु उपकार जाणि योग्य

आहार ले हैं। बहुरि विरुद्ध आहार पाणी मिलै ताके सेवनेकरि उपजे हैं वात आदि विकारके रोग जिनके ऐसे एककाल अनेक सैंकडा रोगनिका कोप होतैंभी तिनके वशवर्ती नाहीं होय हैं। जिनकै जल्लोषधि प्राप्ति आदि अनेकऋद्धि तपके विशेषतैं प्राप्त भई हैं तौऊ शरीरतैं निःस्पृह हैं। यातैं कछु इलाज नाहीं करै हैं। ऐसैं माने हैं, जो, पूर्वपापकर्मका उदय भुगतैंही देना उतरेगा, ऐसैं मुनिराजके रोगपरीषहका सहना जानना ॥ १६ ॥

तृणआदिके निमित्ततैं वेदना होतैं मन ताविषैं लगावै नाहीं, सो तृणस्पर्शपरीषहका जीतना है। इहां तृणको ग्रहण उपलक्षणरूप है, जो कोई शरीरमें चुभिकरि वेदना उपजावै सो लेणा। यातैं सुका तृण कठोर कांकरी कांटा तीखा सूकी मांटी सूल आदिकरि चुभनेतैं पगनिविषैं वेदना होतैं तिसविषैं चित्त नाहीं लगावै हैं। कठोर तृणादिसहित भूमिऊपर चलना सोवना बैठना इन क्रियानिविषैं प्राणीनिकी पीडांका परिहारविषैं सदा प्रमादरहित है चित्त जिनका ऐसे मुनिकै तृणस्पर्शकी बाधाका परीषहका जीतना जानना ॥ १७ ॥

अपना शरीरका मलका दूरि करनेविषैं अर परके मल देखि अपना मन मैला करनेविषैं चित्त न लगावैं, सो मलपरिषहका जीतना है। तहां कैसे हैं मुनि? जलके जीवनिकी पीडाका

परिहारके अर्थि आयुके अंतपर्यंत अस्नानव्रतके धारी हैं। बहुरि तीव्रसूर्यकी किरणनिकरि भया जो ताप ताकरि उपजे जे पसेव तिनकरि आला भया शरीर ताविषैं पवनकरि उड्या जो रज सो जिनकैं आय लग्या है। बहुरि पावखाज दाधकरि उपजी जो खाजी ताके होतैं खुजावने मर्दन करना घसना आदि क्रियाकरि रहित हैं मूर्ति जिनकी। बहुरि अपने लग्या जो मल ताका दूरि करनेविषैं तथा परके मल देखि मन मलिन करनेविषैं नाहीं लगाया है चित्त ज्यां। सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप जलके प्रक्षालनेकरि कर्मरूप मलके धोवनेके अर्थि सदा उद्यमरूप है बुद्धि जिनकी। ऐसे मुनिके मलपीडाका सहन कहिये। इहां कोई कहै, केशनिका लोंच करनेविषैं तथा तिनकी संस्कार न करनेतें बडा खेद होय है, ताकूं सहै हैं, सो यहभी परीषह क्यों न गिण्या? ताका समाधान, जो, यह परिषह मलसामान्यके ग्रहणमें गर्भित है तातैं जुदा न गिण्या हैं ॥ १८ ॥

मान अपमानविषैं समबुद्धि होय, सो सत्कारपुरस्कारपरीषहका सहन है। तहां पूजा प्रशंसास्वरूप तौ सत्कार कहिये। अर महान् क्रियाके आरंभविषैं अग्रेसर करना बुलावना सो पुरस्कार कहिये। सो मुनिनिका सत्कार पुरस्कार कोई न करै तौ ऐसा न विचारै जो मैं बहुतकालतैं

ब्रह्मचर्य पालूं हूं, बडा तपस्वी हूं, अपना परका मतका निर्णय करनहारा हूं, घणीवार परवादीनिकूं जीतनहारा हूं, मेरी भक्ति वंदना आदर ऊंचा आसन देना आदि कोई न करै है। इनतैं तौ मिथ्यादृष्टीही भले हैं, बडे भक्तिवान् हैं; जो अपना गुरु किछुभी नहीं जानता होय अज्ञानी होय ताकूंभी सर्वज्ञतुल्य मानि तिनका सन्मानकरि अपने मतका प्रभावना करै हैं। बहुरि सुनिये है, जो, पूर्वकालमें व्यंतरआदिक बडे तपस्वीनिका पूजा करै थे सो यह किछु मिथ्याही दीखै है, सो यह सांची होय तौ हमसारिखेनिका अबार पूजाआदि क्यों न करैं? ऐसा खोटा चिंतवन नाहीं करै है। ऐसे मुनिके सत्कारपुरस्कार परीषहका जीतना जाणिये ॥ १९ ॥

प्रज्ञा कहिये विज्ञान ताका मद न करना सो प्रज्ञापरीषहका जीतना है। तहां अंगपूर्वप्रकीर्णकके जाननेविषैं तौ प्रवीण हैं, बहुरि शब्द न्याय अध्यात्मशास्त्रनिविषैं निपुण हैं, ऐसा होय तौऊ मुनि आप ऐसा न विचारै, जो, मेरे आगैं अन्य ऐसा भासै है "जैसैं सूर्यके प्रकाशकरि तिरस्कार कीये जे आग्याकीट प्रकाशरहित दीखै" ऐसा विज्ञानका मद न करै, सो प्रज्ञापरीषहका जीतना कहिये ॥ २० ॥

अज्ञानपणेकरि अवज्ञातैं ज्ञानके अभिलापरूप परीषहका जीतना सो अज्ञानपरीषहका सहन

है। तहां मुनिकूं दुष्ट जन कहैं, यह मुनि अज्ञानी है, पशुसमान है, किछु जानै नाहीं इत्यादिक निन्दाके वचन कहै, ताकूं सहै है। जो परमतपका आचरण करै है निरंतर प्रमादरहित वर्तै है तौऊ ऐसा न विचारै है, जो 'मेरे अबताईभी ज्ञानका अतिशय नाही उपज्या," ऐसा अभिप्राय नाहीं राखै है, ताकै अज्ञानपरीषहका सहना जानना ॥ २१ ॥

दीक्षा लेना अनर्थक है ऐसी भावना न उपजै सो दर्शनपरीषहका सहन है। तहां कैसा है मुनि? परमवैराग्यभावनाकरि शुद्ध है मन जाका, बहुरि जाना है सकलपदार्थका यथार्थस्वरूप जानैं, बहुरि अरहंत अर अरहंतके प्रतिमाआदि तथा साधु तथा धर्म इनका पूजक है, बहुरि बहुतकालतैं मुनि भया है ऐसा है तौऊ ऐसा न विचारै है, जो "मेरे अबारताई ज्ञानका अतिशय उपज्या नाहीं, पूर्वें सुनिये है, जो, महान् उपवासादिकके करनेवालेनिकै प्रातिहार्यके विशेष उपजे हैं, सो यह कथनी तौ प्रलापमात्र झूंठी है, यह दीक्षा अनर्थक है, व्रतका धारण विफल है" इत्यादिक नाहीं विचारै है। जानैं मुनिकै दर्शनकी विशुद्धता योग है। ऐसैं अदर्शनपरीषहका सहन जानना ॥ २२ ॥

ऐसैं बाईस परीषह हैं। परीषह आये क्लेशपरिणाम न करैं। तातैं रागादि परिणामतैं होय

था जो आश्रव, ताके निरोधमें महान् संवर होय है ॥ आगें पूछे हैं, जो, ए परीषह जे मुनि संसारके तरनेकूं उद्यमी भये हैं तिनकूं सर्वही अविशेषकरि आवै हैं, कि किछु विशेष है? तहां कहै हैं, जो, ए क्षुधाआदि परीषह कहे, ते अन्यचारित्रविषै तौ भेदरूप आवै हैं अर सूक्ष्मसांपराय अर छद्मस्थ वीतरागके तौ नियमकरि जेते होय हैं सो कहै हैं—

॥ सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥ १० ॥

याका अर्थ— सूक्ष्मसांपराय संयमीके अर छद्मस्थ वीतराग संयमीके चौदह परीषह संभवै हैं। क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, दंशमशक, चर्या, शय्या, वध, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, प्रज्ञा, अज्ञान ए चौदह परीषह हैं। सूत्रमें चतुर्दशवचन है तातैं अन्यपरीषहका अभाव जानना। इहां प्रश्न, जो, छद्मस्थवीतरागके तौ मोहनीयकर्मका अभाव भया, तातैं तिसके उदयसंबंधी नाग्न्य अरति, स्त्री, निषद्या, आक्रोश, याचना, सत्कार, पुरस्कार, अदर्शन ए आठ परीषह नाहीं होय हैं, तातैं इहां तौ चौदहका नियम युक्त है, बहुरि सूक्ष्मसांपरायकेविषैं मोहका उदयका सद्भाव है, सो चौदहका नियम कैसैं बणैं? ताका समाधान, जो, तहां केवल लोभसंज्वलनकषायका उदय है, सो अतिसूक्ष्म है, तातैं यहभी छद्मस्थवीतरागसारिखाही है, तातैं तहांभी चौदहका

नियम कह्या है। फेरि तर्क करै हैं, जो, इहां मोहका उदयका सहाय नाहीं, तथा मंद उदय है, तातें क्षुधाआदिकी वेदना नाहीं, परीषह तौ वेदनाकूं सहै। ताकूं कहिये, तातैं तहां परीषहका नामही युक्त नाहीं। तहां कहै हैं, जो, ऐसा नाहीं है। इहां शक्तिमात्रकी विवक्षा है। जैसैं सर्वार्थसिद्धिके देवनिकै सातमी पृथिवीताईं गमन करनेकी शक्ति है ते कबहूं गमन करै नाहीं, तौऊ तिनके शक्तिअपेक्षा कहिये। तैसैं इहांभी जानना। इह उपचारकरि कह्या है॥

आगें पूछै है कि, जो, शरीरवान् आत्माविषैं परीषह आवनेका नियमवचन कीजिये है, तौ भगवान् भये तिनकूं केवलज्ञान उपज्या अर अघातिकर्म च्यारिका फल भोगवै है तिनकै केते परीषह कहिये? तहां सूत्र कहै हैं—

॥ एकादश जिने ॥ ११ ॥

याका अर्थ— जिन कहिये केवलज्ञानी तिनविषैं ग्यारह परीषहका सद्भाव है। तहां नष्ट भया है घातिकर्मका चतुष्टय जाके ऐसा जो जिन केवलज्ञानी भगवान् ताके वेदनीयकर्मके उदयके सद्भावतैं तिसके आश्रयतैं भये ऐसे ग्यारह परीषह हैं। इहां तर्क, जो, मोहनीयकर्मके सहायके अभावतैं क्षुधाआदिकी वेदनाका तौ अभाव है। तहां परीषहका कहना युक्त नाहीं। ताका

समाधान, जो, यह तौ सत्य है। परंतु वेदनाका अभाव होतैंभी द्रव्यकर्मके सद्भावकी अपेक्षाकरि परीषहका उपचार कीजिये है। जैसैं समस्तज्ञानावरणकर्मका नाश भये युगपत् सर्वपदार्थका जनावनेवाला जो केवलज्ञानरूप अतिशय होतैं चिंताका निरोधका अभाव होतैंभी ध्यानका फल जो कर्मका नाश होना तिसकी अपेक्षाकरि ध्यानका उपचार कीजिये है; तैसैं परीषहकाभी उपचार जानना। अथवा इस सूत्रका अर्थ ऐसाभी कीया है, "एकादशजिने न सन्ति" ऐसा वाक्यशेष कहिये सूत्रमें चाहिये ते अक्षर लगावने। जातैं सूत्र हैं ते सोपस्कार कहिये अन्य उपकार करनेवाले अक्षरनिकी अपेक्षा करै हैं। तातैं सूत्रमें वाक्यशेष कल्पना योग्य है। बहुरि वाक्य है सो वक्ताके आधीन है, ऐसा मानिये है। तातैं इहां निषेधकूं न संति ऐसा वाक्यशेष लेना। जातैं इहां मोहके उदयका सहायके अभावतैं क्षुधाआदिकी वेदनाका अभाव है, तातैं ए परीषहभी नाहीं हैं ऐसाभी अर्थ जानना ॥

ए ग्यारह परीषहके नाम हैं। क्षुधा, तृष्णा, शीत, उष्ण, दंश, मशक, चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श, मल ऐसैं ग्यारह हैं। इहां दृष्टांत ऐसाभी जानना, जैसैं विषद्रव्य है सो मंत्र औषधिके बलतैं ताकी शक्ति मारनेकी क्षीण होय जाय तब ताकूं कोई खाय तौ मरै नाहीं, तैसैं

ध्यानरूपी अग्निकरि घातिकर्मरूप ईंधनकूं ज्यां बाल्या, तिनके अनंत निर्बाध ज्ञानादिचतुष्टय प्रगट भया सो अंतरायके प्रभावतें निरंतर संचयरूप शुभपुद्गल होय हैं, सो वेदनीयकर्म है। सो सहायविना क्षीणबल हूवा संता अपना प्रयोजन उपजावनेकूं समर्थ नाहीं है, तैसें क्षुधाआदि वेदनारूप परीषहनिका अभावही जानना ॥

आगें पूछे है, जो, सूक्ष्मसांपरायआदिविषैं भेदरूप केई परीषह कहे तौ ए समस्तपरीषह कौनविषैं हैं? ऐसें पूछे सूत्र कहे हैं—

॥ बादरसाम्पराये सर्वे ॥ १२ ॥

याका अर्थ— बादरसांपराय कहिये प्रमत्ततें लगाय अनिवृत्तिबादरसांपराय जो नवमां गुणस्थान तहांताईं सर्व परीषह हैं। तहां सांपराय तौ कषायकूं कहिये। बहुरि बादरकषाय जहां होय सो बादरसांपराय है। इहां गुणस्थानविशेषका ग्रहण तौ न करना, प्रयोजनमात्रका ग्रहण करना तातैं प्रमत्तआदि संयमीका ग्रहण करना, तिनविषैं कषायनिका आशय क्षीण न भया। तातैं सर्व परीषह संभवे हैं। इहां कोई पूछै, जो, कैसें चारित्रमें सर्व परीषह संभवे हैं? तहां कहिये है, सामायिक छेदोपस्थापन परिहारविशुद्धि संयमविषैं कोई एक संयमविषैं सर्वपरीषहनिका संभव है ॥

आगें शिष्य कहै हैं, जो, परीषहनिका स्थानविशेषका तौ नियम कह्या, सो जान्या। परंतु कैसैं कर्मकी प्रकृतिका कैसे परीषह कार्य हैं? यह न जान्या। ऐसैं पूछे सूत्र कहै हैं—

॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥

याका अर्थ— ज्ञानावरणकर्मका उदय होतैं प्रज्ञा अज्ञान ए दोय परीषह होय हैं। इहां तर्क, जो, यह अयुक्त है। जातैं ज्ञानावरणके उदय होतैं अज्ञानपरीषह तौ होय अर प्रज्ञापरीषह तौ ज्ञानावरणके अभाव होतैं होय है। सो दोऊ परीषह ज्ञानावरणके उदयतैं कहना अयुक्त है। ताका समाधान, जो, यह प्रज्ञा है सो ज्ञानावरणके क्षयोपशमतैं होय है। सो परकै ज्ञानावरणका उदय होतैं विज्ञानकला नाहीं होय तहां जाकै प्रज्ञा होय ताकै मद उपजावै है। अर सकल आवरणका क्षय भये मद नाहीं होय है। तातैं ज्ञानावरणके उदयतैं कहना बनै है। इहां कोई कहै है, मद तौ अहंकार है सो मोहके उदयहीतैं होय है। ताका समाधान, जो, यह परीषह चारित्रवानकै ज्ञानावरणके उदयकी शक्तिअपेक्षा कही है। तातैं मोहके उदयमैं अंतर्भाव याका नाहीं, ज्ञानावरणहीकी मुख्यता लिये है॥ आगें अन्य दोय कर्मके निमित्ततैं भये परीषहकूं कहै हैं—

॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥ १४ ॥

याका अर्थ— दर्शनमोहके होतैं तौ अदर्शनपरीषह होय है। अर अंतरायकर्मके होतैं अलाभपरीषह होय है। इहां यथासंख्य संबंध करना। दर्शनमोहके होतैं अदर्शन परीषह, लाभान्तरायके होतैं अलाभपरीषह ऐसैं॥ आगे पूछै है कि, आदिका मोहनीयका भेदतैं एक परीषह कह्या, वहुरि दूजा मोहनीयके भेदतैं केते परीषह होय हैं? ऐसैं पूछै सूत्र कहै हैं—

॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः ॥ १५ ॥

याका अर्थ— चारित्रमोहके होतैं नाग्न्य, अरति, स्त्री, निषद्या, आक्रोश, याचना, सत्कारपुरस्कार ए सात परीषह हो हैं। इहां पूछै है कि, पुरुषवेदके उदयआदिके निमित्ततैं नाग्न्यादिपरीषह होय हैं। इहां सो इनकै तौ मोहका निमित्तपणा हमनें जाण्यां, परंतु निषद्यापरीषह तौ आसनका परीषह होय है, याकै मोहका उदयका निमित्त कैसैं? ताका समाधान, जो, आसनविषैं प्राणीनिका परिहार प्रयोजन है। सो प्राणीनिकी पीडाके परिणाम मोहके उदयतैं होय है। तातैं आसनसैं चिगना मोहके उदयके निमित्ततैं होय है। तातैं याकै उदयकी मुख्यता है॥ आगें अवशेष परीषहका निमित्त कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ वेदनीये शेषाः ॥ १६ ॥

याका अर्थ— कहे जे ज्ञानावरण आदिके निमित्ततैं परीषह तिनतैं अवशेष रहे ते वेदनीयके उदय होतैं होय हैं। उपरि ग्यारहका निमित्त तौ कह्या। अब शेष ग्यारह रहे ते वेदनीयके होते होय हैं। ते कौन? क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, दंशमशक, चर्या, शय्या, वध, रोग, तृण स्पर्श, मल ए ग्यारह हैं॥ आगें पूछें है कि, परीषहनिका निमित्त लक्षणभेद तौ कहे, सो यह परीषह एक आत्माके एककाल केते आवे हैं? ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ एकादयो भाज्या युगपदेकास्मिन्नैकोनाविंशातिः ॥ १७ ॥

याका अर्थ— ए परीषह एककूं आदि देकरि भाज्यरूप एक आत्माके विषैं उगणीसताई आवे हैं। इह सूत्रमें आङ् ऐसा उपसर्ग सो अभिविधिके अर्थि है। तातैं उगणीसभी कोईविषैं एककाल होय हैं ऐसें जानिये। सो कैसें? शीत उष्ण दोऊ युगपत् न होय, तातैं इनमेंतैं एक बहुरि शय्या, निषद्या, चर्या ए तीनूं युगपत् न होय, तातैं इनमेंतैं एक बहुरि दोय ये घटे। ऐसें युगपत् एककालविषैं उगणीसका संभव है। इहां तर्क जो, प्रज्ञा अज्ञान इन दोऊनिकैभी विरोध है। तातैं इनका युगपत् असंभव है। ताका समाधान, जो, श्रुतज्ञानकी अपेक्षा तौ प्रज्ञापरीषह अर अवधिआदिका अभावकी अपेक्षा अज्ञानपरीषह ए दोऊ युगपत् होय तातैं विरोध नाहीं है ।

बहुरि इहां भाज्यका अर्थ ऐसा जानना, जो, एक आवै दोय आवै ऐसैं उगणीसताईं आवैं ॥

आगें पूछे है कि, गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परीषहजय ए पांच संवरके कारण तौ कहे। अब छठा कारण चारित्र है, ताके भेद कहने। ऐसैं पूछै ताके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं। सामान्य अपेक्षाकरि तौ चारित्रमोहके उपशम क्षय क्षयोपशमतैं भई जो आत्माके विशुद्धिकी लब्धि एकही है। सो चारित्र एकही कहिये। बहुरि एकप्राणीनिका पीडाका परिहार अर इंन्द्रियनिका निरोधकी अपेक्षा दोयभी कहिये। बहुरि उत्कृष्ट मध्यम जघन्य अपेक्षा तीनिभी कहिये। बहुरि क्षयोपशमज्ञानीकी अपेक्षा सरागवीतरागभेदकरि तथा केवलज्ञानीके सयोग अयोगभेदकरि च्यारि भेदभी कहिये ॥ बहुरि पांच भेदका सूत्र है—

॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्पराययथाख्यातमिति चारित्रम् १८

याका अर्थ— सामयिक छेदोपस्थापना परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसांपराय यथाख्यात ऐसैं पांच भेदरूप चारित्र है। इहां प्रश्न, जो, दशप्रकार धर्मविषैं संयम कह्याही है, सोही चारित्र है, यह फेरि कहना अनर्थक है। ताका समाधान, जो, अनर्थक नाहीं है। धर्मके विषैं अंतर्भूत है, तौऊ अंतविषैं चारित्रका ग्रहण कीया है। जातैं यह मोक्षकी प्राप्तिका साक्षात् कारण है।

चौदहवां गुणस्थानके अंत चारित्रकी पूर्णता भये लगताही मोक्ष होय है। तातैं साक्षात्कारण है ऐसा जनावनेकूं न्यारा कह्या है। सो सामायिकका स्वरूप तौ पहले श्रावकके सप्तशील कहे तहां कह्याही था। सो दोयप्रकार है, एक तौ नियतकाल दूजा अनियतकाल। तहां कालकी मर्याद करि जामें स्वाध्यायआदि कीजिये सो तौ नियतकाल है। बहुरि ईर्यापथआदिविषैं अनियतकाल है। बहुरि प्रमादके वशतैं उपज्या जो दोष ताकरि संयमका प्रबंधका लोप भया होय ताका प्रायश्चित्त आदि प्रतिक्रियाकरि स्थापन करना सो छेदोपस्थापना है। अथवा सामायिकविषैं अहिंसादिक तथा समित्यादिकका भेद करना सो छेदोपस्थापना कहिये। बहुरि प्राणिपीडाका जहां परिहार ताकरि विशेषरूप जो विशुद्धता जामें होय सो परिहारविशुद्धि कहिये ॥

बहुरि जहां अतिसूक्ष्मकषाय होय सो सूक्ष्मसांपरायचारित्र है। यह दशमा गुणस्थान सूक्ष्मलोभसहित होय है। बहुरि जहां मोहनीयकर्मका सम्पूर्ण उपशम होय, तथा क्षय होय जाय सत्तामेंसूं द्रव्यका कर्म उठि जाय, तहां आत्माका स्वभावकी वीतराग अवस्था होय, सो यथाख्यातचारित्र है। अथवा पहले सामायिकआदि चारित्रके आचरण करनेहारेनें याका व्याख्यान तौ कीया अर मोहके क्षयतैं तथा उपशमतैं पाया नाहीं, तातैं अब कह्या, तातैं याका नाम अथा-

ख्यातभी कहिये। जातैं अथशब्दका अर्थ अनंतर पदार्थ होय सो है, यहू समस्तमोहके क्षय तथा उपशमके अनंतर होय है, तातैं अथाख्यात नाम सार्थक है। बहुरि आत्माका स्वभाव जैसा अवस्थित है तैसाही यामैं कह्या है, तातैं याका नाम यथाख्यातभी कहिये। बहुरि सूत्रमें इतिशब्द है सो परिसमाप्ति अर्थविषैं है। तातैं ऐसा जानिये, जो, यथाख्यातचारित्रतैं सकलकर्मके क्षयकी परिसमाप्ति होय है। बहुरि सामायिकादिकका अनुक्रमका कहना है। ताकरि अगिले अगिले चारित्रविषैं गुणकी विशुद्धताकी वृद्धि है। ऐसैं जनाया है॥

इहां विशेष कहिये हैं, सर्वसावद्ययोगका अभेदकरि त्याग करै सो सामायिक है। याका शब्दार्थ ऐसाभी कीया है, जो, प्राणीनिके घातके कारण जे अनर्थ तिनकूं आय ऐसा नाम कहिये सम् ऐसा उपसर्ग देनेतैं एकीभूत अर्थ भया। तातैं अनर्थ एकठे भये होय तिनकूं समाय ऐसा कहिये। तें समाय जाका प्रयोजन होय सो सामायिक कहिये। तातैं ऐसा अर्थसिद्धि होय है। सो सर्वपापका सामान्य एकठाही त्याग जहां होय सो सामायिकचारित्र है। इहां कोई कहै, ऐसा तौ गुप्तिभी है। ताका समाधान, जो, यामें मनसंबंधी प्रवृत्ति है, गुप्तिविषैं प्रवृत्तिका निषेध है। बहुरि याकूं समितिभी न कहिये। जातैं सामायिकवालेकूं प्रवृत्तिका उपदेश है। ताविषैं प्रवृत्ति

होय ताकूं समिति कहिये। ऐसा सामायिकका कारण है सो समिति कार्य है। ऐसा कार्यकारणका भेद है। वहुरि परिहारविशुद्धिविषैं ऐसा विशेष है, जो, इसकूं धारै जो पुरुष तीस वर्षका होय, तीर्थंकरके निकट पृथक्त्ववर्षताईं सेवन कीया होय, प्रत्याख्यानपूर्व तहां पढ्या होय, जीवनिकी उत्पत्ति मरणके ठिकाणे कालकी मर्याद जन्म योनिके भेद देशका द्रव्यका स्वभावका विधानका जाननहारा होय, प्रमादरहित होय, महावीर्यवान् होय, जाकै विशुद्धताके वलतैं कर्मकी प्रचुरनिर्जरा होती होय, अतिकठिन आचरणका धारणेवाला होय, तीनूं संध्याविना दोयकोश नित्य विहार करनेवाला होय, ताकै परिहारविशुद्धिसंयम होय है। अन्यकै नाहीं होय है ॥

वहुरि सूक्ष्मसांपरायसंयम ऐसे मुनिकै होय है, जो सूक्ष्मस्थूल प्राणीनिकी पीडाके परिहारविषैं प्रमादरहित होय, वहुरि स्वरूपके अनुभवविषैं वधता उत्साह जाकै होय, जाकै अखंडक्रियाविशेष होय, वहुरि सम्यग्दर्शनज्ञानरूप प्रचंडपवन ताकरि प्रज्वलित भई, जो शुद्धआशयरूप अग्निकी शिखा ताकरि दग्ध भये हैं कर्मरूप इंधन जाके, वहुरि ध्यानके विशेषकरि क्षीण कीये हैं कषायरूप विषके अंकुरे जानें, वहुरि नाशके सन्मुख भया है मोहकर्म जाके, याहीतैं पाया है सूक्ष्मसांपराय संयम जानें ऐसा मुनिकै होय है। याका गुप्तिसमितिविषैं अंतर्भाव जानना। जातैं

गुप्तिसमिति होतें यामें सूक्ष्मलोभकपायका होना यह विशेप गुण है। ताकी अपेक्षा न्याराही जानना। बहुरि सूत्रके अनुक्रमवचनकरि उत्तरोत्तर अनंतगुणी विशुद्धता जाननी। बहुरि चारित्रके भेद शब्दअपेक्षा तौ संख्यात हैं। बुद्धिके विचारतैं असंख्यात हैं। अर्थतैं अनंतभेद हैं। ऐसैं यहू चारित्र आश्रवके निरोधतैं परमसंवरका कारण जानना। अर समितिविपैं प्रवर्तै है। तामें धर्म अनुप्रेक्षा परीपहनिका जीतना चारित्र यथासंभव जाननें॥

आगें पूछे है कि, चारित्र तौ कह्या, ताके अनंतर 'तपसा निर्जरा च' ऐसा कह्या था सो अब तपका विधान कहना। ऐसैं पूछैं कहै हैं। तप दोयप्रकार है, बाह्य आभ्यंतर। सोभी प्रत्येक छहप्रकार है। तहां बाह्य तपके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्याग-
विविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥ १९॥

याका अर्थ— अनशन, अवमौदार्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशय्यासन, कायक्लेश ए छह बाह्यतप हैं। तहां इष्टफल कहिये धनकी प्राप्ति, जगतमें प्रशंसा स्तुति होना, रोगादिक मिटना, भय मिटना, मंत्रसाधन करना इत्यादिक इसलोकसंबंधी फलकी अपेक्षा जामें

नाहीं, तथा ऐसैंही परलोकसंबंधी विषयनिका सुखकी अभिलापरूप स्वर्गआदिका फलकी निदानरूप वांछा जामें नाहीं, अर संयमकी प्रसिद्धि, रागादिकका विनाश, कर्मकी निर्जरा, ध्यानकी प्राप्ति, आगमका अभ्यासकी प्राप्ति इनके अर्थि जो आहार कषायका विषयका त्याग करना, सो अनशन है ॥ १ ॥ बहुरि संयमकी वृद्धि, निद्रा आलस्यका नाश, वात पित्त कफआदि दोषका प्रशमन, संतोष, स्वाध्यायआदि सुखतैं होना इत्यादिककी सिद्धिके अर्थि आहार थोरा लेना, सो अवमौदर्य है ॥ २ ॥ बहुरि मुनि आहारकूं जाय तब प्रतिज्ञा करै, जो, एकही घर जावेंगे, तथा एकही रस्तामें प्रवेश करैंगे, तथा स्त्रीका दीया आहार लेंगे, तथा एकही द्रव्यका भोजन लेंगे इत्यादिक अनेकरीति हैं; तिसकी प्रतिज्ञा करि नगरमें जाय तिस प्रतिज्ञाकी रीति मिलै तौ ले, ना तरि फिरि आवै, सो वृत्तिपरिसंख्यान तप है। यह आशाकी निवृत्तिके अर्थि है ॥ ३ ॥

बहुरि इन्द्रियका उद्धतपणाका निग्रह निद्राका जीतना स्वाध्याय सुखतैं होना इत्यादिके अर्थि घृतआदि पुष्ट स्वादरूप रसका त्याग, सो चौथा रसपरित्याग तप है ॥ ४ ॥ बहुरि शून्यस्थानक आदि जे एकांत जायगा जहां प्राणीनिकूं पीडा न होय तहां संयमी सोवना बैठना आसन करै, यातैं आपके स्वाध्यायध्यानमें बाधा न होय, ब्रह्मचर्य पालै, स्वाध्यायध्यानकी सिद्धि होय, ऐसैं

पांचवा विविक्तशय्यासन तप है ॥ ५ ॥ वहुरि आतापके स्थान वृक्षका मूल इनविषें वसना, चौडै निरावरण शयन करना, वहुतप्रकार आसनकरि प्रतिमायोग करना, इत्यादिक कायक्लेश तप है ॥ ६ ॥ सो यऊ देहकूं कष्ट देनेके अर्थि है, परीषहके सहनेके अर्थि है, सुखकी आभिलाषा मेटनेके अर्थि है, मार्गकी प्रभावनाके अर्थि है इत्यादि प्रयोजनके अर्थ जानना ॥

इहां कोई पूछै, जो, परीषहमें अर यामें कहा विशेष है? ताका समाधान, जो, स्वयमेव आवै सो तौ परीषह है अर आप चलाय करै सो कायक्लेश है। फेरि कोई पूछै, इन छह तपनिके वाह्यपणां कैसैं है? ताका समाधान, जो, ये तप वाह्यद्रव्यकी अपेक्षा लीये हैं। तातैं आहारादिकका त्याग करना आदि इनमें प्रधान है। तातैं इनकूं वाह्यतप कहे हैं, तथा परके ए तप प्रत्यक्ष हैं, सर्वलोक इन तपनिकूं जाने हैं, तातैंभी वाह्यतप कहिये। तथा बाह्य कहिये मोक्षमार्गतैं बाह्य जे मिथ्यादृष्टि तेभी इनकूं करै हैं। तातैंभी इनकूं वाह्यतप कहिये हैं ॥ आगें अभ्यंतर तपके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहे हैं—

॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥

याका अर्थ— प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान ए छह उत्तर

कहिये दूसरा जो अभ्यंतर तप ताके भेद हैं। इनकै अभ्यंतरपणा कैसैं है? सो कहै हैं। ए तप अन्यमतिनिकरि नाहीं कीजिये हैं। तथा मनकूंही अवलंब्यकरि इनका प्रवर्तन है। तथा बाह्यद्रव्यकी अपेक्षा इनमें प्रधान नाहीं है, तातैं इनकै अभ्यंतरपणा है। तहां प्रमादके वशतैं व्रतमें दोष उपजै ताके मेटनेकूं करिये सो तौ प्रायश्चित्त है ॥ १ ॥ पूज्य पुरुषनिका आदर करना, सो विनय है ॥ २ ॥ कायकी चेष्टाकरि तथा अन्यद्रव्यकरि जो उपासना टहल करना, सो वैयावृत्य है ॥ ३ ॥ ज्ञानभावनाविषैं आलस्यका त्याग, सो स्वाध्याय है ॥ ४ ॥ परद्रव्यकेविषैं यह मैं हूं यह मेरा है ऐसा संकल्पका त्याग, सो व्युत्सर्ग है ॥ ५ ॥ चित्तका विक्षेप चलाचलपनेका त्याग, सो ध्यान है ॥ ६ ॥ ऐसैं छह अभ्यंतर तप हैं ॥ आगें इन तपनिके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ नवचतुर्दशपंचाद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— नवभेद प्रायश्चित्तके, च्यारि भेद विनयके, दश भेद वैयावृत्यके, पांच भेद स्वाध्यायके, दोय भेद व्युत्सर्गके ऐसैं अनुक्रमतैं जानने। ए ध्यानतैं पहले पांच तपके भेद हैं। इहां यथाक्रमवचनतैं प्रायश्चित्त नवभेद है इत्यादि जानना। बहुरि प्राग्ध्यानात् इस वचनतैं ध्यानके भेद बहुत हैं। तातैं आगें कहसी ऐसा जानना ॥ आगें आदिका प्रायश्चित्ततपके नव भेद कहे,

तिनका स्वरूपभेदके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ आलोचनप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपारिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥

याका अर्थ— आलोचन, प्रतिक्रमण, ते दोऊ, विवेक, व्युत्सर्ग, तप, छेद, परिहार, उपस्थापना ए नव भेद प्रायश्चित्ततपके हैं। तहां गुरुनिकूं अपना प्रमादकरि लागै दोषका कहना ताकै दश दोष टालने, सो आलोचन है। बहुरि मोकूं दोष लागे हैं, ते मिथ्या होऊ निष्फल होऊ ऐसैं प्रगट वचनकरि कहना, सो प्रतिक्रमण है। बहुरि आलोचनाप्रतिक्रमण दोऊ करना, सो तदुभय है। बहुरि दोषकरि सहित जे आहार पाणी उपकरण तिनका संसर्ग भया होय तौ तिनका त्याग करना, सो विवेक है। कायोत्सर्गआदि करना सो व्युत्सर्ग है। अनशन आदि तप करना, सो तप है। दिवस पक्ष मास आदिकी दीक्षाका घटावना, सो छेद है। पक्ष मास आदिका विभागकरि दूरिपर वर्जन करना, संघवारे राखणा, सो परिहार है। अगिली दीक्षा छेदि नवा संधे दीक्षा देना, सो उपस्थापन है ॥

याका विशेष लिखिये हैं। तहां प्रमादजनित दोषका तौ सोधन, अर भावकी उज्वलता, अर शल्यका मिटना, अर अनवस्थाका अभाव, अरु मर्यादमें रहना, संयमकी दृढता इत्यादिकी

सिद्धिके अर्थि प्रायश्चित्तका उपदेश है। तहां प्रायश्चित्तका शब्दार्थ ऐसा, प्रायः कहिये साधुलोकका समूह तिनका चित्त जिस कार्यमें प्रवर्तै, सो प्रायश्चित्त कहिये। अथवा प्राय नाम अपराधका है, ताका चित्त कहिये शुद्ध करना, सोभी प्रायश्चित्त कहिये। तहां दशदोषवर्जित गुरुका अपना लग्या दोष कहना, सो आलोचन कह्या। सो गुरु एकान्तविषैं तौ बैठे होय, प्रसन्नचित्त होय, बहुरि देशकाल जाननेवाला शिष्य होय सो विनयकरि अपना प्रमाददोषकूं कहै। ताके दश दोष टाले. ते कौन सो कहिये है। शिष्य ऐसा विचारै, जो, गुरुनिकूं किछू उपकरण दीजिये तौ प्रायश्चित थोरा दे, ऐसैं विचारि किछु नजरि करना, सो प्रथम दोष है॥ मैं दुर्बल हौं, अशक्त हौं, रोगी हौं, उपवासादि करनेको समर्थ नाहीं, जो, थोरासा प्रायश्चित्त दे तौ दोषका निवेदन करूं ऐसैं थोरा प्रायश्चित्त लेनेके अभिप्रायतैं कहना, सो दूसरा दोष है॥ अन्य जो न देखे तिनकूं छिपाय अर अन्यके देखै प्रगट भये ते दोष कहने ऐसा मायाचार करना सो तीसरा दोष है॥ आलस्यतैं, प्रमादतैं, अल्पअपराधकूं तौ गिणैं नाहीं, ताके जाणनेका उत्साह नाहीं अर स्थूलदोषहीकूं कहना, सो चौथा दोष है॥ मोटे प्रायश्चित्त देनेके भयकरि बडा दोष तौ छिपावना अर तिसके अनुकूलही अल्पदोष कहना, सो पांचमा दोष है॥ ऐसैं व्रतके अतीचार

होतैं कह्या प्रायश्चित्त होय है, ऐसे अभिप्रायतैं प्रायचित्त जाननेकूं गुरुनिकी उपासना टहल करना दोप न कहना, सो छठा दोष है ॥ पाक्षिक चातुर्मासिक सांवत्सरिक जो प्रतिक्रमण ताकूं घणे मुनि भेले होय करै, तहां आलोचनाके शब्द बहुत होय तिनमें आपभी अपना दोष कहै अभिप्राय ऐसा होय जो कछू सुणैंगे कछू न सुणैंगे ऐसा विचारिकरि नचीत होना सो सातमां दोप है ॥ गुरुनिकरि दीये प्रायश्चित्तविषैं संदेह उपजावै, जो, यह प्रायश्चित्त दीया सो आगममें है कि नाहीं? ऐसी शंकाकरि अन्यमुनिनिकूं पूछे सो आठमां दोप है ॥ किछु प्रयोजन विचारी अर आपसमान होय ताहीकूं अपना प्रमाददोष कहकरि प्रायश्चित्त आपही ले ले, सो नवमां दोप है, यामें बडा प्रायश्चित्त ले तौ फलकारी नांहीं ॥ अन्यमुनिनिकूं अतीचार लाग्या होय तानैं किछु प्रायश्चित्त लीया होय ताकूं देखि तहां विचारै, जो, याकेसमान मोकूंभी अतीचार लाग्या सो याकूं प्रायश्चित्त दिया सोही मोकूं युक्त है ऐसैं विचारि अपना दोष प्रगट न करना प्रायश्चित्त ले लेना, सो दशमां दोप है ॥ अपने अपराधकूं घणे काल न राखणा तत्काल गुरुनिपै जाय कपटभावतैं रहित होय बालककीज्यौं सहलपणातैं दोपनिकूं कहै ताकै ए दोष नाहीं लागै हैं ॥

तहां मुनि तौ आलोचन करै, सो एक गुरु एक आप ऐसैं दोयही होते एकान्तमें करै।

अर अर्जिका करै, तब एक गुरु होय दोय अर्जिका होय ऐसैं तीनि होतें करै, सो प्रकाश होय जहां करै अंधकारमें न करै। बहुरि लज्जाकरि तथा अपमानके भयकरि दोष प्रगटकरि अतीचार न सोधे तौ नाही है धनविषै लेना जाके ऐसा जो लोभी सो धन विनशै खेदखिन्न रहै है तैसैं चारित्रके दोषतें खेदखिन्न रहै है। बहुरि जो आलोचना न करै तौ महान तपभी वांछितफलकूं नाहीं दे है। जैसैं कडी औषधि कायविषैं गयेविना फलदाता नाहीं, तैसैं जानना। बहुरि आलोचनभी करै अर गुरुका दीया प्रायश्चित्त न ले तोभी महान् फल न होय है। जैसैं कोई अन्नादिक वीनने लगै, तामैं एकएक देखतैं कंकर आदि देखता तौ जाय, अर कंकरकूं काढै नाहीं, तौ अन्न उत्तमस्वादरूप फलकों नाहीं दे; तैसैं जानना। बहुरि आलोचनकरि प्रायश्चित्त ले तौ जैसैं मांजा आरसामें रूप उज्वल दीखे तैसैं व्रत उज्वल होय है ॥

प्रतिक्रमणका लक्षण पूर्वै कह्याही है। बहुरि तदुभयका प्रयोजन यह है। कोऊ दोष तौ आलोचनहीतें मिटै है। कोऊ प्रतिक्रमणहीतें मिटै है। कोऊ दोष दोऊ करें मिटै है। इहां कोई तर्क करै है, जो, यह तौ अयुक्त है। कहा, जो, विनाआलोचन तौ प्रायश्चित्त नाहीं कह्या, फेरि कह्या, जो, प्रतिक्रमणहीतें शुद्ध होय है, सो यऊ अयुक्त है। बहुरि कहोगे, जो, आलोचन-

पूर्वक प्रतिक्रमण है, तौ तदुभयका कहना व्यर्थ है। ताका समाधान, जो, यह दोष इहां नाहीं है। जातैं सर्वही प्रतिक्रमण आलोचनपूर्वकही है। परंतु यामें विशेष है, सो कहा? जो पहली गुरुनिकी आज्ञातैं शिष्य जानि रहे हैं, जो, प्रतिक्रमणमात्रतैं फलाणा दोष निर्वर्तन होय है। सो ऐसा दोषका प्रतिक्रमण तौ शिष्यही करि ले है। सो तौ आलोचनपूर्वक भयाही। बहुरि जो पहली जा दोषका प्रतिक्रमणकी गुरुनिकी आज्ञा नाहीं, सो आलोचनपूर्वकही शिष्य करैही है। अर गुरु करै सो आपही करि ले है। बहुरि तिनकै आलोचना नाहीं है ॥

विवेकका विशेष जो, जा वस्तुविषैं सदोषका संदेह पड्या होय, तहां सदोषकेविषैं निर्दोषका ज्ञान भया होय, तथा जाका त्याग कीया होय, जाका ग्रहण हो जाय, तिसका फिरि त्याग करना, सो विवेक है। कायोत्सर्ग करै है सो कालका नियमकरि करै। अर तप आदिक पहलै कहे तेही जानने। इन प्रायश्चित्तनिकूं कहां कहां लेने ताका संक्षेप कहिये है। विद्या पढना, आतापनादियोग करना, अन्यका उपकरण ग्रहण करणा इत्यादिक विनयसहित पूछैविना करै, तौ याका आलोचनमात्र प्रायश्चित्त है। बहुरि परोक्ष प्रमादसेवना, आचार्यका वचन न करना, आचार्यके प्रयोजननिमित्त विनापूछ्या जाना, परसंघमेंसूं विना पूछ्या आवना इत्यादिविषैंभी

आलोचनाही है। आवश्यकआदिकी क्रियाका देशकालका नियम कीया था, ताकूं धर्मकथा करने आदिके निमित्तकरि विस्मरण होय जाय, ताका फेरि करनेविषैं प्रतिक्रमण करना, प्रायश्चित्त है। बहुरि इन्द्रियवचनका दुःपरिणाम होय जाय, आचार्य आदिके पग लागि जाय, व्रतसमितिगुप्तिविषैं स्वल्प अतिचार लागै, परका बिगाड होनेका वचन निकलै, कलह होय जाय, वैयावृत्य स्वाध्यायादिविषैं प्रमाद करै इत्यादिविषैंभी प्रतिक्रमण है। बहुरि अकाल भोजनके अर्थि गमन करै, लोंचन स्वछंद करै, स्वप्नविषैं रात्रिभोजनादिका अतिचार लागै, उदरमैंसूं कृमि नीसरै, मांछर पवनादिकके निमित्ततैं रोमांच होय, हरिततृणादिकी भूमि तथा पंकपरि गमन करै, गोडातांई जलमैं प्रवेश करै, नावतैं नदी तिरै, अन्यका उपकरण आदि अपणावै, पुस्तक प्रतिमादिकका अविनय होय जाय, पंचस्थावरका घात होय जाय, अदृष्टदेशविषैं मलमूत्र क्षेपै, प्रतिक्रमण क्रिया व्याख्यानके अंत इत्यादिविषैं आलोचन प्रतिक्रमण दोऊ हैं॥ बहुरि भयकरि तथा भूलिकरि तथा विना जाणे तथा कोई कार्यकी अशक्तताकरि शीघ्रताकरि महाव्रतमें अतिचार लागै, तौ तहां तपपर्यंत छहूप्रकार प्रायश्चित्त है। बहुरि त्यागनेयोग्यकूं छिपायकरि छोडै, बहुरि कोई कारणकरि अप्रासुकका ग्रहण होय जाय, तथा प्रासुककाभी त्याग कीया था तथा भूलिकरि ग्रहण कीया.

सो यादि आई ताका फेरि त्याग करणा, प्रायश्चित्त है ॥

बहुरि खोटा सुपना आवै, खोटा चिंतवन करै, मलमूत्रका अतीचारविषें बडी नदी बडी वनीके प्रवेश तरणेविषें कायोत्सर्ग प्रायश्चित्त है। बहुरि बहुतवार प्रमादतैं बहुत प्रत्यक्ष अपराध करै प्रतिकूल प्रवर्तै, विरुद्ध श्रद्धा करै, तिनकूं अनुक्रमतैं छेद मूलभूमि अनुपस्थापन पारंचिक ए प्रायश्चित्त हैं। तहां अपने संघके आचार्यके निकटही सर्वतैं नीचा पाडि प्रायश्चित्त दे सो तौ अनुपस्थापन है। बहुरि अन्य आचार्यके निकटि तीनिवार फेरै सो पारंचिक है। ऐसैं नवप्रकार प्रायश्चित्त देश काल शक्ति संयमादिके अविरोधकरि जैसा अपराध होय तैसा प्रायश्चित्तकरि दोष मिटावै। जैसैं यथा रोग देशकालादि देखि वैद्य रोग मिटावै तैसें करै। या जीवके परिणामके स्थानक असंख्यातलोकपरिमाण है। तेतेही अपराध लागें हैं। सो प्रायश्चित्तके भेद तेते नाहीं हैं। व्यवहारनयकरि सामान्यकरि प्रायश्चित्तके भेद यथासंभव होय हैं ॥

आगें विनयके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥

याका अर्थ— ज्ञानका विनय, दर्शनका विनय, चारित्रका विनय, उपचारका विनय

ऐसे विनयतपके च्यारि भेद हैं। इहां विनयका अधिकार है। तातैं विनयशब्दका संबंध करना। यातैं ज्ञानविनय दर्शनविनय चारित्रविनय उपचारविनय ऐसैं संबंध भया। तहां बहुमानसहित मोक्षके अर्थि ज्ञानका ग्रहण अभ्यास स्मरण इत्यादि करणा, सो ज्ञानविनय है। बहुरि शंकादिदोषरहित तत्वार्थनिका श्रद्धान करना, सो दर्शनविनय है। बहुरि ज्ञानदर्शनसहित होयकरि चारित्रविषैं समाधानरूप चित्तकूं कारण, सो चारित्रविनय है। बहुरि आचार्यआदि प्रत्यक्ष विद्यमान होय तिनकौं देखिकरि उठना तिनके सन्मुख जाना अंजली जोडना इत्यादि उपचारविनय तथा ते परोक्ष होय तौ मन वचन कायकरि हाथ जोड नमस्कार करना, गुणका स्तवन करना, स्मरण करना इत्यादिभी उपचारविनय हैं। याका प्रयोजन, जो, विनयतैं ज्ञानका लाभ होय है, आचारकी शुद्धता होय है, भली आराधना होय इत्यादिकके अर्थि विनयकी भावना है ॥

आगैं वैयावृत्यतपके भेदके जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्षग्लानगणकुलसङ्घसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥

याका अर्थ— आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन दशनिका वैयावृत्य करणा, ऐसैं याके दश भेद हैं। इहां विशेषके भेदतैं भेद जानने। तातैं

आचार्यवैयावृत्य इत्यादि कहना । तहां जिनतैं व्रतआचरण कीजिये, ते आचार्य हैं । बहुरि जिनतैं मोक्षके अर्थि भ्रात होय शास्त्र पढिये ते उपाध्याय हैं । बहुरि महान् उपवास आदि तप करते होय, ते तपस्वी हैं। बहुरि जे शास्त्र पढनेआदि शिक्षाके अधिकारी होय, ते शैक्ष हैं। बहुरि रोगआदिकारि क्षीण होय, ते ग्लान हैं। बहुरि जे स्थविर कहिये बडे मुनिनिकी परिपाटीके होय, ते गण कहिये । बहुरि दीक्षा देनेवाले आचार्यके शिष्य होय, तिनकूं कुल कहिये । बहुरि च्यारिप्रकार मुनिनिका समूहकूं संघ कहिये । बहुरि घणा कालका दीक्षक होय, सो साधु कहिये । बहुरि जो लोकमान्य होय सो मनोज्ञ कहिये । इनकैं रोग परिषह मिथ्यात्वादिका संबंध आवै तब अपनी कायचेष्टाकरि तथा अन्य द्रव्यकरि तिनका प्रतिकार इलाज करै, सो वैयावृत्य है। याका फल, जो, वैयावृत्यतैं समाधिका तौ धारण होय है, निर्विचिकित्साभाव होय है, प्रवचनका वात्सल्य होय है इत्यादि जानना । इहां च्यारिप्रकारके मुनिकूं संघ कह्या, तहां ऋषि यति अनगार मुनि ए च्यारि जानने । तहां ऋद्धिधारीकूं तौ ऋषि कहिये, इन्द्रियकूं वश करै सो यति कहिये, अवधिमनःपर्यय ज्ञानीकूं मुनि कहिये, सामान्य घरके त्यागी साधु सो अनगार कहिये । अथवा यति आर्यिका श्रावक श्राविका ऐसैंभी च्यारिप्रकार संघ है। बहुरि मनोज्ञ कह्या, सो जामें

पंडितपणाकरि कला वक्तापणा आदि गुण होय, सो लोकविषैं मान्य होय सो मनोज्ञ है। तथा ऐसा अविरतसम्यग्दृष्टि होय, जामैं मार्गकूं ऊचौ दिखावनेके गुण होय, ताकूंभी मनोज्ञ कहिये है ॥ आगैं स्वाध्यायके भेद जाननेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥ २५ ॥

याका अर्थ— वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय, धर्मोपदेश ए पांच स्वाध्यायतपके भेद हैं। तहां निर्दोष ग्रंथ अर्थ उभय उनका जो भव्यजीवनिकूं देना शिखावना सो तौ वाचना है। बहुरि संशयके दूरि करनेकूं निर्बाध निश्चयके समर्थनिकूं दृढ करनेकूं परकूं ग्रंथका अर्थ दोऊका प्रश्न करना, सो पृच्छना है। जो आपकी उच्चताकरि प्रार्थि परके ठगनेके अर्थि नीचा पाडनेके अर्थि परकी हास्य करनेकूं इत्यादि खोटे आशयसूं पूछै सो पृच्छना तप नाहीं है। बहुरि जिस पदार्थका स्वरूप जान्या, ताका मनकेविषैं वारवार चिंतवन करना, सो अनुप्रेक्षा है। बहुरि पाठकूं शुद्ध घोखना, सो आम्नाय है। बुहिरि धर्मकथा आदिका अंगीकार, सो धर्मोपदेश है। ऐसैं पांचप्रकारका स्वाध्याय है। याका फल प्रज्ञाका तौ अतिशय होय, प्रशस्त आशय होय, परमसंवेग होय, तपकी वृद्धि होय, अतीचारका शोधन होय इत्यादिक याके प्रयोजन हैं। तथा संशयका

नाश होय, मार्गकी दृढता होय, परवादीकी आशंकाका अभाव होय, ए फल हैं ॥

आगें व्युत्सर्गतपके भेदके निर्णयके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥ २६ ॥

याका अर्थ— बाह्य अभ्यंतर ऐसैं दोयप्रकारका परिग्रहका त्याग ए व्युत्सर्गके दोय भेद हैं। तहां व्युत्सर्ग नाम त्यागका है, सो दोयप्रकार है, बाह्य उपाधिका त्याग, अभ्यंतर उपाधिका त्याग। तहां अनुपात्तवस्तु जो आपतैं न्यारा धनधान्यादिक, सो तौ बाह्यपरिग्रह है। बहुरि कर्मके निमित्ततैं भये आत्माके भाव जे क्रोधआदिक, ते अभ्यंतर परिग्रह हैं। बहुरि कायकाभी त्याग या अभ्यंतरमें गिणना। सो कालका नियमकरिभी होय है, अर यावज्जीवभी होय है। ऐसैं बाह्य अभ्यंतर जे परिग्रह, तिनका त्याग, सो व्युत्सर्ग हैं। याके प्रयोजन निःसंगपणा निर्भयपणा जीवितकी आशाका अभाव ए व्युत्सर्गके फल हैं। इहां ऐसा जानना, जो, व्युत्सर्ग महाव्रतमेंभी कह्या, दशधर्ममेंभी कह्या, प्रायश्चित्तमेंभी कह्या, इहां तपका भेदभी कह्या। सो यामें विरोध नाहीं है। जातैं कोई पुरुषतैं कोईविषैं त्यागकी शक्ति होय ऐसैं शक्तिकी अपेक्षा अनेकप्रकारकरि कह्या है। उत्तरोत्तर उत्साह बढनेकाभी प्रयोजन है। इहां एता विशेष और जानना, जो, महाव्रतमें परिग्रहका त्याग कह्या

है, तहां तौ धनधान्य आदि बाह्यपरिग्रहका त्याग प्रधान है। अर दशधर्ममें कह्या है, तहां आहारादिक योग्यपरिग्रहका त्याग कह्या है। अर प्रायश्चित्तमें दोषका प्रतिपक्षी कह्या है। अर इहां तपमें कह्या, सो सामान्य है॥ आगें ध्यानके बहुतभेद कहनेकूं न्यारा राख्या था ताके अब भेद कहनेका अवसर है, सो ताके पहली ध्यानका करनेवालेका तथा ध्यानका स्वरूप तथा ध्यानका कालकी निर्धारके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ॥ २१ ॥

याका अर्थ— उत्तमसंहननका धारी पुरुषके एकाग्रचिंताका निरोध सो ध्यान है। सो उत्कृष्टपणें अंतर्मुहूर्तताई रहै। तहां आद्यके तीनि संहननकूं उत्तम कहिये वज्रऋषभनाराचसंहनन वज्रनाराचसंहनन नाराचसंहनन ऐसें। ए तीनूंही ध्यानके साधन हैं। बहुरि इनमें मोक्षका साधन एक आदिकाही है, अन्यतें मोक्ष होय नाहीं। ऐसें ए तीनि संहनन जाकै होय सो पुरुष ध्यानी है। बहुरि अग्र कहिये मुख, ऐसा एक मुख कहिये एकाग्र जाकै होय, सो एकाग्र कहिये मनकी चिंता है, सो अनेक पदार्थके अवलंबनतें चलायमान है, याकूं अन्यसमस्तका अवलंबनतें छुडाय एकअग्रविषें नियमरूप करै, सो एकाग्रचिंतानिरोध है। यह ध्यानका स्वरूप कह्या। बहुरि अंतर्मु-

हूर्त ऐसा कालका परिमाण है, सो अंतर्गत कहिये मुहूर्तके माहीं होय, सो अंतर्मुहूर्त कहिये। आङ् ऐसा उपसर्ग जोडै मर्याद भई, जो, अंतर्मुहूर्ततांई लेणा आगे नाहीं, ऐसैं कालकी मर्यादा कही। जातैं एते कालसिवाय चिंताका एकाग्रनिरोध होय सकै नाही दुर्द्धर है। इहां प्रश्न, जो, चिंताका निरोध सो ध्यान है, तौ निरोध तौ अभावकूं कहिये है, तातैं ध्यान निर्विषय अभावरूप ठहऱ्या, सो गधेके सींगकीज्यों भया। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं। अन्यचिंताकी निवृत्तिकी अपेक्षा तौ अभावरूपही है। बहुरि चिंता जिसविषयकूं अवलंब्या तिसकै आकार प्रवृत्तितैं सद्भावरूप है। जातैं अभाव है सो भावान्तरके स्वभावरूप है, तातैं वस्तुका धर्म है, हेतुका अंग है। अभावतैंभी वस्तुही सधै है। अथवा निरोधशब्दकूं भावसाधन न करिये अर कर्मसाधन करिये, तब जो निरोधरूप भई सोही चिंता ऐसैं ज्ञानही चलाचलपणासूं रहित होय एकाग्र भया सोही ध्यान है। जैसैं अग्निकी शिखा निराबाधप्रदेशमें चलाचलपणातैं रहित होयकरि स्थिर है दीप्यमान होय, तैसैं जानना ॥

इहां विशेष श्लोकवार्तिकतैं लिखिये है। इस सूत्रविषैं ध्याता ध्यान ध्येय ध्यानका काल ए च्यारि कह्या है। अर सामर्थ्यतैं याकी प्रवृत्तिकी सामग्री जानिये है। इहां कोई अन्यमती

कहै है, जो, हमारे मतमें चित्तकी वृत्तिके निरोधकूं योग कह्या है। ताकूं पूछिये, जो, साहीही चित्तकी वृत्तिका निरोध जाका किछू विषय नाहीं ऐसा कह्या है, कि, ज्ञानका स्थिर होना कह्या है? जो, आद्यकी पक्ष कहैगा, तौ निर्विषय तुच्छ अभावरूप है, जो प्रमाणभूत नाहीं अर स्थिर ज्ञानस्वरूप कहैगा, तौ हमारी मिली। तहां वह कहै है, जो, हम तुच्छाभावरूप तौ नाहीं कहै। पुरुपका स्वरूपकेविषैं अवस्थानकूं चित्तकी वृत्तिका निरोध कहै हैं। याहीकूं समाधि कहिये है। असंप्रज्ञातयोग ध्यान ऐसा कहिये है तहां समाधिविषैं ज्ञानकाभी उच्छेद होय जाय है। तातैं हमारे ऐसा कह्या है, जो, समाधिकालविषैं द्रष्टा कहिये पुरुप ताका स्वरूपकेविषैं अवस्थान होय है। आत्मा तौ द्रष्टा है अर ज्ञाता प्रधान है। पुरुपका स्वरूपकेविषैं अवस्थान है, सो परम उदासीनपणा है। ताकूं कहिये, जो, पुरुषकूं द्रष्टा कहै हैं, जो ज्ञाताभी पुरुपही है। देखना जानना तौ दोऊ अविनाभावी है। जो प्रधानकूं ज्ञाता कहैगा तौ द्रष्टाभी प्रधानही ठहरैगा, तब पुरुप जड़ ठहरैगा ॥

इहां कहै, जो, ज्ञाता पुरुपकूं कहै ज्ञान अनित्य है। तातैं पुरुपकै अनित्यता आवैगी। तौ ऐसैं तौ प्रधानभी अनित्य ठहरैगा। तब वह कहै, प्रधानका परिणाम तौ अनित्य हम मानैंही

है। तौ ताकूं कहिये ऐसैंही पुरुषके पर्यायके ज्ञानके विशेषतैं अनित्य माननेमें कहा दोष है? तब कहै जो पर्याय पुरुषतैं अभेदरूप है, तातैं पुरुषकै अनित्यपणा आवै है। तहां कहिये, जो, प्रधानतैं तिसका परिणाम कहा अत्यंतभिन्न है? जातैं प्रधानकै अनित्यता न आवै। तहां वह कहै, जो, परिणामही अनित्य है परिणामी तौ नित्यही है। ताकूं कहिये, जो, ऐसैं है तौ ज्ञान अरु आत्माके अभेद होतेभी ज्ञानही अनित्य है, पुरुष नित्य है, या ठहरी। फेरि वह कहै, पुरुष तौ अपरिणामीही है। तौ ताकूं कहिये, प्रधानभी अपरिणामी क्यों न कहै? तब वह कहै, व्यक्तितैं प्रधान परिणामी कहिये, शक्तितैं नाहीं। तहां ताकूं कहिये, पुरुषभी ऐसैंही है, यामें विशेष कहा? जातैं जो स्वस्वरूप है सो सर्वही परिणामी है। अपरिणामीकै तौ क्रमपणा अरु युगपत्पणा होय नाहीं। इनविना अर्थक्रिया होय नाहीं। तातैं द्रष्टा है तैसैंही आत्मा ज्ञाता है। यामें बाधा नाही। तातैं असंप्रज्ञातयोगरूप ध्यान कहै, सो बणै नाहीं। अज्ञानरूप पुरुषका स्वरूप अवस्थान संभवै नाहीं। यातैं जडपणा आवै है। बहुरि संप्रज्ञातयोग है सो ज्ञानकी वृत्ति ज्ञेयका होना तिसमात्र है, सो ज्ञानका स्वरूपही है। यामें तौ किछु विवाद नाहीं है। जातैं ध्यान है सो ज्ञानहीका एकाग्र होना है ॥

बहुरि कोई कहै, जो, ज्ञान ज्ञेयस्वरूपही होय जाय है, सो यह बणै नाहीं। जातैं विषयरूप ज्ञेय तौ जडभी है। सो जडरूप तौ ज्ञान होय नाही। ज्ञानकी स्वच्छता ऐसैंही है, जो, ज्ञेयवस्तु तौ जैसा है तैसा जहांका तहां तिष्ठै है। आप तिसकूं जाने है, तातैं तिस आकार भया उपचार कहिये है। ज्ञान आत्माका गुण है सो आत्मा अमूर्तिक है। तातैं ज्ञानही अमूर्तिक अर ताकी वृत्तिरूप अंश हैं तेभी अमूर्तिक हैं। तातैं अमूर्तिकमें काहू मूर्तिकका प्रतिबिंब कैसैं आय पडै? जो ज्ञानकी वृत्तिकों मूर्तिक मानिये तौ इन्द्रियनिकारि ग्रहण करनेयोग्य ठहरै। बहुरि मनकीज्यों अतिसूक्ष्मपणातैं अप्रत्यक्ष कहिये सो स्वसंवेदनगोचरभी न ठहरै। अर स्वसंवेदस्वरूपभी न कहिये, तौ अन्यअर्थकूंभी नाही जानैगा। बहुरि दीपककीज्यों परप्रकाशकही बतावै तौ दीपक तौ जड है, अन्यके नेत्रनिकौ ज्ञानका कारण सहकारीमात्र उपचारकरि कहिये है, परमार्थतैं ज्ञानका कारण आत्माही है॥

बहुरि मूर्तिककै तौ स्वसंवेदन कहूं देखा नाहीं। तथा काहूनें मान्याभी नाहीं। तातैं ज्ञानकी वृत्ति जे पर्यायके अमूर्तिकही हैं। बहुरि कहै जो ज्ञानकी वृत्तिके विषयके जाननेका नियम है, तातैं जानिये है, जो, ज्ञेयनिके प्रतिबिंबनिकूं ए धारै हैं। ताकूं कहिये, जो, निराकारकैभी

विषयका नियमकी सिद्धि है। जैसें पुरुषके जाकूं देखै ताका भोगका नियम है, तैसें। फेरि वह कहै, जो, बुद्धिके विषय अर्थका प्रतिबिंब है, ताहि पुरुष भोगवै है, तातैं विषयप्रति नियम है। ताकूं कहिये, जो, बुद्धि केईक अर्थका प्रतिबिंबकूं न धारै, अर समस्तअर्थका प्रतिबिंबकूं न धारै, सो इहां कारण कहा है? तहां वह कहै, जो, अहंकार जिसविषैं भया तिसहीका प्रतिबिंबकूं बुद्धि धारै है। ताकूं कहिये, जो, ऐसें तौ अहंकारके नियम ठहऱ्या। बुद्धि तौ प्रतिबिंबविनाही अर्थकूं स्थापै है यह ठहरी। अर मनका संकल्प अहंकार जान्या, अर इंद्रियनिका आलोच्या मन जान्या, ऐसें अपनी अपनी सामग्रीतैंही विषयप्रति नियम ठहऱ्या। तातैं प्रतिबिंबकी कल्पनाकरि कहा। ऐसें होतैं चित्तकी वृत्तिका सारूप्य कहिये पदार्थके प्रतिबिंब धारनेरूप समानरूपता नाहीं है, तातैं तिसमात्र संप्रज्ञातयोग ठहरै। तातैं अन्यमतीनिकै ध्यानका संभव नाहीं है॥

बहुरि तिनकै ध्येयवस्तुभी नाहीं ठहरै है। तिनके ध्यानके सूत्रमें ध्येयका ग्रहणही नाहीं है। बहुरि ध्यानकी सिद्धि नाहीं, तब ध्येयकी सिद्धि काहेतैं होय? बहुरि स्याद्वादीनिकै ध्यान है सो विशिष्टध्येयविषैं कह्याही है। जातैं चिंताका निरोधके एकदेशतैं तथा सर्वदेशतैं ध्यानकें एकाग्रविषयपणाकरि विशेषण कीया है, सोही ध्येय है। अनेकविषैं अप्रधानविषैं तथा कल्पित-

विषैं चिंतानिरोध नाहीं। तातैं एकाग्रविषैं चिंतानिरोधकूं ध्यान कह्या है। इहां एकशब्द है सो तौ संख्यावाचक है। बहुरि अंग्यते तत् अथवा अंगति तस्मिन् ऐसा विग्रहतैं अग्रशब्द निपज्या है। तातैं याका अर्थ मुख है, भद्र इंद्र अग्र विप्र ए शब्द निपातसिद्ध हैं। अंगि ऐसी धातु है, सो गतिअर्थमें है। ताका कर्मविषैं तथा अधिकरण विषैं र ऐसा प्रत्ययका विधान है। बहुरि चिंता मनकी वृत्तिकूं कहिये है। बहुरि अनियम जाकै क्रिया होय ताका नियमतैं क्रियाका कर्तापणाविषैं अवस्थान होय सो निरोध कहिये। इहां समास करै हैं, एक अग्र कहिये मुख जाकै होय सो तौ एकाग्र कहिये। बहुरि चिंताका निरोध सो चिंतानिरोध कहिये। बहुरि एकाग्र सोही चिंतानिरोध सो एकाग्रचिंतानिरोध कहिये। ऐसा एकाग्रचिंतानिरोध है सो ए काहेतैं होय है? आत्माकी सामर्थ्यके विशेषतैं होय है। जैसैं दीपगकी शिखा निर्वातदेशविषैं अंतरंग बहिरंग हेतुके वशतैं निश्चल तिष्ठै है तैसैं चिताहू वीर्यांतरायकर्मके क्षयोपशमका विशेषतैं तथा निराकुलप्रदेशविषैं निश्चल तिष्ठै है। यातैं अन्यचिंतानिरोधतैं नानामुखपणाकी निवृत्ति कही। अथवा अग्रशब्द है सो अर्थपर्यायवाची है। जातैं याकूं कर्णसाधन करिये, तब अर्थपर्यायवाची होय है। एकपणा सोही अग्र सो एकाग्र कहिये। ऐसैं एकत्वकी संख्याविशिष्ट अर्थ भया।

तथा एकशब्दकूं प्रधानवाची लीजिये। तब एकाग्रविषैं चिंतानिरोध कहिये। ऐसैं अनेक अर्थ जे गौणभूत तिनविषैं चिंतानिरोधका निषेध भया। तातैं कल्पनारोपित ध्यानका निषेध भया॥

इहां तर्क, जो, अनेकवादीनिके सर्वपदार्थ एकानेकरूप मानिये है तातैं अनेकरूपका निषेध कैसैं होय? एक अर्थविषैं ध्यान कैसैं होय? ताका समाधान, यह विनाविचाऱ्या तर्क है। एक अर्थकी एकपर्यायके प्रधानपणाकरि ध्यानका विषयपणा कहिये है। तहां द्रव्यकै अन्यपर्याय होतैंभी गौणपणातैं ध्यानके विषय नाहीं हैं, याहीतैं एकशब्द संख्यावाचीका यहां ग्रहण है। फेरि तर्क, जो, ऐसैं तौ कल्पनारोपितविषयविषैं ध्यान भया। जातैं पर्यायमात्र तौ वस्तु नाहीं, द्रव्यमात्रभी नाहीं है। द्रव्यपर्यायस्वरूप जात्यंतर वस्तु माना है। नयका विषय वस्तुका एकदेश है। जो नयका विषय सर्वदेश वस्तु मानिये तौ याकै विकलादेशपणाका विरोध आवै। ताका समाधान, जो, ऐसैं कहनेवालाभी न्यायका वेत्ता नाहीं। जो, सर्वथा द्रव्यपर्यायस्वरूपका निषेधरूप पर्यायमात्र मानिये तौ अवस्तु होय। अर जहां द्रव्यपर्यायकी परस्पर सापेक्षा होय तहां तौ अवस्तुपणा है नाहीं। तातैं नयका एकदेशविषय है तौऊ ताकूं अवस्तु न कहिये॥

बहुरि कोई कहै, स्वरूपका आलंबन सोही ध्यान है। सो यहभी युक्त नाहीं। तातैं सर्वथा

अंशरहित वस्तुकै तौ ध्यानध्येयपणा आवै नाहीं। कथंचित् अनेकरूप वस्तुकैही तिसतैं अविरोधी ध्यान होय है। तिसतैं अर्थांतरभूत जो ध्येयवस्तु तिसविषैं ध्यान प्रवर्तै है। ऐसैं आपतैं जुदाही जो द्रव्यपरमाणु तथा भावपरमाणुको आलंबै है। बहुरि ऐसा नाहीं, जो, द्रव्यपरमाणु भावपरमाणु अर्थपर्याय नाहीं। जातैं पुद्गलद्रव्यके पर्याय हैं। इहां परमाणुशब्दका ऐसा अर्थ जानना, जो, परम कहिये उत्कृष्ट जाका फेरि विभाग नाहीं ऐसा अंश, सो परमाणु है। तहां द्रव्यका परमाणु तौ पुद्गलका परमाणु है, तथा निश्चयकालका अणु है, इनतैं छोटा और द्रव्य नाहीं॥

बहुरि भावपरमाणुके क्षेत्रअपेक्षा तौ एकप्रदेश है। व्यवहारकालका एकसमय है। अर भाव-अपेक्षा एक अविभागीप्रतिच्छेद है। तहां पुद्गलके गुणअपेक्षा तौ स्पर्श रस गंध वर्ण इनका परिणमनका अंश लीजिये। जीवके गुणअपेक्षा ज्ञानका तथा कषायका एक अंश लीजिये। ऐसैं द्रव्यपरमाणु भावपरमाणु यथासंभव जानना। तातैं ध्यानशब्द है सो भावसाधनभी है कर्तृसाधनभी है करणसाधनभी है। तहां ध्येयप्रति व्यापाररूप होय प्रवर्तना सो भावसाधन है। बहुरि आप स्वतंत्र ध्यावै सो ध्यान कर्तृसाधन है। बहुरि साधकतमकी विवक्षा करिये तब ज्ञानावरणवीर्यांत-रायका विगमका विशेषकरि उपज्या सो जो शक्तिका विशेष ताका आत्मा ध्यावै सो करणसाधन

है। इनकी एकान्तकल्पनाविषैं दोष आदिसूत्रके व्याख्यानविषैं कहे हैं। तथा ज्ञानशब्दके करणादिसाधन कह्या है तहां जानना। जो निर्विषय ध्यान होय ताके भावसाधनपणा आदि नाहीं बणै है। भाववानविना भावका असंभव है। कर्ताका अभाव होय तहां करणपणां बणै नाहीं। सर्वथा एकान्तविषैं कारककी व्यवस्थाका असंभव है, सो पूर्वें कह्याही है॥

बहुरि कोई कहै, कल्पनारोपितविषयविषैंभी ध्यान कहिये है। सो ऐसा एकान्तकरि कहनाभी कल्याणकारी नाहीं। जातैं निर्विषयध्यानभी कल्पितहीं ठहरै है। जैसैं बालक कडावडीकल्पित चूल्हा आदिकरि कल्पित भोजनका नाम करै, तातैं तृप्ति कैसैं होय? तैसैं कल्पितध्यानतैं ध्यानीकै तृप्ति नाहीं उपजै। तातैं एकान्तवादीनिके ध्यानध्येयकी व्यवस्था ठहरै नाहीं। जातैं तिनकैं जो तत मान्या है, ताका निर्णयका अयोग है। बहुरि ध्यानका कर्ता पुरुषही थपै नाहीं। जातैं पुरुषकूं सर्वथा नित्य कूटस्थ थापै ताके पूर्वापर स्वभावका त्याग ग्रहण तौ हैही नाहीं। ध्यानकी अवस्था कहांतैं बणै? तैसैंही क्षणिक मानै तिनकै बणै नाहीं। बहुरि प्रधानकै ध्यान मानें तौ प्रधान तौ जड है। जडकै काहेका ध्यान? बहुरि प्रधानका पर्यायरूप आत्मा ध्यानी कहै तौ सोभी जडही है। प्रधानतैं जुदा तौ नाहीं। कल्पित कहै तौ अवस्तुही भया। जैसैं बौद्धका

मान्या संतान अवस्तु है तैसैं । तातैं स्याद्वादीनिहीकैं ध्याता बणै है। सो उत्तमसंहननका धारी सूत्रमें कह्याही है ॥

बहुरि इहां अन्यमती कहैं, जो, हमारे पवनके साधनेवाले हैं ते उत्तमसंहननविनाही ध्यानकी सामर्थ्यतें मनकूं वश करै हैं। ताकूं पूछिये, जो, पवन कैसैं साधी? तहां कहै, जो, गुरुका उपदेशया अभ्यास कीया, तातैं पवन जीती। तहां कहिये, उत्तमसंहननाविना ऐसा अभ्यासही बणै नाहीं। तिस अभ्यासविषैं दृढ शरीरविना पीडा उपजे। तहां अन्तर्ध्यान होय। पहलैं जाका पवनधारणाविषैं मन लीन होय ताकै अन्य ध्येयविषैं प्रवृत्ति होय। तब ध्यान काहेका? ज्ञानकूं एकाग्र करै अर पवनका यत्नभी करै। ऐसैं तौ मन एकाग्र होय नाहीं। याही युक्तितैं जे प्राणायामधारणकूं ध्यानका कारण कहे हैं तथा प्रत्याहारकूं कहे हैं तेभी बणैं नाही। बहुरि यम और नियम हैं ते ध्यानका कारण हैंही। ते स्याद्वादीभी माने हैं। जातैं असंयमीकै योगकी सिद्धि नाहीं। बहुरि अंतर्मुहूर्ततांईका ध्यानका काल कह्या है। सो यह काल हीनसंहनन-धारीकै नाहीं बणैं हैं। बहुरि उत्तमसंहननवालाभी अंतर्मुहूर्ततैं शिवाय ध्यानविषैं एकध्येयकूं ध्याय सकै नाहीं है। ऐसैं पूछे है, जो, मुनिनिकै बहुतकालभी तो ध्यानअवस्था रहै है। ताकूं कहिये,

तौ एक ध्येयकूं छोडि दूसरा ध्येयविषैं उपयोग आवै। ऐसैं अन्यअन्य ध्येय पलटनेरूप ध्यानका संतान चल्या जाय। तब बहुतकालभी ध्यानका अवस्थान कहिये। यामैं ध्यानका विरोध नाही ॥

इहां बौद्धमती तर्क करै है, जो, अंतर्मुहूर्त ध्यानकी स्थिति है। अंतर्मुहूर्तके समय तौ बहुत हैं। तिनविषैं सयमसयम एकध्येयपरि तैसाही ध्यान होय। तैसैंही द्वितीयआदि अंतर्मुहूर्तविषैं लगता तैसाही क्यों न कहौ? ऐसैं बहुतकालभी एकध्येयविषैं ध्यानका अविच्छेद आवै है। अर अंतर्मुहूर्तमें विच्छेद कहौ तौ द्वितीयसमयविषैंही विच्छेद ठहरै है। ऐसैं समयमात्रही ध्यानकी स्थिति ठहरैगी। हमारे सर्वपदार्थकी क्षणमात्र स्थितिकी मान्य है। अर क्षणिकविषैं बाधा आवै है। ताका समाधान, ऐसैं क्षणस्थायी वस्तु मानते जे बौद्धमती तिनके पहले क्षण ध्यानकी अवस्थिति है, तैसैंही तिस ध्यानके अंतसमयभी एकक्षणस्थायीपणा ठहऱ्या, तब ध्यानका काहूं क्षणकेविषैं विनाश नाही कहिये। जातैं सर्वक्षणमें व्यापक ध्यानकी स्थिति ठहरी। जो ऐसैं न मानिये तौ एकक्षणमात्रभी स्थिति नाहीं ठहरै। अर वह कहै, जो, एकक्षणस्थायीके जो उत्पत्ति है सोही विनाश है। तातैं सदाअवस्थित नाहीं कहिये। ताकूं कहिये, जो, ऐसैं है तौ हम अंतर्मुहूर्तस्थिति-मात्र ध्यान कहै हैं। सो हमारैभी अंतर्मुहूर्ततैं उत्तरकालविषैं समयआदिकी स्थितिकी उत्पत्ति सोही

विनाश है। अर अंतर्मुहूर्त स्थिरता सो ध्यानका आत्मलाभरूप उत्पत्ति है। ऐसैं अविच्छेदरूप होनेतैं सदा अवस्थितरूप ध्यानका प्रसंग नाहीं आवै है। तातैं नित्य कूटस्थ ठहरै। तब वह कहै है, अन्यकालविषैं अन्यकी उत्पत्ति भई सोही अंतर्मुहूर्त ठहरनेवालाका नाश कैसैं मानिये? तहां कहिये, जो, क्षणकाभी तौ अन्यअन्यकाल है। तामें एकक्षणमें नाश अन्यक्षण स्थितिपणाकरि उत्पत्ति कैसैं माने है? यामें तो हमारा अर तेरा कहना समान है। ऐसैं होतैं क्षणिकवस्तुकै उत्पत्ति विनाश दोऊही सिद्ध नाहीं होय हैं। कूटस्थ नित्यकीही सिद्धि होय है॥

बहुरि जो क्षणिकवादीनिका ऐसा अभिप्राय है, जो, एकक्षणपीछैं नाश होय है सो दूसरे-क्षण तिष्ठनेरूप उपजै है ऐसैं सदा रही उत्पत्ति, सदाही विनाश नाहीं ठहरै है। जातैं क्षणिककी सिद्धि न होय। सो ऐसैं मानैंगा तौ अंतर्मुहूर्तस्थितिरूपभी ठहरैगा। सो अंतर्मुहूर्त ठहरिकरि नाश भया पीछैं अन्य अंतर्मुहूर्त ठहरनेकूं उत्पत्ति भई। ऐसैं समान है। बहुरि वह कहै, जो, ऐसैं है तौ संवर आदिपर्यंत ध्यानका काल क्यों न कहै। ताका उत्तर, जो, जैसा जहां संभवै तैसा तहां कहिये। मनकी वृत्तिस्वरूप जो चिंताका निरोध एकध्येयविषैं अंतर्मुहूर्तशिवाय ठहरना संभवै नाहीं। यह अनुभवगोचर है। मनकी वृत्तिके एकविषयतैं अन्यविषयविषैं उलटना देखिये है। ऐसैं

हीनसंहननवालाके चिंताका निरोध अल्पकाल देखि अर उत्तमसंहननवालेके अंतर्मुहूर्तकी संभावना करिये है। आगमप्रमाणकरिभी यह सिद्ध है। बहुरि अंतर्मुहूर्तका स्वरूप आगमतैं जानना॥

बहुरि इहां कोई कहै, जो, ज्ञान है सोही ध्यान है। ताकूं कहिये, जो, ऐसैं नाहीं है। ज्ञान है सो तौ चलाचलरूप है। ध्यान है सो ज्ञानका निश्चलपणा है। यातैं ज्ञानतैं याका लक्षण जुदा है। याहीतैं ध्यानकूं अधिकाररूपकरि ताका स्वरूप कहनेकूं अंतर्मुहूर्त कहनेतैं बहुतकालरूप दिवसादिकका निषेध है। जातैं ऐसी शक्तिका अभाव है। बहुरि सूत्रविषैं एकशब्द है ताका अर्थ प्रधानपणाभी होय है। तिस अर्थकी अपेक्षा इहां एक कहिये प्रधान जो ध्यान करनेवाला पुरुष ताहीविषैं चिंताका निरोध करै। बहुरि अग्रशब्दकाभी अर्थ पुरुष होय है। ताकी अपेक्षाभी पुरुषविषैं चिंताका निरोध कहिये अन्यध्येयकूं छोडि आपविषैंही ध्यानकी प्रवृत्ति होय है। ऐसैं अनेकअर्थका वाची जो एकाग्रशब्द सो सूत्रमें युक्त स्थाप्या है। इहां एकार्थवचनही नाहीं ग्रहण करना। जो एकार्थ ऐसा वचन ग्रहण करिये तौ "वीचारोऽर्थव्यंजनयोगसंक्रान्तिः" इस सूत्रमें द्रव्यपर्यायविषैं पलटनेका अर्थ है। ताका निषेध आवै। तातैं एकाग्रशब्दतैं पलटनेका अर्थ विरोध्या न जाय है। ऐसैं जानना॥

बहुरि जो चिंताका निरोध दिवसमासादि पर्यंत ठहरना कहिये तौ बणै नाहीं। जातैं बहुतकाल रहे इन्द्रियनिकै पीडा उपजै है। बहुरि जो श्वासोच्छ्वासके रोकनेकूं ध्यान कहिये तौ सांशरूपके तौ शरीरका नाश होय मृत्यु होय जाय है। बहुरि जो अन्यवादी कहै, मंदमंद श्वासोच्छ्वासका प्रचार करि रोकै तौ शरीरका पात न होय है, यामैं पीडाभी नाहीं होय है॥ ताकूं कहिये, जो, ऐसा नाहीं है। मंद श्वासोच्छ्वास रोकनेका साधन करना तौ ध्यानका साधन करना है। जैसैं आसनआदि साधिये है, तैसैं यहभी है। ध्यान तौ एकाग्रचिंतानिरोध होय सोही है। बहुरि जय आदिविषैं चित्तकी प्रवृत्ति रहै है सोभी ध्यान नाहीं है। बहुरि ध्यानके साधनके उपाय गुप्त्यादिक पहलै कहेही, ते संवरके कारणभी हैं। अर ध्यानकेभी उपाय हैं॥

आगें ध्यानके भेद दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ आर्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥ २८ ॥

याका अर्थ— आर्त रौद्र धर्म्य शुक्ल ए च्यारि ध्यानके भेद हैं। तहां ऋतुनाम दुःखका है, अथवा अर्दन कहिये अर्ति पीडा बाधा तिसविषैं उपजै सो आर्त कहिये। रुद्र नाम क्रूर आशयका है, ताका कर्म तथा ताविषैं उपजै सो रौद्र कहिये। धर्म पहलां कह्या, सो तातैं सहित होय सो

धर्म्य कहिये। शुचिगुणयोगतैं शुक्ल कहिये। आत्माका परिणाम कषायमलरहित उज्वल होय सो शुक्ल है। सो यह च्यारिप्रकार ध्यान है। प्रशस्त अप्रशस्त भेदतैं दोयप्रकार है। तहां अप्रशस्त आर्त रौद्र हैं। सो तौ पापके आश्रवकूं कारण हैं। बहुरि प्रशस्त धर्म्य शुक्ल हैं। सो कर्मके नाशकूं कारण हैं॥ आगें कहै हैं, प्रशस्तध्यान कैसैं है ताका सूत्र—

॥ परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥

याका अर्थ— पर कहता अंतके दोय ध्यान हैं ते मोक्षके कारण हैं। तहां परशब्दतैं अंतका एक है ताके समीपतैं धर्म्यकूं उपचारकरि पर कहिये। जातैं सूत्रमें द्विवचन है, ताकी सामर्थ्यतैं गौणकाभी ग्रहण भया। ऐसैं पर कहता धर्म्य शुक्ल ए दोय मोक्षके कारण हैं। प्रशस्त हैं इस वचनकी सामर्थ्यतैंही पहले आर्त रौद्र दोऊ अप्रशस्त संसारके कारण जानिये॥ आगें आर्तध्यान च्यारिप्रकार है, तहां आदिके भेदका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ आर्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥

याका अर्थ— अमनोज्ञवस्तुका संयोग होतैं तिसके वियोग करनेकूं बारबार चिंतवन होय, चिंताका प्रबंध होय, सो पहला आर्तध्यानका भेद है। तहां अमनोज्ञ नाम अप्रियका है। जो

आपकूं बाधाका कारण ऐसैं विष कंटक शत्रु शस्त्र होय, सो अमनोज्ञ है। तिसके संयोग होतें मेरे यह कैसें वियोग होय? ऐसा संकल्प होय, सोही चिंताका प्रबंध ताकूं स्मृतिसमन्वाहार कहिये। यह पहला आर्तध्यान कहिये॥ आगें दूसरे भेदका लक्षणसूत्र कहे हैं—

॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥

याका अर्थ— मनोज्ञवस्तुके वियोग होतें तिसके संयोगके अर्थि वारवार चिंतवन रहै, सो दूसरा भेद आर्तध्यानका है। तहां पहले भेदमें कह्या तिसतें विपरीत कहिये। तातें ऐसा अर्थ भया, जो, मनोज्ञ प्यारा जो अपना पुत्र स्त्री धन आदि वस्तु तिनका वियोग होतें तिनके संयोग होनेके अर्थि संकल्प रहै वारवार चिंताका प्रबंध होय, सो दूसरा आर्तध्यानका भेद है॥

आगें तीसरा भेद आर्तध्यानका लक्षणका सूत्र कहे हैं—

॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥

याका अर्थ— वेदना कहिये रोगकी पीडा ताका वारवार चिंतवन रहै, सो तीसरा आर्तध्यानका भेद है। तहां वेदनाशब्दका अर्थ सुखदुःख दोऊही है। तथापि यहां आर्तध्यानका प्रकरण है। तातें दुःखकाही अर्थ लेना। ऐसैं वातआदि रोगविकारकरि उपजी वेदना ताका मेरे

नाश कैसैं होय? ऐसा संकल्परूप चिंताप्रबंध होय सो तीसरा भेद आर्तध्यानका है ॥ आगें चौथा भेद आर्तध्यानका लक्षणसूत्र कहै हैं—

॥ निदानं च ॥ ३३ ॥

याका अर्थ— आगामी भोगनिकी वांछा, सो निदान कहिये। ताका चिंतवन रहै, सो चौथा भेद आर्तध्यानका है। भोगनिकी वांछाकरि आतुर जो पुरुष ताके आगामी कालविषय विषयनिकी प्राप्तिप्रति मनका संकल्प रहै, वारवार चिंतवन रहै, सो चौथा भेद आर्तध्यानका है। इहां कोई कहै, जो, मनोज्ञवस्तुके संयोगकी वांछा तौ दूसरे भेदविषैं कहीही थी, यामें वामें कहा भेद? ताकूं कहिये, पूर्वैं न पाये ऐसैं विषयकी प्राप्तिकी वांछा सो तौ निदान है। अर पायेका वियोग है, ताके संयोगकी वांछा सो दूसरा भेद है ऐसा विशेष जानना ॥ आगें पूछै है, ए च्यारि भेद आर्तध्यानके कहे ते कौन कौनके होय हैं? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्तसँयतानाम् ॥ ३४ ॥

याका अर्थ— यह च्यारिप्रकारका आर्तध्यान अविरतका है ये असंयमी, देशविरत कहिये संयमासयमी, प्रमत्तसंयत कहिये प्रमादसहितसंयमी इनकै होय है। तहां अविरत तौ मिथ्यात्व-

गुणस्थानतैं लगाय अविरतसम्यग्दृष्टिपर्यंत जानना। देशविरत संयमासंयमवाले श्रावक हैं। प्रमत्तसंयत पंदरहप्रमादसहित मुनिपणाकी आहारविहारआदि क्रिया तथा आचार्यपदकी क्रियाके आचरनेवाले हैं। तहां अविरत देशविरतकै तौ च्यारिही प्रकारका आर्तध्यान होय है। जातैं ए असंयमपरिणामकरि सहित हैं। बहुरि प्रमत्तसंयमीनिकै विदानरहित तीनिही आर्तध्यान होय हैं। सो जिसकाल प्रमादका तीव्र उदय आय जाय तिसकाल होय है, सदाही न होय है॥

याका विशेष ऐसा, जो, आर्तध्यान तीव्र होय है, तब कृष्ण नील कापोत लेश्याके बलतैं होय है। अज्ञानतैं उपजै है। पुरुषके परिणाम यामें लीन होय है। पापका प्रयोगके आश्रवतैं होय है। बाह्यविषयके प्रसंगतैं होय है। अनेकसंकल्प जामें पाइए। धर्मके आश्रव छुडावनहारी जे कषाय तिनके आश्रयतैं होय है। कषाय तीव्र बधावनहारा है। प्रमाद याका मूल है। पापकर्मका यातैं ग्रहण होय है। जाका फल कडवा है। तिर्यंचगतिका कारण होय है। सो ऐसा तौ मिथ्यादृष्टीकै होय है। बहुरि सम्यग्दृष्टि देशव्रती संयमीकै उत्तरोत्तर मंद है॥

आगें आर्तध्यान तौ संज्ञादिकरि कहा, अब दूसरा ध्यानकी संज्ञा हेतु स्वामीके निर्द्धारके अर्थि सूत्र कहे हैं—

॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥ ३५ ॥

याका अर्थ— हिंसा अनृत स्तेय विषयकी रक्षा इनतैं रौद्रध्यान होय है। तातैं याके च्यारि भेद हैं। सो अविरत अर देशविरत इन दोऊनिकै होय है। हिंसा आदिका स्वरूप तौ पहले कह्याही था। ते रौद्रध्यानकी उत्पत्तिकूं कारण होय हैं। याहीतैं सूत्रमें पंचमीविभक्तिरूप हेतुका निर्देश किया है। इहां स्मृतिसमन्वाहार जो चिंताप्रबंध ताका संबंध करना। हिंसाका स्मृतिसमन्वाहार इत्यादि। सो यहू रौद्रध्यान अविरत देशविरतकै दोऊनिकै होय है। इहां प्रश्न, जो, अविरतकै तौ रौद्रध्यान होनेयोग्य है, देशविरत कैसें कह्या? ताका उत्तर, जो, देशविरतकै हिंसादिका आवेश पाईए है, विरतआदिकी रक्षाके आधीन है। तातैं कदाकाल होय है, सो यातैं नरकादिक दुर्गतिका कारण नाहीं है। जातैं याकै सम्यग्दर्शनकी सामर्थ्य है। तातैं ताका फल मंद है। बहुरि सकलसंयमीकै यह होयही नाहीं है। जो यह तौ संयमीतैं च्युत होय जाय। यह रौद्रध्यान तीव्र होय है, तब अतिकृष्ण नील कपोतके बलतैं होय है। प्रमाद याका आश्रय है। नरकगतिका कारण है। इन दोऊ अप्रशस्त ध्याननितैं आत्मा ताता लोहका पिंड जैसैं जल खैंचै तैसैं कर्मनिकूं खैंचै है॥

आगें पूछे है, जो, दोय ध्यान उत्तर मोक्षके कारण कहे, तामें आद्यका ध्यानके भेद स्वरूप स्वामीका निर्देश करना। ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम् ॥ ३६ ॥

याका अर्थ— आज्ञा अपाय विपाक संस्थान इनिका विचय कहिये विचार ताकै अर्थि चिंतवन होय सो ए धर्म्यध्यानके च्यारि भेद हैं। तहां विचय विवेक विचारणा एकार्थ है। आज्ञा अपाय विपाक संस्थान इन च्यारिनिका विचय। बहुरि स्मृतिसमन्वाहारकी इहां अनुवृत्ति करणी सो जुदाजुदा लगाय लेणा। ऐसैं आज्ञाविचय स्मृतिसमन्वाहार इत्यादि संबंध जानना। सोही कहिये हैं। तहां उपदेशदाताके अभावतैं अपनी मंदबुद्धीतैं कर्मके उदके वशतैं जे सूक्ष्मपदार्थ हैं तिनका हेतु दृष्टांत जानेंविना सर्वज्ञका कह्या आगमहीकूं प्रमाणकरि अर "यह पदार्थका स्वरूप सर्वज्ञ भाषा है तैसैंही है, जातैं जिनदेव सर्वज्ञ वीतराग है, अन्यथा कहै नाहीं,' ऐसैं गहन पदार्थका श्रद्धानतैं अर्थका अवधारणा सो आज्ञाविचय है। अथवा आप जान्या है पदार्थका स्वरूप जानें, तैसाही परकूं कहनेकी है इच्छा जाकै ऐसे पुरुषके अपने सिध्दांतके अविरोधकारि तत्त्वार्थकूं दृढ कर- नेका है प्रयोजन जामें, बहुरि तर्क नय प्रमाणकी योजनाके विषैं प्रवीण ऐसा जो स्मृतिसमन्वाहार

कहिये वारवार चिंतवन, सोभी आज्ञाविचय है। जातैं यामें सर्वज्ञकी आज्ञा प्रकाशनेहीका प्रयोजन भया, तातैं आज्ञाविचय ऐसा कहना ॥

बहुरि ये प्राणी सर्वज्ञके आज्ञातैं विन्मुख हैं, ते सर्व अंधकीज्यों मिथ्यादृष्टि हैं, अर मोक्षके अर्थि हैं परंतु सम्यङ्मार्गतैं दूरिही प्रवर्त्तै हैं। ऐसैं समीचीनमार्गका अपायका चिंतवना सो अपायविचय है। अथवा मिथ्यादर्शन ज्ञान चारित्रतैं ए प्राणी कैसैं रहित है! ऐसी चिंता वारवार करणी सोभी अपायविचय है। अपाय नाम अभावका है। सो मिथ्यादृष्टिनिके सांचे मार्गका अभाव चिंतवना तथा तिनके मिथ्यामार्गका अभावका उपाय चिंतवना तातैं अपायविचय कहिये। बहुरि ज्ञानावरणादि कर्मनिका द्रव्य क्षेत्र काल भव भावके निमित्ततैं भया जो फल ताका अनुभवका जो चिंतवना, सो विपाकविचय है। बहुरि लोकका संस्थानके विषैं चिंतवन रहै, सो, संस्थानविचय है। ऐसैं उत्तमक्षमादिरूप धर्म कह्या था तथा सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप धर्म तथा वस्तुका स्वरूप सो धर्म तिसतैं लग्या हूवा धर्मध्यान च्यारिप्रकारही जानना। यह अविरतसम्यग्दृष्टि देशविरत प्रमत्तसंयत अर अप्रमत्तसंयत इनकै होय है ॥

इहां ऐसा जानना, जो, आज्ञा तौ सर्वज्ञकी वाणी है। अपाय मिथ्यात्वतैं अपशरण करना

है। कर्मका फल सो विपाक। लोकका आकार सो संस्थान। तहां आज्ञासामान्य चिंतवै तब एकरूप चिंतानिरोध होय अरु न्यारा न्यारा पदार्थकूं आज्ञाप्रमाणकरि चिंतवै तब न्यारा जानना ॥ ऐसैंही संस्थानविषैंभी सामान्यविशेष चिंतवन जानना। अर अपायविपाकमें न्यारान्याराही चिंतवनविषैं चिंतानिरोध होय है ॥ बहुरि अविरतसम्यग्दृष्टि आदि तिनकै तौ गौणवृत्तिकरि ध्यान है। अरु अप्रमत्तकै यह ध्यान मुख्य है। बहुरि अनुप्रेक्षा तौ चिंतवनरूपही है। अरु जब एकाग्रचिंतानिरोध होय तब ध्यान कहिये है। ऐसैं अनुप्रेक्षातैं ध्यान जुदा जानना। बहुरि इहां कोई पूछे है, जो, मिथ्यादृष्टि अन्यमती तथा भद्रपरिणामी व्रतशीलसंयमादि तथा जीवनिकी दयाका अभिप्रायकरि तथा भगवानकी सामान्यभक्तिकरि धर्मबुद्धितैं चित्तकूं एकाग्रकरि चिंतवन करै है, तिनकै शुभ धर्मध्यान कहिये कि नाहीं? ताका समाधान, जो, इहां मोक्षमार्गका प्रकरण है। तातैं जिस ध्यानतैं कर्मकी निर्जरा होय सोही इहां गणिये है। सो सम्यग्दृष्टिविना कर्मकी निर्जरा होय नाहीं। मिथ्यादृष्टिकै शुभध्यान शुभबंधहीका कारण है। अनादितैं केईवार ऐसा ध्यानकरि शुभ बांधे है, परंतु निर्जराविना मोक्षमार्ग नाहीं। तातैं मिथ्यादृष्टिका ध्यान मोक्षमार्गमें सराह्या नाहीं, ऐसा जानना ॥

आगें तीनि ध्यानका तौ निरूपण कीया अब शुक्लध्यानका निरूपण करना सो यह च्यारि प्रकार कहसी तिनमें आद्यके दोयका स्वामीका निर्देशकै अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥ ३७ ॥

याका अर्थ— आद्यके दोय शुक्लध्यान पूर्वके जाननेवालेकै होय हैं। तहां कहैंगे जे च्यारि शुक्लध्यानके भेद तिनमें आदिके दोय ध्यान पूर्वका जाकूं ज्ञान होय ताकै होय है। इहां पूर्वविद्शब्दकरि श्रुतकेवली जानना। बहुरि सूत्रमें चशब्द है, ताकरि ऐसा जानना, जो, श्रुतकेवलीकै धर्मध्यानभी होय है। जातैं सूत्रके व्याख्यानतैं विशेषकी प्रतिपत्ति होय ऐसा वचन है। तातैं प्रमत्त अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती मुनिभि पूर्वके वेत्ता होय हैं। तिनकै धर्म्यध्यानभी होय है। जातैं श्रेणीके चढने पहली तौ धर्म्यध्यान है। अरु श्रेणी चढै तब शुक्लध्यान होय है ऐसा व्याख्यान है। तातैं चशब्दकरि श्रुतकेवलीकै प्रमत्तअप्रमत्तविषैं धर्म्यध्यान होय है, ऐसा समुच्चय कीजिये॥

आगें पूछै है, कि, अवशेष दोय ध्यान कौनकै होय? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं—

॥ परे केवलिनः ॥ ३८ ॥

याका अर्थ— परे कहतां उत्तर जे दोय ध्यान ते केवलज्ञानीकै होय हैं। तहां जिनकै सम-

स्तज्ञानावरण दर्शनावरणका क्षय भया ऐसे जे सयोगकेवली तथा अयोगकेवली तिनकै उत्तर दोय शुक्लध्यान यथासंख्य जानने। सयोगकेवलीकै तीसरा सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति होय है। अयोगकेवलीकै चौथा व्युपरतक्रियानिवर्ति होय है॥ आगें शुक्लध्यानके भेद कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥ ३९ ॥

याका अर्थ— पृथक्त्ववितर्क एकत्ववितर्क सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति व्युपरतक्रियानिवर्ति ए च्यारि शुक्लध्यानके भेद हैं। इनका अर्थ आगें सूत्र कहसी। तिनकी अपेक्षा अन्वर्थ कहिये जैसा इनका नाम है तैसाही अर्थ जानना॥

आगें, इनके योगनिका आलंबन न्यारान्यारा है। ताके जाननेके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥ ४० ॥

याका अर्थ— पहला भेद तौ तीनूं योगनिविषैं होय है। दूजा भेद तीनूं योगमें एक कोई योगविषैं होय है। तीसरा भेद एक काययोगहीविषैं होय है। चौथा भेद योगरहितविषैं होय है। तहां योग तौ काय वचन मनकी क्रिया है, सो पूर्वैं इनका स्वरूप कह्याही है। सो च्यारि भेद शुक्लध्यानके कहे, तिनकै तीनि योग, एक योग, काययोग, अयोग ए च्यारि यथासंख्य

संबंध करि लेणा। तातैं ऐसा कहना, जाकै तीनूं योग प्रवर्तैं, ताकै तौ पृथक्त्ववितर्क होय है। जाकै तीनूं योगमें एक योग प्रवर्तैं, ताकै एकत्ववितर्क होय है। जाकै काययोगही प्रवर्तैं, ताकै सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति होय है। जाकै योग नाहीं प्रवर्तैं, ताकै व्युपरतक्रियानिवर्ति होय है। ऐसैं जानना ॥ आगें आद्यके दोय शुक्लध्यानके विशेष जाननेकूं सूत्र कहै हैं--

॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ॥ ४१ ॥

याका अर्थ-- पृथक्त्ववितर्क एकत्ववितर्क ए दोऊ ध्यान एकाश्रय कहिये श्रुतकेवलीके आश्रय होय हैं। सो वितर्क अर वीचारसहित होय है। तहां एक है आश्रय जिनकै ते एकाश्रय कहिये। ते दोऊही श्रुतज्ञान पूर्ण जिनकै होय ते आरंभै हैं। बहुरि वितर्क अरु वीचार इन दोऊ-सहित होय ते सवितर्कवीचार हैं। ऐसैं पूर्वे कहिये पहले पृथक्त्ववितर्क एकत्ववितर्क ए दोऊ हैं ॥

आगें इस सूत्रमें वितर्कवीचारका यथासंख्य प्रसंग आवै ताका निषेधके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥ ४२ ॥

याका अर्थ— द्वितीय कहता दूसरा जो एकत्ववितर्क सो अवीचार है, यामें विचार नाहीं। पहले दोय शुक्लध्यान तिनमें दूसरा है सो वीचाररहित है। इहां ऐसा अर्थ भया, जो, आदिका तौ

वितर्कसहित अर वीचारसहित है। अर दूसरा वितर्कसहित अवीचार है ॥

आगें वितर्कवीचारविषैं कहा विशेष है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥

याका अर्थ— वितर्क ऐसा श्रुतकूं कहिये। इहां तर्कण कहिये समूहन सो विशेषकरि होय सो वितर्क है। सो ऐसा नाम श्रुतज्ञानका है। सो इहां श्रुतज्ञान शब्दश्रवणपूर्वक ज्ञानका ग्रहण है। अर मतिज्ञानका भेद चिंताका नामभी तर्क है, ताका ग्रहण नाहीं है ॥

आगें पूछैं है कि, वीचार कहा है? ऐसैं पूछैं सूत्र कहै हैं--

॥ वीचारोऽर्थव्यञ्जनयोगसंक्रान्तिः ॥ ४४ ॥

याका अर्थ — अर्थ व्यंजन योग इन तीनूनिका संक्रांति कहिये पलटना, सो वीचार है। तहां अर्थ कहता तौ अभिधेयवचनकरि कहनेकूं योग्य वस्तु है, सो द्रव्य है तथा पर्याय है। बहुरि व्यंजनशब्दकरि वचनका ग्रहण है। बहुरि योग कायवचनमनकी क्रियाकूं कहिये है। बहुरि संक्रांति कहिये परिवर्तन पलटना। तहां द्रव्यकूं छोडि पर्यायमें आवै, पर्यायकूं छोडि द्रव्यमें आवै यह तौ अर्थसंक्रांति है। बहुरि एक श्रुतके वचनकूं ग्रहणकरि फेरि ताकूं छोडि दूसरा श्रुतका वच-

नकूं आलंबन करै फेरि ताकूंभी छोडि अन्यवचनकूं आलंबै यह व्यंजनसंक्रांति है। बहुरि काययोगका आलंबनकूं छोडि वचनयोग तथा मनोयोगकूं आलंबन करै, अन्ययोगकूं छोडि फेरिफेरि काययोगकूं आलंबै यह योगसंक्रांति है। ऐसा परिवर्तन करै सो वीचार है ॥

इहां प्रश्न, जो, ऐसैं उलटै तब ध्यान कैसैं कहिये? ध्यान तौ एकाग्र कह्या है। ताका समाधान, जो, एककूं आलंबिकरि क्यों एक ठहरि पीछै दूजेकूं आलंबन करै तहां ठहरै। ऐसैं ध्यान तौ ठहरनेहीकूं कहिये। परंतु इहां पहलैं ठहऱ्या फेरि ठहरना ऐसैं ध्यानका संतान है, सो ध्यानही है, यातैं दोष नाहीं। सो यह सामान्यविशेषकरि कह्या जो च्यारिप्रकार धर्मध्यान अर च्यारिप्रकार शुक्लध्यान सो पहले कहे जे गुप्ति आदि तिनस्वरूप जो अनेकप्रकार ध्यानके उपाय तिनकरि कीया है उद्यम जानैं ऐसा जो मुनि सो संसारके नाशके अर्थि ध्यान करनेकूं योग्य हो है। तहां द्रव्यपरमाणु अथवा भावपरमाणुकूं ध्यावता लीया है श्रुतज्ञानका वचनस्वरूप वितर्ककी सामर्थ्य जानैं ऐसैं अर्थ अरु व्यंजन तथा काय अर वचनकूं पृथक्त्व कहिये भिन्नपणाकरि पलटता जो मन सो कैसा है मन? जैसैं कोई पुरुष कार्य करनेकूं उत्साह करै सो जेता अपना बल होय तेतैं कीयाही करै बैठि न रहै, तैसैं मनका बल होय तैसैं ध्यानकी पलटनी होबो करै, बैठि न रहै। ऐसैं

मनकरि ध्यावता संता मोहकी प्रकृतिनिकूं उपशम करता संता तथा क्षय करता संता पृथक्त्ववितर्कवीचार ध्यानका धारी होय है ॥

इहां दृष्टांत ऐसा, जैसें, कोई वृक्षकूं काटने लगा ताकै शस्त्र कुहाडी तीखी न होय तब थोडा थोडा अनुक्रमतैं काटै, तैसें इस ध्यानकेविषैं मनकी पलटनि है सोहू शक्तिका विशेष है। तातैं अनुक्रमतैं मोहकी प्रकृतिका क्षय तथा उपशम करै है। बहुरि सोही ध्यानी जब समस्तमोहनीयकर्मकूं दग्ध करनेकूं उत्साहरूप होय तब अनंतगुणी विशुद्धताका विशेषकूं आश्रयकरि बहुत जे ज्ञानावरणकर्मकी सहाय करनेवाली कर्मप्रकृति तिनकी बंधकी स्थितिकूं घटावता तथा क्षय करता संता अपना श्रुतज्ञानका उपयोगरूप हूवा संता नाहीं रचा है अर्थव्यंजनयोगका पलटना जानें ऐसें निश्चल मनस्वरूप होता संता क्षीण भये हैं कषाय जाके ऐसा वैडूर्यमणिकीज्यौं मोहका लेपतैं रहित भया ध्यानकरि फेरि तिसतैं निवर्तन न होय पलटै नाहीं, ऐसें एकत्ववितर्कअवीचार दूसरा होय है। ऐसेंही सो ध्यानी एकत्ववितर्क शुक्लध्यानरूप अग्निकरि दग्ध कीये हैं घातिकर्मरूप ईंधन जानें अर देदीप्यमान भया है केवलरूप किरणनिका मंडल जाकै ऐसा बादलेके पिंजरमें छिप्या था जो सूर्य जैसें ताकूं दूरि भये निकलै तब बहुत देदीप्यमान सोहै, तैसें सोहता संता भगवान्

तीर्थंकर तथा अन्य केवली इंद्रनिकै आवनेयोग्य स्तुति करनेयोग्य पूजनेयोग्य उत्कृष्टिकरि कछू घाटि कोटिपूर्व आयुकी स्थितिताईं विहार करै है। सो जब अंतर्मुहूर्त आयु अवशेष रहै तब जो आयुकर्मकी स्थितिकै समानही वेदनीय नाम गोत्र कर्मकी स्थिति रह जाय तब तौ सर्व वचनमनयोग अर बादरकाययोगकूं निरोधरूप करि सूक्ष्मकाययोगकूं अवलंबै तब सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति ध्यानके ध्यावनेयोग्य होय है। बहुरि जो जब अंतर्मुहूर्त आयुकर्मकी स्थिति रहै तब वेदनीय नाम गोत्रकर्मकी स्थिति अधिक रही होय तौ यह सयोगी भगवान् अपना उपयोगका अतिशयकरि शीघ्र कर्मका पचावनेकी अवशेष कर्मरजका झाडनेकी शक्तिके स्वभावतैं दंड कपाट प्रतर लोकपूरण ए च्यारि क्रियारूप आत्माका प्रदेशनिका फैलना, सो च्यारि समयमें करि अरु बहुरि च्यारिही समयमें संकोच्या है प्रदेशनिका फैलना जानैं अर समानस्थिति कीये है च्यारि अघातिकर्म जानें ऐसे पहलें शरीरप्रमाण था तिसही प्रमाण होयकरि सूक्ष्मकाययोगकरि सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति ध्यानकूं ध्यावै है। यह केवल समुद्घातकरि भया हो है। इहां उपयोगके अतिशयके विशेषण ऐसें हैं। सामायिक है सहाय जाकै, विशिष्ट है कारण कहिये परिणामनका विशेष जाकै, महासंवरस्वरूप है ऐसें तीनि विशेषणरूप उपयोगका अतिशय है॥

बहुरि तापीछे लगताही समुछिन्नक्रियानिवर्ति ध्यानका आरंभ करै है। तहां उच्छिन्न कहिये दूरि भया है श्वासोश्वासका प्रवर्तन जहां, बहुरि सर्व काय वचन मनयोग सर्वप्रदेशनिका चलना जहां दूरि भया है, यातैं याकूं समुच्छिन्नक्रियानिवर्ति ऐसा नाम कहिये है। तिस ध्यानविषैं सर्व बंध अर सर्व आश्रवकरि निरोधरूप अवशेष कर्मका झाडनेरूप सामर्थ्यकी प्राप्ति है सो इस अयोगकेवली भगवानके सम्पूर्ण यथाख्यातचारित्र ज्ञान दर्शन भये हैं, ते सर्व संसारके दुःखके जालका जो संबंध ताका नाश करनेवाले हैं, साक्षात लगताही मोक्षके कारण हैं, ऐसै प्रगट भये हैं। सो यह भगवान तिस कालविषैं तिस ध्यानके अतिशयरूप अग्निकरि दग्ध भयो जो सर्वकर्मरूप मलका कलंक तातैं जैसैं अग्निके प्रयोगतैं धातुपाषाणरूप समस्त कीट जाका वलि जाय दूरि होय, तब शुद्ध सुवर्ण नीसरै, तैसैं पाया है आत्मस्वरूप जानैं ऐसा होय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। ऐसैं यह दोय प्रकार बाह्य आभ्यंतरका तप है, सो नवीनकर्मके आश्रवका निरोधका कारणपणातैं तौ संवरका कारण है। बहुरि पूर्वकर्मरूप रजके उडावनेकूं कारण है। तातैं निर्जराका कारणभी है॥

इहां विशेष लिखिये हैं। केवलीकै चिंतानिरोधका अभाव है। जातैं क्षयोपशमज्ञानकी मनके द्वारा प्रवृत्ति होय सो चिंता है। क्षायिकज्ञानमें उपयोग निश्चल है अर ध्यानका लक्षण

एकाग्रचिंतानिरोध कह्या, सो केवलीकै यह नाहीं । यातैं उपचारकरि ध्यान कहिये । ध्यानका कार्य योगका रुकना अघातिकर्मका नाश होना सो उपचारका निमित्त है । यातैं उपचार कहना बनैं है । बहुरि सकलपदार्थ जाकै साक्षात् भये हैं तातैं ध्यावनेयोग्य ध्येयभी किछू नाहीं है । बहुरि उपयोग नित्य निश्चल भया तातैं सदा ध्यानरूपही है । सो या अपेक्षा निश्चयध्यानीभी कहिये । स्याद्वादीनिकै किछु विरोध नाहीं । बहुरि मोहके नाशतैं सोही सुख है । ज्ञानावरण दर्शनावरणके नाशतैं अनंतज्ञानदर्शन है । अंतरायके नाशतैं अनंतवीर्य है । बहुरि मुक्ति भये पीछें आयुकर्मके अभावतैं फिरि जन्म मरण नाहीं हैं । नामकर्मके अभावतैं अमूर्तिकपणा प्रगट होय है । गोत्रकर्मके अभावतैं नीच ऊंच कुल नाहीं है । वेदनीयके अभावतैं इंद्रियजनित सुखदुःख नाहीं है । ऐसैं ध्यानके प्रभावतैं आत्मा ऐसा होय है ॥

बहुरि अब ऐसैं ध्यानका मुनि उद्यम करै है, तब उत्तमसंहननपणाकरि परीषहकी बाधा सहनेकी शक्ति आपमें जाणैं, तब ध्यानयोग्य परिचय करै । सो कहिये हैं । पर्वत गुंफा तथा दरी कंदरा जहां पर्वतमें जलका प्रवेश निकट होय सो कंदरा बहुरि वृक्षका कोटर नदीकी पुल मसाण-भूमि जीर्ण उद्यान सूना घर इत्यादिमें एकजायगा जहां अवकाश होय सर्प पशु पक्षी मनुष्यका

गमनागमन नाहीं, तथा निवास नाहीं, जहां अतिउष्णता नाहीं, अतिशीत नाहीं, अतिपवन नाहीं, वर्षा आताप नाहीं, सर्वतरफतें बाह्य अभ्यंतर विशेष कारणतें रहित ऐसा भूमितल होय, पवित्र होय, जहां स्पर्शभी अनुकूलही होय बाधाकारी नाहीं, तहां जैसें सुखरूप निराकुलताका कारण आसनकरि तथा पल्यंकासनकरि शरीरकूं सरलकरि अपना अंकविषें बावा हस्ततल धरै, ताके उपरि जीमणा हस्ततल धरै, नेत्र अति उघाडे नाहीं, अति मींचे नाहीं, दंतनिकरि दंतनिके अग्रभाग धारै, किंचित् ऊंचा मुख कीये सरल सूधा कडि कीये सूधे स्तंभवत् मूर्ति जाकी, बहुरि अंतःकरणके अभ्यासकरि गंभीर है वाणी जाकी, प्रसन्न है मुखवर्ण जाका, नेत्रनिकी टिमकार रहित है सौम्यदृष्टि जाकी, बहुरि दूरि भये है निद्रा आलस्य काम राग रति अरति शोक हास्य भय द्वेष ग्लानि जाके, मंदमंद श्वासोश्वासका है प्रचार जाके इत्यादि क्रियासहित साधू नाभीके उपरि हृदयविषें तथा मस्तकविषें तथा अन्यप्रदेशविषें मनकी वृत्तिकूं स्थापि जैसा परिचय विचारै तैसा विषय मन लगाय मोक्षका इच्छक प्रशस्तध्यानकूं ध्यावै ॥

इहां कोई पूछे है, शुक्लध्यान ध्यावे ताके ध्येयकूं ध्यावनेकी इच्छा है कि नाहीं? ताका समाधान, जो, इच्छा है सो मोहका उदयका कार्य है, सो जहांताईं अनुभवमें मोहका उदय रहे

तहांताईं तो व्यक्तरूप इच्छा है अरु जब मोहका उदय अतिमंद होय जाय है, तब इच्छा अव्यक्त होय जाय है, अपने अनुभवमें इच्छा नाहीं दीखै है। अरु मोहका जहां उपशम तथा क्षय होय जाय है, तहां इच्छाका अभाव है। ऐसैं होतैं सातमां अप्रमत्तगुणस्थानविषैं ध्यान होय है। ताकूं धर्मध्यान कह्या है। तामें इच्छा अनुभवरूप है। अपना स्वरूपमें लीन होनेकी इच्छा है। इहांताईं सरागचारित्र व्यक्तरूप कहिये है। बहुरि जब श्रेणी चढै, तब अष्टम अपूर्वकरणगुणस्थान हो है। तहां मोहके अतिमंद उदय होनेतैं इच्छाभी अव्यक्त होय जाय है। तहां शुक्लध्यानका पहला भेद प्रवर्तै है। इच्छाके अव्यक्त होनेतैं कषायका मल अनुभवमें रहै नाहीं उज्वल होय, याहीतैं याका नाम शुक्ल कह्या है। अर उपयोग क्षयोपशमरूप है सो मनके द्वारा होय प्रवर्तै है। सो मनका स्वभाव चंचल है। एक ज्ञेयपै ठहरै नाहीं। याहीसैं इस पहले ध्यानविषैं अर्थव्यंजनयोगके विषैं उपयोगकी पलटनी इच्छाविना होय है। ध्यानी अपना स्वरूपमें लीन हूवा ज्ञाता द्रष्टा हूवा देखै है। सो पलटनीभी पूर्वें श्रुतज्ञानका अभ्यास है ताहीके अनुसार वचनानिके विषैं तथा वचनानिकी अर्थ द्रव्य पर्याय स्वरूपविषैं योगनिके द्वारा होय है। जैसैं तैसैं नाहीं होय है ॥

इस ध्याताके ऐसैं विशेषण कीये हैं, जो, एकाग्रमन होय उपशांत भये हैं राग द्वेष मोह

जाके, निपुणपणातैं रोकी है शरीरकी क्रिया जानें, मंद है श्वासोश्वास जाकै, भलेप्रकार निश्चित कीया है अभिप्राय जानें, क्षमावान् है, परिषहादिकतैं चलै नाहीं है, ऐसा होयकरि बाह्य कहिये अन्यद्रव्यसंबंधी द्रव्यपरमाणु भावपरमाणु अर अभ्यंतर कहता अपने जे द्रव्यपर्याय तिनकूं ध्यावता संता अर्थव्यंजन काय वचन इनकूं पलटता संता ध्यावै है, सो याहीतैं ऐसा जानिये है, जो व्यक्त इच्छा याकै नाहीं, क्षयोपशम उपयोग है, सो मनके द्वारा विनाइच्छा पलटै है, आप ज्ञाता द्रष्टाही है ॥ आगें पूछै हैं, कि, सम्यग्दृष्टि सर्वहीकै कर्मनिकी निर्जरा समान होय है कि किछु विशेष है? ऐसैं पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्त-
मोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः ॥ ४५ ॥

याका अर्थ— सम्यग्दृष्टि, श्रावक, विरत, अनंतानुबंधीका वियोजक, दर्शनमोहक्षपक, उपशमक तीन गुणस्थान, उपशांतमोह ग्यारमां गुणस्थान, क्षपक तीनि गुणस्थान, क्षीणमोह बारहवां गुणस्थान, जिन केवली ऐसैं दश स्थाननिविषैं अनुक्रमतैं असंख्यात गुणी कर्मकी निर्जरा होय है। ते ए सम्यग्दृष्टिकूं आदि लेकर दशस्थान कहे, तिनविषैं अनुक्रमतैं असंख्यातगुणनिर्जरा-

सहित है। सोही कहिये हैं। तहां भव्य पंचेन्द्रिय संज्ञी पर्याप्तक पूर्वै कही जे काललब्धि आदि लब्धि तिनका है सहाय जाकै, बहुरि परिणामकी विशुद्धताकरि वर्द्धमान है, अनुक्रमतैं अपूर्व कारण आदि जे करणके परिणाम तेई भई पैडी ताकरि ऊंचा चढता ऐसा जीव ताकै जो अतिशय-करि बहुत निर्जरा होय है, सो इस स्थानकतैं आगैं दशस्थाननिविषैं असंख्यातका गुणाकार है, सो ऐसा जीव जब प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति सोही भया निमित्त ताके निकट होतैं सम्यग्दृष्टि होता संता असंख्यगुणनिर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव चारित्रमोहका भेद जो अप्रत्या-ख्यानावरणकषाय ताके क्षयोपशमपरिणामकी प्राप्तिका कालविषैं श्रावक होता संता असंख्यातगुण निर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव चारित्रमोहका भेद जो प्रत्याख्यानावरणकषाय ताका क्षयो-पशमकी प्राप्तिका कालविषैं विशुद्धपरिणामके योगतैं विरत नाम पावै, तब तिस श्रावकतैं असं-ख्यातगुण निर्जरावान् मुनि होय है। बहुरि सोही जीव अनंतानुबंधी कषायकी चौकडीकूं परि-णामकी विशुद्धताके बलतैं अप्रत्याख्यानावरण आदि कषायरूप संक्रमण प्रधानकरि परिणमता संता अनंतानुबंधीका वियोजक नाम कहावता संता तिस विरतसंयमी मुनितैं असंख्यातगुण निर्जरा-वान् मुनि होय है। बहुरि सोही जीव दर्शनमोहकी तीनि प्रकृति सोही भया तृणका समूह ताकूं

दग्ध करता संता परिणामकी शुद्धिका अतिशयके योगतैं दर्शनमोहक्षपक नाम पावै तब तिस विरततैंभी असंख्यातगुण निर्जरावान् होय है। बहुरि ऐसैं सो क्षायिकसम्यग्दृष्टि होयकरि श्रेणीकूं चढनेकूं सन्मुख होय तब चारित्रमोहके उपशमावनेप्रति व्यापाररूप होता संता परिणामकी विशुद्धताके योगतैं उपशमक ऐसा नाम पावता संता तिस क्षपकतैं असंख्यातगुण निर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव समस्तचारित्रमोहका उपशम करनेका निमित्तकूं निकट होतैं पाया है उपशांतकषाय नाम जानैं ऐसा होयकरि तिस उपशमकतैं असंख्यातगुण निर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव समस्तचारित्रमोहकी उपशम करनेका निमित्तकूं निकट होतैं पाया है उपशांतकषाय नाम जानैं ऐसा होयकरि तिस उपशमकतैं असंख्यातगुण निर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव समस्तचारित्रमोहकी क्षपणाप्रति सन्मुख हूवा संता परिणामकी विशुद्धताकरि वधता संता क्षपकनामकूं पावता संता तिस उपशांतकषायतैं असंख्यागुण निर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव चरित्रमोहके सम्पूर्ण क्षपणाके कारणपरिणामके सन्मुख हूवा संता क्षीणकषाय नाम पावता संता तिस क्षपकतैं असंख्यातगुणनिर्जरावान् होय है। बहुरि सोही जीव द्वितीयशुक्लध्यानरूप अग्निकरि दग्ध कीये हैं घातिकर्मके समूह जानैं ऐसा हूवा संता जिन नाम पावै, तब

तिस क्षीणमोहतैं असंख्यातगुण निर्जरावान् होय है ॥

इहां विशेष जो, एकादशस्थान एकजीव अपेक्षा कहे तैसैंही नानाजीव अपेक्षा जानना। याका विशेष कथन गोमटसार लब्धिसार क्षपणासारतैं जानना ॥ आगें पूछै हैं, जो, सम्यग्दर्शन होतैंभी स्थानकस्थानकप्रति असंख्यातगुणी निर्जरा कही, यातैं परस्पर समानपणा तौ नाहीं भया। सो इहां विरतआदिकै गुणका भेद है। यातैं जैसैं श्रावक निर्ग्रंथ नाहीं तैसैं ते मुनि संयमीभी निर्ग्रंथ नाहीं ठहरैंगे। जातैं बाह्य आभ्यंतर ग्रंथ जिनकैं नाहीं ऐसे निर्ग्रंथ तौ ग्यारमां बारमां गुणस्थानवर्ती हैं, नीचिले तौ सग्रंथही ठहरैंगे। आचार्य कहै हैं, जो, यह ऐसा नाहीं है। तातैं गुणके भेदतैं परस्पर गुणका विशेष है तौऊ नैगमआदि नयके व्यापारतैं सर्वही संयमी मुनि निर्ग्रंथ हैं ऐसा सूत्र कहै हैं—

॥ पुलाकबकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातका निर्ग्रन्थाः ॥ ४६ ॥

याका अर्थ— पुलाक बकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातक ए पांचप्रकार मुनि हैं, ते सर्वही निर्ग्रंथ हैं। तहां उत्तरगुणकी भावनाकरि रहित है मन जिनका बहुरि व्रतनिविषैंभी कोई क्षेत्रविषैं कोई कालविषैं परिपूर्णताकूं नाहीं पावते संते पुलाक ऐसा नाम पावै हैं। पुलाक ऐसा नाम पराल-

सहित शालीका है, ताकी उपमा इनकूं देकरि संज्ञा कही है। सो मूलगुणनिविषैं कोई क्षेत्र कालके वशतें विराधना होय है। तातैं मूलगुणमें अन्य मिलाय भया, केवल न भये, तातैं यह उपमा दे संज्ञा कही है। बहुरि निर्ग्रंथपणा जो सर्वथा बाह्य आभ्यंतर परिग्रहका अभाव तिसका तौ जिनकै उद्यम है, बहुरि व्रत जिनके अखंडित है, मूलगुण खंडित नाहीं करे हैं, बहुरि शरीर उपकरण इनकी जो विभूषा कहिये सुन्दरता ताका अनुवर्ती है कछू सुन्दरताका अनुराग है, जातैं संघके नामक आचार्य होय हैं तिनकैं प्रभावनाआदिका अनुराग होय है, तिनके निमित्ततैं शरीर तथा कमंडलु पिच्छिका पुस्तक तथा ताके बंधन तिनकी सुंदरताकी अभिलाष उपजै है, चैत्यालयके उपकरण आदिकी सुंदरताका अनुराग होय तथा शरीरकी सुंदरताका अनुराग संघनायककै कदाचित् उपजै ऐसैं शरीर उपकरणानुवर्ती कहिये ॥

बहुरि नाहीं मिथ्या जो परिवारका अनुमोद कहिये हर्ष सोही भया छेद यातैं शवल कहिये चित्रवर्ण ताकरि युक्त है। इस विशेषणतैं ऐसा जानना, जो, पहलैं ग्रहस्थ थे तब परिवारसूं अनुराग था, सोही अनुराग अब संघतैं भया। इनकैं एकही परिवार है, सो परमनिर्ग्रंथअपेक्षा याकूं चित्रवर्ण आचरण कहिये। वीतरागता सरागताके मिलनेतैं चित्रलाचरण कह्या याहीतैं बकुश ऐसा

नाम है। वकुशशब्द शवलका पर्यायशब्द है, दूसरा नाम है। इनका वार्तिकमें ऐसाही विशेषण कीया है। ऋद्धिका अर यश अर शरीरका संस्कार अर विभूतिकेविषैं तत्परता है। तहांभी यहही आशय जानना, जो, ए दिगम्बर निर्ग्रंथमुनि हैं तिनकै कछु अशुभ लौकिकसंबंधी तौ व्यवहार है नाहीं धर्मानुराग है। सो मनकी प्रभावना संघसूं अनुराग है, ताके अर्थि ऋद्धिका अनुराग है, हमारैं ऋद्धि पुरै तौ मार्गका बडा प्रभावना होय तथा मार्गका यश चाहै, तथा शरीरका संस्कारभी चाहै, संघकूं विभूतिसहित देखै, तब प्रसन्न होय ऐसा अनुराग शुभरागतैं होय है, परमार्थतें यहभी परिग्रहही है। तातैं यह विशेषण कीजिये है। ऐसा नाहीं जानना, जो, सर्वही परिग्रह राखै स्वेच्छा प्रवर्तै जो ऐसा होय तौ श्वेतांबरादि भेषीनिकीज्यौं येभी ठहरै, तौ अखंडित व्रत है ऐसा विशेषण काहेकूं कहै? नाममात्र भेषतैं तौ दिगम्बर निर्ग्रंथमुनिनिकी पंक्तिमें आवै नाहीं ॥

वहुरि कुशील दोयप्रकार हैं। प्रतिसेवनाकुशील, कषायकुशील। तहां परिपूर्ण है मूलगुण उत्तरगुण जिनकै, वहुरि नाहीं न्यारे भये हैं परिग्रहतें जे, वहुरि कोईप्रकार कारणविशेषतैं उत्तरगुणकूं विराधनवाले हैं, ऐसैं प्रतिसेवनाकुशील हैं, यहां परिग्रहशब्दका अर्थ गृहस्थवत् नाहीं लेणा। मुनिनिके कमंडलु पीछी पुस्तकका आलंबन है, गुरुशिष्यपणाका संबंध है, सो यहही परिग्रह है।

इनतें न्यारा न होय. तबभी परिग्रहसहितही कहिये है। बहुरि वशि कीया है अन्य कषायका उदय ज्यां अर संज्वलनकषायमात्रके आधीन हैं ते कषायकुशील हैं। इहां ऐसा जानना, जो, संज्वलनकषायका स्थानक जिनकरि प्रमाद व्यक्त होय ऐसा जाकै उदय न होय, ते कषायकुशील हैं। बहुरि जिनकै मोहका उदयका तौ अभाव होय अरु अन्यकर्मका उदय है, सो ऐसा है; जैसें जलकेविषें मंदमंद लहरिका हालना होय तैसें प्रदेशनिका तथा उपयोगका चलना मंद होय है, जो, व्यक्त अनुभवगोचर नाहीं है, बहुरि मुहूर्ततें उपरि उपजैं हैं केवलज्ञानदर्शन जिनकूं ऐसे निर्ग्रंथ हैं ॥ बहुरि अत्यंत नाश भये हैं घातिकर्म जिनके ऐसे दोयगुणस्थानवर्ती केवली ते स्नातक हैं। स्नात वेदसमाप्तौ धातु ताकरि स्नातकशब्द है, सो सम्पूर्णज्ञानके अर्थमें है। ऐसें ए पांचहू चारित्रपरिणामकी हानिवृद्धितें भेद होतेंभी नैगमसंग्रहादिनयकी अपेक्षाकरि निर्ग्रंथही हैं ॥ इहां विशेष कहिये हैं। इहां इनका दृष्टांत ऐसाभी है। जैसें ब्राह्मणजाति आचार अध्ययन आदिकरि भेदरूप है, तौऊ ब्रह्मणपणाकरि सर्वही ब्राह्मण हैं, तैसें इहांभी जानना। तत्वार्थवार्तिकमें ऐसें कह्या है, जो, सम्यग्दर्शन अर निर्ग्रंथरूप वस्त्र आभूषण आयुध आदिका ग्रहणकरि रहित ए दोऊरीति तो सर्वत्र मुनिनिकै समान है। यातें पांचूही भेदनिविषें निर्ग्रंथशब्द युक्त है ॥

इहां कोई कहे, जो, ए दोऊ तौ जाकै होय अर व्रतका भंग भया होय, ताकै निग्रंथपणा ठहस्या, सो तुम पुलाककै मूलव्रतका कोई काल क्षेत्रके वशतैं व्रतका भंग कह्याही है,। ऐसें होतें तौ गृहस्थकैभी निर्ग्रंथपणा आवैगा। जातें व्रतका भंगवालेके निर्ग्रंथपणा कह्या तौ गृहस्थकेभी कहे। ताका समाधान कीया है, जो, गृहस्थके निर्ग्रंथरूप जैसा कह्या नग्न दिगंबरमुद्रा सो नाहीं है। तातैं ताकै निर्ग्रंथपणाका प्रसंग नाहीं है। बहुरि कोई कहै, जो, कोई नग्नलिंगी भेषी होय ताकै निर्ग्रंथपणा आवैगा। ताकूं कहिये, जाकै सम्यग्दर्शन नाहीं तातैं नग्न होतेभी निर्ग्रंथपणा नाहीं है दोऊ भये निर्ग्रंथ नाम पावै॥

बहुरि श्लोकवार्तिकमें कही है, जो, ए पुलाकादि पाचूंही निर्ग्रंथ निश्चयव्यवहार दोऊनयकरि साधि कहे है, यातें जे वस्त्रादिक ग्रंथकरि संयुक्त हैं ते निर्ग्रंथ नाहीं हैं। जातें बाह्यपरिग्रहका सद्भाव होय तौ अभ्यंतरका ग्रंथका अभाव होय नाहीं। जे श्वेतांबरादिक बाह्य परिग्रह वस्त्रादिक होतेभी जैसा निर्ग्रंथपणा आगमयुक्तिकरि सिद्ध होय है तैसा कहै हैं, ताका वे हेतु कहे हैं, जो, परिग्रह तो मूर्छा है, सो वस्त्रादिकमें मूर्च्छा नाहीं, तातै ते परिग्रहसंज्ञा न पावे ऐसैं कहै हैं। तिनकूं कहिये, जो, ऐसा बाह्यपरिग्रह होतैंभी मूर्छा न कहो हो, तो स्त्री धन आदि बाह्य

होतैंभी मूर्च्छा न होती होयगी, तिनके राखनेवालेभी निर्ग्रंथ ठहरैंगे। तातैं यह श्वेतांबरादिकका कहना अयुक्त है। जातैं विपयका ग्रहण तौ कार्य है। अर मूर्च्छा ताका कारण है। जो बाह्यपरिग्रह ग्रहण करै है, सो मूर्च्छातैं करै है। सो जाका मूर्च्छा कारण नष्ट होयगा, ताकै बाह्यपरिग्रहका ग्रहण कदाचितही नाहीं होयगा। बहुरि जो विपयग्रहणकूं तौ कारण कहै अर मूर्च्छाकूं कार्य कहै तिनके मतमें विपयरूप जो परिग्रह तिनके न होतैं मूर्च्छाका उदय नाहीं सिद्ध होय है। तातैं जाके मोहके उदयतैं मूर्च्छा होय है तातैं परिग्रहका ग्रहण होय है अर जो आप परिग्रहकूं ग्रहण करै है, तातैं निर्ग्रंथपणा कदाचिन्ही नाहीं है, यह निर्णय है॥

आगें तिन पुलाकआदि मुनिनिकी फेरि विशेषकी प्रतिपत्तिके अर्थि सूत्र कहै हैं—

॥ संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपादस्थानविकल्पतः साध्याः ॥ ४७ ॥

याका अर्थ— संयम १, श्रुत २, प्रतिसेवना ३, तीर्थ ४, लिंग ५, लेश्या ६, उपपाद ७, स्थान ८ ए आठ भेदरूप अनुयोग तिनकरि पुलाक आदि निर्ग्रंथमुनिनिकूं साधणे। तहां पुलाक बकुश प्रतिसेवनाकुशील ए तीनि तौ सामायिक छेदोपस्थापना इन दोय संयमनिविपैं वर्तैं हैं। बहुरि कपायकुशील हैं, ते सामायिक छेदोपस्थापना परिहारविशुद्धि सूक्ष्मसांपराय इन च्यारि संयमनिविपैं

वर्तें हैं, वहुरि निर्ग्रंथ स्नातक ए दोऊ एक यथाख्यातसंयमविषैं वर्तें हैं। वहुरि श्रुत पुलाक वकुश प्रतिसेवनाकुशील इन तीनिनिकै उत्कृष्ट दशपूर्वताई है। वहुरि कषायकुशील अर निर्ग्रंथ इनकै चौदहपूर्वताई हैं। वहुरि जघन्यकरि पुलाककै तौ आचारांगहीमें आचारवस्तुताई है। वहुरि वकुश कुशील निर्ग्रंथके आठ प्रवचनमातृकाताई हैं। पांच समिति तीनि गुप्तिका व्याख्यानरूप अधिकार आचारांगमें है, तहांताई होय है। वहुरि स्नातक हैं ते केवली हैं, तिनकै श्रुत नाहीं है। वहुरि प्रतिसेवनापुलाकके तौ पंचमहाव्रत एक रात्रिभोजनकी त्याग छह व्रतनिमें परके वशतैं जवरीतैं एक व्रत कोईकी विराधना होय है॥

इहां कोई पूछै है, कहा विराधन होय है? तहां कहिये, जो, महाव्रतकी प्रतिज्ञा मन वचन काय कृत कारित अनुमोदनाकरि त्यागरूप है, तातैं दोष लागनेके अनेक भंग हैं। तातैं कोई भंगमें परके वशतैं विराधना होय जाय है। यह सामर्थ्यहीनपणाकरि दूषण लागै है। वहुरि वकुश दोय-प्रकार है; उपकरणवकुश, शरीरवकुश। तहां उपकरणवकुशकै तौ वहुतविशेषनिकरि सहित कमंडलु पीछी पुस्तक वंधन आदि धर्मोपकरणकी अभिलाष होय तौ यह प्रतिसेवना है। वहुरि शरीरवकु-शकै शरीरका संस्कार कदाचित् करै तव प्रतिसेवना है। वहुरि प्रतिसेवनाकुशील मूलगुण तौ विराधै

नाहीं अर उत्तरगुणनिमें कोईक विराधना लगावै, सो प्रतिसेवना है। बहुरि कषायकुशील निर्ग्रंथ स्नातकनिकै प्रतिसेवना नाहीं है। जाका त्याग होय ताकूं कोई कारणकरि ग्रहण करि ले तत्काल सावधान होय फेरि न करै सो प्रतिसेवना कहिये, याकूं विराधनाभी कहिये। बहुरि तीर्थ कहता सर्व तीर्थंकरनिके समयविषैं सर्वही होय हैं ॥

बहुरि लिंग दोयप्रकार है, द्रव्यलिंग भावलिंग। तहां भावलिंगकरि तौ पांचूही भावलिंगी हैं, सम्यक्त्वसहित हैं, मुनिपणासूं निरादरभाव काहूकै नाहीं है। बहुरि द्रव्यलिंगकरि तिनमें भेद है। कोई आहार करै है, कोई अनशन आदि तप करै है, कोऊ उपदेश करै है, कोऊ अध्ययन करै है, कोऊ तीर्थविहार करै है, कोऊ ध्यान करै है, ताके अनेक आसन करै हैं, कोऊकौ दोष लागै है, प्रायश्चित्त ले है, कोऊ दोष नाहीं लगावै है, कोऊ आचार्य है, कोऊ उपाध्याय है, कोऊ प्रवर्तक है, कोऊ निर्यापक है, कोऊ वैयावृत्य करै है, कोऊ ध्यानविषैं श्रेणीका प्रारंभ करै है, कोऊकौं केवलज्ञान उपजै है, ताकी बाह्य बडी विभूतिसहित महिमा होय है इत्यादि मुख्य गौण बाह्यप्रवृत्तिकी अपेक्षा लिंगभेद है। ऐसा न जानना, जो, नग्न दिगंबर यथाजातरूप सामान्य सर्वकै है, तातैं भेद है। यह तौ सर्वकै समान है ऐसो न। कोई श्वेत पीत रक्त शाम आदि वस्त्र

धारै, कोई जटा धारै, कोई कौपीन धारै, कोई दंड धारै, कोई शस्त्र धारै, कोई पालकी चढै, कोई रथ चढै इत्यादिक स्वरूप लिंगभेद नाहीं, ए सर्व अन्यमतीनिके भेद हैं। तथा इस पंचमकालमें जिनमतमेंभी जैनाभास भये हैं। तिनमें भेद पड्या है। यह कालदोष है ॥

बहुरि लेश्या पुलाकके तौ तीनि शुभही होय हैं। जातैं याकै बाह्यप्रवृत्तिका आलंबन विशेष नाहीं है। अपने मुनिपणाहीसूं कार्य है। बहुरि बहुत तीव्र मंद परिणाम नाहीं होय हैं। बहुरि बकुश प्रतिसेवनाकुशीलके छहभी होय हैं। इहां अपिशब्दकरि ऐसा जनाया है, जो, अन्य आचार्य तीनि शुभही कहे हैं। बहुरि कषायकुशीलकै कपोततैं लगाय शुक्लपर्यंत च्यारि होय हैं। इहांभी अन्य आचार्यनिकी अपेक्षा तीनि जाननी। बहुरि निर्ग्रंथ स्नातककै एक शुक्लही है। लेश्याके स्थानक कषायनिके मंद तीव्र स्थानकनिकी अपेक्षा असंख्यात लोकपरिमाण कहे हैं। सो इनका पलटना सिद्धांतनितैं जानना ॥ बहुरि उपपादपुलाक तौ उत्कृष्टपणैं उत्कृष्टस्थितीवाले सहस्रारस्वर्गके देव तिनमें उपजै तहां अठारह सागरकी आयु पावै। बहुरि बकुश प्रतिसेवनाकुशील उत्कृष्टपणें आरण अच्युत स्वर्गके देव बाईस सागरकी स्थितीवाले तिनमें उपजै हैं। बहुरि कषायकुशील निर्ग्रंथ तेतीस सागरकी स्थितीवाले सर्वार्थसिद्धिके देवनिविषैं उत्कृष्टपणें उपजै हैं। बहुरि

जघन्यकरि ए सर्व सौधर्मकल्पविषैं दोय सागरकी स्थिति पावै हैं। मध्यके नानाभेद यथासंभव जानने। बहुरि स्नातक निर्वाणप्राप्तही होय है ॥

बहुरि स्थान कहिये संयमकी लब्धिके स्थानतैं कषायका तीव्रमंदपणा है सो है निमित्त जिनकूं ऐसे असंख्यात हैं। तहां सर्वजघन्य संयमस्थान पुलाक कषायकुशील इन दोऊनिकै समान होय ते असंख्यातस्थानताईं साथी रहैं, पीछै पुलाकका व्युच्छेद है। याकै अगिले स्थान नाहीं अर अगिले स्थान असंख्यात एक कषायकुशीलकैही होय अन्यकै ते स्थान नाहीं। बहुरि आगें कषायकुशील प्रतिसेवनाकुशील दोऊ असंख्यातस्थानताईं लार रहै हैं। दोऊनिकै समानस्थान होय है। पीछैं प्रतिसेवनाकुशीलका व्युच्छेद है। अगिले स्थान याकै होय नाहीं। आगें असंख्यातस्थान कषायकुशीलकैही होय। ऐसैंही पीछैं कषायकुशीलका व्युच्छेद है। यातैं उपरि कषायरहित स्थान हैं ते निर्ग्रंथकैही हैं। तेभी स्थान असंख्यात हैं। पीछै निर्ग्रंथकाभी व्युच्छेद है। आगें एक स्थान है, सो ताकूं पायकरि स्नातक केवली निर्वाणकूं प्राप्त होय है। ऐसैं ए संयमस्थान हैं। सो अविभागप्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा स्थानस्थानप्रति अनंतका गुणाकार है ॥ ऐसैं नवमां अध्यायमें संवर निर्जराका स्वरूप अर तिनके कारणके भेद स्वरूप, अनेकप्रकार गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परि-

पहका जीतना, चारित्र तप ऐसैं व्याख्यान भया। ताकूं भले प्रकार जानि श्रद्धान करि भव्य-जीव हैं ते इनका धारण करौ। मोक्षकी प्राप्तिका यह उपाय है। यामें तत्पर होना योग्य है। ऐसा श्रीगुरुनिका उपदेश है॥

॥ सवैया इकतीसा ॥ १ ॥

आश्रवनिरोध रीति संवर सुबोधनीतिकारण विबोध गीत जानिये सुज्ञानतैं। गुपति समिति धर्म जानूं अनुप्रेक्षा मर्म सहन परीषह परीस्या श्रम ठानिये उठानतैं॥ संयम संभारि करौ तप अविकार धरौ उद्यम विचारि ध्यान धारिये विधानतैं। नवमां अध्यायमांहि भाषे विधिरूप ताहि जानि धारि कर्म टारि पावो शिवमान तैं॥ १॥

ऐसैं तत्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं

नवमां अध्याय सम्पूर्ण भया ॥ ९ ॥

॥ नमः सिद्धेभ्यः ॥

॥ आगें दशमां अध्यायका आरंभ है ॥



दोहा— अष्टकर्मकूं नष्ट करि, भये सुसिद्ध अनंत ॥
नमि तिनकूं व्याख्या करूं, मोक्षपदारथ अंत ॥ १ ॥

ऐसें मंगलके अर्थि सिद्धनिकूं नमस्कार करि, दशम अध्यायकी वचनिका लिखिये हैं ॥ तहां सर्वार्थसिद्धिटीकाकारके वचन हैं, जो, शिष्य कहै है, अंतकेविषैं कह्या जो मोक्षपदार्थ ताका स्वरूप कहनेका अवसर है। तहां आचार्य कहै हैं, यह सत्य है, परंतु मोक्षकी प्राप्ति केवलज्ञानकी प्राप्तिपूर्वक है, तातैं पहले केवलज्ञानकी उत्पत्तिका कारण कहिये हैं, ताका सूत्र—

॥ मोहक्षयात् ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ॥ १ ॥

याका अर्थ— मोहके क्षयतैं वहुरि ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय इन तीनके क्षयतैं केवल-

ज्ञान उपजे है। तहां प्रश्न, जो, इस सूत्रमें समास करणा न्याय्य था, जातैं सूत्र लघु होता। कैसैं सो कहिये हैं। यामें क्षयशब्द दोय आये, सो एक तौ क्षयशब्द घटता बहुरि दूसरी विभक्ति घटती बहुरि चशब्द न होता, तब मोहज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयात्केवलम् ऐसा लघुसूत्र बणता। ताका समाधान आचार्य कहे हैं। यह तौ सत्य है। परंतु यहां विशेष है। प्रथम तौ च्यारि घातिकर्मका क्षयका अनुक्रम कहनेके अर्थि वाक्यभेदकरि निर्देश कीया है। पहली मोहका क्षयकरि अंतर्मुहूर्त क्षीणकषाय नाम पाय तापीछे युगपत् ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय इन तीनींनिका क्षय करि केवलज्ञानकूं प्राप्त होय है। ऐसैं तिनका क्षयतैं केवलज्ञानकी उत्पत्ति होय है। याहीतैं हेतु है लक्षण जाका ऐसी पंचमीविभक्तिका निर्देश कीया है। तहां पूछै है, मोहका क्षय पहली कौन रीति करै है? सोही कहिये हैं। तहां प्रथम तौ भव्य होय, बहुरि सम्यग्दृष्टि होय, बहुरि परिणामकी विशुद्धताकरि वर्द्धमान होय, सो जीव असंयतसम्यग्दृष्टि संयतासंयत प्रमत्त अप्रमत्त इन च्यारि गुणनिविषैं कोई गुणस्थानमें मोहकी सात प्रकृति मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्व सम्यक्त्वप्रकृति अनन्तानुबन्धी क्रोध मान मांया लोभ इनका क्षयकरि क्षायिक सम्यग्दृष्टि होयकरि जब क्षपकश्रेणी चढनेकूं सन्मुख होय अधःप्रवृत्तिकरणकूं अप्रमत्तगुणस्थानविषैं पायकरि अपूर्वकरणपरिणामका प्रयोग-

करि अपूर्वकरण नामा क्षपकश्रेणीका गुणस्थानकूं भोगिकरि तहां नवीन शुभपरिणाम तिनमें क्षीण कीये हैं पापप्रकृतिनिके स्थिति अनुभाग जानैं, बहुरि वधाया है शुभकर्मका अनुभाग जानैं, ऐसा होय अनिवृत्तिकरणपरिणामकी प्राप्तिकरि अनिवृत्तिबादरसांपरायनाम नवमां गुणस्थानकूं चढिकरि तहां कषायनिका अष्टक जो अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण ताका सत्तामेंसूं नाशकरि फेरि नपुंसकवेदका नाशकरि फेरि स्त्रीवेदका क्षयकरि बहुरि नोकषायका षट्क हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा इनकूं पुरुषवेदविषैं क्षेपणकरि क्षय करै। बहुरि पुरुषवेदकूं क्रोधसंज्वलनमें क्षेपै। बहुरि क्रोधसंज्वलनकूं मानसंज्वलनविषैं क्षेपै। बहुरि मानसंज्वलनकूं मायासंज्वलनविषैं क्षेपै। बहुरि मायासंज्वलनकूं लोभसंज्वलनविषैं क्षेपै। ऐसैं संक्रमणविधानकरि अनुक्रमणतैं क्षयकरि बादरकृष्टिका विभागकरि, लोभसंज्वलनकूं सूक्ष्म करि, अर सूक्ष्मसांपराय नाम क्षपक गुणस्थान दशमांकूं भोगिकरि, तहां समस्तमोहनीयकर्मकूं मूलतैं नाशकरि, क्षीणकषायपणाकूं पायकरि, उतार्‍या है मोहनीयकर्मका बोझ जामें तिस बारमां गुणस्थानका उपांत्य कहिये अंत्यसमय ताके पहलैं समये निद्रा प्रचला नाम दोय प्रकृतिका क्षय करि, बहुरि पांच ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरण पांच अंतराय इन चौदह प्रकृतिनिका बारमां गुणस्थानके अंतसमये क्षयकरि,

ताके अनन्तरही ज्ञानदर्शन है स्वभाव जाका ऐसा केवल नामा आत्माका पर्याय अचिंत्य है विभूतिका विशेष जामें ऐसी अवस्थाकूं पावै है। ऐसें इहां तरेसठि प्रकृतिनिका सत्तामेंसूं नाश करि केवलज्ञान उपजावै है। घातिकर्मकी । ४७ । आयुकर्मकी । ३ । नामकर्मकी । १३ ॥ आगें शिष्य कहै है, जो, मोक्ष कैसें हेतुतें होय है अर ताका लक्षण कहा है? ऐसें पूछें सूत्र कहै हैं—

॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥ २ ॥

याका अर्थ— बंधका कारण जे मिथ्यात्व आदि तिनका अभाव अर निर्जरा इन दोऊनितें समस्त कर्मका अत्यंत अभाव होय, सो मोक्ष है। तहां मिथ्यादर्शनआदि जे बंधके कारण तिनका अभावतें तौ नवीनकर्मका बंध नाहीं होय है। बहुरि पूर्वै कहे जे निर्जराके कारण तिनकूं निकट होतें पूर्वबंध जे कर्म तिनका अभाव होय। ऐसे ए दोऊ कारण होय तब भव कहिये पर्यायकी स्थितिका कारण जो आयुकर्म तिसकी स्थितिके समान स्थिति कीये है अवशेष कर्मकी अवस्था जानें ऐसा केवली भगवान् ताकै एककाल समस्त अवशेष कर्मका विप्रमोक्ष कहिये अत्यंत अभाव सो मोक्ष है। ऐसी प्रतीतिरूप करना। इहां कहै है, जो, कर्मका अभाव दोय प्रकार है, यत्नसाध्य अयत्नसाध्य। तहां चरमशरीरी आत्माकै नरक तिर्यंच देव इन तीनि आयुका तौ बंध

होय नाहीं, तातें पहलेंही अभाव है, सो तौ अयत्नसाध्य है। अर यत्नसाध्य कहिये हैं, असंयतसम्यग्दृष्टि आदि च्यारि गुणस्थाननिविषैं कोई एक गुणस्थानविषैं मोहनीयकर्मकी सात प्रकृतिका क्षय करै है। बहुरि निद्रानिद्रा; प्रचलाप्रचला; स्त्यानगृद्धि; नरकतिर्यचगति; एकेंद्रिय, द्वींद्रिय, त्रींद्रिय, चतुरिंद्रिय ए च्यारि जाति; नरकतिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य; आताप; उद्योत; स्थावर; सूक्ष्म; साधारण इन सोलहप्रकृतिनिका अनिवृत्तिबादरसांपरायगुणस्थानविषैं युगपत् क्षय करै है। बहुरि तातें परे तिसही गुणस्थानमें अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण आठ कषाय क्षय करै है। बहुरि तिसही गुणस्थानमें अनुक्रमतें नपुंसकवेद अर स्त्रीवेदकूं क्षय करै है। बहुरि तहांही नोकषाय षट् हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा इनकूं एककाल क्षय करै है। तापीछें तिसही गुणस्थानमें अनुक्रमकरि पुरुषवेद संज्वलन क्रोध मान माया इनका अत्यंत नाश करै है। ऐसें छत्तीस प्रकृतिकी नवमें गुणस्थानविषैं व्युच्छित्ति है। बहुरि लोभसंज्वलन सूक्ष्मसांपराय दशमगुणस्थानविषैं नाशकूं प्राप्त होय है। बहुरि क्षीणकषाय बारमां गुणस्थान जो छद्मस्थ वीतराग ताके उपांत्यसमय जो अंतसंयमतें पहला समय ताविषैं निद्रा प्रचला ए दोय क्षय होय हैं। बहुरि ताके अंतके समय पांच ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरण पांच अंतराय इन चौदह प्रकृतिनिका क्षय होय है।

ऐसें इहांताईं तौ तरेसठि प्रकृतिका क्षय भया। तापीछे अयोगकेवली चौदहवां गुणस्थानमें पिचासी प्रकृति क्षय होय हैं, तामें अंत्यका पहला जो उपांत्य समय ताविषै वहत्तरी प्रकृतिका क्षय होय है। तिनके नाम दोय वेदनीयमेंसूं एक तौ वेदनीय, देवगति, औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्मण ए पांच शरीर इनके बंधन ५, इनके संघात ५, संस्थान ६, औदारिक वैक्रियक आहारक शरीरके अंगोपांग तीनि ३, संहनन छह ६, वर्ण प्रशस्त अप्रशस्त पांच ५, गंध दोय २, रस प्रशस्त अप्रशस्त ५, आठ स्पर्श ८, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य १, अगुरुलघु १, उपघात १, परघात १, उछ्वास १, विहायोगति प्रशस्त अप्रशस्त २, पर्याप्तक १, प्रत्येकशरीर १, स्थिर अस्थिर २, शुभ अशुभ दोय २, दुर्भग १, सुस्वर दुःस्वर दोय २, अनादेय १, अयशःकीर्ति १, निर्माण १, नीचगोत्र १, ऐसें वहत्तरी बहुरि ताके अंत्यसमये तेरा प्रकृतिका क्षय है, तिनके नाम दोय वेदनीयमेंसूं एक वेदनीय १, मनुष्यगति १, मनुष्यआयु १, पंचेंद्रियजाति १, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्यं १, त्रस १, वादर १, पर्याप्तक १, सुभग १, आदेय १, यशःकीर्ति १, तीर्थंकर १, उच्चगोत्र १ ए तेरह। ऐसें सर्व कर्मका अत्यंत अभाव, सो मोक्ष है॥

अन्यवादी कोई अन्यथाप्रकार कल्पै सो नाहीं है। बहुरि ऐसें कहनेतें सामर्थ्यतें ऐसाभी

सिद्ध होय है, जो, एकदेश कर्मका क्षय है, सो निर्जरा है, यातैंही तिस निर्जराका लक्षणका सूत्र न्यारा न कीया। इहां प्रश्न, जो, कर्म तौ अनादिके हैं, तातैं जिनका आदि नाहीं ताका अंतभी नाहीं चाहिये, तातैं कर्मका नाश कल्पना युक्त नाहीं। ताका समधान, जो, यह एकांत नाहीं। जातैं प्रत्यक्ष देखिये है, जाका आदि नाहीं ताका अंत है। जैसैं बीज जे अन्नआदि हैं, तिनका संतान तौ आदिरहित है। अरु अग्निआदिकरि बीज दग्ध होय जाय तब फेरि संतान नाहीं होय है; तैसैं मिथ्यादर्शन आदिका संतान अनादि है। सो ध्यानरूप अग्निकरि कर्मबीज दग्ध होय तब संसाररूप अंकुराके उपजनेका अभावतैं मोक्ष होय है। बहुरि द्रव्यकर्म हैं ते द्रव्यरूप पुद्गलपरमाणुके स्कंध हैं, सो कर्मरूप परिणमना पर्याय है, सो तिस पर्यायका नाश है। जीवके संबंधतैं अत्यंत विनाश है। पुद्गलद्रव्यपणाकरि विनाश नाहीं है। बहुरि मोक्ष ऐसा शब्द मोक्ष असने धातुका निपजै सो भावसाधन है। आत्मातैं कर्मका न्यारा होना मात्र क्रियाकूं मोक्ष कहिये है ऐसा जानना ॥

आगैं पूछैं है कि, ए द्रव्यकर्मकी प्रकृति हैं ते पुद्गलमयी हैं, तिनका अभावहीतैं मोक्ष निश्चय कीजिये है, कि भावकर्मकाभी अभाव कहिये? ऐसैं पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ औपशमिकादिभव्यत्वानां च ॥ ३ ॥

याका अर्थ — जीवके पूर्वैं भाव औपशमिक आदि कहे थे, तिनमैं औपशमिक अर आदि शब्दतैं अन्य अर पारिणामिकमें भव्यत्व इनकाभी अभावतैं मोक्ष है। इहां भव्यका ग्रहण तौ अन्यपारिणामिकका निषेधके अर्थि है। जीवत्व आदि पारिणामिकका मोक्षमें अभाव नाहीं है। तातैं पारिणामिकमें तौ भव्यत्वका औपशमिक आदि भावनिका अभावतैं मोक्ष होय है, ऐसा जानिये। इहां तर्क, जो, द्रव्यकर्मका नाश होतैं भावकर्मका नाश सामर्थ्यतैंही जान्या जाय है। तातैं भाव है सो तौ द्रव्यके निमित्ततैं होय है। जब द्रव्यकर्मका नाश भया, तब भावकर्मका नाश होयही है। ताका समाधान, ऐसा एकान्त नाहीं है, जो, कारणका अभाव होतैं कार्य-काभी अवश्य अभाव होय। जैसैं घट कार्य है सो दंड आदि कारणतैं उपजै है, सो दंडआदिका अभाव होतैं घटका नाश नाहीं देखिये है। तातैं सामर्थ्यकरि जानिये है। तौऊ ताके स्पष्ट करनेके अर्थि फेरि कहनेमें दोष नाहीं है ॥

आगें शिष्य कहै हैं, जो, मोक्ष भावनिका अभावरूप है तौ औपशमिक आदि भावनिके अभावकीज्यों सर्व क्षायिकभावनिकीभी वृत्ति होतैं मुक्तजीवका नाम ठहरसी, अभावमात्र मोक्ष

ठहऱ्या । आचार्य कहै हैं, जो, ऐसैं तौ जब होय जो विशेष न कहिये । इहां विशेष है। ऐसैं पूर्वसामान्यसूत्रका विशेष कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥ ४ ॥

याका अर्थ— केवलसम्यक्त्व ज्ञान दर्शन सिद्धत्व इन भावनिविना अन्यभावनिका इहां अन्यत्र ऐसा शब्दकी अपेक्षाकरि पंचमी विभक्तिका निर्देश है। तातैं ऐसा जानिये, जो, केवलसम्यक्त्व ज्ञान दर्शन सिद्धत्वविना अन्यविषैं पूर्वसूत्रकी विधि है। इहां अन्यत्रशब्द वर्जनके अर्थमें है। अरु अन्यशब्दपरि त्रल प्रत्यय है सो स्वार्थविषैं है। बहुरि प्रश्न, जो, मोक्ष भये ए च्यारिही भाव अवशेष रह्या कह्या तौ अनंतवीर्यादिककाभी अभाव आया। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं। अनंतवीर्यादिक हैं, ते ज्ञानदर्शनतैं अविनाभावी हैं। तातैं इनके कहनेमें तेभी गिणि लेणा। इनमें विशेष नाहीं कह्या। जातैं अनंतवीर्य सामर्थ्यकरि हीनकै तौ अनंतज्ञानदर्शनकी प्रवृत्ति होय नाहीं। बहुरि सुख है सो ज्ञानमयही है। ज्ञानविना जडकै वेदना नाहीं ॥

बहुरि प्रश्न, जो, मुक्त भये पीछैं किछू आकार नाहीं, तातैं अनाकार है, सो तौ अभावही है। ताका समाधान, जो, अनाकार नाहीं है-तिस शरीरतैं मुक्त भया तिस शरीरके आकार जीवके

अमूर्तिकप्रदेशनिका आकार है। बहुरि प्रश्न, जो, शरीरकै आकार शरीरमें रहै, जेतें रहै है। अर जीवका प्रदेश स्वाभाविक लोकके आकार है, सो जब शरीरका अभाव भया तब लोकाकाशके प्रदेश परिमाण विस्तऱ्या चाहिये, यह प्रसग आवै है। ताका समाधान, जो, यह दोष नाहीं है। जातैं विसर्पणाका कारणका अभाव है। नामकर्मका संबंध संकोच विस्तारकूं कारण था, ताका अभाव भया। तब फेरि संकोच विस्तार होनेका अभाव है। बहुरि प्रश्न, जो, ऐसैं है, कारणके अभावतैं संकोच विस्तारका अभाव है, तौ गमनका कारणकाभी अभाव है। तातैं ऊर्ध्वगमनभी न प्राप्त होगा, जैसैं नीचा ऊंचा तिर्यग्गमन नाहीं; तैसैंही ऊर्ध्वगमनभी नाहीं। ऐसैं होतैं जहां मुक्त भया तहांही अवस्थान चाहिये। ताका समाधानका सूत्र कहै हैं—

॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥ ५ ॥

याका अर्थ— सर्वकर्मका अभाव भयेपीछैं जीव ऊर्ध्वगमन करै है, सो लोकके अंततांई जाय है। बहुरि इहां तदनंतर कहिये ताके अनंतर, सो कौन? सर्वकर्मका अभाव होना ताके अनंतर। बहुरि इहां आलोकान्तात् में आङ् उपसर्ग है सो अभिविधिअर्थमें है। तातैं ऐसा अर्थ भया, जो, लोकके अंततांई गमन है, आगें अलोकमें नाहीं है। यातैं ऐसाभी जानिये, जो,

मुक्त होय तथा तिष्ठैभी नाहीं है बहुरि अन्यदिशाकूंभी न जाय है ॥ आगें पूछै है, जो, यह ऊर्ध्वगमनहेतुके कहेविना कैसें निश्चय करिये? ऐसैं पूछें ताके निश्चय करनेकूं हेतु कहै हैं—

॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥ ६ ॥

याका अर्थ— पूर्वके प्रयोगतैं असंगपणेतैं बंधके छेदतैं तैसाही गतिपरिणामतैं इन च्यारि हेतुनतैं ऊर्ध्वगमन निश्चय करना। आगें कहै हैं, हेतुका अर्थ पुष्टभी है तौऊ दृष्टांत अरु समर्थनविना साध्यके साधनेकूं समर्थ नाहीं होय है। तातैं वांछितसाधनेकूं दृष्टांत कहिये हैं—

॥ आविध्दकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥ ७ ॥

याका अर्थ— पूर्वै हेतु कह्या तिनके ए च्यारि दृष्टांत हैं। फिराये कुमारके चाककीज्यौं लेपतैं रहित भये तूंबीकीज्यौं एरंडके बीजकीज्यौं अग्निकी शिखाकीज्यौं ऐसै च्यारि दृष्टांतनिकरि ऊर्ध्वगमन जानना। पहले सूत्रमें कहे जे च्यारि हेतु अर इस सूत्रमें कहे जे च्यारि दृष्टात तिनका यथासंख्य संबंध करना। सोही कहिये है। जैसें कुमारके प्रयोगतैं भया जो हस्तका अरु दंडका अर चाकका संयोग, तिसकरि भया जो चाकका फिरना, सो कुमार फिरावता रहि गया तौऊ पहले प्रयोगतैं जहांताईं वाके फिरनेका संस्कार न मिटै, तहांताईं फिरवोही करै। ऐसाही

संसारविषैं तिष्ठता जो जीव तानैं मुक्तिकी प्राप्तिके अर्थ बहुतवार परिणाम चिंतवन अभ्याकरि रह्या था सो मुक्ति भये पीछे तिस अभ्यासका अभाव भया, तौऊ पहले अभ्यासपूर्वक मुक्तजीवकै गमन निश्चय कीजिये है ॥

बहुरि जैसें मृत्तिकाका लेपतैं तूंबा भर्या होय उतरि जलविषैं पड्या पीछैं जलके संबंधतैं माटी जाय तब हलका होय जलके ऊपर आय जाय; तैसैं कर्मके भारकरि दब्या परवश भया आत्मा तिस कर्मके संबंधतैं संसारविषैं नियमकरि पड्या है। जब कर्मका मिलाप दूरि होय तब ऊर्ध्वंही गमन होय। बहुरि जैसैं एरंडका बीज एरंडका डोडामें बंधाणरूप था, जब डोडा सूकिकरि तिडकै, तब बंधाणमेंसूं उछरि ऊर्ध्व चलै; तैसैं मनुष्यआदि भवकी प्राप्ति करणहारी जे गति जाति नाम आदि सकलकर्मकी प्रकृति ताका बंधाणमें आत्मा है, जब इस बंधका छेद होय, तब मुक्तजीवकै गमनहीका निश्चय होय है। बहुरि जैसैं सर्वतरफ गमन करनहारा जो पवन ताका संबंधकरि रहित जो दीपककी शिखा लोय सो अपने स्वभावतैं ऊंचाही चढै; तैसैं मुक्तजीवभी सर्वतरफ गमनरूप विकारका कारण जो कर्म ताके दूरि होतैं अपना स्वभाव ऊर्ध्वगमनरूप है तातैं ऊंचाही गमन करै है ॥

आगें पूछै है, जो, मुक्त भये आत्मा ऊर्ध्वगमनस्वभावी है, तौ लोकके अंततैं ऊर्ध्व

क्यों जाय नाहीं? ऐसें पूछैं सूत्र कहे हैं—

॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥ ८ ॥

याका अर्थ— मुक्तात्मा लोकके अंततांई जाय है। परै अलोकमें न जाय है। जातैं तहां धर्मास्तिकायका अभाव है। गति उपग्रहका कारण जो धर्मास्तिकाय सो लोकतैं परै उपरि नाहीं है। तातैं मुक्तात्माका अलोकमें गमनका अभाव है। बहुरि धर्मास्तिकायका अभाव सर्वत्र मानिये तौ लोकअलोकके विभागका प्रसंग होय। ऐसें जनना॥

आगैं पूछैं है, कि, ए निर्वाणकूं प्राप्त भये जीव तिनके गति जाति आदिक तौ कारण नाहीं। तातैं इनविषैं भेदका व्यवहार नाहीं है कि किछू भेदका व्यवहार कीजिये? ताका उत्तर, जो, कथंचित् भेदभी करिये है, सो काहेतैं करिये? ताका सूत्र कहै हैं—

॥ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधित-
ज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥ ९ ॥

याका अर्थ— क्षेत्र, काल, गति, लिंग, तीर्थ, चारित्र, प्रत्येकबुद्धबोधित, ज्ञान, अवगाहना, अंतर, संख्या, अल्पबहुत्व इन बारह अनुयोगनिकरि सिद्धजीव भेदरूप साधने। क्षेत्रादि बारह

अनुयोगनिकरि सिद्धनिकूं भेदरूप करने । तहां दोय नय लगावणी, प्रत्युत्पन्नग्राहकनय भूतप्रज्ञापननय । इन दो नयनिकी विवक्षाकरि भेद साधना । सोही कहिये हैं । तहां प्रथमही क्षेत्रकरि तौ कौन क्षेत्रविषें सिद्ध होय हैं? प्रत्युत्पन्नग्राहीनयकी अपेक्षाकरि सिद्धक्षेत्रविषें अथवा अपने आत्माके प्रदेशनिविषैं सिद्ध होय है, अथवा आकाशके प्रदेशनिविषैं सिद्ध होय है ऐसैं कहना । अर भूतप्रज्ञापननयापेक्षाकरि जन्मकी अपेक्षा तौ पंद्रह कर्मभूमिका जन्म्या जीव तहां सिद्ध होय है । बहुरि तहांका जन्म्याकूं कोई देवआदि अन्य क्षेत्रमें लै जाय तौ ढाई द्वीप मनुष्यनिका क्षेत्र है, तिस सर्वही क्षेत्रतैं सिद्ध होय हैं । इहां प्रत्युत्पन्नग्राही नय वर्तमानमात्रपदार्थकूं ग्रहण करै है, सो ऐसा नय ऋजुसूत्र है । तथा शब्द समभिरूढ एवंभूतभी याही नयका परिवार है । बहुरि भूतनय नैगम है ॥ बहुरि कालकरि कौंनसे कालमें सिद्ध होय हैं? तहां प्रत्युत्पन्नग्राही नयकी अपेक्षाकरि एकसमयविषैंही सिद्धगतिकूं प्राप्त होय हैं । बहुरि भूतप्रज्ञापननयकी अपेक्षाकरि सामान्यकरि उत्सर्पिणी अवसर्पिणी इन दोऊही कालविषैं जीव सिद्ध होय हैं । बहुरि विशेषकरि अवसर्पिणीका सुषमदुःषम जो तीसरा काल अंतका भागविषैं उपज्या अर दुःषमसुषमा जो चौथा काल तिस सर्वविषैं उपज्या जीव सिद्धगति पावै है, सो दुःषमा पांचमां कालमें मोक्ष पावै है । अर दुःषमा जो पांचमां

काल तिसविषैं उपज्या तिस कालमें तथा अन्यकालमें सिद्धगति नाहीं पावै है। बहुरि कोई देवादिकका ले गया सर्वही कालनिमें उत्सर्पिणी अवसर्पिणीमें सिद्धगति पावै है॥ बहुरि गतिविषैं प्रत्युत्पन्नग्राहीनयकी अपेक्षा सिद्धगतिहीविषैं सिद्ध होय है। बहुरि भूतग्राहीनयकी अपेक्षा मनुष्यगतितें सिद्धगति पावै है। बहुरि लिंगविषैं प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा वेदरहित सिद्धगति है। बहुरि भूतग्राहीनयकी अपेक्षा भाववेद तीनांहीकरि क्षपकश्रेणी चढि मोक्ष पावै है। द्रव्यवेदकरि पुरुषवेदहीकरि पावै है। अथवा निर्ग्रंथलिंगहीकरि सिद्धगति होय है। तथा भूतनय अपेक्षा सग्रंथलिंगकरिभी होय है॥

बहुरि तीर्थ दोयप्रकार। केई तौ तीर्थंकर होय मोक्ष पावै अर केई सामान्यकेवली होय मोक्ष पावै। सोभी दोयप्रकार। केई तौ तीर्थंकर विद्यामान होय तिस समय मोक्ष पावैं। केई जिसकाल तीर्थंकर विद्यमान न होइ तिस कालमें मोक्ष पावै। बहुरि चारित्रविषैं प्रत्युत्पन्ननयअपेक्षा तौ चारित्रनिका अभावहीकरि सिद्धि होय है। तहां चारित्रका नाम नाहीं। बहुरि भूतग्राहीनयकी अपेक्षा अनंतर अपेक्षा तौ यथाख्यातचारित्रकरिही मोक्ष पावै हैं। बहुरि अंतरकी अपेक्षा तौ सामायिक छेदोपस्थापना सूक्ष्मसांपराय यथाख्यात इन च्यारिनितें कहिये। तथा कोईकै परिहार-

विशुद्धि होय तब पाचूंहीतें कहिये। बहुरि प्रत्येकबुद्ध तौ अपनी शक्तिहीकरि स्वयमेव ज्ञान पावै अर बोधित कहिये परके उपदेशतें पावै। तहां केई तौ प्रत्येकबुद्ध मोक्ष पावै हैं। केई बोधितबुद्ध मोक्ष पावै हैं। बहुतकरि प्रत्युत्पन्ननयअपेक्षा तौ एक केवलज्ञानकरि सिद्ध हैं। बहुरि भूतग्राहीनयकी अपेक्षा केई तौ मति श्रुत इन दोऊ ज्ञानकरिही केवल उपजाय मोक्ष पावै हैं। केई मति श्रुति अवधि मनःपर्यय इन चारौंही ज्ञानकरि केवल उपजाय मोक्ष पावै हैं। बहुरि अवगाहना उत्कृष्ट तौ पांचसौ पचीस धनुषकी काय जघन्य साढातीनि हाथकी काय किछु घाटि। बहुरि मध्यके नानाभेद, इनमेंतें एक अवगाहनातें सिद्धगति पावै है। तहां प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा देशोन लेणी ॥

बहुरि अंतर कहा सो कहे हैं॥ तहां जे सिद्ध होय हैं तिनके अनंतर तौ जघन्य दोय समय हैं अर उत्कृष्ट आठ समय हैं। बहुरि अनंतर जघन्य तौ एकसमय अर उत्कृष्ट छह महीना है। बहुरि संख्या जघन्यकरि तौ एकसमयहीतें एकही सिद्धगति पावै। बहुरि उत्कृष्ट एकसमयमें एकसौ आठ जीव मोक्ष पावैं हैं। बहुरि क्षेत्र आदिका भेदके भेदतें परस्पर संख्या लगाइये। तहां अल्पबहुत्व है, सोही कहिये हैं। तहां प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा सिद्धक्षेत्रहीविषें सिद्ध भये। तहां अल्पबहुत्व नाहीं। बहुरि भूतग्राही-

नयकी अपेक्षा क्षेत्रसिद्ध दोयप्रकार हैं, जन्मतें संहरणतें। तहां संहरणासिद्ध अल्प हैं, थोरे हैं। इनतें संख्यातगुणा जन्मसिद्ध हैं। बहुरि क्षेत्रनिका विभागविषै ऊर्ध्वलोकतें सिद्ध भये अल्प हैं। तिनके संख्यातगुणा अधोलोकतें सिद्ध भये हैं। तिनतें संख्यातगुणा तिर्यग्लोकसिद्ध हैं। बहुरि सबतें थोरा समुद्रतें सिद्ध भये हैं, तिनतें संख्यातगुणा द्वीपतें सिद्ध हैं। ऐसें सामान्य। इनका विशेष सर्वतें स्तोक लवणसमुद्रतें भये सिद्ध हैं। तिगतें संख्यातगुणा कालोदसमुद्रतें भये सिद्ध हैं। तिनतें संख्यातगुणां जंबूद्वीपतें भये सिद्ध हैं। तिनतें संख्यातगुणा धातकीद्वीपतें भये सिद्ध हैं। तिनतें संख्यातगुणा पुष्करार्द्धतें भये सिद्ध हैं। ऐसैंही कालआदिका विभाग अल्पबहुत्व जानना ॥

तहां कालका विभाग उत्सर्पिणीकालमें सिद्ध भये तिनतें अवसर्पिणीमें भये विशेषकरि अधिक हैं। बहुरि उत्सर्पिणी अवसर्पिणी विना सिद्ध भये ते तिनतें संख्यातगुणे हैं। बहुरि प्रत्युत्पन्ननयापेक्षाकरि एकसमये सिद्ध भये इस अपेक्षामें अल्पबहुत्व नाहीं है। बहरि गतिविषै प्रत्युत्पन्ननयकी अपेक्षा तौ अल्पबहुत्व नाहीं। बहुरि भूतनयापेक्षातें अनंतर अपेक्षा तौ मनुष्यगतिही है। तहां अल्पबहुत्व नाहीं। बहुरि एकगतिका अंतर अपेक्षा तिर्यंचगतिके आये मनुष्य होय सिद्ध भये तौ सर्वतें स्तोक हैं। तिनतें संख्यातगुणे मनुष्यगतितें मनुष्य होय सिद्ध भये हैं। बहुरि

तिनतैं संख्यातगुणा नरकगतितैं मनुष्य होय सिद्ध भये हैं। तिनतैं संख्यातगुणा देवगतितैं मनुष्य होय सिद्ध भये हैं। बहुरि वेदकरि प्रत्युत्पन्ननयकरि तौ वेदरहित सिद्ध होय हैं। तहां अल्पबहुत्व नाहीं है । भूतनयअपेक्षा सर्वतैं स्तोक तौ नपुंसकवेदतैं श्रेणी चढि सिद्ध भये हैं। तिनतैं संख्यातगुणा स्त्रीवेदतैं श्रेणी चढि भये हैं। तिनतैं संख्यातगुणा पुरुषवेदतैं श्रेणी चढि भये हैं। बहुरि तीर्थकरि तीर्थंकर होय सिद्ध भये थोरे हैं, तिनतैं संख्यातगुणा सामान्यकेवली भये सिद्ध हैं॥ बहुरि चारित्रकरि प्रत्युत्पन्ननयअपेक्षा चारित्रविनाही सिद्ध भये कहिये। तहां अल्पबहुत्व नाहीं। बहुरि भूतनयापेक्षया अनंतर चारित्र यथाख्यातहीतें सिद्ध होय हैं। तहांभी अल्पबहुत्व नाहीं। बहुरि अंतरसहित चारित्रअपेक्षा पंचचारित्रतैं भये अल्प हैं। तिनतैं संख्यातगुणा च्यारितैं भये हैं। बहुरि प्रत्येकबुद्धनितैं भये अल्प हैं। तिनतैं संख्यातगुणा बोधितबुद्ध भये सिद्ध हैं। बहुरि प्रज्ञानकरि प्रत्युत्पन्ननयअपेक्षा तौ केवलज्ञानतैं सिद्ध भये तिनमैं अल्पबहुत्व नांही। बहुरि भूतनयंअपेक्षा दोय ज्ञानतैं सिद्ध भये अल्प हैं, तिनतैं संख्यातगुणा च्यारि ज्ञानतैं भये सिद्ध हैं। बहुरि तिनतैं संख्यातगुणा तीन ज्ञानतैं भये सिद्ध हैं। बहुरि अवगाहनाकरि जघन्यअवगाहनातैं सिद्ध भये सर्वतैं थोरे हैं। तिनतैं संख्यातगुणा उत्कृष्टअवगाहनातैं भये सिद्ध हैं। तिनतैं संख्यात-

गुणा मध्यअवगाहनातैं भये सिद्ध हैं। बहुरि संख्याविषैं एकसमयमें उत्कृष्टपणें एकसो आठ सिद्ध होय हैं। ते तौ सर्वतैं थोरे हैं। तिनतैं अनंतगुणा पचासताईंकी संख्यातैं भये सिद्ध हैं। तिनतैं असंख्यातगुणा गुणचासतैं लगाय पचीसकी संख्याताईं भये सिद्ध हैं। बहुरि तिनतैं संख्यातगुणे चोईसतैं लगाय एकताईंकी संख्यातैं भये सिद्ध हैं। ऐसैं जानना। इहांताईं टीकाका व्याख्यान है ॥

ऐसैं तत्त्वार्थका है अधिगम जातैं ऐसा जो मोक्षशास्त्र ताविषैं
दशमां अध्याय सम्पूर्ण भया ॥

स्वर्गापवर्गसुखमाप्तुमनोभिरार्यै- । र्जैनेन्द्रशासनवरामृतसारभूता ॥
सर्वार्थसिद्धिरिति सद्भिरुपात्तनामा । तत्त्वार्थवृत्तिरनिशं मनसा प्रधार्या ॥ १ ॥

याका अर्थ— स्वर्गमोक्षके पावनेकूं है मन जिनका ऐसे आर्य कहिये महंत पुरुष, तिनकरि यह तत्त्वार्थकी वृत्ति निरंतर मनकरि धारनेयोग्य है। कैसा है यह? जिनेंद्रका शासन कहिये मत आज्ञा मार्ग, सोही भया उत्तम अमृत, ताका सारभूत है। बहुरि कैसी है? सर्वार्थसिद्धि ऐसा सत्पुरुषनिकरि पाया है नाम जानें ॥ १ ॥

तत्त्वार्थवृत्तिमुदितां विदितार्थतत्त्वाः । शृण्वन्ति ये परिपठन्ति सुधर्मभक्त्या ॥

हस्ते कृतं परमसिद्धिसुखामृतं तै-। र्मर्त्यामरेश्वरसुखेषु किमस्ति वाच्यम् ॥ २ ॥

याका अर्थ— ये पुरुष यह कही जो तत्वार्थवृत्ति ताहि भलेप्रकार धर्मकी भक्तितैं सुणै हैं। बहुरि नीकैं पढै हैं, ते जान्या है तत्वार्थका यथार्थस्वरूप जिननें ऐसे भये संते तिननें परमसिद्धि जो मोक्ष ताका स्वरूप अमृत सो हस्तविषैं कीया। अन्य जे चक्रवर्तीपद इन्द्रपदके सुखनिविषैं किछु कहनेयोग्य है कहा? किछुभी नाहीं है ॥ २ ॥

येनेदमप्रतिहतं सकलार्थतत्त्व-। मुद्योतितं विमलकेवललोचनेन ॥

भक्त्या तमद्भुतगुणं प्रणमामि वीर-। मारान्नतामरगणार्चितपादपीठम् ॥ ३ ॥

याका अर्थ— मैं जु हूं टीकाकार सो तं कहिसो वीर कहिये श्रीवर्द्धमान अंतिमतीर्थंकर परमदेव ताहि भक्तिकरि प्रणाम करौ हौं। ते कौन? जिननें यऊ निर्बाध सकलपदार्थका स्वरूप यथार्थ कह्या प्रगट कीया। सो कैसे हैं? वे निर्मल केवलज्ञान हैं नेत्र जिनके। भावार्थ— साक्षात् देखिकरि कहे हैं। बहुरि कैसे हैं? अद्भुत आश्चर्यकारी हैं गुण जिनमें। भावार्थ— अतिशयकरि सहित हैं। बहुरि कैसे हैं? निकट आयकरि नमे जे अमर कहिये देव तिनके गण कहिये समूह तिनकरि पूजित है सिंहासन जिनका। भावार्थ— सर्व देवनिके देव हैं ॥

आगें तत्वार्थवृत्ति सर्वार्थसिद्धि है नाम जाका तिसविषैं तत्वार्थका दशमां अध्याय समाप्त भया ॥ याका तात्पर्य तत्वार्थवार्तिकविषैं कह्या है सो लिखिये हैं–

ऐसैं निसर्गअधिगमविषैं एकतैं उपज्या जो तत्वार्थश्रद्धानस्वरूप सम्यग्दर्शन शंकादिअतीचारनिकरि रहित संवेग अनुकंपा आस्तिक्यकरि जाका प्रगट होना ऐसा विशुद्ध ताहि अंगीकारकरि, बहुरि तिसहीकी प्राप्तिकरि विशुद्ध भया जो सम्यग्ज्ञान ताहि अंगीकारकरि, बहुरि नामआदि निक्षेप प्रत्यक्षप्रमाण निर्देश आदि सत् संख्या आदि अनुयोग नैगमादिनय इत्यादिक जे तत्वार्थके जाननेके उपाय तिनकरि जीवनिके पारिणामिक औदयिक औपशमिक क्षायिक क्षायोपशमिक जे भाव ते स्वतत्व हैं, तिनकूं जाणिकरि, बहुरि जीवके भोगके साधन जे अचेतनपदार्थ तिनका उत्पत्तिविनाशस्वभावके जाननेतैं तिनतैं विरक्त तृष्णारहित हूवा संता तीनि गुप्ति पांच समिति दशलक्षण धर्मके आचरणतैं बहुरि तिनका फल देखनेतैं मोक्षकी प्राप्तिके यतनके अर्थि बढाया है श्रद्धान अर संवेग जानैं, बहुरि भावनाकरि प्रगट भया है अपना स्वरूप जाकै, बहुरि अनुप्रेक्षाके चिंतवनकरि दृढ कीया है परद्रव्यका त्याग जानैं, बहुरि संवररूप भया है आत्मा जाका, याहीतैं आश्रवरहित भया तातैं नाहीं है नवीन कर्मका आवना जाकै, बहुरि बाह्य अभ्यंतरके तपतैं परीषहके जीतनेतैं कर्मके फल भोगनेतैं बहुरि सम्यग्दृष्टीतैं लगाय जिनपर्यंत परिणामकी विशुद्धतातैं असंख्यातगुण निर्जरा बढतीकी प्राप्तितैं पूर्वसंचयरूप कर्मकूं निर्जरारूप करता संता, बहुरि सामायिकतैं लगाय सूक्ष्मसांपरायपर्यंत जे संयमकी लब्धिके स्थान तिनकूं उत्तरोत्तर वृद्धिरूप पावनेतैं पुलाक आदि निर्ग्रंथमुनि तिनका संयमका अनुक्रमतैं

पालना, ताकी उत्तरोत्तर बंधते विशुद्धताके स्थानके विशेष तिनकी प्राप्तिकरि सहित हूवा संता, अत्यंत अभावरूप भये हैं आर्तरौद्र ध्यान जाके, बहुरि धर्मध्यानके बलतैं पाया है समाधिका बल जानें, बहुरि आदिके दोय शुक्लध्यान तिनमेंसूं क्रमकरि एकविषैं वर्तमान हूवा संता, पूर्वैं कहे जे ऋद्धि तिनकरि युक्त होय तिनविषैं अनुराग नाहीं लगावता संता, पूर्वोदित अनुक्रमकरि मोहआदिकी प्रकृतिनिकूं क्षयकारि सर्वज्ञज्ञानकी लक्ष्मीकूं वे भोगिकरि पीछे समस्तकर्मका नाशतैं संसारके बंधनतैं छूट्या हूवा, जैसैं अग्नि जेता इंधन होय तेता समस्त दग्धकारि जाके फेरि होनेकूं कछू न रहै, तब उपादानकारणविना फेरि न उपजै बुझि जाय तैसैं पूर्वैं पाया जो पर्याय ताका वियोगतैं बहुरि आगामी तिस भव होनेका कारणके अभावतैं आगामी भवकी उत्पत्तिके अभावतैं संसारका अंत भया, तातैं संसारदुःखतैं रहित होयकरि जामें दुःख नाहीं ऐसा एकांत बहुरि जाका अंत नाहीं ऐसा अत्यंत बहुरि जाकी उपमा नाहीं ऐसा निरुपम बहुरि जामें हीनाधिकपना नाहीं ऐसा निरतिशय जो निर्वाणसुख ताहि यहु आत्मा पावै है। ऐसैं तत्वार्थकी भावनाका फल है॥

॥ छप्पय ॥

घातिकर्मकूं नाशि ज्ञान केवल उपजावै। फेरि बंधके हेतु तास नीडे नहि आवै॥
पूर्वकर्म निर्जरा ठानि सर्व कर्म नशावै। भावकर्महू मेटि शेष क्षायिक रहि जावै॥
तब ऊरध गमन स्वभाव लहि लोक अंत थावै सदा। इम नित्य अनूपम अमित सुख
भरे सिद्ध वंदौं मुदा॥ १॥

ऐसैं इस तत्वार्थशास्त्रका दशम अध्यायकी वचनिका पूर्ण भई ॥ आगें तत्वार्थसूत्रका दश अध्यायका जोडरूप संक्षेप अर्थ लिखिये हैं ॥

तहां प्रथम अध्यायमें प्रथमसूत्रमें तौ सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तीनकी एकता है। सो मोक्षमार्ग है ऐसा कहा। आगें दूसरे सूत्रमें सम्यग्दर्शनका लक्षण कहा। तीसरे सूत्रमें सम्यग्दर्शनकी उत्पत्ति दोयप्रकार कही। चौथे सूत्रमें सम्यग्दर्शनके विषयभूत सात तत्व कहे। वहुरि इनके स्थापनकूं व्यवहारका व्यभिचार मेंटनेकूं नाम आदि च्यारि निक्षेप कहे। आगें प्रमाणनयनिकरि सम्यग्दर्शनादिक तथा तिनका विषय जीवादिक तत्वनिका अधिगम होय है। वहुरि निर्देशादि छह अर सत् आदि आठ ऐसैं चौदह अनुयोगानिकरि अधिगम होय है, ऐसैं कहा। वहुरि मति आदि पांच ज्ञानके भेद कहि अर तिनके दोय प्रकार प्रमाण कहे। परोक्ष दोय प्रत्यक्ष तीनि। वहुरि मतिज्ञानके उत्पत्तिके कारण कहि। ताके अवग्रहादिक भेद च्यारि सूत्रमें कहे। ते तीनसै छत्तीस होय हैं। वहुरि श्रुतज्ञानका स्वरूप भेद कहे। वहुरि अवधिज्ञानका स्वरूप दोय सूत्रमें कहा। वहुरि मनःपर्ययका स्वरूप कहा। ताके दोय भेदनिका विशेष कहि अवधिमनःपर्ययमें विशेष कहा। आगें पांचू ज्ञानका विषय तीनि सूत्रमें कहि। अर एकजीवके एककाल च्यारिताईं ज्ञान होय है ऐसैं कहा। वहुरि मति श्रुत अवधि विपर्ययस्वरूपभी होय है, ताका कारण कहा। वहुरि नैगम आदि सात नयकी संज्ञा कहि। प्रथम अध्याय पूर्ण कीया ॥ १ ॥

आगें दूसरा अध्यायमें जीवतत्वका निरूपण है। तहां प्रथमही जीवके औपशमिक आदि पांच भाव हैं। तिनके तरेपन भेद सात सूत्रमें कहे। आगें जीवका प्रसिद्ध धर्म देखि उपयोगकूं लक्षण कहा। ताके आठ भेद कहे। आगें जीवके भेद कहे। तहां संसारी अर मुक्त अर संसारीनिमें संज्ञी असंज्ञी त्रस स्थावर त्रसके भेद द्वीन्द्रियादिक पंचइन्द्रि-

यताई कहे। वहुरि पांच इन्द्रियके द्रव्यइन्द्रिय भावइन्द्रियकरि भेद तिनके नाम विषय कहे। वहुरि एकइन्द्रिय आदि जीवनिके इन्द्रिय पाईये तिनका निरूपण अर संज्ञी जीव कौंन ऐसैं कह्या। वहुरि परभवकूं जीव गमन करै ताका गमनका स्वरूप कह्या। आगें जन्मके भेद योनिके भेद अर गर्भज कैसैं उपजै देव नारकी सन्मूर्छन कैसैं उपजै ताका निर्णय है। आगें पांच शरीरनिके नाम कहि। अर तिनके सूक्ष्मस्थूलका स्वरूप कहि। अरु ये जिनकै जैसैं उपजै तिनका निरूपण कीया। आगें वेद जिनकै जैसा होय ताकूं कहिकरि जिनके उदय उदीरणाकरि मरण होय तिनका नियम कहि अध्याय पूर्ण कीया॥ २॥

आगें तीसरा अध्यायमें जीवका रहनेका लोक है तामें अधोलोक मध्यलोकका निरूपण है। तामें अधोलोकमें सातपृथ्वीनिके नाम कहे तिनविषैं नारकी जीव उपजै हैं। तिनके विलनिका परिमाण कह्या। वहुरि जीवनिका अशुभ-परिणाम आदि कहिकरि तिनकें परस्पर अर असुरानिकरि कीया दुःख है ताकूं कहि तिनकी आयुका परिमाण कह्या। आगें मध्यलोकविषैं जंबूद्वीप आदि द्वीप लवणसमुद्र आदि समुद्र हैं तिनका व्यास आकार कह्या। वहुरि जंबूद्वीपका स्वरूप कहि ताके मध्य क्षेत्र हैं कुलाचल पर्वत हैं तिनका नाम वर्ण आकार कह्या। वहुरि कुलाचलनिउपरि द्रह हैं तिनके नाम व्यासादिक वहुरि तिनमें कमल हैं तिनका व्यासादिक वहुरि तिनमें देवी वसैं हैं तिनके नाम परिवार आयु कही। आगें द्रहनिमेंसूं नदी गंगादि निकली हैं तिनके नाम परिवार गमन कह्या। वहुरि भरतक्षेत्रका विस्तार कहि अन्यका विस्तार जनाया। वहुरि भरत ऐरावतक्षेत्रमें काल घटै वधै अन्यमें अवस्थित है ऐसैं कहिकरि भोगभूमिके जीव-निकी स्थिती कही। वहुरि भरतआदि क्षेत्र · धातकीखंड पुष्करद्वीपमें हैं सो कहे। मनुष्यक्षेत्रकी मर्याद कही। कर्मभूमिके क्षेत्र कहे। वहुरि मनुष्यतिर्यंचनिकी आयुका प्रमाण कहि अध्याय पूर्ण कीया॥ ३॥

आगें चौथे अध्यायमें ऊर्ध्वलोकका वर्णन है। तामें च्यारिप्रकारके देव कहे। तिनके लेश्या कहि। अर इन्द्र आदि दश भेद कहि। अर इन्द्रनिकी संख्या अर तिनका कामसेवनकी रीति कहि। वहुरि भवनवासीनिके भेद व्यंतरनिके भेद ज्योतिषीनिके भेद कहे। वहुरि ज्योतिषीनिका गमनका प्रकार अर मनुष्यक्षेत्रविषै इनकरि कालका विभाग है। मनुष्यक्षेत्रतैं परैं अवस्थित है ऐसैं कह्या। आगें विमानवासी देव तिनविषैं कल्प कल्पातीतका भेद वहुरि स्वर्गनिका नाम अर तिनके आयु आदि वधते वधते अर गमन आदि घटते उपरि उपरि है सो कहि तिनकी लेश्या कहि। ग्रैवेयक पहली कल्प कहे। वहुरि पांचमां स्वर्गमें लौकांतिक देव हैं तिनके जातिभेदके नाम कहे। वहुरि औपपादिक मनुष्यसिवाय रहे ते जीव सर्व तिर्यंच हैं ऐसैं कह्या। आगें तिन देवनिकी आयुका निरूपणमें भवनवासीनिकी उत्कृष्टि कहि। अर स्वर्गवासीनिकी उत्कृष्टि जघन्य कही। अर नारकीनिकी जघन्य कही। भवनवासी व्यंतरनिकी जघन्य कही। अर उत्कृष्ट व्यंतर ज्योतिषीनिकी कही। ऐसैं चौथा अध्याय पूर्ण कीया ॥ ४ ॥

आगें पांचमां अध्यायमें अजीवतत्वकूं प्रधानकरि निरूपण है। तहां धर्मआदि च्यारि अजीवास्तिकाय कहि। अर जीवास्तिकाय कह्या। तिन पांचनिकूं द्रव्य कहे। तिनमें च्यारि अरूपी पुद्गल रूपी अर आकाशताईं तीनि एकएक द्रव्य क्रियारहित कहे। धर्म अधर्म एकजीवके असंख्यातप्रदेश कहे। आकाशकें अनंत कहे। पुद्गलकें स्कंध अपेक्षा तीनूं प्रकार कहे। अणूके प्रदेश नाहीं, अर आकाशका उपकार, अवगाह, गति, स्थिति, धर्म, अधर्मका उपकार, शरीरादिक जीवकूं पुद्गलके उपकार, जीवनिकें परस्पर कालद्रव्यका वर्तना उपकार कह्या। वहुरि पुद्गलके स्पर्श आदि गुण शब्द आदि पर्याय कहे। अणुस्कंधभेद कहे। वहुरि द्रव्यका सत् सामान्यलक्षण कह्या। नित्यताका स्वरूप कह्या।

वहुरि मुख्यगौणकरि नयका लगावणा कह्या। वहुरि पुद्गलके स्कंध होनेका विधान कह्या। वहुरि द्रव्यका विशेप लक्षण कह्या। वहुरि कालद्रव्य कह्या। वहुरि गुणपर्यायका स्वरूप कहि पांचमां अध्याय पूर्ण कीया ॥ ५ ॥

आगें छठा अध्यायमें आश्रवतत्वका सामान्यनिरूपण है। तहां मनवचनकायके योगकों आश्रव कह्या। वहुरि पुण्य पाप दोय भेद कहे। तहां सकपायीकै सांपरायिक आश्रव होइ अकपायीकै इर्यापथ होय। तहां सांपरायिककै इन्द्रियआदि भेद कहे तिनके तीव्र मंदादिक भावनिकरि विशेप कह्या। वहुरि आश्रवका अधिकरण जीव अजीव द्रव्यकों कहिकरि जीवाधिकरणके संरंभादिक एकसौ आठ भेद तथा इनके विशेपतैं अनेकभेद होना कह्या। वहुरि अजीवाधिकरणके निर्वर्तनादिक अनेक भेद कहे। आगें अनुभागके तीव्र मंद वंध होनें अपेक्षा न्यारे न्यारे आठकर्म तिनके आश्रव होनेके कारण कहे। तिनकूं कहिकरि छठा अध्याय पूर्ण कीया ॥ ६ ॥

आगें सातमा अध्यायमें पुण्याश्रवका निरूपण है। तहां हिंसादिक पांच पापका त्यागतैं व्रत होय है ऐसा कहि, तिसके एकएक देश सर्व दुःखतैं(?) अणुव्रत है ऐसा कहि। तिन व्रतनिके दृढ करनेकों पांच पांच भावना कहीं। वहुरि पांचपाप इसलोक परलोकमें दुःखदायी तथा दुःख कहे। तिनकी भावना राखणी। वहुरि मैत्री आदि च्यारि भावना कहीं। वहुरि संसार देहका स्वभावकी भावना कही। आगें पांच पापका लक्षण जुदाजुदा कह्या। व्रती निःशल्य होय मुनि अर गृहस्थ होय तहां गृहस्थकै अणुव्रत अर दिग्विरति आदि सात शील कहे। वहुरि अंत सल्लेखना कही। वहुरि सम्यक्त्व एक पांच अणुव्रत सात शील एक सल्लेखना इन चौदहनिका पांचपांच अतीचार न्यारे न्यारे सूत्रतैं कहे। वहुरि दानका अर तिसका विशेप कह्या। ऐसैं सातमा अध्याय पूर्ण कीया ॥ ७ ॥

आगें आठमा अध्यायमें वंधतत्वका निरूपण है। तहां मिथ्यात्वआदि वंधके कारण कहि अर वंधका स्वरूप कह्या। आगें तिसके च्यारि भेद कहि अर तिनमें पहला भेद प्रकृतिवंध तिसकी मूलप्रकृति आठ उत्तरप्रकृति एकसौ अठतालीस तिनके न्यारे न्यारे नाम कहे। आगें उत्कृष्टि जघन्य आठ कर्मनिकी स्थिति न्यारी न्यारी कही। वहुरि अनुभववंधका स्वरूप कह्या। वहुरि प्रदेशवंधका स्वरूप कह्या। आगें पुण्यपापका प्रकृतिनिके भेद कहि आठमा अध्याय पूर्ण कीया ॥ ८ ॥

आगें नवमां अध्यायमें संवरतत्व अर निर्जरातत्वका निरूपण है। तहां आश्रवके निरोधकूं संवर कह्या है। सो संवर गुप्ति आदि कारणनिकरि होय है ऐसें कहि गुप्तिका स्वरूप समितिका स्वरूप भेद धर्मके भेद अनुप्रेक्षाके भेद परीषहका विशेषकरि भेदनिका कथन अर चारितके भेदनिका निरूपण कीया। आगें तपकरि निर्जरा कही। तिस तपके वारह भेदके उत्तरभेद वहुरि ध्यानतपके च्यारि भेदमें अशुभ आर्तरौद्र शुभ धर्मशुक्ल तिनके भेदनिका विशेष-निरूपण कीया। आगें सम्यग्दृष्टि आदि दशस्थान असंख्यातगुणी निर्जराके कहि। अर पुलाकआदि पांचप्रकार मुनिनिका निरूपण करि नवमां अध्याय पूर्ण कीया ॥ ९ ॥

आगें दशमां अध्यायमें मोक्षतत्वका निरूपण है। तहां केवलज्ञानकी उत्पत्तिका विधान कहि तिसपूर्वक मोक्षका स्वरूप कह्या। सो द्रव्यभावरूप सर्वकर्मका अभावकरि मोक्ष होय तव जीवका ऊर्ध्वगमनस्वभाव है। सो ऊर्ध्वगमनकारि लोकके अंत जाय तिष्ठै ताके हेतु दृष्टांत कहे। धर्मास्तिकायविना अलोकमें गमन नाही ऐसैं कह्या। वहुरि कथंचित अपेक्षा सिद्धनिमें भेद कहनेका सूत्र कहि दशमां अध्याय पूर्ण कीया ॥ १० ॥

ऐसैं मोक्षमार्गका निरूपणस्वरूप जो तत्वार्थशास्त्र ताके दश अध्यायका कथनकूं नीकै धारणकरि भव्यजीव हैं ते मोक्षमार्गमें प्रवर्तनेका उद्यम करौ ज्यौं शाश्वता सुखरूप निर्वाणकी प्राप्ति होय ऐसा श्रीगुरुनिका उपदेश है।

आगें इस वचनिकाके होनेका संबंध लिखिये है ॥

दोहा— इष्टदेवकों नमन करि, सरल चौपई बंध ॥
इस भाषाके होनेका, कहूं हेतुसंबंध ॥ १ ॥

॥ चौपई ॥

जंबूद्वीप भरत सुनिवेश। आरिज मध्य ढुंढाहड देश ॥ पुर जयपुर तहां सूवस वसै। नृप जगतेश अनूपम लसै ॥ २ ॥ ताके राजमांहिं सुख चैन। धरै लोक कहूं नाहीं फैन। अपने अपने मत सब चलैं। शंक नाहिं धारै शुभ फलैं ॥ ३ ॥ नृपके मंत्री सब मतिमान्। राजनीतिमें निपुण पुरान ॥ सर्वही नृपके हितकों चहै। ईति भीति टारै सुख लहै ॥ ४ ॥ तिनमें रायचंद गुण धरै। तापरि कृपा भूप अति करै ॥ ताके जैनधर्मकी लाग। सब जैननिसूं अति अनुराग ॥ ५ ॥ करी प्रतिष्ठा मंदिर नयौ। चंद्रप्रभ जिन थापन थयौ ॥ ताकरि पुण्य वढौ यश भयौ। सर्व जैनिनिकौ मन हरखयौ ॥ ६ ॥ ताके ढिंग हम थिरता पाय। करी वचनिका यह मन लाय ॥ यह तौ राजतणू संबंध। कह्यो सुणु अव अन्य निबंध ॥ ७ ॥ शैली तेरापंथ सुपन्थ।

तामें वडे गुनी गुनग्रंथ ॥ तिनकी संगतितें कछु बोध। पायौ में अध्यातम सोध ॥ ८ ॥ शास्त्रज्ञान अधिकौ नहि पढ्यौ। धर्मप्रसाद राग बहु वढ्यौ ॥ तवै विचार भयौ हियमांहि। तत्वारथकौ ज्ञान करांहि ॥ ९ ॥ भयौ बोध तव कछु चिंतयो। करन वचनिका मन उमगयो ॥ सव साधरमी प्रेरण करी। ऐसैं मैं यह विधि उचरी ॥ १० ॥ काल अनादि भ्रमत संसार। पायौ नरभव में शुभकार ॥ जन्म फागई लयौ सुथानि। मोतीराम पिताकै आनि ॥ ११ ॥ पायौ नाम तहां जयचंद। यह परजाय तणूं मकरंद ॥ द्रव्यदृष्टि मैं देखूं जवै। मेरा नाम आतमा कवै ॥ १२ ॥ गोत छावडा श्रावकधर्म। जामें भली क्रिया शुभकर्म ॥ ग्यारह वर्ष अवस्था भई। तव जिनमारगकी शुधि लही ॥ १३ ॥ आन इष्टिकौ ध्यान अयोगि। अपने इष्ट चलन शुभ भोगि ॥ तहां दूजौ मंदिर जिनराय। तेरापंथ पंथ तहां साज ॥ १४ ॥ देव धर्म गुरु सरधा कथा। होय जहां जन भाषैं यथा ॥ तव मो मन उमग्यो तहां चलो। जो अपनूं करनो है भलो ॥ १५ ॥ जाय तहां श्रद्धा दृढ करी। मिथ्या बुद्धि सवै परिहरी ॥ निमित पाय जयपुरमें आय। वडी जु शैली देखी भाय ॥ १६ ॥ गुणी लोक साधर्मी भले। ज्ञानी पंडित बहुते मिले ॥ पहलें थे वंशीधर नाम। धरै प्रभाव भाव शुभ ठाम ॥ १७ ॥ टोडरमल पंडित मति खरी। गोमटसार वचनिका करी ॥ ताकी महिमा सवजन करैं। वाचै पढै बुद्धि विस्तरै ॥ १८ ॥ दौलतिराम गुणी अधिकाय। पंडितराय राजमैं जाय ॥ ताकी बुद्धि लसै सव खरी। तीन

पुराण वचनिका करी ॥ १९ ॥ रायमल्ल त्यागी गृहवास । महाराम व्रत शीलनिवास ॥ मैं हूं इनकी संगति ठानि । बुधि सारू जिनवाणी जानि ॥ २० ॥ लखे पुराण आदि उत्तरा । और पुराण चरित्र जु खरा ॥ गोमटसार लब्धि पण सार । क्षपणसार तिलोक सुसार ॥ २१ ॥ टोडरमलकृत भाषा तणां । पाय सहाय संस्कृति भणा ॥ मूलाचार श्रावकाचार । लखे विचारे बुद्धि अनुसार ॥ २२ ॥ समयसार अध्यातमसार । प्रवचनसार रहसि मन धारि ॥ पंचासतिकाया ए तीनि । नाटक त्रयो कहावै चीन ॥ २३ ॥ तत्वारथसूत्रकी टीका । सर्वार्थसिद्धि नाम सुटीका ॥ दूजी तत्वारथवार्तिका । श्लोकरूप वार्तिक तार्तिका ॥ २४ ॥ तिनकौ कछु कियौ अभ्यास । वुद्धि जिसी जिम पायौ रुयास ॥ पद्धति न्यायतणी इनमांहि । सोभी किछु विचारी जाहि ॥ २५ ॥ ग्रंथ परीक्षामुख संभलो । है प्रमाणकौ वर्णन भलौ ॥ देवागमस्तुति टीकासार । अष्टसहस्री नाम सुधार ॥ २६ । आप्तपरीक्षा देखी सार । अर प्रमाणनिर्णय निरधार ॥ न्यायदीपिका सुगमप्रचार । सो पहलै पढनेमें सार ॥ २७ ॥ देवसेनकृत गाथावंध । है नयचक्र वडौ अरवंध ॥ और ग्रंथ जिनमतमें घणे । पाये जे शुभविधिवश वर्णे ॥ २८ ॥ तेभी कछु विचारे जवै । स्याद्वादमै समझे तवै ॥ नयप्रमाणकी कथनी महां । गुरुविन वार न पावै जहां ॥ २९ ॥ पै अभ्यास जोर वहु कीयौ । वीजरूप सामान्य जु लीयौ ॥ और ग्रंथ बुधिसारू लखे । अपने मत परके मत अखे ॥ ३० ॥ नंदलाल मेरा सुत गुनी ।

वालपनेतें विद्या सुनी ॥ पंडित भयौ बढौ परवीन। ताहूने प्रेरण यह कीन ॥ ३१ ॥ कोई ग्रंथ वचनिका करो। जामें सव समझें इम धरौ ॥ मैं हूं तवै विचारी एम। रची वचनिका यह धरि प्रेम ॥ ३२ ॥ हीनाधिक यामें कछु होय ॥ पंडित लोग सुधारो सोय ॥ ख्यातिलाभ-पूजाके हेतु। रची नाहि इम शुभफल हेतु ॥ ३३ ॥ वांचौ पढौ पढावौ सुनूं। तत्वारथकूं जानू गुनू ॥ करौ प्रसिद्धि सवै धरि चाव। सतपुरुपनिकौ यहै स्वभाव ॥ ३४ ॥ हीनाधिक लखि हँसियो नाहिं। अल्पबुद्धि में क्षमा कराहिं ॥ यह मेरी प्रार्थना संभारि। अपनी उत्तमताकौं धारि ॥ ३५ ॥

॥ सवैया ॥

शब्दकौ उचार सोहै पुद्गलविकार और अक्षरप्रकार इच्छा जीवकी मिलै जवैं।
स्याही पत्र लेखनी हू पुद्गल दरवि जानूं क्रिया जीवके प्रदेश इच्छातैं हलै तवैं ॥
ग्रंथ रचनेकौ राग मोहकौ विकार शुभ ए तौ सवै पुद्गल है जीवकौ कहा फवैं।
तातैं करनेकौ अभिमान तजो पंडित हो चेतनास्वरूप आप लखौ यो भलै अवैं ॥ ३६ ॥

दोहा— संवत्सर विक्रम तणूं। शिखि रस गज शशि अंक ॥
चैतशुक्ल तिथि पंचमी। पूरण पाठ निशंक ॥ ३७ ॥

॥ छप्पय ॥

मंगलमय अरहंत सिद्ध मंगल विनिकाई। आचारज उवझाय साधु मंगल सुखदाई ॥

वाणी मंगलरूप स्यातपद मुद्रित सांची । धर्मशुद्ध निजरूप क्षमादिक हैं गुणवाची ॥
दुख पाप गालि सुखकों करै सो मंगलकौ अरथ है । सबकारिज करि मंगल चहै हमहूकूं यह सुपंथ है ॥ ३८ ॥

॥ इति तत्त्वार्थशास्त्र दशाध्यायी वचनिका सर्वार्थसिद्धि नाम टीकाके अनुसार सम्पूर्णम् ॥

॥ शुभं भवतु सर्वेषाम् ॥